क्षेत्रीय भूगोल
(Regional Geography)

लेखक
निरंजन मिश्र

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अका

शिक्षा तथा समाज-कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ-निर्माण योजना के अन्तर्गत राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित।

प्रथम संस्करण : **1976**
द्वितीय संस्करण : **1987**

मूल्य : **60.00**

प्रकाशक :
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
ए-26/2, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर
जयपुर-302004

मुद्रक
राष्ट्र उद्योग प्रिण्टर्स,
दीनानाथजी का रास्ता,
चांदपोल बाजार, जयपुर फोन : 62820

प्रस्तावना

राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी अपनी स्थापना के 17 वर्ष पूरे करके 15 जुलाई, 1986 को 18 वें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है। इस अवधि में विश्व साहित्य के विभिन्न विषयों के उत्कृष्ट ग्रंथों के हिन्दी अनुवाद तथा विश्वविद्यालय के शैक्षणिक स्तर के मौलिक ग्रंथों को हिन्दी में प्रकाशित कर अकादमी ने हिन्दी-जगत् के शिक्षकों, छात्रों एवं अन्य पाठकों की सेवा करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है और इस प्रकार विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी में शिक्षण के मार्ग को सुगम बनाया है।

अकादमी की नीति हिन्दी में ऐसे ग्रन्थों का प्रकाशन करने की रही है जो विश्वविद्यालय के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के अनुकूल हों। विश्वविद्यालय स्तर के ऐसे उत्कृष्ट मानक ग्रंथ, जो उपयोगी होते हुए भी पुस्तक प्रकाशन की व्यावसायिकता की दौड़ में अपना समुचित स्थान नहीं पा सकते हों और ऐसे ग्रंथ भी जो अंग्रेजी की प्रतियोगिता के सामने टिक नहीं पाते हों, अकादमी प्रकाशित करती है। इस प्रकार अकादमी ज्ञान-विज्ञान के हर विषय में उन दुर्लभ मानक ग्रंथों को प्रकाशित करती रही है और करेगी जिनको पाकर हिन्दी के पाठक लाभान्वित ही नहीं गौरवान्वित भी हो सकें। हमें यह कहते हुए हर्ष होता है कि अकादमी ने 325 से भी अधिक ऐसे दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन किया है जिनमें से एकाधिक केन्द्र, राज्यों के बोर्डों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत किये गये हैं तथा अनेक विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशंसित।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी को अपने स्थापना काल से ही भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय से प्रेरणा और सहयोग प्राप्त होता रहा है तथा राजस्थान सरकार ने इसके पल्लवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, अतः अकादमी अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में उक्त सरकारों की भूमिका के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है।

क्षेत्रीय भूगोल का नया संशोधित संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें प्रसन्नता है। प्रस्तुत ग्रंथ भूगोल विज्ञान के क्षेत्र में अकादमी की उत्कृष्ट देन है। मानव के ऐहिक जीवन के संयोजन में भौगोलिक परिस्थितियों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रहता है। पहले तो इतिहास और संस्कृतियों के अध्येता भौगोलिक परिस्थितियों को किसी जाति के इतिहास और संस्कृति का प्रायः एक मात्र निर्धारक ही मानते

थे। आज यद्यपि ऐसा नहीं माना जाता किन्तु तब भी मानव-जीवन के बहुत से पक्ष भौगोलिक-परिस्थिति सापेक्ष होते हैं, इसमें किसी को संदेह नहीं है। उन पक्षों से मानव समाजों की तुलना एक अत्यन्त रोचक विषय है। इस पुस्तक में विभिन्न देशों के भौगोलिक परिवेशों का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, इस प्रकार यह पुस्तक साधारण पाठकों के लिए भी अत्यन्त रोचक सामग्री प्रस्तुत करती है और विश्व इतिहास के विज्ञपाठकों के लिए भी। भूगोल के पाठ्यक्रम के लिए तो यह लिखी ही गयी है इसलिए उस दृष्टि से इसकी उपयोगिता तो निस्सन्दिग्ध है ही।

इसके लेखक भूगोल के वरिष्ठ अध्यापक हैं। प्रथम प्रकाशन से पूर्व इसकी सूक्ष्म जांच डा० ए० के० तिवारी, आचार्य एवं अध्यक्ष, भूगोल विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर ने की है और भाषा की दृष्टि से इसका संस्कार श्री जुगमन्दिर तायल, अलवर ने किया है। इस प्रकार हमने सर्वप्रकारेण एक उत्कृष्ट ग्रंथ बनाने का प्रयत्न किया है। इस सहयोग के लिए हम इन महानुभावों के प्रति आभारी हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस पुस्तक का व्यापक स्वागत होगा।

रणजीतसिंह कूमट	डॉ० राघव प्रकाश
शिक्षा सचिव, राजस्थान सरकार एवं	निदेशक
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी	राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर	जयपुर

प्राक्कथन

(द्वितीय संस्करण)

पुस्तक का पहला संस्करण दो-ढाई वर्ष में ही समाप्त हो गया जो इसमें संग्रहीत सामग्री के छात्रोपयोगी होने का द्योतक है। दूसरा संस्करण समय पर निकल जाना चाहिए था परन्तु सेवा सम्बन्धी व्यस्तता के कारण संभव नहीं हो सका। खैर, कभी नहीं के बजाय तो देरी वाली स्थिति श्रेयस्कर है। इस बार पुस्तक के आकार को भी कम किया गया है ताकि विद्यार्थियों की क्रय क्षमताओं की सीमाओं में ही इसका मूल्य रहे। सभी देशों, जिनका अध्ययन पुस्तक में समायोजित है, के आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास सम्बन्धी उपलब्ध नवीनतम सामग्री इस संस्करण में दी गयी है। वस्तुतः किसी भी प्रदेश का आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप वहाँ के भौगोलिक वातावरण के सांचे में विकसित होता है परन्तु मानवीय इच्छाएँ, तकनीकी ज्ञान एवं तदनुसार किये गये प्रयास भी प्राकृतिक वातावरण को संशोधित करने में प्रभावकारी भूमिका निभाते है। क्षेत्रीय भूगोल वस्तुतः इसी प्रकार के प्रभावों एवं परस्पर क्रिया प्रतिक्रियाओं का अध्ययन है। सम्पूर्ण पुस्तक में इसी लक्ष्य एवं विचारधारा का प्रवाह है। आशा है, स्नातकोत्तर एवं स्नातक स्तर के उन छात्रों, जो विश्लेषणात्मक अध्ययन में रुचि रखते हैं, के लिए प्रस्तुत पुस्तक विशेष रूप से उपयोगी होगी।

निरंजन मिश्र

दो शब्द

(प्रथम संस्करण)

भूगोल पृथ्वी की धरातलीय दशाओं का विज्ञान है जिसके अन्तर्गत विविध प्राकृतिक पर्यवस्थाओं का तथा उनके क्षेत्रीय वितरणों का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है। मानव-जीवन के सभी पहलू वस्तुतः भौगोलिक वातावरण के प्रति मानवीय प्रतिक्रियाओं के परिणाम हैं। आज वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने मानव को इतना सक्षम कर दिया है कि वह प्राकृतिक परिवेश को बहुत बदल भी रहा है। चूँकि पृथ्वी के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न भौगोलिक परिस्थितियाँ हैं, फलतः मनुष्य के रूप भी भिन्न-भिन्न हैं।

संक्षेप में, भौगोलिक वातावरण के विविध तत्त्वों, स्थिति, धरातल, जलवायु, जल-प्रवाह, मिट्टी तथा वनस्पति और मानव-जीवन के विविध पहलुओं-उद्यम, अधिवास, यातायात, जनसंख्या-घनत्व एवं वितरण आदि के मध्य गहरा सम्बन्ध है। दोनों पक्ष एक-दूसरे से इतने जुड़े हुए हैं कि एक का अध्ययन दूसरे के संदर्भ के बिना अधूरा रहता है। यह गहन सम्बन्ध ही निवासियों को प्रादेशिक या क्षेत्रीय एकरूपता देता है जिसके आधार पर पृथ्वी के धरातल को अनेकानेक प्रदेशों या क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। भूगोल के विद्यार्थी के लिए साधारणतः पृथ्वी के धरातल पर पाए जाने वाले सभी प्रकार के प्रदेशों का अध्ययन वांछनीय है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु उनके स्तरानुरूप कुछ प्रदेश, क्षेत्र या उनका प्रतिनिधित्व करते हुए कुछ देश उनके पाठ्यक्रम में रखे जाते हैं।

भारत के अनेक विश्वविद्यालयों में क्षेत्रीय भौगोलिक अध्ययन पाठ्यक्रम में समायोजित है। यद्यपि अनेक प्रतिनिधि देश पृथक्-पृथक् हैं तथापि कुछ देश अधिकांश विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल हैं। प्रस्तुत पुस्तक में इन्हीं देशों का भौगोलिक अध्ययन किया गया है।

पुस्तक भारतीय विश्वविद्यालयों में निर्धारित स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर लिखी गयी है। मानचित्र, रेखाचित्र तथा आरेख आदि के समुचित

प्रयोग द्वारा भौगोलिक तथ्यों को सुस्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। सभी प्राविधिक शब्द भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित शब्दावली से लिए गए हैं, पुस्तक की लेखन-सामग्री संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रकाशित मासिक एवं वार्षिक पत्रिकाओं, विभिन्न देशों के दूतावासों द्वारा उपलब्ध करायी गयी सामग्री तथा स्टेट्समैन ईयर बुक से ली गयी है जो प्रामाणिक है। संक्षेप में सरल भाषा, आधुनिकतम विवरण एवं नवीनतम आंकड़ों के संयोग से पुस्तक विद्यार्थियों के लिए पर्याप्त उपयोगी सिद्ध होगी—इस विश्वास ने ही लेखक को निरंतर प्रोत्साहित कर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर रखा।

अन्त में, पुस्तक में शामिल किए गए सभी देशों के दूतावासों के प्रति आभार प्रकट करते हुए मैं सभी पाठकों से नम्र निवेदन करता हूँ कि वे पुस्तक की कमियों तथा अपने सुझावों से मुझे अवश्य अवगत कराने की कृपा करें। उनके प्रत्येक सुझाव के लिए मैं अनुगृहीत रहूँगा।

निरंजन मिश्र

अनुक्रमणिका

जापान

सोवियत संघ

संयुक्त राज्य अमेरिका

ब्रिटिश द्वीप समूह

ब्राजिल

न्यूजीलैण्ड

मिश्र

जापान

"भविष्य को कोई नहीं जानता, इस समय जापान, चीन नहीं, एशिया की एक प्रमुख शक्ति है और उन इनी-गिनी प्रमुख शक्तियों में से एक है जो आगे चलकर विश्व के भविष्य का फैसला करेंगी।" बर्कले विश्वविद्यालय के प्रोफेसर राबर्ट ए. स्कैलिपनो ने जापान के बारे में अपनी बेलाग राय जाहिर करते हुए ये शब्द कहे। जापान में भूतपूर्व अमेरिकी राजदूत एडविन ओ. रेशावर ने भी जापान के बारे में कुछ ऐसा ही मत व्यक्त किया। उनके अनुसार "जापान केवल क्षेत्रफल को छोड़कर दुनिया के महानतम देशों में से एक है।"[1]

जापानी साम्राज्य-क्षेत्रफल एवं जनसंख्या, 1 अक्टूबर, 1935[2]

	क्षेत्रफल वर्ग मील में	प्रतिशत	जनसंख्या
जापान स्वयं	147,201	56.56	62,254,148
हॉशू	87,805	33.74	—
शिकोकू	7,246	2.78	—
क्यूशू	16,174	6.21	—
होकेडो	30,115	11.57	—
चिंशिमा द्वीप	3,970	1.53	—
अन्य द्वीप	1,891	0.73	—
कोरिया	85,288	32.75	22,899,038
तैवान	13,840	5.32	5,212,426
होकोटो (पैस्काडोर्स)	49	0.02	—
काराफूतो (जापानीसखालिन)	13,934	5.35	331,943
जापानी साम्राज्य	260,252	100 00	97,697,555
क्वातुंग (लीज पर)	1,438	—	1,656,726
दक्षिणी सागर में अधिकृत द्वीप	830	—	102,537
मंचूरिया (मंचूको)	503,427	—	31,000,000

1. Quoted from 'Dinman'—A weekly Magazine of Times of India 7th Aug. 1969.
2. Japan Census, Och. 1st 1935, taken form Stamp. L. D.—Asia p. 613.

इन कथनों के सन्दर्भ में पिछले दशकों विशेषकर द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों की याद ताजा हो आती है। उन दिनों जापान का विशाल साम्राज्य था, उसे अपनी सैनिक शक्ति पर नाज था मुख्य चारों द्वीपों के अतिरिक्त कोरिया, मंचूरिया, क्वान्तुंग, प्रायद्वीप, फारमोसा, क्यूराइल तथा अन्य अनेक द्वीप उसके आर्थिक ढांचे की अधिकांश पूर्ति अधिकृत क्षेत्रों से हो जाती थी। इस प्रकार जापान द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व अपनी चरम-सीमा पर था और उसकी महत्वाकांक्षा थी ब्रिटेन की तरह उसका भी विशाल साम्राज्य हो, वह दुनिया की महान् शक्ति हो।

जापान की इच्छा एक बार तो पूरी हुई (यद्यपि थोड़े समय के लिए)। 1941 में उसने अमेरिकन अड्डे पर्ल हार्बर पर आक्रमण करके जो युद्ध का शंख फूंका तो विश्व भौंचक्का रह गया। आश्चर्यचकित हो गया उसकी गतिशीलता देखकर। देखते-देखते जापान (1942-44) हांग-कांग, फिलीप्पीन, हिन्द चीन (फ्रेंच अधिकृत) मलाया, ब्रिटिश बोर्नियो, डच पूर्वी द्वीप समूह, अन्दमान निकोबार तथा बर्मा को कुचलता हुआ भारत की उत्तरी-पूर्वी सीमा पर आ पहुँचा। इस समय चार द्वीपों का यह छोटा सा देश 'वृहत्तर पूर्वी एशियाई साम्राज्य' का मालिक था।

1945 में हिरोशिमा एवं नागासाकी पर अणुबमों की वर्षा के साथ जापान ने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया। उसका सैनिक उन्माद समाप्त, शान्त हो गया। चारों मुख्य द्वीपों (हांशू, होकेडो, क्यूशू, शिकोकू) एवं रियूकू को छोड़ सभी भू-क्षेत्र उससे छीने गये और उसे अमेरिका द्वारा दिये गये संविधान पर चलने को मजबूर होना पड़ा। समय की मांग को देखते हुए जापान ने अपना सारा ध्यान आर्थिक-समृद्धि की ओर केन्द्रित किया क्योंकि 1947 के संविधान (अमेरिका द्वारा दिया गया) के अनुसार वह अपनी सैनिक शक्ति का पुनर्गठन नहीं कर सकता था। परन्तु पिछले 27 वर्षों में जापान ने अपनी अर्थव्यवस्था को संवारने में जो कमाल कर दिखाया उससे विश्व के विकासशील देश बहुत कुछ सीख सकते हैं। आर्थिक समृद्धि ने न केवल जापान की धरती से द्वितीय विश्व युद्ध के चिह्न धो दिये हैं वरन् राष्ट्रीय उत्पादन में वह विश्व में चौथे स्थान पर है और विकास की अगर यही गति रही तो वह शीघ्र ही तीसरे स्थान पर पहुँच जायेगा। उसके विकास का अनुमान इन तथ्यों से लगाया जा सकता है कि कच्चे मालों के अभाव के बावजूद वह विश्व में इस्पात उत्पादन में चौथे स्थान पर है, जलयान निर्माण में प्रथम स्थान पर है, अमेरिका के बाद सर्वाधिक कम्प्यूटरों का उपयोग करने वाला देश है।

आर्थिक दृष्टि (उद्योग, व्यापार, यातायात आदि) से जापान आज एशिया में चोटी पर है। एशिया के अधिकांश देशों के बाजार उसने पुनः प्राप्त कर लिये हैं। यहाँ तक कि उत्तरी वियतनाम, उत्तरी कोरिया या चीन जैसे देशों से भी उसके व्यापारिक सम्बन्ध हैं। एशिया के अधिकांश देशों को उसने कर्जा या आर्थिक-अनुदानों द्वारा अनुगृहीत किया है। पिछली दशाब्दी (1970-80) में जापानी मानस की यह भावना, कि उसे सुरक्षा के क्षेत्र में कुछ करना चाहिये, भी उभर कर

जापान
के द्वीप, प्रीफैक्चर्स एवं प्रदेश
प्रदेश सीमा
प्रीफैक्चर सीमा
हौकेडो
तोहोकू
होकूरिकू
तोसान
चूगोकू
कांटो
तोकाई
किंकी
शिकोकू
क्यूशू
N
पैमाना 0 250 कि.मी.
1 हौकेडो
2 आमोरी
3 इवाते
4 अकीता
5 यामागाता
6 मियोगी
7 फूकूशीमा
8 नीगाता
9 गूमा
10 टोचीगी
11 ईबाराकी
12 चीबा
13 सैतामा
14 टोक्यो
15 कानागावा
16 यामानाशी
17 नगानो
18 टोयामा
19 इशीकावा
20 फूकुई
21 गीफू
22 शिज़ुओका
23 एइची
24 शीगा
25 साई
26 नारा
27 वाकायामा
28 ओसाका
29 क्योटो
30 ह्योगो
31 टोटोरी
32 ओकायामा
33 कागावा
34 तोकुशीमा
35 कोची
36 एहाइम
37 हीरोशिमा
38 शिमोने
39 यामागुची
40 फुकुओका
41 ओइता
42 सागा
43 नागासाकी
44 कुमामोटो
45 मियाज़ोकी
46 कागोशिमा

चित्र-1

ऊपर आ गई है। जापानी लोग इस बात को जानते हैं कि राजनैतिक नेतृत्व के लिए केवल आर्थिक सम्पन्नता ही काफी नहीं है, सैनिक शक्ति भी होनी चाहिए। युद्ध के बाद के दिनों में सैनिक शक्ति का विकास शून्य ही रहा। जापान अपनी रक्षा के लिए अमेरिका पर निर्भर रहा। बदली हुई परिस्थितियों में जापान अपनी सैनिक शक्ति के विकास के बारे में सोच सकता है और इसमें कोई शक नहीं कि उसे प्रथम श्रेणी की सैनिक शक्ति बनने में चन्द वर्ष ही लगेंगे क्योंकि अणु शक्ति का विकास इस देश में हो ही चुका है। विविध प्रकार के उद्योग विकसित हैं। इसके अतिरिक्त जापानियों का अपना अनुभव है। इधर ब्रिटेन व अमेरिका दक्षिणी-पूर्वी एशियाई सैनिक अड्डों को क्रमशः खाली करते जा रहे हैं। इस रिक्तता की स्थिति में, हो सकता है कि इस क्षेत्र को राजनैतिक नेतृत्व प्रदान करने की महत्वाकांक्षा जापान में जागे और अगर ऐसा हुआ तो इस देश के लिए एशिया की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की स्थिति में पहुँच जाना कोई कठिन कार्य न होगा। एशिया में यूरोपियन देशों से टक्कर लेने वाला अभी तक यही एकमात्र देश है।

जापानी द्वीप शृंखला एशिया महाद्वीप के मुख्य स्थल के पूर्व में एक अवनत चाप की आकृति लिए 30° उत्तरी अक्षांश से 45° उत्तरी अक्षांश एवं 129° पूर्वी से 146° पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। वर्तमान में इस देश का विस्तार उसके चारों प्रमुख द्वीपों व उनके निकट स्थित कुछ छोटे-छोटे द्वीपों तक सीमित है। इस प्रकार 1,42,300 वर्ग मील भूभाग में फैला यह एक छोटा सा देश है। बड़े द्वीपों का विस्तार (क्षेत्रफल वर्ग मीलों में) इस प्रकार है—होंशू (88,031), होकेडो (30,115), क्यूशू (16,174), शिकोकू (7,246), साडो (331), अवाजी (228), अमाकूशाशीमो (220), याकू (193), टेन (173), रबूशीमा-शीमो (168) तथा फ्यूके (126)।

जापान : भूगर्भिक संरचना एवं धरातल

जापान का अधिकतर धरातल पर्वतीय स्वरूप लिए हुए है। कुल भू-क्षेत्र का लगभग 85% भाग पर्वत एवं पठारों ने घेरा हुआ है। केवल 15% भूभाग को ही निचले हिस्सों की श्रेणी में रखा जा सकता है। ये निचले भाग भी तटवर्ती पट्टी में स्थित हैं जिनके निर्माण के लिए नदियों और नहरों का निक्षेप कार्य उत्तरदायी है। संरचना या अपक्षय के फलस्वरूप बने मैदानी भागों का पूर्णतः अभाव है। साधारणतः जापान का धरातलीय स्वरूप एशिया के पूर्व में फिलीप्पीन से लेकर क्यूराइल और सखालिन तक चाप की आकृति लिए हुए द्वीप शृंखला के अन्य द्वीपों के समान ही है। इन द्वीपों का मध्यवर्ती भाग मुख्यतः उच्च प्रदेशों द्वारा घेरा हुआ है एवं तटवर्ती पट्टी में सँकरे निक्षेपकृत मैदान हैं। इन द्वीपों का यह सार्वभौम स्वरूप ही इस विचार को जन्म देता है कि सम्भवतः यह द्वीप शृंखला महाद्वीप के पूर्वी तट के समानान्तर फैली ऐसी ऊँची एवं क्रमबद्ध पर्वतीय शृंखला का अवशेष भाग है जो अतीत में समुद्रगत हो गयी।

अस्थाई परि-प्रशांत-महासागर-तटीय-क्रम से सम्बन्धित इन द्वीपों की रचना के बारे में भूगर्भविदों में कुछ मतभेद हैं। जहाँ तक इन्हें किसी समुद्रगत पर्वतीय क्रम का अवशेष भाग मानने का प्रश्न है सभी भूगर्भविद एक मत हैं। इस प्रकार इनके रचना काल के बारे में भी सब इस विचार से सहमत हैं कि ये तृतीय महा-कल्प में उत्थित भाग होने चाहिए। मतभेद इस बात को लेकर है कि ये पर्वतीय क्रम एशिया से सम्बन्धित हैं या नहीं। कुछ विद्वान् इन शृंखलाओं को एशिया महाद्वीप के पूर्वी भाग में स्थित दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व दिशा में फैले हुए विशाल पर्वत-क्रमों का ही विस्तार भाग मानते हैं जबकि अन्य भूगर्भविद इन्हें पूर्णतः पृथक् रचना के रूप में स्वीकार करते हैं। जहाँ तक वर्तमान स्थिति का प्रश्न है दोनों में कोई थलीय सम्बन्ध नहीं है। दोनों के बीच जापान सागर विद्यमान है। अगर निकटवर्ती स्थिति को भी देखा जाए तो मालूम होता है कि लगभग 500 फीट गहरा सुशीमा जलडमरूमध्य दोनों को अलग किए हुये है।

प्रथम विचारधारा वाले विद्वानों का कहना है कि आज ये द्वीप अवश्य जलाशय द्वारा पृथक् हैं। परन्तु इन्हें पृथक् करने वाला सुशीमा जलडमरूमध्य कोई

आदि रचना नहीं है। यह घसाव के कारण बना है। ये विद्वान् मानते हैं कि जलडमरूमध्य की तलीय चट्टानें इन दोनों को जोड़ने का कार्य करती हैं। ऐसे विद्वानों में नादमैन, रिचथोफेन आदि भूगोलवेत्ताओं का नाम उल्लेखनीय है। डा० नादमैन जापानी पर्वत श्रृंखलाओं को चीन के अल्टायड क्रम का ही विस्तार भाग मानते हैं। रिचथोफेन इन्हें चीन के सिंग लिंग शान क्रम से जोड़ते हैं। कुछ जापानी भूगर्भविदों एवं भूगोलवेत्ताओं का विचार भी यही है कि पूर्वी एशिया एवं जापानी द्वीपों में किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए। ऐसा वे चट्टानों की बनावट के आधार पर सोचते हैं। उनका विचार है कि जापान की चूगोकी श्रेणी किसी न किसी स्तर पर चीन के कुन-लुन क्रम से अवश्य सम्बन्धित होनी चाहिए।

दूसरी विचारधारा वाले विद्वानों का कहना है कि इन चापाकार द्वीपों की उत्पत्ति बिल्कुल पृथक् क्रिया का परिणाम है। संरचना की दृष्टि से इनका पूर्वी एशिया से कोई सम्बन्ध नहीं। आधुनिक भूगर्भवेत्ताओं में ज्यादातर इसी मत का अनुसरण करने वाले लोग हैं। अपने मत के पक्ष में ये विद्वान आधुनिक वैज्ञानिक खोजों पर आधारित कई तर्क भी प्रस्तुत करते हैं। इनका मत है कि ये द्वीप-क्रम वस्तुतः उन पर्वत श्रृंखलाओं के अवशेष भाग हैं जो अतीत में कभी पश्चिमी प्रशांत महासागरीय क्षेत्र में क्रमबद्ध श्रृंखला में ऊपर उठे हुए थे। ये काफी ऊँचे थे। बाद में भूगर्भिक हलचलों के फलस्वरूप इनके नीचे के भाग समुद्रगत हो गये और ऊँचे भाग द्वीप के रूप में उठे रह गये। यही कारण है कि सभी द्वीपों तथा उनमें पायी जाने वाली पर्वतीय श्रृंखलाओं का विस्तार-क्रम एक ही दिशा में है। समुद्रगत क्रम की विस्तार दिशा में समुद्र कम गहरा है जबकि पूर्व तथा पश्चिम में गहराई एक दम बढ़ गई है। जापानी द्वीप प्रशांत तट की ओर 8,000–12,000 गहरे समुद्र पर दीवारी स्वरूप लिए हुए खड़े हैं। पश्चिम में गहरा जापान सागर है। परन्तु उत्तर में होकेडो तथा सखालिन, क्यूराइल या काराफूटो के बीच स्थित समुद्र बहुत कम गहरा है। इस प्रकार जापानी द्वीप पृथ्वी-तल के एक अत्यन्त कमजोर एवं अस्थायी पृथक् भाग के रूप में है जहाँ गहरी चट्टानों की पुर्नव्यवस्था का कार्यक्रम निरन्तर रूप से चल रहा है। इसी का परिणाम है कि यहाँ वर्ष में 1,500 से अधिक बार भूकम्प आ जाते हैं तथा ज्वालामुखी ने पर्याप्त भागों को प्रभावित किया है।[3]

स्वरूप में भी प्रशांत महासागर तटीय क्रम की इस द्वीप श्रृंखला के द्वीपों में समानता है। सभी में मध्य भाग में पर्वत रीढ़ की स्थिति लिए हुए फैले हैं। मैदानों का प्रायः अभाव है। निचले प्रदेश केवल सँकरी तटवर्ती पट्टी में स्थित हैं

3. Trewartha, G. T.—Japan, A Geography, Methuen 1965 p. 17.

जिनका विकास नदी-लहर कृत तलछट से हुआ है। ज्यादातर द्वीप समूह चाप आकृति लिए हुए हैं। इनके चाप का उन्नतोदर भाग आम तौर पर प्रशांत की तरफ है। ये कुछ ऐसे तत्व हैं जो इन्हें एशियायी पर्वत क्रमों से पृथक् करते हैं।

जापानी द्वीप भी चापाकार हैं। उन्नतोदर भाग प्रशांत की ओर है। यहाँ दो मुख्य चाप हैं। प्रथम, उत्तरी-पूर्वी या हांशू चाप, द्वितीय, दक्षिणी-पश्चिमी चाप। ये दोनों चाप मध्य हांशू में एक-दूसरे से मिलते हैं। संगम स्थल पर एक तीसरे चाप बोनिन या शिचितो मौरियाना, जो दक्षिण की ओर से आया है, द्वारा काटे जाते हैं। इसी प्रकार होकेडो में उत्तरी- पूर्वी चाप काराफूटो एवं चिशिमा-चापों के द्वारा काटा जाता है। इधर क्यूशू में दक्षिणी-पश्चिमी चाप से सुदूर दक्षिण की ओर से आने वाले रियूकू चाप आकर मिलता है। ये चाप वस्तुतः पर्वतीय क्रम हैं जिनका पर्याप्त भाग समुद्रगत है और शेष भाग जापानी भूमि में पर्वताकार में स्पष्ट है। वस्तुतः इन शृंखलाओं के मेल से ही जापानी भूखण्ड अस्तित्व में आये हैं। इनके समुद्रगत भागों को भी आसानी से देखा जा सकता है। जापान के दोनों प्रमुख चापों (उत्तरी-पूर्वी एवं दक्षिणी-पश्चिमी) भू-आकृतियों एवं धरातल का स्वरूप, भू-आकृतियों की विस्तार दिशा आदि सब कुछ चापों की संरचना के अनुरूप ही है। यथा आम दिशा उत्तरी हांशू में उत्तर-दक्षिण एवं दक्षिणी-पश्चिमी हांशू तथा शिकोकू में पश्चिम-दक्षिण-पश्चिम से पूर्व-उत्तर-पूर्व है।

धरातलीय संरचना एवं चट्टानों की दृष्टि से जापान में भारी वैभिन्य है। यहाँ के धरातल में उम्र, संरचना, धातु अंश, कठोरता एवं क्रम की दृष्टि से पर्याप्त भिन्नता लिए हुए चट्टानें मिलती हैं जो इन द्वीपों के लम्बे और जटिल भूगर्भिक इतिहास की ओर संकेत करती हैं। जापान में मैदानों का अभाव है। तीन चौथाई से अधिक भाग पर्वत एवं पठारों ने घेरा हुआ है। इन उच्च प्रदेशों में प्रमुखतः ग्रेनाइट, पुरानी पर्तदार, ज्वालामुखी एवं टरशरी चट्टानें मिलती हैं। इन चार चट्टान समूहों ने जापान का 80% से अधिक भाग घेरा हुआ है।[4] इनका स्पष्ट चित्रण तेज ढाल वाले भागों में हुआ है। कुछ उच्च एवं ऊबड़-खाबड़ प्रदेशों में पुरानी पर्तदार एवं कायान्तरित चट्टानों का ही बाहुल्य है। इन दोनों ने देश का लगभग एक-चौथाई भाग घेरा है। दक्षिणी शिकोकू तथा 'की' प्रायःद्वीप में तो उक्त चट्टानें बहुत ही स्पष्ट रूप में हैं। होकेडो की पर्वत शृंखलाओं में भी इन्हीं चट्टानों का बाहुल्य है। पुरानी अवसादी चट्टानें अधिकांशतः ऊँचे पर्वतीय भागों में मिलती हैं।

निम्न सारणी जापान की प्रमुख धरातलीय चट्टानों का विवरण स्पष्ट करती है।[5]

---

4. Trewartha, G. T.—Japan, A Geography p.
5. Trewartha, G. T.—Japan, A Geography p.

धरातलीय चट्टानें	कुल भू-क्षेत्र का प्रतिशत
1. ग्रेनाइट	12
2. टरशरी से पुरानी चट्टानें	24
3. ज्वालामुखी या लावाकृत	26
4. टरशरी चट्टानें	20
5. पुराना कांप	6
6. कांप	12

ग्रेनाइट चट्टानें जापान के भीतरी सागर के सीमावर्ती प्रदेश में विकसित हुई हैं। यथा ये दक्षिणी-पश्चिमी हांशू, उत्तरी शिकोकू एवं उत्तरी क्यूशू में पाई जाती हैं। इनका विस्तार प्रायः नीची पहाड़ियों एवं कटे-फटे नीचे पठारी खण्डों में है। देश के 26% भू-भाग को घेरे हुए लावा से निर्मित आग्नेय चट्टानों का विस्तार हांशू के मध्य में स्थित ज्वालामुखी प्रदेश में है। नवीन टरशरी चट्टानें जैसे बलुआ पत्थर, शेल या कांग्लो मरेटस प्रायः नीची पहाड़ियों के ढालों एवं नदियों की घाटियों में मिलती हैं। ग्रेनाइट एव ज्वालामुखी चट्टानों की तुलना में तीव्र ढ़ाल एवं पर्वत प्रदेशों में टरशरी चट्टानों का विस्तार कम है परन्तु इनके द्वारा प्रस्तुत खेतिहर भागों का प्रतिशत भी अपेक्षा से कम है। हाँ, एक भूगोलवेत्ता के लिये अवश्य ये चट्टानें आकर्षण की हो सकती है क्योंकि जापान का अधिकांश कोयला एवं पैट्रोल इन्हीं टरशरी चट्टानों से प्राप्त है।

जापान की अधिकांश भू-आकृतियाँ संरचना-क्रम एवं उत्थान-स्वरूप के अनुरूप ही हैं। यहाँ के भू-विवर्तनिक एवं भू-आकारों के स्वरूपों में बड़ा साम्य है। भू-भौगर्भिक दृष्टि से जापान को दो असमान स्वरूपों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम, उत्तरी जापान द्वितीय, दक्षिणी जापान। इन दोनों भागों को हांशू के आर-पार प्रशांत तट से जापान सागर तट तक फैली फोसा मैग्ना की घाटी पृथक् करती है। पुनः दक्षिणी जापान को दो भागों (भीतरी एवं बाहरी क्षेत्र) में बांटा जा सकता है। विभाजक पट्टी के रूप में भूगर्भिक हलचलों से बने शृंखलाबद्ध धसावों को लिया जा सकता है। फोसा मैग्ना की घाटी के उत्तर-पूर्व में स्थित हांशू के धरातलीय स्वरूप में संरचना की दृष्टि से ज्यादा भिन्नता नहीं है। फिर भी प्रशांत तट एवं जापान सागरीय तट प्रदेश में पाये जाने वाले अन्तरों के आधार पर इसे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। क्योंकि प्रशांत तट प्रदेश में पुरानी चट्टानों का बाहुल्य है जबकि जापान सागरीय तटीय पट्टी में ज्वालामुखी चट्टानें पाई जाती हैं। दोनों की विभाजक रेखा के रूप में मध्यवर्ती पर्वत श्रेणी की पूर्वी सीमाओं को लिया जा सकता है।

ट्रिवार्था ने जापान को भू-संरचना की दृष्टि से चार भागों में विभाजित किया है।[6] ये हैं—

1. उत्तरी-पूर्वी जापान का बाह्य क्षेत्र
2. उत्तरी-पूर्वी जापान का भीतरी क्षेत्र
3. दक्षिण-पश्चिमी जापान का बाह्य क्षेत्र
4. दक्षिण-पश्चिमी जापान का भीतरी क्षेत्र

चित्र—2

6. Ibid p. 21-25.
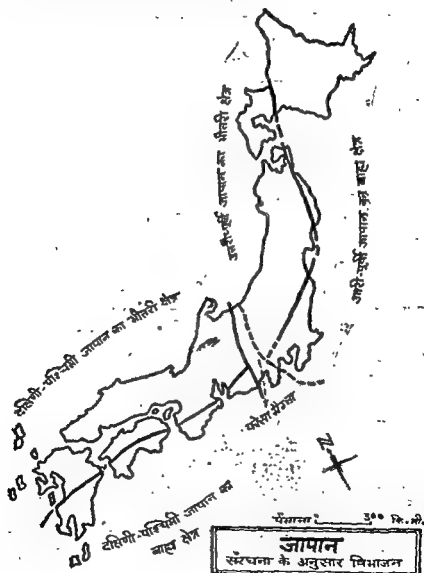
उत्तरी-पूर्वी बाह्य क्षेत्र के अन्तर्गत हांशू एवं होकेडो के पूर्वी यानी प्रशांत तटीय भाग शामिल किए जा सकते हैं। इनके थोड़े पश्चिम में दरार घाटियों का क्रम है जो देशांतरीय विस्तार में फैली हैं। भीतरी क्षेत्र में हांशू तथा होकेडो के पश्चिमी भागों में स्थित दो समानांतर शृंखलाएँ, उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली हैं, शामिल की जाती हैं। इनके बीच-बीच में तलछट से भरे छोटे-छोटे मैदानी भाग हैं। इनमें से मध्यवर्ती श्रेणी हांशू की रीढ़ के समान है। यह शृंखला ही उत्तरी जापान की जल-विभाजक है। इसमें टरशरी युगीन पर्तदार चट्टानों का बाहुल्य है। बाह्य एवं भीतरी क्षेत्रों को भूगभिक हलचलों से बने ये धसावग्रस्त भाग अलग करते हैं जिनका विस्तार होकेडो के ईशीकारी यूफुत्सु निचले प्रदेशों से लेकर सप्पोरो के मैदान तक है।[7]

दक्षिणी-पश्चिमी बाह्य क्षेत्र यानि दक्षिणी हांशू, क्यूशू एवं शिकोकू के प्रशांत तटवर्ती क्षेत्र में सुविकसित कूटिकाओं एवं घाटियों का क्रम मिलता है। घाटियाँ समानांतर श्रेणियों द्वारा घिरी हैं। पर्वतों में मोड़ क्रिया अत्यधिक हुई है। साधारणतः ये पर्वतीय भाग अत्यधिक कटे-फटे एवं घर्षित स्वरूप लिए हुए हैं। भीतरी क्षेत्र में कटाव एवं घिसाव से बने पठारी खण्डों, घर्षित नीची पहाड़ियों का बाहुल्य है। इन उच्च प्रदेशो में ग्रेनाइट चट्टान अधिकांश भागों को घेरे हुए है। पूर्व की तरफ मोड़ों का क्रम एवं ऊँचाई बढ़ती जाती है। यही कारण है कि फोसा मैग्ना की दरार-घाटी के पश्चिमी सीमा पर ये पर्वतीय-क्रम सीमा स्वरूप स्थिति लिए हुए हैं।

फोसामैग्ना की घाटी वस्तुतः एक विशाल दरार-घाटी है। संतुलन की दृष्टि से यह एक अस्थाई क्षेत्र है। फलतः सदा से यहाँ ज्वालामुखी क्रिया होती है। ज्वालामुखी क्रिया के फलस्वरूप यत्र-तत्र ज्वालामुखी पर्वत पाए जाते हैं। मिश्रित लावा ने घाटी के बहुत से भाग भर दिए है। जापान के बड़े-बड़े ज्वालामुखी इसी क्षेत्र में विद्यमान हैं। विश्व प्रसिद्ध फ्यूजीयामा भी यहीं स्थित है।

साधारणतः बाह्य क्षेत्रों में यानी प्रशांत महासागर की ओर झांकते हुए तट प्रदेशों में ढाल बहुत धीमे हैं। ऐसा नहीं है कि नीचा भाग और उसकी बगल में एकदम ऊँची उठी हुई पर्वत शृंखला हो। तटवर्ती पट्टी की भू-आकृतियों में भी कोई खास परिवर्तन नहीं दिखता। यद्यपि प्रशांत महासागरीय भूकम्प-केन्द्र निकट ही स्थित है और निस्संदेह भूकम्प विध्वंस का संदेश लेकर आते हैं, इसके बावजूद बाह्य क्षेत्र में दरारें अपेक्षाकृत कम हैं। इसकी तुलना में भीतरी क्षेत्रों यानी जापान सागर की ओर दरारों का बाहुल्य है। वहाँ के धरातल का स्वरूप निर्धारण करने में इन दरारों का आधारभूत स्थान है। फलतः तटवर्ती प्रदेश में थोडी सी दूरी में ही अनेक परिवर्तन देखे जा सकते हैं। भीतरी क्षेत्र में भूकम्प हल्के किस्म के आते हैं और उनके भूकम्प-केन्द्र भी थल-भाग पर निकट ही होते हैं।

---

7. Stamp, L.D.—Azia, A Regional and Economic Geography p. 618.

जापानी द्वीपों का अधिकांश भाग (85%) पर्वतीय या पठारी स्वरूप लिए हुए है। न केवल भूगर्भिक दृष्टिकोण से जटिलता है वरन् धरातलीय स्वरूप भी अत्यन्त जटिल है जिसका सामान्यकरण सम्भव नहीं है। एक छोटे से भूभाग में भी धरातलीय सरचना, चट्टानों एवं उनसे प्रभावित भू-आकृतियों सम्बन्धी इतना वैभिन्य है कि उन्हें किसी विशिष्ट प्रदेश में नहीं रखा जा सकता। पर्वतक्रमों को भूगर्भिक हलचल और उनके फलस्वरूप बने अवरोधी पर्वतों ने प्रभावित किया है कई जगह दिशा बदल कर दिया है। मोड़ एवं दरार एक-दूसरे से गुँथ से गए हैं। अनावृतिकरण उच्च भागों में प्रभावकारी हुआ है और सर्वाधिक प्रभाव ज्वालामुखी विस्फोटों का हुआ जिन्होंने निरन्तर यहां के धरातल को प्रभावित किया है। निरन्तर क्रियाशील भूकम्प इस बात के प्रत्यक्ष साक्षी हैं कि इस क्षेत्र में आन्तरिक शक्तियां अभी भी क्रियाशील हैं। इन सब तत्वों ने मिलकर द्वीपों के अधिकांश भागों को अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ बना दिया है जिनमें किसी भी प्रकार के कृषिकार्य सम्भव नहीं हैं।

धरातलीय स्वरूप :

जापान के उच्चावचन मानचित्र को साधारणतः देखने पर लगता है कि अत्यन्त अनियमित पर्वत-क्रम, कटे-फटे पठार तथा ऊबड़-खाबड़ घाटियों में कोई सातत्य है ही नहीं। गहराई से देखने पर आभास होता है कि अगर छोटे-मोटे अन्तरों को अनदेखा कर दिया जाए तो यहां के उच्च प्रदेशों को दो क्रमों में रखा जा सकता है। प्रथम क्रम पश्चिमी तट के सहारे-सहारे फैले हुए पर्वतीय भागों तथा दूसरा क्रम पूर्वी तट के सहारे-सहारे फैले हुए पर्वतीय भागों को शामिल करते हुए निर्धारित किया जा सकता है। इनमें पश्चिमी क्रम के पर्वत अपेक्षाकृत ज्यादा ऊँचे (लगभग 6,000 फीट) तथा पूर्वी क्रम के पर्वत नीचे (3,000 फीट से नीचे) हैं। ये उतने शृंखलाबद्ध भी नहीं हैं परन्तु विस्तार इनका ज्यादा है क्योंकि इनका अस्तित्व क्यूशू तथा शिकोकू में भी है। विस्तार की दिशा दोनों की समान है, प्रायः समानांतर हैं।

उपर्युक्त दोनों क्रमों के बीच एक सँकरी दरार घाटी है। यह घाटी इतनी सँकरी है कि आधे से उत्तरी भाग में तो इसका अस्तित्व ही नहीं जान पड़ता। हांशू के दक्षिणी पश्चिमी भाग में भीतरी सागर के निकट यह स्पष्ट देखी जा सकती है। घाटी के मध्य में जहां इसकी चौड़ाई ज्यादा है अनेक ज्वालामुखी पर्वत फोड़ों के समान उठे हुए हैं। कई तो इनमें जागृत भी हैं। ज्वालामुखी विस्फोटों से बहे लावा के कारण कहीं-कहीं इतना जमाव हो गया है कि घाटी भारी सी प्रतीत होती है। ज्वालामुखी प्रदेश में धरातल बड़ा ऊबड़-खाबड़ है।

जापानी द्वीपों में कई दिशाओं से पर्वत-क्रम आकर मिले हैं। इनके संगम-स्थलों पर पर्वतीय गांठों का आविर्भाव हुआ है। इस प्रकार की गाठों का बाहुल्य

हांशू के मध्य भाग में है जहां हांशू के पर्वत-क्रमों से खिचितो-मोरियाना आकर मिले हैं। 'जापानी आल्प्स' वस्तुतः इसी प्रकार की एक पर्वतीय गांठ है जिसमें दर्जनों चोटियां 8,000 फीट से ज्यादा ऊंची है। जापानी आल्प्स के थोड़े दक्षिण में फ्यूजी-

चित्र—3

यामा स्थित है जिसे पवित्र मानकर जापानी लोग उसकी पूजा करते हैं। इसी प्रकार की पर्वतीय गांठे होकेडो (जापानी मोड़दार श्रेणियों एवं क्यूराइल-काराफूटोक्रम के मिलने से) क्यूशू एवं शिकोकू (जापानी क्रम तथा रियूकू के मिलने से) द्वीपों में भी

बन गई हैं । इन सबने मिलकर मध्यवर्ती घाटी को अत्यधिक अस्पष्ट कर दिया है। वर्तमान में घाटी के प्रतिनिधि स्वरूप सुवा झील, मात्सु मोटा धसाव या यजो नदी घाटी ही रह गई है।

पश्चिमी क्रम जो हिडा तथा आकैशी से मिलकर बना है अपनी सम्पूर्ण लम्बाई में शृंखलाबद्ध है जबकि पूर्वी क्रम विखण्डित है। वस्तुतः पूर्वी क्रम में ज्वालामुखी पर्वतों की अधिकता है जो शृंखलाबद्ध स्वरूप प्रस्तुत नहीं करते।

पहाड़ियाँ, ऊबड़-खाबड़ उच्च प्रदेशों युक्त केन्द्रीय भाग, बीच-बीच में तलछट से भरे हुए छोटे-छोटे मैदान, सीमावर्ती पट्टी के रूप में नदियों तथा लहरों के निक्षेप से बने मैदान एवं यत्र-तत्र फाड़ों के समान उठी हुई ऊँची ज्वालामुखी चोटियाँ–सब कुल मिलाकर यही जापान की भू-आकृतियों का सार है। कहीं-कहीं पर तटवर्ती मैदान बिल्कुल गायब हैं, पहाड़ी प्रदेश समुद्री जल तक पहुँच गए हैं। देश का तीन चौथाई से अधिक भाग 15° से अधिक ढाल वाला होने के कारण कृषि उपयोगी नहीं है। कृषि कार्य कुल भू-क्षेत्र के केवल 14% भाग में सीमित हैं। अत्यधिक पर्वतीय स्वरूप हौंशू के मध्य में चूबू गाँठ के आस-पास मिलता है जहाँ दर्जनों चोटियाँ 3000 मीटर से ऊपर उठी हुई हैं। चूबू गाँठ के पश्चिम एवं दक्षिण में, बीवा धसाव के सहारे-सहारे ऐसा प्रतीत होता है मानो पर्वत समाप्त हो गए हों।

पर्वत शृंखलाएँ :

अगर गहराई से देखा जाये तो स्पष्ट हो जाता है कि जापानी द्वीपों के निर्माण में कुछ पर्वत शृंखलाएँ आधारभूत स्थान लिये हैं। जहाँ कोई भी दो श्रेणियाँ मिली हैं वहीं द्वीप चौड़ाई, चोटियों की ऊँचाई एवं धरातल का ऊबड़-खाबड़-पन ज्यादा बढ़ गया है। ये पर्वत-क्रम निम्न प्रकार के हैं। सभी चाप-आकृति लिए फैले हैं।

काराफूतो चापाकार क्रम :

यह श्रेणी जापान में उत्तर-पश्चिम में प्रवेश करती है। वस्तुतः यह सखालिन द्वीप शृंखला का ही विस्तार भाग है अतः इसे कभी-की सखालिन श्रेणी भी कहते हैं। होकेडो में प्रवेश कर यह होकेडो के पश्चिमी तट के सहारे फैली है।

चिशिमा या क्यूराइल चापाकार क्रम :

क्यूराइल द्वीपों का निर्माण करने वाली यह पर्वतीय श्रेणी जापान होकेडो द्वीप में उत्तर-पूर्व से प्रवेश करती है। होकेडो के पूर्वी उच्च प्रदेशों का निर्माण करती हुई यह दक्षिण-पश्चिम दिशा में आगे बढ़ जाती है। होकेडो के दक्षिण में जाकर यह काराफूतो श्रेणी से मिलकर पर्वतीय गाँठ को जन्म देती है।
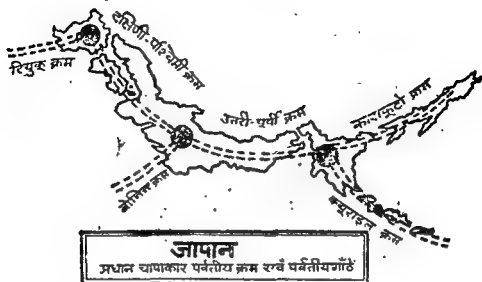
चित्र—4

उत्तरी-पूर्वी या तोहोकू क्रम :

इस चापाकार शृंखला का विस्तार हांशू द्वीप के अर्द्ध उत्तरी भाग तथा होकेडो के दक्षिणी प्रायःद्वीपीय भाग में है। वस्तुतः यह क्रम होकेडो द्वीप की दक्षिणी-पश्चिमी पेनिनशुला में होकर दक्षिण की ओर हांशू द्वीप के मध्य तक आगे बढ़ गया है। हांशू के मध्योत्तरी भाग में यह तीन समानान्तर श्रेणियों में विभक्त है। इन्हीं श्रेणियों की विस्तार दिशा में इस भाग के निचले प्रदेश भी फैले हैं। पूर्वी भाग की अपेक्षा पश्चिमी हांशू में स्थित श्रेणियाँ अपेक्षाकृत ज्यादा शृंखलाबद्ध हैं। तीनों श्रेणियों में मध्य वाली सबसे ज्यादा ऊँची है जो एक तरह से इस प्रदेश की रीढ़ है। इसमें अनेक ज्वालामुखी भी स्थित हैं। पश्चिमी श्रेणी जो देवा के नाम से जानी जाती हैं, अपेक्षाकृत नीची है। कहीं-कहीं तो इसका स्वरूप ठीक नीची पहाड़ियों जैसा हो गया है। जिसमें बीच-बीच में कई दर्रे हैं। यहां इन पहाड़ियों को आसानी से पार किया जा सकता है। इन दोनों (मध्य तथा पश्चिमी) श्रेणियों के बीच में धसाव कृत बेसिनों, जिनके तल पर्याप्त उपजाऊ मैदानी भाग प्रस्तुत करते हैं, का क्रमबद्ध विस्तार है। इन बेसिनों को सामूहिक रूप से 'मेडियन ग्रव' के नाम से जाना जाता है। उपर्युक्त तीनों शृंखलाबद्ध भू-आकार (दो पर्वत श्रेणियाँ तथा उनके मध्य में स्थित नीचे भाग) ही आगे उत्तर में बढ़कर होकेडो की दक्षिणी-पश्चिमी पेनिनशुला को स्वरूप प्रदान करते हैं।

होकेडो द्वीप के दक्षिणी भाग में जहाँ तोहोकू, क्यूराइल एवं सखालिन श्रेणियाँ मिलती है एक ऊँची पर्वतीय गाँठ का उदय हुआ है जिसे 'होकेडो की छत' के नाम से जानते है।

दक्षिणी-पश्चिमी या सेइनान चापाकार क्रम :

यह पर्वत श्रेणी मध्य हांशू से दक्षिण-पश्चिम की ओर फैली हुई है। इस प्रकार इसका विस्तार लगभग पश्चिम-दक्षिण-पश्चिम से पूर्व-उत्तर-पूर्व दिशा में है। पश्चिम में ये शिकोकू द्वीपों के पर्वतों तक विस्तृत हैं। इसी के विस्तार-भाग द्वारा चूगोकू प्रायःद्वीप का निर्माण हुआ है। इस क्रम को तीन सामानान्तर श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

(अ) उत्तरी भाग—यह श्रेणी द्विवार्या द्वारा इंगित दक्षिणी-पश्चिमी जापान के भीतरी क्षेत्र में स्थित है। दूसरे शब्दों में जापान सागरीय तट के समानान्तर फैली है। इसके अन्तर्गत पश्चिम से पूर्व को क्रमशः चूगोकू पर्वत, ताम्बा पठार (बीवा झील के पश्चिम में स्थित) किसो तथा हिडा के पर्वत शामिल किये जा सकते है। चूगाकू पर्वत अपने नाम की पैनिनशुला में रीढ़ की स्थिति लिये हुए हैं। सेइनान के इस उत्तरी भाग में ऊँचाई क्रमशः पश्चिम से पूर्व को ओर बढ़ती जाती है परन्तु कुल मिलाकर यह मध्यम ऊँचाई की ही श्रेणी है। सिर्फ दो ज्वालामुखी चोटियों—दैसेन (5,620 फीट) यहोनो सेन (4,954 फीट) को छोड़कर कहीं भी चूगोकू श्रेणी 3,900 फीट से ज्यादा ऊँची नही है। पूर्व में जहाँ यह उत्तरी भाग समाप्त होता है हौटेकेडैक चोटी (10,138 फीट) विद्यमान है। यह पर्वत चोटी फोसामैग्ना की घाटी के ऊपर 'टॉवर' जैसा स्वरूप लिए खड़ी है।

(ब) मध्य भाग—सेइनान पर्वत क्रम का मध्य भाग वस्तुतः एक विशाल धसाव क्षेत्र है जिसमें 'सैटोनेके' या भीतरी सागर विद्यमान है। चारों ओर पहाड़ियों से घिरे इस खूबसूरत जलाशय में तत्र-तत्र बिखरे अनेक छोटे-छोटे द्वीप हैं जो वस्तुतः पर्वत क्रम के धँसे हुए भागों के ऊँचे हिस्सों का प्रतिनिधित्व करते हैं। नीचे भागों के जलगत हो जाने के फलस्वरूप ये द्वीप रूप में खड़े रह गये हैं। पूर्व से पश्चिम की ओर क्रमशः आवाजी, विसान, गेइयो तथा होयों द्वीप समूह सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। ये द्वीप समूह इजुमी-नाडा, ओसाका-वान, हरिमा-नाडा, बिगों-नाडा, हियुची-नाडा, एहीनाडा, आयानाडा तथा सुवोनाडा आदि खुले समुद्रों को पृथक् करते हैं।

भीतरी सागर वाला धसाव, संरचना की दृष्टि से, आगे उत्तर-पूर्व में किनाई बेसिनों के रूप में आगे बढ़ गया है जहाँ किनाई पर्वतों के बीच-बीच में नीचे उपजाऊ बेसिन स्थित हैं। इन बेसिनों में ही ऐतिहासिक युगों में नारा, क्योटो, बीवा, सैत्सु आदि नगर विकसित हुए थे। ऐसा माना जाता है कि ये नगर क्रमशः यामातो, यामाशीरो, ओमी तथा ओसोका बेसिनों के क्षेत्रीय-नगरों के रूप में थे।

भीतरी सागर का पश्चिमी विस्तार उत्तरी क्यूशू में है जहाँ किनाई की तरह ही बेसिन एवं अवरोधी पर्वत स्थित हैं। किनाई बेसिनों की तरह ये भी सदा से घने बसे रहे हैं। इनमें चीकूगो तथा चीकूजेन आदि मैदानी भाग प्रमुख हैं। क्यूशू

में धसाव के दक्षिणी भाग में पर्याप्त मात्रा में ज्वालामुखी विस्फोट हुए जिन्होंने समस्त प्रदेश में लावा जमावकृत चट्टानों का बिछाव कर दिया है। यहाँ बेप्पू के प्रसिद्ध गर्म स्रोत, माउण्ट अन्जेन के स्वास्थ्य केन्द्र तथा क्रियाशील ज्वालामुखी एसो का विशाल ज्वालामुख (क्रेटर) उल्लेखनीय भू-आकृतियाँ हैं। इस क्रेटर में पर्याप्त घना बसाव है यद्यपि इसके केन्द्रीय भाग में यदा-कदा विस्फोट होता रहता है। पश्चिम में और आगे स्थित अमाकुसा द्वीप तथा यात्सुशीरो की खाड़ी भी भीतरी सागर या मध्यवर्ती धसाव के ही विस्तार भाग हैं।

(स) दक्षिणी भाग— यह प्रदेश टिवार्था द्वारा इंगित दक्षिणी-पश्चिमी भाग के बाह्य क्षेत्र में आता है। इस भाग में सेइनान पर्वत क्रम को 'कुमा-की' पर्वतीय प्रदेश के नाम से जाना जाता है। यहाँ पर्वत क्रम तीन जलाशयों—बूंगा, स्ट्रेट की चैनिल तथा आइजे की खाड़ी द्वारा चार भागों में विभक्त हैं। ये चारों पर्वतीय उच्च प्रदेश अत्यन्त घर्षित तथा कटी-फटी भू-आकृतियों, तेज ढाल वाली कूटिकाओं एवं 'वी' आकार की घाटियों से युक्त हैं। पूर्व से पश्चिम की ओर ये चारों पर्वतीय भाग क्रमशः अकैशी की शिकोकू तथा क्यूशू पर्वतीय प्रदेशों के नाम से जाने जाते हैं। ऊँचाई पश्चिम से पूर्व की ओर क्रमशः बढ़ती जाती है। सेइनान क्रम के उत्तरी 'ज़ोन' की तरह इसका अन्त भी सुर पूर्व में अकैशी पर्वतों में जाकर होता है जिसकी चोटी माउन्ट कीता 10,546 फीट ऊँची है।

बोनिन चापाकार क्रम :

यह पर्वतीय क्रम दक्षिण की ओर से आकर मध्य हॉशू में सेइनान क्रम से मिलता है। इसका पर्याप्त भाग समुद्रगत है इसीलिए इसको 'शिचितो मैरियाना' क्रम के नाम से भी पुकारते हैं जिसका तात्पर्य होता है समुद्रगत पर्वत। शिचितो-मैरियाना पर्वत शृंखला का जापान के धरातल के स्वरूप निर्धारण में सर्वाधिक हाथ है। इसी पर्वत क्रम से जुड़ा हुआ वह दरारी धसाव है जिसे 'फोसामैग्ना' के नाम से जाना जाता है। इसी धसाव में जापान के खूबसूरत एवं बहुचर्चित पर्वत फ्यूजी, हैकोन तथा अमागी स्थित हैं। पर्वत श्रेणियों के बीच में मध्य हॉशू के अन्तरपर्वतीय बेसिन स्थित हैं। इन बेसिनों में मात्सुमोटो, सुवा, कोफू, जैन-कोजी तथा साकू उल्लेखनीय हैं। इन बेसिनों के सीमावर्ती क्षेत्रों में स्थित अकैशी, किमो तथा हिडा आदि पर्वत यद्यपि सेईनान क्रम से सम्बन्धित हैं लेकिन इनकी विस्तार-दिशा शिचितो-मैरियाना के समान होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि ये भी उन्हीं क्रियाओं के फलस्वरूप बने हैं।

शिचितो मैरियाना शृंखला जापान में प्रशान्त महासागर की ओर से प्रवेश करती है जिसके प्रमाण स्वरूप उन सात द्वीप समूहों को लिया जा सकता है जो सामूहिक रूप से इजू शिचितो के नाम से जाने जाते हैं। जापान के निकट शृंखला-बद्ध रूप में स्थित इन द्वीप समूहों की दिशा बोनिन क्रम के अनुरूप ही है जिससे

स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये समुद्रगत श्रेणी (शिचितो मैरियाना) के ही ऊपर उठे हुए भाग हैं। शिचितो मैरियाना पर्वत क्रम इन द्वीपों को जोड़ता हुआ इजू पेनिनशुला में पहुँचता है। इजू पेनिनशुला अपने गर्म स्रोतों एवं तटवर्ती स्वास्थ्य केन्द्रों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ से यह क्रम खण्डित ज्वालामुखी हैकोन को जोड़ते हुए उत्तर में फ्यूजी यामा की ओर बढ़ जाता है। हैकोन के ज्वालामुख (क्रेटर) में खूबसूरत झील एशी स्थित है। जापान के सर्वाधिक प्रिय एवं खूबसूरत पर्वत फ्यूजीयामा को जोड़ते हुए यह क्रम आगे फोसामैग्ना की ओर बढ़ जाता है।

सेइनान तथा शिचितो-मैरियाना चापाकार श्रृंखलाओं के मिलने से मध्य हांशू में जापान की सर्वोच्च पर्वतीय गाँठ का उदय हुआ है जिसे 'जापानी माल्प्स' के नाम से पुकारा जाता है। इसकी सबसे ऊँची चोटी पारिगो को 'जापानी मैटर हार्न' के नाम से जाना जाता है। यहीं फ्यूजीयामा ज्वालामुखी पर्वत समूह है जिसमें फ्यूजीयामा (12,395 फीट) अकशी (10,546) फीट) तथा हिडा (10,44 फीट) आदि पर्वत शामिल हैं। सेइनान-शिचितो संगम क्षेत्र में ही जापान का सबसे बड़ा मैदान भाग 'क्वांटो का मैदान' स्थित है।

रियुकू चापाकार क्रम :

यह पर्वत श्रृंखला क्यूशू में दक्षिण-पश्चिम दिशा से प्रवेश करती है। क्यूशू में प्रवेश से पूर्व समुद्र में उसकी विस्तार दिशा एवं अस्तित्व याकूजीमा याकू के क्यों तथा टानेगा शीमा आदि द्वीपों से स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। ये द्वीप भी समुद्रगत श्रृंखला के ऊँचे उठे हुए भाग हैं। रियुकू पर्वत श्रृंखला और उसकी निर्माणकारी शक्तियों का प्रभाव दक्षिणी-क्यूशू के ज्वालामुखी पर्वत में स्पष्टतः देखा जा सकता है। ऐसा लगता है कि क्यूशू के मध्यवर्ती भाग में स्थित पर्वतों का दक्षिणीवर्ती विस्तार रियुकू क्रम की निर्माणकारी शक्तियों द्वारा ही हुआ है। क्यूशू के दक्षिण में स्थित जापानी द्वीपों में भी यह प्रभाव सुस्पष्ट है। इन द्वीपों को तीन समूहों में रखा जा सकता है—

प्रथम–पूर्व में स्थित टानेगा शीमा जो टरशरी चट्टानों का बना एक नीचा द्वीप है।

द्वितीय–मध्य में स्थित याकूशीमा जो पुरानी चट्टानों का बना हुआ पर्वतीय द्वीप है। 17 मील के व्यास वाले इस द्वीप में 6348 फीट ऊँची येशान चोटी स्थित है। यह ऊँचाई क्यूशू के किसी भी पर्वतीय भाग से ज्यादा है।

तृतीय– पश्चिम में स्थित तोकारा ज्वालामुखी द्वीप समूह जो वस्तुतः दक्षिणी क्यूशू के ज्वालामुखी क्षेत्रों का ही विस्तार भाग है।

क्यूशू द्वीप में सेइनान तथा रियुकू क्रम परस्पर मिलते हैं। इनके मिलने से एक पर्वतीय गाँठ का उदय हुआ है।

निचले प्रदेश :

'मैदान' शब्द का प्रयोग जानबूझ कर नहीं किया जा रहा है क्योंकि यहां 'मैदान' भू-आकार का अभाव है। जिस प्रकार अमेरिका, सोवियत संघ या यूरोप में बड़े-बड़े मैदान हैं, जिन्हें 'संरचनात्मक मैदान' कहा जा सकता है तथा जिनमें क्षैतिज रूप में बिछी हुई कठोर चट्टानें सैकड़ों मीलों तक समतल प्रदेश प्रस्तुत करती है वैसे मैदानों का जापान में पूर्णतः अभाव है। कठोर चट्टानें यहां प्रायः उच्च पर्वतीय भागों में हैं जिन्होने देश का ज्यादातर भाग घेरा हुआ है। यहां के धरातलीय स्वरूप के बारे में सही अनुमान इस तथ्य से लग सकता है कि केवल एक चौथाई भू-भाग ही ऐसा है जिसका ढाल 10 अंश (प्रवणता 1/7) से कम है।[8] जो कुछ भी निचले भाग हैं वे सीमावर्ती तट प्रदेशों में स्थित हैं जिनका वर्तमान स्वरूप डेल्टा, बाढ़कृत मैदान या लहरों से प्रभावित क्षेत्र में होने से ही विकसित हो सका है। जापानी मैदान के प्रकार से तात्पर्य होता है एक अलग-अलग छोटा सा निचला भाग जिसे नदी या लहरों ने अपने मलवे से भर कर कृषि योग्य बना दिया है तथा साधारणतः यह पर्वतों के बीच या तट प्रदेश में ही देखने को मिलता है। इनका विस्तार कितना हो सकता है इसका अनुमान इससे भलिभांति लग जाता है कि हांगू के मध्य-पूर्व में स्थित जापान के सबसे बड़े मैदान (क्वांटो) का क्षेत्रफल केवल 5,000 वर्गमील है।

इस प्रकार जापानी निचला भाग या मैदान साधारणतः तीन स्थितियों— तटवर्ती प्रदेशों, अन्तरपर्वतीय बेसिनों या मध्यवर्ती दरार घाटी क्षेत्रों में स्थित हैं। तटवर्ती प्रदेशों में होने के कारण निचले भागों की तट रेखा वाली पट्टी प्रायः नमकीन दलदल युक्त भी होती है। तटवर्ती निचले प्रदेश भी शृंखलाबद्ध नहीं हैं क्योंकि बीच-बीच में पहाड़ियों के बढ़े हुए भागों की पहुँच समुद्रजल तक है। निचले भागों के भराव के भी यहां तीन ही स्वरूप हो सकते है यथा नदियों की तलछट, लहरों द्वारा काटा मलवा या लावा के जमाव के द्वारा।

संकरी तटीय पट्टी में स्थित जापानी निचले प्रदेशों का एक विशिष्ट स्वरूप देखने को मिलता है। तट रेखा के सहारे-सहारे समानान्तर रूप में फैले तरग निर्मित चबूतरों, कूटकाओं तथा रेतीले टीलों की क्रमबद्ध शृंखला मिलती है। इस क्रम के पीछे कांप के निचले प्रदेश मिलते है। तत्पश्चात पुरानी कांप द्वारा निर्मित अपेक्षाकृत ऊँचे भाग एवं इनके पीछे पहाड़ियों तथा उच्च प्रदेशों का सिलसिला जारी हो जाता है। नदियां छोटे-छोटे डेल्टा भी बनाती हैं। डेल्टा प्रदेश स्वाभाविक रूप से तरंग निर्मित चबूतरा, कूटिका या रेतीले टीलों से घिरे हुए होते हैं। कूटिका या रेतीले टीलों की ऊंचाई एवं इस क्रम ('बीच' कूटिका, टीले) की चौड़ाई अमुक तट क्षेत्र में प्रवाहित हवाओं तथा लहरों की शक्ति पर निर्भर करती है। अतः खुले समुद्रों की

8. Stamp, L.D.-Asia, A Regional & Economic Geography, p. 618.

ग्रोर ये प्राय: ज्यादा ऊँचे हैं जबकि भीतरी सागर या जापान सागर की ग्रोर ग्रपेक्षाकृत नीचे एवं कम चौड़े हैं। उदाहरणार्थ निगाता मैदान की तटवर्ती पट्टी में 'बीच' कूटिका, रेतीले टीले क्रम की चौड़ाई कई मील तक की है। कूटिकाग्रों के मध्य में सँकरी निचली पट्टियाँ होती हैं जिनमें प्राय: लैगून झीलें विकसित हो जाती हैं। इन कूटिका-टीला क्रम से ग्रनेक जगह नदियों की प्रवाह दिशा मोड़ दी गई है। फलत: समुद्र में मिलने से पूर्व कई मीलों तक ये नदियाँ तट रेखा के समानांतर बहती हैं।

तरंग निर्मित चबूतरों, रेतीले टीलों तथा कूटिकाग्रों का फसली कृषि विशेष-कर चावल के लिए कोई उपयोग नहीं है क्योंकि चावल को दलदलीय ग्रवस्थाग्रों की ग्रावश्यकता होती है। हाँ, कई जगह इनमें बागाती एवं सब्जियों की खेती की जाती है। कई भागों में कूटिका-टीलों पर शृंखलाबद्ध रूप में पाइन के वृक्ष लगा दिए गए हैं ताकि वे तटवर्ती मिट्टी को हवाग्रों के साथ भीतर यानी उपजाऊ कांप के मैदानों की ग्रोर जाने से रोकें।

तटवर्ती प्रदेशों में जापानी नदियाँ प्राय: उथली बहती हैं। घाटी तो चौड़ी होती है परन्तु जलधारा बहुत सँकरी। कोई बहुत ग्रसामान्य बाढ़ हो तब तो दूसरी बात है ग्रन्यथा कभी भी ग्रासपास के क्षेत्र इनके जल से प्रभावित नहीं होते। ग्रासपास के क्षेत्र से ग्रामतौर पर नदियों की जलधाराएँ बहुत नीची होती हैं। यही कारण है कि पूरे देश में शायद एकाध ही नदी ऐसी होगी जिसे यातायात के साधनों ने सुरंग के द्वारा पार किया हो। नदियों ने कांप के मैदान निर्मित किए हैं। ये मैदान ही जापान की चावल की खेती के प्रधान क्षेत्र हैं। नई कांप के जमावकृत मैदानों के पीछे पुरानी कांप के भाग हैं। ये ग्रपेक्षाकृत ऊँचे हैं। कृषि इनमें भी होती है परन्तु चावल की नहीं क्योंकि सिंचाई सम्भव नहीं है। गेहूँ, जौ, जई, चाय तथा सब्जियाँ यहाँ पैदा की जाती हैं। इस प्रकार जापानी तट प्रदेश यहाँ की विश्व प्रसिद्ध 'सीढ़ीदार कृषि' का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं।

ग्रन्तरपर्वतीय बेसिनों में विकसित हुए मैदानों में भी नई ग्रौर पुरानी कांप के भाग मिलते हैं परन्तु तटवर्ती प्रदेशों की ग्रपेक्षा विस्तार में बहुत कम। ये प्राय: ग्रसमतल निचले भाग होते हैं जिनमें सीमावर्ती पहाड़ियों से उतरकर ग्राती तीव्रगामी नदियों द्वारा कटाव ग्रौर जमाव का कार्य पृथक् गति एवं स्वरूप में होता रहता है। यही ग्रसमतल होने का प्रधान कारण है। इनमें भी सीढ़ीदार स्वरूप देखने को मिलता है। होकेडो के मध्य, फोसामँग्ना के निकट मध्यवर्ती हाँशू, उत्तरी शिकोकू एवं 'की' पैनिन शुला के मध्य में स्थित निचले प्रदेश यही स्वरूप लिए हैं।

जापान का सबसे बड़ा मैदान टोक्यो नगर के ग्रासपास फैला है जिसे क्वांटो के मैदान के नाम से जाना जाता है। 5,000 वर्गमील में विस्तृत इस निचले भाग में देश की लगभग 20% जनसंख्या निवास (10 प्रतिशत ग्रकेले टोक्यो नगर में)

करती है। अन्य मैदानों में नगोया के चारों ओर स्थित नोबी, क्योटो, कोबे तथा ओसाका को आश्रय दिए हुए किन्की या किनाई, उत्तरी होंशू के पश्चिम तट पर निगीता के चारों ओर फैला एचीगो एवं उत्तर-पूर्व में स्थित सेंडाई का मैदान आदि उल्लेखनीय हैं। होकैडो में इशीकारी, टोकाची तथा नेमूरो के मैदान महत्वपूर्ण हैं। उल्लेखनीय है कि जापान की 80% से अधिक जनसंख्या इन मैदानों में निवास करती है यद्यपि इनका सम्मिलित क्षेत्रफल 20 हजार वर्गमील से ज्यादा नहीं है।

जल-प्रवाह नदियाँ

जापान की नदियाँ छोटी परन्तु तीव्रगामी हैं। ये नाव्य नहीं हैं अतः यातायात की दृष्टि से इनका कोई महत्व नहीं परन्तु चावल उत्पादक क्षेत्रों में सिंचाई एवं जल विद्युत उत्पादन की दृष्टि से इनका भारी आर्थिक महत्व है। द्वीपों के मध्य भाग में धरातल की पर्वतीय प्रकृति, पर्याप्त वर्षा एवं समुद्र से निकटता आदि तत्वों ने ही यहाँ की नदियों को उपर्युक्त स्वरूप प्रदान किया है। पर्वतीय प्रदेशों में तीव्र ढाल तथा झरनों की अधिकता से भारी वर्षा के समय इनमें एकदम बाढ़ आ जाती है। आर्थिक दृष्टि से यह बाढ़ उतनी ही हानिकारक है जितने भूकम्प। वैसे तो उथली एवं तीव्र ढाल वाली होने के कारण नदियाँ यातायात की दृष्टि से व्यर्थ है परन्तु बाढ़ के दिनों उनमें लट्ठे बहाने का कार्य सम्भव है।

जल विद्युत उत्पादन की दृष्टि से भी एक सीमितता है और वह यह कि इन नदियों के सहारे विद्युत उत्पादन बहुत छोटे पैमाने पर ही सम्भव हो सकता है। विशाल शक्ति-गृह नहीं स्थापित किए जा सकते। चूँकि मौसम के अनुसार जल-प्रवाह में परिवर्तन आता रहता है; दूसरे, ये नदियाँ तीव्रगति से उच्च भागों से आती है अतः मलवा पर्याप्त मात्रा में लाती हैं। ऐसी स्थिति में बिना बाँध बनाए शक्ति उत्पन्न करना सम्भव नहीं। यही कारण है कि जापान के सभी द्वीपों, विशेषकर मध्य होंशू प्रदेश में नदियों के सहारे छोटे-छोटे जल विद्युत गृह स्थापित करके उन्हें 'ग्रिड सिस्टम' द्वारा जोड़ दिया गया है। जापान जैसे उद्योग प्रधान देश में जहाँ कोयला, पैट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस का उत्पादन अत्यन्त नगण्य है, इन नदियों की स्थिति शक्ति स्रोत के रूप में काफी महत्वपूर्ण हो गई है।

तटवर्ती बड़े मैदानों में बहने वाली नदियाँ चौड़ी घाटियों में होकर बहती है परन्तु जलधारा घाटी के समय में बहुत पतली दिखाई देती है। गर्मियों में तो अधिकतर नदियाँ प्रायः सूख ही जाती है। इन उथली नदियों ने मैदानों में कांप बिछाकर मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ा दी है। इन प्रदेशों में यातायात के साधन जैसे रेल व सड़कें भी नदियों के सहारे-सहारे बिछाए गए है। सिंचाई के लिए भी ये मैदानी नदियाँ कुछ सीमा तक उपयुक्त हैं। वस्तुत. ये ही वे सिंचित भाग हैं जहाँ से जापान के खाद्यान्न (चावल) का अधिकांश भाग प्राप्त होता है। क्वांटो के मैदान में टोनेगावा तथा एचीगो (होकैडो) के मैदान में प्रवाहित शिनानो गावा आदि

नदियाँ सिंचाई एवं तलछट जमाव की दृष्टि से पर्याप्त महत्वपूर्ण है। ये दोनों जापान की सबसे अधिक लम्बी नदियाँ हैं जिनकी लम्बाई 150 मील के लगभग है। अन्यथा अधिकतर नदियाँ 125 मील से छोटी ही हैं।

नगोया के मैदान में बहने वाली नदियों में किसो, नागारा तथा ईबी उल्लेखनीय हैं। इस मैदान को वर्तमान स्वरूप में लाने में इनके द्वारा किए गए तलछट-जमाव का भी पर्याप्त हाथ है। अन्य में योडोगावा नदी ओसाका (किकी), टौका, कामा-गावा सैंडाई तथा चीकूगो-गावा-स्यूकूशी मैदान मे प्रवाहितहै। तोकाची एवं ईशोकारी नदियाँ होकैडो द्वीप में अपने नाम के मैदानी भागों में होकर बहती हैं। हौंशू की मध्यवर्ती पर्वत श्रेणी जल विभाजक का कार्य करती है। मध्य हौंशू के पर्वतीय क्षेत्रो से निकल कर प्रशांत महासागर में गिरने वाली नदियों में फ्यूजी, किसो किताताई, सगामी तथा योशीना आदि उल्लेखनीय है। इनके विपरीत दिशा में यानी जापान सागर की ओर बहने वाली जलधाराओं में मोगामी, शिनानो, हाइम तथा कुरोबी आदि प्रमुख हैं। शिकोकू द्वीप की नदियाँ अत्यन्त छोटी है। क्यूशू द्वीप में प्रवाहित जलधाराओं में गोकासे एवं चिकूगो नदियाँ सबसे लम्बी हैं।

झीलें :

नदियों की तरह जापानी झीलें भी बहुत छोटे आकार की हैं। इनके निर्माण में भूगर्भिक हलचल, लावा हिमानी आदि तत्वों का प्रमुख हाथ रहा है। निर्माण की प्रक्रिया के आधार पर इन्हें तीन समूहों में रखा जा सकता है :

(अ) भूगर्भिक हलचल से बनी झीलें—इस श्रेणी में उन सभी झीलों को रखा जा सकता है जिनका विकास भूगर्भिक हलचलों से बने बेसिनों या दरार घाटियों में हुआ है। जापान की सबसे बड़ी झील बीवा जो लगभग 300 वर्गमील में फैली है इसी प्रकार की झील है। इस झील ने नगोया मैदान के पश्चिम में स्थित ओमी बेसिन नामक एक 'टैक्टोनिक' धसाव का आधा पश्चिमी भाग घेरा हुआ है। सूवा भी इसी श्रेणी की झील है जो अपने नाम के ही एक बेसिन में विकसित हुई है।

(ब) ज्वालामुखी क्रिया से बनी झीलें—लावा प्रवाह द्वारा किसी जलधारा के मार्ग को रोक देने या ज्वालामुखी पर्वतो के क्रेटर्स मे पानी भर जाने के फलस्वरूप बनी झीलें इस श्रेणी के अन्तर्गत आती । ये झीलें विस्तार में छोटी परन्तु गहरी होती हैं। उत्तरी-पूर्वी हौंशू एवं होकैडो की अधिकतर झीलें क्रेटर में पानी भर जाने के फलस्वरूप बनी हैं। हैकोन पर्वत के ज्वालामुख में बनी एशीनोको झील इस श्रेणी का सर्वोत्तम उदाहरण है। अन्य में, उत्तरी हौंशू में स्थित तोजावाको तथा होकैडो मे स्थित तोया-को, शिकोत्सु-को, अकान-को एवं कुत्तारो-को उल्लेखनीय है। यहाँ की प्रसिद्ध एव प्रतिवर्ष हजारों पर्यटकों को आकर्षित करने वाली झील कुशैनजीन्को भी विस्तृत ज्वालामुख (कालडेरा) में ही बनी है। पर्यटकों की सुविधाओं को ध्यान में

रखकर इसके प्राकृतिक स्वरूप में कुछ संशोधन कर दिए गए हैं। फ्यूजीयामा पर्वत के उत्तर में स्थित प्रसिद्ध 5 झीलें लावा-बांध द्वारा ही बनी हैं। क्यूशू के दक्षिण में स्थित उनागी-श्राइक तथा कागामो-श्राइक झीलें भी छोटे क्रेटरों में विकसित हुई हैं।

(स) अवरोधक मुंडेरों द्वारा बनी झीलें—इस श्रेणी के अन्तर्गत वे झीलें आती हैं जो अवरोधक मुंडेरों द्वारा एस्चुरीज के रोके जाने के कारण बनती हैं। मध्य टोकाई क्षेत्र में स्थित हामाना-को, तोहोकू क्षेत्र में स्थित ग्रोगारा-नुमा एवं हैचीरो-गाता इसी प्रकार से बनी झीलों के उदाहरण हैं। होकेडो के ग्रोखोटस्क सागरीय तट प्रदेश के पीछे बनी सरोमा-को तथा ग्रबाशिरी-को भी इसी तरह से बनी झीलें हैं।

(द) लैगून झीलें—तट रेखा के साथ समानांतर रूप में फैले तरंगनिर्मित चबूतरों, कूटिकाओं एवं रेतीले टीलों के क्रम के फलस्वरूप अनेक छोटी-छोटी लैगून झीलों का आविर्भाव हो गया है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त कुछ ऐसी झीलें हैं जिनका उदय हिमानियों द्वारा नदियों के मार्ग अवरुद्ध कर देने के फलस्वरूप हुआ है। इस श्रेणी की झीलें जापान में बहुत कम हैं तथा ये उच्च प्रदेशों में सीमित हैं।

तटरेखा :

दुनिया में ऐसे कम ही प्रदेश हैं जिनका भू-क्षेत्र जापान के बराबर हो और उनकी तटरेखा की लम्बाई भी जापान के बराबर हो या- तट यहाँ की तरह विविधता लिए हुए हो। जापान की तटरेखा लगभग 28,000 कि. मी. (17,000 मील) है। इसकी तुलना भारत की तटरेखा (3,500 मील) से की जा सकती है। जापान का क्षेत्रफल भारत की तुलना में बहुत कम है लेकिन तटरेखा लगभग 5 गुनी ज्यादा है। स्पष्ट है जापान की तटरेखा अत्यधिक कटी-फटी है। यहाँ भू-क्षेत्र के प्रत्येक 8.5 वर्ग कि मी. के पीछे एक कि. मी. लम्बी तटरेखा बैठती है। ब्रिटेन में यह अनुपात 13.1 का है। कटे-फटे तट होने से ब्रिटेनवासियों की तरह जापानी लोगों में भी समुद्र के प्रति रुचि है।

जापानी तटरेखा न केवल अत्यन्त कटी-फटी है वरन् उसमें क्षेत्रीय भिन्नता भी बहुत है। यह भिन्नता थोड़ी ही दूर चलने पर देखी जा सकती है। अगर कोई टोक्यो से टोकेइडो रेल्वे के सहारे-सहारे दक्षिणी-पश्चिम की ओर यात्रा करे तो नूमाज तक केवल 17 मील की दूरी में ही अनेक प्रकार के तट-स्वरूप मिलेंगे। यथा, टोक्यो खाड़ी का तट प्रदेश चौरस कीचड़ युक्त है। डेल्टा मिलते हैं। इस दलदलीय भाग को सुखाकर थल भाग में परिवर्तित किया जा रहा है। प्राप्त की गई इस भूमि में अनेक प्रकार के उद्योग विकसित हो गये हैं। आगे सागामी

खाड़ी के पूर्वी तटीय भाग रेतीले एवं 'बीच' बनाते हुए हैं जबकि पश्चिमी तटीय भाग संकरे एवं चट्टानी हैं। और आगे चलने पर साकावा के मैदान का तट रेतीले टीलों से भरा हुआ मिलता है। जबकि इजू पेनिनसुला मे ज्वालामुखी पर्वत क्रम समुद्र तक पहुँच गये हैं फलत तटवर्ती निचली पट्टी जैसी कोई चीज रही ही नही है। उपर्युक्त तटीय भिन्नता न केवल टोक्यो-नुमाजू क्षेत्र वरन् समस्त देशों में पाई जाती है। साधारणतः पूर्वी या प्रशांत तटीय भाग ज्यादा कटे-फटे, ऊबड़-खाबड़ हैं जबकि पश्चिमी या जापान सागरीय तट भाग अपेक्षाकृत कम कटे-फटे है। लेकिन इन्हें सपाट या समाकृति वाला समझना भूल होगी।

तटीय स्वरूप में विविधता के अनेक कारण हैं जिनमे मोड़ एवं दरार क्रिया, चट्टानों की संरचना, उनकी कठोरता में विभिन्नता तथा लहरों की शक्ति में विभिन्नता आदि मुख्य है। जिन भागों में मोड़ एव दरार तट के समानान्तर ही हैं, तटरेखा अपेक्षाकृत कम कटी-फटी है। इसके विपरीत जहाँ दरारों का क्रम समुद्री तट से आड़े है वहाँ खाड़ियों तथा कटानो का बाहुल्य है जिन्होंने समुद्र की बाहों को थल भाग में पर्याप्त भीतर तक घुसेड़ दिया है। उदाहरण के लिए उत्तरी होंशू में मोड़ एवं दरारों का क्रम जिस दिशा में है समुद्री तट भी उसी दिशा में फैला है अतः ज्यादा कटा-फटा नही है। यदा-कदा ही कुछ कटानें मिलती है जैसे वाकासा की खाड़ी जो एक स्थानीय दरार के फलस्वरूप बनी है। ठीक इसके विपरीत दशा दक्षिणी-पश्चिमी जापान के उस तटवर्ती भाग की है जो प्रशांत की तरफ झाँकता हुआ है। यहाँ मोड़ एवं दरार उत्तर-दक्षिण दिशा में है जबकि समुद्री तट का पूर्व-पश्चिम विस्तार है। फलतः तट प्रदेश में शृंखलाबद्ध रूप में अनेक अनियमितताएँ है जो सागामी, टोक्यो, सुरूगा, आइजे, ओसाका आदि खाड़ियों एव 'की' तथा बूंगो जलडमरू मध्यों के रूप में सुस्पष्ट हैं।

अगर चट्टानों की संरचना एवं कठोरता की दृष्टि से विचार किया जाये तो स्पष्ट होता है कि जिन तट प्रदेशो मे कठोर चट्टानों का विस्तार होता है वहाँ तटरेखा काफी अनियमित पाई जाती है जबकि मुलायम चट्टानों युक्त पृष्ठ प्रदेशों की तटरेखा उतनी अनियमित नहीं होती। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अतीत में जापानी द्वीप एक सार्वभौम धसाव क्रिया मे होकर गुजरे हैं जिनके फलस्वरूप यहाँ की तटरेखा इतनी कटी-फटी हो गई है। धसाव के तुरन्त बाद तो तटरेखा अत्यधिक कटी-फटी थी। किन्तु बाद में लहरों ने बढ़े हुए भागों को काट-काट कर तथा खाड़ियों को मलबे से पाट कर अनियमितता को काफी कम कर दिया है।

तट प्रदेश की गतियों के आधार पर तट स्वरूपों की प्रायः दो भागों में बांटा जाता है —

प्रथम—उठाव के फलस्वरूप बने तट, जिनमें सीढ़ीदार क्रम एवं तरंग निर्मित चबूतरों 'बीच' आदि होते है। ऐसी तटरेखा ज्यादा अनियमित नही होती।

द्वितीय—धसाव के फलस्वरूप बने तट जो अत्यधिक कटे-फटे होते हैं।

ट्रिवार्था ने तटरेखा के आधार पर जापान को तीन भागों में विभाजित किया है।[9]

1. उत्तरी-पूर्वी प्रदेश जहाँ तट भाग उठाव का परिणाम है। यहाँ तरंग निर्मित रेतीले भाग, सीढ़ीदार स्वरूप मिलते हैं।
2. मध्यवर्ती भाग जहाँ उठाव एवं धसाव दोनों हुए हैं।
3. दक्षिण-पश्चिमी भाग मुख्यतः भीतरी सागर के तटवर्ती क्षेत्र तथा उत्तरी-पश्चिमी क्यूशू। यहाँ धसाव के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। तटरेखा अनियमित है।

यह तटरेखा के वर्तमान स्वरूप का ही प्रभाव है कि जापान आज जलयान निर्माण में दुनिया में सर्वप्रथम है। कटे-फटे तट न केवल इस देश को सुन्दर, प्राकृतिक बन्दरगाह एवं पोताश्रय प्रदान किये हैं वरन् यहाँ के निवासियों को कुशल नाविक बनाने में भी सहयोग दिया है। निकटवर्ती द्वीपों एवं तट के समानान्तर भीतरी भागों में फैली पर्वत श्रृंखलाओं ने पोताश्रयों को आंधी, तूफान व ज्वारों से सुरक्षित रखा है। अधिकांश नदियाँ एस्चुरीज बनाती हैं अतः मलवे जमा होने की कोई समस्या नहीं है। खाड़ियों एवं भीतरी सागरों ने भी उत्तम बन्दरगाह तथा पोताश्रय प्रदान करने में सहयोग किया है। याकोहामा एक प्राकृतिक बन्दरगाह एवं पोताश्रय हैं। सच्चाई तो यह है कि चारों तरफ थल भाग से घिरा, देश के बीचोंबीच देश के आर्थिक हृदय प्रदेश में विद्यमान स्वयं भीतरी सागर ही एक बहुत बड़ा प्राकृतिक पोताश्रय है। इसमें ज्वार तरंगों का उठाव भी नगण्य है। नदियाँ भी बहुत कम गिरती हैं अतः मलवे की समस्या भी नहीं है।

भूकम्प :

जापान के धरातलीय स्वरूप का अध्ययन भूकम्पों के सन्दर्भ के बगैर अधूरा ही रहेगा। यहाँ के वर्तमान धरातल के स्वरूप निर्धारण में भूगर्भिक हलचलों, ज्वालामुखी एवं भूकम्प का भारी प्रभाव रहा है। जापान में लगभग 200 ज्वालामुखी हैं जिनमें से 50–60 क्रियाशील माने जाते हैं। इसी प्रकार वर्ष में लगभग 1,500 झटके भूकम्प के लगते हैं। विश्व के किसी अन्य भाग में भूकम्पों का इतना प्रकोप नहीं है। इसलिये इसे कभी-कभी 'भूकम्प का देश' कह कर भी पुकारते हैं। जापान के इतिहास के पन्ने भयंकर ज्वालामुखी विस्फोटों द्वारा प्रस्तुत प्रलय के विवरण से रंगे पड़े हैं। वैसे तो ज्वालामुखी जापान के चारों द्वीपों में पाये जाते हैं परन्तु इनका सर्वाधिक केन्द्रीकरण मध्य हांशू में फोसामैग्ना की दरार घाटी प्रदेश में है। यहीं जापान का प्रसिद्ध क्रियाशील ज्वालामुखी फ्यूजीयामा स्थित है। यह अपने शान्त-स्वरूप, मनोरम दृश्य एवं प्राकृतिक खूबसूरती के लिए प्रसिद्ध है लेकिन

9. Trewartha, G. T.—Japan, A Geography. p. 36.

इसके अन्दर धधकती ज्वाला कभी भी त्राहिमाम की स्थिति पैदा कर सकती है। सम्भवतः इसीलिए जापानी लोग इसकी पूजा करते हैं। प्राकृतिक सुन्दरता के कारण अगर इसे स्वर्ग की उपमा दी जाती है तो फिजोक ज्वालामुखी जिसमें से निरन्तर दुर्गन्ध युक्त धुंआ निकलता रहता है, को नर्क की उपमा देते हैं।

ज्वालामुखी-कृत लावा का जापान की धरातलीय आकृति के निर्माण में भारी हाथ रहा है। सम्पूर्ण मध्य हांशू में ज्वालामुखी क्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न भू-स्वरूप के स्पष्ट दर्शन किये जा सकते हैं। अतः उन कारणों पर प्रकाश डालना आवश्यक है जो इनके लिए उत्तरदायी हैं। ज्वालामुखी एवं भूकम्प दोनों का आधारभूत कारण एक ही है और वह यह कि जापानी द्वीप पृथ्वी तल के एक अत्यन्त नाजुक, अस्थायी क्षेत्र में विद्यमान है जहाँ अभी भी असन्तुलन बना हुआ है। अतः निरन्तर भूगर्भिक हलचल होती रहती है फलतः ज्वालामुखी विस्फोट एवं भूकम्प होते रहते हैं।

भूकम्प जापान के जन-जीवन में रोजमर्रा की बात है। जन्म से ही आम जापानी इन्हें देखता, महसूस करता आया है अतः वह उनका आदी हो गया है। भूकम्प इनके दैनिक जीवन की व्यवस्थाओं में कोई खास महत्व नहीं रखते। हाँ, सावधानी वश भवन निर्माण पदार्थों में लकड़ी का आधिक्य रखा जाता है। अब तो यहाँ भूकम्प-मुक्त भवन भी बनाये जाने लगे हैं। वैसे जापान के प्रत्येक हिस्से में भूकम्प के धक्के महसूस किये जाते हैं परन्तु भूकम्पों की सघनता और संख्या के आधार पर सात प्रमुख क्षेत्र हैं- जिन्हें 'भूकम्प क्षेत्र' की संज्ञा दी जाती है। ये —

1. होकैडो द्वीप में इशीकारी निचला प्रदेश।
2. फोसामैग्ना घाटी एवं फ्यूजी क्षेत्र।
3. ओसाका से बीवा झील होते हुए त्सुरूगा तक।
4. भीतरी सागर का पश्चिमी भाग।
5. उत्तरी क्यूशू में नासू ज्वालामुखी क्षेत्र।
6. जापान सागर का तटवर्ती प्रदेश।
7. पूर्व में महाद्वीपीय चबूतरा तथा जापान गर्त के सहारे-सहारे का क्षेत्र।

ऊँची-ऊँची पर्वत श्रेणियों एवं अत्यधिक गहरे समुद्री गर्तों की परस्पर निकटता ही, भूगर्भविदों की राय में, जापान में अत्यधिक मात्रा में ज्वालामुखी एवं भूकम्प आने का कारण है। प्रशांत महासागर के उस हिस्से में जहाँ वह जापान की पूर्वी एवं दक्षिणी सीमा बनाता , महासागर काफी गहरा है। जापानी द्वीपों के सहारे-सहारे लगातार अनेक गहरे समुद्री गर्त हैं। मांगू गर्त 30,960 फीट गहरा है। एक ओर यह गर्त श्रृंखला है और दूसरी ओर इसके ठीक ऊपर दीवारी स्वरूप लिए हुए पर्वत खड़े हैं। इस कारण इस क्षेत्र में भूगर्भिक असन्तुलन है और

निरन्तर आंतरिक हलचल रहती है। वस्तुतः इन दो असमान प्रकृति की भू-आकृतियों (पर्वत श्रेणी एवं समुद्री गर्त) की संक्रमण पेटी ही जापान के समस्त भूकम्पों का उद्गम स्थल है। यह सिद्धान्त इस तथ्य से भी समर्थित है कि ज्यादातर भूकम्प-मूल चापाकार पर्वत क्रमों की उन्नतोदर या बाहरी दिशा में पाये गये हैं। भीतरी या नतोदर भाग में बहुत कम भूकम्प-मूल अब तक रिकार्ड किये गये हैं।

चित्र—5

ज्वालामुखी विस्फोट भी हल्के भूकम्पों के लिए उत्तरदायी होता है। लेकिन भूकम्पों को पूर्णतया ज्वालामुखी विस्फोट के साथ जोड़ना भ्रमात्मक है। वस्तुस्थिति तो यह है कि ज्वालामुखी क्षेत्रों में भीषण भूकम्प कभी आते ही नहीं। इन क्षेत्रों में सदा हल्के किस्म के धक्के लगते है। इस तरह ज्वालामुखी तो एक तरह से 'सेफ्टी वाल्व' का रोल अदा करते हैं।[10] निस्सन्देह ज्वालामुखी विस्फोट का प्रधान कारण भी समुद्री गर्तों की निकटता से उत्पन्न भूगर्भिक हलचल है। एक और तथ्य उल्लेखनीय है कि ज्यादातर भूकम्पों के केन्द्र समुद्रों के अन्दर होते हैं। फलतः समुद्री जल में भारी ज्वार उठता है जिससे तटवर्ती भागों को भीषण हानि उठानी पड़ती है। इस प्रकार के भूकम्पों, जिनके केन्द्र समुद्र में होते हैं, से जन धन की अपार हानि होती है। इनकी तुलना में तो जो भूकम्प थलीय भूकम्प-केन्द्र से सम्बन्धित होता है कम हानिकारक होता है।

टोक्यो-याकोहामा क्षेत्र में 1 सितम्बर, 1923 को आने वाला भूकम्प इस शताब्दी का सबसे भीषण भूकम्प था जिसके फलस्वरूप 91,344 मनुष्यों को जान से हाथ धोना पड़ा। आधा टोक्यो नगर बर्बाद हो गया। इस नगर के लगभग

10. Stamp. L. D.—Asia, A Regional and Economic Geography. p. 619.

$5\frac{1}{2}$ लाख घर ध्वस्त हो गये ।[11] इस भयंकर भूकम्प के बाद से ही जापान में विशेष सावधानी बरती जाने लगी है। अन्य उल्लेखनीय भूकम्पों में 1498 का टोकेडो का (20,000 मरे) 1792 का हृयीजेन तथा होंगो का (15,000 मरे या डूबे) 1844 का शिनागो का (12,000 मौत) 1891 का मीना-ओवारी का (7,300 मरे) तथा 1896 का वह भूकम्प प्रमुख है जिसके फलस्वरूप उठी ऊंची ज्वार तरंगे सैनारिक प्रीफैक्चर में 27,000 मनुष्यों को बहाकर ले गई ।[11A]

ज्वालामुखी क्रिया के ही उप-रूपों में से एक वे लगभग 1200 गर्म जल के स्रोत भी उल्लेखनीय हैं जिसका केन्द्रीकरण मुख्यतः ज्वालामुखी क्षेत्रों में ही हुआ है। इनमें से कई स्वास्थ्य केन्द्रों के रूप में विकसित हो गये हैं। भूकम्पों की निरन्तरता ने ऐतिहासिक समय से ही जापान की वस्तु कला को प्रभावित किया है। यहाँ का प्रसिद्ध घंटाघर 'कोनेरसू कीडो', पाँच मंजिला 'पैगोडा' एवं मन्दिर का विशाल तोरण द्वार 'सैमन' इस प्रकार से बनवाये गये हैं कि उन पर लगातार कई कम्पनों का भी कोई असर नहीं होता।

□□□

11. Lyde—The Continent of Asia, p. 705.
11-A. Stamp, L. D.—Asia. A Regional and Economic Geography, p. 620.

जापान : जलवायु दशाएँ

जापान की जलवायु मिश्रित प्रकार की है जिसमें महाद्वीपीय एवं सामुद्रिक दोनों प्रकार की जलवायु दशाओं के तत्व मिलते हैं, महाद्वीपीय स्वरूप कुछ ज्यादा उभरा हुआ है। गर्मियों में ऊँचे तथा सर्दियों में नीचे तापक्रम, पर्याप्त वार्षिक तापांतर, अक्षांशीय स्थिति के अनुसार तापक्रमों की मात्रा में वृद्धि या ह्रास तथा गर्मियों में वर्षा—ये तत्व कुछ ऐसे हैं जो यहाँ की जलवायु के महाद्वीपीय स्वरूप को उभारते हैं। जबकि अधिक वास्तविक एवं सापेक्षिक आर्द्रता, पर्याप्त वर्षा, कम ठण्डे जाड़े आदि लक्षणों से यहाँ की जलवायु पर सामुद्रिक प्रभाव स्पष्ट है। साधारणतः जापान को मानसूनी जलवायु वाले प्रदेश में शामिल किया जा सकता है क्योंकि मानसूनी जलवायु का प्रमुख लक्षण मौसम के अनुसार हवाओं की दिशा में परिवर्तन यहाँ भी विद्यमान है। जापान और पूर्वी चीन की जलवायु में काफी साम्य है। द्वीपीय स्थिति होने से जापान के तापक्रम व आर्द्रता में संशोधन मिलता है। उदाहरणार्थ चीन की सर्दियाँ बहुत ठण्डी होती है, वहाँ ध्रुवीय ठण्डी वायु-राशियों का प्रभाव सीधा पड़ता है जबकि जापान तक आते-आते इन वायु-राशियों की निचली तहें जापान सागर के सम्पर्क से गर्म तथा आर्द्र हो जाती है। इस प्रकार समुद्री प्रभाव के फलस्वरूप जापान अपने सम-अक्षांशीय स्थानों, जो विशाल एशिया भूखण्डों में विद्यमान है, से जाड़ों में कम ठण्डा तथा गर्मियों में कम गर्म होता है। यहाँ की जलवायु दशायें इस दृष्टि से उत्तरी अमेरिका के सम-अक्षांशीय पूर्वी तटीय भाग यानी स० रा० अमेरिका के पूर्वी तटीय भागों से मिलती-जुलती है।

जलवायु दशाओं के इस मिश्रित स्वरूप की व्याख्या उन परिस्थितियों तथा प्रभावकारी तत्वों के सन्दर्भ में की जा सकती है जो यहाँ की जलवायु पर नियन्त्रक प्रभाव डालते है। इनमें निम्न प्रधान है :

स्थिति, विस्तार, धरातलीय स्वरूप एवं आकार :

जापान एशिया महाद्वीप के पूर्व में द्वीपीय स्थिति लिये हुए है। साधारणतः इसका उत्तर-दक्षिण विस्तार है। दक्षिणी सिरे से लेकर हौकेडो के उत्तर तक यह

लगभग 15 अक्षांशों (30° से 45° उत्तरी अक्षांश) में फैला है। चारों ओर समुद्र से घिरा होने के कारण हर तरफ से आने वाली वायुराशियों को जापान में प्रवेश से पहले समुद्रों के ऊपर होकर गुजरना पड़ता है जिससे उनके भौतिक लक्षणों—ताप-क्रम, आर्द्रता आदि, में संशोधन हो जाता है। यही कारण है कि यहाँ जाड़े सुहावने एवं गर्मियाँ ठण्डी होती है।

द्वीपों की विस्तार-दिशा का भी अपना एक प्रभाव है विशेषकर वर्षा-मात्रा की दृष्टि से। यहाँ अधिकतर वर्षा उन आर्द्र हवाओं से होती है जो प्रशांत से उठकर दक्षिणी-पूर्वी मानसूनों के रूप में यहाँ आती है और जापान को पार करते समय यहाँ के पर्वत क्रमों से टकरा कर वर्षा करती हैं। अगर जापानी द्वीपों की विस्तार दिशा उत्तर-दक्षिण न होकर पूर्व-पश्चिम होती तो ये हवायें या जाड़ों में चलने वाली उत्तरी-पश्चिमी हवायें पर्वतों की बगल से होकर निकल जाती और तब सम्भव है इन द्वीपों में इतनी वर्षा न होती। अतः न केवल द्वीपों की विस्तार दिशा वरन् पर्वतों की विस्तार दिशा (द्वीप विस्तार दिशा के अनुरूप ही उत्तर-दक्षिण) एवं धरातल में उच्च प्रदेशों का आधिक्य—ये दोनों तत्व भी अपना प्रभाव रखते हैं।

आकार का भी अपना प्रभाव है। जापान के तट अत्यन्त कटे-फटे हैं। बहुत सी जगह समुद्री बाहें थल के अन्दर तक चली गई हैं। भीतरी सागर के रूप में एक विशाल जलाशय देश के भीतर ही है। शायद द्वीपों में कोई भी स्थान समुद्र से 250 मील से ज्यादा दूर नहीं है। इस प्रकार अनेक खाड़ियों, भीतरी जलाशय, असंख्य तटीय-कटानों के रूप में भीतर तक घुसा हुआ समुद्र प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में यहाँ की मौसमी दशाओं को प्रभावित करता है। इससे यहाँ के निवासियों को मौसम सम्बन्धी दोहरा लाभ है। एक तो यहाँ जलवायु की अतिशयताएँ समाप्त होती हैं दूसरे मौसम में परिवर्तन होता रहता है। मौसम की एकरूपता नहीं सताती। ये दोनों लक्षण शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक कार्य कुशलता के लिए शुभ हैं। यह स्थिति (अक्षांशीय एवं द्वीपीय) का ही परिणाम है कि यहाँ जाड़ों में तापक्रम कभी हिमांक तक नहीं पहुँचता, औसतन 40° फै० रहता है। इसके विपरीत गर्मियों में ठण्डापन होता है, 60°-65° फै० से अधिक ऊँचे तापक्रम नहीं हो पाते। ये स्थितियाँ मानव विकास के लिए आदर्श मानी जाती हैं।

एशिया जैसे विशाल भूखण्ड की निकटता भी अपना प्रभाव डालती है। जापान वस्तुतः दो विपरीत स्वभाव वाले भू-भागों के मध्य स्थित है। पूर्व में दुनिया का सबसे बड़ा जलाशय प्रशांत महासागर स्थित है तो पश्चिम में पृथ्वी मण्डल का सबसे विशाल भूखण्ड (एशिया)। अगर वायु मण्डलीय क्रिया-प्रतिक्रियाओं की जटिलता को थोड़ी देर के लिए अनदेखा करके विचार किया जाये तो मालूम होगा कि जापान के दोनों पड़ोसियों (एशिया एवं प्रशांत महासागर) की सूर्य-ताप के प्रति

भिन्न प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक है जिसका अन्ततः परिणाम यह होता है कि दोनों के ताप और वायु-दबाव में अन्तर होता है। वायु दबाव सम्बन्धी यह अन्तर ही वायुगति को जन्म देता है।

गर्मियों के दिनों में जब सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध में सीधा चमकता है तो एशिया भूखण्ड विशेषकर मध्य एशिया का भाग तपने लगता है और यहाँ निम्न दबाव केन्द्र विकसित हो जाता है। इन दिनों प्रशांत एवं हिन्द महासागरीय जल राशियों का तापक्रम कम एव वायु-दबाव अपेक्षाकृत अधिक होता है। फलतः समुद्र की ओर से एशियाई निम्न वायु दबाव केन्द्र की ओर हवाएँ चलने लगती हैं। यही मानसून है। जल की ओर से आने के कारण ये आर्द्रतायुक्त होती हैं। जापान इनके रास्ते में पड़ता है अतः ये पर्वतों से टकराकर वर्षा करती हैं।

जाड़ों में ठीक इसके विपरीत दशाएँ होती हैं। इन दिनों एशिया भूखण्ड में उच्च दबाव एवं प्रति चक्रवातीय दशाएँ होती हैं। प्रशांत एवं हिन्द का जल गर्म होता है। अतः एशिया भूखण्ड विशेषकर साइबेरिया से प्रशांत महासागर की ओर हवाएँ चलती हैं। थल भाग से आने के कारण ये मूलतः शुष्क एवं ठण्डी होती है। जापान सागर को पार करते समय कुछ आर्द्रता ले लेती है, तापक्रम भी संशोधित हो जाते हैं। अतः जापान के पश्चिमी तट भागों पर कुछ वर्षा भी कर देती है।

वायु राशियाँ :

गर्मियों में जापान तीन प्रमुख वायु राशियों के प्रभाव में होता है—

(अ) क्षेत्रीय पछुआ।

(ब) दक्षिणी-पश्चिमी मानसून।

(स) उष्ण कटिबन्धीय पूर्वा।

क्षेत्रीय पछुआ हवाएँ 40° उत्तरी अक्षांश से ऊपर चलती हैं, उत्तरी जापान इनके प्रभाव में होता है। ये मंचूरिया और कोरिया को पार कर जापान तक पहुँचती हैं। इन हवाओं के दक्षिण में शक्तिशाली दक्षिणी-पश्चिमी हवाएँ चलती हैं। ये वायु राशि अन्य कोई नहीं वरन् दक्षिणी-पश्चिमी मानसून है जो विषुवत रैखिक प्रदेशों में हिन्द महासागर से उठकर भारतीय उप-महाद्वीप को पार करते हुए उपोष्णीय चीन में होते हुए जापान तक पहुँचते हैं। जापान में इनकी दिशा दक्षिण-पश्चिमी होती है। ये वायु राशियां जो मौसम विज्ञान की भाषा में 'सामुद्रिक विषुवत रैखिक वायु राशि' के नाम से जानी जाती है भारी मात्रा में आर्द्रता युक्त होती हैं तथा गर्मियों में पूर्वी एशिया के अधिकतर भागों में (40° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण में) इन्हीं से वर्षा होती है।

गर्मियों में चलने वाली तीसरी प्रमुख वायु-राशि उष्ण कटिबन्धीय पूर्वी जापान में दक्षिण दिशा से प्रवेश करती है। इसे गर्मियों के दक्षिण-पूर्वी मानसून के

नाम से भी पुकारते हैं। इन हवाओं का जन्म उत्तरी प्रशांत महासागर में विकसित ओगासावारा उपोष्णीय उच्च दबाव केन्द्र से माना जाता है। जापान और चीन में इस उष्ण कटिबन्धीय सामुद्रिक वायु राशि से भी पर्याप्त वर्षा होती है। यह निश्चित करना कठिन है कि दक्षिणी-पश्चिमी मानसून और इसमें से कौन ज्यादा आर्द्रता जापानी क्षेत्र में प्रदान करता है। फिर भी, ऐसा माना जाता है कि विपुवत रेखिक या भारतीय दक्षिणी-पश्चिमी मानसून इस दक्षिणी-पूर्वी मानसून की अपेक्षा

चित्र–6

ज्यादा वर्षा के लिए उत्तरदायी है। इसका एक आधार यह माना जाता है कि दक्षिणी-पश्चिमी मानसून ज्यादा आर्द्रता-युक्त एवं अस्थिर प्रकृति का होता है जबकि ओगासावारा उच्च दबाव केन्द्र से उत्पन्न दक्षिणी-पूर्वी मानसून में केवल निचली पर्तों में ही आर्द्रता होती है, ऊपरी पर्तें शुष्क होती हैं।[12]

प्रथम एवं द्वितीय वायु राशियों यानी क्षेत्रीय पछुआ एवं दक्षिणी-पश्चिमी मानसून को पृथक् कर पश्चिम से पूर्व एवं उत्तर-पूर्व की ओर प्रयाण करने वाला ध्रुवीय सीमांत भी गर्मियों के मौसम का उल्लेखनीय तत्व है। ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशि से सम्बन्धित यह सीमांत क्षेत्रीय पछुआ एवं दक्षिणी-पश्चिमी मानसून से मिलने पर वायु विक्षोभ उत्पन्न करता है। उत्तरी चीन एवं उत्तरी जापान की कुछ वर्षा इनके फलस्वरूप भी होती है। ये वायु विक्षोभ प्रायः मध्य एवं उत्तरी चीन से जापान की ओर प्रवाहित होते है। इनका कोई निश्चित समयांतर नहीं होता। किये गये रिकार्डों से पता चलता है कि ये जापान को पार करके आगे एल्युशियन और अलास्का होकर अमेरिका तक पहुँच जाते हैं। गर्मियों के दिनों में ही कुछ उष्ण कटिबन्धीय चक्रवात भी जापान के ऊपर होकर मुख्य भूमि की तरफ जाते हैं। इनके साथ प्रायः बदली आवरण, वर्षा और आर्द्रता की अधिकता होती है। यह वर्षा अलूचा के पकाव के लिए बड़ी उपयोगी होती है अतः इसे अलूचा वाली वर्षा के नाम से भी पुकारते हैं।[13]

जाड़ों के दिनों में जापान पर दो वायु राशियों का प्रभाव रहता है। चूँकि इन दोनों की दिशा और भौतिक लक्षण लगभग मिलते-जुलते होते हैं अतः सम्मिलित प्रभाव काफी शक्तिशाली रूप ले लेता है। जाड़ों के दिनों में जब सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में होता है तो साइबेरिया में तापक्रम बहुत नीचे होते हैं। यहाँ शक्तिशाली उच्च दबाव केन्द्र स्थापित हो जाता है। इस उच्च दबाव केन्द्र से प्रशांत महासागर में स्थित निम्न दबाव केन्द्रों की ओर हवाएँ जाती हैं। इन हवाओं की दो शाखाएँ जापान के ऊपर होकर गुजरती हैं। प्रथम, जो कि पूर्व में एल्युशियन निम्न भार केन्द्र की ओर जाती है। जापान के ज्यादातर भाग इसी प्रभाव में होते हैं। द्वितीय, जो दक्षिण में चीन सागर से आगे स्थित विषुवत रैखिक निम्न भार केन्द्र की ओर जाती है। जापान का दक्षिणी भाग इसके प्रभाव में होता है। वस्तुतः महाद्वीपीय अधिक भार केन्द्र की ओर से घड़ी की सूई की गति दिशा में हवाएँ चलती है जापान में इनकी दिशा प्रायः पश्चिम से पूर्व की ओर होती है इधर इन्हीं दिनों जापान के ऊपर होकर ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशियाँ गुजरती हैं। इस प्रकार ध्रुवीय ठण्डी वायु राशियों तथा पश्चिम से पूर्व दबावी अन्तर से चलने वाली हवाओं (साइबेरिया उच्च से एल्युशियन निम्न की ओर) के मिश्रण से जाड़ों में

12. Trewarth, G-T.—Japan, A Geography p. 41.
13. Albert Kolf—East Asia p. 450.

मानसून का निर्माण होता है। यह काफी ताकतवर हो जाता है। एकदम ठण्ड बढ़ जाती है। ऊँचे भागों में बर्फ भी जम जाती है। इन्हीं दिनों कई चक्रवात जो यॉगटीसीक्यांग की घाटी से पूर्व की ओर यात्रा कर रहे होते हैं, जापान के ऊपर होकर गुजरते हैं।

चक्रवात :

निस्सन्देह जापान की अधिकतर वर्षा दक्षिणी-पश्चिमी यानी सामुद्रिक विषुवत रैखिक एवं उपोष्णीय यानी दक्षिणी-पूर्वी हवाओं से होती है लेकिन चक्रवातों का भी यहाँ की मौसमी दशाओं में कम महत्व नहीं। ये हरेक मौसम में आते हैं। गर्मियों में जब आते हैं तो गर्म-आर्द्र हवाओं को ऊपर उठने को विवश करते हैं अतः वर्षा होती है। यही बात हर मौसम में सत्य है।

जाड़ों के दिनों में जापान निरन्तर चक्रवातीय प्रवाह से प्रभावित रहता है। ये चक्रवात एशिया भूखण्ड से विशेषकर क्षेत्रीय पछुआ हवाओं के 'जोन' से पूर्व की तरफ आते हैं। इनके दो मार्ग भली-भांति पहचाने जा सकते हैं। एक उत्तर में साइबेरिया तथा मंचूरिया से और दूसरा दक्षिणी चीन से पूर्व की ओर। जापान क्षेत्र में आकर ये दोनों चक्रवातीय शाखाएँ मिल जाती हैं परिणाम यह होता है यहाँ भीषण चक्रवातीय दशाएँ हो जाती हैं। गर्मियों के चक्रवात यद्यपि संख्या और प्रभाव की दृष्टि से अपेक्षाकृत कमजोर होते हैं परन्तु वर्षा कराने में इनका बड़ा हाथ होता है क्योंकि ये उष्ण कटिबन्धीय सामुद्रिक तथा विषुवत रैखिक सामुद्रिक के साथ चलते हैं और उन्हें ऊपर उठाते हैं। इनमें से कुछ सीमांतों से भी उत्पन्न होते हैं। यहाँ चलने वाली तूफानी आँधियाँ 'टाय फून्स' गर्मियों के शक्तिशाली चक्रवात है। ये प्रायः गर्मियों के अन्त या पतझड़ के प्रारम्भ में आते हैं और आने के साथ तटवर्ती क्षेत्रों में कहर मचा देते हैं। इनके अचानक और अप्रत्याशित आगमन से कई बार नावें उलट जाती हैं, छतें उखड़ जाती हैं और समुद्र में ज्वार आ जाता है। कई बार इनके साथ भारी वर्षा होती है। इनका स्वरूप लगभग वैसा ही होता है जैसा मैक्सिको की खाड़ी (स० रा० अमेरिका) में 'हरीकेन्स' का।

समुद्र एवं जल धाराएँ :

चारों ओर समुद्रों की उपस्थिति ने जापान की जलवायु की 'अति' अवस्थाओं की सम्भावनाओं को समाप्त कर बड़ा सुहावना कर दिया है। निस्सदेह, ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशियाँ साइबेरिया या चीन में भयानक ठण्ड प्रस्तुत कर देती है पर जापान तक पहुँचने के लिए उन्हें जापान सागर को पार करना पड़ता है। 300 से 900 कि० मीटर की दूरी में इन वायु राशियों की निचली पर्तों का तापक्रम कुछ ऊँचा हो जाता है, आर्द्रता भी बढ़ जाती है। यही कारण है कि जापान के जाड़ों के तापक्रम उन्हीं अक्षांशों में स्थित महाद्वीप के स्थानों से ऊँचे

रहते हैं। यही नहीं पश्चिमी भाग में पर्याप्त वर्षा भी हो जाती है। वर्षा कितनी हो इस बात पर निर्भर करता है कि उन हवाओं ने जापान सागर को जहाँ पार किया है वहाँ सागर की चौड़ाई कितनी है। दूसरे शब्दों में उन हवाओं ने आर्द्रता कितनी ली है।

जापान के पास होकर दो जल-धाराएँ गुजरती हैं। गर्म जल-धारा क्यूरोसीवो तथा ठण्डी जलधारा ओखोटस्क। गर्म जलधारा दक्षिण से तथा ठण्डी जलधारा उत्तर से आती है। गर्म जलधारा क्यूरोसीवो जापान के दक्षिणी सिरे पर दो भागों में बँट जाती है। एक छोटी सी शाखा सुशीमा जलडमरूमध्य में होकर जापान सागर में चली जाती है। इसे सुशीमा धारा के नाम से जानते हैं। क्यूरोसीवो जापान के पूर्वी तट के सहारे-सहारे टोक्यो या 35° उत्तरी अक्षांश तक पहले उत्तर दिशा में बहती है वहाँ से थोड़ा उत्तरी-पूर्वी रुख ले लेती है। इस धारा का गर्मियों में तापक्रम 80° फ० तथा जाड़ों में 60° फ० रहता है। जाड़ों के दिनों में जब पश्चिमी तट तो आने वाली वायुराशियों से गर्मी और आर्द्रता प्राप्त कर लेते हैं और पूर्वी तट पीछे पड़ जाते हैं तो धारा की उपस्थिति का लाभ प्रत्यक्षतः दिखता है। वस्तुतः इसी के कारण पूर्वी तट भी सुहावने, कम ठण्डे जाड़े-युक्त होता है।

ओखोटस्क ठण्डी धारा उत्तर से जापान के पूर्वी तट के सहारे-सहारे दक्षिण की ओर आती है तथा 35° उत्तरी अक्षांश के आस-पास क्यूरोसीवो के नीचे दबकर (ठण्डा पानी नीचे, गर्म ऊपर) समाप्त हो जाती है। जापान सागर में पानी ठण्डा रहता है परन्तु ओखोटस्क की पश्चिमी शाखा का स्पष्ट स्वरूप नहीं है। इस ठंडी धारा से इतना लाभ तो होता ही है कि पूर्वी तट प्रदेशों की गर्मियाँ ठंडी हो जाती हैं क्योंकि यह धारा तापक्रम कम कर देती है। इसके कारण उत्तरी हांशू तथा होकेडो क्षेत्र में कुहरा, धुँध छाया रहता है।

तापक्रम :

जापान की द्वीपीय स्थिति तथा उसकी जलवायु पर निकटवर्ती जलाशयों के समशोधक प्रभाव के आधार पर साधारणतः यह अनुमान किया जाता है कि यहाँ के तापक्रमों में ज्यादा उतार-चढ़ाव नहीं होते होंगे। परन्तु असलियत यह है कि एशिया भूखण्ड की निकटता ने यहाँ के तापक्रमों को महाद्वीपीय स्वरूप दे दिया है। फलतः सर्दियों में तापक्रम नीचे और गर्मियों में काफी गरम वातावरण रहता है। सर्दियों में तापक्रमों को नीचा करने में साईबेरिया की ओर से चलने वाली वायुराशियों का पर्याप्त सहयोग रहता है। इन सबका परिणाम यह हुआ है कि अनपेक्षित रूप से जापान के तापक्रम सम अक्षांशीय स्थानों से ज्यादा उतार-चढ़ाव एवं [illegible] युक्त होते हैं। जैसाकि पूर्वोल्लेख है, जापान की जलवायु दशाएँ

स० रा० अमेरिका के दक्षिण-पूर्वी राज्यों से मिलती हैं। परन्तु दोनों की तुलना करने पर जापान की जलवायु में महाद्वीपीय तत्व की प्रधानता सुस्पष्ट हो जाती है। जाड़ों और बसन्त में जापानी नगरों के तापक्रम उनके सम अक्षांशीय स्थिति अमेरिकन नगरों (अटलांटिक तट प्रदेश में) से कहीं कम होते हैं।
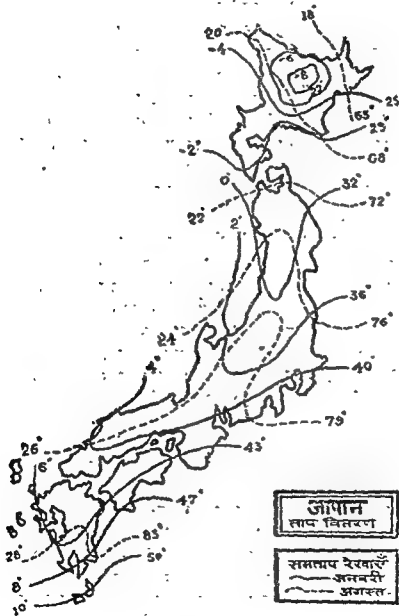
चित्र–7

जनवरी में औसत तापक्रम 15° फ़ै० से लेकर 45° फ़ै० तक होते हैं। यथा, उत्तरी एवं मध्य होकेडो में 15° से 20° फ़ै०, मध्य जापान के निचले प्रदेशों

में 35° से 40° फ॰ तक एवं क्यूशू के धुर दक्षिण में 45° फ॰ तापक्रम होते हैं। तापक्रम वितरण पर अक्षांशीय स्थिति का प्रभाव स्पष्ट है। औसतन प्रत्येक अक्षांश पर 2·6° फ॰ का अन्तर पड़ जाता है। 32° फ॰ यानी हिमांक ताप रेखा उत्तरी हांशू के निगीता और सेंडाई प्रदेशों में होकर गुजरती है जो 38°–39° उत्तरी अक्षांस में स्थित है। समताप रेखाएँ जनवरी के दिनों में दक्षिण की तरफ हुक का आकार लिए मुड़ी होती है जो स्पष्टतः ऊँचाई का प्रभाव प्रकट करती हैं। इन रेखाओं के इस प्रकार के झुकाव से समुद्री प्रभाव भी स्पष्ट होता है। जापान के प्रशांत तटीय यानी पूर्वी एवं जापान सागर तटीय यानी पश्चिमी भागों के तापक्रमों में कोई खास अन्तर नहीं हो पाता। बावजूद इसके कि यहां साइबेरियन ठण्डी हवाएँ पश्चिम से प्रवेश करती हैं, पूर्वी एवं पश्चिमी तटों के तापक्रमों में कोई विशेष अन्तर नहीं है। वस्तुतः जितना तापक्रम इन ठण्डी हवाओं से नीचा होता है लगभग उतना ही जापान सागर के प्रभाव से बढ़ जाता है। दूसरे, जापान सागर तटीय क्षेत्र में जाड़ों के दिनों में बदली आवरण रहता है जिससे रात में तापक्रम ज्यादा नीचे नहीं हो पाते।

गर्मियों में तापक्रम भी ऊँचे होते हैं और हवा में आर्द्रता की मात्रा भी ज्यादा। अतः इन दिनों धुर उत्तरी भाग को छोड़कर शेष जापान में सड़ी गर्मी का जैसा वातावरण होता है। मध्य एवं दक्षिणी जापान में जुलाई के तापक्रम 77° से 80° फ॰ तक होते हैं। अगस्त का महीना कुछ ज्यादा गर्म होता है। इन दिनों दक्षिण के कुछ भागों की अवस्था तो ठीक आर्द्र-ऊष्ण की कटिबन्धीय क्षेत्रों जैसी हो जाती है। उत्तरी जापान यानी हांशू के उत्तरी भाग में तापक्रम 72° से 75° तक एवं होकैडो में 65° से 70° तक होते हैं। इस प्रकार उत्तरी जापान का मौसम इन दिनों न्यूजीलैंड प्रदेश (स॰ रा॰ अमेरिका) जैसा होता है। इन दिनों उत्तर से दक्षिण की ओर प्रति अक्षांस तापक्रम लगभग 1.3° फ॰ की दर से बढ़ते हैं जो जाड़ों की गति (2.6) से लगभग आधी है। होकैडो एवं उत्तरी हांशू के पूर्वी तटों पर ओखोटस्क ठण्डी धारा के कारण तापक्रम अपेक्षाकृत कम (60° फ॰) होते हैं।

पाले वाले दिनों की संख्या दक्षिण से उत्तर की ओर क्रमशः बढ़ती जाती है यथा होकैडो में पाले रहित दिनों की संख्या 120 है। जो हांशू के मध्य में 150–160 तथा दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी भागों में 240 दिन है। यहां फसलों की वृद्धि-अवधि एवं पाले रहित दिनों की संख्या में बड़ा साम्य है। इस प्रकार क्यूशू, शिकोकू एवं हांशू द्वीप के दक्षिण एवं दक्षिणी-पूर्वी भाग में चावल की दो फसलें आसानी से बोई जा सकती हैं जबकि उत्तरी हांशू एवं होकैडो में केवल एक। टोक्यो के आसपास क्वांटो के मैदान में वृद्धि-अवधि लगभग 215 तथा नगोया के मैदान में 207 दिन लम्बी होती है। यही अवधि पाले रहित दिनों की भी है।

वर्षा वितरण :

वर्षा की दृष्टि से जापान को आर्द्र कहा जा सकता है। जापान का कोई भाग ऐसा नहीं है जहाँ शुष्कता की समस्या हो। अपने सम अक्षांसीय एशियाई
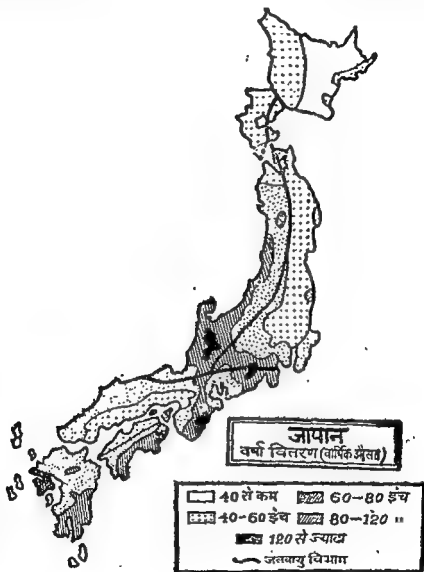
चित्र—8

देशों जैसे कोरिया या चीन की तुलना में यहाँ वर्षा वितरण मौसम, स्थान एवं मात्रा की दृष्टि से काफी सम है। गर्मियों में तो कई भाग जापान के ऐसे होते है जहाँ एशियाई सम अक्षांसीय क्षेत्रों से दुगुनी वर्षा हो जाती है। इसी प्रकार जाड़ों

के दिनों में कोरिया या चीन के भाग शुष्क रहते हैं पर जापान में ऐसी कोई समस्या नहीं। यह सब सम्भवतया जापान की द्वीपीय स्थिति के कारण है। दूसरे, देश के प्रत्येक भाग में हवाओं के रुख के मार्ग में दीवाल जैसे खड़े हुए पर्वत-क्रम वर्षा करवाने में सहायक होते हैं।

सर्वाधिक वर्षा दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी तटीय भागों में होती है जहां वर्षा का औसत 80 से 120 इंच तक का होता है। संक्षेप में तीन क्षेत्र सर्वाधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में रखे जा सकते हैं। ये हैं—

(1) पूर्वी या प्रशांत तटीय भाग, 35° उत्तरी अक्षांस के दक्षिण में जहाँ होकर न केवल दक्षिणी-पूर्वी मानसून गुजरते हैं वरन् चक्रवात भी वर्षा प्रदान करते हैं।

(2) जापान सागरीय तट 35° उत्तरी अक्षांस के उत्तर में जहाँ जाड़ों के मानसूनों से भी वर्षा होती है।

(3) मध्य हॉशू के उच्च प्रदेश।

इन तीनों भागों की तुलना में कुछ ऐसे भी भाग हैं जहाँ देश के औसत से भी कम वर्षा होती है। इन भागों में औसत 40 इंच रहता है। ये निम्न हैं—

(1) होकैडो का अधिकांश भाग।

(2) उत्तरी हॉशू का प्रशांत तटीय भाग।

(3) भीतरी सागर बेसिन का मध्य भाग।

(4) मध्य हॉशू में कुछ अन्तरपर्वतीय बेसिन।

जापान के अधिकांश भागों में वर्षा गर्मियों के दिनों यानी जून से सितम्बर तक के महीनों में होती है। समस्त उपोष्णीय जापान में इन दिनों की वर्षा मात्रा जाड़ों के शुष्क दिनों की वर्षा से 5–6 गुनी होती है। यही गुण जापान को मानसूनी जलवायु के निकट ले जाता है। उत्तर में यानी होकैडो द्वीप के वर्षा वितरण में इतना मौसमी वैभिन्य नहीं मिलता। वहाँ प्रत्येक माह में कुछ न कुछ वर्षा अवश्य होती है।

निम्न सारिणी द्वारा जापान के विभिन्न प्रदेशों के प्रतिनिधि नगरों में ताप-वर्षा का वितरण स्वरूप स्पष्ट है।

प्रतिनिधि नगरों के जलवायु-आँकड़े

केन्द्र	ग्री. तापक्रम (फ.)		वृद्धि अवधि के दिन	वर्षा (सेंटी मीटरों में)											
	अगस्त	जनवरी		ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
1. हिरोशिमा (द. प. जापान)	80	39	221	4.6	6.0	10.6	15.4	14.0	25.7	21.1	11.3	20.1	11.4	6.1	5.2
2. टोकियो (मध्य जापान)	78	38	215	4.8	7.6	10.8	13.4	14.5	17.4	14.6	16.4	24.6	22.2	9.2	5.7
3. यामागाता (उत्तरी हांशू)	75	29	168	10.0	7 9	7.6	7.8	7.8	9.3	14.0	14.0	13.9	10.6	8.7	11.9
4 कुशीरो (होकैडो)	64	20	141	5.2	3.6	6.7	9.0	9.3	11.1	11.5	14.1	15.3	11.6	7.4	5.0

स्रोत—दी क्लाएमैटोग्राफिक एटलस ऑफ जापान (टोक्यो—1948) द्विवार्षी जी. टी. (जापान) से साभार।

मौसमी स्वरूप :

जाड़ों के दिनों में जापान उन ठण्डी हवाओं के प्रभाव में रहता है जो साइबेरिया 'उच्च' से एल्यूशियन निम्न दबाव केन्द्र की ओर चलती हैं। जापान में इनकी दिशा प्रायः उत्तर-पश्चिम से द. पूर्व होती है। ये हवाएँ मूलतः शुष्क होती है परन्तु जापान सागर पर होकर गुजरने के फलस्वरूप आर्द्रता युक्त हो जाती हैं। फलस्वरूप जापान सागर के तटीय प्रदेश में बदली आवरण रहता है वर्षा भी होती है। प्रशांत तटीय प्रदेशों में इन दिनों खुला एवं स्वच्छ आकाश होता है। परन्तु प्रतिचक्रवातीय ये दशाएँ बदलती रहती हैं। एक सप्ताह उत्तरी-पश्चिमी ठण्डी हवाएँ चलती हैं, दूसरे सप्ताह बन्द हो जाती हैं, आकाश खुल जाता है। कुछ दिनों बाद फिर ये जाड़ों के मानसून जिनमें ध्रुवीय महाद्वीपीय ठण्डी वायुराशियों का प्राधान्य होता है, चलने लगती हैं। इनके सीमांत प्रदेशों में चक्रवात भी उत्पन्न होते रहते हैं। समस्त हांशू में तापक्रम 32° और 40° फं. के बीच रहते हैं जो मानसिक एवं शारीरिक विकास के लिए आदर्श हैं। जापान के धुर उत्तरी एवं दक्षिणी भागों के तापक्रमों में इन दिनों भारी अन्तर हो जाता है। होकेडो के भीतरी भागों में इन दिनों तापक्रम 15-20 फं. जबकि क्यूशू एवं शिकोकू में 45 फं. तक हो जाता है।

जनवरी के तापक्रमों पर जलधाराओं का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है। ध्रुवीय ठण्डी वायुराशियों के मार्ग में पड़ने के कारण पश्चिमी तट प्रदेशों में तापक्रम नीचे होने की सम्भावना लगती है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। क्यूरोसीवो की शाखा के रूप में सुशीमा जलधारा उत्तरी-पश्चिमी ठण्डी हवाओं की निचली पर्तों के तापक्रमों को ऊँचा कर देती है।[14] इसके विपरीत पूर्वी तट, चाहे पर्वतीय शृंखला के कारण ध्रुवीय ठण्डी वायुराशियों से उतने प्रभावित नहीं हो पाते परन्तु तापक्रम नीचे ही रहते हैं जिसका प्रधान कारण ओखोटस्क की ठण्डी धारा है जो पूर्वी तटों के सहारे-सहारे बहती है। अन्य मानसूनी प्रदेशों की तरह जाड़ों में जापान में भी वर्षा कम होती है परन्तु शुष्कता उतनी नहीं होती जितनी एशिया के मुख्य भूखण्ड में। पश्चिमी तट प्रदेशों में पर्याप्त वर्षा होती है। इस वर्षा का ज्यादातर भाग हिम के रूप में होता है क्योंकि इन दिनों जापान में पर्वतीय क्षेत्रों में तापक्रम हिमांक से नीचे रहते हैं। पूर्वी तट प्रायः शुष्क ही रहते हैं। ठण्डी ध्रुवीय हवाओं में आर्द्रता का मिश्रण हो जाने से ये उतनी पैनी और दुःखदायी नहीं होती जितनी कि चीन के भागों में।

बसन्त ऋतु में चक्रवातों के आधिक्य के कारण मौसम परिवर्तनशील रहता है। इन दिनों तक भी महाद्वीपी ध्रुवीय एवं सामुद्रिक ध्रुवीय वायुराशियां गतिशील

---

14. Albert Kolb—East Asia p. 449.

रहती हैं। इनके सीमांतों से मिलकर विशाल वायु-विक्षभों का जन्म होता है। मई के महीने में साईबेरियन उच्च दबाव केन्द्र कमजोर होने लगता है और इसी के साथ हवाओं की गति भी धीमी हो जाती है। इधर दक्षिण से सामुद्रिक विषुवत रैखिक एवं उष्ण कटिबन्धीय सामुद्रिक वायुराशियां प्रारम्भ हो जाती हैं जो क्रमशः ध्रुवीय हवाओं का स्थान लेती हैं।

गर्मियों के दिनों में जापानी क्षेत्र में जो हवाएँ चलती हैं उनमें दो प्रमुख हैं। इनमें प्रथम है उत्तर से चलने वाली ओखोटस्क वायुराशि जो समुद्री ध्रुवीय होने के कारण ठण्डी एवं आर्द्र होती है। दूसरी है दक्षिण की तरफ से चलने वाली ओगासावारा वायुराशि जो उष्ण कटिबन्धीय सामुद्रिक होने के कारण गर्म एवं आर्द्र होती है। ये दोनों वायुराशियां जापान क्षेत्र में आकर मिलती हैं। इन दोनों वायुराशियों के अग्रभागों के मिलने से चक्रवात उत्पन्न होते हैं।[15] ठण्डी हवा गर्म-आर्द्र हवा को ऊपर उछाल देती है अतः वर्षा होती है। मई-जून के महीने से ही तापक्रम एकदम तेजी से बढ़ने लगते हैं। जुलाई के महीने में दक्षिणी जापान में 80 फ. तथा उत्तरी होंशू एवं होकेडो में 60° से 70° फ. तक तापक्रम होते हैं। दक्षिणी जापान के कई भागों में तो गर्मी असहनीय हो जाती है।

जुलाई-अगस्त के दिनों में गर्मियों के मानसून यानी दक्षिणी-पश्चिमी एवं दक्षिणी-पूर्वी मानसून पूरी तरह देश को ढक लेते हैं। देश के अधिकतर भागों में इन्हीं से वर्षा होती है परन्तु एक आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि सर्वाधिक वर्षा मानसून के प्रारम्भ एवं समाप्ति के दिनों यानी अन्तिम जून एवं सितम्बर के महीनों में होती है। अगस्त का माह अत्यधिक गर्म एवं आर्द्र होता है, सड़ी गर्मी होती है। दक्षिणी जापान में इस महीने में ठीक वैसा ही वातावरण होता है जैसा भारत में क्वार के महीने में। अधिक वर्षा का दूसरा प्रवाह सितम्बर के महीने में होता है। पहले माना जाता था कि यह वर्षा लौटते हुए मानसूनों से होती है पर अब यह अध्ययन किया जा चुका है कि साईबेरियन ठण्डी वायुराशियों, जो अब प्रारम्भ होने लगती हैं तथा ओगासावारा गर्मार्द्र वायुराशियों, जो अब समाप्ति की ओर होती हैं, के मिलान के फलस्वरूप ही यह वर्षा होती है। इस वर्षा में कुछ सहयोग टायफून्स का भी होता है।

जलवायु विभाग।

विस्तार की दृष्टि से यद्यपि जापान एक छोटा-सा देश है परन्तु जलवायु की दृष्टि से इसमें पर्याप्त भिन्नताएं हैं। इन्हीं भिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए कई विद्वानों ने अपने अलग-अलग विभाजन प्रस्तुत किए हैं। कोपेन एवं थोर्नथ्वेट ने अपने जलवायु सम्बन्धी विश्व विभाजन में जापान जैसे छोटे भूभाग के भी उप-विभाग किए हैं। यथा कोपेन ने जापान को दो विभागों में रखा है ये हैं—

15. Albert Kolb—East Asia p. 450.

प्रथम, जिसके अन्तर्गत होकेडो एवं हॉशू के सुर उत्तरी भाग आते हैं। यहाँ सर्दियाँ कठोर तथा शुष्क एवं गर्मियाँ आर्द्र एवं ठण्डी पाई जाती हैं।

द्वितीय, जिसके अन्तर्गत मध्य हॉशू एवं दक्षिणी जापान आते हैं। यहाँ जाड़े हल्के, गर्मियाँ गर्म तथा आर्द्र होती हैं।

थोर्नथ्वेट ने जापान के कई छोटे-छोटे प्रदेश बनाये हैं जलवायु के आधार पर। उन्होंने अपने विभाजन में पश्चिमी जापान के दक्षिणी हिस्से को, उत्तरी हिस्से को, क्यूशू, शिकोकू तथा हॉशू के दक्षिणी हिस्से को, समस्त औद्योगिक पेटी को तथा हॉशू के पूर्वोत्तरी भाग, होकेडो एवं सखालिन को में रखा है। जापानी भूगोलवेत्ता प्रायः जापान को चार जलवायु विभागों में बाँटते हैं। ये हैं—होकेडो, तोहोकू (उत्तरी हॉशू) प्रशांत तटीय प्रदेश एवं भीतरी सागर क्षेत्र तथा चौथा भाग जापान सागर तटीय पट्टी। परन्तु सबसे सरल लोकप्रिय एवं उपयुक्त विभाजन डडले स्टैम्प महोदय ने किया है जिसके अनुसार जापान को निम्न चार जलवायु विभागों में विभाजित किया जा सकता है।[16]

उत्तरी जापान—इस विभाग में उत्तरी होकेडो को रखा जा सकता है। यहाँ की जलवायु अवस्थाएँ सखालिन से बहुत कुछ मिलती-जुलती हैं। भीषण शुष्क सर्दी (तापक्रम 25° फं. से नीचे) ठण्डी गर्मियाँ (तापक्रम 60° फं.) यहाँ की जलवायु के प्रमुख लक्षण हैं। आधे वर्ष लगभग हिमाच्छादन की स्थिति रहती है। उत्तर-पश्चिम से साईबेरियन तथा ध्रुवीय ठण्डी वायुराशियाँ एवं पूर्व से ओखोटस्क की ठण्डी जलधारा इस भाग को सर्दियों में पर्याप्त ठण्डा कर देते हैं। हॉशू द्वीप के अति उच्च भागों में, जहाँ बर्फ जमी रहती है, भी इसी से मिलती-जुलती जलवायु अवस्थाएँ मिलती है।

पश्चिमी जापान—इस भाग में दक्षिणी होकेडो एवं हॉशू द्वीप के समस्त पश्चिमी तटीय भाग को शामिल किया जा सकता है। जाड़ों के दिनों में वर्षा, बदली आवरण; कोहरा, धुंध इस जलवायु विभाग के प्रमुख लक्षण हैं। जाड़ों के दिनों में यहाँ वर्षा उत्तरी-पश्चिमी मानसूनों के द्वारा होती है जो मूलतः तो शुष्क एवं ठण्डे होते हैं परन्तु जापान सागर के ऊपर होकर गुजरने के कारण आर्द्रता ग्रहण कर लेते हैं। पूर्वी तटीय प्रदेशों की अपेक्षा यहाँ के तापक्रम जाड़ों में ज्यादा रहते हैं क्योंकि क्यूरोसीवो की शाखा के रूप में सुशीमा जलधारा इनके पास होकर गुजरती है। वर्षा का अधिकांश भाग जाड़ों में होता है। वार्षिक वर्षा का औसत 60 इंच से ज्यादा है। प्रदेश के दक्षिणी भाग उत्तरी भागों की अपेक्षा ज्यादा गर्म होते हैं। गर्मियों में तापक्रम बहुत ज्यादा ऊँचे नहीं होते।

पूर्वी जापान—मध्य हॉशू के अर्द्ध पूर्वी भाग यानी 35° उत्तरी अक्षांश के उत्तर में स्थित प्रदेश एवं होकेडो के दक्षिणी-पूर्वी भाग इसमें शामिल किये जा

16. Stamp. L. D.—Asia, A Regional and Economic Geography p. 626-8.

सकते हैं। यह वह भाग है जिसके पास होकर ग्रोखोटस्क की ठण्डी धारा प्रवाहित है अतः जाड़ों के दिनों में तापक्रम बहुत नीचे हो जाते हैं। जनवरी में यहाँ तापक्रम हिमांक के ग्रास-पास ग्रा जाते हैं। वर्षा नहीं होती। सर्दियाँ शुष्क तथा कठोर होती हैं। गर्मियों में मौसम ग्रच्छा होता है। ग्रोखोटस्क के प्रभाव के कारण गर्मियाँ ठण्डी होती हैं। वर्षा गर्मियों में होती है। वार्षिक ग्रौसत 60 इंच से ज्यादा है। ज्यों-ज्यों उत्तर की ग्रोर चलते हैं वर्षा की मात्रा कम होती जाती है।

दक्षिणी जापान—जापान का यह भाग ऐसा है, जिसमें पूर्णतः उपोष्णीय जलवायु दशाएँ हैं। यथा, जाड़ों में तापक्रम 40-45° फ., गर्मियों में 70-80° फ. तथा वर्षा का ग्रौसत 80 इंच होता है। जापान का यही ऐसा भाग है जहाँ चावल की दो फसलें ग्रासानी से हो सकती हैं। वर्षा ग्रधिकतर गर्मियों में होती है जिसका ग्रधिकांश भाग जून से सितम्बर की ग्रवधि में होता है। टायफून्स इस प्रदेश में भारी तूफान मचाते हैं। इस विभाग के ग्रन्तर्गत क्यूशू, शिकोकू एवं हांशू का दक्षिणी भाग (35° ग्रक्षांस के दक्षिण में) शामिल किये जा सकते हैं। इस जलवायु विभाग की दशाग्रों का सही प्रतिनिधित्व भीतरी सागर के ग्रास-पास के क्षेत्र करते हैं।

□□□

जापान : मिट्टी एवं प्राकृतिक वनस्पति

मिट्टी का स्वरूप, रंग, उत्पादक-शक्ति एवं विकास मुख्यतः जलवायु, वनस्पति, पैतृक चट्टान तथा धरातल के ढाल आदि तत्वों पर निर्भर करता है। कृषि के सन्दर्भ में मिट्टी का एक प्राकृतिक संसाधन के रूप में भारी महत्व है। विशेषकर जापान जैसे देश में जहाँ कृषि योग्य भूमि का अभाव (कुल भू-क्षेत्र का केवल 15%) है और कुल जनसंख्या का 38% भाग कृषि कार्यों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से संलग्न है, मिट्टी के स्वरूप का भारी महत्व है। जापान का उच्चावचन मिट्टी के निर्धारण में एक महत्वपूर्ण तत्व रहा है। कछारी मिट्टियाँ जो जापान की चावल की कृषि के लिए आधार प्रस्तुत करती हैं केवल तटवर्ती सँकरी पट्टी में विद्यमान है। उपजाऊपन की दृष्टि से ये मिट्टियाँ निस्सन्देह अच्छी हैं परन्तु सदियों से प्रयोगित होने के कारण इनकी उपजाऊ शक्ति का ह्रास होता जा रहा है। अतः जापानी किसानों को अच्छी फसल लेने के लिए भारी मात्रा में रासायनिक एवं मछली का खाद देना पड़ता है। कांप के इन मैदानों में कई जगह पानी के ठहराव के कारण 'रेह' की समस्या उत्पन्न हो गई है। मिट्टी के कटाव की भी एक स्थायी समस्या है जो मुख्यतः पुराने कांप के क्षेत्रों में है। वस्तुतः यहाँ की नदियाँ बरसाती है जो तीव्रगामी एवं झरने बनाती हुई हैं। बाढ़ के दिनों में जब ये अपनी उथली घाटियों में होकर बहती हैं तो मिट्टी का कटाव भारी मात्रा में करती हैं।

जापान में सुव्यवस्थित जल प्रवाह की कमी है। इसके लिए बहुत कुछ सीमा तक यहाँ का पर्वतीय प्रकृति लिए हुए धरातल भी उत्तरदायी है। अनियमित जल प्रवाह से मिट्टी का कटाव तो होता ही है साथ में बहुत से स्थान बाढ़ से भी क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। अनुमान है कि जापान में लगभग 35% ऐसी कृषि भूमि है जिसमें अगर जल प्रवाह व्यवस्था को ठीक किया जाये तो किसी न किसी प्रकार की दो फसलें एक वर्ष में पैदा की जा सकती हैं। पर्वत-पठारी भागों में मिट्टी की अत्यन्त पतली पर्त है। यह उपजाऊ भी कम है।

पिछले दशकों में जापानी मिट्टियों का सर्वेक्षण कई संस्थाओं द्वारा किया गया। इन सर्वेक्षणों में जापान के मिट्टी विभाग द्वारा किया 'कामोशिता' सर्वेक्षण एवं 'स्कैप' सर्वेक्षण ज्यादा सही एवं उपयोगी माने जाते हैं। इनमें से प्रथम

सर्वेक्षण के अनुसार जापान की मिट्टियों को 15 बड़े भागों में रखा गया है जबकि दूसरे सर्वेक्षण ने छोटे-मोटे मिलाकर 60 मिट्टी-प्रकार प्रस्तुत किये हैं। प्रस्तुत पुस्तक के विषय क्षेत्र को देखते हुए इन सभी प्रकारों का अध्ययन सम्भव नहीं है अतः मुख्य प्रकारों पर विचार करना वांछनीय है।

उपर्युक्त दोनों सर्वेक्षणों में कुछ मिट्टी समूह मिलते-जुलते हैं। इन दोनों को आधार बनाते हुए जापान की मिट्टियों को तीन बड़े समूहों में रखा जा सकता है।

क्षेत्रीय मिट्टियाँ—इस प्रकार की मिट्टियाँ प्रायः उच्च प्रदेशों, खादर, तीव्र ढालों तथा पहाड़ी क्षेत्रों में पाई जाती है। इस समूह से सम्बन्धित मिट्टियों ने लगभग 2,682,195 हैक्टर भूमि (7.2%) घेरी हुई है। समूह से सम्बन्धित मिट्टियों में पोडजोलिक, स्लेटी-भूरी, पीली लाल तथा लाल-भूरी लेटराइट आदि उल्लेखनीय हैं। पोडजोलिक मिट्टियों का विस्तार उत्तरी होंशू एवं होकैडो में है। रंग राख जैसा है। नीचे तापक्रम एवं अधिक आर्द्रता के फलस्वरूप हुई लीचिंग क्रिया ने इन मिट्टियों को जन्म दिया है। ह्यूमस तत्वों की कमी के कारण ये कम उपजाऊ हैं। कोणधारी वनों का विस्तार इन्हीं मिट्टियों पर है।

भूरी-स्लेटी मिट्टियों का विस्तार मिश्रित वनों के क्षेत्र में 35° से लेकर 40° उत्तरी अक्षांश तक के भागों में मिलता है। रासायनिक एवं कार्बनिक तत्वों की कमी है। कम उपजाऊ हैं। लाल-पीली मिट्टियाँ क्यूशू, शिकोकू तथा होंशू के दक्षिणी भागों में है। ज्यादा गर्मी-वर्षा के कारण आम्लिक क्रिया हुई है लाल-पीला रंग इस बात का संकेत है कि ये मिट्टियाँ लेटराइट होती जा रही हैं।

अक्षेत्रीय मिट्टियाँ—इसमें दो मिट्टियों को रखा जा सकता है। प्रथम, लिथोसोल तथा दूसरी कांप इन दोनों मिट्टी-समूहों ने मिलकर देश के कुल भूक्षेत्र का लगभग 82% भाग (36,858,508 हैक्टर) घेरा हुआ है। इनमें से प्रथम यानी लिथोसोल का विस्तार पहाड़ी-पर्वत प्रदेशों में है और देश के दो-तिहाई भूभाग में फैली हैं। तीव्र ढाल के कारण इन प्रदेशों में अपरदन निरन्तर चलता रहता है अतः इनकी पर्त बहुत पतली है, एक प्रकार से लिथोसोल मिट्टियाँ, उथली, पथरीली तथा रेतीली हैं। केवल यत्र-तत्र ही इनका उपयोग कृषि के लिए है, अन्यथा ज्यादातर भाग वनों से ढका है।

कांप ने तटवर्ती निचले प्रदेशों, बाढ़कृत मैदानों एवं डेल्टा प्रदेश में देश के कुल भू-क्षेत्र का लगभग 14% भाग घेरा है, ये अपेक्षाकृत नई एवं अविकसित मिट्टियाँ मानी जाती हैं। इसका कण-स्वरूप भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में पृथक् है। यथा, कांप के मैदानों के ऊपरी भागों में मोटे कंकड़ तथा सीमावर्ती कांप के भागों में दोमट, चिकनी एवं रेतीली मिट्टी पाई जाती है। वस्तुतः कांप का स्वरूप जल-धाराओं से दूरी, जलधारा का विस्तार, अधः स्तर चट्टान आदि तत्वों पर निर्भर करता है। कांप की मिट्टी की विस्तार जापान के सभी भागों सभी अक्षांशों में स्थित

तट प्रदेशों में है। चावल की खेती इन्हीं मिट्टियों में केन्द्रित है अतः जापानी अर्थ-व्यवस्था में इन मिट्टियों का काफी महत्व है।

मिश्रित विस्तार स्वरूप वाली मिट्टियाँ – ये पूर्ण विकसित मिट्टियाँ हैं जिनके विकास के स्वरूप पर स्थानीय दशाओं जैसे अनियमित एवं अविकसित जल-निकास व्यवस्था तथा लावा राख के मिश्रण आदि का प्रभाव पड़ा है। इनका विस्तार जापान के लगभग 10% भू-भाग (3,75 ,827 हैक्टर) में पाया जाता है। एण्डोसोइल प्लानोसोल तथा बॉग आदि प्रमुख मिट्टी समूह हैं जो इस श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। इनमें सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण एवं सर्वाधिक विस्तार वाला प्रथम मिट्टी समूह (एण्डो सोइल) है जो लगभग 3 मिलियन हैक्टर में फैला है। इसमें ज्वालामुखी कुल राख का बाहुल्य है जो हवा के द्वारा उड़ाकर जमा की गई है। इसका रंग काला एवं भूरा है। यह उच्च प्रदेशों में पाई जाती हैं। यद्यपि कम उपजाऊ है परन्तु कांप को छोड़ कर अन्य सभी मिट्टी-प्रकारों से ज्यादा आर्थिक महत्व की है। इन मिट्टियों का विस्तार दक्षिणी एवं पूर्वी होकेडो, क्वांटो मैदान, मध्य जापान तथा दक्षिणी क्यूशू में है।

जापान के कुल भू-क्षेत्र का लगभग 68 प्रतिशत भाग जंगलों से घेरा हुआ है। इस दृष्टि से जापान की तुलना दुनिया के किसी भी विकसित देश से की जा सकती है। इस क्षेत्र में जापान स्वीडन और फिनलैण्ड का प्रतिद्वन्द्वी है। यहाँ के प्राकृतिक वनस्पति स्वरूप की यह विशेषता है कि उसमें रेगिस्तानी झाड़ियों का पूर्णतः अभाव है तथा घास क्षेत्रों का विस्तार नगण्य है। घास क्षेत्रों के नाम पर 'गेनया' जंगली घास को लिया जा सकता है जो कुल भू-भाग के लगभग 7% क्षेत्र में विस्तृत है। लगभग 5% भूमि ऐसी है जिसे व्यर्थ कहा जा सकता है क्योंकि इसमें उपयोगी जंगल नहीं पनप सकते। आंकड़ों की दृष्टि से कुल भू-क्षेत्र 91.1 मिलियन एकड़ में से लगभग 55% मिलियन एकड़ पर घने जंगल हैं। इसमें घास क्षेत्र एवं व्यर्थ भूमि शामिल नहीं है। कुल वनों में से 50% चौड़ी पत्ती वाले, 29% कोणधारी तथा शेष 21% मिश्रित वन हैं। गेनया जंगली घास लगभग 6 मिलियन एकड़ भूमि में है।

वन जापान के प्राकृतिक वरदानों में से एक हैं जिनका यहाँ के आर्थिक ढांचे में भारी महत्व है। मकानों की निर्माण सामग्री से लेकर (जापान जैसे देश में जहाँ सदा भूकम्प आते हैं, भारी महत्वपूर्ण भवन निर्माण पदार्थ) कागज, लुग्दी, जलयान, नकली धागा, रेशम, फर्नीचर आदि सभी उद्योगों में जापानी वनों से प्राप्त लकड़ियों का उपयोग होता है। जलयान तथा मछली उद्योग से सम्बन्धित कार्यों में टिम्बर का आधारभूत महत्व है। इन वनों से प्राप्त लकड़ियों का सदुपयोग करने के लिए ज्यादातर कारखाने वन क्षेत्रों में ही स्थापित कर दिये गये हैं। कारखानों की इकाइयां छोटी-छोटी हैं जो जल-विद्युत से चलाई जाती हैं। अवसर की बात

है कि वनों का बाहुल्य उन्हीं क्षेत्रों में है जहाँ छोटी-छोटी तीव्रगामी नदियों से विद्युत प्राप्त की जाती है।

सदा से ही जापानी जन-जीवन में लकड़ी का भारी महत्व रहा है। औद्योगिक उपयोग के अतिरिक्त बर्तन तथा औजार बनाये जाते रहे हैं। जल विद्युत से पहले लकड़ी एवं चारकोल ही शक्ति के प्रधान स्रोत थे। परोक्ष लाभ यह भी है कि इनसे मिट्टी का कटाव रुकता है। जापानी वनों से कठोर तथा मुलायम सभी प्रकार की लकड़ियाँ प्राप्त होती हैं। औद्योगिक महत्व की मुलायम लकड़ियों में चीड़, हिनोकी तथा सुगड़ी आदि उल्लेखनीय हैं। कुल वनों का लगभग आधा भाग निजी स्वामित्व में है। एक तिहाई वन सरकार के अधीन तथा शेष विभिन्न आकार की सहकारी समितियों के अधिकार में है। आजकल जापान में नये वनों (अच्छी टिम्बर वाले) के रोपण पर जोर दिया जा रहा है। वन विभाग द्वारा की गई गणना से पता चला कि यहाँ के वनों में लगभग 1,890.3 मिलियन घन मीटर टिम्बर खड़ी हुई है एवं प्रति वर्ष लगभग 75 मिलियन घन-मीटर टिम्बर वनों से काट कर प्राप्त की जाती है। उपयोगी टिम्बर की कमी होने से पर्याप्त मात्रा में विदेशों से आयात भी की जा सकती है।

जापानी वन प्रदेश को वृक्ष की किस्मों एवं परिवारों के आधार पर तीन बड़े समूहों में रखा जाता है।

शीत-शीतोष्ण कोणधारी वन—कोणधारी वनों का विस्तार होकेडो तथा हांशू के उच्च प्रदेशों में हल्की राख का रंग लिए हुए पोडजोल मिट्टी वाले भागों में मिलता है। ये वन मुलायम लकड़ी वाले हैं। आर्थिक दृष्टि से ये बड़े महत्व के हैं क्योंकि कागज तथा लुग्दी उद्योग में इनका उपयोग होता है। शंकुल वनों में फर, पाइन, लार्च, बर्च आदि के वृक्षों का बाहुल्य है। ये वृक्ष एबिस, बिएटची, पीसिया, जोजोन्सिस तथा पीनस प्यूमिला आदि वनस्पति परिवारों से सम्बन्धित हैं।

शीतोष्ण कटिबन्धीय मिश्रित वन—ये वन वस्तुतः उत्तर के कोणधारी एवं दक्षिण के चौड़ी पत्ती वाले वनों के मिश्रित स्वरूप है जिनका विस्तार मध्य तथा उत्तरी हांशू में है। चूँकि इनका मिश्रित स्वरूप है अतः दोनों से सम्बन्धित वृक्ष मिलते हैं। यथा, पर्णपाती चौड़ी पत्ती वाले वनों से सम्बन्धित एश, बीच, चेस्टनट, मैपिल, पोपलर तथा ओक एवं कोणधारी वनों से सम्बन्धित पाइन, लार्च, फर, सीडार तथा क्रिपटोमेरिया आदि वृक्ष मिश्रित वनों का निर्माण करते हैं। मिश्रित वन हांशू में 3 ° उत्तरी से लेकर 43° उत्तरी अक्षांश तक सभी भागों में मिलते हैं। वस्तुतः यह भाग जलवायु तथा मिट्टी की दृष्टि से भी मिश्रित स्वरूप लिए हुए है। यहाँ भूरे रंग की पोडजोल मिट्टियाँ पाई जाती है जिसमें दोनों (पोडजोल तथा भूरी) के अंश होने से दोनों प्रकार के वन उग सकते हैं। वैसे तो अति उच्च भागों (5,000 फीट से ऊपर) को छोड़कर ये वन मध्य हांशू में सर्वत्र पाये जाते हैं पर

घनत्व जापान सागर एवं प्रशांत महासागर की ओर झांकते हुए ढालों पर अधिक है।

मिश्रित वनों के वृक्ष दोनों यानी चौड़ी पत्ती वाले एवं कोणधारी वनों में पाये जाने वाले वृक्ष-परिवारों से सम्बन्धित हैं। यथा, इनके कोणधारी वृक्ष समूह में अधिकतर वृक्ष जैपोनिका पोसीफेरा एबिस फर्मा तथा क्रिप्टोमेरिया परिवारों एवं चौड़ी पत्ती वाले पर्णपाती वृक्ष समूह में ज्यादातर वृक्ष जेल्कोवा सेराटा फेगस सिल्वेटिका तथा मैग्नोलिया आदि परिवारों से सम्बन्धित हैं।[17] होंशू के मध्य में स्थित होने तथा दोनों प्रकार के वृक्ष मिल जाने के कारण इन वनों का आर्थिक महत्व बहुत है। लुग्दी, कागज, रेशम आदि उद्योगों में इन्हीं वृक्षों का उपयोग किया जाता है।

चौड़ी पत्ती वाले उपोष्णीय वन—इन वनों का विस्तार दक्षिणी जापान में लाल-पीली मिट्टी वाले क्षेत्रों में है। इनमें सदाबहार तथा पतझड़ वाले दोनों प्रकार के वृक्ष मिलते हैं जिनमें ओक सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं विस्तार वाला है। अन्य में चीड़, बांस तथा कपूर उल्लेखनीय है। इन वनों के वृक्ष मुख्यतः क्वीरकस सेराटा क्वीरकस एक्यूटा तथा सिनेमोमम कैम्फोरा आदि परिवारों से सम्बन्धित हैं।[18]

□□□

17. Stamp, L.D.—Asia, p. 628.
Ibid p. 628.

जापान : आर्थिक स्वरूप

जापान एक उद्योग प्रधान देश है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया के गरीब और अर्द्ध विकसित देशों में जापान का एक विशिष्ट स्थान है। यह देश दुनियां के उन गिने-चुने देशों में से एक है जिनकी अर्थ-व्यवस्था अच्छी कही जा सकती है। एशिया महाद्वीप में जापान एक मात्र ऐसा देश है जो उद्योग प्रधान यूरोपियन देशों से न केवल टक्कर लें सकता है वरन् कई मायनों में उनसे बहुत आगे है। आज जापान दुनियां में सर्वाधिक जलयान, कैमरा, मोटर साइकिल तैयार करता है। विद्युत यन्त्रों एवं कृत्रिम रेशों के उत्पादन में इसका दुनिया में दूसरा स्थान है। कच्चे लोहे, इस्पात, सीमेंट, प्लास्टिक्स तथा जल विद्युत उत्पादन में जापान का तीसरा स्थान है। मोटर कारों के उत्पादन में यह चौथे नम्बर पर है। भारी एवं रासायनिक उद्योगों में इसका महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

एक ओर यह भारी औद्योगिक विकास है। दूसरी ओर वे विघ्न और विध्वंसकारी तत्व हैं जिन्होंने जापान के आर्थिक ढांचे को प्रभावित किया है। यह निर्विवाद सत्य है कि आर्थिक ढांचे में विध्वंसक तत्व जापान में जितने उपस्थित हैं या होते रहते हैं साधारणतः उतने दुनिया के अन्य देशों में नहीं होते। द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान की जो बर्बादी हुई क्या वह भुलाई जा सकती है? आर्थिक विकास की व्याख्या करते समय क्या हम उन भूकम्पों को नजर-अंदाज कर सकते हैं जो रोज पांच बार जापानी धरा को हिला देते हैं। ज्वालामुखी विस्फोट का निरन्तर डर लगा रहता है। तीव्रगामी नदियां भी यदाकदा भीषण बाढ़ का दृश्य उपस्थित कर देती हैं। इधर, यह भी नहीं भुलाया जा सकता कि इस देश में कच्चे मालों, धातुओं, शक्ति के साधनों व कृषि योग्य भूमि जैसे आधारभूत तत्वों का भारी अभाव है। सचमुच धन्य है यहां के परिश्रमी लोग उनकी कार्य के प्रति निष्ठा एवं राष्ट्रीय चरित्र जिनके कारण इतनी सारी बाधाओं के बावजूद जापान इतना विकास कर सका।

छोटे-छोटे द्वीपों के पुंज और अपार जल राशि से घिरे जापान ने पिछले 40 वर्षों में अपनी अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ करने में जो कमाल कर दिखाया है इससे भारत जैसा देश बहुत कुछ सीख सकता है। कहना न होगा कि इस शताब्दी

में जापान ने कुछ वर्षों के अन्तराल से ही दूसरी बार अपनी अर्थ व्यवस्था को मजबूत बनाया है। आर्थिक समृद्धि ने जापान की धरती से दूसरे विश्व युद्ध के चिह्न धो दिये हैं। इस समय 'राष्ट्रीय उत्पादन की दृष्टि से जापान का विश्व में चौथा स्थान है और प्रगति की अगर यही गति रही तो निश्चित रूप से इस दशक के अन्त तक वह अमेरिका तथा रूस के बाद दुनिया का तीसरा सम्पन्न राष्ट्र बन जायेगा। जापान की आर्थिक प्रगति का अनुमान इस तथ्य से भली-भांति लगाया जा सकेगा कि लगभग 10 करोड़ की आबादी वाला यह छोटा सा देश प्रति व्यक्ति ब्रिटेन से अधिक इस्पात उत्पादित करता है। (यहां यह उल्लेखनीय है कि जापान लौह-अयस और अधिकांश कोकिंग कोयला आयात करता है) अमेरिका को छोड़ कर दुनिया के अन्य किसी भी देश से ज्यादा यहां कम्प्यूटरों का उपयोग होता है। दुनिया में जितने भी जलयान बनते हैं उनका आधा भाग जापानी शिपयार्डों से निकल कर आता है।

युद्धोत्तर दिनों में आर्थिक या दूसरे शब्दों में औद्योगिक विकास की गति जापान में दुनिया के किसी भी देश से ज्यादा रही है। 1954–63 के दस वर्षों में यहां का राष्ट्रीय उत्पादन लगभग दुगना हो गया। इन वर्षों में औसत वृद्धि की गति 9.3% प्रति वर्ष रही। यह गति संयुक्त राज्य अमेरिका से (उन्हीं वर्षों में) 2.9% ब्रिटेन से 3% तथा पश्चिमी जर्मनी से 7% अधिक थी। इस आर्थिक वृद्धि में पर्याप्त सहयोग इस प्रवृत्ति का रहा कि मुख्य और बड़े उद्योगों के साथ-साथ सहायक उद्योगों तथा छोटे संस्थानों के विकास की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया गया। वस्तुतः पिछले दो दशकों में श्रम बड़ा मँहगा हुआ है। विशेषकर बड़े औद्योगिक नगरों में तो और भी हालत खराब है। इस प्रवृत्ति का परोक्ष रूप में उत्पादन मूल्य एवं विश्व-बाजारों में उसकी प्रतियोगिता पर प्रभाव पड़ता है। इस समस्या से बचने के लिए,जापान में कुटीर उद्योगों एवं छोटे सहायक उद्योगों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। कुटीर उद्योग एवं कारखाने उद्योग यहां एक दूसरे के पूरक हैं। इस प्रवृत्ति का बड़ा अनुकूल प्रभाव पड़ा है।

निस्सन्देह आज का जापान एक उद्योग प्रधान देश है परन्तु कृषि, मत्स्याखेट या रेशम व्यवसाय का भी यहां के आर्थिक ढाँचे में कम महत्व नहीं। गहराई से देखा जाये तो स्पष्ट होगा कि जापान निवासियों ने, जहां तक सम्भव हुआ है, पहले अपने भौगोलिक वातावरण द्वारा प्रदत्त अवसरों को टटोला है। चावल की खेती, रेशम व्यवसाय, मत्स्याखेट, जलयान निर्माण उद्योग, काष्ठ सम्बन्धी व्यवसाय, विद्युत-यन्त्र, उत्पादन, कृत्रिम रेशा व्यवसाय आदि व्यवसाय ऐसे हैं जिनके विकास में प्रकृति ने भी सहयोग दिया है। देश के मध्य भागों में स्थित वन प्रदेशों ने लकड़ी और शक्ति प्रदान की। तीव्रगामी नदियों और तांबे के सहयोग से विद्युत उत्पादन सम्भव हो गया जिसने औद्योगिक क्षेत्र में क्रान्ति ला दी। सस्ती

जापान : कृषि विकास

उद्योग प्रधान देशों में कृषि का जितना महत्व होता है जापान में उस अनुपात में कृषि का महत्व अपेक्षाकृत ज्यादा है। कुल कार्यरत जनसंख्या का लगभग एक-तिहाई भाग यहां कृषि में लगा है। गहरी कृषि की जाती है यही कारण है कि देश के कुल भाग के केवल 15–16% भाग में ही कृषि कार्य सीमित होने के बावजूद भी उत्पादन इतना हो जाता है कि देश की लगभग 80% आवश्यकता पूरी हो जाती है। शेष मात्रा बर्मा, स्याम व हिंद चीन के देशों से आयात करके पूरी की जाती है। चूंकि जनसंख्या बढ़नी जा रही है और कृषि योग्य भूमि के विस्तार की सम्भावना नहीं है। एक-एक इंच कृषि योग्य भूमि का अधिकाधिक प्रयोग पहले से ही हो रहा है, कुछ योग्य भूमि में औद्योगिक फसलें भी पैदा की जाने लगी हैं। इन सबका परिणाम यह हुआ है कि खाद्यान्नों (मुख्यतः चावल) का आयात-मूल्य क्रमशः बढ़ता जा रहा है। 1950-60 दशक में लगभग 800 मिलियन डालर का चावल आयात किया जाता था जो बढ़कर अब (1982) 15,500 मिलियन डालर तक हो गया है। कृषि सम्बन्धी आयातों का प्रतिशत कुल राष्ट्रीय आयात का लगभग 15% हो गया है। कुछ वर्ष पूर्व जापान सरकार ने 'कृषि श्वेत पत्र' प्रकाशित किया जिसमें कहा गया कि यद्यपि उत्पादन, उत्पादन क्षमता एवं होने वाली आय की दृष्टि से जापानी कृषि में भारी विकास हुआ है तथापि राष्ट्रीय आय में कृषि कार्यों से होने वाली आय का प्रतिशत तेजी से घटा है।[19] यथा 1950 में कृषि आय राष्ट्रीय-आय का 26.1% थी जो घटकर 1960 में 11.4 एवं 1961 में 9.8% ही रह गई। इसका कारण संभवतः उद्योग क्षेत्र से होने वाली आय में भारी वृद्धि है।

सदियों से जापान में कृषि आर्थिक ढांचे का मुख्य आधार रहा। मेजी पुनरोत्थान से कुछ बाद के दशकों तक में भी यहां की 80% जनसंख्या किसी न किसी प्रकार के कृषि कार्यों में लगी थी। अतः यहां की कृषि के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए ऐतिहासिक परिस्थितियों पर थोड़ा गौर करना वांछनीय है।

---

19. Facts abcut Japan—A Publication of Japan Embessy New Delhi 1963.

यह सच है कि जापान में कृषि का भारी महत्व रहा है परन्तु साथ में यह भी उतना ही सच है कि यहाँ किसानों की हालत बहुत ही बदतर रही है। तोकूगावा युग (1603-1867) में प्रत्येक किसान को अपनी फसल के ऊपर भारी कर देना पड़ता था। यह कर भी किस्म के रूप में यानी उपज का 30-40% भाग तक होता था। जमींदार लोग इसे उगाहते थे। यही राज्य की मुख्य आमदनी थी। सर जार्ज सैनसम ने तोकूगावा प्रशासन के बारे में लिखा है कि सरकार कृषि के प्रति बहुत संचेत थी परन्तु किसानों के प्रति उतनी ही उदासीन। उस समय कृषि पर कर व्यवस्था की भावना तत्कालीन समय में प्रचलित इन कहावतों से प्रकट होती है, यथा, 'किसान तिलहन की तरह है जितना दबाओ, उतना ही तेल निकलेगा' या 'किसानों को मरने नहीं दिया जाए, पर उन्हें 'जिंदा' भी नहीं रहने दिया जाए' [20]

तोकूगावा युग के बाद मेजी पुनरोत्थान हुआ। इस युग में कृषि सम्बन्धी सुधार हुए पर किसानों की हालत पर अब भी कुछ ध्यान नहीं दिया गया। जमींदार प्रथा बदस्तूर रही। कर के रूप में अभी भी किसानों को उत्पादित चावल का 35–40% भाग देना पड़ता था। सच तो यह है कि बाद के दशकों में भारी औद्योगिक विकास हुआ परन्तु किसानों की हालत 1946 में बने भूमि सुधार कानून से पहले तक ऐसी ही रही। युद्ध के पश्चात् 9 दिसम्बर को जब जरनल मैक आर्थर ने जापान सरकार को अपना प्रतिवेदन पेश किया तो उसमें इस बारे में खास हिदायतें थीं कि सदियों से सामंती व्यवस्थाओं में पिसते आए किसान की आर्थिक हालत में सुधार करने को कानून बनाए जाएँ।[21] संभवतः इसीलिए 1946 में उक्त कानून पास हुआ। 1946 से पूर्व किसानों की क्या दशा होगी इसका अनुमान इन आंकड़ों से लग सकता है। केवल 32% किसान परिवारों के पास निजी जमीन थी। यह जमीन देश की कुल कृषित भूमि की 54.2% थी। शेष 68% किसान परिवार 45.8% कृषि भूमि को किराए पर लेकर बोते थे। केवल 7.5 भू-मालिकों के पास 50% कृषि भूमि थी (ये लोग जमींदार थे) जबकि 50% भू-मालिकों के पास केवल 9% भूमि। मालिक केवल जमीन का कर सरकार को देता था परन्तु लेता उपज का आधा भाग था। जबकि सारा खर्चा किसान को करना पड़ता था। कृषकों को कृषि विकास के लिए जो कर्जा दिया जाता था उस पर 20-30% तक ब्याज लिया जाता था।

'जो जोते, जमीन उसकी' वाले सिद्धांत पर आधारित भूमि सुधार कानून (1946) के फलस्वरूप जमींदारी प्रथा समाप्त हुई। सरकार ने मुआवजा देकर

20. Trewarth, G.T.-Japan, A Geography p. 181.
21. Ibid. p. 180.

4.8 मिलियन एकड़ भूमि प्राप्त की और इसे सस्ती दरों पर 4.7 मिलियन 'जोता किसानों' को बेच दिया। इस कानून के पालन के फलस्वरूप लगभग 27 मिलियन खेतों की खातेदारी बदली गई। परन्तु सारी व्यवस्था के बावजूद कुल कृषि योग्य भूमि का लगभग 13% भाग अभी भी ऐसा है जिसे किराए पर दिया जाता है। एक और भारी परिवर्तन हुआ। तोकूगावा युग से चली आ रही परम्पराओं के मुताबिक कृषि कार्य सहकारी आधार पर होते थे अब उसे व्यक्तिगत स्तर पर मान लिया गया। इससे यह लाभ हुआ कि कृषि क्षेत्र में भी व्यावसायिक और प्रतियोगिता का दृष्टिकोण पनपा।

जापानी कृषि के बारे में एक बड़ा मनोरंजक तथ्य है। वह यह कि मेजी पुनरोत्थान (1868) से लेकर द्वितीय विश्व युद्ध तक कृषि संलग्न जनसंख्या में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ। प्रायः स्थिर स्वरूप रहा। यथा, 1868 में किसान परिवार लगभग 5.5 मिलियन थे।[22] युद्धोत्तर दिनों (1945-60) में यह संख्या लगभग 6 मि० हो गई क्योंकि उद्योगों के चौपट हो जाने से बहुत से लोग इसमें आ लगे। पिछले दशकों (1960-80) में इसमें अवश्य कमी आई है।

कृषि संलग्न भूमि की मात्रा में कोई क्रांतिकारी विस्तार नहीं हुआ है। जिसका कारण स्पष्ट है कि द्वीपीय स्थिति और देश के अधिकतर भागों के पर्वतीय स्वरूप होने के कारण इस प्रकार की भूमि में कोई खास विस्तार की गुंजाइश नहीं है। 1877 के एक सर्वेक्षण के अनुसार यहाँ कृषि योग्य भूमि 4.13 मिलियन चो (चो लगभग हैक्टेयर के बराबर) थी जबकि 1968 में यह मात्रा 5.4 मिलियन हैक्टेयर थी। इस प्रकार पिछले लगभग 100 वर्षों में केवल 25% की वृद्धि हुई। यह वृद्धि भी नवीन भू-प्राप्ति की सघन योजनाओं के बाद प्राप्त हो सकी। जनसंख्या के बढ़ते हुए भाग एवं द्वितीय विश्व युद्ध में हुई खाद्य समस्या को ध्यान में रखकर युद्धोत्तर दिनों में नवीन कृषि योग्य भू-प्राप्ति की सघन योजनाएँ क्रियान्वित की गई। इसके फलस्वरूप 1946 में 2,18,000 चो, 1947 में 11,4,000 चो तथा 1955 में 27,000 चो भूमि प्राप्त हुई। 1955-60 की एक पंचवर्षीय योजना में चावल की खेती के लिए उपयुक्त निचले आर्द्र भागों में 17,200 चो भूमि प्राप्त हुई। उच्च प्रदेशों में अवश्य यह मात्रा 96,750 चो थी

22. एक किसान परिवार औसतन 6 सदस्यों का, इस प्रकार कुल कृषि संलग्न जनसंख्या 33 मिलियन। उस समय जनसंख्या का 80% भाग कृषि संलग्न था परन्तु जनसंख्या कम थी अतः 33 मिलियन ही 80% भाग बनाता था और 1962 में उतनी ही जनसंख्या 33% भाग।

परन्तु पर्वतीय प्रकृति की यह भूमि बहुत ज्यादा महत्व की नहीं है। इस प्रकार आंकड़ों से सुस्पष्ट है कि कृषि योग्य भू-प्राप्ति भी पूर्णतः बिन्दु पर आ चुकी है यानी जितनी भी भूमि जापान के धरातल पर कृषि योग्य है उसका अधिकतम भाग हल के नीचे आ चुका है। और ज्यादा गुंजाइश नहीं है।

कृषि योग्य भूमि में विस्तार सम्भव न हो सकने का कारण स्पष्ट है। यहाँ के धरातल का लगभग दो-तिहाई (67%) भाग वनों ने घेरा हुआ है। शेष 33% में से आधा भाग पर्वतों जलाशयों, प्राकृतिक घासों ने घेरा हुआ है। इस प्रकार कृषि कार्यों के लिए केवल 16.17% भू-भाग ही बच रहता है। इसकी तुलना अन्य देशों—भारत (41·5%) सं० रा० अमेरिका (25%) इंगलैण्ड (30%) नीदरलैंडस (30%) जर्मनी (42%) पोलैंड (49.2%) तथा इटली (49%) से की जा सकती है। कृषि योग्य भू-भाग के प्रतिशत की तुलना करते समय अगर यह ध्यान रखें कि उसमे कितनी प्रतिशत जनसंख्या की उदरपूर्ति आसानी से हो जाती है तो जापानी कृषि वास्तव में महत्वपूर्ण (80%) हो जाती है। वस्तुतः जापान में कृषि भूमि का गहनतम उपयोग किया जाता है। गहरी कृषि वह कृषि है जिसमें मानव श्रम अत्यधिक प्रयुक्त होता है। अतः प्रति एकड़ उत्पादन विश्व में सर्वाधिक रहता है।

यह भी एक उल्लेखनीय तत्व है जापानी कृषि के बारे में कि इन सारी प्राकृतिक एवं मानवीय बाधाओं के बावजूद इसका उत्पादन सदा वृद्धि की ओर ही उन्मुख रहा है। द्वितीय युद्ध की विभीषिकाओं के कारण अवश्य कुछ वर्षों के लिए विकास क्रम अवरुद्ध हो गया था पर शीघ्र ही विकासोन्मुख हो गया। आज जापान अपनी तीन-चौथाई खाद्यान्न के लिए स्वावलम्बी है। चावल यहाँ का प्रधान खाद्यान्न है। 1982 में चावल का उत्पादन 10.27 मिलियन टन था जो आवश्यकता का 73% था। गेंहूँ एवं जौ के उत्पादन से इस वर्ष घरेलू आवश्यकता की केवल क्रमशः 10 तथा 13% की पूर्ति हो पाई। सब्जियों का उत्पादन 16.3 मिलियन टन था जिससे देश की सम्पूर्ण आवश्यकता पूरी हो गयी थी। इस प्रकार खाद्यान्न तथा सब्जियों के मामले में जापान, इस तथ्य के बावजूद कि यहाँ कृषि योग्य भूमि केवल 16% हैं, अच्छी स्थिति में है। निम्न सारिणी से प्रमुख खाद्यान्नों की स्थिति सुस्पष्ट है।

खाद्यान्न पूर्ति–जापान[23]

वर्ष	संलग्न भू-क्षेत्र (1000 है० में)	उत्पादन (1000 टनों में)	प्रति है० उत्पादन (टनों में)	आयात (टनों में)	देश की आवश्यकता पूर्ति हेतु सप्लाई (टनों में)
			चावल		
1960	3,308	12,858	3.89	219	12,618
1970	2,923	12,689	4,34	15	12,200
1975	2,764	13,165	4.76	29	11,964
1981	2,278	10,259	4.50	67	11,322
			गेहूँ		
1960	602	1,531	2.54	2,660	3,965
1970	229	474	2.07	4,611	5,207
1975	90	241	2.68	5,715	5,578
1981	224	587	2.62	5,504	6,034
			जौ		
1960	402	1,206	3.00	30	1,165
1970	446	418	2.87	1072	1,474
1975	161	174	2.86	2117	2,147
1981	106	330	3.11	2,225	2,505

कृषि उत्पादन की निरन्तर वृद्धि में सहयोगी तत्व हैं :—

1. कृषि उत्पादनों की उचित कीमतें बनाए रखने, अनुदान की व्यवस्था करने तथा विविध कृषि अन्वेषणों के लिए शोध-केन्द्र स्थापित करने के रूप में सरकारी सहयोग।
2. कृषि भूमि, विशेषकर उत्पादन में संलग्न भूमि में बड़े पैमाने पर सुधार
3. उचित मात्रा में, वैज्ञानिक विधियों से अधिकाधिक रसायन उर्वरकों का उपयोग।
4. कृषि नाशक दवाइयों का प्रयोग।
5. कई उन्नत किस्म के बीजों व फसलों का प्रयोग।
6. यन्त्रीकरण।

---

23. Statistical Hand book Japan 1983 p. 33

7. उत्तरी भागों में चावल की पौधशालाओं में प्लास्टिक कवर का उपयोग ताकि अपेक्षाकृत कम तापक्रमों में ही पौधा पनप सके। इन भागों में वृद्धि अवधि छोटी होती है अतः फसल को ठंड पड़ने से पहले ही पका कर काट लेना आवश्यक होता है। इसके लिए पौधों को जल्दी बोना (उक्त विधि से) उपयोगी होता है।
8. घोर परिश्रमी जापानी किसान।
9. फसलों के हेर-फेर की विधि।
10. चकबन्दी के सफल प्रयत्न।
11. सरकार द्वारा दिया गया 'अधिक अन्न उपजाओ' नारा।

जैसाकि वर्णित है जापान में किसान परिवारों की संख्या और कुल कृषि योग्य भूमि का विस्तार क्रमशः 5.4 मिलियन एवं 5.5 मिलियन हैक्टेयर है। स्वाभाविक है कि एक किसान परिवार के हिस्से में लगभग 1 हैक्टेयर भूमि आती है। अगर परिवार के आधार पर फार्मों के आकार का औसत निकाला जाये तो वह लगभग 2 से लेकर $2\frac{1}{2}$ एकड़ तक का बैठता है। जापान के 90% खेत 4.5 एकड़ तथा 67% खेत 2.7 एकड़ से छोटे हैं। केवल 1.3% फार्म ही 12 एकड़ से बड़े हैं। लेकिन आकार सभी भागों में समान नहीं है। जैसे-जैसे उत्पादक शक्ति एवं जलवायु की अनुकूलताएँ घटती जाती हैं फार्मों का आकार बढ़ता जाता है। इसे सीधे शब्दों में यूँ कहा जा सकता है कि जैसे-जैसे उत्तर की ओर चलते हैं क्रमशः वृद्धि अवधि छोटी होती जाती है, गर्मियां ठण्डी होती जाती हैं, हिम-वर्षा और हिम आवरण की अवधि बढ़ती जाती है, प्रति एकड़ उत्पादन बहुत कम होता जाता है, इनके साथ ही फार्मों का आकार क्रमशः बढ़ता जाता है। यथा, उत्तरी हांशू में 1 से 15 हैक्टेयर तथा होकेडो में उनसे भी बड़े फार्म देखे जा सकते हैं। इसके विपरीत दक्षिण में जहाँ कि चावल की दो फसलें होती हैं, खेत बहुत छोटे-छोटे होते जाते हैं। यहाँ तक कि क्यूशू और शिकोकू के तटवर्ती प्रदेशों में फार्मों का आकार का कहीं-कहीं $\frac{1}{10}$ से $\frac{1}{3}$ एकड़ तक का भी देखा जा सकता है। हांशू के मध्योत्तर में जहाँ मध्यम अवस्थाएँ हैं 3.5 से लेकर 10 एकड़ तक के फार्म पाये जाते हैं।

जापान में कृषि फार्म : उपयोग एवं संख्या[24]

(संख्या—1,000 में)

वर्ष	कुल फार्म	केवल खाद्यान्न उत्पादन में संलग्न	प्रमुखतः खाद्यान्न उत्पादन में संलग्न	प्रमुखतः अन्य कार्यों में संलग्न	वृद्धि प्रतिशत में
1965	5,665	1,219	2,081	2,365	
1970	5,402	845	1,814	2,743	– 4·6
1975	4,953	616	1,259	3,078	– 8·3
1980	4,661	623	1,002	3,036	– 5·9
1981	4,614	580	829	3,205	– 1·0
1982	4,567	599	774	3,194	– 1·0

24. Statistical Hand Look of Japan 1983 p. 30.

जापानी कृषि के कुछ विशिष्ट लक्षण :

गहरी कृषि—जापानी कृषि हर दृष्टि से गहरी कृषि है। भूमि की प्रति इकाई में अत्यधिक मात्रा में मानव श्रम तथा खादों का प्रयोग, एक खेत में एक साल में की गई फसल तथा प्रति एकड़ उत्पादन सभी दृष्टियों से जापानी कृषि विश्व में सर्वाधिक 'गहरी कृषि' मानी जाती है। मानव श्रम की प्रयोग मात्रा तो वस्तुतः पूर्णता की स्थिति पर आ पहुँची है। हालत यह है कि अगर इससे ज्यादा मानव श्रम का प्रयोग किया गया तो वह अनार्थिक हो जायेगा। यहाँ प्रत्येक कृषि मजदूर के हिस्से में 0.3 हैक्टेअर तथा किसान परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के हिस्से में 0.15 हैक्टेअर भूमि आती है। खेत सम्बन्धी कार्यों के लिए कभी भी बाहर से मजदूर नहीं बुलाये जाते। परिवार के सदस्य ही कर लेते हैं।

सीढ़ीदार कृषि—सीढ़ीदार कृषि जापान की अपनी विशेषता है। दक्षिणी-पश्चिमी जापान में पर्याप्त ऊँचाई तक खेत सीढ़ीनुमा आकृति लिए चले गये हैं जो इस बात के प्रतीक है कि जापान कृषि योग्य भूमि में गरीब है परन्तु मानव की बुद्धि और श्रम में अमीर। दो प्रकार के सीढ़ीदार खेत होते हैं। प्रथम जिनमें सिंचित चावल होता है। दूसरे, जिनमें शुष्क कृषि से सम्बन्धित फसलें पैदा की जाती हैं। सीढीदार खेतों में चावल उत्पादन के लिए सिंचाई की व्यवस्था करना भारी परिश्रम का काम है जिसे सामन्ती युग में गरीब किसानों से बेगार में कराया जाता था। आजकल इसीलिए यह प्रायः कम होता जा रहा है और इसके स्थान पर असिंचित फसलें पैदा की जाने लगी हैं। सीढ़ीदार खेत कुछ तो प्राकृतिक ढालों में पाये जाते है परन्तु कुछ को बड़े परिश्रम से बनाया जाता है। इनका आकार 'बडे पैमाने पर' बैंच जैसा लगता है। मध्य एवं उत्तरी जापान में प्राकृतिक सीढ़ीदार एवं दक्षिणी-पश्चिमी जापान में बनाए हुए बैंचनुमा सीढ़ीदार फार्मों का बाहुल्य है। इन फार्मों का ढ़ाल कहीं-कहीं 10–15° अंश का मिलता है।

बहु फसली कृषि—अमेरिका के विपरीत जापानी खेतों से साल में कई फसलें ली जाती हैं। साधारणतः दो फसलें (दोनों मौसमों में) तो होती है परन्तु कई दफा एक ही मौसम में एक से अधिक फसल भी ले लेते हैं। ऐसा प्रायः तब होता है जबकि खेतों में ऐसी फसलें बोई जाती है जिनका जीवन-चक्र जल्दी पूरा हो जाता है। यथा गर्मियों में मुख्य फसल के अतिरिक्त सब्जी की फसल आसानी से ली जाती है। 1960 में कुल कृषिगत भूमि 6 मिलियन हैक्टेअर थी परन्तु फसलें बोई गई 8 मिलियन हैक्टेअर भूमि में। इस प्रकार कृषि योग्य भूमि का प्रयोग 133% की दर से किया गया। 1955 में यह अनुपात 159 था। परन्तु होकेडो में यह दर प्रायः 100 से कम होती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि बहुफसली कृषि की मात्रा तापक्रम की मात्रा पर निर्भर करती है। निचले भागों की 'पैडीफील्स' एवं पहाड़ी क्षेत्रों मे स्थित खेतों में ही बहुफसली कृषि के अनुपात में भारी अन्तर

होता है। पैडीफील्डस में जहाँ भूमि खाली नहीं पड़ी रहने दी जाती तीन फसलें तक कर ली जाती हैं।

एक समय में कई फसलें—इस विधि में एक खेत में एक समय में अलग-अलग क्यारियों में अलग-अलग कई फसलें बो दी जाती है। इनके तैयार होने का अलग-अलग समय होता है। किसी फसल के तैयार होकर कटने पर उसके स्थान पर दूसरी फसल बो दी जाती है।

फसलों का हेर-फेर—यह एक वैज्ञानिक व्यवस्था है। प्रत्येक फसल विशिष्ट तत्व जमीन से लेती है और कुछ निसृत करती है। अगर इनका ऐसा क्रम बना दिया जाये कि एक फसल के बाद वही फसल बोई जाये जो जमीन से उन तत्वों को प्राप्त करे जो कि पहली फसल द्वारा निसृत किये गये हैं तो दोनों ही फसलें अच्छी होंगी। जापान में, यूरोपियन देशों की तरह, इस विधि को अपनाया गया है।

भारी मात्रा में खादों का प्रयोग—उपर्युक्त विधियों से जिस जमीन से फसलें ली जाएँ स्वाभाविक है कि उसकी मिट्टी की उत्पादक शक्ति बहुत कम हो जायेगी अतः उसकी पूर्ति के लिए भारी मात्रा में खाद देना आवश्यक है। पर्वतीय क्षेत्रों में तो यह और भी ज्यादा आवश्यक है। जापानी किसान प्रति इकाई भूमि में दुनिया में सर्वाधिक खाद देता है। यहाँ के कुल कृषि-खर्च में से 25% खादों पर ही होता है। रासायनिक खादों के अतिरिक्त जंगली वनस्पति, रसोई का सड़ा-गला सामान, समुद्री घास, मछली, राख, भूसा, पत्तियों तथा मरे हुए रेशम के कीड़ों को भी खाद की तरह प्रयुक्त किया जाता है।

मानव श्रम एवं यन्त्रों का समन्वय—खेत बहुत छोटे एवं गहरी कृषि होने के कारण जापान में अब तक मानव श्रम पर ही ज्यादा जोर दिया जा रहा है। परन्तु पिछले कुछ वर्षों से हल्के यन्त्र भी प्रयोग किये जाने लगे हैं। यथा, पानी खींचने का कार्य मोटर-पम्प, कूटने साफ करने का कार्य थ्रैशर्स तथा बहुत से भागों में जुताई का कार्य ट्रैक्टरों से किया जाने लगा है। 1982 में सभी प्रकार के मिला कर लगभग 9 मिलियन कृषि यन्त्र जापानी खेतों में कार्यरत थे।

प्रमुख फसलें :

जनसंख्या का निरन्तर बढ़ता हुआ भार, कृषि-योग्य भूमि की कमी, विस्तार की नगण्य सम्भावनाएँ आदि तथ्यों से यह अनुमान भली-भाँति हो सकता है कि जापान की कृषि में खाद्यान्नों का प्राधान्य हो। सदियों से यहाँ की कृषि खाद्यान्न प्रधान रही है। चूँकि खाद्यान्नों में चावल सर्वत्र प्रयोग किया जाने वाला अन्न है, अतः जापानी किसान की यही आकांक्षा रहती है कि उसका खेत चावल की ज्यादा से ज्यादा फसल दे सके। उच्च प्रदेशों में भूमि, मिट्टी या जलवायु की कठिनाइयों के फलस्वरूप

जहाँ-जहाँ चावल उत्पादित करना सम्भव नहीं है वहाँ अन्य फसलों को बोया जाता है। पिछले दो दशकों में सरकारी नीति के अनुरूप कुछ औद्योगिक फसलों के क्षेत्र में भी विस्तार किया गया है। चावल के अतिरिक्त खाद्यान्नों में गेहूँ, जौ, ज्वार तथा बाजरा बोये जाते हैं। व्यावसायिक फसलों में शहतूत, तम्बाकू, आलू, सोयाबीन आदि प्रमुख हैं। चावल ने कुल कृषिगत भूमि का आधे से कुछ कम भाग (2.3 मिलियन हैक्टेअर्स) घेरा हुआ है। अन्य सभी फसलों को लगभग एक तिहाई भाग (2 मिलियन हैक्टेअर्स) में बोया जाता है। औद्योगिक फसलों के उत्पादन में 3 लाख हैक्टेअर्स भूमि लगी हुई है। विविध फसलों के अन्तर्गत लगी भूमि एवं उत्पादन सम्बन्धी कुछ आंकड़े निम्न प्रकार हैं :

जापान : कृषि संलग्न भूमि एवं उत्पादन-1982[25]

संलग्न भूमि—	कुल कृषि योग्य भूमि	5,426,000 है० (1970 में 5,796,000 है०)
	चावल उत्पादन में संलग्न भूमि	2,257,000 है०
	औद्योगिक फसलों में सलग्न भूमि	269,000 है०
उत्पादन—	चावल उत्पादन	10·27 मि० टन
	जौ उत्पादन	330 हजार टन
	गेहूं उत्पादन	587 हजार टन
	सोयाबीन	211 हजार टन
कृषि यन्त्र —	पॉवर कल्टीवेटर्स एवं ट्रैक्टर्स	4,314,000
	पॉवर स्प्रेयर्स एवं डस्टर्स	3,610,000
	राइस पॉवर प्लान्टर्स	19,86,000
पशुधन—	दूध देने वाली गायें	2,110,000
	घोड़े	23,000
	सूअर	10,045,000
	भेड़ बकरी	79,000
	मुर्गियाँ	299 मिलियन
	दुग्ध उत्पादन	6·6 मिलियन टन

गर्मियों में तो समस्त कृषि योग्य भूमि में फसलें बोई जाती हैं। सर्दियों में लगभग एक तिहाई भाग (2·2 मिलियन है०) प्रयोग में लाया जाता है। सर्दियों में

25. The Statesman's Year book, 121 St. edition P. 746.

बोई जाने वाली फसलों में से लगभग आधा भाग (1,044,635 हे०) पैडी चावल द्वारा घेरा हुआ होता है तथा आधे से कुछ अधिक (1,222,325 हे०) में अन्य फसलें जैसे गेहूं, जौ, जई आदि बोई जाती हैं।

चावल :

चावल जापानियों का अनुपम एवं सर्वत्र प्रयोग किया जाने वाला खाद्यान्न है। प्रत्येक जापानी को वर्ष भर में औसतन 128 कि. ग्राम चावल की आवश्यकता होती है। यह औसत विश्व में सर्वाधिक है और यह एक ऐसी आवश्यकता है जिसे उपेक्षित नहीं किया जा सकता। जापानी लोग दिन में तीन बार चावल खाते हैं। जो इतने समय चावल खाने का खर्चा बर्दाश्त नहीं कर सकते वे गरीब समझे जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि चावल का जापानी जन-जीवन के हर क्षेत्र में समन्वय है। कभी मौसम की गड़बड़ से उत्पादन मात्रा में कुछ फर्क पड़ जाता है तो जापानी लोग चिंतित हो उठते हैं। अनिश्चितता से बचने के लिए सरकार चावल का संचय करती है। समय-समय पर वह चावल की दरें निश्चित करती रहती है।

जापानी किसानों ने चावल के उत्पादन में जैसी दक्षता प्राप्त की है वैसी दक्षता किसी भी देश में किसी भी फसल पर नहीं पाई जाती। वस्तुतः चावल की खेती में जापानियों की दक्षता की उच्चता, एक ऐतिहासिक आधार रखती है जो केवल मात्र जलवायु या दूसरे भौगोलिक तत्वों के साथ समन्वय के रूप में प्रकट नहीं की जा सकती। भौगोलिक वातावरण के अतिरिक्त अन्य कई ऐसे तत्व हैं जिन्होंने चावल की कृषि में विशिष्टता प्राप्ति म सहयोग किया है। ये हैं—जैसे सदियों से चावल जापानियों का प्रधान खाद्यान्न होना यहाँ की आर्द्र जलवायु में चावल जैसे हल्के भोजन के शीघ्र पचाव के कारण उपयुक्तता, मछली और चावल का सहयोग, गेहूँ की तुलना में चावल की कम मात्रा में खपत (उबल कर फूल जाता है) एवं एशियाई देशों से जापान में आकर बसने वालों का प्रधान खाद्यान्न चावल होना आदि। इन मानवीय तत्वों के अलावा भौगोलिक तत्व भी सहयोगी सिद्ध हुए हैं। जैसे दक्षिणी-पश्चिमी जापान (चावल का मुख्य क्षेत्र) की उपोष्णीय जलवायु, पर्याप्त गर्मी एवं वर्षा, सिंचित निचले मैदान आदि और सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण तत्व हैं यहाँ के किसान का घोर परिश्रम जो उपर्युक्त तत्वों के सहयोग से जापान में प्रति एकड़ सर्वाधिक चावल उत्पन्न करता है।

जापान का प्रति एकड़ उत्पादन लगभग 2350 पौंड है। यह विश्व में सर्वाधिक है। इस दृष्टि से जापान की तुलना दुनिया के अन्य चावल उत्पादक देशों यथा, चीन (1550 पौंड) कोरिया (1593 पौंड) जावा (1034 पौंड) बर्मा

(846 पौंड) भारत (772 पौंड) हिंदचीन (716 पौंड) तथा फिलीप्पीन (703 पौंड) आदि से की जा सकती है।

चावल का 90% भाग तटवर्ती निचले भागों में पैदा किया जाता है। शेष 10% भाग उच्च प्रदेशों में निचले भागों में अधिकाधिक केन्द्रीकरण का मूल कारण है कि यहां अधिकतर फार्म को सिचाई की सुविधा प्राप्त है। जापानी किसान की यह मनोवृत्ति है कि अगर सिचाई की सुविधा प्राप्त है तो वह प्राधान्य चावल की

चित्र-9

फसल को ही देगा। शुष्क भागों में ही दूसरी फसलें पैदा की जाती हैं। यह एक अफसोस की बात है कि कुल कृषित भूमि के 55% भाग में चावल की खेती होती

है और कुल कृषि संलग्न भूमि के 55% भाग को ही सिंचाई की सुविधा प्राप्त है। सिंचाई मुख्यतः नदियों (66%) तथा छोटे-छोटे तालाबों (29%) से की जाती है। नदियों से खेतों तक पानी पहुँचाने के लिए छोटी-छोटी नहरें बनाई गई हैं। चूँकि उथली नदियाँ हैं अतः तल की कोई परेशानी नहीं है। तट रेखा के सहारे-सहारे जो कूटिका तथा रेतीले टीलों की शृंखला है उसके पीछे कांप के मैदानों में मीलों तक 'पैडी फील्ड' (चावल के खेत) ही नजर आयेंगे। इनकी एकरूपता को भंग करते हुए बीच-बीच में पेड़ झाड़ियाँ पगडण्डियाँ, या वृक्षों से घिरे हुए गाँव विद्यमान हैं। कहीं-कहीं तालाब भी नजर आते हैं। ऊँचे टीलों पर यत्र-तत्र स्थित शुष्क कृषि क्षेत्र (ऊँचाई के कारण सिंचाई सम्भव नहीं है) अनायास ही ध्यान आकर्षित कर लेते हैं जो कृत्रिमता से पैडीफील्डस से दो-तीन फीट ऊँचे उठाये गये हैं। असल में ऐसे शुष्क फार्म तट रेखा के सहारे स्थित रेतीले टीलों, कूटिकाओं या नदियों की घाटियों में दोनों तरफ ऊँचे उठे हुए कगारों पर नजर आते हैं।

जापान के पैडी फील्डस भी एक बदलती हुई दृश्यावलि हैं। ऋतु परिवर्तन के साथ-साथ यहाँ भिन्न-भिन्न नजारे दिखाई पड़ते हैं। बसंत ऋतु में पौध क्षेत्रों में पौध लगाई जाती है जो मई-जून तक तैयार होती है। तैयार होने पर उसे चावल के जल भरे खेत में स्थानान्तरित कर दिया जाता है क्योंकि आधे जून तक मानसून का प्रथम प्रवाह आ चुका होता है। खेतों में इस समय लगभग एक फुट गहरा पानी भरा होता है क्योंकि प्रत्येक खेत के चारों ओर एक फुट चौड़ी और उतनी ही ऊँचाई की मेंड बनी होती है। इस प्रकार मेंडों से सीमाबद्ध जल एक मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता है।

पौध लगाने की प्रक्रिया जापानी किसान की बुद्धिमता की परिचायक है। क्योंकि बसन्त ऋतु में खेतों में जाड़े की फसल खड़ी होती है जो मई-जून तक पकती है। दूसरे, अप्रेल, मई, जून के महीने में जापानी किसान बड़ा व्यस्त होता है। तीसरे, जून-जुलाई-अगस्त में खेतों में जो पानी होता है उसमें कुछ बड़ा पौधा ही खड़ा रह सकता है। अतः उस स्थिति में बीज बोया जाये तो पनपेगा नहीं और पनप भी जाये तो जिस समय उसे पानी की आवश्यकता होगी खेतों का पानी सूख चुका होगा। अतः पौध लगाने से दोहरा लाभ हो जाता है। जब तक पौध तैयार होती है वे जाड़ों की फसल को काटकर तैयार कर लेते हैं।

इस प्रकार पौध के रोपण के दिनों यानी जून के महीने में धरती गदले पानी की मोटी पर्त से ढकी होती है। चारों तरफ जल ही जल दिखाई देता है। एक माह बाद दृश्य परिवर्तन होने लगता है और आगामी कुछ दिनों में धरती पर हरियाली की चादर बिछ जाती है। पतझड़ के दिनों में खेतों का रंग क्रमशः पीला और सुनहरी होने लगता है एवं किसान लोग अपने इस सोने को एकत्र करने में

व्यस्त हो जाते हैं। धान की ढेरियों के पास खड़े हुए हारवैस्टर्स और थ्रशर्स रात्रि की नीरवता में पहरेदारों का स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। इन दिनों किसानों को टायफून्स की आशंका सदा भयग्रस्त रखती है। बार-बार वे आसमान की तरफ देखते हैं और मौसम की सूचनाओं में कान लगाये रखते हैं।
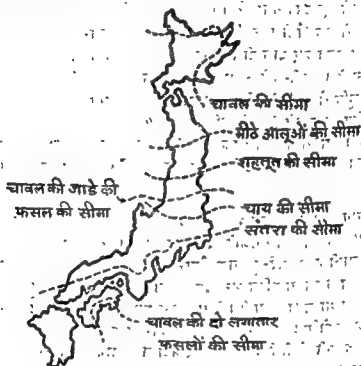
चित्र–10

चावल क्षेत्रों का लगभग 60% भाग जाड़ों में खाली पड़ा रहता है। केवल धुर दक्षिणी भागों में जो उष्ण कटिबन्ध में आते हैं और जहाँ सर्दियों में तापक्रम बहुत नीचे नहीं होते, दूसरी फसल बोई जाती है। साधारणतः क्यूशू एवं शिकोकू के दक्षिणी तटवर्ती भागों में ही दूसरी फसल में चावल बोया जाता है। होंशू में सर्दियों में चावल के स्थान पर गेहूँ, जौ, जई या राई बोई जाती है। मध्य होंशू या उससे उत्तर में बहुत से खेत खाली पड़े रहते हैं। होकैडो में तो दूसरी फसल का प्रश्न ही नहीं उठता। होंशू में जाड़े की फसल के रूप में कहीं-कहीं हरी खादों वाली फसलें भी बोई जाती हैं। बड़े-बड़े नगरों के आसपास इन दिनों सब्जियाँ बोई जाती हैं।

चावल की खेती के स्वरूप को और भी स्पष्ट समझने के लिए इसकी तीन सीमाएँ मानी जा सकती हैं। प्रथम सीमा उत्तरी व पूर्वी होकेडो को पृथक् करती हुई मानी जा सकती है। इस सीमा से बाहर चावल बिल्कुल पैदा नहीं होता। होकेडो का पूर्वी भाग ओखोटस्क ठंडी धारा के कारण बिल्कुल ठंडा पड़ा रहता है। दूसरी सीमा 37° उत्तरी अक्षांश के सहारे-सहारे सेंडाई के मैदान के थोड़े दक्षिण में मानी जा सकती है। इस सीमा के उत्तर में केवल एक यानी गर्मियों की फसल ही हो सकती है। जाड़ों में तापक्रम हिमांक से नीचे हो जाने के कारण फसलें सम्भव नहीं हैं। तीसरी सीमा दक्षिणी शिकोकू के कोची मैदान एवं 'की' पैनिनशुला से होकर मानी जा सकती है। दूसरी और तीसरी सीमा के बीच में स्थित भागों में गर्मियों में आवश्यक रूप से चावल की फसल पैदा की जाती है। सर्दियों के दिनों में अन्य कोई भी फसल जैसे गेहूँ, जौ, जई या राई पैदा की जा सकती है। जबकि तीसरी सीमा के दक्षिण में गर्मी और सर्दी दोनों ऋतुओं में चावल ही बोया जाता है।

तट प्रदेश में स्थित निचले भागों में पैडी चावल पैदा किया जाता है जबकि ढ़ाल वाले प्रदेशों में सीढ़ीदार खेत बनाकर पहाड़ी चावल पैदा किया जाता है। इन खेतों को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है कि वर्षा का पानी बहकर आगे नहीं जाए और खेत में ही रुका रहे। क्योंकि इन भागों में सिंचाई सम्भव नहीं है अतः इन क्षेत्रों को 'असिंचित चावल के क्षेत्र' के नाम से पुकारा जाता है। असिंचित चावल मुख्यतः हांशू में पैदा किया जाता है। इसका विस्तार बहुत कम यानी कुल चावल संलग्न भूमि का केवल 4% है। परम्परागत रूप से पहाड़ी क्षेत्रों में पैदा होने वाले चावल को 'हाटा' के नाम से जाना जाता है।

जापान में चावल की महत्वपूर्ण स्थिति इस तथ्य से प्रकट होती है कि कुल कृषि उपजों से जितना राजस्व सरकार को मिलता है, अकेले चावल से उसका लगभग 60% भाग प्राप्त होता है। चावल कुल कृषिगत भूमि के लगभग 55% भाग में बोया जाता है। प्रतिवर्ष लगभग 13 मिलियन टन चावल जापानी खेत प्रस्तुत करते हैं पिछले 10-15 वर्षों से उत्पादन मात्रा प्रायः स्थिर सी है।

अन्य खाद्य फसलें :

अन्य खाद्य फसलों में गेहूँ, जौ, आलू, सोयाबीन व फल उल्लेखनीय है। गेहूँ खाद्यान्नों में दूसरे नम्बर पर आता है जिसने चावल के बाद सबसे ज्यादा भूमि (लगभग 6 लाख हैक्टेयर) घेरी हुई है। जापान में गेहूँ दूसरी या सर्दी की फसल के रूप में ही बोया जाता है। मुख्य उत्पादक क्षेत्र भीतरी सागर के तटवर्ती भाग, क्वांटो का मैदान एवं पश्चिमी क्यूशू हैं। आवश्यकता का केवल 10 प्रतिशत भाग (1981 में 587,000 टन) ही उत्पन्न हो पाता है। शेष 90% कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि देशों से मंगाया जाता है।

जौ की खेती लगभग 1·5 लाख हैक्टेग्नर भूमि में की जाती है यह यहाँ की बसंत ऋतु में बोई जाने वाली महत्वपूर्ण फसल है। यहाँ दो प्रकार का जौ पैदा किया जाता है। 60% बिना छिलके वाला तथा 40% छिलके वाला। बिना छिलके वाला जो मुख्यतः गरीब लोगों का भोजन है। यह अधिकांशतः दक्षिणी भागों में पैदा किया जाता है जबकि छिलके वाला हांशू के उत्तरी भागों में। वार्षिक उत्पादन लगभग 3·3 लाख टन है।

आलू एवं सोयाबीन हांशू तथा होकेडो के ठण्डे भागों में पैदा किए जाते हैं। आलू की उत्पादन मात्रा (3 मिलियन टन) देशी आवश्यकता का पर्याप्त भाग पूरा करने में समर्थ है परन्तु सोयाबीन के उत्पादन (212,000 टन) से केवल 25-30% आवश्यकता ही पूरी हो पाती है। यहां मीठे एवं सफेद दोनों प्रकार के आलू पैदा किये जाते हैं। ज्यादातर आलू पहाड़ी क्षेत्रों में पैदा किये जाते हैं। उत्पादन की दृष्टि से उत्तरी हांशू एवं होकेडो मुख्य हैं। इन भागों में गर्मियों के तापक्रम आलू के लिए उपयुक्त है अतः अधिकांश आलू गर्मियों में पैदा किया जाता है। फलों में सेव, सन्तरा, अंगूर, आड़ू तथा रसभरी प्रमुख हैं। वस्तुत अक्षांशीय स्थिति एवं जलवायु की अनुकूलता ने जापान में उष्ण तथा शीतोष्ण दोनों प्रकार के फलों के उत्पादन में सहयोग किया है। आमोरी प्रान्त अपने सेवों के लिए प्रसिद्ध है। 1982 में जापानी बागों ने 2,821,000 टन सन्तरा, 8,45,000 मै० टन सेव तथा 3,09,000 मै० टन अंगूर पैदा किये।

जापान : विविध फसलों का उत्पादन[26]
(उत्पादन 1000 टनों में)

वस्तु	1960	1965	1970	1975	1981
आलू	3,594	4,056	3,611	3,261	3,095
सोयाबीन	418	230	126	126	212
टमाटर	242	532	793	1,024	945
प्याज	601	860	973	1,032	1,042
संतरा	894	1,331	2,552	3,665	2,819
सेव	876	1,132	1,021	898	846
अंगूर	155	225	234	284	310
तम्बाकू	121	192	150	166	138
चाय	78	77	91	105	102
चुकन्दर	1,074	1,813	2,332	1,759	3,355

26. Statistical Hand book of Japan 1983 P 34

व्यावसायिक फसलें :

रेशम, चाय, तम्बाकू तथा सन जापान की प्रधान व्यावसायिक एवं औद्योगिक फसलें हैं जिनमें लगभग 2·7 हैक्टेअर भूमि लगी है। चाय के उत्पादन में जापान एशिया में भारत और लंका के बाद तीसरे स्थान पर है। अधिकांश चाय बागान हांशू के पर्वतीय ढालों पर विद्यमान है, चाय का प्रति एकड़ उत्पादन घनत्व एवं क्वालिटी की दृष्टि से टोक्यो के पश्चिम का भाग, शिजूओका तथा ऊजी क्षेत्र महत्वपूर्ण हैं। भारत के चाय बागानों की तुलना में यहाँ के चाय बागानों का आकार बहुत छोटा (10–15 एकड़) होता है। 40,000 हैक्टेअर भूमि में समस्त चाय बागान समाये हुए हैं। भारत या लंका की तरह यहाँ काली चाय (भूनकर) नहीं बनाई जाती। यहाँ हरी चाय का ज्यादा प्रचलन है। 'सेंचा' यहाँ की प्रसिद्ध चाय है। चाय बागानों के निकट ही छोटी-छोटी शोध-कार्य में संलग्न फैक्ट्रियाँ हैं जिनमें जापानी चाय को निर्यात लायक विकसित करने के सम्बन्ध में निरन्तर शोध-कार्य चलते रहते हैं।

शक्कर बनाने के लिए उपोष्णीय यानी दक्षिणी जापान में गन्ना एवं शीतोष्ण कटिबंधीय यानी उत्तरी हांशू एवं होकेडो में चुकन्दर पैदा किया जाता है परन्तु शक्कर की केवल 30% आवश्यकता ही देशी उत्पादन से पूरी हो पाती है। क्वांटो के मैदान एवं ओवाडो-सुरगा खाड़ी क्षेत्र में थोड़ी सी कपास भी पैदा की जाती है। तम्बाकू लायसेंस-धुदा किसान ही पैदा कर सकता है। रेशम यहाँ की सबसे अधिक कीमती एवं महत्वपूर्ण औद्योगिक फसल है। इसका विवरण रेशमी वस्त्र व्यवसाय के साथ दिया गया है।

पशु पालन :

अच्छे चारागाहों की फसलों के लिए भूमि का अभाव, आर्द्र जलवायु (भेड़-बकरियों के लिए अनुपयुक्त) बौद्ध धर्म में मांस-भक्षण निषिद्ध एवं चर्बी की पूर्ति मछलियों से हो जाने के कारण जापान में पशु-पालन एवं दुग्ध व्यवसाय उस स्तर तक नहीं पहुँच पाया है, जिस स्तर पर यूरोपीयन देशों में है। दक्षिण के गर्म एवं आर्द्र प्रदेशों में दूध के लिए गाय-भैंस पाली जाती है जबकि उत्तर के ढाल प्रदेशों में भेड़ और बकरियाँ प्रचलित हैं। उत्तरी हांशू एवं होकेडो के ठण्डे प्रदेशों में इनका सर्वाधिक घनत्व है। देश की 29 करोड़ मुर्गियाँ भीतरी सागर के आसपास के तटवर्ती क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। 1982 में जापान में गाय-बैल 4·4 मिलियन, सूअर 10 मिलियन, भेड़ बकरी 79,000 तथा घोड़ों की संख्या 23,000 थी।

जापान : पशु धन उत्पादन[27]

(टनों में)

वस्तु	1965	1975	1981
मांस			
गाय, बछड़े का मांस	216,261	352,664	470,714
सूअर का मांस	407,238	1,039,642	1,395,843
घोड़े का मांस	19,896	5,283	3,917
चिकिन	69,658	609,345	951,007
गाय का दूध	3,220,547	4,961,017	6,610,232
मुर्गी के अण्डे	—	1,787,845	1,999,542

□□□

27. Statistical Hand book of Japan 1983 P. 35

जापान : मत्स्य व्यवसाय

वार्षिक मत्स्य-पकड़ की दृष्टि से जापान दुनिया में प्रथम है। वस्तुतः मत्स्य व्यवसाय को आर्थिक ढांचे के एक अंग के रूप में जितना महत्व इस देश में दिया जाता है उतना दुनिया के सम्भवतः अन्य किसी देश में नहीं। यही कारण है कि पिछले कई दशकों से इस व्यवसाय में जापान नेतृत्व की स्थिति में है। जापानी मत्स्य व्यवसाय का चरमोत्कर्ष 1939 में था जिस वर्ष मुख्य द्वीपों एवं अधिकृत क्षेत्रों में मिलाकर लगभग 802.8 मिलियन येन कीमत की मछलियाँ पकड़ी गई। युद्ध-पूर्व समय में जापानी पकड़ दुनिया की कुल पकड़ का आधे से अधिक भाग बनाती थी। युद्धोत्तर दिनों में अवश्य उसके विश्व-प्रतिशत में कमी आई है। वर्तमान में जापान दुनिया की 14.5% मत्स्य पकड़ के लिए जिम्मेदार है। इसका कारण जापानी व्यवसाय का ह्रास नहीं वरन् अन्य देशों में विकास तथा जापान के अधिकृत क्षेत्रों का हाथ से निकल जाना है।

मत्स्य व्यवसाय का जापानी अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रीय-आय इसका प्रतिशत वन व्यवसाय या खनिजों के उत्पादन मूल्य से कहीं अधिक रहता है। कुल कृषि-उत्पादन मूल्य के 1/6 भाग के बराबर मछलियों से प्राप्त हो जाता है। प्रतिवर्ष लगभग 200 मिलियन डालर की कीमत के मत्स्य उत्पादनों का निर्यात किया जाता है। मछली जापानी लोगों के भोजन में प्रोटीन का प्रधान साधन है। ग्रामीण क्षेत्रों में 90% तथा शहरी क्षेत्रों में लोगों की 80% प्रोटीन सम्बन्धी आवश्यकता मछली से पूरी होती है। इस प्रकार मत्स्य व्यवसाय का जापान में एक विशिष्ट स्थान है। इसके इतने महत्व की पृष्ठभूमि में कुछ प्राकृतिक एवं मानवी परिस्थितियाँ हैं जिनमें मुख्य ये हैं—

(1) जापान चार द्वीपों का देश है। केवल 16% भूभाग में कृषि सम्भव है। द्वीपीय स्वरूप होने के कारण भूविस्तार भी सम्भव नहीं। अतः खाद्यान्नों की कमी बहुत किसी सीमा तक मछलियों से पूरी हो जाती है।

(2) मध्यवर्ती भाग में उच्च प्रदेश तथा तटवर्ती पट्टी में अधिकांश जनसंख्या के बसाव के कारण इस समुद्री संसाधन के शोषण के लिए भारी अनुकूल परिस्थितियाँ हैं।

(3) जापान के चारों ओर स्थित जलाशय विविध प्रकार की मछलियों के अक्षय भंडार हैं। ये दुनिया के तीन सर्वाधिक घने मत्स्य प्रदेशों में से एक प्रस्तुत करते हैं। जापानी क्षेत्र में लगभग 400 किस्मों की मछलियां मिलती हैं।

(4) उत्तर से ओयाशिवो (ठंडी धारा) एवं दक्षिण से क्यूरोसीवो (गर्म धारा) आकर जापान के पास मिलती है। भिन्न-प्रकृति की होने के कारण ये जलधाराएँ विभिन्न प्रकार के तापक्रम एवं 'प्लैंक टन' प्रस्तुत करती है। अत: एक ही प्रदेश में विविध किस्मों की मछलियों के केन्द्रित होने के अवसर बढ़ जाते हैं।

(5) जापानी तट रेखा अत्यधिक कटी-फटी है। समुद्र खाड़ियों एवं कटानों द्वारा देश के भीतरी भागों तक घुसा है। अत्यधिक बसे तथा औद्योगिक उन्नत प्रदेशों के बीच उथला भीतरी सागर स्थित है। इन परिस्थितियों में न केवल जापान के पास उत्तम बंदरगाह व पोताश्रय हैं वरन समुद्री आंगन में निरन्तर क्रियारत रहने के कारण वहाँ के नाविक भी अत्यत कुशल हो गए हैं।

(6) जापान का जलयान निर्माण उद्योग दुनिया में अग्रणी है। यहाँ मत्स्य व्यवसाय सम्बन्धी यान—ट्राउलर्स, ड्रिफ्टर्स, फ्लोटिंग फैक्ट्रीज आदि पर्याप्त मात्रा में बनाए जाते हैं। देश के दो-तिहाई भागों में फैले वनों ने सदियों से जलयान निर्माण के लिए उपयुक्त लकड़ी प्रदान की है।

युद्धोत्तर दिनों में जापानी मत्स्य व्यवसाय में कई खास परिवर्तन हुए हैं। पकड़ मात्रा काफी बढ़ गई है। युद्ध पूर्व के वर्षों से अब लगभग 1 मिलियन टन मछली ज्यादा पकड़ी जाती है। दूसरे तटवर्ती क्षेत्रों की अपेक्षाकृत सुदूर समुद्रों में मत्स्याखेट बढ़ा है। युद्ध पूर्व दिनों में तटवर्ती पकड़ कुल पकड़ का लगभग 77 प्रतिशत भाग बनाती थी परन्तु 1960 में यह प्रतिशत केवल 42 था। लेकिन निकटवर्ती समुद्र, तटवर्ती क्षेत्र एवं भीतरी जलाशय मिलकर अब भी लगभग 80 प्रतिशत भाग बनाते हैं। सुदूर समुद्रों की पकड़ का प्रतिशत 20-21 ही रहता है। दोनों क्षेत्रों की विधियों में भी अन्तर है। तटवर्ती क्षेत्रों में व्यवसाय मुख्यतः व्यक्तिगत स्तर पर है तथा प्राचीन विधियों एवं परम्परागत औजारों (हुक तथा जाल) से किया जाता है। जबकि दूरस्थ समुद्रों में संगठनों द्वारा आधुनिकतम जलयानों का प्रयोग किया जाता है।

तटवर्ती मत्स्य व्यवसाय :

जापान के लगभग 2 लाख मछुआरे परिवार अपनी छोटी-छोटी नावों (3 टन से कम, आंशिक रूप में मोटर युक्त) एवं परम्परागत विधियों द्वारा इसमें व्यस्त हैं। वैसे तो जापान के चारों द्वीपों के तटवर्ती क्षेत्रों में मछलियाँ पकड़ने का

धंधा किया जाता है परन्तु भीतरी सागर, हाँशू का पूर्वी तट एवं होकेडो के तटवर्ती क्षेत्र पकड़ मात्रा एवं व्यवसाय की निरंतरता की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। होकेडो में एनू लोग सदियों से यह व्यवसाय करते आए हैं। ठंड की अधिकता के कारण कृषि यहाँ सम्भव नहीं है। भीतरी सागर उथला होने के कारण मछलियों का सघन क्षेत्र है। इसके आसपास घने बसे क्षेत्र होने के कारण माँग भी ज्यादा रहती है। फिर यह सागर अत्यन्त शांत प्रकृति का है। हाँशू की पूर्वी तट पट्टी बहुत सँकरी है जिसमें कृषि क्षेत्र कम है। यहाँ पंक्तिबद्ध रूप में मछुआरों के गाँव बसे हुए हैं।
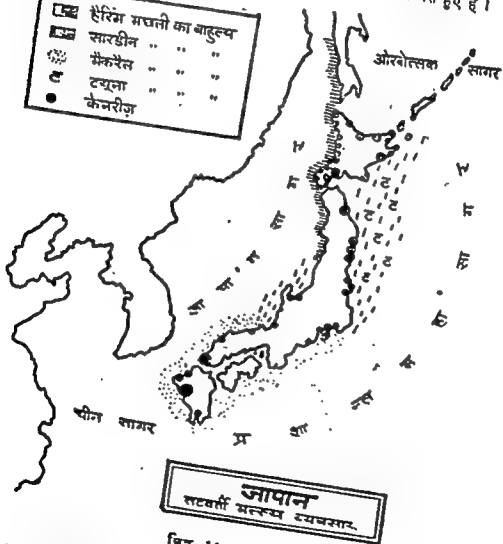
चित्र–11

मछुआरों के गाँव प्रायः तटवर्ती रेतीली पट्टी में रेखात्मक पैटर्न के आसपास बसे हुए हैं। दूसरे शब्दों में इन गाँवों का आम स्वरूप झोंपड़ियों की शृंखलाबद्ध

होती है। हजारों मन मछलियों को रखने का क्षमता होता है। [illegible]
संचालित जहाज प्रयोग किए जाने लगे हैं। समुद्री खतरों से बचने के लिए इनमें [illegible]
व्यवस्था होती है। आधार केन्द्र की दृष्टि से गहरे समुद्रों में होने वाले व्यवसाय को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) मुख्य भूमि पर आधार केन्द्रयुक्त :

इसमें मछलियों को पकड़ कर जापान के तट पर स्थित उन केन्द्रों को भेज दी जाती है जहाँ से उन्हें बाजार भेजने लायक बनाकर खपत केन्द्रों को भेज दिया जाता है। इन केन्द्रों में बड़े-बड़े शीत भण्डार हैं। तेल, खाद, नमकीन मछली, मछली का आचार तथा 'स्लाइसेंज' बनाने के लिए अनेक फैक्ट्रीज हैं। इन केन्द्र नगरों से शीतालययुक्त ट्रकों व रेलों में भरकर देश के भीतरी भागों में मछलियाँ भेज दी जाती हैं। ऐसे केन्द्रों में हैकोडेक, शिमोनोसेकी, निगाता तथा टाबोरा महत्वपूर्ण हैं।

(ब) मुख्य भूमि पर आधार केन्द्र रहित :

इस श्रेणी का मत्स्य व्यवसाय एक बड़े जलयान 'फ्लोटिंग फैक्ट्री' द्वारा सम्पादित किया जाता है। यह जलयान वस्तुतः एक पूरी इकाई होती है जिसमें एक मुख्य जहाज होता है उसमें मछलियों को निर्यात लायक बनाने के लिए फैक्ट्रीज लगी होती हैं। इनके साथ अनेक ट्राउलर्स (छोटे जलयान) होते हैं जो आसपास के समुद्रों से मछलियाँ पकड़ कर एक स्थान पर खड़े मुख्य जहाज को पहुँचाते रहते हैं। मुख्य जहाज से मछलियों को विभिन्न रूपों में तैयार कर सीधा बाजारों में भेज दिया जाता है।

मत्स्य व्यवसाय में लगभग 5 लाख लोग लगे हुए हैं जिनमें से 68% व्यक्ति स्वतंत्र मछुआरों की हैसियत में कार्यरत हैं। शेष 32% कम्पनियों या निगमों से जुड़े हुए हैं। 1981 में मत्स्य व्यवसाय में 2,806,700 ग्रॉस टन के 445 000 जलयान संलग्न थे। स्पष्ट है कि अधिकांश जलयान छोटे आकार की नावें हैं जो निजी स्तर पर मछुआरों द्वारा संचालित हैं। 92% जलयानों में मोटर इंजिन लगे हुए हैं। वार्षिक पकड़ औसतन 10 मिलियन टन होती है। 1981-82 में यह 11.3 मिलियन टन थी। जापान मत्स्य पकड़ की दृष्टि से दुनिया में सबसे आगे है जैसाकि निम्न सारणी से सुस्पष्ट है।

मत्स्य पकड़ : तुलनात्मक स्थिति 1980

देश	पकड़ मात्रा (मिलियन टनों में)	देश	पकड़ मात्रा (मिलियन टनों में)
1. जापान	10.41	6. पेरू	2.73
2. सो. संघ	9.41	7. भारत	2.42
3. चीन	4.24	8. नार्वे	2.40
4. स. रा. अमेरिका	3.63	9. कोरिया (रिप०)	2 09
5. चिली	2.83	10. डेन्मार्क	2 03

जापान में सभी स्तरों पर मत्स्य व्यवसाय प्रचलित है। तटवर्ती समुद्रों, भीतरी जलाशयों, दूरस्थ महासागरों तथा तटवर्ती खाड़ियों आदि सभी में व्यापक रूप से यह व्यवसाय चल रहा है। भौगोलिक वातावरण की अनुकूलता, बढ़ती जनसंख्या एवं खाद्यान्न उत्पादन की परिसीमा के परिप्रेक्ष्य में मत्स्य व्यवसाय इस देश के लिए एक आवश्यकता बन गयी है। विभिन्न प्रकार की पकड़ मात्रा निम्न सारिणी में अंकित है।

जापान : मत्स्य क्षेत्र एवं पकड़ मात्रा[28]

मत्स्य क्षेत्र	1965	1970	1975	1981
1. खुले सागर	1,733	3,429	3,187	2,165
2. तटवर्ती	1,861	1,889	1,935	2,038
3. दूरस्थ सागर	2,787	3,279	4,451	5,938
4. समुद्रों में कृत्रिम मत्स्य क्षेत्र	380	549	773	960
5. भीतरी जलाशय	146	168	199	216
कुल पकड़ मात्रा	6,908	9,315	10,545	11,319

(पकड़ – 1000 टनों में)

किस्म की दृष्टि से टयूना, स्किपजैक, सारडीन, मैकरैल, कार्प, सैमोंटेल, आयस्टर तथा अलास्का पोलक उल्लेखनीय हैं।

जापान न केवल एशिया वरन विश्व के 'ह्वेलिंग' करने वाले देशों में अग्रणी है। पहले उत्तरी ध्रुव क्षेत्र ह्वेल मछली के शिकार का मुख्य क्षेत्र था परन्तु आज-कल अंटार्कटिका प्रधान ह्वेल क्षेत्र है, जहाँ दुनिया के अन्य देशों के साथ जापान भी इस व्यवसाय में संलग्न है। मत्स्य क्षेत्र के परिवर्तन, मुख्य भू-भाग से दूरी तथा ह्वेल मछलियों की संख्या में कमी आने का सीधा प्रभाव पकड़ मात्रा पर पड़ा है, जैसा कि निम्न सारिणी से सुस्पष्ट है।

जापान : ह्वेल पकड़ मात्रा

वर्ष	1965	1970	1975	1980	1981
पकड़ (संख्या)	26,986	16,887	13,427	5,191	4,887

□□□

28. Statistical Hand book of Japan 1983 P. 38

जापान : शक्ति के साधन एवं खनिज सम्पत्ति

जापान के भू-क्षेत्र को देखते हुए यहाँ के खनिज पदार्थों को आश्चर्यजनक
रूप से विविध कहा जा सकता है परन्तु औद्योगिक ढांचे के परिणाम को देखते हुए
यही निष्कर्ष निकलता है कि जापान प्राकृतिक खनिज सम्पदा की दृष्टि से अत्यत
गरीब है। औद्योगिक विकास के लिए जिन आधारभूत खनिजों—जैसे लोहा,
कोयला, पैट्रोल, बॉक्साइट, मैगनीज, मिश्रण की धातुएं आदि की आवश्यकता
होती है उनमें से कोयले को छोड़कर सबमें जापान निर्धन है। तांबा अवश्य यहां
पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है। रासायनिक उद्योगों से सम्बन्धित गंधक, पोटाश, नमक
आदि भी पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं। इनके अतिरिक्त एस्बैस्टस, पारा, पायराइट
आदि भी थोड़ी-सी मात्रा में उपलब्ध है। अधातु खनिजों में चूने के पत्थर एवं
जिप्सम की उपलब्धि उल्लेखनीय है। शक्ति के साधनों में कोयला के अतिरिक्त
जलविद्युत सम्भावनाएं महत्वपूर्ण हैं। वस्तुतः जल-शक्ति एवं तांबा—इन दो के
सहयोग से प्रचुर मात्रा में विद्युत उत्पादित हो जाती है जिसने यहां के लघु उद्योगों
को जीवन प्रदान किया है। पैट्रोल भी जापानी धरा में उपलब्ध है परन्तु उत्पादन
नगण्य है। आवश्यकता का 96 प्रतिशत बाहर से ही आयात करना पड़ता है।
पिछले दशकों में प्राकृतिक गैस एवं अणु-खनिजों की भी खोज हुई है परन्तु उत्पादन
मात्रा सीमित है।

प्रमुख खनिजों की उत्पादन मात्रा 1981[29]
(उत्पादन मैट्रिक टनों में)

खनिज	उत्पादन मात्रा	खनिज	उत्पादन मात्रा
कोयला	17,687,000	क्रोमाइट	10,959
तांबा	51,553	टिटैनियम	5,201
लौह-अयस	441,844	प्राकृतिक गैस	20,661,189 (घन मीटर)

29. Statesman's year book Macmillan. 1984-85 P. 748

जस्ता	242,042,000	खनिज तेल	456,008 (कि० लीटर)
सीसा	46,922	बॉक्साइट	232,000
मैंगनीज	86,696	सोना	3 087 (कि० ग्राम)
एस्बेस्टस	13,455	चाँदी	280,228 (कि० ग्राम)
टंगस्टन	1,901	मॉल विडोनम	100

उपलब्ध मात्रा एवं आवश्यकता के अनुपात के आधार पर जापानी खनिजों को तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है।

प्रथम—वे खनिज जिनकी उत्पादित मात्रा से घरेलू आवश्यकता पूरी हो जाती है या लगभग पूरी के बराबर है। ये हैं–क्रोमाइट, ताँबा, जिप्सम, चूने का पत्थर, मैग्नेशियम, पायराइट, गंधक, सीसा, जस्ता, सोना तथा चाँदी।

द्वितीय—जो उपलब्ध हैं परन्तु अपर्याप्त मात्रा में अतः आयात करना पड़ता है यथा–लौह-अयस, लौह मिश्रण की धातुएँ, कोकिंग कोयला, एन्टीमनी, पारा, मैंगनीज, टिन, टंगस्टन, टिटैनियम, मॉल विडोनम तथा क्रोमियम आदि।

तृतीय—जो देश मे प्राप्त नही है एवं उद्योगों के लिए आवश्यक भी हैं अतः भारी मात्रा में आयात करने पड़ते हैं। इनमें निकल, कोबाल्ट एल्युमिनियम, नाइट्रेट, फॉस्फेस्ट, पोटाश, नमक तथा पैट्रोलियम आदि महत्वपूर्ण हैं।

कोयला :

जापान के खनिज संसाधनों में कोयला सर्वाधिक महत्व का है जो समस्त खनिज-उत्पादन मूल्य का लगभग 23 प्रतिशत भाग प्रस्तुत करता है वार्षिक उत्पादन लगभग 18 मि० टन (1981 में 17.6 मि० टन) होता है जिसका 55 प्रतिशत भाग उद्योगो में तथा 35 प्रतिशत भाग विद्युत-उत्पादन, रेलवे तथा गैस-उत्पादन आदि कार्यों में प्रयोग होता है। सुरक्षित राशि की मात्रा 20.7 बिलियन आंकी जाती है परन्तु इसमें से केवल 3.2 बिलियन टन की राशि ही ऐसी है जिसे कि आर्थिक रूप से खोदा जा सकता है। अगर वर्तमान दर से खुदाई होती रही तो यह मात्रा अगले 30-35 वर्ष में समाप्त हो जावेगी। सुरक्षित राशि सम्बन्धी विविध आंकड़े इस प्रकार हैं :

वितरण—1. होकेडो 48.5 प्रतिशत कुल सुरक्षित राशि का[30]

2. क्यूशू 38.4

3. हांशू एवं शिकोकू 13.1

30. Japanese Geological survey, Geology and Mineral Resources of Japan (2nd. ed. 1960)

प्रायोगिक सम्भाव्यता—	1. प्रमाणित	28.6
	2. सम्भव	14.3
	3. अनुमानित	54.1
कोयले की किस्म—	1. एन्थ्रासाइट	2.7
	2. बिटूमियन से उच्च श्रेणी के लिगनाइट तक	94.5
	3. निम्न श्रेणी का लिगनाइट	2.8

वर्तमान उत्पादन का अधिकांश भाग चार क्षेत्रों से प्राप्त होता है ये हैं—उत्तरी क्यूशू (50 प्रतिशत), होकेडो (36 प्रतिशत), पूर्वी हांशू (8 प्रतिशत) एवं

चित्र-12
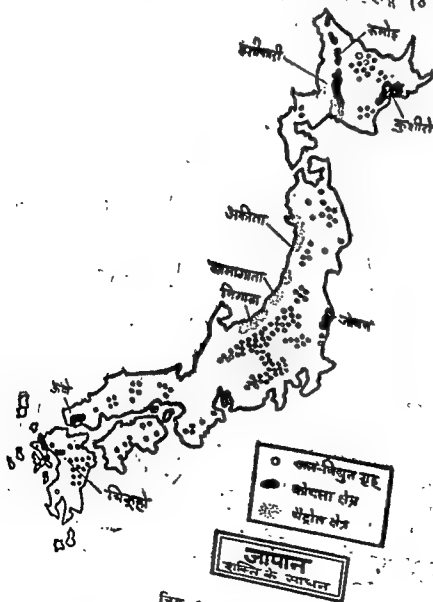
पश्चिमी हांशू (6-7 प्रतिशत)। उत्तरी क्यूशू में चिकूहो क्षेत्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो अकेला इस द्वीप का 53 प्रतिशत से अधिक उत्पादन प्रस्तुत करता है। क्यूशू की 58% सुरक्षित राशि इस क्षेत्र में विद्यमान है। अन्य खानों में सासेबा, फुकुओ तथा करातु उल्लेखनीय हैं। तटीय भागों में स्थित होने से क्यूशू की खानों में खनन एवं परिवहन दोनों ही सस्ते पड़ते हैं। इसी कोयले के आधार पर यावाता, नागासाकी, मोजी आदि के इस्पात, जलयान निर्माण के कारखाने विकसित हुए हैं। होकेडो का अधिकतर कोयला ईशीकारी तथा कुशीरो क्षेत्रों से आता है। हांशू द्वीप में दो क्षेत्रों में कोयला प्राप्त है। प्रथम, जोबन जो हांशू के पूर्वी तट पर टोक्यो के उत्तर में स्थित है। द्वितीय, ऊबे क्षेत्र जो हांशू के सुर दक्षिणी-पश्चिमी भाग में विद्यमान है।

कुल उत्पादन को देखते हुए जापान कोयला में अत्यधिक गरीब नहीं लगता। परन्तु वास्तविकता यह है कि इस उत्पादित मात्रा का बहुत कम भाग उद्योगों के मतलब का है। होकेडो में उत्पादित मात्रा का अधिकतर भाग बिटूमिनस या उप-बिटूमिनस प्रकार का है। केवल 22 प्रतिशत भाग में कोकिंग बनाने की क्षमता है। क्यूशू में भी उप-बिटूमिनस है फिर भी होकेडो से कुछ अच्छी स्थिति है। यहाँ के उत्पादन के 29 प्रतिशत भाग को घटिया किस्म के कोकिंग कोल की श्रेणी में रखा जा सकता है। ऊबे तथा जोबन के कोयला में तो कोकिंग का अंश ही नहीं है बल्कि इन दोनों के कोयले में गंधक मिली होती है। एक और बात है, जापानी कोयला क्षेत्रों में कोयले की पर्तें इतनी पतली है कि उनकी खुदाई हाथ से ही हो सकती है। मशीनों से चूर्ण बनने का डर रहता है। अतः खुदाई महँगी पड़ती है। आयातित कोयला इससे कहीं सस्ता पड़ता है। कोयला क्षेत्रों में यह भी समस्या है कि ज्यादातर तटवर्ती प्रदेशों में विद्यमान हैं। पर्तें आगे बढ़कर समुद्र तक चली गई है अतः भविष्य में समुद्र में खुदाई करनी होगी। पिछले वर्षों में 12-15 प्रतिशत कोयला समुद्र में ही खोदा गया। इन परिस्थितियों को देखते हुए लगता है कि जापानी कोयला उद्योग का भविष्य उज्जवल नहीं है।

लिगनाइट की खुदाई एवं उपयोग वास्तविक रूप में द्वितीय विश्वयुद्ध में ही प्रारम्भ हुई जबकि शक्ति की अधिकाधिक आवश्यकता हो रही थी। सुरक्षित भण्डार 2400 मिलियन टन के आंके जाते हैं। 1981 में उत्पादन 15.6 मिलियन टन था। देश की सबसे महत्वपूर्ण खानें टोक्यो के पास स्थित हैं।

पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस :

शक्ति संसाधनों में जापान की सबसे बड़ी कमजोरी पेट्रोल को लेकर है। यहाँ उत्पादन नगण्य है जो सम्भवतः विश्व-उत्पादन के एक प्रतिशत से भी कम बैठेगा।

जापान की तेल-पट्टी हांगू के पश्चिमी तट प्रदेशों में स्थित है जहां निचले कांप के मैदानों एवं पर्वतपदीय क्षेत्रों में तेल कुएँ स्थित है। उत्पादन का अधिकांश भाग पश्चिमी तोहोकू में स्थित अकीता एवं उसी के निकट स्थित निगाता प्रीफैक्चरों से प्राप्त होता है। उत्पादन में दोनों का हिस्सा क्रमश: 57 प्रतिशत एवं 41 प्रतिशत है। यह वस्तुत: शृंखलाबद्ध पेटी है जिसका विस्तार (लम्बाई की दृष्टि से) लगभग 170 कि० मी० में है। इस पेटी में 10-12 स्थानों पर तेल कूप हैं। सारूकावा, सुचीजाकी, यावासे (सभी उत्तर में) नागोत्सू, कुबोकी तथा मित्सू (दक्षिणी भाग में) नामक स्थानों पर महत्वपूर्ण कुएँ विद्यमान हैं।

इस प्रकार जापान लगभग पूरी तरह से विदेशों से आयातित तेल पर निर्भर है। स्वदेशी उत्पादन (लगभग 4.5 लाख कि० लीटर) आयात किए गए तेल का 1 प्रतिशत से भी कम भाग प्रस्तुत करता है। अधिकांश तेल मध्यपूर्व के देशों, वर्मा, स० रा० अमेरिका आदि देशों से आता है। जापान अपने आयातित तेल को क्रूड आयल के रूप में मंगाता है तथा अपने तेल-शोधक कारखानों में साफ करता है। ये कारखाने याकोहामा, तोकूयामा, मोक्काचो, वाकायामा, शिजूओका, मारीफ तथा मित्सुबिशी आदि तटवर्ती नगरों में विद्यमान हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व जापान को सखालिन तथा कोरिया के तेल क्षेत्रों की सुविधा प्राप्त थी। बर्मा पर भी आक्रमण वस्तुतः इसीलिए किया गया था क्योंकि जापान ने दो साल के लिए जो तेल इकट्ठा किया था वह समाप्त हो गया था। भूगर्भिक सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि जापानी भूमि में 120-160 लाख कि. लीटर तेल की राशि विद्यमान है परन्तु इसमें बहुत कम ही वास्तव में खोदी जा सकती है। इस प्रकार पैट्रोलियम में जापान को भविष्य में भी कोई उम्मीद नहीं हो सकती।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार जापान में प्राकृतिक गैस की 28.3 अरब घन मीटर राशि सुरक्षित है। इसका अधिकांश भाग हांगू में ही है। जापान के समस्त गैस क्षेत्र लगभग 700 वर्ग कि० मीटर क्षेत्र में विस्तृत हैं। सर्वाधिक केन्द्रीकरण दो क्षेत्रों में हुआ है। प्रथम–निगीता प्रीफैक्चर, द्वितीय–दक्षिणी कांटो। इन दोनों क्षेत्रों के उत्पादन केन्द्रों में चीबा, ओगुची, ओदागिरी, निगाता, शिबूजी, इत्सुकुरा तथा सेकिसा प्रमुख है। हांगू के अतिरिक्त होकेडो के इशीकारी क्षेत्र में कोयले के साथ भी थोड़ी-सी गैस प्राप्त है। निगीता से टोक्यो तक गैस पहुँचाने के लिए पाइप लाइन बिछाई गई हैं। वैसे प्राकृतिक गैस उत्पादन तो इस शताब्दी के प्रारम्भ में ही हो गया था परन्तु उत्पादन मात्रा में विशेष वृद्धि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ही हुई। 1982 में उत्पादन लगभग 21 मि० घन मीटर था। उत्पादन का 52 प्रतिशत भाग उद्योगों तथा घरों (ईंधन के रूप में) में खप जाता है। शेष का उपयोग रसायन उद्योगों में कच्चे माल के रूप में होता है।

जल विद्युत शक्ति :

जापान के आकार को देखते हुए यहां की जल विद्युत की सम्भावित राशि अपेक्षाकृत ज्यादा है। यहां की अनुमानित सम्भावित राशि 22.5 मिलियन कि० वा० आंकी जाती है जिसमें से 8.8 मि० कि० वा० या 39 प्रतिशत विकसित कर ली गई है। पिछले 20 वर्षों में विद्युत उत्पादन के विविध स्रोतों के पारस्परिक अनुपात में भारी परिवर्तन हुआ है। छठे दशक के प्रारम्भिक वर्षों में जापान विद्युत उत्पादन अधिकांशतः जल शक्ति से ही होता था। बाद के वर्षों में इसका स्थान क्रमशः ताप उत्पादित विद्युत बड़ी तेजी से लेती गयी और आज स्थिति यह है कि कुल विद्युत का 69.4% भाग थर्मल पावर स्टेशनों से, 15.5% जलशक्ति ग्रहों तथा 15.1 अणुशक्ति ग्रहों से प्राप्त होता है। जल शक्ति से ताप शक्ति ग्रहों का यह परिवर्तन मुख्यतः पैट्रोल के आधार पर हुआ है। यद्यपि आवश्यकता का 95% से अधिक पैट्रोल विदेशों से आयात किया जाता है। ज्यादातर ताप शक्ति ग्रह छठे एवं सातवें दशक मे स्थापित किये गये हैं।

वस्तुतः कुछ ऐसी परिस्थितियां हैं जिनमें जापान के इस महत्वपूर्ण शक्ति-साधन की सम्भावनाएँ प्राकृतिक रूप से ही बन पड़ी हैं। जापानी द्वीपों में उच्च प्रदेश रीढ़ की तरह फैले हुए हैं जिनसे छोटी परन्तु तीव्रगामी नदियां निकलती हैं। उच्च प्रदेशों का ढाल तटवर्ती मैदानों की तरफ काफी तीव्र प्रकार का है अतः ज्यादातर नदियां झरने बनाती हुई हैं। वर्षा पर्याप्त होती ही है। अवसर की बात है कि जापान में तांबा पर्याप्त मात्रा में है। देश की 90 प्रतिशत जनसंख्या तटवर्ती मैदानों में ही बसी है। वैसे भी जापान एक लम्बाकार देश है, चौड़ाई कम है। अतः खपत केन्द्र उत्पादन केन्द्रों के निकट ही स्थित हैं। इसलिए शक्ति वितरण बड़ा ही सस्ता व आसान है। अन्य शक्ति-साधनों (कोयला, पैट्रोल, प्राकृतिक गैस) के अभाव में जल विद्युत के विकास की ओर ज्यादा ध्यान जाना स्वाभाविक है। जल बहाव को नियमित बनाने के लिए छोटे-छोटे बांध बनाए गए हैं। चूंकि जापान के विद्युत केन्द्र कम उत्पादन क्षमता वाले हैं अतः सबको जोड़कर एक राष्ट्रीय ग्रिड बना दिया गया है।

वैसे जल विद्युत उत्पादक केन्द्र देश के सभी भागों में हैं परन्तु इनका केन्द्रीकरण हांशू के पूर्वी तथा पश्चिमी पर्वतपदीय प्रदेशों एवं दक्षिणी होकेडो में अधिक है। तोशान, होकूरिकू, टोकाई, कांटो एवं दक्षिणी तोहोकू में सर्वाधिक केन्द्रीकरण हैं। देश का पहला जल विद्युत गृह 1892 में क्योटो के निकट स्थापित किया गया था। कुटीर उद्योगों, रेशम, लुग्दी, कागज, रसायन व अन्य हल्के उद्योगों में विद्युत की उपयोगिता से प्रभावित होकर शक्ति गृहों की संख्या बड़ी तीव्र गति से बढ़ी जो 1947 मे 1376 हो गई। वर्तमान में जापान में लगभग 1565 शक्ति-गृह हैं। इनके अतिरिक्त ताप शक्ति गृह हैं जो मुख्यतः भीतरी सागरी क्षेत्र, उत्तरी

क्यूशू (जल विद्युत सम्भावनाएँ जहाँ कम हैं) तथा टोक्यो-नगोया-ओसाका-कोबे के औद्योगिक प्रदेशों (मांग के कारण) में हैं।

परमाणु शक्ति :

जापान में परमाणु शक्ति कार्यक्रमों की शुरूआत 1955 से हुई। 1956 में अणु शक्ति शोध केन्द्र की स्थापना टोक्यो से 130 कि० मी० उत्तर-पूर्व में स्थित तोकाई नामक गांव में की गई। 1957 एवं 1962 में क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय रिएक्टर्स बने।[31] अभी तक जापान भारत की तरह, परमाणु शक्ति के शांतिमय उपयोगों के लिए ही प्रयत्नशील रहा है।

शक्ति पूर्ति एवं मांग
(Composition of Energy Supply and demand)

1981 में जापान में कुल शक्ति पूर्ति 3,838,560 बिलियन किलो कैलोरीज थी। अगर पैट्रोल के संदर्भ में देखें तो यह मात्रा 416 मिलियन किलो लीटर्स थी। प्राथमिक स्रोत की दृष्टि से इसमें से 63.7% पैट्रोलियम, 18.3% कोयला 5.8% जल शक्ति, 5.8% प्राकृतिक गैस तथा 5.9% अणु शक्ति से प्राप्त हुई। शक्ति उपलब्धि एवं मांग के विविध पहलुओं को निम्न आंकड़ों से समझा जा सकता है।

जापान : शक्ति पूर्ति एवं मांग

प्राथमिक शक्ति पूर्ति		अंतिम शक्ति पूर्ति		घरेलू मांग	
पैट्रोलियम	63.7%	पैट्रोलियम	55.7%	खनिज एवं उद्योग	41.9%
कोयला	18.3%	कोयला	3.7%	यातायात	15.2%
जलशक्ति	5.8%	विद्युत	28.9%	वन एवं मत्स्य व्यवसाय	2.5%
अणुशक्ति	5.9%	कोक	8.7%	गृह कार्य	24 5%
प्रा० गैस एवं अन्य	6.6%	प्रा० गैस एवं अन्य	3.0%	एनर्जी	8 0%
				नान-एनर्जी	7.9%

शक्ति स्रोतों के बदलते स्वरूपों का अध्ययन अपने आप में बड़ा मनोरंजक है। पिछले 20 वर्षों में ताप एवं अणु-शक्ति गृह बड़ी तेजी से स्थापित हुए हैं जबकि जल शक्ति गृहों की संख्या में कमी नहीं आयी है। परन्तु जल-शक्ति का

31. Facts about Japan 1969.

कुल विद्युत उत्पादन में शेयर प्रतिशत बहुत घटा है। वर्तमान में केवल 16% विद्युत जल शक्ति गृहों से प्राप्त होती है। इससे सुस्पष्ट है कि ताप शक्ति एवं अणु शक्ति गृहों की उत्पादन क्षमता बहुत तेजी से विकसित हुई है। जैसाकि निम्न सारिणियों से सुस्पष्ट है।

जापान के विद्युत गृह-संख्या

वर्ष	कुल शक्ति-गृह	ज. वि. गृह	ताप	अणु
1960	2,023	1,532	491	—
1965	1,974	1,558	415	1
1970	2,141	1,574	562	5
1975	2,238	1,536	693	9
1977	2,276	1,534	732	10
1978	2,311	1,542	756	13
1979	2,336	1,549	779	13
1980	2,380	1,556	811	13
1981	2,429	1,565	851	13

जापान के विद्युत गृह-उत्पादन[33]

(मिलियन कि. वा. घं. में)

वर्ष	कुल विद्युत उत्पादन	जल वि० उत्पादन	ताप वि० उत्पादन	अणु वि० उत्पादन
1960	115,497	58,481	57,017	—
1965	190,250	75,201	115,024	25
1970	359,539	80,090	274,868	4,581
1975	475,794	85,906	364,763	25,125
1977	532,609	76,268	424,680	31,659
1978	563,990	74,647	430,030	59,314
1979	589,644	85,044	434,207	70,393
1980	577,521	92,092	402,838	82,591
1981	583,245	90,562	404,862	87,820

32. Ministry of International Trade and industry, Japan, Statistical Hand book 1983, P. 44
33. Ibid

धातु खनिज :

लोह-अयस–1963 में जापान जर्मनी को पीछे छोड़कर इस्पात के उत्पादन में दुनिया में तीसरे स्थान पर हो गया। इस कथन के संदर्भ में अगर यहां की लोह-अयस की उपलब्ध मात्रा को देखा जाए तो आश्चर्य होता है। यहां लोह-अयस की वार्षिक खपत लगभग 125 मिलियन टन (1981) है जिसमें से केवल .5 मिलियन टन स्वदेशी खानों एवं शेष मलाया, ब्राजिल, भारत, फिलीप्पीन तथा कनाडा आदि देशों के आयात से प्राप्त की जाती है। जो अयस उपलब्ध है वह भी बहुत अच्छी किस्म का नहीं है। धातु प्रतिशत उसमें 35-36 से अधिक नहीं है। गंधक एवं

चित्र–13

फास्फोरस युक्त होने के कारण वह इस्पात बनाने के लिए ज्यादा उपयुक्त नहीं है। जापान की अधिकांश लोह-अयस खानें उत्तरी-पूर्वी हांशू (कामैशी) तथा होकेडो (कुत्तचन) में स्थित हैं। कुछ खानें आमोरी, कुंजी, आकी, टोकाने, सूवा, तोसूगूमा एवं आवूता क्षेत्रों में भी हैं। जापान की खानें अधिकतर छोटी हैं। लगभग 500 लोहे की खानों में से केवल सात ही ऐसी हैं जिनका वार्षिक उत्पादन *50,000* टन से ज्यादा है। कामैशी की खानें जो देश का 28% लोह-अयस प्रस्तुत करती है, सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। ईवाते प्रीफैक्चर के पूर्वी हिस्से में स्थित इन खानों के उत्पादन में धातु प्रतिशत भी 59 तक मिल जाता है। गूमा प्रीफैक्चर (9% उत्पादन) के अयस धातु प्रतिशत 21 तक होता है। उत्पादन लाइमोनाइट किस्म का है। इनके बाद क्रमशः आमोरी प्रीफैक्चर तथा दक्षिणी-पश्चिमी होकेडो के ज्वालामुखी प्रदेश में स्थित तीनों खानें उल्लेखनीय कही जा सकती है जिनमें प्रत्येक का उत्पादन लगभग 5-6% है।

पिछले 10-15 वर्षों में लोह अयस का उत्पादन घटा है। *1965* की तुलना में वर्तमान उत्पादन एक-तिहाई से भी कम है। जबकि इस्पात का उत्पादन बढ़ा है। स्पष्ट है कि आयातित लोह अयस की मात्रा क्रमशः तेजी से बढ़ती जा रही है। यह तथ्य निम्न सारिणी से स्पष्ट है।

जापान : उपलब्ध एवं आयातित लोह अयस

(1000 टनों में)

वर्ष	लोह अयस का उत्पादन	आयात					
		कुल आयात	फिलीपाइन	भारत	कनाडा	ब्राजिल	आस्ट्रेलिया
1965	1,119	39,018	1,482	7913	1,950	915	231
1970	861	102,090	1,872	16,522	2,301	6,779	36,597
1975	602	133,524	1,517	17,454	3,900	23,460	63,253
1979	458	131,333	4,045	17,553	4,649	26,139	55,297
1980	477	134,828	4,060	17,022	3,429	28,523	60,040
1981	442	124,339	3,639	15,639	4,409	27,165	54,661

तांबा-तांबे की दृष्टि से जापान को लगभग आत्मनिर्भर कहा जा सकता है यद्यपि कुछ मात्रा में चिली, फिलीप्पीन आदि देशों से आयात करनी पड़ती है। वस्तुतः उत्पादन की वृद्धि दर मांग की बढ़ती दरों से कहीं कम है। यही कारण है कि युद्ध पूर्व दिनों में उत्पादन-मात्रा वर्तमान की 60% थी फिर भी आवश्यकता का 98% भाग पूरा हो जाता था। विद्युत उत्पादन एवं उद्योग क्षेत्रों में तांबे की

मांग निरंतर बढ़ती जा रही है। वार्षिक उत्पादन लगभग 51,553 टन (1981) है जिसका अधिकांश भाग आशियो, हितैची, कोसाकी, सैंडाई, सामोनो सैकी, वेशी, याशीनो तथा किशु की खानों से प्राप्त होता है। ओसाका एवं मोरारा में तांबाशोधक कारखाने हैं।

अन्य–जापान में गंधक पायराइट से प्राप्त होती है। ग्सरी हांशु की मात्सुओ की खान लगभग 58% गंधक प्रस्तुत करती है। सोने की खाने कोनोमई, साइयों, ताकाग्रोया, कुशीकिनो तथा नाकायाता आदि स्थानों पर है। अधिकांश चांदी कुसीकिनो, नाकालामा, नाइगो तथा कोनोमई की खानों से निकाली जाती है।

जापान : उद्योग धंधे

विकास क्रम :

जापान उद्योगों के क्षेत्र में यूरोपियन देशों की तुलना में बहुत बाद में आया, लेकिन एक बार जो औद्योगिक विकास का सिलसिला यहाँ प्रारम्भ हुआ तो इतनी तीव्र गति से आगे बढ़ा कि बहुत शीघ्र ही जापान दुनिया के चोटी के औद्योगिक देशों में से एक हो गया। जब यह तथ्य मालूम पड़ता है कि जापान का यह सारा औद्योगिक विस्तार केवल पिछले 70-80 वर्षों में हुआ है तो जापानी नागरिकों के प्रति अनायास ही श्रद्धा हो उठती है। औद्योगिक विकास की गति जितनी तीव्र यहाँ रही है उसकी समता यूरोप के किसी देश में नहीं मिलती। 1853 में जब कमांडोर मैथ्यू सी० पैरी ने जापानी द्वीपों को पहली बार देखा तो पाया कि वहाँ के 3 करोड़ लोग आर्थिक विकास की उसी अवस्था में होकर गुजर रहे हैं जिस अवस्था में यूरोप 15वीं शताब्दी में था। उद्योगों के नाम पर कुछ कुटीर एवं हस्तकला उद्योग थे जो जागीदारों के आश्रय पर ही जिंदा थे। तटवर्ती निचले प्रदेशों में रहने वाली जनसंख्या का अधिकांश भाग कृषि (चावल) एवं मत्स्य व्यवसाय में संलग्न था।

आधुनिक उद्योगों की नींव (1868-1892)

जापान के वर्तमान उद्योग-प्रधान आर्थिक ढाँचे का इतिहास 'मेजी पुन-रोत्थान' से प्रारम्भ होता है। इसके बाद के दो-तीन दशकों और विशेषकर 1900 के बाद से ही उद्योग बड़ी तीव्र गति से विकसित हुए। आधुनिक उद्योगों की नींव का श्रेय 'मेजी पुनरोत्थान' के बाद के प्रशासन की नीतियों को दिया जाना चाहिए। उस समय यहाँ के शासक के सलाहकार अधिकतर जवान और प्रगति-शील लोग थे जिन्होंने इन द्वीपों की भौगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह महत्वपूर्ण निर्णय लिया कि जापान का भविष्य औद्योगिक विकास द्वारा ही उज्ज्वल हो सकता है।

इन नीतियों के क्रियान्वयन में प्रशासन का भारी सहयोग रहा। विज्ञान और तकनीकी अध्ययन के लिए जापान के अनेक युवा अमेरिका, ब्रिटेन तथा जर्मनी

भेजे गये। उद्योगों की स्थापना हेतु अनेक विशेषज्ञ बाहर से बुलाए गए। सरकार ने अपने खर्चे से देश के विभिन्न भागों में तकनीकी स्कूल, छोटी-छोटी फैक्ट्रियाँ स्थापित कीं। यत्र-तत्र खनिज कार्य प्रारम्भ किए। इस प्रकार 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में जापान का औद्योगिक पूँजीवाद अपनी प्रथम स्टेज को पार करने की स्थिति में आ गया था। इसके लिए जापानी कारीगरों और तकनीशियनों को भी श्रेय दिया जाना चाहिए जिन्होंने पश्चिमी तकनीकों को बड़ी लगन से अपेक्षाकृत थोड़े समय में ही सीख लिया। सर्वप्रथम आधारभूत उद्योगों जैसे खनिज खुदाई, लौह-इस्पात, मशीन निर्माण, यातायात उपकरण आदि की ओर ध्यान केन्द्रित किया गया। परम्परागत कुटीर उद्योगों को नए परिवेश में रखा गया। इस प्रकार पिछली शताब्दी के अन्त तक रेशम, तांबा-शोधन, रेलवे, जलयान निर्माण, कांच, सीमेंट, लौह-इस्पात आदि उद्योग विकासशील अवस्था में आ चुके थे।

प्रारम्भ में सभी औद्योगिक संस्थान सरकारी नियन्त्रण में थे क्योंकि इनकी स्थापना में सारी पूँजी राज्य-कोष से ही लगी थी। निजी क्षेत्र में साहस का अभाव था, 'रिस्क' लेने की क्षमता नहीं थी। सरकार ने सदियों से चले आ रहे सामंतवादी सामाजिक नियमों की बाधा भी दूर कर दी। इससे लोगों को उद्यम सम्बन्धी स्वतन्त्रता मिली, उनमें चेतना आई। फलतः विदेशी सम्पर्क एवं व्यापार प्रोत्साहित हुए। इन सब परिस्थितियों ने मिलकर ऐसा वातावरण प्रस्तुत किया कि छोटे और बड़े दोनों प्रकार के उद्योगों में पूँजीपतियों को पैसा लगाने की प्रेरणा मिली। इन्हीं दिनों विश्व-बाजारों में बढ़ती हुई रेशम की माँग तथा सैनिक सम्बन्धी आवश्यकताओं ने विस्तृत बाजार प्रस्तुत कर के जापानी उद्योगों को प्रोत्साहित किया।

1880 के बाद औद्योगिक संस्थानों का स्वामित्व निजी क्षेत्र को स्थानान्तरित कर दिया गया। फलतः पूँजीपतियों ने आगे की दशाब्दियों में कई बड़ी औद्योगिक ईकाइयाँ स्थापित कीं। वस्तुतः यहीं से जापानी औद्योगिक क्षेत्र के भाग्य एवं विकास का उदय हुआ क्योंकि निजी क्षेत्र में आने से कार्य-कुशलता तेजी से बढ़ने लगी। सरकार ने फिर भी कुछ राजनैतिक महत्व के उद्योगों (जैसे जलयान निर्माण) पर नियन्त्रण रखा। निजी क्षेत्र को अनुदानों के रूप में सहायता दी। 1890 के बाद सरकार की इतनी देखभाल भी हट गई अब केवल इतना ही रहा कि सारे उद्योग राष्ट्रीय नीतियों के अन्तर्गत रह कर कार्य करें।

प्रथम विश्वयुद्ध पूर्व से स्थिति (1893-1913) :

इस अवधि में जापान ने दो युद्ध लड़े, चीन और सोवियत संघ से। इन युद्धों से न केवल औद्योगिक विकास हुआ वरन् जापान की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति बहुत बढ़ गई। 1894–95 में चीन से हुए युद्ध में एक ओर जापानी उद्योगों ने

हथियार, वस्त्र व अन्य आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन में भारी विकास किया तो दूसरी ओर नई संधि के अनुसार उसे आर्थिक लाभ भी हुआ। चीन से उसे 38,000,000 पौंड की राशि मिली। चीन ने यह राशि सोने के रूप में दी जिसे जापान ने 1897 के स्टैंडर्ड से लिया। इससे जापान की आर्थिक अवस्था और भी अच्छी हुई। सैनिक शक्ति, उद्योग तथा हथियारों की खरीद में तेजी आई और जापान इतना समर्थ हुआ कि 1904–5 में युद्ध में रूस जैसे देश को हरा सका।

वर्तमान शताब्दी की प्रथम दशाब्दी में जापानी उद्योग के आधारभूत पैटन में संशोधित स्वरूप ही वस्तुतः अगले 30 वर्षों तक रहा। धातु, इन्जीनियरिंग एवं भारी उद्योग अलग-अलग हो गए। सैनिक महत्व की औद्योगिक ईकाइयों का ऐसा लचीला स्वरूप रखा गया कि वे शान्ति के समय में अपना 'नार्मल' उत्पादन तथा युद्ध के समय में यौद्धिक आवश्यक उत्पादन कर सकें। लेकिन इसमें भारी पूँजी और उच्च तकनीकी ज्ञान की कमी एक बड़ी बाधा थी। इस समय में सरकार ने प्रेरणात्मक कदम उठाया।

1901 में यावता में प्रथम इस्पात का कारखाना खोला गया। इसके अतिरिक्त 60,000–70,000 ग्रास टन भार के जलयानों के निर्माण की क्षमता के एक जलयान निर्माण कारखाने को आर्थिक अनुदान दिया। तकनीकी ज्ञान अभी भी कम ही रहा। इसी कारण साधारण मशीनों को छोड़कर प्रायः सभी आयात करने पड़ते थे। कच्चे मालों में केवल गंधक तथा ताँबा ही पर्याप्त मात्रा में प्राप्त थे। इस सबके बावजूद जो कुछ भी विकास हुआ वह एशिया और यूरोप के अन्य बहुत से देशों की तुलना में कहीं ज्यादा था इसका अनुमान निम्न सारणी से हो जाता है।

जापान (मुख्य) में औद्योगिक विकास 1884–.914

वर्ष	कोयले की खपत (1000मै.ट.में)	कच्चे रेशम का उत्पादन (1000कि. ग्राम में)	सूती धागे का उत्पादन (1000 गाँठों में प्रत्येक गाँठ 400 पौंड की)	पिग आयरन उत्पादन (1000 टन में)
1884	147	2,697	13	18
1894	1,093	5,218	292	55
1904	3,705	7,488	605	133
1914	8,359	14,084	1,666	474

परन्तु इन दिनों कृषि में भी आधी से अधिक जनसंख्या संलग्न थी और राष्ट्रीय आय का ज्यादातर भाग कृषि क्षेत्रों से ही प्राप्त होता था न कि इन भारी उद्योगों से। उद्योग की स्थापना से कृषि क्षेत्रों की जनसंख्या इनकी ओर आकर्षित हुई, जीवन-स्तर बढ़ा, मृत्यु-दर कम हुई, फलतः खाद्य समस्या बढ़ी। 1884–1914 की अवधि में खाद्य समस्या में 40% की वृद्धि हो गई। इन्हीं दिनों में अन्य कई प्रकार के उद्योग जैसे वस्त्र, बर्तन, कागज, कांच, सीमेंट भी तेजी से खुलने लगे। औद्योगिक क्षेत्र की मांग पूर्ति के लिए परिवहन, व्यापार बैंकिंग एवं प्रशिक्षित कारीगरों की आवश्यकता हुई। इस प्रकार जापान की बढ़ती हुई जनसंख्या और बेकारी को इस क्षेत्र ने खपा लिया। 1913 में सब प्रकार के कारखानों में लगभग 2000,000 लोग काम कर रहे थे। इनमें आधे से ज्यादा ऐसी छोटी फैक्ट्रियों में थे जिनका औसत आकार 5-10 मनुष्यों की मजदूरी का था। इनमें से 40% अकेले वस्त्र व्यवसाय में थे। वस्तुतः इन दिनों छोटे-छोटे पॉवरलूम और फैक्ट्रियां बहुत खोली गईं। बड़े उद्योगों की तरह इनको सरकारी सहायता थी नहीं, इनमें से अधिकतर सहकारी आधार पर खोली गई थीं।

वस्त्र उद्योग, अन्य औद्योगिक देशों की तरह, जापान में भी औद्योगिक क्षेत्र में 'पायोनियर' रहा। 1894-1914 की अवधि में रेशम तथा सूती दोनों प्रकार के वस्त्रों की उत्पादन मात्रा एवं क्वालिटी में पर्याप्त विकास हुआ। 1914 में यहां 2,400,000 तकुएँ (सूती मिलों में) कार्य कर रहे थे। धागे का उत्पादन 1.7 मिलियन गांठ का था। सारे पूर्वी एशिया में जापानी कपड़ा बिकता था। निस्संदेह मजदूरों की दशा यहां इन दिनों बड़ी दयनीय थी।

प्रथम विश्व युद्ध और बाद के वर्ष (1914-1929)

प्रथम विश्व युद्ध जापानी उद्योगों को वरदान सिद्ध हुआ। अगर यह युद्ध न होता तो सम्भवतः दूसरी दशाब्दी में जापान के दिवालिया होने की स्थिति आ जाती क्योंकि पहिले 10-15 वर्षों में सैनिक तैयारी एवं औद्योगिक विकास में बहुत सारा विदेशी कर्जा हो गया था। युद्ध ने सारी समस्या दूर कर दी। यूरोप से धड़ाधड़ आर्डर आने लगे। इधर पूर्व के बाजारों से ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि योरोपियन देश हट गए। जापानी जहाजी बेड़े ने भी इन दिनों खूब कमाया।

प्रथम विश्व युद्ध के पांच वर्षों में (1914-19) फैक्ट्री उत्पादन चार गुना हो गया तथा कम्पनियों की 'पेड-अप' तथा सुरक्षित राशि 944 से बढ़कर 3,264 मिलियन येन हो गई। इन दिनों में फैक्ट्रियों की उत्पादन क्षमता, विभिन्नता एवं तकनीकी प्रौढ़ता में विकास हुआ। मजदूरों की संख्या दूनी हो गई। तीन-तीन पारियों में काम होने लगा। उत्पादन लक्ष्य कई गुने रखे गए। कई प्रकार के नए इन्जीनियरिंग तथा रासायनिक उद्योग स्थापित किए गए। सूती वस्त्र व्यवसाय में शक्ति चालित कर्घों की संख्या 55,000 से बढ़कर 110,000 हो

गई। कोयला की खपत में 35% वृद्धि हुई। इस्पात 5000,00 टन की सीमा को लांघ गया। निम्न सारणी से यह विकास-स्वरूप स्पष्ट है।

जापान (मुख्य) में औद्योगिक विकास (1909-1938)

वर्ष	फैक्ट्रीज की संख्या	संलग्न मजदूर (1000 में)	उत्पादन मूल्य (मिलियन येन में)
1909	32,390	1,012	772
1919	44,087	2,025	6,518
1929	58,887	2,067	7,718
1938	112,331	3,604	19,667

1919 में युद्धोत्तर प्रभाव सामने आए। आर्थिक समस्याएँ बढ़ गईं। युद्ध के समय में आई हुई बहुत सी ऐसी करेंसी बेकार हो गई जिसका अब पेमेंट नहीं हो सकता था। दुर्भाग्य के ऊपर दुर्भाग्य के रूप में 1923 का भयंकर भूकम्प आ गया। आर्थिक समस्याओं का नग्न स्वरूप 1927 के 'बैंक क्राइसिस' के रूप में आया। इन सबके बावजूद कुछ उद्योगों ने प्रगति की। क्योंकि तकनीकी ज्ञान दिन पर-दिन बढ़ता जा रहा था। वैज्ञानिक खोजें होती रहीं। कोयला उत्पादन इन दिनों 30 मिलियन टन था। इस्पात उत्पादन बढ़कर 2,000,000 टन हो गया। विद्युत के विकास के साथ-साथ कई नए-नए प्रकार के उद्योग भी खुले। जलयान एवं कागज उद्योग बढ़ा। जापान इन दिनों भी यू० एस० ए० तथा ब्रिटेन के बाद रूई का तीसरा बड़ा ग्राहक देश था। 6.5 मिलियन तकुए थे। कई बड़े औद्योगिक संस्थान मितसुई, मित्सुबिसी तथा सुमीटोमो आदि ट्रस्टों के अन्तर्गत स्थापित किए गए।

व्यापार, हथियार एवं औद्योगिक विस्तार (1930-40)

1929-32 की विश्वव्यापी मन्दी का जापान पर भी असर पड़ा। कृषि उत्पादनों की कीमतें गिर गईं। उधर सं० रा० अमेरिका ने रेशम का आयात बन्द कर दिया इससे जापान का आर्थिक सन्तुलन बिगड़ गया। वह विदेशों का भुगतान करने में असमर्थ रहा फलतः उसे 1931 में येन का अवमूल्यन करना पड़ा जिसका जापानी निर्यात पर भारी प्रभाव पड़ा। निर्यात मात्रा एकदम बढ़ गई।

1930 की तुलना में 1936 में निर्यात मात्रा लगभग दूनी हो गई। इससे कारखानों का उत्पादन भी बढ़ा। इसकी तुलना में कच्चे माल, खाद्य पदार्थ एवं मशीनरी सम्बन्धी आयात में केवल 35% की वृद्धि हुई। वस्तुतः येन की कीमत घटने से जापान का तो बहुत सा सामान जाता परन्तु उसके बदले में अपेक्षाकृत कम ही आता। इससे सन्तुलन बनाए रखने के लिए उद्योगों को सस्ता एवं ज्यादा

मात्रा में उत्पादन करना पड़ा। उन्हें अपनी क्षमता एवं उत्पादन दोनों ही बढ़ानी पड़ी। 1930-36 के 6 वर्षों में औद्योगिक उत्पादन 60% एवं खनिज पदार्थ का उत्पादन 30% बढ़ गया। परन्तु सभी औद्योगिक क्षेत्रों की वृद्धि गति समान नहीं थी मुख्य रूप से मशीनरी, धातु रसायन आदि का उत्पादन अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा हुआ। इस्पात उद्योग की बहुत तेजी से वृद्धि हुई क्योंकि इन दिनों सैनिक साज-सज्जा के सामान की देशी एवं विदेशी मांग बहुत थी। 1930 में इस्पात-पिण्डों का उत्पादन 2,300,000 टन था जो बढ़कर 1935 में 5,200,000 हो गया। औद्योगिक विकास में दो अन्य तत्वों ने भी पर्याप्त सहयोग किया।

1. उत्तरी चीन तथा मंचूरिया में जापानियों द्वारा उद्योगों की स्थापना जिनके लिए सारे उपकरण, मशीनें वगैरह जापान से ही जाते थे।

2. सरकारी नीति जिसके अनुसार सरकार का खर्च यौद्धिक तैयारियों एवं मंचूरियन विकास पर अधिकाधिक मात्रा में हुआ। यह सारा पैसा सरकार ने कम ब्याज पर निजी क्षेत्र से लिया। 1930 से 1936 की अवधि में राष्ट्रीय खर्चा 1558 मि० येन से बढ़कर 2,282 मि० येन हो गया।

निम्न सारणी से 1936 में मुख्य-मुख्य उ्योगों का सापेक्षिक महत्व (मजदूरों एवं उत्पादन मूल्य) स्पष्ट है :—

जापान (मुख्य) के विभिन्न उद्योगों की सापेक्षिक स्थिति 1936

(संलग्न मजदूरों तथा उत्पादन मूल्य के आधार पर)

उद्योग	संलग्न मजदूरों की संख्या		उत्पादन मूल्य	
	सं० 1000 में	प्रतिशत	मिलियन येन	प्रतिशत
वस्त्र व्यवसाय	1,089	37.8	521	14.3
मशीनरी, हैवकिल्स	525	18.3	822	22.6
धातु	279	9.7	469	12.9
रसायन	318	11.1	911	25.1
खाद्य पदार्थ	192	6.7	247	6.8
बर्तन	113	3.9	201	5.5
काष्ठ उत्पादन	105	3.7	74	2.0
छपाई, बँधाई	70	2.4	86	2.4
अन्य	184	6.4	302	8.3
योग—				
समस्त निजी फैक्ट्रीज	2,876	100.0	3,633	100.0

यौद्धिक तैयारी के लिए इन दिनों जापान धड़ाधड़ अस्त्र-शस्त्र विदेशों से खरीद रहा था, इससे येन की साख घटी, इधर देश में अन्य सारे आर्थिक कार्य-क्रमों में कटौती की गई। सरकार ने उद्योग क्षेत्र के खर्चों, कच्चे मालों के एलाट-मेन्ट, मूल्य तथा मजदूरी आदि पर नियन्त्रण रखना शुरू किया। 1940 तक आते-आते कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 17% यौद्धिक कार्यों में खर्चा होने लगा।

द्वितीय विश्वयुद्ध में जापानी उद्योग :

इस महायुद्ध मे जापान पूरी औद्योगिक तैयारी के साथ उतरा। उसके ऐअर क्राफ्ट मोटर ह्वीकिल, टैंक अलमूनियम, मशीन-टूल उद्योग यौद्धिक उत्पादन में सक्षम थे। 1941 में जापान ने 5,000 वायुयान 48,000 मोटरें, 500,000 ग्रास टन भार के जलयान, 55,600,000 टन कोयला तथा 6,800,000 इस्पात पिण्ड उत्पादित किए। विद्युत उत्पादन क्षमता 1931 से दुगुनी हो गई। दो साल के लिए पैट्रोल सुरक्षित रखा गया। मुख्य जापान के उद्योगों को कच्चा माल मंचूरिया से मिल रहा था। लेकिन युद्ध के दो वर्षों बाद जापान को बुरी तरह इस्पात, कोकिंग, तेल नमक व अन्य वस्तुओं के लिए विदेशों पर निर्भर करना पड़ा। उसके सामने दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देश थे जिनमें से ये वस्तुएँ प्राप्त हो सकती थी। बर्मा से तेल, मलाया से रबर एवं टिन मिल सकता था। अतः वह उधर बढ़ा और पर्लहार्बर पर आक्रमण किया।

इस प्रकार यौद्धिक योजनाओं और घटनाओं से स्पष्ट है कि प्रारम्भ के दो-तीन वर्षों में उद्योगों की हालत 'नार्मल' रही। उन्हें गतिशील वस्तुतः 1942 में बनाया गया। 1943 में सरकार ने महत्वपूर्ण उद्योगों पर आपातकालीन नियन्त्रण कर लिया। यौद्धिक महत्व के उद्योगों के आकार, क्षमता एवं उत्पादन मे तेजी से वृद्धि हुई। 1942 में इन उद्योगों का उत्पादन राष्ट्रीय उत्पादन का 31 प्रतिशत था जो दो साल में ही बढ़ कर 1944 में 52 प्रतिशत हो गया। इन फैक्ट्रीज में 9,500,000 व्यक्ति काम कर रहे थे जो असैनिक मजदूरों का 30 प्रतिशत भाग प्रस्तुत करते थे।

वस्तुतः इन दो-तीन वर्षों में जापान ने जितनी तेजी से अपने उद्योगों को मोड़ा और गतिशील किया वह, इस दृष्टि से कि जापान औद्योगिक क्षेत्र में नया ही राष्ट्र था, प्रशंसनीय था। 1944 में हवाई जहाजों का उत्पादन 26,364 हो गया। इस वर्ष 2,00,000 ग्रास टन भार के यौद्धिक जलयान समुद्र में उतारे गए। इस्पात उत्पादन क्षमता बढ़ाकर 14,000,000 टन कर दी गई। (यद्यपि इसका प्रभाव यह पड़ा कि जीवन-स्तर घट गया। उपभोग की वस्तुओं का खर्चा प्रतिशत 1940 की तुलना में 30 प्रतिशत घट गया।) इस प्रकार यौद्धिक उत्पादनों का चरमोत्कर्ष उत्पादन 1944 में हुआ।

लेकिन इन्हीं दिनों आधारभूत उद्योगों का ह्रास होना प्रारम्भ हो गया क्योंकि तेल अलमूनियम, लोहा तथा कोयला के आयात पर मित्र राष्ट्रों द्वारा रोक लगा दी गई। उधर घर में की गई संचय मात्रा भी समाप्त हो गई। 1944 के अन्त में तेल प्रायः समाप्त हो गया। 1945 के वसन्त में मित्र राष्ट्रों के वायुयान जापान के मुख्य द्वीपों, उनमें स्थित महत्वपूर्ण उत्पादन केन्द्रों के ऊपर मँडराने लगे। अणुबमों ने संहारक दृश्य प्रस्तुत किया, जापान के घुटने टूट गए। इस बमबारी से जापान के प्रमुख 66 नगरों का 40 प्रतिशत भाग बरबाद हो गया जिससे लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या बेघरबार हो गई। जुलाई 1945 में औद्योगिक उत्पादन 40 प्रतिशत घट गया। इस प्रकार अणु बमों तथा सोवियत संघ के युद्ध प्रवेश ने जापान को घुटने टेकने को मजबूर कर दिया। औद्योगिक, विशेषकर सैनिक महत्व के क्षेत्र प्रायः चौपट हो गए, वायुयान के कारखानों की 75 प्रतिशत उत्पादन क्षमता कम हो गई। जलयान, उद्योग तो प्रायः नेस्तनाबूद हो गया और उधर बस्तियाँ हाथ से निकल गईं।

युद्धोत्तर औद्योगिक पुनर्संगठन एवं सुधार (1945-50)

1937 से 1945 तक जो यौद्धिक दृष्टि से औद्योगिक विस्तार हुआ वह सब मृतप्रायः हो गया। कारखाने बन्द पड़े थे क्योंकि कच्चे मालों की कीमत चुकाने को जापान के पास कुछ नहीं था। विश्व बाजारों में अब जापानी वस्तुएँ नहीं थी। जनवरी 1946 में जापान 1932-36 के स्तर तक नीचे आ गया था। प्रति एकड़ उत्पादन भी उसी स्तर का हुआ। इस तुलना में यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि जनसंख्या 1934 में 60 मिलियन थी जो अब (1949) में बढ़कर 82 मिलियन हो गई थी लेकिन वस्त्र व्यवसाय अभी भी 1932-36 के स्तर से 30 प्रतिशत कम था। पुनर्संगठन के लिए खाद्य पदार्थ, खाद, रूई एवं अन्य कच्चे मालों की आवश्यकता थी। इस समय सं० रा० अमेरिका ने 400-500 मिलियन डॉलर की प्रति वर्ष की दर से सहायता की। 1940 के मध्य में यह अनुमान लगाया गया था कि युद्ध पूर्व के (1930-34) जीवन स्तर से 10 प्रतिशत नीचे स्तर तक पहुँचने के लिए भी जापानी माल के निर्यात को तीन गुना करना पड़ेगा। इधर अमेरिका ने रेशम लेना बन्द कर दिया था। उधर दक्षिणी-पूर्वी एशिया के बाजार छिन गए थे। इन अवस्थाओं में जापान के समक्ष निर्यात बढ़ाने की (क्योंकि औद्योगिक उत्पादन वृद्धि उसी पर निर्भर करती) भारी समस्या थीं।

देश की भीतरी दशा खराब थी। कारखानों की मशीनें पुरानी पड़ गई थीं। उनमें बहुत टूट-फूट हो गई थी। मजदूरों को पूरी मजदूरी नहीं मिल पा रही थी। जन विद्रोह एवं असन्तोष का स्वरूप बन रहा था। सरकार का बजट 1949 तक घाटे का ही बन रहा था। इधर 1946 में मित्र राष्ट्रों के सुदूर-पूर्वी कमीशन ने जापान की घरेलू आवश्यकता को देखते हुए आधारभूत औद्योगिक उत्पादनों की

मात्रा निर्धारित कर दी थी। उदाहरण के लिए इस्पात की मात्रा 3,500,000 टन रखी गई। इसका तात्पर्य था कि लगभग 12,000,000 टन उत्पादन क्षमता के कारखाने बेकार हो गए। इन मात्रासीमाओं को हटाने के लिए कई बार जापानी सरकार ने मित्र राष्ट्रों से प्रार्थना भी की परन्तु कोई लाभदायक निष्कर्ष नहीं निकला। इस प्रकार 1945-48 तक के वर्षों में यद्यपि जापान को अमेरिका, विश्व बैंक, पुनर्संरचना वित्त बैंक आदि से काफी अधिक सहायता मिली परन्तु नेतृत्व के अभाव, मित्र राष्ट्रों के बन्धन एवं नीतियों के कारण पुनरुत्थान का कार्य अपेक्षित तेजी के साथ नहीं हो सका।

1949 के प्रारम्भिक दिनों में मित्र राष्ट्रों ने जापान सरकार को औद्योगिक पुनरुत्थान रचनात्मक सहयोग देना प्रारम्भ किया। मात्रा सीमाएँ कम की गईं। फलतः वर्ष के अन्त में उत्पादन 1948 की तुलना में 30 प्रतिशत ज्यादा था। बाद में 1950 के कोरिया युद्ध ने जापानी उद्योगों को निराशा के अँधेरे से निकाला। इस आकस्मिक अवसर ने काफी लाभ पहुँचाया। उत्पादनों की खपत का जो मार्ग अवरुद्ध हो गया था, वह खुला। 1952 में नए संविधान के अनुसार जापान को मित्र राष्ट्रों के नियन्त्रण से मुक्ति मिली वह शर्त रखी गयी जिसके अनुसार वह अपनी सैनिक शक्ति नहीं बढ़ा सकता था, निस्सन्देह इस शर्त ने उद्योगों को भारी लाभ पहुँचाया। सारी शक्तियों का केन्द्रीयकरण उद्योग एवं व्यापार पर ही हो गया।

वर्तमान औद्योगिक एवं आर्थिक विकास (1950–1980)

पिछली दो-तीन दशाब्दियों में जापान ने जिस गति से अपने आर्थिक, मुख्यतया औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति की है वह इतिहास में अद्वितीय है। दुनिया के किसी राष्ट्र ने इस गति से आर्थिक विकास नहीं किया। इस विकास में अन्य कारणों के अतिरिक्त जापानी नेताओं की सूझ-बूझ एवं यहाँ के निवासियों का अथक परिश्रम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जापानी लोग अपनी काम करने की असाधारण क्षमता, विभिन्न वर्गों की परम्परागत विशेषज्ञता, मितव्ययता, साहसिकता तथा नेताओं के प्रति निष्ठा के लिए विख्यात हैं। कठिनाइयों में भी अनुशासित एवं मुस्कुराते रहना यहाँ के लोगों का परम्परागत गुण है। सुविख्यात फ्रांसीसी पत्रकार रॉबर्ट गुलों के अनुसार "जापानियों का सबसे बड़ा गुण हँसना और मौज करना है। ये बड़ी जटिल प्रकृति के लोग हैं।"

आर्थिक विकास के कुछ अन्य कारण स्पष्ट है। जापान का प्रतिरक्षा बजट कुल राष्ट्रीय उत्पादन का केवल 0.83 प्रतिशत है जो जर्मनी (5 प्रतिशत) की तुलना में भी बहुत कम है (हालांकि विशेषज्ञों का कथन है कि प्रतिरक्षा पर राष्ट्रीय उत्पादन का कम से कम दो प्रतिशत खर्च करना ही चाहिए) आर्थिक विकास का कारण विदेशी पूँजी पर प्रतिबन्ध है। इसका मतलब स्पष्ट है कि

बड़ी-बड़ी विदेशी फर्मों से देश के उद्योगों की देश के भीतर कोई प्रतिद्वन्दता नहीं है। तीसरा कारण है, पूंजी-सौदों पर प्रतिबन्ध और कुछ हालतों में उद्योगों की रक्षा के लिए सरकार की तटस्थ नीति।

लेकिन जापान में इन दिनों परिवर्तन तथा विकास की गति इतनी तीव्र रही कि केवल उपर्युक्त कारणों को ही आधारभूत मान लेना उचित न होगा। कहीं अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जापानी समाज आज ब्रिटिश समाज से कहीं अधिक शिक्षित है। आज जापान में 18 वर्ष की उम्र तक के 70 प्रतिशत बच्चे स्कूल जाते हैं जबकि ब्रिटेन में 40 प्रतिशत। जापान में 16 प्रतिशत नवयुवक कॉलेज और विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं जबकि ब्रिटेन में 10 प्रतिशत। अनुमान है कि 1990 तक जापान के 50 प्रतिशत श्रमिक कॉलेज या विश्वविद्यालयों के स्नातक होंगे। जापान की इस महान औद्योगिक क्रान्ति का एक प्रमुख कारण यह भी है कि वहां प्रशिक्षित प्रतिभा को प्राथमिकता दी जाती है।

पिछले तीस वर्षों में कम्प्यूटरों का प्रयोग कई गुना बढ़ गया है। इस समय देश में लगभग 15000 कम्प्यूटर कार्यरत हैं। इस प्रकार इनकी प्रयोग मात्रा में जापान यू० एस० ए० के बाद विश्व में दूसरे स्थान पर है। इन दिनों लघु उद्योगों को विशेष प्रोत्साहन देने की नीति अपनाई गई है। यहाँ लघु उद्योगों का मतलब है जहाँ 300 से कम व्यक्ति काम करते हैं। इनलघु उद्योगों ने भारी तरक्की की है। इनका उत्पादन 15 प्रतिशत तक बढ़ गया है। श्रमिकों की कमी महसूस की जा रही है। फलतः उत्पादन व्यय बढ़ गया है। अतः जापान छोटी-छोटी चीजों (कलपुर्जे) की सप्लाई ताइवान, हाँगकाँग, दक्षिणी कोरिया आदि देशों से करने लगा है। उधर जापान के निर्यात स्वरूप का सारा ढाँचा बदल रहा है। कपड़ा उद्योग तो स्थिर प्रायः है परन्तु लोह-इस्पात, कृषि-उपकरण, खाद, समुद्री जहाज, मशीनों एवं विद्युत यन्त्रों का उत्पादन तेजी से बढ़ रहा है। इस समय भारी तथा रसायन उद्योगों पर बहुत ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है।

कुल राष्ट्रीय उत्पादन में विश्व में जापान का दूसरा नम्बर है। पहला सं०रा० अमेरिका का है। कुछ समय पहले तक दूसरा स्थान जर्मनी को प्राप्त था। अनुमान है कि 1990 के मध्य तक जापान का कुल राष्ट्रीय उत्पादन सभी एशियाई देशों—चीन समेत, के सम्मिलित उत्पादन के बराबर हो जायेगा। छठे दशक (1950-60) में जापान में पूंजी निर्माण की प्रगति 34 प्रतिशत एवं आर्थिक प्रगति 10 प्रतिशत रही है। संसार में इसके बराबर का कोई दूसरा उदाहरण नहीं है। केवल एक वर्ष (1968) में जापान की निर्यात आय में 25% की वृद्धि हुई एवं वैयक्तिक खपत 15 प्रतिशत बढ़ी।

विश्व में जापान ही एक ऐसा देश है जिसकी विदेशी मुद्रा का सुरक्षित कोष बढ़ रहा है। आज उसके कोष में 3 अरब डालर है। समुद्री जहाज और

इस्पात के उत्पादन में जापान का स्थान (क्रमशः प्रथम तथा तीसरा) सर्वविदित है। जून मास 1969 में जापान ने अपने प्रथम परमाणु शक्ति चालित व्यापारिक जहाज का जलावतरण किया। संसार में अपनी तरह का यह चौथा जहाज था। मूल्य की दृष्टि से जापान अमेरिका के बीच होने वाला व्यापार संसार में दूसरे स्थान पर आता है। प्रथम स्थान कनाड़ा–अमेरिका व्यापार का है। 1982 में जापान ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को लगभग 3.8 अरब डालर की कीमत का माल निर्यात किया। यह सारी आर्थिक प्रगति हरमन काहन की उस भविष्य-वाणी में कुछ तथ्य इंगित करती है जो उन्होंने 21वीं शताब्दी के सम्बन्ध में लिखी गई अपनी पुस्तक में की है। इसमें उन्होंने लिखा है कि—

'आगामी शताब्दी में जापान विश्व पर छाया रहेगा।

जापानी उद्योगों के विशिष्ट लक्षण :

कृषि की तरह उद्योगों में भी कुछ ऐसे लक्षण मिलते हैं जो जापानी उद्योगों को उनके स्वरूप, विविधता एवं कार्य-क्षमता के आधार पर यूरोपियन या अन्य एशियाई देशों के उद्योगों से पृथक् करते हैं। जापान में कच्चे-मालों का भारी अभाव है। कुछ उद्योग तो ऐसे हैं जिनसे सम्बन्धित कच्चे माल जापान में नाम-मात्र को भी नहीं होते। केवल आयातित कच्चे मालों के आधार पर ही जापान ने कुछ उद्योगों में इतनी प्रगति की है कि वह चोटी पर पहुँच गया है. यथा, सूती वस्त्रों के उत्पादन एवं निर्यात में जापान विश्व के अग्रणी देशों में है जबकि असलियत यह है कि यहाँ कपास बिल्कुल भी पैदा नहीं होती। जापान जलयान निर्माण उद्योग में विश्व में प्रथम है, इस्पात उत्पादन में भी विश्व के अग्रणी देशों में से है परन्तु 95% से अधिक लौह-अयस एवं 70% से अधिक कोकिंग कोयला वह विदेशों से आयात करता है। इसी प्रकार की स्थिति अन्य उद्योगों में है। संक्षेप में जापानी उद्योगों का यह प्रमुख लक्षण है कि विदेशी कच्चे माल से जापानी श्रम, तकनीकी कुशलता एवं शक्ति संसाधनों के प्रयोग द्वारा श्रेष्ठ किस्म के औद्योगिक उत्पादन तैयार करना एवं उनके अधिकांश भाग को विश्व के बाजारों में बेच देना।

जापानी औद्योगिक क्षेत्रों में छोटी इकाइयों का बाहुल्य है। देश के कुल औद्योगिक संस्थानों में से 73% ऐसे हैं जिनमें 10 व्यक्तियों से अधिक एक कार-खाने में काम नहीं करते। 300 या अधिक मजदूरों वाले कारखाने एक प्रतिशत में भी कम! । स्पष्ट है कि लगभग एक-चौथाई कारखाने ऐसे है जिनमें 10 से लेकर 250 व्यक्ति तक काम करते हैं। 10 व्यक्तियों वाली फैक्ट्रीज में उद्योगरत मजदूरों का 17% भाग काम कर रहा है जबकि 55% औद्योगिक मजदूर ऐसे कारखानों में है जिनमें काम करने वालों की संख्या 10 और 100 के बीच में है। आज की औद्योगिक दुनिया में, प्रायः सभी उद्योग प्रधान देशों में बड़े बड़े भारी

कारखानों को ज्यादा महत्व दिया जाता है जिनमें हजारों की सख्या में लोग काम करते हैं। यूरोप, अमेरिका, रूस, भारत सभी जगह यही प्रवृत्ति है जबकि जापान की छोटी-छोटी फैक्ट्रियों ने उतनी ही क्षमतापूर्वक कार्य कर भारी उत्पादन प्रस्तुत कर के केन्द्रीयकरण की इस परम्परागत प्रवृत्ति को चुनौती दी है। यह जापानी उद्योगों का विशिष्ट स्वरूप है। दुनिया के कई देश इसका अनुकरण भी कर रहे है परन्तु उनकी सफलता जापान जैसी परिस्थितियों - कुशल, उच्च राष्ट्रीय चरित्र युक्त मेहनती मजदूर एवं निकट स्थित सस्ते शक्ति के साधनों, पर ही निर्भर कर सकती है। छोटी फैक्ट्रियों में यहां उत्पादन मूल्य भी कम बैठता है। कारण कि स्थानीय मजदूर सस्ती मजदूरी पर मिल जाते हैं, सामानों को ज्यादा इधर-उधर नहीं ले जाना पड़ता अतः यातायात का खर्चा बचता है। जल विद्युत शक्ति हर जगह प्राप्त है। उल्लेखनीय है कि बड़े कारखानों से छोटे कारखानों में काम करने वाले मजदूरों की मजदूरी दरें आधी होती हैं।

निम्न सारणी से विभिन्न आकारों के औद्योगिक संस्थानों की संख्या एवं उनमे कार्य करने वालों की संख्या (प्रतिशत में) स्पष्ट है।

मजदूरों की संख्या	औद्योगिक संस्थान	मजदूर
1-9	72.9%	16.7
10-29	18.5	18.6
30-99	6.5	20.1
100-199	1.1	9.6
200 एवं ऊपर	0.9	34.9

छोटी फैक्ट्रियों में कुछ तो स्वदेशी खपत के लिए साधारण माल तैयार करती है लेकिन अधिकांश विदेशी निर्यात के लिए उत्तम श्रेणी के उत्पादन प्रस्तुत करती है। प्रायः ऐसा होता है कि एक बड़े कारखाने के चारों ओर अनेक छोटी-छोटी फैक्ट्रियां स्थित हैं जिनमें से प्रत्येक किसी भी एक पुर्जे के निर्माण में संलग्न हैं। इन सभी पुर्जों का प्रमाणीकरण पहले ही कर लिया जाता है। छोटी आकार की फैक्ट्रियों मे एक और गुण होना है कि वे स्थानीय श्रम का प्रयोग करने की दृष्टि से एक स्थान से दूसरे स्थान को आसानी से स्थानांतरित की जा सकती है।

इस प्रकार यहां के औद्योगिक संस्थानों को दो श्रेणियों में रखा जा सकता है। प्रथम, बहुत बड़े-बड़े कारखाने जो निगमों द्वारा संचालित हैं। इनकी स्थापना मे अनेक तत्व जैसे कच्चा माल, यातायात, शक्ति, श्रम आदि प्रभावकारी होते हैं। प्रायः ये कारखाने बड़े नगरों में स्थित हैं। द्वितीय, छोटी-छोटी इकाइयाँ जो गाँव, कस्बे तथा बड़े नगरों में समान रूप से बिखरी हैं। इनमें से अधिकांश निजी

स्वामित्व में हैं। बड़े कारखाने इन छोटी इकाइयों को विभिन्न प्रकार के पुर्जों के लिए आर्डर देते हैं या कभी-कभी 'अन्तिम सज्जा' के लिए भी इन्हें उत्पादन भेज दिए जाते हैं। इस प्रकार औद्योगिक क्षेत्रों में यह दोहरी व्यवस्था बड़ी लोकप्रिय है। विशेषकर मशीन निर्माण उद्योग में तो यह प्रक्रिया हर स्थान पर लागू है।

जापानी उद्योगों की तीसरी प्रमुख विशेषता है कि यहाँ के उत्पादनों का बाजार-मूल्य दुनिया के अन्य देशों के उत्पादनों की तुलना में काफी कम रहता है। इसका प्रमुख कारण संभवतः छोटी फैक्ट्रियों में उपलब्ध सस्ता श्रम है। पिछले दशकों में जैसे-जैसे औद्योगिक विस्तार हुआ, ग्रामीण क्षेत्रों के अतिरिक्त श्रम में कमी आई, वैसे-वैसे श्रम कुछ महँगा हुआ है परन्तु पश्चिम की तुलना में अभी भी श्रम सस्ता है। अपने सस्ते उत्पादन-मूल्य के कारण ही जापान विश्व बाजारों में यूरोप और अमेरिकन मालों को पीछे धकेल सका।

औद्योगिक विकास में सहयोगी तत्व :

वस्तुतः कुछ ऐसे प्राकृतिक एवं मानवीय तत्व जापानी औद्योगिक विकास की पृष्ठभूमि में है जिनके कारण न केवल इस अल्पावधि में जापान इतना विशाल औद्योगिक ढाँचा खड़ा कर सका वरन् उसके उत्पादनों का मूल्य भी अपेक्षाकृत कम रहता है। ये हैं—

(1) परम्परागत रूप से जापानी किसान की अभिरुचि किसी न किसी रूप में उद्योगों की तरफ रही है। ऐसा सम्भवतया इसलिए भी है कि प्रत्येक परिवार को, बहुत छोटा खेत होने के कारण, किसी न किसी प्रकार का सहायक उद्यम करना पड़ता है। खिलौने बनाना, रेशमी धागा बुनना या कागज बनाना आदि कार्यों में इन्हें परम्परागत कुशलता प्राप्त रही है। निस्संदेह, मेजी पुनरोत्थान से पहले ये सब कुटीर स्तर पर थे और उत्पादन भी बहुत कम था परन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि इस प्रवृत्ति ने लोगों को कुशल कारीगर व परिश्रमी बनने में सहयोग दिया। उनकी इन योग्यताओं का आधुनिक उद्योगों के विकास में बड़ा सहयोग रहा।

(2) जापान एशिया के अर्द्ध विकसित देशों के पास स्थित है जिन्होंने एक ओर जापानी उद्योगों को कच्चे माल तो दूसरी ओर प्रचुर मात्रा में बाजार प्रस्तुत किए है।

(3) सरकार का प्रारम्भ से ही उद्योगों के प्रति अनुकूल रुख रहा है। वस्तुतः इसे अनुकूल के स्थान पर प्रेरणात्मक एवं प्रोत्साहक कहना ज्यादा उपयुक्त होगा। उद्योगों का श्री गणेश ही सरकारी पूँजी से हुआ था। आज के सभी बड़े-बड़े कारखाने उसी समय के हैं। वर्तमान में भी सरकारी नीति, उद्योगों के प्रति बड़ी उदार एवं प्रगतिशील है। उद्योगों के विस्तार के लिए जापानी सरकार सदा प्रयत्नशील रहती है। जगह-जगह तकनीकी प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए हैं।

जापानी माल की खपत विदेशों में अधिकाधिक बढ़े, सरकार इसके प्रयत्न करती है। आवश्यकता पड़ने पर समुचित मात्रा में आर्थिक अनुदान देती है।

(4) जैसाकि पूर्वोल्लेख है जापान में बड़े कारखानों एवं छोटी फैक्ट्रियों में बड़ा सामंजस्य है। ये एक दूसरे के प्रतियोगी न होकर पूरक हैं। यही सम्बन्ध विभिन्न उद्योगों में हैं। बड़े कारखाने छोटी फैक्ट्रियों से ठेके पर काम करवा लेते है।

(5) छोटी फैक्ट्रियों में श्रम बड़ा सस्ता है। अतः उत्पादन-मूल्य कम बैठता है। एशियाई बाजार वैसे भी जापान के निकट हैं। अतः यूरोपियन या अमेरिकन माल निर्यात केन्द्रों से बराबर कीमत लेकर भी चले तो भी जापानी माल सस्ता पड़ेगा। तिस पर भी जापानी माल प्रारम्भ से ही सस्ता है अतः बाजारों में तुलनात्मक रूप में बहुत ही सस्ता पड़ जाता है।

(6) निर्यात किया जाने वाला माल अच्छा और टिकाऊ हो इसके लिए सरकारी संगठन खास तौर पर देखभाल करते रहते हैं।

(7) जल विद्युत के विकास के फलस्वरूप गाँव-गाँव में शक्ति पहुँचाना सम्भव हो गया है। फलतः ग्रामीण कुटीर उद्योगों ने भी अब शक्ति-चालित रूप ले लिया है। जापान के औद्योगिक ढांचे में इन छोटी इकाइयों का महत्वपूर्ण स्थान है। इन्हें 'उद्योग क्षेत्र की दूसरी पंक्ति' कहा जा सकता है। इनसे दोहरा लाभ है। प्रथम, किसानों के खाली समय का उपयोग हो जाता है—दूसरे, बड़े कारखानों के काम का विभाजन हो जाता है। उन्हें श्रम की समस्या परेशान नहीं करती।

(8) पिछले दशकों में जापान का जीवन-स्तर बढ़ा है अतः स्वदेशी मांग व खपत निरन्तर बढ़ती जा रही है।

(9) जापान में यातायात व्यवस्था अत्यन्त विकसित दशा में है। यहाँ प्रति दो वर्ग मील भूमि के पीछे एक मील लम्बे रेल मार्ग तथा दो मील लम्बी सड़कें हैं। तट भाग कटा-फटा है, सुन्दर बन्दरगाह व पोताश्रय हैं अतः तटीय जल यातायात पर्याप्त विकसित है। ज्यादातर औद्योगिक केन्द्र तट भागों में स्थित है अतः सामान को तटवर्ती जल-यातायात द्वारा भेज दिया जाता है। यह पर्याप्त सस्ता पड़ता है।

(10) अन्तर्राष्ट्रीय जल एवं वायु यातायात की दृष्टि से जापान की स्थिति काफी महत्वपूर्ण है। प्रशांत मार्ग की ओर से आने पर जापान की स्थिति 'एशिया के द्वार' के समान है।

(11) प्राकृतिक साधनों में जापान को धनी तो नहीं कहा जा सकता परन्तु कुछ साधन जो प्रचुर मात्रा में हैं औद्योगिक विकास में पर्याप्त सहायक हुए है।

यथा, तीव्रगामी नदियों द्वारा प्रदत्त जल विद्युत, लगभग दो-तिहाई भाग में फैले वन एवं शहतूत की वृद्धि के लिए उपयुक्त शीतोष्ण सामुद्रिक जलवायु ने परोक्ष रूप से औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है। तांबा पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है। लौह-अयस की कमी निकटवर्ती एशियाई देशों से पूरी हो जाती है।

(12) द्वीपीय स्थिति होने के कारण भू-विस्तार की कोई सम्भावना न होना, कृषि योग्य भूमि की कमी एवं प्राकृतिक बन्दरगाहों की सुविधा ने जापानियों के मस्तिष्क में यह बात बिठा दी है और किसी सीमा तक यह तर्क-संगत भी है कि जापान का आर्थिक विकास उद्योग एवं व्यापार द्वारा ही संभव है।

(13) जापानी सरकार ने विदेशी पूँजी पर प्रतिबन्ध लगा रखा है। इससे यह लाभ हुआ है कि देशी उद्योगों को विदेशों की बड़ी-बड़ी औद्योगिक फर्मों से प्रतियोगिता का कोई डर नहीं है।

(14) कुछ बहुत बड़े औद्योगिक संगठन संगठित किये गये हैं जो विश्व बाजारों में होने वाली तेजी-मन्दी सभी प्रकार की स्थितियों का सामना करने में सक्षम है।

(15) छोटी-छोटी फैक्ट्रियों को भी पूँजी की कोई समस्या नहीं है। पूँजी की कमी को सहकारिता के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया जाता है। इस समय हजारों छोटी फैक्ट्रियाँ सहकारी समितियों द्वारा संचालित हैं।

(16) जापान का अपना विशाल व्यापारिक जहाजी बेड़ा है। अतः परिवहन व्यय कम पड़ता है। यथा तैयार जापानी माल को विश्व बाजारों में पहुँचाने एवं विदेशों से कच्चा माल लाने—दोनों में ही खर्चा कम पड़ता है जिसका अन्ततः प्रभाव यह होता है कि उत्पादन-मूल्य तुलनात्मक रूप में कम बैठता है।

(17) द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद जापान का ध्यान पूरी तरह औद्योगिक विकास पर केन्द्रित रहा है। प्रतिरक्षा व्यय नगण्य रहा। (समझौते की मजबूरियों से जापान सैनिक शक्ति नहीं बढ़ा सकता था) अतः सारी पूँजी उद्योगों में ही लगी।

(18) भारत की तरह जापान के सामने विदेशी मुद्रा की कोई समस्या नहीं है। विश्व में इस देश की सर्वाधिक सुरक्षित विदेशी मुद्रा (3 अरब डालर से ऊपर) मानी जाती है।

(19) द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद उत्पादन तीव्र गति से बढ़ने के पीछे अमेरिकन सहयोग भी उल्लेखनीय रहा है। युद्धोत्तर पुनर्संगठन के दिनों में अधिकाधिक नई एवं आधुनिकतम मशीनें अमेरिकन सहयोग से लगीं।

(20) प्रथम विश्व-युद्ध और उसके बाद के वर्षों में जापानी उद्योग छलांग की गति से आगे बढ़े क्योंकि यूरोपियन देशों एवं अमेरिका के युद्ध में रत रहने के कारण इन दिनों विश्व बाजार खाली पड़े थे। स्वयं ये देश जापान से अपनी सैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएँ आयात करते थे।

उद्योगों का वितरण :

जापान में भारी औद्योगिक विविधता है। उद्योगों की विभिन्न शाखाओं में कुछ ज्यादा महत्व के हैं जैसे, खाद्य पदार्थ, वस्त्र व्यवसाय, रसायन, धातु, मशीन निर्माण, विद्युत मशीनरी तथा यातायात उपकरण निर्माण सम्बन्धी उद्योग आदि। ये सब मिलकर देश के दो-तिहाई से अधिक (लगभग 70%) औद्योगिक उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। इनमें से प्रत्येक का उत्पादन 5% से ज्यादा है।

निम्न सारणी द्वारा जापान के चारों प्रकार के उद्योग समूहों—ग्रामीण, हल्के, भारी तथा मशीन निर्माण सम्बन्धी, का परस्पर अनुपातिक महत्व सुस्पष्ट है। औद्योगिक विविधता तो इस सारणी द्वारा स्पष्ट होती ही है साथ में यह भी कि भारी तथा मशीन निर्माण सम्बन्धी उद्योगों का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा हैं। ये दोनों उद्योग समूह (अपनी उपशाखाओं सहित) कुल औद्योगिक उत्पादन के लगभग 64% भाग के लिए उत्तरदायी हैं। इससे जापान की विकसित तकनीक पर भी प्रकाश पड़ता है। उल्लेखनीय है कि वर्तमान शताब्दी के दूसरे-तीसरे दशक में हल्के उद्योगो, विशेषकर वस्त्र व्यवसाय आदि का यहां के औद्योगिक ढांचे में सर्वाधिक महत्व था। जैसे-जैसे वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास होता जा रहा है हल्के एवं ग्रामीण उद्योगों का प्रतिशत घटता जा रहा है तथा उसी अनुपात में भारी, रासायनिक तथा मशीनरी उद्योगों का विस्तार होता जा रहा है।

जापान का औद्योगिक ढांचा
(चार या अधिक श्रमिकों वाले औद्योगिक संस्थान शामिल हैं)

उद्योग समूह	प्रकार	राष्ट्रीय जोड़ का प्रतिशत	
1. खाद्य पदार्थ सम्बन्धी उद्योग	ग्रामीण	8.6	
2. लकड़ी कटाई एवं काष्ठ उत्पादन	"	2.9	
3. कागज तथा लुग्दी	"	3.8	
		—	15.3%
4. रसायन एवं सम्बन्धित उद्योग	भारी	11.9	
5. पैट्रोल तथा कोयला सम्बन्धी उत्पादन	"	1.4	
6. पत्थर, कांच उत्पादन	"	4.8	

7. लौह एवं इस्पात	"	8.8	
8. अलौह धातु	"	3.5	
			— 30.4%
9. मशीनरी (विविध लघु यन्त्र)	मशीनरी	4.5	
10. मशीनरी (विद्युत मशीनों के रहित)	"	9.6	
11. विद्युत मशीनरी एवं उपकरण	"	9.1	
12. यातायात उपकरण	"	9.1	
13. सूक्ष्म यन्त्र	"	1.5	
			— 33.8%
14. वस्त्र व्यवसाय उत्पादन	हल्के	9.6	
15. तैयार किए कपड़े	"	1.0	
16. फर्नीचर	"	1.1	
17. छपाई-प्रकाशन	"	4.0	
18. रबर उत्पादन	"	1.7	
19. चमड़ा एवं सम्बन्धित उत्पादन	"	0.4	
20. विविध	"	2.7	
			— 20.5%

प्रथम प्रकार यानी ग्रामीण उद्योगों (15.3%) में मुख्यतः वे उद्योग शामिल किये गये हैं जो देशजः कच्चे मालों पर आधारित हैं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सह-उद्यम के रूप में प्रचलित हैं। इनमें खाद्य पदार्थ, लकड़ी, कागज, लुग्दी आदि उद्योगों का स्वरूप स्थानीय रूप से पाये जाने वाले कच्चे माल पर निर्भर है। यथा, जंगलों के आसपास कागज तथा लुग्दी जबकि तटवर्ती प्रदेशों में मत्स्य उत्पादन सम्बन्धी संस्थान स्थापित हैं। विधियाँ परम्परागत हैं। छोटे या मध्यम आकार की फैक्ट्रियाँ हैं जो कच्चे मालों के स्रोतों के निकट ही स्थित हैं। निरसंदेह कागज-लुग्दी या खाद्य पदार्थ सम्बन्धी कुछ बड़े कारखाने भी हैं।

हल्के उद्योगों (20·5%) में प्रमुखतः वस्त्र व्यवसाय ही आते है। इनके अतिरिक्त अनेक उपभोक्ता वस्तुओं से सम्बन्धित उद्योग भी इनमें शामिल कर लिये जाते हैं जैसे फर्नीचर, चमड़ा-जूता, रेडीमेड वस्त्र, छपाई तथा रबर उद्योग आदि। इनकी स्थापना में कच्चे मालों की अपेक्षा श्रम तथा बाजार आदि तत्व ज्यादा प्रभावकारी होते हैं। इनका विकास परम्परागत हस्तकला एवं कुटीर उद्योगों से हुआ है परन्तु इनमें से अधिकांश अब आधुनिक रूप ले चुके हैं।

भारी उद्योगों (30.4%) में लोह-अलोह धातु, रसायन, पैट्रोलियम-कोयला उत्पादन एवं पत्थर-काँच सम्बन्धी उद्योग समूह शामिल किये जा सकते हैं। बर्तन उद्योग को छोड़ कर ये सभी बड़े और मध्यम आकार के कारखानों में संगठित हैं। इनमें से कुछ औद्योगिक संस्थान स्थानीय कच्चे मालों के आकर्षण से भीतरी भागों में विद्यमान हैं परन्तु अधिकांश आयातित कच्चे मालों को ध्यान में रखते हुए तट भागों में केन्द्रित किये गये हैं। बाजार का तत्व भी कम प्रभावकारी नहीं। अतः तटवर्ती स्थिति ही ज्यादा अच्छी मानी जाती है क्योंकि इन उद्योगों के अधिकांश उत्पादन विदेशों को निर्यात किये जाते हैं।

मशीनरी उद्योगों (33.8%) में सभी प्रकार के मशीन निर्माण सम्बन्धी उद्योग शामिल किये जा सकते हैं। विविधता की दृष्टि से यह सबसे विशाल उद्योग समूह है। इसमें लोको, आटोमोबाइल्स, जलयान, कृषि यन्त्र, विद्युत यन्त्र, सूक्ष्मयंत्र, वायुयान के एन्जिन, विविध उद्योगों में प्रयुक्त होने वाली मशीनें, मोटर पम्प तथा खनन यन्त्र निर्माण आदि उद्योग शामिल किये जा सकते हैं। इनके स्थानीकरण में श्रम एवं बाजार दो महत्वपूर्ण तत्व हैं। यही कारण है इनमें से अधिकांश उद्योग तटवर्ती बड़े नगरों तथा मैट्रोपोलिटन क्षेत्रों में स्थित हैं। कारखाने बड़े एवं आधुनिक किस्म के हैं। मध्यमाकार फैक्ट्रीज भी बहुत हैं। जापान से होने वाले निर्यातों में इस उद्योग समूह से सम्बन्धित उत्पादनों का प्रतिशत-मूल्य प्रति वर्ष बड़ी तेजी से बढ़ता जा रहा है अतः इनका विस्तार हो रहा है।

जापान के विविध उद्योगों के वितरण-स्वरूप को सरलता-पूर्वक समझने के लिए उद्योगों को तीन प्रदेशों में रखा जा सकता है।

प्रथम —जो उद्योग मैट्रोपोलिटन क्षेत्रों में विद्यमान हैं।
द्वितीय—जो मध्यवर्ती क्षेत्रों में विद्यमान है।
तृतीय—जो सीमावर्ती क्षेत्रों में विद्यमान हैं।

इनके अनेक उप-विभाग हैं। इस वितरण को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि जापान जैसे छोटे एवं उद्योग-प्रधान देश में भी औद्योगिक वितरण बड़ा असमान है। 86% उद्योग मैट्रोपोलिटन एवं मध्यवर्ती क्षेत्रों, जो जापान के मध्य एवं दक्षिणी-पश्चिमी भाग में हैं, में विद्यमान है। उल्लेखनीय है कि इन दोनों का भू-क्षेत्रफल देश के कुल भू-क्षेत्र का लगभग 35% ही है। दोनों मैट्रोपोलिटन क्षेत्र जो क्रमशः किन्की एवं क्वांटो के मैदानों में विस्तृत हैं, देश के 56% से अधिक औद्योगिक उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। अकेले क्वांटो मैट्रोपोलिटन क्षेत्र में जापान के एक-तिहाई उद्योग केन्द्रित हैं। ये दोनों मैट्रोपोलिटन क्षेत्र वस्तुतः कुछ बड़े नगरों के आस-पास विकसित होते गये हैं। यथा, क्वांटो क्षेत्र के सातों जिलों (प्रीफैक्चर्स) में विस्तृत उद्योगों का केन्द्र टोक्यो-याकोहामा नगर द्वय हैं।

किन्की क्षेत्र के पाँचों जिलों के उद्योग, ऐसा प्रतीत होता है कि ओसाका-कोबे की पृष्ठभूमि में विकसित हुए हैं। वैसे इन मैट्रोपोलिटन क्षेत्रों में भी उद्योगों का समान वितरण नहीं है। इन दोनों क्षेत्रों के चार जिलों, यथा टोक्यो, कानागावा, ओसाका तथा ह्योगो में सर्वाधिक औद्योगिक घनत्व है। इन जिलों में सारे जापान के 46% उद्योग विद्यमान हैं।

मध्यवर्ती क्षेत्रों, जो कि देश के 30% औद्योगिक उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं, में उद्योग ही आर्थिक ढाँचे में प्रमुख स्थान लिए है। उद्योग हैं भी आधुनिक स्तर पर विकसित, परन्तु उनका घनत्व उतना नहीं है जितना मैट्रोपोलिटन क्षेत्रों में। इनको तीन उप विभागों में रखा जा सकता है। प्रथम, क्वांटो तथा किन्की के मध्य स्थित टोकाई क्षेत्र। द्वितीय, भीतरी सागर क्षेत्र तथा तृतीय, मध्य हौंशू के पर्वतीय प्रदेशों में स्थित टोसान क्षेत्र। मध्यवर्ती क्षेत्रों में औद्योगिक संस्थान बिखरे रूप में है। कुछ केन्द्र ज्यादा सघन हैं, जैसे—पश्चिमी तोकाई में नगोया या भीतरी सागर क्षेत्र के पश्चिम में स्थित कीटाक्यूशू नगर।

जापान के शेष भाग को सीमावर्ती क्षेत्रों में रखा जा सकता है। इनका भू-क्षेत्रफल देश के कुल भू-भाग का दो-तिहाई (65%) है परन्तु औद्योगिक उत्पादन केवल 14% होता है। स्पष्ट है कि औद्योगिक विकास बहुत ही बिखरे रूप में हुआ है। वैसे भी जापान के औद्योगिक हृदय-प्रदेश से कोई सम्बन्ध न होने के कारण ये पृथकत्व के शिकार हैं। इस विशाल भू-भाग में औद्योगिक केन्द्रों को चार समूहों में केन्द्रित किया जा सकता है। प्रथम–होकेडो, द्वितीय–तोहोकू (उत्तरी-पूर्वी हौंशू) तृतीय–जापान सागरीय तटवर्ती प्रदेशों में होकूरिकू-सैनिन एवं चतुर्थ—शिकोकू का 'की' प्रदेश। इन समूहों में से उत्तर में स्थित यानी प्रथम दो बहुत ही विरल औद्योगिक हैं।

वैसे तो सभी औद्योगिक क्षेत्रों में विविध प्रकार के उद्योग पाये जाते हैं। फिर भी अगर विशिष्ट प्रकारों को आधार बनाया जाये तो साधारणतः मैट्रोपोलिटन क्षेत्रों में भारी, मशीनरी एवं हल्के उद्योग समूह स्थित हैं। मध्यवर्ती क्षेत्रों में हल्के उद्योगों का बाहुल्य है जबकि सीमावर्ती क्षेत्रों में ग्रामीण उद्योगों की प्रधानता है।

औद्योगिक पेटी :

जापान के अधिकांश औद्योगिक संस्थान उस पेटी में स्थित हैं जो उत्तर-पूर्व में टोक्यो-याकोहामा से लेकर दक्षिण-पश्चिम में उत्तरी-क्यूशू तक फैली है। इस लगभग 600 मील लम्बी पेटी में क्वांटो, टोकाई, किन्की, भीतरी सागर के आस-पास के तथा उत्तरी क्यूशू के सभी महत्वपूर्ण उद्योग विद्यमान है। कितना भारी

केन्द्रीकरण जापान के इस भाग में उद्योगों का हुआ है इसका अनुमान इस तथ्य से लग सकता है कि देश के औद्योगिक उत्पादन का 85% से अधिक भाग इस पेटी से ही प्राप्त है। कार्यरत श्रमिकों का 80% से अधिक भाग औद्योगिक पेटी के कारखानों में संलग्न है। और जैसाकि बहुत स्वाभाविक है जापान के सभी बड़े नगर इस पेटी में स्थित हैं। देश की तीन-चौथाई से अधिक जनसंख्या उद्योगों की इस केन्द्रीकृत शृंखला में आश्रय लिए हुए है। उल्लेखनीय है कि इस पेटी की चौड़ाई भिन्न-भिन्न प्रदेशों में भिन्न है। जापान के धरातलीय स्वरूप में यह अनपेक्षित ी नहीं है। यथा, कई जगह तो इसकी चौड़ाई केवल 4-5 मील ही रह गई है। ायः मैदानी भागों में जहां सघन औद्योगिक क्षेत्र स्थित हैं, पेटी की चौड़ाई 40–50 मील तक हो गई है।

इस पेटी में उद्योगों के केन्द्रीकरण के कारणों पर विचार करते समय कोई स्पष्ट प्राकृतिक या मानवीय कारण नजर नहीं आता। असल में बहुत-सी परिस्थितियों ने सम्मिलित रूप से यहां औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित किया है। अगर यहां के औद्योगिक विकास की पृष्ठभूमि में गहराई से झांककर देखा जाए तो प्राकृतिक तत्वों की बजाय ऐतिहासिक या सांस्कृतिक तत्व ज्यादा महत्वपूर्ण प्रतीत होंगे। मेजी पुनरोत्थान (1868) से पहले जापान का दक्षिणी-पश्चिमी तटीय भाग (प्रशांत की ओर) ही ज्यादा बसा था और राजनैतिक क्रियाओं का केन्द्र था। क्वांटो से लेकर उत्तरी क्यूशू तक की इस पट्टी में ही देश की सारी आर्थिक क्रियाएं विद्यमान थीं। इसी में ऐतिहासिक युगों के राजधानी नगर क्योटो, नारा तथा ईडो (अब टोक्यो) विद्यमान थे। जापान का सड़क-मार्ग तोकूगावा टोकेडो इस पट्टी के विभिन्न नगरों को जोड़ते हुए पूर्व-पश्चिम दिशा में विस्तृत था। इसके सहारे-सहारे भी कई नये नगर विकसित हो गये। अतः जब जापान का सम्पर्क पश्चिमी देशों से हुआ और यहां औद्योगिक लहर आई तो बहुत स्वाभाविक था कि उद्योगों की स्थापना इस घने बसे भाग में ही होती। कई अच्छे बन्दरगाह इस पट्टी में पहले से थे ही। जापान के प्रारम्भिक रेल-मार्ग भी इसी पट्टी के नगरों को जोड़ते हुए बनाए गए। आज भी जापान का सबसे लम्बा, दोहरी लाइन वाला रेल-मार्ग टोकेडो-सोनयो इसी भाग में स्थित है। इन परिस्थितियों में उद्योगों का श्रीगणेश इस क्षेत्र में हुआ और विकास की अनुकूल परिस्थितियां पाकर आज की स्थिति तक आ पहुँचा।

अनुकूल प्राकृतिक तत्वों में इस क्षेत्र में पाए जाने वाले निचले मैदानी भाग, जिनमें कारखाने स्थापित किये जा सके, भी उल्लेखनीय हैं परन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राकृतिक तत्व है—समुद्र। जापान की इस दक्षिणी-पश्चिमी पट्टी के सभी भागों से समुद्र तक आसानी से पहुँचा जा सकता है। समस्त पट्टी ही वस्तुतः तटवर्ती पट्टी का स्वरूप लिए है। तीन खाड़ियों (टोक्यो, आइजे तथा ओसाका) तथा अनगिनत

कटानों द्वारा समुद्र थल के अन्दर तक घुसा हुआ है। सुरक्षित बंदरगाह एवं पोताश्रय हैं। स्वयं भीतरी सागर एक विशाल पोताश्रय है। क्यूशू, शिकोकू व अन्य द्वीपों के कारण इस भाग में समुद्र सदा शांत रहता है। ये सारी परिस्थितियाँ विदेश एवं तटवर्ती व्यापार के लिए आदर्श हैं। विशेषकर जापान जैसे देश, जिसके आर्थिक ढांचे में कच्चे मालों का आयात एवं तैयार औद्योगिक मालों का निर्यात महत्वपूर्ण स्थान लिए हैं, के सन्दर्भ में तो ये समुद्री परिस्थितियाँ और भी ज्यादा महत्वपूर्ण हैं।

शक्ति के साधन के रूप में कोयले का भी सहयोग रहा है परन्तु खनन केन्द्रों की स्थिति बहुत ज्यादा अनुकूल नहीं। कोयले को कारखानों तक पहुँचाने के लिए रेलों का सहारा लेना पड़ता है। उत्तरी क्यूशू का चिकूहो क्षेत्र, उत्तरी क्यूशू एवं दक्षिणी-पश्चिमी होंशू के औद्योगिक क्षेत्रों का कोयला प्रस्तुत करता रहा है। टोक्यो के उत्तर में स्थित छोटा-सा कोयला-क्षेत्र जोबन कांटो मैट्रोपोलिटन क्षेत्र की आवश्यकताओं को आंशिक रूप से पूरा करने में समर्थ है। हाँ, जल-विद्युत शक्ति के विकास के बाद शक्ति की समस्या मिट गई है, क्योंकि पेटी के सभी क्षेत्र होंशू मध्यवर्ती उच्च प्रदेशों में स्थित जल-शक्ति केन्द्रों के निकट पड़ते हैं।

कथित औद्योगिक पेटी में तीन सघन औद्योगिक क्षेत्र हैं। तीन बड़ी खाड़ियों के सिरों पर स्थित ये तीन क्षेत्र हैं—1. कांटो क्षेत्र (टोक्यो की खाड़ी) 2. चुकयो क्षेत्र (आइजे की खाड़ी) 3. केइहांशिन क्षेत्र (ओसाका की खाड़ी)। तीनों खाड़ियों के सिरों पर स्थित ये क्षेत्र देश के सर्वाधिक घने बसे यातायात की दृष्टि से विकसित एवं सघन आर्थिक क्रियाओं में रत हैं। जापान के छः बड़े नगरों (मिलियन से ज्यादा जनसंख्या) एवं पाँच सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन्दरगाहों में से सभी इन तीन क्षेत्रों में विद्यमान हैं। कांटो, केइनहांशिन तथा चुकयो—तीनों क्षेत्र मिलकर देश के दो-तिहाई से अधिक औद्योगिक उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। कुछ उद्योगों का तो यहाँ भारी केन्द्रीकरण है। यथा, देश में कुल उत्पादित वस्त्रों का 74 प्रतिशत भाग, धातु उत्पादनों का 68 प्रतिशत, मशीनरी का 74 प्रतिशत तथा रासायनिक उत्पादनों का लगभग 55 प्रतिशत भाग इन तीन क्षेत्रों से प्राप्त होता है। इन तीनों में भी क्रमशः कांटो प्रथम (कुल उत्पादन का 31%) केइनहांशिन द्वितीय (24.5%) तथा चुकयो (12.3%) तृतीय स्थान पर आते हैं। निम्न सारणी द्वारा यह और भी स्पष्ट है।
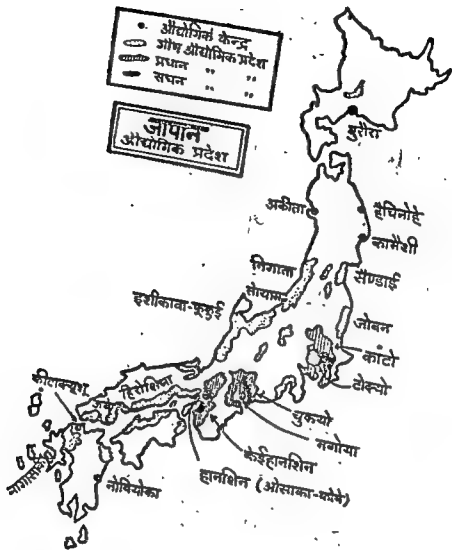
चित्र–14

जापान के सघन औद्योगिक क्षेत्र एवं उनका उत्पादन प्रतिशत

क्षेत्र	धातु	मशीनरी	रसायन	वस्त्र	समस्त उद्योग
कांटो	32.4%	40.8%	23.3%	11.7%	31.0%
केइनहांशिन	29·8	20.2	21.4	31.8	24 5
चुकयो	6.1	12.5	10.5	30 5	12.3
तीनों क्षेत्र	68.3	73.5	55.2	74.0	67.8

तीनों सघन औद्योगिक क्षेत्रों में छोटे-बड़े, बिखरे तथा पास-पास सभी प्रका के औद्योगिक संस्थान हैं। कुछ तो बहुत ही बड़े एवं सघन हैं जैसे कांटो में टोक्यो याकोहामा, चुकयो में नगोया या केइनहांशिन में क्योटो-ओसाका-कोबे केन्द्र। कुछ ऐसे भी भाग हैं, इन्हीं क्षेत्रों में, जहां कारखाने बड़े छितरे रूप में है। तीनों सघन क्षेत्रों में औद्योगिक उत्पादनों सम्बन्धी विविधता है। खाद्य पदार्थ, वस्त्र, धातु, रसायन एवं मशीनरी उद्योग तीनों में समान रूप से विकसित हैं फिर भी कुछ विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति के दर्शन होते है। यथा, चुकयो क्षेत्र में वस्त्र तो कांटों में मशीनरी तथा छपाई आदि पर जोर ज्यादा है। चुकयो में रसायन उद्योगों का भी अच्छा विकास है परन्तु धातु उद्योग कम हैं।

उत्तरी-क्यूशू के फुकुओका प्रीफैक्चर में स्थित कीटा क्यूशू क्षेत्र जापान का चौथा सघन औद्योगिक क्षेत्र माना जाता है। यह देश का 4.4 प्रतिशत औद्योगिक उत्पादन करता है। कीटा क्यूशू नगर अकेला 3 प्रतिशत उत्पादन के लिए उत्तरदायी है तथा जापान 6वां बड़ा औद्योगिक नगर है। उक्त तीनों सघन क्षेत्रों के अतिरिक्त औद्योगिक पेटी के अन्य क्षेत्रों में देश के औद्योगिक उत्पादन का लगभग 17% भाग पैदा होता है। अन्य क्षेत्रों मे कांटो तथा चुकयो के मध्य स्थित शिजुओका प्रीफैक्चर (4%) तथा भीतरी सागर के सीमावर्ती क्षेत्र (12-13% (चुगोकू, शिकोकू, उत्तरी क्यूशू) उल्लेखनीय हैं।

औद्योगिक पेटी के बाहर औद्योगिक केन्द्र बड़े बिखरे रूप में हैं। इनमें सैंडाई, निगीता, इशीकावा-फुकुई, टोयामा, अकीता, कामैशी तथा मुरोरां आदि उल्लेखनीय है। इनका सम्मिलित उत्पादन 15% से ज्यादा नहीं है।

पिछले दशकों में जापानी उद्योगों के स्वरूप एवं वितरण में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है। द्वितीय विश्व युद्ध का प्रभाव एवं भविष्य के लिए निर्धारित औद्योगिक नीतियां इस परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं। पिछले दशकों में साधारणतया होकैडो, उत्तरी हांशू, जापान सागर के तटीय क्षेत्र, क्यूशू, शिकोकू एवं चुगोकू के औद्योगिक क्षेत्रों में ह्रास की प्रवृत्ति परिलक्षित हुई है। इनका उत्पादन राष्ट्रीय उत्पादन स्तर से क्रमशः कम होता जा रहा है। इनके विपरीत कांटो क्षेत्र के औद्योगिक केन्द्रों का उत्पादन राष्ट्रीय स्तर से कहीं ज्यादा तथा चुकयो क्षेत्र का राष्ट्रीय स्तर से थोड़ा सा कम रहा है। इन तीनों पुराने सघन औद्योगिक क्षेत्रों में हुई वृद्धि से यहां स्थानीय रूप से कई समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं जिनमें शक्ति की

नोट—कांटो क्षेत्र में छः प्रीफैक्चर्स (गुमा, टोचीगी, सेतामा, चीबा, टोक्यो तथा कानागावा) केइनहांशिन में छः प्रीफैक्चर्स (शीगा, क्योटो, ओसाका, ह्योगो, नारा तथा वाकायामा) एवं चुकयो में तीन प्रीफैक्चर्स (गीफू, एइची तथा माई) शामिल किए जाते हैं।

कमी, पानी की कमी, यातायात की असुविधा तथा श्रमिकों सम्बन्धी परेशानी मुख्य हैं। असल में पिछले दो-तीन दशकों में कई नए प्रकार के भारी उद्योग भी इन्हीं सघन क्षेत्रों के तटीय भागों में विकसित हुए अतः इस प्रकार की समस्या उत्पन्न होना स्वाभाविक था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जुलाई 1961 में हुए 'राष्ट्रीय भू-आयोजन सम्मेलन' में यह तय पाया गया कि आगे से नए औद्योगिक संस्थान अपेक्षाकृत कम विकसित क्षेत्रों में स्थापित किए जाएँ।

विविध उद्योगों के पारस्परिक महत्व एवं विस्तार गति में भी परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है। पिछले तीन-चार दशकों में रसायन, धातु, मशीनरी एवं विद्युत सम्बन्धी उद्योग का काफी विस्तार हुआ है जबकि खाद्य पदार्थ, कागज-लुग्दी, वस्त्र तथा पैट्रोलियम संबंधी उत्पादनों के प्रतिशत में ह्रास हुआ है। वस्तुतः इस परिवर्तन का कारण विश्व के विभिन्न देशों में औद्योगिक विकास का स्वरूप एवं बाजारी-मांग की बदली हुई परिस्थितियां हैं।

निम्न सारिणी द्वारा उद्योगों के पारस्परिक स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है। उत्पादन के आंकड़े 1980 के उत्पादन को 100 की इकाई मानकर प्रतिशत रूप में दिये गये है जिनसे उत्पादन की प्रवृत्ति का ज्ञान होता है।

औद्योगिक उत्पादन संकेतिका : जापान

(1980 = 100)

उद्योग समूह	1965	1970	1975	1981	1982
1. लोहस्पात	32.6	75.3	79.9	101.0	101.3
2. मशीनरी	19.8	52.8	60.2	107.8	109.2
3. रसायन	32.7	74.0	78.5	95.9	95.4
4. पैट्रोलियम एवं कोयला उत्पादन	34.4	78.8	98.7	93.8	88.4
5. कागज एवं लुग्दी	41.5	73.1	74.5	94.4	97.1
6. वस्त्र	64.0	97.1	92.2	98.4	97.4
7. खाद्य एवं तम्बाकू	58.9	76.3	98.7	100.8	100.6
8. खनन	137.5	141.7	101.7	97.1	96.3

□□□

जापान : प्रमुख उद्योग

लौह एवं इस्पात उद्योग :

1980 में लगभग 111.3 मिलियन टन क्रूड इस्पात उत्पादन करके जापान उत्पादन की दृष्टि से विश्व में तीसरे स्थान पर था। यह देश जिसका लौह इस्पात उद्योग बहुत कुछ सीमा तक आयातित लौह-अयस एवं कोकिंग पर निर्भर है इस्पात उत्पादन में एशिया में प्रथम एवं विश्व में स. रा. अमेरिका तथा सोवियत संघ के बाद तीसरे स्थान पर है। पिछले दिनों इस्पात की जो वृद्धि दर रही है उसको देखते हुए यह भलीभांति अनुमान लगाया जा सकता है कि जापान इस क्षेत्र में अब संम्पृक्त अवस्था में पहुच रहा है। 1980 के बाद उत्पादन में कुछ कमी आने लगी है। स्वयं जापान के औद्योगिक ढांचे में लौह इस्पात- उद्योग दिन-प्रतिदिन महत्ता प्राप्त करता जा रहा है। उत्पादन मूल्य की दृष्टि से आज यह उद्योग वस्त्रोद्योग को पीछे छोड़ने की स्थिति में है। देश की अर्थ व्यवस्था में इस उद्योग के महत्व का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि लौह इस्पात उत्पादन कुल राष्ट्रीय उत्पादनों के मूल्य का लगभग 12% एवं निर्यात मूल्य का 12.8% भाग प्रस्तुत करता है। यह प्रतिशत केवल पिग आयरन व इस्पात का है अगर इसमें इस्पात से सम्बन्धित उद्योग जैसे मशीनरी उद्योग के उत्पादनों को भी शामिल कर लिया जाए तो प्रतिशत 45 से अधिक हो जाएगा।

पिछले तीन दशकों में ही जापान के लौह इस्पात उद्योग ने बड़े उतार-चढ़ाव देखे है। द्वितीय विश्व युद्ध का इस पर भारी प्रभाव पड़ा। युद्ध-पूर्व समय में भी जापान इस दिशा में उन्नत था। 1938 में जापानी लौह कारखानों ने 5.5 मिलियन टन पिग आयरन एवं 6.8 मि. टन क्रूड इस्पात तैयार किया। इस उत्पादन के आधार पर यह विश्व में पांचवे स्थान (चौथा ब्रिटेन) पर था। युद्ध से ठीक पूर्व यानी 1943 में भी जापान ने 7.65 मि. टन क्रूड इस्पात तैयार करके अपनी स्थिति को बनाए रखा। लेकिन युद्ध में अणुबमों की मार एवं पराजय ने अन्य उद्योगों की तरह इस्पात उद्योग को भी धराशायी कर दिया।

युद्ध के तुरन्त पश्चात के वर्षों में यह उद्योग प्रायः 'ठप्प' की स्थिति में था। उत्पादन नगण्य था। 1946 में इस्पात संस्थानों ने कुल मिलाकर 0.5 मिलियन

इस्पात एवं 0.2 मिलियन टन पिग आयरन उत्पादित किया। लगभग ऐसी ही हालत अगले वर्ष थी जबकि इस्पात एवं पिग आयरन का उत्पादन क्रमशः 0.9 एवं 0.3 मि० टन था। अगले दशक के प्रारम्भिक वर्षों यानी 1951-52 से ही इसमें पुनः चेतना दिखाई पड़ने लगी। इसके संभवतः दो कारण थे। प्रथम, कोरिया युद्ध जिसने जापानी इस्पात की मांग बढ़ा दी। द्वितीय, नया संविधान जिसने मित्र राष्ट्रों द्वारा थोपे हुए संविधान एवं आर्थिक नीतियों से मुक्ति दिलवाई।

1951-80 के वर्षों में लोह इस्पात उद्योग कितनी तीव्र गति से उन्नत हुआ यह उत्पादन-आंकड़ों से समझा जा सकता है। इन वर्षों में इस्पात उत्पादन में लगभग 50 गुना वृद्धि हुई। निम्न सारणी से पिछले तीन दशकों में इस्पात उद्योग के प्रमुख उत्पादनों का वृद्धि-स्वरूप सुस्पष्ट है।

जापान : लौह-इस्पात उद्योग उत्पादन 1951-81

(1000 टनों में)

वर्ष	पिग आयरन	क्रूड स्टील	फैरो एलोय	ढाला हुआ इस्पात
1965	27,502	41,161	658	30,034
1970	68,048	93,322	1,665	66,691
1975	86,877	102,313	2,139	76,514
1979	83,825	111,748	1,901	87,386
1980	87,041	111,395	1,866	87,227
1981	80,048	101,676	1,639	77,818

वृद्धि आंकड़ों से दो बातें सुस्पष्ट है। प्रथम, कई प्रकार की परिसीमाओं के बावजूद जापान के इस उद्योग ने बहुत ही तीव्र गति से विकास किया है और प्रौद्योगिक प्रगति की एक मिसाल कायम की है। द्वितीय, 1980 के बाद से उत्पादन में कमी दृष्टिगोचर होने लगी है।

जापान को अपने इस्पात उद्योग के लिए प्रतिवर्ष भारी मात्रा में लौह-अयस एवं कोकिंग विदेशों से आयात करना पड़ता है। स्वदेशी खानों से केवल लगभग .5 मिलियन लौह-अयस प्राप्त हो पाता है। जबकि खपत इसकी तुलना में भारी होती है। जैसे-जैसे उद्योग का विस्तार होता गया लोहे की खपत मात्रा भी बढ़ती गयी। खपत मात्रा के साथ आयात मात्रा किस तेजी से बढ़ रही है इसका अनुमान केवल तीन वर्षों के आंकड़ों से ही चल जाता है। यथा, 1960 में जापान के कारखानों में 14.5 मि० टन लौह की खपत हुई जिसमें से 13 5 मि० टन आयात किया। 1981 में खपत मात्रा लगभग 125 मि० टन और आयात मात्रा 124.3 मि० टन थी। यही हाल कोकिंग कोयले का है। आवश्यकता का लगभग

आधा भाग ही स्वदेशी खानों (3/5 उत्तरी क्यूशू एवं शेष होकेडो से) प्राप्त हो पाता है। उद्योग के विस्तार के साथ कोयला की कमी निरन्तर और भी ज्यादा गम्भीर होती जा रही है। 1960 में कुल खपत मात्रा (12 मि. टन) का लगभग आधा भाग आयात करना पड़ा तो 1982 में कुल प्रयोगित कोकिंग कोयले का लगभग 88% विदेशों से आयात करना पड़ा। लोह धूल एवं पायराइट सिंडर की आवश्यक मात्राएं देश में मिल जाती हैं परन्तु लोह-छीलन का पर्याप्त भाग अमेरिका से आयात करना पड़ता है। लोह-छीलन की कमी से ही वस्तुतः यहां पिग आयरन का उत्पादन कम होता है।

वस्तुतः जापान अपनी लोह-अयस एवं कोकिंग कोयला सम्बन्धी पूर्ति के लिए विदेशों पर बुरी तरह निर्भर है। उसे अपनी मांग का 98.4% लोह-अयस तथा 88.9% कोकिंग कोयला विदेशों से आयात करना पड़ता है। इन आधारभूत सामग्रियों पर आने वाले परिवहन-मूल्य में कमी करने की दृष्टि से ही लोह इस्पात के कारखानों को तटवर्ती क्षेत्रों में स्थापित किया गया है। सामग्रियों को लाने वाले जलयानों को भी विशेषरूप से बड़े आकार और अधिक क्षमता युक्त डिजाइन किया गया है। लोह अयस प्रमुखतः आस्ट्रेलिया, ब्राजिल तथा भारत से एवं कोकिंग कोयला आस्ट्रेलिया, कनाडा तथा सं० रा० अमेरिका से आता है। निम्न सारिणियों से यह तथ्य सुस्पष्ट है।

जपान : कच्चे मालों का आयात (1969–1979)

लोह–अयस

वर्ष	कुल आयात (मि० टनों में)	आस्ट्रेलिया	ब्राजिल	भारत	अन्य
1969	83.09	28.8%	4.2%	16.5%	51.5%
1974	141.82	47.9	13.8	12.2	26.1
1977	132.57	47.6	17.9	13.5	21.1
1979	130.27	42.4	20.1	13.1	24.4

कोकिंग कोयला

वर्ष	कुल आयात (मि० टनों में)	आस्ट्रेलिया	सं० रा० अमेरिका	कनाडा	अन्य
1969	38.24	38.2%	48.8%	1.2%	11.8%
1974	58.90	35.1	42.3	15.4	7.2
1977	55.96	44.0	26.9	18.5	10.6
1979	52.15	45.7	24.8	18.9	10.6

अपनी इन परिसीमाओं और कच्चे मालों सम्बन्धी कठिनाइयों से बचने के लिए जापान दोहरे प्रयत्न कर रहा है। एक ओर वह ऐसी विधियाँ विकसित कर रहा है जिसमें अपेक्षाकृत कम मात्रा में लौह-अयस एवं कोकिंग कोल की जरूरत हो। 1950–60 दशक में यहाँ प्रवात भट्टियों में बनाए गए पिग आयरन में 12 प्रतिशत लौह-अयस एवं 32 प्रतिशत कोक (प्रति एक टन पिग आयरन में) कम खर्च करके उतना ही उत्पादन लिया गया।[34] वर्तमान में पिग आयरन उत्पादन की प्रति इकाई जापान में अन्य औद्योगिक देशों की तुलना में कहीं सस्ती पड़ती है। कई बड़े कारखानों तक नहर बना कर या खाड़ियों द्वारा ऐसी व्यवस्था बनाई गई है कि 10,000 टन भार तक के जलयान आसानी से कारखानों तक पहुँच सकें। इससे यातायात में कम खर्च होता है तथा उत्पादन-मूल्य कम बैठता है। खर्चे की कमी के लिए आजकल जापान के इस्पात कारखानों में आक्सीजन कनवर्टर प्रयोग किए जाने लगे हैं।

इस प्रकार एक ओर जापान निरन्तर यह प्रयास कर रहा है कि उत्पादन मूल्य कम हो तो दूसरी ओर विदेशों, विशेषकर, एशियाई देशों से लौह-अयस के पर्याप्त मात्रा में आयात के लिए व्यापारिक समझौते कर रहा है। भारत, मलाया व आस्ट्रेलिया से जापान ने इस प्रकार के समझौते किए हैं। भारत के मध्य प्रदेश में मिली नई लोहे की खानों से लौह-अयस विशाखापतम बन्दरगाह द्वारा जापान को निर्यात की जाती है। इसके परिवहन के लिए एक नया रेल-मार्ग खान क्षेत्रों से बन्दरगाह तक बिछाया गया है। समझौते के अनुसार आस्ट्रेलिया प्रति वर्ष जापान को 30-40 मिलियन टन कच्ची धातु सप्लाई करता है। अभी हाल में जापान का चीन से जो व्यापारिक समझौता हुआ है उसके अनुसार इस बात की बहुत संभावनाएँ हैं कि जापान चीन से कोकिंग कोयले का आयात करेगा।

परम्परागत रूप से तो जापान में लौह को गलाकर औजार व हथियार बनाने का कार्य पहले भी होता था परन्तु आधुनिक इस्पात उद्योग का श्रीगणेश मेजी पुनरोत्थान के बाद 1887 में उत्तरी जापान के कामैशी नगर में स्थापित की गई प्रथम प्रवात-भट्टी से हुआ। तीन साल बाद 1890 में योकोसुका के नौ सेना हथियार निर्माण केन्द्र में प्रथम खुली भट्टी चालू की गई। अगले वर्ष ही यावाता नामक स्थान पर एक विशाल इस्पात का कारखाना स्थापित किया गया। यह जापान का सर्वाङ्गयुक्त प्रथम कारखाना था। इसके निर्माण में पूरा पैसा सरकार का लगा। पूरा नियन्त्रण इस पर सरकारी था। 'इम्पीरियल स्टील वर्क्स' नामक इस कारखाने का उद्देश्य हथियारों का निर्माण करना था। 1914 में प्रथम विश्व युद्ध छिड़ गया। अमेरिका और यूरोपियन देश युद्ध में रत हो गए

---

34. Trewarth, G.T.—Japan, A Geography p, 285.

और इस्पात व हथियारों की माँग बढ़ी। मुनाफे की भारी दरों को देख कर जापानी उद्योगपतियों ने निजी क्षेत्र में इस्पात के कारखाने स्थापित किए। युद्धोपरांत भी इस्पात उद्योगों की विकास गति में कोई अन्तर नहीं आया क्योंकि क्षतिपूर्ति व परिवहन के विकास के साथ-साथ विश्व भर में इस्पात की माँग दिन प्रतिदिन बड़ी तेजी से बढ़ती जा रही थी।

1934 में सरकारी संस्थान 'इम्पीरियल स्टील वर्क्स' तथा निजी क्षेत्र के 6 कारखानों को मिलाकर 'जापान लौह एवं इस्पात कम्पनी' की स्थापना की गई। यह कम्पनी एक तरह से अर्द्ध-सरकारी संस्था थी जिसका अगले 16 वर्षों तक जापान के सम्पूर्ण लौह इस्पात उद्योग पर अधिकार रहा। 1950 में यह संस्था भंग कर दी गई। सारे इस्पात कारखाने दो कम्पनियों में समूह-बद्ध कर दिए गए। प्रथम, यावाता लौह इस्पात कम्पनी द्वितीय, फूजी लौह इस्पात कम्पनी। अगले दशक (1950-60) में चार विशाल कारखाने और स्थापित किए गए। इस प्रकार उक्त दोनों कम्पनियों तथा नव स्थापित चारों कारखानों का वर्तमान में जापान के इस्पात क्षेत्र पर पूरा-पूरा अधिकार है। ये बड़े छः कहलाते हैं। इन कारखानों में खुली तथा प्रवात दोनों प्रकार की भट्टियां हैं। खुली भट्टियों में ही जापान का अधिकांश पिग आयरन (90% से अधिक) तैयार किया जाता है। क्रूड इस्पात प्रवात भट्टियों में बनाया जाता है। पिछले दो दशकों (1960-80) से विद्युत-भट्टियों का भी उपयोग किया जाने लगा है।

पिछले वर्षों में जापान के लौह-इस्पात उद्योग को स्वचालित बनाने एवं तकनीकी विकास की दृष्टि से भारी मात्रा में पूंजी लगायी गयी है। इसके फलस्वरूप इस्पात के कारखानों के आकार उत्पादन एवं क्वालिटी—सभी दृष्टियों से विकास हुआ है। प्रवात भट्टियों का आकार बढ़ाया गया है। वर्तमान में जापान में 38 विशालाकार प्रवात भट्टियां कार्यरत हैं इनमें से प्रत्येक की क्षमता 20 0 घन मीटर या उससे अधिक है। इनमें से 15 भट्टियां तो अत्यन्त विशालाकार हैं जिनकी क्षमता 4000 घन मीटर या उससे अधिक है। इनमें से प्रत्येक भट्टी 10,000 टन पिग आयरन रोजाना उत्पादित कर सकती है। नयी विधियों में कोकिंग कोयला का उपयोग भी अपेक्षाकृत कम होता है। ओपन-हर्थ विधि जापान में बिल्कुल बन्द कर दी गयी है इसका स्थान एल-डी-कनवर्टर्स ने लेलिया है।

प्रधान लौह-इस्पात केन्द्र :

मध्यवर्ती हॉंशू एवं देश के दक्षिणी-पश्चिमी प्रदेश या दूसरे शब्दों में उद्योग-शृंखला पिग आयरन के 81.4 प्रतिशत उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। क्षेत्रीय आधार पर, पाँच प्रादेशिक केन्द्र उल्लेखनीय हैं जो मिलकर देश में कुल उत्पादित पिग आयरन का लगभग 95% भाग उत्पादित करते है। ये है—उत्तरी क्यूशू में कीटा

क्यूशू (33.4 प्रतिशत) किकी मैदान में हांशिन (24.2 प्रतिशत) कांटो मैदान में केइहिन (22.4 प्रतिशत) पूर्वी तोहोकू में कामैशी (5.1 प्रतिशत) एवं होकैडो न मुरोरां (9.1 प्रतिशत)। इनमें अन्तिम दो औद्योगिक पेटी से बाहर है। शेष 6% पिग आयरन बिखरे रूप में छोटी-छोटी फैक्ट्रियों में विद्युत-भट्टियों के माध्यम से तैयार किया जाता है।

पिग आयरन की तरह क्रूड स्टील एवं इस्पात के विविध उत्पादन भी मुख्य रूप से औद्योगिक पेटी में ही विद्यमान हैं जहाँ से इनके कुल उत्पादन का लगभग क्रमशः 88.5 प्रतिशत एवं 90.6 प्रतिशत भाग आता है। इससे जापान के दक्षिणी-पश्चिमी भाग के बाजारी महत्व का भान होता है। वस्तुतः जिन केन्द्रों में पिग आयरन उत्पादित होता है उन्हीं में इस्पात भी तैयार किया जाता है परन्तु उत्पादन प्रतिशत में अन्तर है। यथा उत्तर के दोनों केन्द्र (कामैशी एव मुरोरा) पिग आयरन का 14.2 प्रतिशत भाग उत्पादित करते है परन्तु इस्पात का प्रतिशत इनका 8.5 ही है। यह इस तथ्य का संकेत है कि यहाँ से दक्षिण के क्षेत्रों को पिग आयरन जलयान, मशीन, यंत्रादि के निर्माण के लिए भेज दिया जाता है। उत्तरी क्यूशू के केन्द्र कीटा क्यूशू की भी यही स्थिति है। इसके पिग-आयरन उत्पादन (33.4%) तुलना में क्रूड स्टील तथा इस्पात का उत्पादन बहुत कम क्रमशः 24 तथा 17 प्रतिशत है। इसके विपरीत हांशिन एवं केइहिन में पिग आयरन का उत्पादन (सम्मिलित रूप से) 46 प्रतिशत परन्तु क्रूड स्टील का 57.6% एवं इस्पात की वस्तुओं का 62.2 प्रतिशत होता है। औद्योगिक पेटी से बाहर के कारखानों में केवल 9% क्रूड इस्पात एवं 15% इस्पात वस्तुओं का उत्पादन होता है।

जापान के उक्त पाँचों प्रधान पिग आयरन इस्पात केन्द्रों के विकास के पीछे अलग-अलग कारण रहे हैं। कीटा क्यूशू, कामैशी एवं मुरोरां का प्रारम्भिक विकास स्थानीय कच्चे मालों के आधार पर हुआ है। मुरोरां को निकटवर्ती इशीकारी कोयला क्षेत्र से कोयला एवं पास से ही कुछ घटिया किस्म के लौह-अयस की सुविधा प्राप्त है। कामैशी के पास देश की सबसे महत्वपूर्ण कोकिंग कोयले की खाने हैं। इसी प्रकार कीटा क्यूशू उत्तरी क्यूशू के चिकूहो कोयला क्षेत्र से पर्याप्त कोकिंग कोयला प्राप्त कर लेता है। बन्दरगाह की सुविधा से अच्छी किस्म का लौह-अयस भी आयात कर लेता है। इसीलिए कीटा क्यूशू में जापान के अन्य केन्द्रों की अपेक्षा सस्ता पिग आयरन तैयार होता है। इन तीनों केन्द्रो के विपरीत शेष दोनों—हांशिन एव केइहिन का विकास बाजारी मांग के आधार पर हुआ है। ये दोनों क्रमशः उत्तरी क्यूशू तथा जोबन (टोक्यो के उत्तर में) से तट-वर्ती जल-यातायात द्वारा कोयला की पूर्ति करते हैं। यह पूर्ति आंशिक ही होती है, ज्यादातर भाग विदेशों से आयात किया जाता है।

पिछले दशकों में कच्चे मालों के आधार पर विकसित तीनों केन्द्रों की अपेक्षा बाजारी माँग पर आधारित दोनो (अन्तिम दोनों) केन्द्रों ने तेजी से प्रगति की है। 1926 में प्रथम तीनों कारखाने लगभग समस्त पिग आयरन एवं 71 प्रतिशत इस्पात के लिए उत्तरदायी थे। अकेला उत्तरी क्यूशू क्षेत्र देश का 80-85 प्रतिशत पिग आयरन एवं दो-तिहाई क्रूड इस्पात तैयार करता था। पिछले दशकों में स्थिति बदली। आज ये तीनों केवल 45% पिग एवं 34% क्रूड इस्पात तैयार करते हैं। इनके विपरीत बाजारी माँग पर विकसित हाँसिन एवं केइहिन के इस्पात केन्द्र जो 1926 में जरा भी पिग आयरन तैयार नहीं करते थे आज लगभग 41% भाग प्रस्तुत करते है। इसी प्रकार क्रूड स्टील का उत्पादन प्रतिशत 28 से बढ़ कर 58 हो गया है। स्पष्ट है कि इस आधारभूत धातु उद्योग को भी कच्चे मालों की अपेक्षा बाजारी माँग ज्यादा प्रभावित करती है।

उपर्युक्त प्रमुख इस्पात केन्द्र है परन्तु वितरण के सही स्वरूप को देखने के लिए क्षेत्रीय स्तर पर अध्ययन करना ज्यादा उपयोगी होगा। इस उद्योग को निम्न 5 क्षेत्रों में समूहबद्ध किया जा सकता है।

उत्तरी क्यूशू क्षेत्र—यहाँ जापान के सबसे पुराने लौह-इस्पात के कारखाने विद्यमान हैं। यहीं, यावाता नगर में सर्वप्रथम (1887) प्रवात भट्टी स्थापित की गई। इसी नगर में तीन वर्ष पश्चात 'इम्पीरियल स्टील वर्क्स' स्थापित किया गया। बाद के दशकों में मोजी एवं वाकामत्सू आदि नगरों में इस्पात के कारखाने स्थापित किए गए। कीटा-क्यूशू इस क्षेत्र का सबसे बड़ा पिग आयरन, इस्पात केन्द्र है। इस क्षेत्र में इस उद्योग के विकास में चिकूहो से प्राप्त कोयला, अच्छे बन्दरगाह (नागासाकी, मोजी, वाकामत्सू) होने से विदेशों से लौह-अयस के आयात की सुविधा आदि तत्व प्रमुखतः सहयोगी रहे है। यह क्षेत्र देश के लगभग 40% पिग आयरन एवं 30 प्रतिशत क्रूड इस्पात के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है।

टोक्यो याकोहामा क्षेत्र—बाजारी माँग, याकोहामा बन्दरगाह द्वारा आयात-निर्यात की सुविधा एवं अत्यधिक जन-घनत्व—ये तीन तत्व ही इस क्षेत्र में लौह इस्पात उद्योग की स्थापना एवं विकास में प्रोत्साहक तत्व रहे है। केइहिन सबसे बड़ा केन्द्र है जो अकेला ही जापान का लगभग 23% पिग आयरन, 29% क्रूड इस्पात एवं 32% दाना हुआ इस्पात तैयार करता है। केइहिन के अतिरिक्त लोहे के कारखाने सुरुबी, कावासाकी तथा चीबामी में भी हैं। केइहिन का कारखाना एक तरह से टोक्यो का ही अंग है जिसके उत्थान में कच्चे मालों की अपेक्षा टोक्यो क्षेत्र में स्थित विविध प्रकार के उद्योगों द्वारा की गई इस्पात की माँग ज्यादा प्रभावकारी तत्व रहा है। टोक्यो क्षेत्र में स्थित जलयान निर्माण, आॅटोमोबाइल्स, लोको विद्युत-यन्त्र तथा मशीनरी उद्योगों को भारी मात्रा में इस्पात की आवश्यकता निरन्तर बनी रहती है। थोड़ा बहुत कोयला उत्तर में स्थित जोबन से प्राप्त हो

अध्यक्ष की अधीनता में काम करता है, पर कई बार उसे कुछ विधायिनी शक्तियाँ भी प्राप्त रहती हैं।

ओसाका-ह्यूगो क्षेत्र—ऊपर उल्लेखित क्षेत्र की तरह इस क्षेत्र में लौह इस्पात उद्योग के विकास के पीछे भी बाजारी मांग प्रधान तत्व रहा है। किकी मैदान में विकसित इस औद्योगिक क्षेत्र में विविध उद्योग—वस्त्र, लोको, मशीनरी आदि स्थित हैं जिन्हें इस्पात, पिग आयरन की अपेक्षा क्रूड इस्पात की वस्तुओं (ढाला इस्पात) पर ज्यादा जोर देते हैं। हांशिन सबसे बड़ा इस्पात-केन्द्र है। इसके अतिरिक्त फूजी, आमागासाकी तथा हिरोहिता में भी लौह के कारखाने हैं। गर्डर, तार व अन्य छोटी चीजें बनाने वाली लौह फैक्ट्रीज तो यहाँ अनेक हैं। कच्चे माल विदेशों से आयात करने पड़ते हैं। कोकिंग कोल अवश्य आंशिक रूप में उत्तरी क्यूशू (चिकूहो) से आ जाता है। पिग आयरन, क्रूड एवं ढाले हुए इस्पात के उत्पादन में यह लगभग टोक्यो क्षेत्र के बराबर है।

कामशी क्षेत्र—तोहोकू यानी उत्तरी हांशू के पूर्वी भाग में स्थित इस क्षेत्र के इस्पात कारखानों के उत्थान में स्वदेशी कच्चे मालों का प्ररणात्मक सहयोग रहा है। स्थानीय ओगदा तथा अरासे की खानों से कोकिंग कोयला, कुंजी एवं सेंडाई और कभी आवश्यकता पड़ने पर होकेडो से भी लौह-अयस प्राप्त कर लिया जाता है। स्थानीय खानों का बिटूमिनस कोयला चूंकि कोक बनाने के लिए बहुत ज्यादा उपयुक्त नहीं है अतः बाहर से कोकिंग कोयला आयात कर लिया जाता है। इस उद्देश्य के लिए कारखानों को रेल द्वारा बन्दरगाहों से जोड़ा गया है। कोकिंग कोयला सम्बन्धी परेशानी से बचने के लिए पिछले दशक से इस क्षेत्र में विद्युत भट्टियों का प्रचलन बढ़ चला है। यह सस्ता भी पड़ता है क्योंकि निकटवर्ती जल-विद्युत केन्द्रों से सस्ती शक्ति प्राप्त हो जाती है। कामेशी सबसे बड़ा इस्पात केन्द्र है। क्षेत्र की सारी लौह इस्पात इकाइयाँ मिलकर जापान का लगभग 6% पिग आयरन एवं 3% इस्पात करती हैं।

मोरांरा क्षेत्र—वैनिशा, मोरांरा तथा सापोरी आदि इस क्षेत्र के प्रधान केन्द्र हैं। होकेडो के दक्षिण में स्थित यह क्षेत्र औद्योगिक पेटी से बाहर के इस्पात उत्पादक केन्द्रों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो जापान का लगभग 10% पिग आयरन एवं 6% इस्पात तैयार करता है। इसके विकास में भी स्थानीय कच्चे माल प्रोत्साहक रहे हैं। इस क्षेत्र के कारखाने कोयला ईशीकारी एवं लौह-अयस मोरांरा तथा कुत्तचन की खानों से प्राप्त करते हैं।

वस्त्रोद्योग :

मेजी पुनरोत्थान के बाद जापान में जब औद्योगिक लहर व्याप्त हुई तो वस्त्रोद्योग आधुनिक स्तर पर विकसित होने वाला प्रथम उद्योग था। प्रथम विश्व युद्ध में यूरोपियन देशों, विशेषकर ब्रिटेन के युद्धरत हो जाने से जापानी वस्त्रों की

मांग तेजी से बढ़ी। 1920-30 में जब औद्योगिक देशों के विभिन्न उद्योग विश्वव्यापी मन्दी से पीड़ित थे उस समय भी जापान का वस्त्रोद्योग उन्नत था। इसमें कुल उद्योग-रत श्रमिकों का एक-चौथाई भाग लगा था। पिछले 3-4 दशकों में भारी उद्योगों जैसे धातु, रसायन, तथा मशीन-निर्माण आदि की तरफ ज्यादा ध्यान केन्द्रित होने के फलस्वरूप निस्संदेह वस्त्रोद्योग में ह्रास हुआ है।

द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व एवं तुरन्त बाद के वर्षों में वस्त्रोद्योग उत्पादन जापान के निर्यात का सर्वाधिक भाग प्रस्तुत करते थे। 1947 में यहाँ के निर्यात मूल्य का 76% भाग वस्त्रोद्योग उत्पादनों से सम्बन्धित था जो क्रमशः घटता गया और 1980 में 5% ही रह गया। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि वस्त्रों के निर्यात में बहुत ज्यादा ह्रास हुआ। वस्तुतः मशीनरी धातु, रसायन, ऑटोमोबाइल आदि के उत्पादनों का निर्यात मूल्य इतना बढ़ गया कि सापेक्षिक रूप में प्रतिशत कम हो गया।

द्वितीय विश्व युद्ध और युद्धोत्तर दिनों की बदली हुई परिस्थितियों ने इस उद्योग को बहुत प्रभावित किया। युद्ध में अनेक मिलें क्षतिग्रस्त हो गईं। युद्धोत्तर दिनों में विश्व का राजनैतिक मानचित्र बदला। एशिया तथा अफ्रीका के अनेक कपास उत्पादक देशों ने अपनी स्वयं की सूती मिलें स्थापित कीं। औद्योगिक देशों में कृत्रिम रेशों का प्रचलन एवं उत्पादन बड़ी तेजी से बढ़ा। रेशम की मांग विश्व बाजारों में विशेषकर अमेरिका में कम हो गई। जापानी रैयान के अनेक प्रतिद्वन्द्वी हो गए। ऐसी परिस्थितियों में युद्धोत्तर दिनों में पूर्ण पुनर्संगठन, क्षतिपूर्ति एवं विकास होते हुए भी जापान को अपनी अनेक मिलें बन्द कर देनी पड़ी। कुछ आंकड़ों से यह परिवर्तन स्पष्ट हो जाता है। युद्ध-पूर्व दिनों में जापान में 13 मिलियन तकुएँ कार्यरत थे, युद्ध पश्चात केवल 2.7 मिलियन ही कार्यरत हो सके। अगले वर्षों में विकास की पूर्ण परिस्थितियाँ होने के बावजूद यहाँ 8 मिलियन (1965) से ज्यादा तकुएँ कार्यरत नहीं किए जा सके। 1936 में जापान का रैयान वस्त्रोत्पादन विश्व में सर्वाधिक था। युद्धोत्तर दिनों में यह केवल 30% ही रह गया। यद्यपि इसमें भी पुनर्संगठन किया है लेकिन वर्तमान मात्रा युद्ध पूर्व स्तर से बहुत कम है।

पिछले तीन दशकों (1950 80) में एक और परिवर्तन वस्त्रोद्योग में हुआ है। इन वर्षों में प्राकृतिक रेशों के बजाय रासायनिक विधियों से तैयार किए गए कृत्रिम रेशों पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया है। युद्ध पूर्व दिनों में प्राकृतिक और कृत्रिम रेशों का उत्पादन अनुपात 80-20 था जो वर्तमान में 50-50 है। इसके कई कारण हैं। प्राकृतिक रेशा बनाने के लिए जापान को रेशम के अतिरिक्त सभी कच्चे माल (कपास, ऊन, लिनेन) आयात करने पड़ते है जब कि रासायनिक विधियों से तैयार किए जाने वाले इन वस्त्रों के लिए सारा कच्चा माल (कोयला,

लकड़ी, घास) देश में ही मिल जाता है। इनमें शक्ति की ही ज्यादा आवश्यकता होती है जो देश में पर्याप्त (जलविद्युत के रूप में) है। फिर यह भी सत्य है कि प्राकृतिक रेशों के बजाय कृत्रिम रेशों से बने इन वस्त्रों की मांग भी ज्यादा है। यहां तक कि आजकल शुद्ध रेशम की अपेक्षा कृत्रिम रेशम (रेयान) की मांग ज्यादा है।

सभी प्रकार के वस्त्रों के सम्मिलित उत्पादन के दृष्टिकोण से जापान के दो केन्द्र केइहांशिन तथा चुक्यो सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं जो मिलकर देश के लगभग 62.63 प्रतिशत वस्त्रोत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। इनमें से प्रत्येक केन्द्र 30% से अधिक वस्त्र उत्पादित करता है। तीसरा केन्द्र कांटो का औद्योगिक क्षेत्र है जो लगभग 11.12% उत्पादन प्रस्तुत करता है। अन्य केन्द्रों में निगीता, टोयामा, ईशीकावा-फुकुई के औद्योगिक क्षेत्र (सभी जापान सागर तट पर) शिजुओका प्रीफेक्चर (तोकाई में), चूगोकू तथा उत्तरी शिकोकू के औद्योगिक क्षेत्र (भीतरी सागर के सीमावर्ती) तोहोकू के दक्षिणी प्रीफैक्चर्स तथा तोसान के उच्च बेसिन में स्थित उद्योग केन्द्र उल्लेखनीय है।

सूती वस्त्रोद्योग :

युद्ध पूर्व के दिनों में सूती वस्त्रोद्योग जापान के अग्रणी उद्योग में से था जिसे यौद्धिक क्षति और बदली हुई परिस्थितियों के कारण युद्ध पूर्व चरम स्तर के 80 प्रतिशत पर ला कर ही सीमित कर दिया गया है, यद्यपि आज भी जापान विश्व के अग्रणी सूती वस्त्र व्यवसायी देशों में से एक है। तकुओं, करघों की संख्या एवं उत्पादन की दृष्टि से आज भी जापान एशिया में दूसरे (भारत के बाद) तथा विश्व में चौथे स्थान पर है।

जापान में प्रथम सूती मिल 1862 में क्यूशू द्वीप के कोगोशिमा नामक स्थान पर खोली गई। अगले दशकों में सरकारी प्रोत्साहन पाकर अनेक स्थानों पर मिलें खोली गईं। ये सफलतापूर्वक चली भी, परन्तु कुल मिला कर प्रगति धीमी थी। वास्तविक विकास प्रथम युद्ध से लेकर द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत तक के दिनों में हुआ। इस शताब्दी के प्रारम्भिक दशक तक ब्रिटेन विश्व में सर्वाधिक सूती वस्त्र उत्पादन एवं निर्यात करने वाला देश था। प्रथम विश्व युद्ध में ब्रिटेन के फंस जाने से जापान को एशिया एवं अफ्रीका के बाजार खाली मिल गए। दूसरे स्वयं जापान भी ब्रिटेन की तरह विश्व-शक्ति बनने के स्वप्न देखने लगा था अतः अपने व्यापार एवं उद्योगों को हर कीमत पर बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील था। भाग्य साथ था। परिणाम यह हुआ कि स्वयं यूरोप के देशों में जापान के वस्त्र व अन्य औद्योगिक उत्पादन जाने लगे।

इन सब परिस्थितियों ने मिलकर जापान के सूती वस्त्रोद्योग में क्रांति ला दी। इन दिनों अद्वितीय गति से वृद्धि हुई। युद्ध से कुछ पूर्व यानी 1912 के

संयुक्त राज्य अमेरिका से रूई आना बन्द हो गया। इधर देश में यौद्धिक सामग्रियों के उत्पादन की ओर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया। परिणाम यह हुआ कि युद्धोत्तर दिनों में केवल 2.7 मिलियन तकुएँ एवं 1.5 लाख कर्घे ही सक्षम थे। उत्पादन 20% रह गया। पुनर्संगठन और पुनर्विकास के प्रयत्न किये गये। 1954 में जाकर हालत कुछ सुधरी। वर्तमान में यहाँ लगभग 8.5 मिलियन तकुएँ कार्यरत हैं। 1968 में यहाँ 2,744 मि. वर्ग मीटर वस्त्र तैयार हुए। इसकी तुलना 1935 के उत्पादन (3330 मि. वर्ग मीटर) से की जा सकती है। आंकड़ों से स्पष्ट है कि यहाँ मिलों, तकुओं तथा कर्घों की संख्या एवं उत्पादन में कमी आई है। इसका कारण जापान में क्षमता का अभाव नहीं वरन् विश्व की बदली हुई परिस्थितियाँ हैं और इन परिस्थितियों (भारत का प्रतिद्वन्दी होना, लैटिन अमेरिका में संयुक्त राज्य अमेरिका का कपड़ा जाना, अफ्रीकी देशों में मिलों की स्थापना आदि) में यह जापानी नीति एवं पूँजीपतियों की दूरदर्शिता ही है कि उन्होंने उत्पादन को सीमित कर लिया। ब्रिटेन की तरह यहाँ भी अब सुपर फाइन कपड़ों के उत्पादन पर ही ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है क्योंकि इनकी माँग अभी भी है। मिश्र, यूगांडा, हिन्देशिया, कीनिया आदि अनेक देशों, जिन्होंने इस क्षेत्र में अभी-अभी प्रवेश किया है, में सुपर फाइन कपड़े तैयार नहीं होते।

जापान : सूती वस्त्र उत्पादन[35]

उत्पादन	1965	1970	1975	1981
सूती धागा (टनों में)	566,594	526,245	460,483	455,529
सूती वस्त्र (मी. वर्ग मीटर में)	3,012,565	2,616,046	2,214,436	2,066,524
आयात रूई (टनों में)	749,449	835,126	751,116	777,526

जापान में सूत की कताई प्रायः बड़ी मिलों में की जाती है परन्तु बुनाई का कार्य बड़ी मिलों एवं मध्यम तथा छोटे प्रकार की फैक्ट्रियों में भी किया जाता है। बहुत सी तो इनमें कुटीर स्तर पर चलाई जाती है। क्षेत्रीय दृष्टि से चुकयो तथा केइहांशिन सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। अन्य में कांटो, शिजुओका, तोयामा, निगीता, फुकुओका तथा कुमामोटो (अन्तिम दोनों क्रमशः पश्चिमी एवं उत्तरी क्यूशू में) उल्लेखनीय हैं। केन्द्रों में ओसाका, कोबे, नगोया, टोक्यो, निशावाकी तथा याकोहामा प्रधान हैं। ओसाका जिसे 'पूर्व का मैनचेस्टर' कहा जाता है, सर्वाधिक उत्पादन करता है। वहाँ अकेले नगर में जापान के एक-चौथाई तकुएँ विद्यमान हैं।

35 Statistical Hand book of Japan 1983 P. 55.

सम्पूर्ण ग्रोसाका प्रांत ही सूती वस्त्रोद्योग में ग्रग्रणी हैं जो जापान का एक-तिहाई (34%) सूती वस्त्र उत्पादित करता है। ग्रोसाका के ग्रतिरिक्त यहाँ ग्रन्य कई केन्द्र हैं जिनमें वाकायामा, किशीवादी, सकाई तथा नारा उल्लेखनीय है। दूसरा नम्बर हयूगो प्रांत का ग्राता है जहाँ के कोबे, ग्रामागासाकी तथा निशावाकी नगरों की गिनती देश के महत्वपूर्ण सूती वस्त्र केन्द्रों में की जाती है।

रेशमी वस्त्रोद्योग :

सूती वस्त्रोद्योग की तरह रेशमी वस्त्रोद्योग का भी पिछले दशकों में ह्रास हुग्रा है। युद्ध पूर्व वर्षों में जापान विश्व का 85% से ग्रधिक रेशम तैयार करता था। यहाँ के निर्यात में लगभग 30–35% भाग रेशम द्वारा ही प्रस्तुत किया जाता था। रेशम उत्पादन एवं विश्व बाजारों में इसकी खपत का चरमोत्कर्ष 1905 से लेकर 1934 तक रहा। इस ग्रवधि में जापान का रेशम व्यवसाय पाँच गुना हो गया था। ग्रमेरिका जापानी कच्चे रेशम एवं रेशमी वस्त्रों का बहुत बड़ा ग्राहक था। 1934 के बाद इसमें ह्रास के लक्षण दिखाई देने लगे। ह्रास के कई एक कारण थे। यथा, विदेशी बाजारों में ग्रसली रेशम की माँग कम हो गई। कृत्रिम रेशम (रेयान) व रासायनिक विधियों से बने वस्त्रों ने सस्ती कीमत का होने के कारण विश्व बाजारों पर क्रमशः ग्रधिकार कर लिया। यहाँ तक कि स्वयं जापान में इनका प्रचलन बड़ी तेजी से बढ़ा। ग्रमेरिका में भी कृत्रिम वस्त्रों के विकास के साथ प्राकृतिक रेशों की माँग कम होती गई। फिर द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ गया।-- जापान के बाजार छिन गये, मिलें बर्बाद हुई ग्रौर शहतूत में लगी बहुत सी भूमि को खेतों में परिवर्तित किया गया। कुछ ग्रन्य देशों जैसे इटली (पोवेसिन) सं० रा० ग्रमेरिका (कैलीफोर्निया) तथा कई एशियाई देशों में भी रेशम का उत्पादन किया जाने लगा। हालत यह हो गई कि युद्धोत्तर दिनों में रेशम की निर्यात मात्रा युद्ध पूर्व से केवल एक-तिहाई ही रह गई। उत्पादन भी बाद के वर्षों में जाकर बढ़ा परन्तु युद्ध पूर्व स्तर के ग्राधे से ज्यादा न हो सका।

रेशमी वस्त्रोद्योग के ह्रास का स्पष्ट चित्रण 1930 ग्रौर 1939 के ग्रांकड़ों की तुलना करने पर हो जाता है। 1930 में यहाँ 714,000 चो भूमि में शहतूत के वृक्ष खड़े थे, कुकून उत्पादन 334 मिलियन कि० ग्राम था एवं छोटे-बड़े सभी मिलाकर फिलेचस की संख्या 418,402 थी। जबकि 1939 में शहतूत क्षेत्र 550,000 चो, कुकून उत्पादन 196 मिलियन कि० ग्राम एवं फिलेचर्स की संख्या 239,000 थी। युद्धोत्तर दिनों में भी उत्पादन कोई खास नहीं बढ़ा है। इस घटाव का कारण जापान में क्षमता का ग्रभाव नहीं वरन् बदली हुई परिस्थितियाँ (उपर्युक्त उल्लिखित) हैं। जहाँ तक विश्व में स्थिति का प्रश्न है जापान ग्राज भी सर्वाधिक रेशम ग्रौर रेशमी वस्त्र तैयार करने वाला देश है। दुनिया का लगभग तीन-चौथाई प्राकृतिक रेशम यहाँ तैयार किया जाता है। विदेशी मुद्रा ग्रर्जन की

दृष्टि से भी रेशम वस्त्रोद्योग महत्वपूर्ण है। जितना रेशम और रेशमी वस्त्र तैयार होते हैं उनका लगभग 60% निर्यात कर दिया जाता है। 1950-70 के दो दशकों में एक प्रवृत्ति देखने में आई है कि कच्चे रेशम की निर्यात मात्रा में तो थोड़ी सी ही वृद्धि हुई है परन्तु तैयार रेशमी वस्त्रों की मांग तेजी से बढ़ी है। इनकी निर्यात मात्रा लगभग दुगुनी हो गई है। 1981 में जापान ने 129 मिलियन वर्ग मीटर रेशमी कपड़ा तैयार किया।

रेशम वस्त्रोद्योग वस्तुतः जापान का अपना निजी उद्योग है जो यहाँ सदियों से कुटीर उद्योग के रूप में चला आ रहा है। यहाँ के किसान शहतूत के वृक्षों पर रेशम के कीड़े पालने का कार्य सह-उद्यम के रूप में वर्षों से करते आये हैं। यहाँ के 40% किसान किसी न किसी स्तर के रेशम व्यवसाय में संलग्न हैं। बड़े उद्योगों में सम्भवतः यही एक ऐसा उद्योग है जो पूर्णतः जापान के अपने देशी साधनों पर निर्भर है। रेशम की विदेशों में मांग, कुशल श्रमिकों की पर्याप्तता एवं व्यवसाय के उचित संगठन का जितना सहयोग इस व्यवसाय के विकास में है उतना या उससे कहीं अधिक प्रेरणात्मक सहयोग भौगोलिक वातावरण का है। संक्षेप में वे तत्व जो रेशमी वस्त्रोद्योग के विकास में सहायक सिद्ध हुए हैं इस प्रकार हैं—1. जापानी द्वीपों की शीतोष्ण आर्द्र जलवायु शहतूत के वृक्ष के लिए बड़ी अनुकूल है। 2. जलवायु में आर्द्रता के कारण धागे टूटने का डर कम रहता है। 3. शहतूत का वृक्ष इस प्रकार का होता है जिसे लगाने में सिंचाई, मिट्टी, धरातल सम्बन्धी कोई कठिनाई नहीं होती। जापानी द्वीपों के अधिकांश मध्यवर्ती भाग पर्वत-पठारों द्वारा घिरे होने के कारण असमान धरातल के हैं जिनका कृषि के लिए कोई उपयोग नहीं हो सकता। मिट्टी की पर्त भी बड़ी पतली है, उपजाऊ भी नहीं है। इन भागों में शहतूत का वृक्ष बड़ी आसानी से पनपता है। इसकी ज्यादा देखभाल की भी जरूरत नहीं। बहुत से भागों में शहतूत स्वाभाविक रूप से ही उग आते हैं। 4. इस उद्योग में बहुत ज्यादा पूंजी की जरूरत नहीं अतः जापानी किसान सदियों से सह-उद्यम के रूप में अपने खेतों में ही करते आये हैं। उन्हें परम्परागत कुशलता भी प्राप्त है। खेतों के बीच-बीच में ही छोटी-छोटी इकाइयों में कताई-बुनाई का कार्य भी होता है। 5. जापानी लोग अपनी नफासत के लिए प्रसिद्ध रहे हैं अतः विदेशों के अतिरिक्त देश में भी रेशमी वस्त्रों की मांग रही है। 6. कुल मिलाकर यह एक बड़ा कोमल और धैर्य-पूर्वक करने का व्यवसाय है जिसे कुशलता-पूर्वक करने में जापानी महिलाओं ने परम्परागत विशिष्टता प्राप्त कर ली है।

जापान का रेशमी वस्त्रोद्योग इस दृष्टि से अनोखा है कि इसका आधा सा कार्य खेतों में और आधा कारखानों में किया जाता है। कीड़ों को शहतूत की पत्तियों पर पालना, उन्हें बड़ा करना, कुकून विकसित करना, कुकून से धागा निकालना आदि सभी कार्य खेतों में किसान परिवारों द्वारा किये जाते हैं। अतः इस

व्यवसाय को अध्ययन की सरलता के लिए तीन स्तरों—कुकून उत्पादन, रेशमी धागे की कताई तथा रेशमी वस्त्रों की बुनाई पर देखा जा सकता है।

प्राकृतिक रेशम वस्तुतः उस लसलसे पदार्थ से बनता है जिसे 'बॉमोविजमू' नामक कीड़ा अपने मुँह से निकालता है। जापानी किसान लाखों की संख्या में इन कीड़ों को पालते हैं। प्रायः इन कीड़ों के नर और मादा के सैकड़ों जोड़े खरीदे जाते हैं और थोड़े ही दिनों में उन्हीं से लाखों कीड़े पैदा कर दिये जाते हैं। इनकी प्रजनन शक्ति बहुत ज्यादा होती है। एक बॉमोविजमू मादा एक बार में 500 अंडे देती है जो मूलतः एक पतली झिल्ली सी में लिपटे रहते हैं। उन्हें धोकर साफ किया जाता है। फिर इन्हें ऐसे स्थान पर, जहाँ तापक्रम लगभग 60–70 फै० हो, साफ जमीन, चटाई, छप्पर या विशिष्ट रूप से बनाए गए बाड़ों में रखा जाता है। शहतूत की ताजी-ताजी पत्तियाँ इन्हें खिलाई जाती हैं जिन्हें खा-खाकर ये कीड़े बड़े होते रहते हैं। इस दौरान ये अपनी खाल भी बदल देते हैं। औसतन एक पौण्ड अण्डों की वृद्धि के लिए लगभग 10 टन पत्तियों की आवश्यकता होती है। पत्तियाँ खाकर ये 1½ से 2 इंच तक लम्बे हो जाते हैं। इस स्थिति में आने पर प्रायः पत्तियाँ खाना छोड़ देते हैं। इनके मुँह से एक लसलसा पदार्थ निकलता रहता है जिसे ये अपने शरीर के चारों तरफ लपेटते रहते हैं। इस स्थिति में इन्हें कोये (कुकून) कहा जाता है। कुकून बढ़ते-बढ़ते एक मोटी सितार का रूप ले लेते हैं।

वैसे तो कुकून उत्पादन का कार्य साधारण स्तर पर बहुत ज्यादा सर्दी, गर्मी एवं वर्षा को छोड़कर प्रायः सभी मौसमों में किया जा सकता है परन्तु इस कार्य के लिए सर्वाधिक उपयुक्त एवं अनुकूल मौसम बसन्त का होता है। इस मौसम में दोहरा लाभ है। एक तो तापक्रम (64 फै०) कुकून के लिए उपयुक्त रहता है दूसरे इन्हीं दिनों शहतूत के वृक्षों में नई पत्तियाँ आती हैं। अतः रेशम व्यवसाय के लिए यह मौसम सर्वश्रेष्ठ है। औसतन 43% अण्डे एवं 50% कुकून उत्पादन इस मौसम में होता है। बसन्त के बाद दूसरा मौसम पतझड़ है जिसमें औसतन 54% अण्डे तथा 41% कुकून उत्पादित किये जाते हैं।

औद्योगिक क्षेत्र में इस व्यवसाय की शुरुआत रेशम के धागे निकालने से होती है। तैयार कुकूनों को गर्म पानी में डालकर भाप से कीड़ों को मार दिया जाता है। तत्पश्चात कुकून में लिपटे हुए रेशमी धागों को धीरे-धीरे निकाल कर जोड़ा जाता है। इस प्रकार लम्बे धागे तैयार किये जाते हैं। यह सारा कार्य हाथ से बड़ी सावधानी से करने का होता है। समय पर अगर कुकून को गर्म पानी के कड़ाहों में न डाला गया तो कीड़ों का लिपटे हुए रेशमी धागों को काटकर बाहर उड़ जाने का खतरा रहता है। कुकून से धागे निकालने और बँटने का सारा कार्य उन छोटी फैक्ट्रियों में होता है जिन्हें 'फिलेचर' कहते हैं। 90% की बँटाई छोटे और मध्यम आकार के फिलेचरों में होती है।

एक औसत आकार के फिलेचर में लगभग 100 उबालने वाले कड़ाह होते हैं जिसमें 120 व्यक्ति कार्य करते हैं। पिछले दशकों में फिलेचर्स के आकार बढ़ाने की प्रवृत्ति देखने में आई है। बहुत से फिलेचर्स वर्तमान में ऐसे हैं जिनमें कड़ाह 300 तथा संलग्न व्यक्ति 350 तक हैं। इनका प्रतिशत सीमित है। 5% से अधिक 250 कड़ाह वाले फिलेचर्स नहीं हैं। बड़े फिलेचर्स में धागे का स्तर गिर जाता है। फिलेचर्स में प्रायः नीचे की मंजिल में कड़ाह होते हैं और ऊपर की मंजिल में वातानुकूलित कमरे जिनमें कुकून्स रखे जाते हैं। इन कमरों में, हवाओं के झोंकों का प्रभाव नहीं हो, ऐसी व्यवस्था की जाती हैं। सस्ती जल-विद्युत होने से सभी फिलेचरों में कुकून्स के लिए उपयुक्त कृत्रिम तापक्रम रखना सम्भव हो गया है।

फिलेचर्स अधिकांशतः कुकून उत्पादक क्षेत्रों या दूसरे शब्दों में शहतूत क्षेत्रों में स्थित हैं। यह उचित भी है क्योंकि कुकून जैसी नाजुक वस्तु के परिवहन में इस बात की आशंका रहती है कि कहीं वे नष्ट न हो जायें। यही कारण है कि 40° उत्तरी अक्षांश के उत्तर में बहुत कम फिलेचर्स मिलते हैं। फिलेचर्स का सर्वाधिक केन्द्रीकरण मध्यवर्ती हांशू के पर्वतीय प्रीफैक्चर्स नगानो तथा गीफू, पश्चिम कांटो के गूमा एवं सेतामा प्रीफैक्चर्स, किंकी प्रदेश के शीगा एवं ओसाका प्रीफैक्चर्स में है। आइजे तथा आतुमे की झाड़ियों के बीच स्थित एची प्रीफैक्चर में भी अनेक फिलेचर्स केन्द्रित हैं।

रेशमी वस्त्रों की बुनाई का कार्य पूर्णतः औद्योगिक क्षेत्र का है जिसमें शुद्ध रेशमी धागों या सूती, ऊनी धागों के मिश्रण से वस्त्र बुने जाते हैं। प्रायः निर्यात किये जाने वाले रेशमी वस्त्र बड़ी मिलों में तैयार किये जाते हैं जबकि स्वदेशी उपयोग के वस्त्र हाथ-करघों या शक्ति-चालित करघों में बुने जाते हैं। वैसे आजकल सभी करघे शक्ति-चालित हो गये हैं। इन करघों में औसतन 4–5 व्यक्ति कार्य करते हैं। रेशमी एवं रैयान-रेशम के मिश्रित वस्त्रों की बुनाई के सबसे बड़े केन्द्र पश्चिमी कांटो (टोक्यो, नगोया) क्षेत्र तथा जापान सागर की ओर स्थित ईशीकावा, फूकुई-टोयामा प्रीफैक्चर्स में स्थित हैं। दक्षिणी तोहोकू के यामागाता तथा फूकूशीमा प्रीफैक्चर्स, जापान सागर तट का निगीता तथा किंकी मैदान के क्योटो एवं शीगा प्रीफैक्चर्स भी रेशमी वस्त्रों की बुनाई के लिए उल्लेखनीय है।

कृत्रिम वस्त्र उद्योग :

कृत्रिम वस्त्रों के उत्पादन में जापान सं० रा० अमेरिका के बाद विश्व में दूसरे स्थान पर है। देश के कुल वस्त्रोत्पादन का लगभग 40% भाग इस श्रेणी के वस्त्रों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। यहाँ जितने वस्त्र विदेशों को निर्यात किये जाते हैं उनमें एक-तिहाई भाग इन वस्त्रों का होता है। इन वस्त्रों में सर्वाधिक

महत्वपूर्ण (उत्पादन की दृष्टि से) रेयान या कृत्रिम रेशम है। प्राकृतिक रेशम होते हुए भी रेयान का विकास वस्तुतः व्यावसायिक प्रतिद्वन्दता के कारण हुआ है। जापान के रेशम वस्त्रोद्योग पर एकाधिपत्य एवं विश्व में रेशम की माँग ने पश्चिमी देशों को नकली रेशम बनाने को प्रोत्साहित किया। फ्रांस में दोरडान नामक व्यक्ति ने 1891 में कॅलोडोनियन द्रव से नकली रेशम के धागे प्राप्त किये। अमेरिका में लुग्दी से रेयान बनाई जाने लगी। परिणाम यह हुआ कि सस्ती नकली रेशम के सामने महँगी असली रेशम बाजार में न टिक सकी।

रेयान की बढ़ती माँग से प्रभावित होकर जापान ने भी 1919 में अपने यहाँ यह उद्योग विकसित किया। वनों के रूप में कच्चे माल थे ही। फलतः आश्चर्यजनक गति से प्रगति हुई और 1936 में जापान रेयान के उत्पादन में प्रथम हो गया। 1940 में रेयान का चरम उत्पादन 125 मिलियन कि० ग्राम था। युद्ध से इस व्यवसाय को भी भारी क्षति पहुँची परन्तु 1956 में उत्पादन 1935 के स्तर पर पहुँच गया। 1961 में उत्पादन 110 मि० कि० ग्राम था। इस प्रकार उत्पादन मात्रा युद्ध पूर्व की प्राप्त कर ली गई परन्तु विश्व प्रतिशत घट गया क्योंकि इस बीच संयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी, रूस आदि देशों ने इस क्षेत्र में काफी प्रगति कर ली है। आजकल जापान विश्व का लगभग 30% रेयान उत्पादित करके अमेरिका के बाद दूसरे स्थान पर है। परन्तु निर्यात की दृष्टि से अभी भी विश्व में प्रथम है। एशिया के गरीब लोग जो असली रेशम नहीं खरीद सकते रेयान से अपनी सन्तुष्टि करते हैं। जापान का अधिकतर रेयान इन्हीं देशों को निर्यात किया जाता है।

1981 में जापान ने 775 मिलियन वर्ग मीटर रेयान फेब्रिक्स तथा 3121 मि. वर्ग मीटर रेयान स्टैपिल-फेब्रिक्स तैयार किए।[36] कृत्रिम रेशम उत्पादक केन्द्रों को चार समूहों में रखा जा सकता है। ये हैं टोक्यो, ओसाका, क्योटो तथा कनाजावा क्षेत्र।

रसायन विधियों से तैयार किए गये वस्त्रों, नायलोन, टैरीलिन, एक्रीलिन आदि का जापान में बड़ी तेजी से विकास हुआ है। इनकी विकास गति तो वस्तुतः 'छलांग गति' सिद्ध हुई है। 1955 से लेकर 1960 के पाँच वर्षों में ही इन वस्त्रों का उत्पादन लगभग 7–8 गुना बढ़ गया है।[37] इनके लिए आवश्यक कच्चे माल (लुग्दी, रासायनिक पदार्थ) भी देश में प्राप्त है। यही कारण है कि इन वस्त्रों के उत्पादन में भी जापान यू. एस. ए. को छोड़ कर विश्व में सबसे आगे है। 1981

36. The statesman's year book 1984-85 P. 747.
37. Trewarth G.T.—Japan A Geography P. 284.

में इन कृत्रिम रेशों से बने वस्त्रों की उत्पादन–मात्रा 3121 मि. वर्ग मीटर थी। इनके अधिकांश कारखाने रासायन उद्योग केन्द्रों के निकट स्थापित किए गए हैं। इनके चार प्रमुख क्षेत्र हैं। प्रथम, भीतरी सागर के सीमावर्ती भाग द्वितीय, केइहांशिन तथा चुकयो औद्योगिक क्षेत्र तृतीय, उद्योग-पेटी के पूर्व में स्थित शिज़ूओका प्रीफेक्चर तथा चतुर्थ, कांटो का कानागावा प्रीफेक्चर।

ऊनी वस्त्रोद्योग :

अन्य प्राकृतिक रेशों के विपरीत ऊनी वस्त्रोद्योग विकासोन्मुख हैं। युद्ध पूर्व उत्पादन स्तर 1955 में ही प्राप्त कर लिया गया और तब से निरन्तर उत्पादन बढ़ रहा है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि युद्ध पूर्व वस्त्रोद्योग की यह शाखा अपेक्षाकृत कम विकसित थी। फिर स्वदेशी माँग भी बदल रही है क्योंकि लोग परम्परागत 'किमोनो' को छोड़कर पश्चिमी देशों जैसे वस्त्र पहनने लगे हैं। ऊनी वस्त्रोद्योग की स्थिति आज यह है कि वस्त्रोद्योगों में संलग्न कुल मजदूरों का 20% भाग इसमें संलग्न है। एशिया में जापान सर्वाधिक ऊनी वस्त्र तैयार करता है। यहाँ के वस्त्र भारत, फिलीप्पाइन, तैवान, बर्मा आदि देशों को निर्यात किए जाते हैं। इन दिनों जापानी टैरावूल (टैरीलिन तथा ऊन से मिश्रित) एवं टैरासिल्क (टैरीलिन तथा सिल्क से मिश्रित) ने एशियाई देशों में अपना स्थान बना लिया है। 1981 में यहाँ की मिलों ने 114,366 मै. टन ऊनी धागा एवं 290,654 मिलियन मीटर ऊनी वस्त्र तैयार किए।

जापान में ऊनी वस्त्रोद्योग का विकास तब और भी उल्लेखनीय हो जाता है जब यह मालूम पड़ता है कि यहाँ कच्ची ऊन बिल्कुल नहीं होती। सारी की सारी ऊन आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तथा स. रा. अमेरिका से मँगाई जाती है। यहाँ की आर्द्र जलवायु एवं सामाजिक परम्पराओं ने भेड़-बकरी पालन को हतोत्साहित किया है। अतः प्रारम्भ से ही (पहली मिल 1886) जापान को ऊन आयात करना पड़ा।

मशीन निर्माण उद्योग :

मशीनरी उद्योग जापान का सर्वाधिक तीव्र गति से विकसित होने वाला उद्योग है। इसके विकास की गति का अनुमान इससे लग सकता है कि अगर 1955 के उत्पादन को 100 प्रतिशत मान लिया जाय तो 1960 में उत्पादन 442.4% एवं 1981 में 2200% था। उत्पादन मूल्य की दृष्टि से यह 1955 में 18.7%, 1960 में 29%, 1981 में 44.2% (कुल राष्ट्रीय मूल्य का प्रतिशत) था। इतना उत्पादन मूल्य संभवतः किसी भी उद्योग समूहों का नहीं है। वस्तुतः मशीन निर्माण उद्योग एक समूह है जिसमें अनेक शाखाएँ है जैसे लोको, आटोमोबाइल्स, कृषि यन्त्र, एयर क्राफ्ट, जलयान निर्माण, विद्युत यन्त्र, वस्त्रोद्योग में प्रयुक्त मशीनें आदि। जलयान निर्माण में तो जापान कई दशकों से विकसित है और पिछले

15 वर्षों से विश्व में प्रथम है परन्तु मोटर, विद्युत यन्त्र एवं परिवहन उपकरणों के निर्माण में पिछले वर्षों में ही जापान ने छलांग गति से प्रगति की है। आज जापान दुनिया में सर्वाधिक कैमरा, मोटर साईकिल, जलयान तैयार करता है। विद्युत यन्त्रों के उत्पादन में दूसरा एवं मोटरों के उत्पादन में विश्व में चौथा स्थान है।

मशीन निर्माण उद्योग की विविध शाखाएँ बहुत ही बिखरे रूप में है। परन्तु यह बिखरापन है औद्योगिक पेटी के भीतर ही। इस पेटी से बाहर केवल तीन केन्द्र हैं—1. जापान सागर तट पर टोयामा-इशीकावा एवं निगीता 2. उत्तरी-पूर्वी कांटो में ईबाराकी प्रीफेक्चर 3. दक्षिणी-पश्चिमी कोने में नागासाकी/औद्योगिक पेटी में सर्वाधिक केन्द्रीकरण कांटो (41%) किकी (20%) एवं चुकयो (12.13%) के सघन औद्योगिक क्षेत्रों में हुआ है। इनके अतिरिक्त भीतरी सागर के सीमावर्ती क्षेत्रों, विशेषकर हिरोशिमा, ओकयामा प्रीफैक्चर्स (चूगोकू में) एवं फुकुओका प्रीफैक्चर (क्यूशू) में भी मशीन निर्माण उद्योग विकसित है। कुछ क्षेत्रों में विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है। यथा कांटो क्षेत्र विद्युत यन्त्रों के निर्माण में विशिष्टता लिए है। देश के 50% से अधिक विद्युत यन्त्र एवं मशीनें यहां तैयार की जाती हैं। इसी प्रकार सूक्ष्म यन्त्र का लगभग दो-तिहाई भाग अकेले कांटों क्षेत्र में उत्पादित होता है। मोटर कार निर्माण मुख्यतः तीन ही क्षेत्रों (कांटो, किंकी तथा चुकयो) में विद्यमान है। इसी प्रकार जलयान निर्माण उद्योग का अधिकांश उत्पादन नागासाकी, कूरे, हरिमा, कांटो (टोक्यो याकोहामा) किंकी (कोबे ओसाका) आदि क्षेत्रों से प्राप्त होता है।

1950–60 दशक में ही जापान जलयान निर्माण उद्योग में अपने प्रतिद्वन्दी देशों—ब्रिटेन, स्वीडन, यू. एस. ए. आदि को बहुत पीछे छोड़कर विश्व में नेतृत्व की स्थिति में आ चुका था। न केवल उत्पादन वरन् निर्यात में भी यह विश्व में अग्रणी है। 1981 में जापान के यार्डों में 8.3 मि. ग्रास टन भार के जलयान तैयार किए गए। यह उत्पादन निर्यात मात्रा विश्व में सर्वाधिक थी। आधुनिक जलयान निर्माण उद्योग का श्री गणेश जापान में पिछली शताब्दी के अंतिम दशक में हो चुका था। प्रथम जलयान नागासाकी के यार्ड से 1895 में बनकर निकला। इस क्षेत्र (नागासाकी) में स्थापना के पीछे प्रधान कारणों में उत्तरी क्यूशू की लोह की खानें, निकटवर्ती कोयला, स्थानीय इस्पात उद्योगों की निकटता व सुन्दर पोताश्रय आदि उल्लेखनीय हैं।

जापान : मशीनरी उत्पादन

वस्तु	1965	1970	1975	1981
जलयान (संख्या)	1785	2,103	1527	1376
जलयान (टन भार) 1000	5,527	10,172	15,227	8,306

ट्रक (मिलियन)	1.1	2.0	2.3	4.1
कार (1000)	696	3,178	4,567	6,974
मोटर साईकिल (मिलि.)	2.2	2.9	3.8	7.4
टी. वी. सैट (मिलि.)	4 1	13.7	12.4	15.9
फ्रिज (मिलि.)	2.3	2.6	3.4	4.2
वाशिंग मशीन (मिलि.)	2.2	4.3	3.1	4.7
क्लॉक, घड़ियाँ	27.1	49.6	56 8	156.3

प्रारम्भ से ही जलयान निर्माण उद्योगों की प्रगति की दर बहुत तीव्र रही। अपने प्रारम्भिक 20 वर्षों में यानी प्रथम विश्व युद्ध तक आते-आते यह स. रा. अमेरिका एवं ब्रिटेन के बाद दुनिया में तीसरे स्थान पर हो गया था। द्वितीय विश्व युद्ध में जापानी याडों का भारी विध्वंस हुआ परन्तु पुनर्संगठन की तीव्र गति के फलस्वरूप 1956 में ही अमेरिका को पीछे छोड़ यह देश प्रथम स्थान पर आ गया। वस्तुतः कुछ आधारभूत ऐसी प्राकृतिक एवं मानवीय परिस्थितियाँ हैं जिन्होंने सदा इस व्यवसाय के विकास में सहयोग किया है। ये हैं—1. जापानी तट भाग अत्यन्त कटे-फटे हैं जिन्होंने न केवल प्राकृतिक बन्दरगाह प्रस्तुत किए हैं वरन सुरक्षित और शांत पोताश्रय भी जिनमें शिपयार्डों के विकास के लिए आदर्श स्थितियाँ हैं। 2. द्वीपीय स्थिति होने के कारण जापानी लोगों को प्रारम्भ से समुद्री रास्ता अपनाना पड़ा है। इससे वे निडर और कुशल नाविक हैं। 3. खाद्य समस्या एवं मछलियों का महत्व जापान में सदा से ही रहा है। मत्स्याखेट के विविध आकारों के जलयानों—ड्रिफ्टर्स, ट्राउलर्स, फ्लोटिंग फैक्ट्रीज आदि की आवश्यकता पड़ती है। 4. स्वदेशी वनों से पर्याप्त टिम्बर मिल जाती है। 5. देश में लौह-इस्पात उद्योग पर्याप्त स्तर तक विकसित है अतः चद्दरों, टिनों, इस्पात-शीटों की कोई समस्या नहीं। 6. जैसे-जैसे यातायात बढ रहा है, दुनिया सिकुड़ती जा रही है वैसे-वैसे यात्री वाहकों, तेल वाहकों तथा यौद्धिक जलयानों की मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है। 7. जापान जैसे देश, जिसका आर्थिक ढांचा ही उद्योग एवं व्यापार पर निर्भर है, के लिए आवश्यक है कि उसका व्यापारिक जहाजी बेड़ा पर्याप्त विकसित हो ताकि कच्चे मालों के आयात एवं तैयार औद्योगिक उत्पादनों के निर्यात में दुर्लभ विदेशी मुद्रा न खोनी पड़े। अगर यह बेड़ा देश में ही बना हो तो बहुत सी विदेशी मुद्रा बचाई जा सकती है। व्यापारी मस्तिष्क के जापानियों ने इस बात को सदा ध्यान में रखा है। यही कारण है कि आज इस छोटे से देश का जहाजी बेड़ा 20 मि. टन भार का है। विश्व में इसका तीसरा स्थान है।

जापानी यार्डों में सभी प्रकार के यथा—यात्री-वाहक, तेल-वाहक, सामान-वाहक, यौद्धिक तथा मत्स्याखट में उपयोगी जलयान तैयार किए जाते हैं। यहाँ के कुछ उत्पादन तो विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय हैं। जैसे 'टोक्यो मारू' जो विश्व का सबसे बड़ा तेल-वाहक जलयान है। 1,50.000 टन का यह यान 307 मीटर लम्बा 47 मीटर चौड़ा एवं 24 मीटर ऊँचा है। इसी प्रकार 'साकुरा मारू' जिसमें अपने औद्योगिक उत्पादनों को सजाकर जापान ने विश्व के सभी बंदरगाहों में होकर गुजरने वाली एक गतिशील प्रदर्शनी का आयोजन किया, भी उल्लेखनीय जलयान है।[38] इस स्थान पर यह लिखना भी असंगत नहीं है कि 1964 में भारत ने जापान से 708.65 फीट लम्बा एक तेल-वाहक जलयान (2½ करोड़ रुपया में) खरीदा। हिरोशिमा की 'शिपिंग एण्ड इन्जीनियरिंग कम्पनी' द्वारा निर्मित इस तेल-वाहक का नाम भारत में 'लाजपतराय' रखा गया। जापान में 1000 से अधिक शिपयार्ड हैं जिनमें से 30 बहुत बड़े हैं।

रसायन उद्योग :

युद्धोत्तर दिनों में जापानी रसायन उद्योग का तेजी से विकास हुआ। यद्यपि गति उतनी तीव्र नहीं थी जितनी मशीनरी उद्योग की। अगर 1955 के उत्पादन को 100% माना जाए तो 1961 में यह 229.5% एवं 1962 में 259% था। वस्तुतः रसायन उद्योग जापान में नया ही है। चूँकि यह एक बहु-स्वरूपी उद्योग है जिसके उत्पादनों की आवश्यकता न केवल जीवन के हर क्षेत्र में वरन् विविध उद्योगों में भी होती है, अतः वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में, विशेषकर प्रथम युद्ध के बाद, बड़े पैमाने पर इसकी शुरुआत की गई। द्वितीय विश्व युद्ध तक इसकी अनेक शाखाएँ जैसे तेजाब, गंधक, एमोनिया नाइट्रेट, शोरा, कैलशियम कार्बाइड, ब्लीचिंग पाउडर, दवाइयाँ, फोटो सामान, तेजाब तथा विस्फोटक पदार्थ-निर्माण आदि पर्याप्त विकसित हो गईं। यौद्धिक आवश्यकताओं ने युद्ध के दौरान भी इसकी प्रगति में सहयोग दिया। युद्धोत्तर दिनों में कुछ नई शाखाओं का विकास हुआ जिनमें विद्युत-रसायन, पैट्रो-रसायन, काँच, प्लास्टिक्स आदि उल्लेखनीय हैं।

पिछले कुछ वर्षों से रसायन उद्योगों में एक परिवर्तन की प्रवृत्ति देखने में आ रही है कि यहाँ क्रमशः अकार्बनिक उत्पादनों के बजाय कार्बनिक उत्पादनों पर ज्यादा जोर दिया जाने लगा है। यथा, अकार्बनिक उर्वरक जिनके उत्पादन पर युद्धोत्तर वर्षों में ज्यादा ध्यान दिया गया था, अब कम होते जा रहे हैं, उनके स्थान पर पैट्रो कैमीकल्स, सिंथैटिक रेजीन्स तथा सिंथैटिक कार्बनिक रसायनों का महत्व बढ़ता जा रहा है। इस प्रवृत्ति का परिणाम यह था कि 1960 में उक्त तीनों शाखाओं ने ही कुल रसायन उत्पादनों का लगभग 55% भाग प्रस्तुत किया।

38. Source—Facts about Japan 1969.

जापान में पैट्रोल बिल्कुल भी पैदा नहीं होता परन्तु उसकी तेल-शोधन क्षमता स. रा. अमेरिका एवं सोवियत संघ के बाद दुनिया में तीसरे नम्बर का है। ज्यादातर (90-95%) तेलशोधक कारखाने देश के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में प्रशांत तट पर विद्यमान हैं। इन्हीं के सहारे-सहारे पैट्रो-कैमीकल प्लांटस लगाए गए है। रासायनिक उद्योगों की नवीनतम एवं महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में पैट्रो-कैमीकल उद्योग का श्रीगणेश जापान में 1957 में किया गया। 1960 के प्रारम्भ में दो विशाल पैट्रो-कैमीकल एवं तेलशोधक कारखाने योक्केची (चुकयो) तथा कावासाकी (कांटो) में स्थापित किए गए और अगले वर्ष यानी 1961 के अन्त तक छोटे-बड़े सभी आकारों के पैट्रो-कैमीकल प्लांटस की संख्या 24 थी। ये सभी नए थे, पर्याप्त बड़ी साइज के थे। इनकी स्थापना समुद्री तटों पर नई प्राप्त की गई जमीनों पर की गई थी। प्रगति एवं विस्तार की इस गति का उदाहरण दुनिया के दूसरे भागों में नहीं मिलता।

उत्पादन मूल्य की दृष्टि से रसायन उद्योग का स्थान मशीनरी तथा धातु उद्योग के पश्चात् तीसरे स्थान पर है। उत्पादन निम्न प्रकार हैं :

जापान : रसायन उद्योग उत्पादन
(टनों में)

उत्पादन	मात्रा
सल्फरिक एसिड	6,572,000
कॉस्टिक सोडा	2,786,000
एमोनियम सल्फेट	1,620,000
कैल्शियम सुपर फॉस्फेट	512,000

रासायनिक कारखाने उद्योग पेटी के भू-क्षेत्रों की तटवर्ती पट्टियों में बिखरे रूप में स्थित हैं। सर्वाधिक केन्द्रीकरण तीन क्षेत्रों—कांटो (23 8%) किंकी (20.4%) एवं चुकयो (10.5%) में हुआ है। अन्य केन्द्रों में निगीता-टोयामा (जापान सागर तट) ओकायामा-हिरोशिमा-यामागुची (भीतरी सागर के उत्तरी तटवर्ती) एथीम (उत्तरी शिकोकू) फुकुओका (उत्तरी क्यूशू) तथा नोबिओका (पूर्वी क्यूशू) उल्लेखनीय है।

कागज उद्योग :

भूकम्पों के इस देश में कागज का निर्माण ऐतिहासिक समय से होता रहा है। लोग शहतून की छाल, समुद्री घास, बांस, धान के छिलकों, कोडो तथा कागो झाड़ियों से मोटा कागज बनाकर अपने घरों में लगाते थे ताकि भूकम्प का ज्यादा प्रभाव न हो। वैसे भी जापान में जूट या चमड़ा होता नहीं अतः बोरियों के स्थान पर भी कागज के थैलों का उपयोग होता रहा है। सदियों से विभिन्न प्रकार के

कलात्मक कागज तैयार किये जाते रहे हैं। इस प्रकार इसमें यहाँ के निवासियों को कुशलता प्राप्त थी। फिर प्राकृतिक परिस्थितियों ने भी सहयोग किया। परिणाम यह हुआ कि इस उद्योग का विकास आधुनिक स्तर पर भी हुआ। लगभग दो-तिहाई भू-क्षेत्र में फैले वन, सस्ती जल-विद्युत नदियों का स्वच्छ जल, विशाल देशी मांग, विकसित रसायन उद्योग से विविध रसायनों की सुविधा आदि तत्वों का जापान के कागज उद्योग में प्रेरणात्मक सहयोग रहा है।

युद्ध पूर्व समय में ही जापानी कागज उद्योग इतना विकसित हो गया था कि स्वदेशी मिश्रित एवं कोणधारी वनों (होंशू तथा होकेडो) से प्राप्त लकड़ी एवं लुग्दी अपर्याप्त रहती थी। अतः सं० रा० अमेरिका और कनाडा से आयात की जाती थी। अन्य उद्योगों की तरह इसे भी युद्ध में क्षति पहुँची परन्तु बाद में यह काफी प्रगति कर गया। 1981 में यहाँ सब प्रकार के कागजों का उत्पादन 9.9 मिलियन टन था। इन वर्ष कार्डबोर्ड का उत्पादन 7 मिलियन टन था। कागज के अधिकतर कारखाने मध्य होंशू, उत्तरी होंशू एवं होकेडो में पर्वतीय प्रदेशों के सीमावर्ती क्षेत्रों में जल-विद्युत-गृहों के नजदीक स्थित हैं।

1980 के उत्तरार्द्ध से कागज की उत्पादन एवं निर्यात मात्रा में कमी आई है जिसका कारण बाजारी मन्दी है। इस मंदी का ही परिणाम है कि 1981 में 1980 की तुलना में 94.4% उत्पादन तथा 97.8% निर्यात हुआ। यह प्रवृत्ति उत्पादन एवं निर्यात के आँकड़ों से सुस्पष्ट है।

कागज-लुग्दी का उत्पादन एवं निर्यात[39]
(1000 टनों में)

वर्ष	कागज	न्यूज प्रिंट	पेपर बोर्ड	लुग्दी	निर्यात
1960	2,868	1732	1,645	3,532	190
1965	4,219	1,184	3,079	5,164	237
1970	7,135	1,918	5,838	8,801	520
1975	7,711	2,160	5,890	8,630	805
1979	9,981	2,566	7,880	9,993	771
1980	10,536	2,674	7,552	9,788	863
1981	9,943	2,575	7,037	8,612	788

सीमेंट उद्योग :

1981 में जापान का सीमेंट उत्पादन 84.4 मिलियन टन था। उत्पादन की तीव्र गति का अनुमान 1939 (6.2 मि. टन) 1956 (13 मि. टन) तथा 1965 (33 मि. टन) के उत्पादन आँकड़ों से भली-भाँति लग सकता है। देश का

39. Statistical Hand book of Japan 1983 P. 57.

प्रथम सीमेन्ट का कारखाना टोकियो के निकट फूकागावा नामक स्थान पर खोला गया था। दोनों युद्धों के अन्तराल में औद्योगिक विकास के साथ-साथ सीमेंट की मांग भी बढ़ी। 1936 में इसके कारखाने 46 हो गये जिनका उत्पादन 5 मिलियन टन था। युद्ध के प्रभाव के कारण युद्ध-पूर्व स्तर (1939 में 6.2 मिलियन टन) तक 1953 में ही पहुँचा जा सका। बाद में पुनरुत्थान के साथ-साथ इस उद्योग का विकास भी तीव्र गति से हुआ। इस उद्योग से सम्बन्धित प्रोत्साहक तत्वों में मांग, स्वदेशी खानों से प्राप्त जिप्सम, चूने का पत्थर, कोयला, पानी तथा सस्ती विद्युत आदि उल्लेखनीय हैं। देश के सारे सीमेंट के कारखाने 16 संगठनों में संगठित है जिनमें 'याकोहामा' समूह सबसे बड़ा एवं महत्वपूर्ण है। ज्यादातर कारखाने दक्षिणी होकेडो में स्थित हैं। यह अकेला क्षेत्र जापान का लगभग 50% सीमेन्ट प्रस्तुत करता है। अन्य क्षेत्रों में याकोहामा, ओसाका तथा उत्तरी क्यूशू उल्लेखनीय हैं।

जापान के प्रधान औद्योगिक प्रदेश :

जापान के विविध उद्योग केन्द्रों को निम्न आठ प्रदेशों म समूह-बद्ध किया जा सकता है। ये हैं—

1. उत्तरी क्यूशू या नागासाकी-मोजी प्रदेश।
2. ओसाका-क्योटो-कोबे प्रदेश (किंकी)।
3. टोक्यो-याकोहामा प्रदेश (क्वांटो)।
4. नगोया प्रदेश (चुक्यो)।
5. कामैशी-सैण्डाई प्रदेश।
6. निगाता प्रदेश।
7. ईसीकावा-फूकुई प्रदेश।
8. दक्षिणी होकेडो-मोरांरा प्रदेश।

इनमें से प्रथम चार जापान की सुप्रसिद्ध औद्योगिक पेटी में विद्यमान है। अन्तिम चार पेटी से बाहर हैं। इन सभी प्रदेशों में प्रचलित उद्योग, प्रधान उद्योग केन्द्र, विकास की परिस्थितियाँ एवं स्वरूप के बारे में 'उद्योगों का वितरण' 'औद्योगिक पेटी' 'लौह-इस्पात उद्योग' एवं 'वस्त्र उद्योग' आदि उप-शीर्षकों में पर्याप्त लिखा जा चुका है। अतः अब औद्योगिक नगरों या विविध उद्योगों के नाम गिनाना दोहराना मात्र होगा।

□□□

जापान : यातायात एवं विदेश व्यापार

प्रतिकूल धरातलीय अवस्थाओं के बावजूद जापान में थल यातायात का समुचित विकास हुआ है। जल-यातायात में तो प्रकृति का सहयोग भी रहा है अतः तटीय एवं समुद्री यातायात दोनों ही अत्यन्त विकसित अवस्था में है। देश के मध्य भाग में पर्वतीय स्वरूप होने के कारण अधिकांश थल-यातायात तटवर्ती पट्टी में है। स्वदेशी यातायात का आधे से अधिक भाग रेल एवं सड़कों द्वारा सम्पादित किया जाता है। संक्षेप में, जापान के यातायात के वर्तमान स्वरूप को निर्धारित करने में कुछ मूलभूत तत्वों का प्रभाव रहा है जैसे—जापान की द्वीपीय स्थिति, अधिकांश धरातल की पर्वतीय प्रकृति एवं मैदानों का अभाव, प्रमुख नगरों की तटवर्ती स्थिति, 90% से अधिक जनसंख्या का तटवर्ती भागों में जमाव एवं तट के सहारे-सहारे सँकरी पट्टी के रूप में समतल भाग। इन सबने मिलकर तटवर्ती जल-यातायात एवं तटों के सहारे-सहारे रेल तथा सड़कों के रेखात्मक पैटर्न को जन्म दिया है। दूसरे, सभी प्रकार के यातायात के साधनों के विकास, देखभाल एवं नियन्त्रण में सरकार का भारी हिस्सा रहा है।

रेल मार्ग :

जापान में रेलों के दो वर्ग हैं। प्रथम, राष्ट्रीय रेल मार्ग जिनकी लम्बाई 21,419 कि. मी. है। ये रेल मार्ग सरकार द्वारा संचालित हैं। दूसरे, निजी रेल-मार्ग जिनकी लम्बाई 5,594 कि. मी. है। निजी रेल मार्ग मुख्यतः बड़े नगरों के उप-नगरों व पर्यटक केन्द्रों को जोड़ते हुए बनाये गये हैं। जापान के अधिकांश रेल मार्ग 3 फीट 6 इंच चौड़े है। वस्तुतः देश के धरातलीय स्वरूप को ध्यान में रखते हुए सँकरे रेल मार्ग बनाना ही आर्थिक एवं उपयोगी समझा गया था। निस्सन्देह इनकी गति एवं माल वाहन क्षमता अपेक्षाकृत कम है। लगभग 3,000 कि. मी. (राष्ट्रीय रेल मार्गों के 15%) रेल मार्ग दोहरे हैं। इनमें से अधिकांश प्रशांत तटीय भागों में है। टोकेडो एवं सैनयो रेल मार्ग जो टोकयो को उत्तरी क्यूशू से जोड़ते हैं अपनी समस्त लम्बाई में दोहरे कर दिये गये हैं। रेलों का विद्युतीकरण बड़ी तेजी से किया जा रहा है। 1981 तक 13,358 कि. मी. रेल मार्गों का विद्युतीकरण किया जा चुका था। टोकेडो एवं सैनयो मार्गों का विद्युतीकरण किया जा चुका है।

आर्थिक विकास के अन्य अंगों की तरह रेलों का विकास भी मेजी पुनरोत्थान के बाद ही हुआ। 1869 में टोक्यो, याकोहामा, कोबे एवं त्सरूगा (फ्यूको प्रीफेक्चर) आदि नगरों को जोड़ते हुए रेल निकालने की योजना बनाई गई। इन लाइनों को बिछाने में ब्रिटिश फर्म एवं इंजीनियर्स की सहायता ली गई। 1872 में टोक्यो-याकोहामा (18 मील), 1874 में कोबे-ओसाका (20 मील) तथा 1889 टोकेडो रेल मार्ग (टोक्यो से कोबे तक का हिस्सा–380 मील) बनकर तैयार हुआ। इन्हीं दिनों होकैडो में भी 55 मील लम्बी लाइन बिछाई गई। 1892 में सरकार ने रेल निर्माण अधिनियम बनाया जिसके अन्तर्गत 6350 मील लम्बे रेल मार्ग बिछाने का लक्ष्य रखा गया। 1907 के बाद रेल निर्माण कार्य तेजी से चला। 1947 तक 18,600 मील लम्बे रेल मार्ग बन चुके थे।

टोकेडो रेल मार्ग, जो कांटो, चुकयो तथा केइहांशिन के औद्योगिक क्षेत्रों को जोड़ता है, देश का सर्वाधिक महत्वपूर्ण रेल-मार्ग है। देश की 43% (40 मिलियन) जनसंख्या इन मार्गों द्वारा सेवित प्रदेश में बसी है। देश का 70% औद्योगिक उत्पादन इस मार्ग के द्वारा सेवित औद्योगिक प्रदेशों से निकलता है। इस मार्ग की लम्बाई केवल 590 कि. मी. है परन्तु जापान के कुल माल वहन के लगभग एक चौथाई भाग के लिए उत्तरदायी है। इसकी मुख्य लाइन टोक्यो से कोबे और वहाँ से सैन्योलाइन द्वारा सिमोनोसेकी तक गई है। सिमोनोसेकी से एक सुरंग द्वारा यह लाइन फिर क्यूशू तक चली गई है। जहाँ मोजी आदि औद्योगिक केन्द्रों को जोड़ती हुई क्यूशू के दक्षिणी भागों तक चली गई है। सैन्यो रेल मार्ग भीतरी सागर के तटवर्ती भागों में घने बसे क्षेत्रों को जोड़ता हुआ चलता है। अन्य रेल-मार्गों में मुख्य हैं—1. कांटो से पूर्वी तोहाकू होकर उत्तरी भागों तक, 2. कांटो से होकूरिकू (जापान सागर तट) जो प्रशांत तटीय क्षेत्रों—कांटो, चुकयो तथा हांशिन को जापान सागरीय तट भागों से जोड़ता है।

अगर केवल राष्ट्रीय रेल मार्गों को ही विचाराधीन रखा जाये तो जापान में प्रति 100 वर्ग कि. मी. भू-क्षेत्र के पीछे रेल लाइन की लम्बाई 5.5 कि. मी. बैठती है। यह औसत एक पहाड़ी देश की दृष्टि से तो पर्याप्त है परन्तु यूरोप के औद्योगिक देशों की तुलना में बहुत कम है। हाँ, इटली के लगभग बराबर है परन्तु एशिया के देशों से ज्यादा है। सभी रेल मार्ग तट के सहारे-सहारे हैं।

सड़कें :

रेल मार्ग या जल यातायात की तुलना में जापान का सड़क-यातायात अपेक्षाकृत कम विकसित है। धरातल की प्रकृति इसमें मुख्य बाधा है। यही कारण है कि सड़कें कम चौड़ी हैं। केवल 22% सड़कें ही ऐसी है जिनकी चौड़ाई 7.5 मीटर है। केवल एक-तिहाई सड़कें सीमेंट की है। प्रान्तीय सड़कों में तो यह

प्रतिशत केवल 10 ही पड़ता है। अधिकतर पक्की सड़कें दक्षिणी-पश्चिमी एवं मध्यवर्ती जापान के प्रशांत तटीय भागों में स्थित हैं। होकेडो में केवल 400-500 कि० मी० एवं तोहोकू में 1200 कि० मी० के लगभग पक्की सड़कें हैं। सर्वाधिक केन्द्रीकरण कांटो, किकी तथा टोकाई के मैट्रोपोलिटन क्षेत्रों में हुआ है।

यद्यपि साधारण एवं अविकसित प्रकार की कच्ची सड़कें तो पहले भी थीं परन्तु व्यवस्थित रूप में योजनाबद्ध सड़कों का इतिहास तोकूगावा युग (1603-1867) से प्रारम्भ होता है जब टोक्यो को अन्य नगरों से जोड़ने के लिए पांच सड़कें बनाई गईं। ये थीं—1. टोकेडो हाइवे (टोक्यो से क्योटो लम्बाई 310 मील), 2. नाकासैडो हाइवे (टोक्यो से क्योटो 324 मील, भीतरी भागों में होकर), 3. निकोकैण्डो हाइवे (टोक्यो से निको, 89 मील), 4. ऊगूकैडो (टोक्यो से आमोरी 465 मील) एवं कोशुकैडो (टोक्यो से शिमोशुवा 132 मील)।

वस्तुतः आधुनिक सड़कों का निर्माण कार्य भी अपेक्षाकृत देरी से हुआ। धरातल की प्रतिकूलता के कारण सड़क निर्माण कार्य महँगा पड़ता था, दूसरे, सरकार ने पहले रेल मार्गों के विकास पर ध्यान केन्द्रित किया था। इसीलिए वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों तक भी सड़कों की अवस्था बड़ी सोचनीय थी। 1939 तक देश में केवल 5,340 मील लम्बी सड़कें थीं। द्वितीय विश्व युद्ध में मित्र राष्ट्रों की सेनाओं द्वारा प्रयोग किये जाने एवं उचित देखभाल की कमी के कारण सड़कों की दशा और भी खराब हो गई। युद्धोत्तर दिनों में सड़कों का अभाव जापान के पुनःसँगठन एवं पुनर्विकास में बड़ी बाधा प्रस्तुत कर सकता था अतः जापान में स्थित मित्र राष्ट्रों के सुप्रीम कमाण्डर ने 27 नवम्बर 1948 को जापानी सरकार को एक आदेश दिया जिसके अन्तर्गत जापान सरकार को सड़कों के विकास, देखभाल एवं विस्तार के लिए एक पंचवर्षीय योजना बनानी थी। सं. रा. अमेरिका ने सड़क निर्माण सम्बन्धी अनेक मशीनें तथा सामग्री (मुख्यतः एस्फाल्ट एवं सीमेन्ट) जापान को सहायता स्वरूप दीं।

युद्धोत्तर दिनों में (1947) सब प्रकार की सड़कों की लम्बाई 6,64,000 कि. मी. जिसमें राष्ट्रीय महत्व की सड़कें 6,000 कि. मी., प्रान्तीय महत्व की 71,000 कि. मी., म्युनिसिपल सड़कें 51,000 कि. मी. तथा ग्राम-कस्बों की सड़कें 5,36,000 कि. मी. थी। इनमें से बहुत कम ही प्रयोग लायक थीं। वर्तमान में (1981) सब प्रकार की सड़कों की लम्बाई 1,118,008 कि. मी. है। इनमें से राष्ट्रीय सड़कें 40,381 कि. मी. लम्बी हैं। भारत की तरह जापान में भी महत्व की दृष्टि से सड़कों का चार भागों में विभाजन किया गया है :

1. राष्ट्रीय महत्व की सड़कें जिन्हें 'कोकूडो' कहा जाता है।
2. प्रान्तीय महत्व की सड़कें जिन्हें 'पयूकेडो' कहा जाता है।

3. म्युनिसपिल सड़कें जिन्हें 'शिडो' कहा जाता है।
4. कस्बे तथा ग्रामों की सड़कें जिन्हें 'चोशोण्डो' कहा जाता है।

जल यातायात :

विश्व में जापान के बराबर स्वदेशी यातायात के लिए कोई भी देश तटवर्ती समुद्रों का प्रयोग नहीं करता। इस देश की लम्बाकार द्वीपीय स्थिति, कटे-फटे तट, भीतरी भागों तक घुसी हुई खाड़ियाँ, भीतरी सागर एवं औद्योगिक व घने बसे क्षेत्रों का तटवर्ती पट्टी में स्थित होना—इन तत्वों ने जापान के देशी जल यातायात को प्रोत्साहित किया है। भीतरी जल यातायात धरातल की प्रकृति एवं नदियों के छोटे, तीव्रगामी तथा झरनेयुक्त होने के कारण नहीं के बराबर है। यहाँ रेल या बसों द्वारा मुख्यतः यात्री ही आते जाते हैं वरना सामान एक स्थान से दूसरे स्थान को स्टीमर्स व जहाजों द्वारा ही भेजा-जाता है। यही कारण है कि जापान का जितना समुद्री व्यापार विदेशों से होता है उससे लगभग दूना तटवर्ती देशी व्यापार होता है। भीतरी सागर क्षेत्र, जिसके पूर्वी सिरे पर केइहाँसिन एव पश्चिमी सिरे पर कीटा क्यूशू औद्योगिक क्षेत्र एवं उत्तरी क्यूशू के कोयला क्षेत्र विद्यमान हैं, इस प्रकार के तटवर्ती यातायात का सर्वाधिक क्रियाशील भाग है।

छोटी-छोटी नावों एवं स्टीमरों द्वारा तो पिछली शताब्दी के अन्तिम दशकों में भी माल-वाहन जापानी तट भागों में प्रचलित था। परन्तु आधुनिक जहाजी बेड़े का विकास प्रथम विश्व युद्ध के बाद ही हुआ। औद्योगिक विकास के साथ-साथ इसकी विकास गति भी इतनी तीव्र थी कि 1930 तक आते-आते बेड़े के भार तथा माल-वाहन क्षमता की दृष्टि से यह दुनिया में तीसरे स्थान पर (ब्रिटेन और अमेरिका के बाद) हो गया। द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व 1940 में जापानी जहाजी बेड़े में 6,900,000 ग्रोस टन भार के जलयान थे। इनका 20% भाग तटवर्ती व्यापार में संलग्न था। युद्ध में जहाजी बेड़े को भारी क्षति पहुँची। युद्ध के वर्षों के दौरान मित्र राष्ट्रों ने जापान के सैकड़ों जलयान बर्बाद किये। युद्धोत्तर दिनों में मरम्मत के बावजूद केवल 4 मि. टन भार के जलयान उपयोग के लायक थे। 1954 में जाकर जापान युद्ध-पूर्व की स्थिति पर पहुँचा। वर्तमान (1982) में जापानी जहाजी बेड़े में 34 मि. टन भार के 8,744 (100 ग्रोस टन से ज्यादा) माल एवं यात्री-वाहक जहाज तथा 16.7 मि. ग्रोस टन भार के 1,613 तेल वाहक जलयान हैं। इनके अतिरिक्त तटवर्ती सेवा में लगे हजारों छोटे जलयान व स्टीमर्स हैं। पिछले दो दशकों में न केवल जहाजी बेड़े के आकार में वृद्धि हुई है वरन् क्षमता, प्रकार एवं 'क्वालिटी' की दृष्टि से भी भारी संशोधन हुए है। यथा, पूरे जहाजी बेड़े में लगभग 75% ऐसे जलयान हैं जिनकी उम्र 10 वर्ष से ज्यादा नहीं है। गति एवं क्षमता में भारी विकास हुआ है। अणु-संचालित जलयान भी बेड़े में शामिल किये जा चुके हैं। वस्तुतः इतना विकास

इसलिए सम्भव हो सका क्योंकि जापान स्वयं विश्व में जलयान निर्माण के क्षेत्र में अग्रणी है।

निम्न सारणी से जापान के जहाजी बेड़े में पिछले 15 वर्षों में हुए विकास पर प्रकाश पड़ता है।

जापान : समुद्री बेड़ा (व्यापारिक)

[1000 ग्रो. र. टन

वर्ष	यात्री-माल वाहक जलयान		टैंकर्स	
	संख्या	ग्रोस टन	संख्या	ग्रोस टन
1965	738	6,099	138	4,217
1970	1,074	13,276	188	9,312
1975	826	15,901	261	17,646
1979	836	16,911	229	16,810
1980	832	17,306	247	16,843
1981	822	17,522	257	16,986

द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले समस्त व्यापारिक जहाजी बेड़ा निजी क्षेत्र में था। 1937 में सरकार ने एक कानून बनाया जिसके अनुसार जहाजों का निर्माण, खरीद, बिक्री तथा दरें आदि सब परिवहन मंत्रालय से नियन्त्रित हो गए। प्रारम्भ में तो मंत्रालय केवल देखभाल ही करता था परन्तु युद्ध छिड़ जाने पर 1942 में मालिकों को थोड़ा मुआवजा देकर सारे जलयानों पर सरकार ने अधिकार कर लिया। इनके संचालन के लिए एक 'जल-यातायात नियंत्रण परिषद्' का गठन किया गया। युद्ध की समाप्ति पर परिषद् भंग कर दी गई और समस्त बेड़ा अमेरिका के नौ-सेना के अधीन कर दिया गया। कुछ वर्षों बाद (1949) केवल बड़े यानों को छोड़कर सभी पर से सेना का नियन्त्रण हट गया।

वायु यातायात :

वायु यातायात के क्षेत्र में जापान यूरोपियन देशों की तुलना में कुछ देर से आया। प्रथम विश्व युद्ध तक यहाँ के वायुयान केवल सैनिक उपयोग (जर्मनी के विरुद्ध) में आते थे। 1922 में पहली नियमित विमान सेवा शिकोकू तथा सकाई (ओसाका के पास) के बीच प्रारम्भ हुई। 1923 में छोटे-छोटे वायुयानों ने टोक्यो तथा ओसाका के बीच उड़ानें प्रारम्भ की। इसी वर्ष के जुलाई माह में 'जापान एरियल नेवीगेशन कम्पनी' ने ओसाका तथा क्यूशू द्वीप के नगरों के बीच उड़ानें प्रारम्भ की। 1925 में टोक्यो तथा ओसाका के बीच डाक भी वायु से जाने लगी। 1969 में जापान एअर ट्रांसपोर्ट कम्पनी की स्थापना हुई जिसने देश के समस्त बड़े

नगरों को नियमित विमान सेवा से जोड़ दिया। 1938 में यातायात के अन्य साधनों की तरह निजी वायुयान सेवाओं पर भी सरकारी नियंत्रण हो गया और समस्त कम्पनियों को संगठित कर 'जापान एअरवेज कम्पनी' का संगठन किया। द्वितीय विश्व युद्ध में इस कम्पनी ने भारी परिवहन किया परन्तु युद्ध समाप्ति पर 1945 में यह भंग कर दी गई। बाद में यह 'जापान एअर लाइन्स' के नाम से संगठित हुई। इस समय जापानी विमान दुनिया के सभी भागों में जाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मार्गों पर जापान एअर लाइन्स अन्य 16 विमान कम्पनियों के समझौते में वायुयान चलाती है। इसके प्रमुख मार्ग टोक्यो-होनोलूलू-सैन फ्रांसिस्को-लास एंजिल्स; टोक्यो-ओकीनावा-हांगकांग; टोक्यो-बैंकाक-सिंगापुर; टोक्यो-लंदन (उत्तरी ध्रुव होकर) तथा टोक्यो से मास्को (साईबेरिया होकर) हैं।

विदेश व्यापार :

ज्यों-ज्यों जापान का औद्योगिक-स्वरूप निखरता गया त्यों-त्यों यहाँ का विदेश व्यापार बढ़ता गया क्योंकि कच्चे मालों के आयात और औद्योगिक उत्पादनों के निर्यात पर निर्भर अर्थ व्यवस्था में अधिकाधिक व्यापार आवश्यक है। जापान के भीतरी और विदेशी व्यापार का अधिकतर विकास दोनों महायुद्धों के अंतराल में हुआ है। 1888 में यहाँ के विदेश व्यापार का कुल मूल्य 144 मिलियन येन था जो 1938 में बढ़कर 5331 मि. येन हो गया। इस वर्ष समस्त विश्व व्यापार में जापान का हिस्सा 3.5% था, इसी वर्ष स. रा. अमेरिका का 11.8% एवं ब्रिटेन का 13.7% था। वर्तमान में जापान का प्रतिशत लगभग 2.5 है। परन्तु इसका तात्पर्य ह्रास नहीं वरन् दुनिया के अन्य विशेषकर नव विकसित देशों का व्यापार बढ़ना है। फिर यह भी सत्य है कि जापान का साम्राज्य भी अब अस्तित्व में नहीं है। वस्तुतः यही हाल ब्रिटेन का भी है। उसका व्यापार प्रतिशत भी द्वितीय विश्व युद्ध के बाद घटा है।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जापानी व्यापार की व्यवस्था बिगड़ गई क्योंकि सारा उत्पादन सामरिक महत्व का ही रहा था अतः आयातों का चुकान कहाँ से होता। युद्धोत्तर दिनों में स्थिरता और औद्योगिक विकास के साथ-साथ व्यापार की हालत में भी सुधार हुआ। 1950–51 के कोरिया युद्ध से भी गिरती हालत को सहारा मिला। 1950–60 दशक के अन्त तक जापान की अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार क्षेत्र में फिर से साख जम चुकी थी। 1981 में यहाँ के निर्यात और राष्ट्रीय आय में 13 5% तथा आयात और राष्ट्रीय आय में 12.7% का अनुपात था। ये दोनों अनुपात ग्रेट ब्रिटेन को छोड़कर जहाँ कि ये अनुपात क्रमशः 17% एवं 19% है, विश्व में सर्वाधिक हैं।

व्यापारिक विकास में जापान की अपनी नीतियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। युद्धोत्तर दशकों में जापान का स्वरूप विशुद्ध व्यापारी का रहा है। उसने

एशिया के सभी देशों से येन-केन-प्रकारेण अपने व्यापारिक सम्बन्ध बनाए हैं, विस्तृत किए हैं। यही कारण है कि चीन, उत्तरी कोरिया या उत्तरी वियतनाम जैसे साम्यवादी देशों को जापान ने राजनैतिक मान्यता नहीं दी, परन्तु इन देशों से व्यापार करके मुनाफा कमाने का कोई अवसर नहीं खोया है। बीच-बीच में जापानी नेताओं की चीन एवं रूस की यात्रायें इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय हैं। इन यात्राओं का प्रधान उद्देश्य दोनों बड़े देशों से व्यापारिक सम्बन्धों को विस्तृत करना रहा है। चीन से इस प्रकार का समझौता भी किया गया है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान दक्षिण-पूर्व एशिया में जापान के विरुद्ध जो वातावरण तैयार हुआ था वह उसकी आर्थिक समृद्धि व नई व्यापारिक नीतियों के साथ-साथ अनुकूल होता गया। उल्लेखनीय है कि 'एशियन बैंक' में क्रियाशील सहयोग और सर्वाधिक पूंजी लगाने का कदम उसकी नई नीतियों के फलस्वरूप ही उठाया गया है। जापान वर्तमान में हर सम्भव प्रयत्न द्वारा दक्षिणी-पूर्वी एशियाई देशों को अपने व्यापारिक प्रभाव क्षेत्र में रखना चाहता है ताकि उसके औद्योगिक तैयार माल इन देशों के बाजार में खप सके। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के एक साधन के रूप में जापान ने इन सभी देशों (भारत, पाकिस्तान थाई देश, मलाया, हिंदेशिया, फिलीप्पीन, सिंगापुर, हांगकांग, तैवान, लाओस आदि) को भारी मात्रा में कर्ज भी दिए हैं। पिछले दिनों में यह भी प्रवृत्ति देखने में आई है कि जापान के बड़े-बड़े उद्योग संस्थान अपने छोटे-छोटे काम पड़ोसी देशों से करवाने लगे हैं।

जापान के 70% आयात कच्चे मालों (58.5) या अर्द्ध-निर्मित वस्तुओं (12%) से सम्बन्धित होते हैं। 14% भाग खाद्य पदार्थों द्वारा बनता है। तैयार औद्योगिक मालों का आयात-प्रतिशत 15 से ज्यादा नहीं होता। इसके विपरीत निर्यात के 70 प्रतिशत भाग में औद्योगिक उत्पादन होते हैं और खाद्य पदार्थों का प्रतिशत 9-10 से ज्यादा नहीं होता। ज्यादा स्पष्ट रूप में, आयातों में पैट्रोलियम, कपास, ऊन, लोह-अयस, गेहूँ, कोकिंग-कोयला, रबर, शक्कर, लकड़ी, लुग्दी, खाल, चमड़ा, लोह-छीजन तथा रसायनों की प्रधानता रहती है। जबकि निर्यात का अधिकांश भाग इस्पात, मशीन, यन्त्र, जलयान, सूती-रेशमी वस्त्र, रेयान, मछली-उत्पादन, खिलौने, रेडियो, कैमरा तथा विविध उद्योगों सम्बन्धी मशीनों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

जापान का सर्वाधिक व्यापार सं०रा० अमेरिका से होता है जहाँ से जापान के आयात का 40% भाग आता है एवं जापानी निर्यात का 30% भाग जाता है। दूसरा स्थान एशियाई देशों का है जहाँ से आयात एवं निर्यात की प्रतिशत मात्रा क्रमशः 27 एवं 39 है। यूरोपियन देशों के लिए यह प्रतिशत क्रमशः 12 एवं 13 है। पिछले दशक में एशियाई देशों से व्यापार अपेक्षाकृत विस्तृत हुआ है। एशिया के अर्द्ध-विकसित देशों को जापान मशीनें, यन्त्र, ऑटोमोबाइल्स, खाद, वस्त्र, इस्पात आदि सप्लाई कर बदले में चावल, टिन, लोह-अयस, कपास, रबर व अन्य

कच्चे माल प्राप्त करता है । भारत के साथ पिछले दशकों (1960-80) में जापान के व्यापारिक सम्बन्ध बढ़े हैं । भारत से जापान को लौह-अयस, मैंगनीज, चमड़ा, कपास, तम्बाकू, खालें आदि भेजी जाती हैं जबकि जापान से भारत के लिए किए जाने वाले निर्यात में रेशम, मशीनों, रसायन, ऑटोमोबाइल तथा खाद आदि का प्राधान्य रहता है ।

जापान में लगभग 2000 बंदरगाह हैं जिनमें से लगभग 68 विदेशी व्यापार में रत रहते हैं । प्राय: ये बड़े-बड़े बंदरगाह हैं जिनमें टोक्यो, याकोहामा, कायासाकी (कांटो में), शिमिजू (शिजूओका प्रीफेक्चर) नगोया, योक्केची (चुक्यो) ओसाका, कोबे (किंकी) सिमोनोसेकी, मोजी, कोकुरा तथा डोकेई (उत्तरी क्यूशू) आदि बड़े हैं। इनमें भी याकोहामा एवं कोबे सर्वाधिक व्यस्त एवं महत्वपूर्ण हैं जो देश के 60% निर्यात एवं 40% आयात के लिए उत्तरदायी हैं । ओसाका, नगोया, टोक्यो आदि 7-9% व्यापार के लिए उत्तरदायी हैं।

जापान : प्रमुख आयात-निर्यात–1982

(मिलियन येन में)

आयात		निर्यात	
नाम वस्तु	आयात मूल्य	नाम वस्तु	निर्यात मूल्य
खनिज ईंधन	16,235,889	मशीनरी एवं परिवहन उपकरण	22,441,834
खाद्य पदार्थ	3,616,794	धातु एवं धातु उत्पादन	5,255,820
धातु अयस	1,674,352	वस्त्रोत्पादन	1,549,066
मशीनरी एवं परिवहन उपकरण	2,262,979	रसायन	1,580,370
वस्त्रोद्योग रेशा	573,157		

□□□

जापान : जनसंख्या

प्रारम्भ में जापान में जनसंख्या की वृद्धि की गति अत्यन्त धीमी थी। यहां तक कि तोकुगावा युग (1603–1867) तक भी प्रायः स्थिरता लिए थी। इस पूरे युग के दौरान देश की कुल जनसंख्या 25 और 30 मिलियन के बीच रही। मेजी पुनरोत्थान के बाद के दशकों में जनसंख्या में वास्तविक वृद्धि प्रारम्भ हुई जिसका प्रधान कारण कृषि विकास था। कृषि संभावनाओं की खोज में लोग क्रमशः उत्तर की ओर बढ़े। औद्योगिक विकास का श्रीगणेश हुआ। खनिज एवं शक्ति-साधनों की खोज होने लगी। रूसी-जापानी युद्ध (1905) ने औद्योगिक विकास की गति तीव्रतर की। फलतः 1897 में 42 मिलियन एवं 1909 में 50 मिलियन तक जनसंख्या हो गई। प्रथम विश्व युद्ध से जापानी उद्योग एवं व्यापार को भारी प्रोत्साहन मिला। इधर वैज्ञानिक विकास के साथ-साथ चिकित्साशास्त्र में भी नई खोजें हुईं। बीमारियों की रोकथाम हुई। औद्योगीकरण के साथ-साथ लोग कृषि क्षेत्रों से औद्योगिक नगरों में सिमटने लगे जहां जीवनयापन के अपेक्षाकृत अच्छे साधन थे। इन सारी परिस्थितियों ने जापान की जनसंख्या की तीव्र वृद्धि में सहयोग किया। यथा 1927 में यहां की जनसंख्या 61 तथा 1937 में 71 मिलियन हो गई। प्रतिवर्ष औसतन 1 मिलियन लोगों की वृद्धि हो रही थी जो जापान जैसे द्वीपाकार एवं सीमित साधन वाले देश के लिए बहुत ज्यादा थी। जनसंख्या की वृद्धि गति जापान के सामने अब एक समस्या थी। फलतः जापान ने आसपास के देशों में अवसर ढूंढ़े और उसे मंचूरिया, लिआयोतुंग पेनिनशुला आदि भाग हाथ लगे। अपने इन अधिकृत भागों में जापान ने 1,000,000 लोगों को बसाने का कार्यक्रम बनाया। इस प्रकार अगर गहराई से देखा जाए तो जापान की साम्राज्य विस्तार की नीति में राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं के अतिरिक्त यह भावना भी निहित थी कि इन अधिकृत प्रदेशों में वह अपनी अतिरिक्त जनसंख्या बसा सकेगा, उनसे कच्चे माल ले सकेगा तथा अपने औद्योगिक उत्पादन वहां खपा सकेगा। खैर, द्वितीय विश्व युद्ध ने जापान के सारे मंसूबे बिखेर दिए। युद्ध में भारी मानवक्षति (1,200,000 सैनिक तथा 2,50,000 असैनिक) हुई। परन्तु मृत्यु-दर में कमी (1965 में मृत्यु-दर 7.1 एवं जन्मदर 18.1 प्रति हजार) होने के कारण युद्धोत्तर दिनों में भी वृद्धि गति

ज्यादा ही रही। 1968 में जनसंख्या 104,408,000 की जिसमें से 49,803,000 पुरुष एवं 51,605,000 स्त्रियाँ थीं।

1 अक्टूबर 1982 को जापान की जनसंख्या 119 मिलियन थी। इतनी मानवता को शरण देते हुए जापान जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में सातवाँ घना बसा देश है। यहाँ विश्व की कुल जनसंख्या का 2.6% भाग शरण लिए हुए है। इस वर्ष 1982 में यहाँ का जन घनत्व 318 मनुष्य प्रति वर्ग कि.मी. था। जन घनत्व की दृष्टि से जापान विश्व का पाँचवा सर्वाधिक घना बसा देश है। चूँकि जापान एक द्वीपीय देश है जिसका अधिकांश भाग पहाड़ी-पठारी है। अतः अगर बसे भागों का घनत्व देखा जाये तो वह और भी ज्यादा है।

जापान : जनसंख्या-वृद्धि

वर्ष	जनसंख्या (1000)	औसत वार्षिक वृद्धि दर (% में)	जनसंख्या घनत्व (व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी.)
872	34,806	—	91
80	36,649	0.7	96
90	39,902	0.8	105
00	43,847	1.1	115
1920	55,963	1.2	147
1940	73,114	1.1	191
1960	94,302	0.9	253
1970	104,665	1.1	281
1980	117,060	0.9	314
1982	118,693	0.9	318
1985	120,301	(अनु.—	—

वितरण :

369.662 वर्ग कि. मीटर भू-क्षेत्र एवं 120 मिलियन जनसंख्या के आधार पर जापान का गणितीय घनत्व 318 मनुष्य प्रति वर्ग कि.मी. या 850 मनुष्य प्रति वर्ग मील से अधिक होता है। यूरोप में बेल्जियम एवं नीदरलैंड्स एवं एशिया में जावामदुरा ही इस दृष्टि से आगे हैं वरना जापान दुनिया का सर्वाधिक घना बसा देश है। परन्तु क्या गणितीय घनत्व जापान की जनसंख्या के वितरण के स्वरूप को सही रूप में व्यक्त करने में समर्थ है? शायद नहीं। जापान का लगभग 85% भू-भाग पर्वत, पठार, जंगल आदि के कारण अबसित है। 95% से अधिक मानवता उन

तटवर्ती निचले भागों में आश्रय लिए हुए है जो यहाँ के प्रधान कृषि क्षेत्र हैं। अगर उन क्षेत्रों का घनत्व देखा जाए तो वह 1900 मनुष्य प्रति वर्ग कि मी या लगभग 4800 मनुष्य प्रति वर्ग मील पड़ता है। दुनिया का कोई देश या देश का कोई भाग संभवतः इतना घना बसा नहीं है।

जापान में जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले तत्वों में दो सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। प्रथम, धरातलीय स्वरूप द्वितीय, शहरीकरण या औद्योगीकरण की मात्रा। इनके प्रभाव स्पष्ट भी हैं, यथा, मध्यवर्ती उच्च प्रदेशों में जन शून्यता एवं औद्योगिक पेटी विशेषकर नगर-केन्द्रों में जनसंख्या का अत्यधिक घनत्व। इन दो तत्वों के अतिरिक्त या यों कहा जाए कि इनसे प्रभावित स्वरूप को और भी सूक्ष्म रूप में प्रभावित करने वाले कुछ और भी तत्व हैं जैसे जलवायु या मिट्टी की उत्पादन शक्ति, यथा तटवर्ती पट्टी में ही उत्तर की ओर क्रमशः घनत्व एवं जन-जमाव कम होते जाते हैं। इस दृष्टि से 37-38 उत्तरी अक्षांश को एक सीमा माना जा सकता है जहाँ से उत्तर की ओर जन-बसाव बड़ी तेजी से कम होता जाता है। होकेडो में राष्ट्रीय घनत्व (260 मनुष्य प्रति वर्ग कि.मी.) का केवल एक-चौथाई जन घनत्व ही है। उत्तरी हाँशू या तोहोकू (जिसमें उत्तरी हाँशू के छः प्रीफेक्चर्स शामिल हैं) में जन घनत्व राष्ट्रीय औसत का केवल तीन-चौथाई ही है। बल्कि तोहोकू के उत्तरी तीन प्रीफेक्चर्स में तो राष्ट्रीय औसत का आधा ही है। उत्तरी जापान में अक्षांश के साथ जन घनत्व कैसे कम होता जाता है वैसा स्वरूप दक्षिणी-पश्चिमी जापान में नहीं है। यद्यपि यहाँ भी कुछ भागों जैसे शिमेन (उत्तरी चूगोकू) या कोची (दक्षिणी शिकोकू) में राष्ट्रीय औसत से कहीं कम घनत्व है परन्तु उसके स्थानीय कारण हैं जैसे तटवर्ती मैदान का अत्यधिक सँकरा होना या नगरों का अभाव। दक्षिणी हाँशू में ऐसे भी क्षेत्र हैं जहाँ राष्ट्रीय औसत से ज्यादा घनत्व है। पूरी की पूरी उद्योग पेटी इसी प्रकार की है।

प्राकृतिक तत्वों के अतिरिक्त, उत्तर की ओर जन-बसाव के क्रमशः कम होने के संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि 37-38° उत्तरी अक्षांश से ज्यों-ज्यों उत्तर की ओर चलते हैं जापानी अर्थ-व्यवस्था या संस्कृति के हृदय प्रदेश से दूर होते जाते हैं। जापानी संस्कृति का मुख्य क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी उपोष्णीय जापान रहा है। तोहोकू या होकेडो के क्षेत्रों को सदा से प्रभावित क्षेत्र ही माना गया। वस्तुतः उत्तरी प्रदेशों में जो कुछ भी जन बसाव बढ़ा है, औद्योगीकरण के बाद की देन है वरन् सन् 1800 तक भी उत्तरी जापान के इन ठंडी और कठोर जलवायु वाले प्रदेशों में 40,000 से अधिक व्यक्ति नहीं बसते थे।[40] जलवायु अवस्थाएँ, चावल की खेती, शहतूत के वृक्ष, आलू, चाय या फलों की फसल उत्तरी भागों में सम्भव कहाँ जो जापानी लोग वहाँ जाकर बसते। चावल का जापानी-जनजीवन में इतना

40. Trewartha, G.T.—Japan, A Geography p. 135-6.

हो गया है कि इसके बिना जापानी संस्कृति की कल्पना नहीं की जा सकती।

37-38° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण यानी दक्षिणी-पश्चिमी जापान में भी जनसंख्या का वितरण समान नहीं है। अधिकांश जनसंख्या उस पट्टी में विद्यमान है जो कांटो के मैदान से पश्चिम में उत्तरी क्यूशू तक फैली है। इसमें तटवर्ती मैदानों यथा कांटो, किकी, नगोया या भीतरी सागर के आसपास के भागों में सर्वाधिक घनत्व है। अपनी उपोष्णीय स्थिति एवं समुद्र द्वारा आसान पहुँच के अन्दर होने के कारण ये भाग ऐतिहासिक युगों से मानव के आकर्षण-क्षेत्र रहे हैं। अधिक बसाव की इस पेटी में ही जापान के 6 मैट्रोपोलिटन नगर, सभी बड़े-बड़े बंदरगाह एवं औद्योगिक केन्द्र विद्यमान हैं। पेटी के 60% नगर ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या 100,000 से ज्यादा है। कांटो, किकी एवं नगोया मैट्रोपोलिटन क्षेत्र उल्लेखनीय हैं जिनकी जनसंख्या क्रमशः (1982 में) 21 8 मिलियन, 13.5 मिलियन एवं 7.2 मिलियन थी। इस प्रकार ये तीनों मिलकर देश की लगभग एक-तिहाई जनसंख्या को आश्रय दिए हुए हैं।

क्वांटो के मैदान में स्थित टोक्यो नगर न केवल जापान वरन् दुनिया का सबसे बड़ा नगर है जिसकी जनसंख्या लगभग 10 मिलियन से अधिक है। अन्य बड़े नगरों में (जनसंख्या 1982 में) ओसाका (2.7 मिलियन) नगोया (2.1 मिलियन) क्योटो (1.4 मि०) कोबे (1.3 मि०) कीटा क्यूशू (1.02 मि०) तथा याकोहामा (2.9 मि०) आदि उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार इन सात बड़े नगरों में देश की एक-पचम (20%) जनसंख्या बसी हुई है।

प्रजाति तत्व

ऐसा माना जाता है कि जापानी लोग मूलतः मंगोलाइड प्रजाति से सम्बन्ध रखते हैं। वर्तमान में तो इनका मिश्रित स्वरूप है इसके बावजूद भी मंगोल प्रजाति के गुण इनके शारीरिक लक्षणों में भलीभाँति देखे जा सकते हैं। काले बाल, गहरी भूरी तिरछी आँखें, काँसा रंग आदि शारीरिक लक्षण इन्हें मंगोल प्रजाति के समीप ले जाते हैं। लम्बाई (5'5") अवश्य कुछ कम है जो मिश्रण का प्रतीक है। जापानी जाति समुदाय के अतिरिक्त थोड़ी सी संख्या (लगभग 1500) में एनू लोग भी हैं। प्रजाति शास्त्रियों का ऐसा मत है कि लहरियादार बालों वाले ये लोग मूलतः किसी पूर्वी एशियाई कॉकेस्वाइड समुदाय से सम्बन्धित रहे होंगे।[41] इन्हें जापान का प्राचीनतम निवासी माना जाता है जो जापानी समुदाय के इन द्वीपों में आकर बसने के समय विभिन्न भागों में फैले थे। वर्तमान में एनू समुदाय के वंशज ओकीनावा द्वीप तथा होकेडो में मिलते हैं। इनके कुछ विशिष्ट रीत-रिवाज है

41. Source—Facts about Japan, Published by Japan Embassey New Delhi, 1969.

जैसे—त्यौहार के समय रात्रि में आग लगाकर नाचना, बलि देना, ढोल बजाना, चौड़ी नीली-श्वेत रंग की पट्टियों के वस्त्र पहनना।[42]

जापानी समुदाय के उद्गम और विकास के बारे में भी तरह-तरह की कहानियाँ प्रचलित हैं। ईसा से बाद 712 तथा 720 में लिखे गए शाही गजटों में इसी प्रकार की एक कहानी का उल्लेख है। इस कहानी के अनुसार प्रारम्भ में (समय नहीं दिया है) जापानी द्वीप मानव-रहित थे। सबसे पहले एक दैवी युगल प्रकट हुआ जिसमें इजेनामी एक औरत तथा इजनागी नामक पुरुष था। ये इन द्वीपों में विचरण करते थे। प्रारम्भ में इनका वंश नहीं बढ़ा क्योंकि ये प्रजनन-क्रियाओं से अनभिज्ञ थे। पर्याप्त दिनों बाद इजेनामी ने अग्नि-देवता को जन्म दिया। इसी से जापानी समुदाय आगे बढ़ा।[43] कथा ठीक वैसी है जैसी मलाया, फारमोसा, भारत या फिलीपीन में प्रचलित है। केवल नाम बदले हुए हैं। संस्कृति, शारीरिक लक्षण, अधिवासों की बनावट, बर्तनों की बनावट, पत्थरों के जेवरों आदि की दृष्टि से जापानी समुदाय मलाया एवं फारमोसा के लोगों के बहुत निकट है। बाल तथा चेहरे की बनावट में काफी साम्य है। मलाया की कई रीत-रिवाजें, जो मूलतः मलाया की ही हैं, जापान में परम्परागत रूप में मिलती हैं। घर की बनावट, सजावट तथा शादी के तरीकों में भी मलय प्रभाव स्पष्ट है। इन आधारों पर प्रजाति शास्त्री यह निष्कर्ष निकालते हैं कि जापानी तथा ये लोग कभी (हो सकता है प्रागैतिहासिक युगों में) दक्षिण-पूर्वी एशिया के एक ही स्थान से निकले होंगे। जापान वाली शाखा कोरिया से क्यूशू गए होंगे और वहाँ से शेष द्वीपों में। जापानी द्वीपों में इनका सम्पर्क एनू लोगों से हुआ होगा।[44]

□□□

42. Ibid.
43. Source—Facts about Japan.
44. Nesturkh, M.—The Races of Mankind, Foreign Language Publishing House Maskow, p. 89-96.

सोवियत संघ (U.S.S.R.)

सोवियत संघ आज दुनिया की महानतम शक्तियों में से एक है जिसने अल्प समय में ही भारी आर्थिक, वैज्ञानिक तथा सैनिक विकास करके दुनिया को आश्चर्य-चकित कर दिया है। कई आधारभूत वस्तुओं के उत्पादन (लोहा, कोयला एवं गेहूँ) में तो रूस अपने प्रबल प्रतिद्वन्द्वी सं. रा. अमेरिका से भी आगे बढ़ गया है। उसकी इस बढ़ती हुई शक्ति को सीमित करने के लिए पश्चिमी राष्ट्रों ने पश्चिम में 'नाटो', दक्षिण-पश्चिम में 'सेंटो' तथा पूर्व में 'सिएटो' आदि सैनिक संगठनों का गठन किया है। विश्व के राजनैतिक मंच पर कोई भी ऐसी घटना नहीं होती जिसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सोवियत संघ रुचि न रखता हो। सम्भवतः अपने नेतृत्व की स्थिति को बनाए रखने के लिए बड़े देशों के लिए यह आवश्यक भी होता है। उसकी सैन्य-शक्ति एवं विश्व शान्ति को बनाए रखने में उसकी महत्त्वपूर्ण स्थिति को इस तथ्य से जाना जा सकता कि क्रेमलिन एवं व्हाइट-हाउस के बीच एक 'तुरन्त संचार लाइन' (हॉट-लाइन) की व्यवस्था की गई है ताकि किसी भी समय, किसी भी प्रकार की गलतफहमी के द्वारा नष्ट होती हुई मानवता को बचाया जा सके। सोवियत संघ अणु शस्त्रों एवं अंतरिक्ष उड़ानों में इतनी तीव्रगति से आगे बढ़ रहा है कि वह सं. रा. के बराबर तो पहुँच ही गया है, सम्भावनाएँ ऐसी हैं कि वह शीघ्र ही उससे भी आगे बढ़ जाएगा।

अगर इस समस्त आर्थिक एवं वैज्ञानिक प्रगति की कालावधि (1917–82) देखें तो इस देश के निवासियों के प्रति श्रद्धा और भी बढ़ जाती है। 65 वर्ष के अल्प काल में यह देश जहाँ पहुँच गया है वहाँ सं. रा. अमेरिका पिछले 350 वर्षों में पहुँचा। यह भी उल्लेखनीय है कि सोवियत भूमि पर दोनों महायुद्धों का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा जबकि अमेरिका की भूमि पर कभी कोई युद्ध, साधारण गृह-युद्ध को छोड़कर, नहीं लड़ा गया। सोवियत संघ वर्तमान शताब्दी में ही आर्थिक उत्पादन में अमेरिका से आगे बढ़ जाने का लक्ष्य बनाए हुए है, जैसाकि 1961 में हुई कम्यूनिस्ट पार्टी की 22वीं कांग्रेस में निर्णय लिया गया था। रूस की इस अभूत-पूर्व प्रगति में जितना सहयोग प्राकृतिक वरदानों, जैसे—विशाल भूखंड, खनिज सम्पदा, विस्तृत मैदानी भाग, विस्तृत कोणधारी वन, असीमित शक्ति के स्रोत

आदि का रहा है उतना ही यहाँ के परिश्रमी मानव का भी है, जिसने अथक शारीरिक परिश्रम से पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा संगठित तथा व्यवस्थित रूप से एवं उचित नेतृत्व में देश के आर्थिक ढाँचे को मजबूत किया। भारत की नीति के विपरीत सोवियत नेताओं ने पहले अपने घर के सुधार तथा बाद में दुनिया के सम्बन्धों की ओर ध्यान दिया। स्तालिन के समय लौह-पर्दे (आयरन-कर्टेन) के भीतर रहकर जिस लगन एवं एकाग्रचित्तता से यहाँ के निवासियों ने अपने उत्पादन को बढ़ाया वह विश्व में एक मिसाल है।

यह महान् देश बाल्टिक सागर से लेकर पूर्व में बेरिंग स्ट्रेट तक फैला हुआ है एवं दुनिया के थल भाग का लगभग 1/7 भाग घेर रखा है। इसका 65 प्रतिशत भू क्षेत्र एशिया एवं 35 प्रतिशत योरप में है। पश्चिम में 19° 30′ पूर्वी देशांतर से लेकर पूर्व में 169° 30′ पश्चिमी देशांतर तक इसका विस्तार लगभग 170° देशांतरों में है। दक्षिण में अफगानिस्तान की सीमा पर स्थित कुश्का (35° 15′ उत्तरी अक्षांश) से लेकर उत्तर में केप चैल्यसकिन (77° 44′ उत्तर अक्षांश) तक इसका विस्तार लगभग 3000 मील में है। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम फैलाव लगभग 7000 मील है। इस विस्तार को ट्रांस साइबेरियन रेल्वे पोलैंड की सीमा से ब्लाडीवोस्टक तक 9 दिन और 12 घंटे में पार करती है। दुनिया का यह सबसे बड़ा देश 8,649,489 वर्गमील में फैला हुआ है जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा तथा मैक्सिको, तीनों देश एक साथ समा सकते हैं।

वस्तुतः रूस के विस्तार का अनुमान आँकड़ों के बजाय यह कहने से ज्यादा अच्छी तरह होगा कि यह सं. रा. अमेरिका से तीन गुना तथा ब्रिटेन से 90 गुना बड़ा है। यह दुनिया की 1/6 बसाव योग्य भूमि के बराबर है। इस विस्तार के कारण रूस के पूर्वी भागों में दिन पश्चिमी भागों से 11 घंटे पहले निकलता है। जब ब्लाडीवोस्टक के लोग जागने वाले होते हैं तब मास्को के निवासी अपने बिस्तरों में जाने की तैयारी में लगे होते हैं। इन दोनों नगरों के बीच की दूरी लंदन तथा न्यूयार्क के बीच की दूरी से ज्यादा है।

इस विशाल देश में विविध प्रकार की भौगोलिक अवस्थाओं का होना स्वाभाविक है। प्रत्येक भूगर्भिक तथा पर्वत निर्माणकारी घटनाओं की प्रतिनिधि भू-आकृतियाँ इसके धरातल पर विद्यमान हैं। इसका 23 प्रतिशत भाग आर्कटिक वृत्त के अन्दर है जहाँ वर्ष के 8–9 महिने बर्फ जमी रहती है। मॉस्को लंदन के बजाय 250 मील उत्तर में है। लेनिनग्राद उन्हीं अक्षांशों में विद्यमान है जिनमें कि शेटलैंड द्वीप समूह। इस प्रकार लगभग आधा देश 6 महीने तक बर्फ तथा पाले से प्रभावित रहता है। साधारणतः 16 प्रतिशत भू-भाग शीत कटिबंध, 80 प्रतिशत शीतोष्ण तथा केवल 4 प्रतिशत उष्ण कटिबंध में है। दक्षिण में रूस की ज्यादातर सीमा पर्वतीय दीवालों द्वारा बनी है। इन परिस्थितियों में यहाँ जल-

वायु सम्बन्धी भारी विषमता होना स्वाभाविक है। मध्य एशिया में भीषण गर्मी तथा सर्दी युक्त रेगिस्तानी प्रदेश हैं तो कोलखिज निचले प्रदेश आर्द्र तथा सुहावनी जलवायु में कई प्रकार की फसलें प्रदान करते हैं।

सोवियत रूस को महाद्वीपीय दृष्टि से दो भागों में बाँटा जाता है—यूरोपियन रूस एवं एशियाटिक रूस। दोनों भागों के बीच की सीमा यूराल पर्वतीय दीवाल द्वारा विभाजित की जाती है जिसके पश्चिम में योरोपियन रूस (ट्रांसकाकेशिया को शामिल करते हुए) विस्तार लगभग 2,000,000 वर्गमील में है। अकेला योरोपियन रूस संयुक्त राज्य अमेरिका के लगभग 2/3 भाग के बराबर है जबकि यह समस्त देश का केवल 1/4 भाग है शेष 3/4 भाग में यूराल के पूर्व की ओर साइबेरिया, कजाकिस्तान तथा मध्य एशिया आते हैं। जो एशिया महाद्वीप के लगभग एक-तिहाई भाग घेरे हैं।

पूर्व से पश्चिम की ओर सोवियत गणराज्य की सीमाएँ लगभग एक दर्जन देशों क्रमशः चीन, भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईरान, तुर्की, रुमानिया, हंग्री, चैकोस्लोवाकिया, पौलैंड तथा फिनलैंड से लगती है। जल एवं थल दोनों प्रकार की सीमाओं की सम्मिलित लम्बाई 37,000 मील है। इसकी तुलना प. योरोप के सबसे बड़े देश फ्रांस की सीमा (3,300 मील) से की जा सकती है। कुल सीमा का लगभग दो-तिहाई भाग (27,000 मील) तट रेखा द्वारा बनता है फिर भी सोवियत रूस कभी भी एक जल शक्ति के रूप में नहीं उभर सका। इसका कारण इसकी जलसीमा प्रस्तुत करने वाले महासागरों तथा सागरों की स्थिति जन्य अनुपयोगी प्रकृति है। आर्कटिक वृत्त के सभी तट प्रदेश प्रायः साल भर तक जमे रहते हैं। अतः उभर न कोई बंदरगाह विकसित हो पाया है और न जल यातायात ही होता है। केवल सैनिक महत्व के जलयान ही (एअरक्राफ्ट कैरियर तथा सबमेराइन आदि) कभी-कभी गुजरते हैं जिनमें बर्फ को तोड़कर रास्ते बनाने की सुविधाएँ होती हैं।

सोवियत संघ के सीमावर्ती सागरों को चार श्रेणियों में रखा जा सकता है। कुछ ऐसे सागर हैं जो रूस को सीधे यातायात प्रधान महासागरों एवं जलमार्गों से जोड़ते हैं इनमें जापान सागर, श्वेत सागर तथा बैरेन्ट सागर महत्वपूर्ण हैं। इनमें भी बैरेन्ट सागर ज्यादा उपयोगी है जो उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट द्वारा साल भर खुला रहता है एवं रूस के बंदरगाह मुरमांस्क को अटलांटिक महासागरीय जल मार्गों से जोड़ता है। श्वेत सागर जाड़ों के दिनों में जम जाता है। जापान सागर लगभग वर्ष भर खुला रहता है और ब्लाडीवोस्टक तथा नाखोदका आदि बंदरगाहों से प्रशान्त महासागर को सीधा रास्ता भी प्रदान करता है। परन्तु पृष्ठभूमि के आर्थिक दृष्टि से ज्यादा महत्वपूर्ण न होने के कारण इस जलमार्ग का उपयोग नहीं हो पाता। दूसरी श्रेणी के अन्तर्गत वे जलाशय आते हैं जो रूस को

महासागरीय जलमार्ग से जोड़ते तो हैं परन्तु इन जलाशयों को पार करते समय जिन जलडमरुमध्यों में होकर गुजरना पड़ता है उन पर अन्य देशों का अधिकार है। बाल्टिक तथा काला सागर इसी प्रकार के हैं। किसी भी तनाव की स्थिति में ये मार्ग रूस के लिए बन्द हो सकते हैं। तीसरे प्रकार के जलाशय वे हैं जो चारों तरफ सोवियत भूमि से घिरे हैं और भीतरी व्यापार के लिए जल यातायात प्रस्तुत करते हैं। इनमें कैस्पियन सागर सबसे बड़ा है। चौथी श्रेणी के अन्तर्गत वे सभी तट प्रदेश हैं जो आर्कटिक सागर द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं परन्तु सदा जमे रहने के कारण बेकार हैं।

समस्त विभिन्नताओं के बावजूद कुछ ऐसे तत्व हैं जिन्होंने सोवियत रूस को एकता तथा समानता प्रदान की है जिससे वहाँ एक राष्ट्रीयता विकसित हुई है। विशाल होने पर भी रूस दुनिया के अन्य देशों से जमे हुए समुद्रों, सीमावर्ती जलाशयों, दलदल तथा पर्वतीय शृंखलाओं या अत्यन्त निर्जन प्रदेशों द्वारा अलग है। समस्त देश में निचले मैदानी भागों का बाहुल्य है तथा क्षेत्रीय भिन्नता होते हुए भी जलवायु में महाद्वीपीय तत्व प्रधान हैं। इन कारणों से वहाँ राष्ट्रीय भावना के विकास में ज्यादा कठिनाई नहीं आई।

रूस के बारे में एक प्रश्न बहुधा उठता है और वह यह कि इस देश को एशिया में समझा जाय या यूरोप में। वर्तमान राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक व्यवस्थाओं को देखते हुए यह प्रश्न करना व्यर्थ है। वर्तमान में रूस एक संगठित देश है जो बाल्टिक से बेरिंग तक फैला है। यह दूसरी बात है कि उसका आर्थिक हृदय फिलहाल काली मिट्टी के प्रदेश यूक्रेन में स्थित है। परन्तु वह दिन भी दूर नहीं जब मध्य एशिया या साइबेरिया भी औद्योगिक खनिज सम्पदा एवं कृषि विस्तार की दृष्टि से उतने ही महत्वपूर्ण होंगे जितना कि आज यूरोपियन रूस या यूक्रेन प्रदेश है और इसके लिए निरन्तर प्रयत्न जारी हैं जिनमें तेजी से सफलता मिलती जा रही है। साइबेरिया के निचले मैदानी भागों में गेहूँ की सुनहली बालें रूसी लोगों के इस प्रयत्न की प्रत्यक्ष गवाह हैं। सुदूर उत्तरी-पूर्वी कोने में खोदी जा रही खानें इस तथ्य की पुष्टि करती हैं। वस्तुतः सोवियत रूस को यूरेशियन देश कहना ज्यादा उपयुक्त होगा।

सोवियत रूस की वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था को समझने के लिए कुछ ऐतिहासिक रूपरेखा का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान रूस का इतिहास उन स्लाविक समुदायों से होता है जो 8–9वीं शताब्दी में कीव के चारों ओर निवास कर रहे थे। सभी समुदायों की अपनी-अपनी अलग इकाई थी। ये सभी स्वतन्त्र थे। बाद में स्वीडन से आने वाले कुछ कबीलों ने इनमें से कमजोर समुदायों पर अधिकार करके अपेक्षाकृत बड़े समुदाय का संगठन किया।

इसी प्रकार के एक कबीले के मुखिया का नाम रूरिक-दा-रूस था जिसके नाम पर इस देश का नामकरण संस्कार हुआ।[1] बीच-बीच में कई बार मंगोलों ने आक्रमण किया। अन्ततोगत्वा 15वीं शताब्दी में जार परिवार इस प्रदेश के नेतृत्व में आया और यहीं राजतन्त्र प्रारम्भ हुआ। मास्को राजधानी बनाई गई।

सोवियत रूस का जो वर्तमान विस्तार है वह इन जार राजाओं के द्वारा जीत कर ही मिलाया हुआ भाग है। 1533-84 की अवधि में यहां के ईवान नामक राजा ने तातारों को बहुत दूर तक पूर्व में तथा पोलैंड और लिथुआनियन्स को पश्चिम में खदेड़ दिया था। पोलैंड के साथ ज्यादातर लड़ाइयाँ यूक्रेन प्रदेश में लड़ी गईं। साइबेरियन प्रदेश की तरफ ये लोग 1580 में आगे बढ़े जबकि यरमाक ने यूराल को पार करके इरटिश नदी पर स्थित सीबीर नगर पर अधिकार कर लिया। फिर तो ये लोग समस्त साइबेरियन प्रदेश को जीतते चले गये और 1639 में प्रशान्त के तट तक का विशाल भू-भाग अधिकार में कर लिया। साइबेरिया को जीतने में जार शक्तियों को ज्यादा युद्ध नहीं करने पड़े। इसमें ज्यादा कठिन कार्य केवल प्राकृतिक बाधाओं (नदी, दलदल, घने जंगल पर्वत) को पार करते हुए आगे बढ़ना था। 1741 में जब बेरिंग अमेरिका तथा एशिया के बीच स्थित जलडमरूमध्य (जिसे बाद में बेरिंग जलडमरूमध्य के नाम से पुकारा जाने लगा) को पार करके एलास्का पहुँचा तो अनेकों लोग वहां जाकर बस गये। इनका अन्तिम पड़ाव सैनफ्रांसिस्को से केवल 40 मील दूरी पर ही था। इस प्रकार रूसी लोगों का अधिकार उत्तरी अमेरिका में भी था जो 1867 में एलास्का को बेचने के साथ-साथ खत्म हो गया।

पीटर महान (1669–1725) ने देश को संगठित तथा पश्चिम यूरोप के देशों की तरह आर्थिक दृष्टि से उन्नत करने का भारी प्रयत्न किया। अपने कार्यों के कारण वह आज भी रूसी लोगों के दिल में पीटर महान् के रूप में स्थान बनाये हुए हैं। पीटर के समय से ही रूस का यह सतत् प्रयत्न रहा है कि उसे विश्व के महासागरीय जल मार्गों में पहुंचने के लिए 12 महीने खुला तथा स्वतंत्र जलाशय मिले। उसके ज्यादातर आक्रमणों की तह में सदा यही भावना छिपी रही है। कैथरीन द्वितीय के नेतृत्व में रूस ने काले सागर, निकोलस प्रथम के नेतृत्व में फारस की खाड़ी, निकोलस द्वितीय के नेतृत्व में पोर्ट आर्थर, अलैक्जेण्डर द्वितीय के नेतृत्व में जापान सागर तक पहुंच कर अपने लिये जल-मार्ग की व्यवस्था की। समय-समय पर ईरान, चीन अफगानिस्तान, मंगोलिया व तिब्बत से जो इसके झगड़े हुए उनका कारण भी यह था कि रूस निरन्तर समुद्र तक पहुँचने के लिए प्रयत्न-

---

1. Mellor, R. E. H.—Geography of the U. S. S. R. p. 81.

शील रहा। 1904–5 में जो रूसी जापानी युद्ध हुआ वह वस्तुतः व्लाडीवोस्टक तक रेल बनाने के कारण हुआ था 17 तथा 18वीं शताब्दी में जब यूरोप के अन्य देशों में औद्योगिक क्रान्ति हो रही थी रूस एक रूढ़िवादी तथा अविकसित देश के रूप में चल रहा था। जार की तानाशाही में जमींदार वर्ग को छोड़कर सभी वर्गों के लोग दुःखी थे। वैज्ञानिक प्रगति या आधुनिकता नाम की चीज उस समय रूस में नहीं थी।

आज का रूस समाजवादी क्रान्ति का फल है जो प्रथम बार 1905 में हुई, परन्तु असफल रही। पुनः 1917 में बोल्शेविक क्रान्ति हुई जिसने देश का ढांचा ही बदल दिया। जारशाही रूस का कोई व्यक्ति अगर उस समय की हालातों का वर्णन इस दशाब्दी में पैदा हुए बच्चों से करें तो शायद बच्चे विश्वास नहीं करेंगे क्योंकि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आमूल परिवर्तन आ गया है। 12 मार्च, 1917 को क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ। 15 मार्च को जार शासकों का खात्मा किया गया तथा अन्त में जाकर 7 नवम्बर 1917 को लेनिन के नेतृत्व में साम्यवादी सरकार बनी। 31 जनवरी 1918 को 'आल रशियन सोवियत' की तीसरी कांग्रेस में एक घोषणा पत्र निकाला गया जिसके अनुसार आम जनता का शोषण समाप्त करने की घोषणा की गई। साथ ही रूस को 'सोवियत रिपब्लिक' घोषित किया गया। 10 जुलाई 1918 की पांचवी कांग्रेस में 'रूसी सोशलिस्ट फैडरल सोवियत रिपब्लिक' के लिए संविधान घोषित किया गया। इसी समय में यूक्रेन, बैलोरशिया तथा ट्रांसकाकेशिया में भी गणराज्य बनाये गये। 30 दिसम्बर 1922 को सोवियत समाजवादी संघीय गणराज्य की स्थापना हुई जिसमें रूस, यूक्रेन बैलोरशिया तथा ट्रांसकाकेशिया गणराज्य शामिल किये गये। 13 मई, 1925 को अन्य गणराज्य उजबेक तथा तुर्कमान को इस संघ में मिलाया गया तथा मार्च, 1931 को तजाकिस्तान गणतन्त्र भी इसमें शामिल हो गया। इस प्रकार वर्तमान सोवियत संघ की स्थापना वस्तुतः कई चरणों में हुई है। 1939 तक इस संघ में 11 समाजवादी गणराज्य थे जिनके नाम इस प्रकार हैं—

रूसी गणराज्य, यूक्रेनिया, बैलोरशिया, अजरबेजान, जार्जिया, आर्मीनिया, तुर्कमिनिस्तान, तजाकिस्तान, कजाक, किरगिजया तथा उजबेक गणराज्य। इन 11 बड़े गणराज्यों का क्षेत्रफल 8.1 मिलियन वर्ग मील था। 12वां गणतन्त्र करेलोफिनिश 3 मार्च 1940 को इसका सदस्य बना। इसी वर्ष में मोलदेविया (13) लिथुआनिया (14) एस्टोनिया (15) तथा लैटविया (16) गणराज्य भी संघ के सदस्य हो गये। अब सोवियत संघ का क्षेत्रफल लगभग साढ़े आठ मिलियन वर्ग मील था।

द्वितीय विश्व युद्ध में मित्र राष्ट्रों के जीत जाने के बाद सोवियत संघ के क्षेत्रफल में और वृद्धि हुई। कर्जन रेखा के पूर्व के समस्त पोलिश भाग तथा उत्तरी

सोवियत संघ
के गण-राज्य
पैमाना 0 525 मी.
रूसी सोवियत संघीय समाजवादी गण राज्य
कजाकस्तान
लिथुआनिया
बेलोरूस
ईस्टोनिया
लैटविया
मोल्डेविया
यूक्रेन
जार्जिया
आर्मीनिया
उजबेकिस्तान
किरगिजिस्तान
तदझिकिस्तान
तुर्कमेन
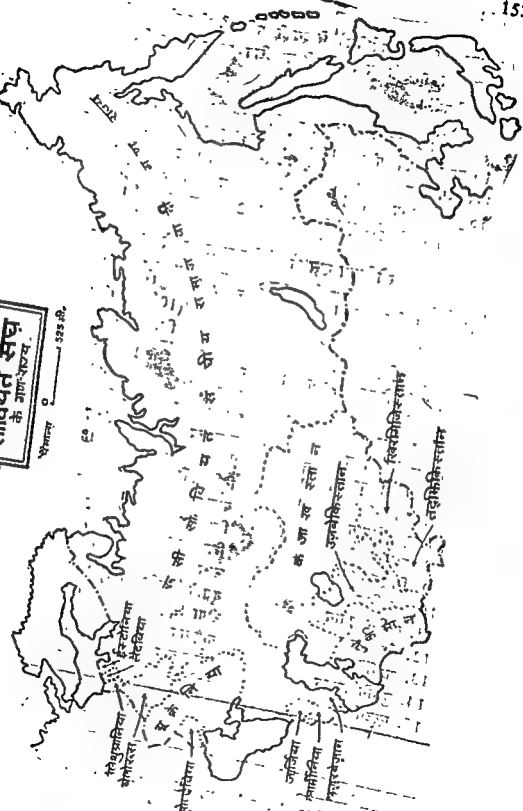
प्रशिया (69,886 वर्गमील) ने इसकी पश्चिमी सीमाओं का विस्तार किया तो जापान की हार के बाद दक्षिणी सखालिन एवं क्यूराइल द्वीपों के मिलने से पूर्वी सीमाएँ बढ़ीं।

इस प्रकार समय-समय पर विभिन्न भागों के शामिल होते जाने से संघ में 16 गणराज्य थे परन्तु 1956 में करेलो-फिनिश गणतन्त्र को स्वायत्तशासी गणराज्य के रूप में बदल देने से 15 ही रह गये। इस समय प्रशासनिक दृष्टि से 15 संघीय गणराज्य 18 स्वायत्तशासी गणराज्य, 6 जिले, 181 क्षेत्र, 10 स्वतन्त्र, 10 राष्ट्रीय भू-भाग तथा 4,162 ग्रामीण मण्डल हैं।

सोवियत रूस के संघीय समाजवादी गणराज्य[2]

सोवियत संघीय समाजवाद गणराज्य	राजधानी	क्षेत्रफल (1000 वर्गमील कि. मी. में	जनसंख्या (मिली. में)
1. रूसी सोवियत संघ गणराज्य	मास्को	17,075	141·0
2. यूक्रेन	कीव	604	50·5
3. कजाकिस्तान	आलम-आता	2,717	15·5
4. उजबेकिस्तान	ताशकन्द	447	17·0
5. बैलोरशिया	मिन्स्क	208	9·8
6. जार्जिया	तिबिलिसी	70	5·1
7. अजरबेजान	बाकू	87	6·4
8. मोल्देविया	किशनीव	34	4·1
9. लिथुआनिया	विलनियस	65	3·5
10. किरगिज	फ्रन्ज	199	3·8
11. ताजिकिस्तान	डुशांबे (स्तालिनाबाद)	143	4·2
12. लैटविया	रीगा	64	2·6
13. आर्मीनिया	यारवान	30	3·2
14. तुर्कमिनिस्तान	अशखाबाद	488	3·0
15. एस्टोनिया	तालिन	45	1·5
	योग	22·4 मि. वर्ग कि. मी.	271·2

2. Estimated population January 1983, data based on Statesman' Year book 1984-85.

सोवियत संघ :

भूगर्भिक संरचना एवं धरातलीय स्वरूप

(Geological Structure and Relief)

भूगर्भिक संरचना की दृष्टि से सोवियत संघ बड़ा ही जटिल भू-भाग है। यहाँ सभी युगों की प्रतिनिधि चट्टानें मिलती हैं। इस भू-भाग की भूगर्भिक संरचना को अच्छी तरह समझने के लिए, रचना सम्बन्धी कुछ आधारभूत तथ्यों पर प्रकाश डालना उपयुक्त होगा। पृथ्वी के धरातल में मुख्यतः दो प्रकार की रचनाएँ होती हैं। प्रथम, स्थिर भूखण्ड या महाद्वीपीय प्लेट फार्मस् एवं द्वितीय, गतिशील क्षेत्र जिनमें भूसंनतियाँ विकसित होती हैं तथा पर्वत श्रृंखलाओं का निर्माण होता है। इन्हें पर्वत निर्माण वाले क्षेत्र कहा जा सकता है। स्थिर भूखण्ड अत्यन्त प्राचीन एवं कठोर आग्नेय तथा परिवर्तित चट्टानों द्वारा बने होते हैं। इन चट्टानों का निर्माण प्राचीन भूगर्भिक युगों (आर्कियन या प्रोकैम्ब्रियन) में धरातल से नीचे काफी गहराइयों पर हुआ था। कठोर होने के कारण ये भूखण्ड बाद की हलचलों और दबावों से अप्रभावित रहे। निस्संदेह ये कुछ ऊपर उठे तथा इनमें दरारें एवं धसाव पड़ गये। लम्बे युगों तक क्षयकारी शक्तियों ने इनमें कटाव और छीलन का कार्य किया। इन स्थिर भूखण्डों के बीच या आसपास में दूसरे प्रकार के भूभाग हैं जिनमें लाखों-हजारों वर्षों तक स्थिर भूखण्डों से काट कर लाया गया मलबा जमा होता रहा और पर्वत निर्माणकारी घटनाओं के फलस्वरूप इनमें मोड़ पड़े तथा पर्वतों का उदय हुआ।

सोवियत संघ में आधार रूप में दो स्थिर भू-खण्ड हैं। एक, जिसे पूर्वी यूरोपियन या रूसी प्लेटफार्म कहा जाता है तथा दूसरा, जिसे साइबेरियन प्लेटफार्म कहा जाता है। इनके ये नाम स्थितियों के आधार पर पड़े हैं। 'इन दोनों स्थिर खण्डों के बीच या आस-पास के क्षेत्रों में स्थित गतिशील भागों में भूसंनतियाँ विकसित हुईं और पर्वत निर्माणकारी घटनाओं (कैलीडोनियन, हरसीनियन, मेसोजोइक तथा अल्पाइन) में पर्वत श्रृंखलाओं का उदय हुआ। सोवियत संघ के भूग[illegible]त्र में विभिन्न पर्वत निर्माणकारी घटनाओं से प्रभावित क्षेत्रों को

अलग-अलग पेटियों में चित्रित किया गया है। यह इसलिए सम्भव हुआ क्योंकि इन घटनाओं के क्षेत्र अलग-अलग हैं तथा एक बार जिस क्षेत्र में मोड़ क्रिया हुई उसके बाद नहीं हुई। यथा प्री-कैम्ब्रियन (आर्कैन) युगीन पर्वतों के क्षेत्र में प्री-कैम्ब्रियन युग के बाद या कैलीडोनियन युगीन पर्वतों के क्षेत्र में कैलीडोनियन युग के बाद पर्वत निर्माणकारी क्रियाएँ नगण्य मात्रा में ही घटित हुई हैं।[3]

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इन भूगर्भिक हलचलों वाले क्षेत्रों (टैक्टोनिक जोन्स) या उनमें पड़े मोड़ों का वर्तमान धरातलीय स्वरूप से कोई खास सम्बन्ध नहीं है, बल्कि पुरानी जितनी भी रचनाएँ या मोड़ हैं उनका अस्तित्व ही धरातल पर स्पष्टतः प्रकट नहीं है। उत्थान के बाद लाखों वर्षों तक अपरदन शक्तियों ने उन्हें काट-काट कर नीचा कर दिया है, उनके ऊपर तल छट जमा हो गई है। उदाहरण के लिए यूराल पर्वत एवं पश्चिमी साइबेरियन निचले प्रदेश दोनों ही हरसीनियन युगीन रचनाएँ हैं परन्तु पश्चिमी साइबेरिया की तत्कालीन (हरसीनियन) रचनाएँ बाद की तल छट और परतदार चट्टानों के नीचे दबी हुई हैं जबकि यूराल में मूल रचनाएँ (हरसीनियन) कई जगह धरातल पर स्पष्ट हैं। इस प्रकार ये दोनों क्षेत्र यद्यपि समान भूगर्भिक संरचना वाले हैं परन्तु धरातलीय स्वरूप में भारी अन्तर है।

संक्षेप में रूस की भूगर्भिक संरचनाओं का मोटेतौर पर विवरण इस प्रकार है। जैसाकि पहले कहा जा चुका है यहाँ दो प्री-कैम्ब्रियन स्थिर भू-खण्ड हैं—पूर्वी यूरोपीयन एवं साइबेरियन। कैलीडोनियन रचनाएँ साइबेरियन प्लेटफार्म के आस-पास स्थित हैं। दो प्रमुख कैलीडोनियन क्रम हैं। प्रथम साइबेरियन प्लेटफार्म के दक्षिण-पश्चिम में तथा दूसरा वह जो इस प्लेटफार्म को दो भागों में विभाजित करता हुआ दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व दिशा को फैला है। हरसीनियन युगीन रचनाएँ मुख्यतः दोनों प्लेटफार्मों के बीच में फैली हैं जबकि मैसोजोइक एवं अल्पाइन युगीन मोड़ शृंखलाएँ पूर्वी यूरोपीयन स्थिर भूखण्ड, हरसीनियन रचनाएं तथा साइबेरियन स्थिर भूखण्ड की दक्षिणी-सीमा बनाती हुई क्रमशः पश्चिम से पूर्व को फैली हुई हैं। साइबेरियन प्लेटफार्म का चक्कर लगाती ये शृंखलाएँ इसके पूर्वी किनारों तक आगे बढ़ गई हैं।

मैसोजोइक एवं कैनोजोइक या अल्पाइन युगीन रचनाओं में यद्यपि विस्तार-दिशा एवं धरातली स्वरूप की दृष्टि से साम्य है परन्तु क्षेत्रीय दृष्टि से गहराई से देखने पर, अन्तर स्पष्टतः समझा जा सकता है। मैसोजोइक युगीन रचनाएँ प्रमुखतः पूर्वी साइबेरियन में पाई जाती हैं। लीना नदी की चौड़ी मध्य घाटी भी इसी युग से सम्बन्धित है। कैनोजोइक युगीन मोड़दार पर्वतों का विस्तार सर्वाधिक है। इसे यूँ भी समझा जा सकता है कि नवीनतम होने के कारण इस क्रम से

3. Dowdney, J. C.—A Geography of the Soviet Union. Second edition—P. 1.

सम्बन्धित सभी रचनाएँ मोड़ों के रूप में धरातल पर सुस्पष्ट हैं। अन्य क्रमों (प्री-कैम्ब्रियन, कैलीडोनियन या हरसीनियन) की अपेक्षा इनका अपरदन भी बहुत कम हुआ है, बल्कि कई जगह तो ये अभी भी उठाव की अवस्था में हैं। यह क्रम दक्षिण-पश्चिम में आइमियन शृंखलाओं से प्रारम्भ होकर कॉकेशस, पामीर, कोपेतदाघ आदि को जोड़ते हुए प्रशांत तट के समानान्तर फैले कमचट्का, सखालिन एवं क्यूराइल तक आगे बढ़ गया है। अल्पाइन युग में पड़े दबावों के कारण दक्षिणी साइबेरिया तथा मध्य एशिया में कई बेसिन दरारी प्रभावों में बन गये हैं। ये बेसिन वर्तमान में आर्थिक दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण सिद्ध हो रहे हैं।

सरलीकरण की दृष्टि से सोवियत भूखण्डों में हुई भूगर्भिक घटनाओं, रचनाओं एवं उनसे सम्बन्धित भू-आकारों को निम्न पांच विभागों में रखा जा सकता है।

प्री-कैम्ब्रियन रचनाएं :

प्री-कैम्ब्रियन युग के मोड़दार पर्वत जो घिसकर वर्तमान में यूरोपियन रूसी प्लेटफार्म तथा साइबेरिया की आल्दान एवं अनाबार शील्डों के रूप में पाये जाते हैं। इस प्रकार की भूगर्भिक रचनाएँ यूराल एवं डोनेत्ज बेसिन को छोड़कर समस्त यूरोपियन रूस में पाई जाती हैं।

कैलीडोनियन रचनाएं :

कैलीडोनियन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप मध्य पैलियोजोइक तथा पूर्वी-डेवोनियन भूगर्भिक युगों में प्री-बैकालिया तथा ट्रांस-बैकालिया पर्वत श्रेणियों का जन्म हुआ। इनके अतिरिक्त सनास, ओरीन्सिक तथा कुजनेत्स्क बेसिन भी इसी समय की रचनाएं हैं।

हरसीनियन रचनाएं :

हरसीनियन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप यूराल, अल्टाइ, थ्यानशान, नोवाया-जैमल्या तथा कजाखस्तान के उच्च प्रदेशों का आविर्भाव हुआ। इसी घटना के फलस्वरूप फरगना, तूबू, खटंगा तथा आमू दरया के बेसिन बने।

मैसोजोइक रचनाएं :

मैसोजोइक युग में याकुत्स तथा पूर्वी साइबेरिया की रचनाओं का आविर्भाव हुआ। वर्खोयांस्की, अनादिर, कोलमा तथा सिखोटेएलिन आदि भी इसी युग की प्रतिनिधि श्रेणियां हैं। इस युग की कुछ रचनाएँ कैस्पियन सागर के आस-पास भी [illegible] हैं।

अल्पाइन रचनाएं :

यह सबसे नवीन पर्वत निर्माणकारी हलचल मानी जाती है जिससे

चित्र–2
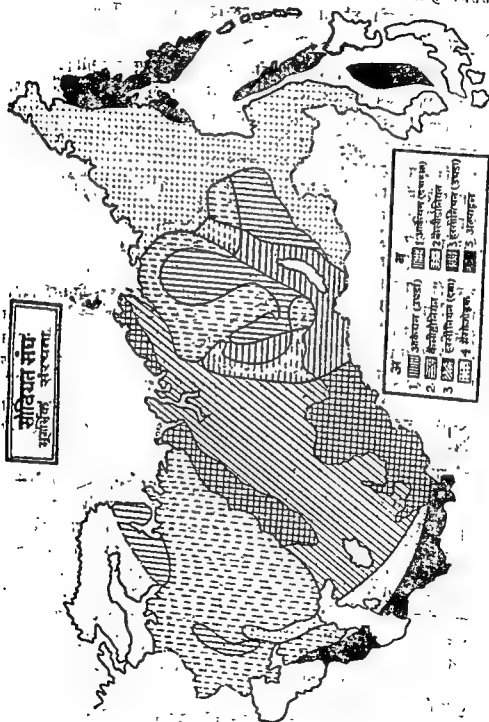
सम्बन्धित श्रेणियाँ सोवियत संघ की दक्षिणी सीमा बनाती हुई फैली हैं। इनका विस्तार पश्चिम में क्राईमिया से लेकर उत्तर-पूर्व में सखालिन एवं कमचट्का तक है। ये श्रेणियां आगे जाकर क्यूराइल द्वीपों के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं।

विविध भूगर्भित हलचलों को ध्यान में रखते हुए जब सोवियत संघ के धरातलीय स्वरूप पर दृष्टिपात करते हैं तो समूचे भू-भाग की आकृति में कोई तारतम्य (केवल दक्षिणी भागों को छोड़कर) समझ में नहीं आता। साधारणतः देश का अधिकांश भू-क्षेत्र एक विशाल निचले मैदान द्वारा घिरा हुआ है। मैदानी भागों की यह शृंखला विशाल रूसी निचले प्रदेश से प्रारम्भ होकर यूराल के उस पार पश्चिमी साइबेरियन निचले प्रदेश तथा मध्य साइबेरियन के नीचे पठारी भागों को जोड़ती हुई सुदूर पूर्व तक चली गई है। दक्षिण में निचले भागों का विस्तार मध्य एशिया या तूरान के निचले प्रदेशों के रूप में है। इस विशाल निचले प्रदेश को दक्षिण, दक्षिण-पूर्व तथा पूर्व में पर्वतीय शृंखलाओं ने घेरा हुआ है जो रूस की प्राकृतिक सीमा भी प्रस्तुत करती है। अधिकतर भागों में निचले प्रदेशों की ऊँचाई 600 फीट से ज्यादा नहीं है। यूरोपियन रूस का निचला मैदान, जिसने देश का लगभग एक-चौथाई भाग घेरा हुआ है, वस्तुतः जर्मन-पोलिश मैदान का ही विस्तार है। यूरोपियन रूस एवं साइबेरियन के निचले भागों को यूराल पर्वत से पृथक् करते हैं। वैसे ये तो कोई पर्वतीय बाधा प्रस्तुत नहीं करते, वे प्रत्येक स्थान पर सिये जा सकते हैं, बल्कि मध्य यूराल में होकर रेल मार्ग (ट्रांस साइबेरियन) व सड़कें भी निकाली गई हैं, पर चूँकि परम्परागत रूप में यूराल श्रेणी एशिया तथा यूरोप के बीच की सीमा मानी जाती है अतः कहने में ये पर्वत ही कहे जाते हैं।

किसी भी भू-भाग के धरातल को वर्तमान स्वरूप प्रदान करने में भूगर्भिक हलचल एवं पर्वत निर्माणकारी घटनाओं के अतिरिक्त क्षयकारी शक्तियों का भी उतना ही महत्वपूर्ण हाथ होता है। प्लीस्टोसीन हिमयुग में रूसी तथा साइबेरियन मैदानों का अधिकतर उत्तरी भाग बर्फ से ढका था, जिसका प्रमाण इन क्षेत्रों में पायी जाने वाली विभिन्न हिमानी-कृत आकृतियों (झीलें, मोरैनिक जमाव, ग्राउंड मारा प्लेन, आदि) के रूप में विद्यमान हैं। दक्षिण के ऊँचे पर्वतीय भागों में भी हिमानियों ने पर्याप्त प्रभाव डाला। मध्य एशिया के पर्वतों के चरण प्रदेशों में हवाओं द्वारा जमा की गई लोयस मिट्टी पाई जाती है। भूगोल-वेत्ताओं का अनुमान है कि इस लोयस का अभाव हिमयुगों के बीच-बीच में हुए शुष्क अन्तरालों में हुआ।

भूगर्भिक हलचलों, पर्वत निर्माणकारी घटनाओं एवं अपरदन के स्वरूप पर एक साथ विचार करने पर एक बात स्पष्ट हो जाती है कि रूस का सर्वाधिक ऊँचा,

सोवियत संघ
धरातलीय स्वरूप
प्रमुख आकृतियाँ एवं पर्वत मालाएँ

भाग सबसे नवीन रचनाओं यानी दक्षिण-वर्ती पर्वत क्रमों में है। पामीर-अल्टाई क्रम में सोवियत संघ की सर्वाधिक ऊँची चोटियां कम्यूनिज्म (24,590 फीट) एवं लेनिन (23,363 फीट) स्थित हैं। धरातलीय स्वरूप की विविधता रूस जैसे विशाल देश में होना स्वाभाविक है। भू-आकारों की विविधता (पर्वत, पठार, मैदान, दलदल) और उनसे प्रभावित आर्थिक क्रियाएँ तो अनुमानित की ही जा सकती हैं, परन्तु सबसे उल्लेखनीय विविधता, जो मनोरंजक भी है, ऊँचाई को लेकर है। पामीर-अल्टाई क्रम से कुछ पश्चिम में ही कैस्पियन सागर विद्यमान है जिसके आस-पास के भू-भागों का तल समुद्र-तल से भी नीचा है। स्वयं कैस्पियन सागर का जल-तल विश्व के औसत समुद्र-तल से 92 फीट नीचा है। मैंगिश्लाक प्रायद्वीप में स्थित करागिये धँसाव समुद्र-तल से 434 फीट नीचा है। इसी प्रकार का एक वह धँसाव है जिसमें दुनिया की सबसे गहरी झील बेकाल स्थित है।[4]

संरचना एवं उच्चावचन की दृष्टि से, मोटे-तौर पर, सोवियत संघ को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. पूर्वी यूरोपियन प्लेटफार्म।
2. यूराल पर्वत क्रम।
3. पश्चिमी साइबेरियन निचले प्रदेश।
4. कजाक उच्च प्रदेश।
5. तूरानियन निचले प्रदेश।
6. साईबेरियन प्लेटफार्म।
7. दक्षिण एवं पूर्वी पर्वत श्रेणियाँ।

चित्र-4

4. Mellor, R.E.H.—*Geography of the U. S.S.R*, MacMillan, P. 7
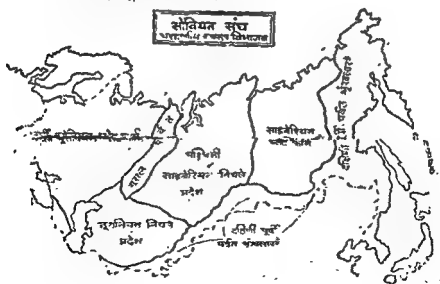
पूर्वी यूरोपियन प्लेट फार्म :

इस प्राचीन स्थिर भूखण्ड का विस्तार यूराल के पश्चिम में प्रायः समस्त यूरोपियन रूस में है, परन्तु इसकी प्राचीन कठोर चट्टानें केवल कुछ ही स्थानों पर नग्न रूप से प्रकट हैं जैसे उत्तर में फैनो-स्कैन्डीनेवियन या बाल्टिक शील्ड के रूप में तथा दक्षिण में पोडोलस्क-एजोव या यूक्रेनियन शील्ड के रूप में। अन्यत्र पुरानी रचनाएँ अपेक्षाकृत नवीन रचनाओं द्वारा ढके हुए रूप में हैं। अत्यधिक अनावृतीकरण के कारण इस प्लेट फार्म का स्वरूप मैदानी हो गया है। इसीलिए कभी-कभी इसे रूसी निचले मैदान के नाम से भी पुकारा जाता है। यह भाग रूसी सभ्यता एवं संस्कृति का केन्द्र माना जाता है। इसका विस्तार उत्तर में श्वेत सागर से लेकर दक्षिण में काले सागर तक (लगभग 1100 मील) एवं पूर्व में यूराल के पश्चिमी चरण प्रदेशों से लेकर पश्चिम में पोलैंड की सीमा तक (लगभग 1500 मील) है। बाद की भूगर्भिक हलचलों ने इस प्राचीन भूखंड में अनेक 'ब्लॉक्स', धसाव तथा दरारों को जन्म दिया। डोनेत्ज बेसिन जहाँ कोयले की खानें मिलती हैं इसी प्रकार का एक धसाव कृत भाग है। वोल्गा प्रदेशों का वर्तमान उच्च स्वरूप प्रावरण क्षय की शक्तियों के कारण बना है। इस सारी असमानता के बावजूद रूसी मैदान कहीं भी 1200 फीट से ज्यादा ऊँचा नहीं है।

यूरोप के अन्य भागों की तरह रूसी मैदान का उत्तरी भाग भी प्लीस्टोसीन हिमयुग मे हिमाच्छादित रहा जहाँ पश्चिम में फैनो-स्कैन्डीनेवियन तथा पूर्व में यूराल के उच्च प्रदेशों से विशालाकार हिमानियों का विस्तार हुआ। इनके द्वारा किये गये जमाव व बनाई हुई भूमाकृतियाँ आज भी धरातल में स्पष्टतः देखी जा सकती हैं। यत्र तत्र मोरैनिक जमाव टीलों या छोटी नीची कूटिकाओं के रूप में दिखते हैं। अंतिम मोरैनिक जमावों ने रूसी मैदान के उत्तरी भागों में शृंखलाबद्ध कूटिकाओं एवं नीची पहाड़ियों को जन्म दिया है। वाल्डाई या स्मोलैंस्क-मॉस्को कूटिकाएँ हिमानियों के जमाव से ही विकसित भू-स्वरूप हैं। इन मोरैनिक जमावों के दक्षिण में आउटवाश प्लेन्स तथा पूर्व-पश्चिम दिशा में फैली चौड़ी घाटियाँ (अर्स्ट्रोम्टालर) हैं जिनमें रेतीली (सैंड) तथा चिकनी (क्ले) मिट्टियों के जमाव ने इन्हें कृषि उपयोगी बना दिया है।[5] इन्हीं आउट वाश प्लेन्स से हिमयुग के बाद तीव्र हवाओं ने मिट्टियाँ उड़ाकर यूक्रेन प्रदेश में लोयस जमावों को जन्म दिया।

विशाल रूसी-मैदान के दक्षिणी भाग में भी हिम जमाव थे जिन्हें समय-समय पर होने वाले कैस्पियन सागरीय विस्तार ने अपने में समावेशित कर लिया। इन भागों में समुद्री मिट्टियाँ, जीवावशेष, रेत, सिल्ट तथा प्राचीन तट रेखाओं के चिन्ह आज भी देखे जा सकते हैं। इस प्रकार यूरोपियन रूस के इस विशाल मैदानी भाग के दक्षिण में स्थित दोनों जलाशयों (काला सागर तथा कैस्पियन

---

5. Mellor, R.E.H.—Geography of the U.S S.R. p. 14.

सागर) के उत्तर में दो भिन्न प्रकार के धरातलीय स्वरूप हैं। काले सागर के उत्तर में युक्रेनियन उच्च प्रदेश फैले हैं जिनमें नोस्टर हिल्स, बगहिल्स, नीपर हिल्स, डान हिल्स, डोनेट्ज तथा यरगेनी हिल्स शामिल हैं जबकि कैस्पियन सागर के उत्तर में निचले भागों का विस्तार है जो यूराल के दक्षिण में होते हुए तुर्गाई प्लेन द्वारा पश्चिमी साइबेरियन निचले प्रदेश एवं अरल सागर के दक्षिण में स्थित तूरान प्रदेशों से जुड़े हुए हैं। यही निचली पट्टी ही मध्य युगों में तातार, मंगोल व अन्य एशियाई कबीलों का यूरोप में जाने का प्रधान मार्ग रहा है।

बाल्टिक शील्ड के रूसी भाग का विस्तार श्वेत सागर एवं फिनलैंड की खाड़ी के मध्य में स्थित क्षेत्रों में जो उत्तर की ओर बढ़कर कोला पेनिनसुला में मिल गये हैं। यहां ग्रेनाइट एवं नीस जैसी पुरानी चट्टानें धरातल के ऊपर स्पष्ट रूप में आ गई हैं। कहीं-कहीं तो ये 1200 फीट तक उठी हुई हैं। कोला प्रायद्वीप में भगो, गोल पहाड़ियां तट प्रदेश के ऊपर सीधी खड़ी हैं जिनका स्वरूप मोनेड-नोक्स जैसा है। अनावृतीकरण के साधनों ने घिस-घिस कर इन्हें गोल चोटियों के रूप में परिवर्तित कर दिया है। वैसे तो हिमानियों ने इस भाग को छील-छील कर बिल्कुल साफ कर दिया है परन्तु हिमानियों के द्वारा लाये गये मलवे के गड्ढों में एकत्र होने के कारण यत्र-तत्र दलदलीय स्वरूप विकसित हो गये हैं। औसतन ऊँचाई इस भाग की 1000 फीट से कम ही है परन्तु खिबिन पर्वत अपवाद रूप में 3000 फीट से ज्यादा ऊँचे उठे हुए हैं।

बाल्टिक शील्ड के दक्षिण में एक विशाल दरारी धसाव है जिसमें फिनलैंड की खाड़ी एवं लडोगा तथा ओनेगा झीलें स्थित हैं। इस धसाव के दक्षिण में पूर्वी यूरोपियन मैदान की परतदार चट्टानों का सिलसिला प्रारम्भ होता है। इस भाग में पुराकल्पीय जमाव क्रमशः दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व की ओर करीब मॉस्को बेसिन की ओर झुक गये हैं। जहां अनावृतिकरण की प्रक्रियों ने काट-छांट कर एस्कार्पमेंटस् व उनके बीच-बीच में स्थित निचले भागों को जन्म दिया है। ओनेगा झील के दक्षिणी सिरे से लेकर बाल्टिक गणराज्य की सीमाओं तक उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम दिशा में फैली वाल्डाई पहाड़ियां इसी प्रकार से बने हुए एस्कार्पमेंट का सर्वोत्तम नमूना हैं। कार्बोनीफेरस चूने के पत्थरों से बने एस्कार्पमेंटस से सम्बन्धित इस पहाड़ी सिलसिले ने संभवतः हिमयुगों में हिमानियों के मार्ग में बाधा उपस्थित की अतः पर्याप्त मलवा इसके ऊपर जमा हो गया और इसकी ऊँचाई 1138 फीट तक हो गई। राजधानी (मॉस्को) के थोड़ा उत्तर में स्थित उत्तर-पूर्व दिशा में विस्तृत स्मोलेंस्क-मॉस्को कूटिका का निर्माण भी ठीक इसी प्रकार हुआ है। मॉस्को बेसिन के दक्षिण में मध्यवर्ती रूसी उच्च प्रदेश स्थित हैं जिनकी औसतन ऊँचाई 600-800 फीट है। कहीं भी ये उच्च प्रदेश 940 फीट से ज्यादा

ewdney J.C.—A Geography of the Soviet Union, Second edition p. 4

ऊँचे नहीं हैं। साधारणतः इन उच्च प्रदेशों का स्वरूप पठार जैसा है जिसके पूर्व में डॉन तथा पश्चिम में ऊपरी नीपर की घाटियाँ स्थित हैं। डॉन की घाटी पर ये उच्च प्रदेश दीवाल की तरह सीधे खड़े हैं। दक्षिण में मध्यवर्ती रूसी उच्च प्रदेश अपेक्षाकृत उच्च भूमि के रूप में पोडोलिस्क-एजोव शील्ड में मिल जाते हैं।

बाल्टिक शील्ड की तरह यूक्रेन गणराज्य के पश्चिमी भाग में भी प्राचीन, स्थिर भू-खण्ड की चट्टानें धरातल तक स्पष्ट रूप में आ गई हैं। इस भाग को पोडोलिस्क-एजोव शील्ड के नाम से जाना जाता है। प्राचीन चट्टानों से इस कठोर धरातल वाले पठारी भाग में होकर नीपर नदी बहती है। यह नदी इस शील्ड के बीचों-बीच होकर गुजरती है जिसकी घाटी में कठोर चट्टानों के ज्यों की त्यों खड़े रह जाने से कई विशाल झरने बन गये हैं। इन झरनों पर जलशक्ति गृह स्थापित किए गये हैं। नीपर के पूर्व में पठारी भाग की ऊँचाई क्रमशः कम हो जाती है परन्तु पूर्व-एजोव पहाड़ियों के रूप में पुनः एक बार अधिक (1066 फीट तक) होती है। धरातल की ऊपरी पर्तों में समस्त पठारी भाग में लोयस या लाइमन मिट्टियों का जमाव है।

यूक्रेनियन शील्ड के उत्तर-पूर्व में डोनेत्ज पहाड़ियाँ विद्यमान हैं। धरातलीय स्वरूप की दृष्टि से ये अवश्य यूक्रेनियन शील्ड की ही विस्तार प्रतीत होती हैं परन्तु संरचना की दृष्टि से भिन्न हैं। इस भाग में आद्यकल्पीय चट्टानें धरातल में बहुत गहराई पर हैं और उनके ऊपर भारी मात्रा में पर्तदार पदार्थों (कार्बोनीफेरस युगीन जमाव भी) का जमाव हुआ। ये जमाव हरसीनियन एवं मेसोजोइक युग में मोड़ क्रिया में प्रभावित हुए। फलतः 1200 फीट ऊँची इन पहाड़ियों का जन्म हुआ। यूक्रेनियन मेगिराफ के दक्षिण में लोयस युक्त चौड़े मैदानी भाग हैं जो दक्षिण-पश्चिम में क्रमशः मोल्डेविया प्रायद्वीप या क्रीमिया श्रेणियों से जा मिलते हैं।

रूसी निचले प्रदेशों के पूर्व में मुख्य उच्च प्रदेश तिमान श्रेणी, ऊफा पठार एवं वोल्गा की पहाड़ियाँ आदि हैं। तिमान श्रेणी जो कैलेडोनियन पर्वत निर्माणकारी घटना की प्रतिनिधि मानी जाती है यूराल के चरण प्रदेशों से उत्तर-पश्चिम की ओर फैली है। यह श्रेणी इतनी नीची है कि इसका महत्व एवं स्वरूप केवल भूगर्भ शक्तियों के लिए ही पहाड़ी के रूप में है अन्यथा धरातल का साधारण ऊँचा उठा हुआ है जो पेचोरा तथा द्वीना-मेजेन बेसिनों के बीच जलविभाजक का कार्य करता है। पेचोरा बेसिन में कोयले के सुरक्षित भंडार हैं। इस प्रदेश के विस्तृत भागों में दलदल, झील तथा जंगल हैं। उत्तर में आर्कटिक तट रेखा के सहारे-सहारे पट्टी के रूप में सदा बर्फ जमी रहती है जहाँ टुंड्रा जैसी अवस्थाएँ हैं।

रूस के इन पूर्वी भागों में क्षैतिज पर्तदार चट्टानों का विस्तार है। मध्य-पूर्वी भागों या दूसरे शब्दों में मध्यवर्ती रूसी उच्च प्रदेश के पूर्व में ओका-डॉन मैदानी भाग का विस्तार है जिसके पूर्व में वोल्गा उच्च प्रदेश के आ जाने से वोल्गा

बेसिन ओका-डॉन बेसिन से अलग हो गया है। वस्तुतः ओका-डॉन तथा ट्रांस-वोल्गा प्लेन्स, दोनों ही विशाल मध्यवर्ती रूसी निचले प्रदेशों के दक्षिणी भाग हैं जिन्हें वोल्गा पहाड़ियों ने पृथक कर दिया है।

वोल्गा उच्च प्रदेशों में उत्तरी भाग को 'प्री-वोल्गा हिल्स' के नाम से जाना जाता है। दक्षिण की तरफ यह सिलसिला सँकरा होता गया है। यहाँ तक कि यरगैनी हिल्स के आस-पास डॉन तथा वोल्गा बेसिनों की दूरी केवल 50 मील रह जाती है। वोल्गा उच्च प्रदेशों की ऊँचाई औसतन 500–600 फीट है, कहीं-कहीं पर ये 1000 फीट तक भी ऊँचे पहुँच गये हैं। इस प्रकार ये उच्च भाग वोल्गा नदी का दाहिना किनारा प्रस्तुत करते हैं जिसमें नदी द्वारा काटे गये भाग अनेक सीढ़ीदार ढाल स्पष्टतया नदी की प्राचीनता को स्पष्ट करते हैं। उत्तर में झिगुली पहाड़ियों के आ जाने से वोल्गा ने मोड़ लिया है जो 'समारा मोड़' के नाम से मशहूर है। इस भाग में जलधारा के दोनों ओर के किनारे दीवार जैसा आकार लिये खड़े हुए हैं। थोड़े पश्चिम में वोल्गा की पुरानी घाटी (साईज्रान तथा उल्यानोव्स्क के बीच) स्थित है जो अब सूखी पड़ी है। नदी की बायीं तरफ निचले भाग हैं अतः जब कभी पानी ज्यादा होता है तो इन ट्रांस-वोल्गा प्लेन्स में बाढ़ आ जाती है।

रूसी मैदान के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में अल्पाइन युगीन शृंखला कार्पेथियन्स के अग्र प्रदेशों का विस्तार है जिनमें नीची पहाड़ियाँ, पठार, असमान मैदान तथा घाटियाँ आदि सभी प्रकार की भूआकृतियां हैं।

यूराल पर्वत क्रम :

पुराकल्प में यूरोपियन एवं साईबेरियन स्थिर भूखण्डों के बीच एक धँसाव क्षेत्र विकसित हुआ। स्वाभाविक रूप से साइबेरियन तथा यूरोपियन स्थिर भूखंडों से मलवा काट कर अनाच्छादन के साधन इस धँसाव क्षेत्र में जमा करते रहे। इस प्रकार एक विशाल भूसंनति का उदय हुआ पुराकल्प के अन्त में हरसीनियन घटना के फलस्वरूप इस गतिशील भाग में मोड़ पड़े और वर्तमान यूराल से लेकर यनीसी तक का सम्पूर्ण भाग पर्वतों के रूप में ऊँचा उठ गया। कालांतर में समस्त उच्च प्रदेश को अपरदन की शक्तियों ने काट-काट कर एक पेनीप्लेन के रूप में परिवर्तित कर दिया। टरशरी युग में अल्पाइन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप जब इस 'पेनीप्लेन' भाग पर दबाव पड़ा तो इसके पश्चिम सीमावर्ती क्षेत्रों में कुछ भाग ऊपर उठ गये। वही वर्तमान यूराल पर्वत के रूप में है। उल्लेखनीय है कि यूराल की ये श्रेणियाँ मूलतः हरसीनियन उठाव की नहीं हैं।

वर्तमान यूराल पर्वत लगभग 60° पूर्वी देशांतर के सहारे-सहारे आर्कटिक तट से यूराल नदी तक लगभग 1500 मील की लम्बाई में फैले हैं। आर्कटिक सागर में स्थित वैगेच द्वीप तथा नोवाया जेमल्या भी वस्तुतः इसी क्रम के विस्तार

भाग है जो समुद्र के बीच में आने के कारण पृथक हो गये हैं। यूराल पर्वत की औसत ऊँचाई 750 फीट से 3000 फीट तक है। यद्यपि कहीं-कहीं 5000 फीट से ऊपर है। चौड़ाई उत्तर में 50 मील तक है जबकि मध्य भाग में सँकरे होते गये हैं परन्तु दक्षिण की तरफ चौड़ाई पुनः ज्यादा (140 मील) हो गई है। धुर दक्षिण मे यूराल का अन्त मोगुदझार नीची पहाड़ियों के रूप में होता है।

यूराल क्रम में कई समानांतर श्रेणियाँ हैं जिनके बीच-बीच में घाटियाँ उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली हैं। अध्ययन की सरलता के लिए यूराल को तीन भागों में बाँटा जा सकता है।

प्रथम, उत्तरी यूराल :

इसकी दक्षिणी सीमा 61° उत्तरी अक्षांश को माना जा सकता है। उत्तरी यूराल सम्पूर्ण क्रम में सबसे ऊँचा भाग है। यहीं यूराल पर्वत की सर्वाधिक ऊँची चोटी माउन्ट नौरोदनाया (6.185) स्थित है। उत्तरी यूराल में दो समानांतर श्रेणियाँ स्पष्ट है जिन्हें कई अनुप्रस्थ घाटियाँ काटती हैं। उत्तर में आर्कटिक तट के पास जाकर दोनों श्रेणियाँ मिल जाती हैं और अब यह पर्वतीय भाग 'आर्कटिक यूराल' के नाम से जाना जाता है। आर्कटिक यूराल की चौड़ाई 15.20 मील एवं ऊँचाई 2000 फीट है। आगे चलकर श्रेणी का नाम पेखोय है जो विश्रृंखलित रूप में टुंड्रा प्रदेशों में जाकर समाप्त हो गई।

द्वितीय, मध्य यूराल :

यहाँ पर्वत क्रम बहुत नीचा हो गया है। क्रमबद्ध शृंखलाओं का अभाव है। कई जगह तो यूराल का स्वरूप इस भाग में पठारी भाग जैसा ही है जिसकी ऊँचाई 600 से 1200 फीट तक है। इस भाग से होकर यूराल को आसानी से पार किया जा सकता है यहीं होकर ट्रांस-साइबेरियन रेलवे यूराल को पार करती है। इस भाग की सर्वाधिक ऊँची चोटी कोन्झाकोस्की कॉमेन (4500 फीट) है।

तृतीय, दक्षिणी यूराल :

इसका विस्तार माउन्ट युरमा से लेकर दक्षिण में मोगुदझार पहाड़ियों तक है। कई समानांतर श्रेणियाँ 100 मील से भी अधिक चौड़ाई में फैली हैं। पूर्व में स्थित 3000 फीट ऊँची यूराल-टाऊ शृंखला इस प्रदेश की जल विभाजक है। सर्वाधिक ऊँचाई यमान-टाऊ (5,432 फीट) के रूप में है। बेलाया नदी के दक्षिण में यूराल-टाऊ शृंखला कई भागों में विभक्त होकर क्रमशः ऊँचे, असमान मैदानों के रूप में परिवर्तित होती चली गई है। दक्षिण-पूर्व में लौहअयस की स्रोत मैगनिट नाया पहाड़ी स्थित है।

भू-गर्भिक संरचना की दृष्टि से यूराल पर्वत क्रम बड़ा जटिल है। अधिकांश भागों में पुराकल्पीय_तलछटों का विस्तार है जिनके बीच-बीच में रूपांतरित

उत्तरी अक्षांश के सहारे-सहारे पूर्व पश्चिम दिशा में फैली साइबेरियन-युवाली कूटिका संभवतः अन्तिम मोरैनिक जमावों से बनी है। इस कूटिका के दक्षिण में विस्तृत आउट-वाश प्लेन्स हैं जहाँ से हवाओं ने मिट्टियाँ उड़ा करके दक्षिणी भागों में लोयस के रूप में जमा की हैं। ऐसी योजना है कि साइबेरियन, युवाली कूटिका को कृत्रिम बाँधों द्वारा और भी नियमित एवं शृंखलाबद्ध बनाया जाए तथा उसमें जल एकत्रित कर के मध्य एशिया की सिंचाई की व्यवस्था की जाए।

सम्पूर्ण पश्चिम साइबेरिया प्रदेश अत्यन्त व्यवस्थाहीन जल-निकास युक्त है। फलतः सर्वत्र दलदल, बॉग्ज, असंख्य झीलों के दर्शन होते हैं। आम ढाल उत्तर की ओर है। ओब, यनीसी, इरटिश आदि प्रमुख नदियाँ हैं जिनकी निचली घाटियाँ जाड़ों में जम जाती हैं। बसन्त के प्रारम्भ में इनकी ऊपरी घाटियाँ खुल जाती हैं, हिम जल बन कर बहने लगती हैं। परन्तु निचली घाटियाँ अभी भी जमी होती हैं। अतः सर्वत्र दलदल का साम्राज्य हो जाता है। नदियाँ अत्यन्त उथली हैं। इनकी घाटियाँ बहुत चौड़ी हैं। कहीं-कहीं तो 100–120 कि. मी. चौड़ाई मिलती है। केवल दक्षिणी-पश्चिमी भाग ही शुष्क (उपयुक्त मात्रा में) रहता है अतः यहाँ कृषि कार्य सम्भव हो सके हैं।

कजाक उच्च प्रदेश :

यह प्रदेश पश्चिमी साइबेरिया की दक्षिणी सीमा पर स्थित है। यूराल की तरह यह भाग भी हरसीनियन युग में ऊँचा उठा, तत्पश्चात् क्षयकारी शक्तियों द्वारा 'पेनीप्लेन' हुआ और बाद की घटनाओं में (अल्पाइन एवं मैसोजोइक) दबाव पड़ने के फलस्वरूप अनेक धँसाव, दरार तथा 'होर्स्ट' युक्त हुआ। आज इसका स्वरूप अत्यधिक कटे-फटे पठार जैसा है जिसमें कुछ छोटी-छोटी पहाड़ी श्रेणियाँ हैं। सर्वाधिक ऊँचाई (4700 फीट) प्रदेश के मध्य में है। अधिकांश प्रदेश 1500-3000 फीट की ऊँचाई लिए हुए हैं। कुछ स्थानों को छोड़ जहाँ मैसोजोइक युगीन पदार्थ जमा है, अन्यत्र अधिकांश भागों में पुराकल्पीय परतदार या प्री-कैम्ब्रियन परिवर्तित एवं आग्नेय चट्टानें विद्यमान हैं।[8] इन प्राचीन चट्टानों में अनेक खनिज हैं जिनका शोषण उक्त चट्टानों के धरातल के पर्याप्त निकट आने (क्षय के फलस्वरूप) से आसान हो गया है। कजाक उच्च प्रदेशों का उत्तरी भाग अर्द्ध-शुष्क एवं आधा दक्षिणी भाग शुष्क दशाओं में स्थित अतः धरातलीय जलाशयों का अभाव है।

तूरानियन निचले प्रदेश :

तूरानियन निचले प्रदेश सोवियत मध्य एशिया में पश्चिम में कैस्पियन सागर, उत्तर में कजाक उच्च प्रदेश एवं दक्षिण तथा पूर्व में नवीन अल्पाइन पर्वत

8. Dewdney, J. C.—A Geography of Soviet Union, econd edition p. 8.

श्रेणियों द्वारा घेरे हुए हैं। कैस्पियन सागर के निकट के निचले क्षेत्रों, जो वास्तव में समुद्र-तल से नीचे हैं, को छोड़कर इस प्रदेश का सबसे नीचा भाग अरल सागर के आस-पास स्थित है। अरल सागर एक उथला जलाशय है जिसकी औसत गहराई 100 फीट के लगभग है। केवल कुछ ही स्थानों पर यह 200 फीट से ज्यादा गहरा है। इसमें दक्षिण तथा पूर्व में स्थित नवीन पर्वत श्रृंखलाओं से नदियाँ आकर मिलती हैं जिनमें सर, आमू प्रमुख हैं। इस प्रकार इस प्रदेश में धरातलीय स्वरूप के कारण अन्तः प्रवाह प्रणाली विकसित हो गई है। कई नदियाँ अरल सागर की ओर प्रवाहित हैं परन्तु उसमें मिलने से पूर्व ही रेगिस्तानों में विलीन हो जाती हैं। सरिमू यां चू इसी प्रकार की जल धाराएँ हैं। अन्तः प्रवाह प्रणाली का एक छोटा-सा केन्द्र बाल्कश झील (गहराई 20 फीट) भी है।

तूरानियन प्रदेश में विविध भू-आकृतियाँ विद्यमान हैं जिनमें तूरान निचला भाग अरल तथा कैस्पियन सागरीय धँसाव, इन दोनों धँसावों के मध्य स्थित उस्ट-उर्ट का पठार, किजिलकुम तथा कराकुल रेतीले भाग प्रमुख हैं। उस्ट-उर्ट का पठार जिसकी ऊँचाई 500–700 फीट है, प्रधानतः चूने का बना हुआ भाग है। यत्र-तत्र इसके ऊपर टरशरी युगीन जमाव हो गये हैं। पठार चारों तरफ तीव्र ढाल लिए हुए हैं। तीव्र ढाल होने के कारण यह भी है कि इसके पश्चिम में कैस्पियन, पूर्व में अरल सागर तथा दक्षिण में उज्बोय की घाटी विद्यमान है। पानी की कमी है अतः जल-धाराएँ अत्यन्त पतली हैं। ये भी रेगिस्तानी भागों में जाकर सूख जाती हैं। जल के अभाव में चूने की चट्टानों की विद्यमानता के बावजूद कार्स्ट स्थलावलि विकसित नहीं हो पाई है। प्रदेश के अन्य उच्च भागों में क्रैस्नोवोडस्क पठार (उस्ट-उर्ट का ही दक्षिणी विस्तार भाग) एवं बेट-पाक दाला पठार (कजाक उच्च प्रदेश एवं सर नदी के मध्य स्थित) उल्लेखनीय हैं जिनकी औसत ऊँचाई क्रमशः 1000 फीट एवं 900–1100 फीट है।

वास्तविक तूरानी निचले प्रदेश सोवियत मध्य एशिया के दक्षिण में रेगिस्तानी भागों में हैं जहाँ कि विस्तृत दूरियों तक रेगिस्तानी दृश्य नजर आते हैं। कई बड़े-बड़े रेगिस्तान हैं, जिनमें मियुन-कुम (चू नदी दक्षिणी पर्वतों के मध्य स्थित) किजिलकुम (आमू एवं सर नदी के बीच) कराकुम (कैस्पियन सागर एवं आमू दरया के बीच) तथा बाल्काश झील के दक्षिण में स्थित रेगिस्तान उल्लेखनीय हैं। इन भागों में शुष्क जलवायु होने के कारण चट्टानें असंगठित हो गई हैं तथा रेत के रूप में चट्टान चूर्ण का बाहुल्य है। हवाओं ने रेत को उड़ा-जमा कर विभिन्न आकृतियों के रेतीले टीलों को जन्म दिया है। दक्षिण में कोपेतदाघ पर्वत श्रृंखला के चरण प्रदेशों में हवाओं ने लोयस जमा कर दी है। सम्पूर्ण प्रदेश में शुष्क एवं धरातल में नमकीन अंशों के बाहुल्य के फलस्वरूप वनस्पति नाममात्र को भी है।

साइबेरियन प्लेटफार्म :

यनीसी के पूर्व में स्थित यह भाग प्राचीन स्थिर भूखण्ड संरचना की दृष्टि से बड़ा जटिल है। यह प्राचीन अंगारालैण्ड का अवशेष भाग माना जाता है जिसमें कैम्ब्रियनयुगीन चट्टानों का विस्तार है, परन्तु बाद के जमावों ने इन मूल चट्टानों को ढका हुआ है। केवल कुछ स्थानों पर (जैसे उत्तर में अनाबार एवं दक्षिण में अल्दान शील्ड) ही प्राचीन अध:स्तरीय चट्टानें धरातल तक नग्न रूप में आ गई है बाकी सम्पूर्ण धरातल पर कैम्ब्रियन से बाद एवं सिलूरियन तक की तलछट जमा है।

किसी समय यह भाग भी ऊँचा था जिसे क्षयकारी शक्तियों ने घिस-घिस करके नीचा कर दिया और इसका स्वरूप पेनीप्लेन जैसा हो गया। नवीन पर्वत निर्माणकारी घटनाओं के फलस्वरूप दबाव पड़ा अतः दरारें व हौर्स्ट का उदय हुआ। फलस्वरूप वर्तमान में यह एक कटे-फटे पठार के रूप में है जिसकी औसत ऊँचाई 1000–2500 फीट है। अल्पाइन घटना के समय दबाव पड़ने पर इस प्रदेश में जब कुछ उठाव हुआ तो नदियों ने तल-कटाव की गति और भी तीव्र की फलस्वरूप यहाँ गहरी घाटियों का निर्माण हुआ।

साइबेरिया के मध्य में स्थित इस पठारी भाग को पुराकल्पीय तलछट में पड़े हुए कैलीडोनियन मोड़ दो भागों में विभक्त करते हैं। पश्चिम एवं उत्तर-पश्चिम में अनाबार शील्ड है, जिसके उत्तरी हिस्से में प्राचकल्पीय चट्टानें धरातल पर नग्न रूप में हैं। शेष हिस्से में ये प्राचीन चट्टानें परतदार चट्टानों से ढकी हैं। अनाबार शील्ड के उत्तरी-पूर्वी भाग (ऊपरी लीना के दक्षिण में) निचले पुराकल्प से लेकर परमियन युग तक की चट्टानें मिलती हैं। परमियन युगीन चट्टानों का विस्तार टुगुज बेसिन में है। साइबेरियन के इस भाग में संरचना एवं उच्चावचन में बहुत कम परस्पर सम्बन्ध है।

पूर्व उल्लेखित कैलीडोनियन मोड़ शृंखला के पूर्व में आल्दान शील्ड स्थित है जिसका विस्तार मध्य-लीना बेसिन एवं मंचूरियन सीमा के बीच में है। यहाँ विस्तृत भागों में प्राचीन चट्टानें (प्राचकल्पीय परिवर्तित एवं आग्नेय चट्टानें) धरातल पर नग्न रूप में देखी जा सकती हैं। इन कठोर चट्टानों का क्षय भी इतना आसान नहीं था अतः यह भाग प्लेटफार्म के उत्तरी हिस्सों की अपेक्षा ज्यादा ऊँचा है। ढाल तीव्र हैं। सर्वाधिक ऊँचाइयाँ स्टेनोवोय पर्वत श्रेणी (8200 फीट) के रूप में हैं।

अत्यधिक कटाव के कारण मध्य साइबेरियन उच्च प्रदेश का स्वरूप वस्तुतः विभिन्न ऊँचाइयों और आकार-विस्तार के छोटे-छोटे पठारों के समूह जैसा हो गया है। इन पठारों की ऊँचाइयाँ विभिन्न हैं, 1000 से 2500 फीट तक हैं। इनमें चट्टानें भी भिन्न-भिन्न हैं तथा कहीं परमियन तो कहीं पुराकल्पीय या

आर्कियन रचनाएँ धरातल पर मिलती हैं। ये पठार अपरदन से बने हैं अतः कहीं-कहीं जहाँ कठोर चट्टानें हैं, क्षय कम हुआ है और ऊँचाइयाँ बनी रह गई हैं। यथा पुटोरान पर्वत 7000 फीट ऊँचे हैं। पठार को काटने-छाँटने में उन नदियों ने भी सहयोग किया है जो पठार के पूर्व में प्रवाहित लीना एवं पश्चिम में प्रवाहित यनीसी में मिलती हैं। इनमें विलीयुम (लीना में) निझनाया, लोअर टुंगस्का, स्टोनी, टुंगुस्का तथा अंगारा (यनीसी में) प्रमुख हैं।

पठार की दक्षिणी-पश्चिमी सीमा के सहारे-सहारे यनीसी कूटिका स्थित है। कैलीडोनियन घटना से सम्बन्धित इन पहाड़ियों का विस्तार दिशा उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर है। यनीसी के पूर्वी किनारे पर ये 3000 फीट की ऊँचाई लिए दीवाल जैसा स्वरूप लिए खड़ी हैं। आगे जाकर (दक्षिण-पूर्व में) यही पहाड़ियाँ सयान श्रेणी में मिल जाती हैं। इस प्रदेश में भी पर्वतीय भाग क्षय, पैनीप्लेन व पुनः उत्थान आदि स्थितियों से होकर गुजरे है। पुनरुत्थान के समय दरार एवं ब्लॉक्स का उदय हुआ। इसी प्रकार की एक दरार-घाटी में 400 मील लम्बी एवं 30 मील चौड़ी बेकाल झील स्थित है। लगभग 5745 फीट (सर्वाधिक गहराई) गहरी यह झील दुनिया की सबसे गहरी एवं बड़ी मीठे पानी की झील है।[9] एक और विशिष्ट लक्षण यह है कि इस झील के दोनों तरफ लगभग 6600 फीट ऊँचे पर्वत खड़े हैं, झील की गहराई 4250 फीट (औसत) है। इस प्रकार कुल गहराई लगभग 11,000 फीट हो जाती है।

दक्षिणी एवं पूर्वी पर्वत श्रेणियाँ :

सोवियत संघ के विशाल भू-क्षेत्र को दक्षिण, दक्षिण-पूर्व एवं पूर्व में सीमावर्ती पर्वत श्रेणियों ने घेरा हुआ है। ये श्रेणियाँ रूस की प्राकृतिक सीमाएँ हैं जो इसे एशिया के अन्य देशों से पृथक् करती हैं। दक्षिण-पश्चिम में कार्पेथियन्स से प्रारम्भ होकर यह सिलसिला कॉकेशस, कोपेदाग, पामीर, अलाय, ध्यान शान, अल्टाइ, सयान, यावलोनो वोय, स्टैनो वोय, वर्खोयांस्की आदि पर्वत क्रमों को शामिल करता हुआ धुर उत्तर-पूर्व में कोलमा पर्वत तक फैला है। विशाल पर्वत शृंखलाओं के इस अर्द्ध चन्द्राकार विस्तार में विभिन्न भूगर्भिक युगों एवं पर्वत निर्माणकारी घटनाओं से सम्बन्धित भाग है जिनका उत्थान भिन्न-भिन्न समयों में हुआ।

पर्वतों की स्थिति एवं विस्तार दिशा को गहराई से देखने पर एक बात प्रकट होती है कि इस अर्द्ध वृत्त के बाहर की ओर सबसे नवीन यानी अल्पाइन युगों में बनी श्रेणियाँ जैसे कार्पेथियन, कॉकेशस, ट्रांस आलाय-पामीर, सिखोटे एलिन तथा सखालिन की पहाड़ियाँ आदि है। इनके आगे भीतर की ओर

Hooson, J. M.--The Soviet Union, the university of London press, P. 2.

हरसीनियन घटना से सम्बन्धित क्रम जैसे अल्टाई, स्टैनोवोय एवं कोल्मा पर्वत आदि हैं एवं सबसे भीतर की ओर स्यान, यावलोनावोय तथा वर्खोयांस्की पर्वत शृंखलाएँ हैं जिनका उत्थान कैलीडोनियन घटना से जोड़ा जाता है। स्वाभाविक रूप से नवीन श्रेणियों की ऊँचाई सबसे ज्यादा है जबकि प्राचीन शृंखलाएँ आवरण क्षय के कारण घिस-घिस कर नीची हो गई है अतः इस अर्द्ध चन्द्राकर वृत्त में जैसे-जैसे भीतर से बाहर की ओर बढ़ते जाते हैं ऊँचाई भी बढ़ती जाती है। पश्चिम से पूर्व की ओर इन पर्वत शृंखलाओं का विस्तार इस प्रकार है :

1. कार्पेथियन्स – द्वितीय विश्व-युद्ध के पश्चात चेकोस्लोवाकिया के रूथेनिया प्रान्त को रूस में शामिल करने के फलस्वरूप कार्पेथियन्स का कुछ भाग इस देश की सीमाओं के भीतर आ गया है। यह पर्वत सोवियत संघ के धुर दक्षिण-पश्चिमी भाग यानी यूक्रेन के हिस्सों में फैला है। अल्पाइन घटना से उत्थित इस पर्वत के सोवियत हिस्से सैंडस्टोन (बलुआ पत्थर) एवं शेल जैसी मुलायम चट्टानों का बाहुल्य है अतः ये हिस्से घर्षण से ज्यादा प्रभावित हुए हैं। औसत ऊँचाई इस भाग में 500–600 फीट है जिसे उभोरस्की, वेरेस्की तथा तातार दर्रों द्वारा आसानी से पार किया जा सकता है। सोवियत कार्पेथियन्स की सर्वाधिक ऊँचाई माउन्ट गोवेर्ला (6800 फीट) के रूप में है।

2. क्रीमियन पर्वत—क्रीमिया प्रायद्वीप की दक्षिणी सीमा पर स्थित लगभग 65 मील लम्बे और 20 मील चौड़े ये पर्वत सोवियत संघ के अन्य पर्वतीय क्रमों की तुलना में बहुत ही छोटे हैं। इस क्रम में तीन समानान्तर श्रेणियाँ हैं जिनमें दक्षिणवर्ती श्रेणी सर्वाधिक ऊँची (5000 फीट) है जिसे 'येला' के नाम से जानते है। दक्षिणवर्ती ऊँची श्रेणी में ही प्रसिद्ध स्वास्थ्य केन्द्र याल्टा स्थित है।

3. कॉकेशस—कॉकेशस पर्वत क्रम अल्पाइन युग से सम्बन्धित होने के कारण काफी ऊँचा है। लगभग 800 मील की लम्बाई में फैले कॉकेशस काले सागर तथा कैस्पियन-सागर के बीच में स्थित है। कई चोटियाँ 15,000 फीट से ज्यादा ऊँची हैं। भागों में सदा हिम आवरण रहने से अनेक हिमानीकृत भू-आकृतियाँ जैसे लटकती घाटियाँ 'यू' आकार की घाटियाँ, 'सर्क' कंधानुमा कूटिकाएँ तथा गिरिशृंग आदि का आविर्भाव हुआ है। कॉकेशस में दो श्रेणियाँ स्पष्ट हैं। उत्तर में महान् कॉकेशस जो हर स्थान पर 6000 फीट से ज्यादा ऊँचे हैं। श्रेणी का केन्द्रीय भाग 12,000 फीट से अधिक ऊँचा है। सर्वाधिक ऊँचाई माउंट एलब्रुज (18,470 फीट) के रूप में है। महान् कॉकेशस के अधः स्तरों में प्रीकैम्ब्रियन युगीन ग्रेनाइट एवं नीस चट्टानें मिलती हैं। दक्षिण में लघुकॉकेशस श्रेणी विद्यमान है। पर्तदार एवं लावाकृत चट्टानों से बने लघु कॉकेशस अपने उत्तरी भाग में (यानी कूरा की ओर झाँकते हुए) 9000–10,000 फीट तक ऊँचे हैं जबकि दक्षिणी भाग में इनका स्वरूप पठारी हो गया है जिसे आर्मेनियन पठार

के नाम से जानते हैं। दोनों श्रेणियों के बीच में पूर्व-पश्चिम दिशा में फैला एक धँसाव क्षेत्र भी वस्तुतः तीन उप-स्वरूपों में है। पश्चिम में रियोनी-निचले प्रदेश, पूर्व में कूरा के निचले भाग एवं मध्य में दोनों निचले प्रदेशों को पृथक् करने वाला सुराम मैसिफ है।

4. सोवियत मध्य एशिया के पर्वत—कॉकेशस पर्वत की ही विस्तार-दिशा में कैस्पियन सागर के पूर्व में कोपेतदाघ पर्वत फैले हैं जो पूर्व में पामीर की गाँठ तक चले गये हैं। यह पर्वत श्रृंखला ईरान की उत्तरी सीमा बनाती हुई तुर्कमान गणराज्य (सोवियत संघ) की दक्षिणी सीमा पर स्थित है। इसका उत्थान भी अल्पाइन घटना से मानते हैं। औसत ऊँचाई 5000 फीट से ज्यादा नहीं है पर कहीं-कहीं ये 9000–10,000 फीट तक ऊँचे हो गये हैं।

सोवियत मध्य एशिया का दक्षिणी-पूर्वी भाग पर्वत क्रमों, पठारों बेसिन एवं घाटियों का एक बड़ा जटिलस्वरूप प्रस्तुत करता है। इसमें, पामीर, अलाय, सर तथा आमू के ऊपरी बेसिन, थ्यान शान तथा बाल्खश बेसिन आदि आते हैं।

पामीर की गाँठ अल्पाइन युग में पड़े मोड़ों का केन्द्रीय क्षेत्र माना जाता है, जहाँ से उत्तर-पूर्व (चीनी-रूसी सीमा के सहारे-सहारे) दक्षिण-पूर्व (काश्मीर तथा तिब्बत की ओर) एवं पश्चिम की ओर (अफगानिस्तान) पर्वत श्रेणियाँ फट कर निकलती हैं। पामीर गाँठ के सोवियत हिस्से का विस्तार तद्झिक गणराज्य के पूर्वी भाग में है। यहां ही सोवियत संघ की दो सर्वोच्च चोटियाँ लेनिन पीक (23,363 फीट) एवं कम्यूनिज्म पीक (24,590 फीट) स्थित हैं। पामीर की औसत ऊंचाई 15,000 फीट है। यह दुनियाँ का सबसे ऊँचा शुष्क पठारी भाग है। नदियाँ 'गोर्ज' (गहरी-सँकरी घाटी) बनाती बहती हैं। भूकंप भी आते रहते हैं।

अलाय पर्वत पामीर से सुर्खोब की घाटी द्वारा पृथक् है। चीनी सीमा से यह श्रेणी पश्चिम की तरफ फैली है तथा सर एवं आमू नदियों के जल-प्रवाहों के बीच जल-विभाजक का कार्य करती है। किरगिज एवं तद्झिक गणराज्यों में अलाय श्रेणी ज्यादा ऊँची (9000 फीट) है परन्तु उजबेक गणराज्य में इनका स्वरूप कटी-फटी, अश्रृंखलित नीची पहाड़ियों (2000–2500 फीट) जैसा हो जाता है।

ऊपरी आमू का बेसिन भाग उजबेक एवं तद्झिक गणराज्यों की दक्षिणी सीमा प्रस्तुत करता है। यहाँ उत्तर से आकर कई नदियाँ मिलती हैं। समुद्रतल से लगभग 1000–1500 फीट ऊँचा फरगना बेसिन वस्तुतः एक दरार घाटी में विकसित भू-स्वरूप है, जिसके दोनों ओर तीव्र ढाल लिए हुए ऊँचे-ऊँचे पर्वत विद्यमान हैं। इसमें होकर सर दरया प्रवाहित है।

थ्यान पर्वत क्रम का विस्तार सोवियत संघ में उस शृंखला के रूप में है जो सर दरया एवं बाल्खश बेसिन के मध्य में स्थित है। अलाय की तरह यहाँ भी पूर्वी भाग में तो ऊँचाई 10,000 फीट तक है परन्तु पश्चिम की ओर घटती जाती है। आगे पश्चिम में थ्यान शान का विस्तार कारा-टाऊ श्रेणी के रूप में है जो रेगिस्तान में बढ़ती चली गई है। मध्यवर्ती थ्यान शान एवं उसकी पश्चिमी श्रेणियाँ—जेरेवशाम, जंगेरियन अला-टाऊ, तार्बागाताय आदि सभी श्रेणियाँ हरसीनियन युग की रचना है। कालान्तर में ये अपरदन के फलस्वरूप नीची हो गई थी परन्तु अल्पाइन युग में इनमें पुनः उत्थान हुआ। पूर्व में थ्यान शान क्विन लिंग के रूप में आगे बढ़ गये हैं। भूगर्भविदों का अनुमान है कि थ्यान शान की उत्तरी श्रेणियाँ मूल रूप में कैलीडोनियन से सम्बन्धित हैं। थ्यान शान क्रम की सबसे ऊँची चोटी पोबेदा (24,000 फीट) है जिस पर रूसी पर्वतारोही प्रथम बार द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान चढ़े थे।

थ्यान शान एवं कजाक उच्च प्रदेश के बीच बाल्खश बेसिन रेगिस्तानी स्वरूप लिए हुए विद्यमान है जिसकी ऊँचाई समुद्र तल से 1000-1200 फीट से ज्यादा नहीं है। कजाखस्तान गणराज्य के उत्तर-पूर्व में कजाक प्रदेश तथा अल्टाई पर्वत के बीच ऊपरी इर्टिश बेसिन विद्यमान हैं।

5. दक्षिणी साइबेरिया एवं सुदूर पूर्व के पर्वतीय क्रम—साइबेरिया के दक्षिण में इर्टिश घाटी से बैकाल झील तक अल्टाइ एवं सयान पर्वत श्रेणियाँ फैली है। इर्टिश एवं यनीसी नदियों के बीच अल्टाई पर्वत 15,000 फीट से अधिक ऊँचे है। मुख्य श्रेणी मे से उत्तर की ओर कुछ विस्तार भाग हैं जिन्होंने कुजनेत्स्क एवं मीनूसिंस्क बेसिनों को घेरा हुआ है। मूलतः अल्टाइ एवं सयान भी प्राचीन पर्वत है जो अपरदन के फलस्वरूप नीचे हो गये थे। अल्पाइन युग में दबाव के कारण ये पुनः ऊँचे उठे। उत्थान के साथ-साथ भारी दरारें तथा बेसिन भी बने। बे बेसिन वर्तमान में आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। कुजनेत्स्क एवं मीनूसिंस्क इसी प्रकार के बेसिन भाग हैं। भूगर्भवेत्ताओं के अनुसार दक्षिणी-पश्चिमी अल्टाइ क्रम मूलतः हरसीनियन तथा सयान क्रम कैलीडोनियन घटना में बने है। उत्तर-पूर्व में अल्टाई भी कैलिडोनियन रचनाओं से युक्त हैं।

अल्टाई क्रम को चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है—1. दक्षिणी अल्टाई—जो लगभग 9000 फीट ऊँचे हैं। साधारण स्वरूप एक पठारी-भाग जैसा है। 2. भीतरी अल्टाई—जो कटयान बेल्की श्रेणी में सबसे ऊँचे हैं। सर्वाधिक ऊँची चोटी माउंट बेलुखा (15,154 फीट) है। श्रेणियों के बीच-बीच में गहरी घाटियाँ हैं। ऊपरी भाग सदा हिम-मण्डित रहते हैं। 3. पूर्वी अल्टाई—जो ओब तथा यनीसी जल-प्रवाहों का विभाजक है। औसत ऊँचाई 5000-8000 फीट है। 4. मंगोलियन अल्टाई—जो पश्चिमी मंगोलिया तथा सोवियत संघ के बीच की सीमा प्रस्तुत करते है। ऊँचाई 9000 फीट तक है।

सयान पर्वत श्रेणी यनीसी के पूर्व में साइबेरिया तथा ट्यूविनियन स्वशासी गणराज्य के बीच एक प्राकृतिक बाधा प्रस्तुत करती हुई फैली है। अपने सम्पूर्ण भाग में यह पर्वत श्रेणी कैलीडोनियन ग्रेनाइट एवं शीस्त चट्टानों की बनी है। मुख्य श्रेणी बोल्शोय-अबाकान नदी तथा बोल्शोय रैपिडस के बीच स्थित हैं जहाँ इसे यनीसी 200 फीट गहरी गोर्ज के रूप में काटती है। पश्चिमी भाग में ऊँचाई ज्यादा है जहाँ माउंट मुंकुसरद्याक 10,500 फीट से ज्यादा ऊँचे हैं।

ट्रांसबेकालया प्रदेश में याबलोनावोय मुख्य पर्वत श्रेणी है जो आर्कटिक तथा प्रशांत महासागरीय की जल-विभाजक है।[10] याबलोनावोय से आगे पर्वत-क्रम दो दिशाओं में बँट जाते हैं। एक उत्तर-पूर्व दिशा की ओर (साइबेरियन प्लेटफार्म की पूर्वी सीमा बनाता हुआ) चला जाता है जिसका विस्तार प्रशांत महासागर एवं लीना बेसिन के मध्य में है। इसमें बर्खोयांस्की, चेरिस्की, कोल्मा, कोरयाक तथा अनादिर आदि प्रमुख पर्वत श्रेणियाँ है। दूसरा पर्वत क्रम सुर पूर्वी प्रदेश के दक्षिण में प्रशांत एवं मंचूरियन-सीमा के मध्य में आगे बढ़ जाता है। इसमें बुरेया, सिखोटे एलिन तथा स्टेनोवोय आदि पर्वत श्रेणियाँ मुख्य हैं।

जल-प्रवाह :

नदियाँ—सोवियत संघ जैसे विशाल देश में एक विस्तृत नदी-जल-प्रवाह का होना बहुत स्वाभाविक है। यहाँ की नदियाँ संसार की सबसे लम्बी नदियों में से हैं, जिनके विशाल बेसिन हैं। साइबेरिया की नदियों के सहारे-सहारे अन्वेषक लोग आर्कटिक वृत्तीय क्षेत्रों तथा ध्रुव की ओर आगे बढ़े। इसी प्रकार यूरोपियन रूसी मैदान की नदियाँ सदा से यातायात, व्यापार तथा सैनिक कार्यों के लिए प्रयोग होती रही हैं। यहाँ की नदियों में कुछ समानताएं विद्यमान हैं जैसेकि सभी नदियाँ प्रायः लम्बी हैं, सभी के विशाल बेसिन हैं एवं प्रायः सभी नदियों में जल-मात्रा एवं प्रवाह ज्यादा रहता है। जाड़ों में अधिकतर नदियाँ जम जाती हैं तो बसन्त ऋतु में सभी बाढ़-युक्त होती हैं। धीमी गति तथा घाटियों में साधारण ढाल भी समान रूप से पाये जाने वाले तत्व हैं।

जल-प्रवाह ज्यादा होते हुए भी इस देश की नदियों को यातायात की दृष्टि से आदर्श नहीं कहा जा सकता है क्योंकि जाड़ों में ये जम जाती हैं। बसन्त में इनमें भीषण बाढ़ होती है तथा ये तोड़-फोड़ एवं विध्वंसक कार्य करती हैं, गर्मियों के दिनों में इनकी जलमात्रा सीमित हो जाती है। यह भी सत्य है कि साइबेरिया की सभी बड़ी नदियाँ उत्तर की ओर आर्कटिक सागर में गिरती है जो साल भर जमा रहने के कारण यातायात की दृष्टि से व्यर्थ हैं। ऋतुओं के अनुसार जल-मात्रा में होने वाले अन्तरों से होने वाली कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने के

---

10. Erich Thiel—The Soviet Far East p. 48

लिए अब नदियों के सहारे-सहारे नहरें तथा बाँध बनाये जा रहे हैं ताकि जल-यातायात वर्ष भर तक नियन्त्रित तथा नियमित जल-धाराओं में हो सके।

सोवियत संघ की नदियों के बेसिनों का विस्तार

जिस सागर व महासागर में गिरती है	क्षेत्रफल (लाख वर्ग मील में)
आर्कटिक महासागर	44
कैस्पियन सागर	15
अटलांटिक महासागर	17
प्रशान्त महासागर	9
कैस्पियन सागर के अतिरिक्त भीतरी जलवायु	8
समस्त	93

यूरोपियन रूस की नदियाँ :

2290 मील लम्बी वोल्गा सबसे महत्वपूर्ण नदी है जो अपनी सहायकों सहित देश का सबसे बड़ा जल-प्रवाह भी प्रस्तुत करती है। यह नदी यूरोपियन रूसी मैदान के उत्तर-पश्चिम में स्थित बाल्डाई पहाड़ियों से निकल कर, अपनी सहायकों को लेती हुई मध्यवर्ती उच्च प्रदेशों के पूर्व में समारा मोड़ में होकर स्टैप्स प्रदेश में प्रवेश करती है। नवम्बर से लेकर मार्च तक वोल्गा की ज्यादातर धारा जमी रहती है। अप्रेल-मई के महीनों में जब बर्फ पिघलती है तो इसमें एकदम पानी बढ़ जाता है। पानी के साथ-साथ बर्फ के बड़े-बड़े टुकड़े भी बह कर आ जाते हैं जिनके कारण जल प्रवाह रुक जाता है और उसके इधर-उधर फैलने से बाढ़ तथा दलदलीय वातावरण हो जाता है। अप्रेल-मई के दो महीनों में जल-प्रवाह की मात्रा का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि इन दिनों समारा मोड़ की घाटी में जलमात्रा लगभग 80 गुनी बढ़ जाती है। वार्षिक बहाव मात्रा का लगभग दो-तिहाई जल इन दो महीनों में निकल जाता है।

वोल्गा का उद्गम पहाड़ियों में समुद्र तल से केवल 600 फीट ऊँचा है जहाँ थोड़ा आगे बढ़ते ही यह नाव्य हो जाती है। अपनी सहायकों सहित वोल्गा 6200 मील की दूरी में नाव्य है। कामा एवं ओका नदी इसकी प्रधान सहायक है। लगभग 950 मील लम्बी ओका नदी यातायात की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है यह नहरों द्वारा ऊपरी वोल्गा से जुड़ी है। वस्तुतः इस नहर के निकास स्थान पर ही मॉस्को बसा है जिसे वोल्गा से जोड़ने के लिए यह नहर बनाई गई है। ऊपरी वोल्गा को नहरों द्वारा स्विर तथा सुखोनो नदियों से जोड़ कर क्रमशः बाल्टिक स्थित, लेनिनग्राद एवं श्वेत सागर स्थित आर्केंजेल बन्दरगाहों तक जलमार्ग बढ़ाये गये हैं।

दूसरे शब्दों में काले सागर व भूमध्य सागर को बाल्टिक सागर एवं श्वेत सागरों से जोड़ा गया है। कैस्पियन सागर में वोल्गा डेल्टा बनाते हुए गिरती है। निचली घाटी में वोल्गाग्राद (स्टेलिनग्राद) इसके दाएँ किनारे पर स्थित है। यहीं से ऊगा नहर द्वारा डॉन नदी व दूसरे शब्दों में काले सागर से जोड़ा गया है।

डॉन काले सागर में गिरने वाली एक छोटी नदी है जो मध्यवर्ती रूसी प्लेटफार्म से निकलती है। यह मुहाने से 600 मील दूर स्थित जाडोंस्क तक नाव्य है। इसके मुहाने पर रोस्टोव नगर बसा हुआ है।

डॉन के प्रतिरिक्त काले सागर में गिरने वाली नदियों में नीस्टर तथा नीपर महत्वपूर्ण हैं। नीस्टर कार्पेथियन शृंखला के गैलीशिया क्षेत्र से निकल कर थोड़ा बहने के पश्चात् रूस की सीमा में प्रवेश करती है।

बग इसकी प्रधान सहायक नदी है। मध्य घाटी में कई प्रपात तथा मुहाने पर तेज ढ़ाल होने के कारण यह यातायात की दृष्टि से ज्यादा उपयोगी नहीं है। इसकी कुल लम्बाई 615 मील है।

नीपर नदी भी वाल्डाई की पहाड़ियों से निकल कर 1400 मील की दूरी तय करके काले सागर में गिरती है। रूस की अन्य नदियों की तुलना में इसकी निचली घाटी जमती भी कम है। नीपर पोडोलस्क-एजोव शील्ड में होकर उसकी प्राचीन रवेदार चट्टानों को काटती हुई चलती है जहाँ इसने कई झरनें बनाये हैं। इन तीव्र प्रपातों के कारण 40 मील का यह मार्ग यातायात के लिए सर्वथा अनुपयुक्त था। इस बाधा को दूर करने के लिए 1932 में नेप्रोगेस बांध बाँधा गया जो 120 फीट ऊँचा है। बाँध के बँधने से समस्त झरनों का ढ़ालीय अन्तर जलगत हो गया है। निचली घाटी के जल-तल को भी काखोव्का बैरांज बनाकर ऊँचा उठा दिया गया है जो 1956 में बनकर तैयार हुआ। नीपर को नहर द्वारा ब्रेस्ट नगर के पास से गुजरती हुई बग नदी से जोड़ा गया है।*

बाल्टिक सागर में नार्वा पश्चिमी द्वीना तथा नेमान नदियाँ गिरती है जो छोटी-छोटी नदियाँ हैं। यातायात की दृष्टि से इनका कोई खास महत्व नहीं है। करेलिया तथा कोला नदियाँ तीव्र गति से बहती हैं इसके रास्ते में ढ़ाल तथा झरनें भी ज्यादा हैं। इनकी तीव्र गति का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि गति के कारण ये जम नहीं पाती। जनवरी के महीने में अवश्य कुछ दिनों के लिए जम जाती हैं। इनके जल प्रपात जल विद्युत उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं। इसी प्रकार से काकेशियस पर्वतीय क्षेत्र से निकलने वाली नदियाँ भी छोटी तथा तीव्रगामी हैं। इनमे से कुछ तो गर्मियों में सूख भी जाती हैं। नेमान, पश्चिमी द्वीना तथा नार्वा की लम्बाई क्रमशः 436, 470 एवं 34 मील है।

---

* नदियों की स्थिति के लिए देखें चित्र "धरातलीय स्वरूप : प्रमुख नदियाँ एवं पर्वत मालाएँ"।

रूसी मैदान के उत्तरी भाग में उत्तरी द्वीना तथा पेचोरा दो बड़ी नदियाँ हैं तथा दोनों ही नाव्य है। द्वीना की एक सहायक नदी सुखोना नहर द्वारा वोल्गा से जुड़ी है इसके मुहाने पर आर्केन्जेल बन्दरगाह है जहाँ इसकी गहराई 50 फीट तक है। सामान्यतः मुहाने से लेकर वाईचेग्दा नदी से मिलने के स्थान तक यह नाव्य है। पिचोरा नदी के मुहाने पर तीव्र ढाल होने के कारण उसमें जलयान नहीं आ-जा सकते।

साइबेरिया की नदियाँ :

धरातलीय समानता के कारण पश्चिमी साइबेरियन नदियों की घाटियों में ज्यादा ढाल नहीं है। इस प्रदेश की सबसे बड़ी नदी ओब 1200 मील की दूरी में केवल 300 फीट नीचे उतरती है। दूसरे, इस प्रदेश की नदियों के मार्ग, घाटियों तथा बाढ़कृत मैदानों में अतिरिक्त मात्रा में पानी भरा रहता है। अतः गति बहुत धीमी होती है। उदाहरण के लिए निचली घाटी में ओब नदी का जल इतनी सूक्ष्म गति से बहता है कि पानी स्थिर सा ही लगता है। यहाँ तक कि मत्स्य जीवन का विकसित होना कठिन हो जाता है। इरटिश नदी अवश्य अपनी ऊपरी घाटी (पहाड़ी भाग) में कुछ तीव्र गति से बहती है। जाड़ों में सभी नदियों की मध्य तथा निचली घाटियाँ जम जाती हैं, इन दिनों वार्षिक बहाव का केवल 1/10 मुश्किल से जाता होगा। वसन्त ऋतु में ऊपरी तथा मध्य घाटियों से पानी ज्यादा मात्रा में बहता है परन्तु प्रारम्भिक दिनों में निचली घाटियाँ अपनी अक्षांशकीय स्थिति (अपेक्षाकृत उत्तरोत्तर) के कारण जमी ही रहती हैं। फल यह होता है कि यह जल आसपास फैलकर बाढ़ तथा दलदल प्रस्तुत कर देता है या ऐसा होता है कि बर्फ एक बांध जैसा कार्य करती है और मध्य घाटी में पानी का तल ऊपर हो जाता है। योरोप की तुलना में साइबेरिया में जाड़ों के जमने के दिन (महाद्वीपीय प्रभाव) वसन्त के बाढ़ के दिन तथा मात्रा एवं गर्मियों में अतिरिक्त आर्द्रता की मात्रा तीनों ही ज्यादा होते है। ठीक यही अवस्था पूर्वी साइबेरियन प्रदेश की नदियों की है जिनमें गर्मी के दिनों में भी संवाहनिक वर्षा से पानी की मात्रा बढ़ जाती है। ओब की लम्बाई 2645 मील तथा इसकी सहायक इरटिश 3200 मील लम्बी है।

साइबेरिया की दूसरी बड़ी नदी यनीसी है जिसमें होकर वसन्त ऋतु में प्रति सैकिड 130,000 घन मीटर पानी बहता है। यह 2360 मील लम्बी है। जाड़ों के दिनों में इसका बहाव केवल 2500 घन मीटर प्रति सैकिड होता है। इसकी प्रधान सहायक नदी अंगारा है जो लगभग 500 मील बहने के बाद इसमें मिलती है। मध्य घाटी में निचली तुंगुस्का नदी दाहिनी ओर से आकर मिलती है।

साइबेरिया प्लेटफार्म के पूर्व में लीना जल-प्रवाह है। लीना नदी बैकाल झील के पास से निकल कर 2645 मील बहकर आर्कटिक महासागर में गिरती है। इसकी प्रधान सहायक बिलोउई अमाया माया तथा आल्दान नदियाँ है।

अपनी निचली घाटी में लीना लगभग 8 मील चौड़ी है। इसकी तुलना यनीसी (4.4 मील) से की जा सकती है। यनीसी में समुद्री जलयान 450 मील दूर स्थित इकार्गा तक जा सकते हैं। लीना अपनी एस्चुरी में बने अवरोधक मुंहेरों के कारण जल यातायात के लिए ज्यादा उपयोगी नहीं हैं। अल्टाई तथा सयान पर्वत श्रृंखलाओं से निकलने वाली अनेक नदियाँ यनीसी एवं लीना में मिलती हैं जो सम्पूर्ण ढाल प्रदेशों का जल इनमें जाकर डालती हैं। ये सभी नदियाँ गहरी घाटियों में होकर बहती हैं। लीना के पूर्व में तीन नदियाँ यना, इन्डीगिरिका तथा कोलयमा दक्षिण से उत्तर की ओर बह कर आर्कटिक महासागर में गिरती है।

मध्य एशिया की नदियाँ :

मध्य एशिया की नदियों का जल-प्रवाह मिश्रित प्रकार का है जिनकी उच्च घाटियों में हिम जल-प्राप्त होता है तथा निचली घाटियों में वाष्पीकरण के कारण सीमित जल रहता है। सर तथा आमू नदियाँ पामीरध्यान-शान पर्वत क्रमों से निकल कर अरल सागर में गिरती है। धुर पूर्व में यावलोनावाई पर्वतों से निकल काफी दूर तक चीन-रूस की सीमा बनाती आमूर नदी (2100 मील) ओखोटस्क सागर में गिरती है।

भीतरी सागर तथा झीलें :

सोवियत संघ में लगभग ढाई लाख झीलें हैं जिनमें कैस्पियन सागर से लेकर छोटी-छोटी तलपात्र झीलें तक शामिल है। इनमें से कुछ बड़ी झीलों का क्षेत्रफल इस प्रकार है :—

कैस्पियन सागर	170,000 वर्ग मील
अरल सागर	24,000 ,,
बेकाल झील	11,000 वर्ग मील
बाल्कश झील	2,050 ,,
लैडोगा झील	6,000 ,,
ओनेगा झील	3,600 ,,
इशीकल झील	2,276 ,,

कैस्पियन सागर :

कैस्पियन सागर सोवियत रूस का ही नहीं वरन् विश्व का सबसे बड़ा भीतरी जलाशय है। इसका जल तल-समुद्र-तल से 94 फीट नीचा है जो पिछले 30 वर्षों में लगभग 8 फीट और कम हो गया है। इसका पानी खारा है जिसमें नमक 13% की मात्रा में विद्यमान है। यह मात्रा में वोल्गा के मुहाने के पास कम है। क्योंकि ताजा पानी निरन्तर मिलता रहता है। यही कारण है कि यहाँ नमक का

अंश केवल 2.4% है। मध्य में यह 8.10% है। औसत समुद्री जल की तुलना में इसमें सोडियम क्लोराइड ज्यादा तथा सल्फेट्स कम है। दक्षिणी कैस्पियन का जल काराबोगाज कोल नामक खाड़ी में जाता रहता है जो चारों तरफ से थल भाग से घिरी हुई है। यह उथली खाड़ी एक तरफ की प्राकृतिक विस्तृत नमक बनाने की कढ़ाई की तरह है जिसमें से पानी वाष्प बनकर उड़ जाता है और नमक रह जाता है। इसकी तली में 6 फीट मोटी नमक की पर्त है। अनुमानतः प्रतिवर्ष लगभग 23.5 घन किलोमीटर जल इसमें से भाप बन कर उड़ जाता है। वर्ग का अनुमान है कि कैस्पियन सागर में साल भर की अवधि में एक मीटर जल भाप बन कर उड़ जाता है। निस्संदेह साथ ही साथ लगभग 20 सेन्टीमीटर जल की पर्त वर्षा तथा 60 सेन्टीमीटर वोल्गा, एम्बा, यूराल तथा टेरेक आदि नदियों के जल से बढ़ जाती है।

अरल सागर तथा अन्य :

अरल सागर की औसत गहराई 60 फीट है। सर्वाधिक गहराई 200 फीट से अधिक नहीं है। इसमें सर तथा आमू नदियां आकर गिरती हैं। पानी में खार का अंश 10% है जिसमें सल्फेट्स अधिक एवं क्लोराइड्स कम है। उत्तरी यूरोपियन रूस की लैडोगा, पीपस तथा ओनेगा आदि झीलें हिम कटाव से बनी हैं। ये सभी जाड़ों में जम जाती है। साइबेरिया स्थित बेकाल झील दुनिया की सबसे गहरी झील (3939 फीट) है। इसका जल मीठा है। यह झील मध्य दक्षिण टरशरी युग में बनी एक गहरी दरार घाटी में पानी भर जाने से बनी है। 400 मील लम्बी तथा 50 मील चौड़ी यह झील चारों तरफ पर्वतीय शृंखलाओं से घिरी है। साल भर जल का तापक्रम बहुत नीचा रहता है यहां तक कि 800 फीट नीचे सदा 37.6 फ़ै० रहता है। बालकश झील का निर्माण काल क्वार्टरनरी युग माना जाता है इसमें इली नदी आकर मिलती है। उल्लेखनीय है कि इसके पूर्वी भाग में पानी खारा तथा पश्चिम में मीठा है। पांच महीने तक यह जमी रहती है। इसीकल तथा काले सागर भी दरार बेसिन एवं भूगर्भिक हलचलों से बने धँसावों में हैं। इसीकल झील 2000 फीट गहरी है इसका पानी हल्का खारा है तथा यह साल भर खुली रहती है।

□□□

सोवियत संघ : जलवायु दशाएँ
(Climatic Conditions)

सोवियत संघ की जलवायु का प्रमुख लक्षण उसमें महाद्वीपीय तत्व की प्रधानता है। केवल कुछ अपवाद स्वरूप भागों दक्षिण-पूर्व में, क्रीमिया प्रैनिनसुला तथा कॉकेशस तट प्रदेश (भूमध्य सागरीय जलवायु) एवं धुर पूर्वी भाग (मानसूनी जलवायु), को छोड़कर समस्त देश में भीषण महाद्वीपीय जलवायु दशाएँ रहती हैं। कठोर, लम्बे जाड़े, कम वर्षा, गर्मियों में संवाहनिक वर्षा, समुद्री प्रभाव कम, छोटी बसन्त ऋतु, गर्म गर्मियाँ, छोटा पतझड़ का मौसम तथा शीत फैलाती बर्फानी ध्रुवीय हवाएँ यहाँ की जलवायु के प्रमुख लक्षण हैं। वस्तुतः दक्षिण तथा पूर्व की गर्म-आर्द्र हवाएँ यहाँ सीमावर्ती उच्च-पर्वतीय शृंखलाओं के कारण नहीं पहुँच पाती। अटलांटिक प्रभाव दूरी के कारण यहाँ आते-आते प्रभावहीन हो जाता है। उत्तर में अवश्य विस्तृत जलाशय हैं परन्तु सदा जमे रहने के कारण वे अपना समकारी प्रभाव डालने में असमर्थ हैं। उत्तरी भागों के नीचे एवं समतल होने के कारण ध्रुवीय हवाएँ बेरोक-टोक सम्पूर्ण भू-खण्ड में आकर इसे ठण्डा बना देती है। इस प्रकार इस महाद्वीप की जलवायु पर विस्तृत भूखण्ड, सीमावर्ती पर्वतीय शृंखला, उत्तर के जमे हुए सागर तथा अटलांटिक महासागर से दूरी आदि तत्वों ने भारी प्रभाव डाला है। यहाँ की जलवायु के सही स्वरूप को समझने के लिए इन प्रभावकारी तत्वों पर प्रकाश डालना वांछनीय है।

अक्षांशीय स्थिति :

सोवियत संघ का अक्षांशीय विस्तार इतना अधिक है कि उसमें ताप मात्रा प्राप्ति की भिन्नता के फलस्वरूप जलवायु दशाओं के स्वरूप में भिन्नता आना स्वाभाविक है। अगर आर्कटिक महासागर के द्वीपों को, थोड़ी देर के लिए, उपेक्षा भी कर दी जाए तो भी इस महादेश का उत्तर-दक्षिण विस्तार लगभग 42° अक्षांशों, उत्तर में 78° उत्तरी अक्षांश (टेमीर पेनिनसुला) से दक्षिण में 36° उत्तरी अक्षांश (दक्षिणी तुर्कमान), में है। यह भी उल्लेखनीय है कि सोवियत संघ का भूक्षेत्र उत्तर की ओर क्रमशः बढ़ता जाता है। आर्कटिक तट के पास सर्वाधिक चौड़ाई है।

इस प्रकार अधिकांश भू भाग उच्च अक्षांशों में ही स्थित है। इस देश का लगभग तीन–चौथाई भाग 50° उत्तरी अक्षांश के उत्तर में है। इस दृष्टि से जब हम इसकी तुलना सं० रा० अमेरिका से करते हैं जिसका समस्त भू-भाग (अलास्का को छोड़कर) 49° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण में है तो पाते हैं कि वास्तव में यह देश बड़ी अलाभकारी स्थिति में है।

सोवियत भूमि का अक्षांशीय वितरण[11]

		भूक्षेत्र का %
70° उत्तर अक्षांश के उत्तर में	—	5.2
60—70° उत्तरी	—	34.3
50—60° उत्तरी	—	40.9
40—50° उत्तरी	—	16.8
40° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण में	—	2.8

ऊँचाई :

जैसाकि 'धरातलीय स्वरूप' अध्याय में स्पष्ट है, सोवियत संघ साधारणतः एक नीचा प्रदेश है जिसका तीन-चौथाई भू-भाग 1500 फीट से नीचा है। फलतः ऐसे क्षेत्र जिनकी जलवायु स्थानीय रूप में ऊँचाई से प्रभावित होती, बहुत कम है। ये मुख्यतः दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व में स्थित पर्वत क्रमों में है परन्तु इस सीमावर्ती पर्वतीय बाधा का इस रूप में उल्लेखनीय प्रभाव है कि यह दक्षिण एवं पूर्व के गर्म-आर्द्र भागों से रूस को पृथक करता है। इधर, उत्तर में कोई ऊँचाई नहीं है अतः ध्रुवीय वायु राशियाँ बे-रोकटोक आ सकती हैं।

समुद्र से दूरी :

सोवियत संघ के विशालाकार (8.6 मि० वर्ग मील) होने के कारण देश का लगभग 75% भूभाग ऐसा है जो समुद्र से 250 मील से अधिक दूर पड़ता है। दक्षिणी साइबेरिया की समुद्र से दूरी सर्वाधिक (1500 मील) है। रूस का सबसे लम्बा समुद्री तट आर्कटिक महासागर का है जो वर्ष के अधिकांश (लगभग 7 माह) दिनों जमा रहता है। पूर्व में प्रशांत तट खुला रहता है परन्तु उसके समीप हो कर ठंडी धारा (ओखोटस्क) प्रवाहित है, दूसरे पूर्वी तट के समानांतर फैली पर्वत श्रृंखलाएँ भीतरी भाग को समुद्री प्रभाव से वंचित रखती हैं। इन परिस्थितियों में इन दोनों महासागरों का प्रभाव सोवियत जलवायु में 'ना' के बराबर है। जो कुछ भी प्रभाव होता है वह अटलांटिक से है और यह वस्तुतः यनीसी तक रहता है, परन्तु दूरी के साथ-साथ यह प्रभाव भी नगण्य होता जाता है।

11. Dewdney, J.C.—A Geography of the Soviet Union p. 18.

इन तीनों तत्वों–उच्च अक्षांश, नीचा धरातल एवं दक्षिण में पर्वतीय दीवार तथा समुद्र से बहुत दूरी, ने मिलकर सोवियत संघ की जलवायु में महाद्वीपीय गुण भर दिए हैं। जिसका सीधा तात्पर्य है—अति तापक्रम, भारी तापांतर एवं अपेक्षाकृत कम वर्षा।

वायु दबाव एवं हवाएं :

जाड़ों के दिनों में एशिया भूखण्ड विशेषकर साइबेरिया के अत्यधिक ठण्डे हो जाने के फलस्वरूप यहाँ सघन उच्च दबाव केन्द्र विकसित हो जाता है। इसका सघनतम केन्द्र बेकाल झील के आस-पास होता है जहाँकि वायु दबाव 30·6 इन्च (1020 मि. बा.) तक हो जाता है। इस उच्च दबाव का पश्चिमवर्ती विस्तार 50° उत्तरी अक्षांश के सहारे-सहारे रहता है। उत्तर-पश्चिम दिशा में आइसलैंडीय निम्न दबाव केन्द्र की ओर वायु भार प्रवणता होती है। मंगोलिया में भी इनदिनों उच्च दबाव होता है। इस प्रकार पूर्वापश्चिम विस्तार में इस उच्च दबाव-क्रम का स्वरूप एक वायु दबाव कूटिका का विकास हो जाता है जिसके दोनों ओर दो पृथक् दिशाओं में वायु चलती हैं। यह दबाव कूटिका एक प्रकार से वायु विभाजक का कार्य करती है। इसके उत्तर में हवाएँ पश्चिम तथा दक्षिण में पूर्व से चलती हैं। पश्चिम से चलने वाली हवाएँ अपेक्षाकृत कम ठण्डी एवं पूर्व से चलने वाली (दक्षिण में) ज्यादा ठण्डी होती हैं। इस स्थिति में अक्षांश के साथ तापक्रम में जितनी कमी आनी चाहिए नहीं आ पाती। साइबेरियन उच्च से एल्युशियन द्वीपों के आस-पास
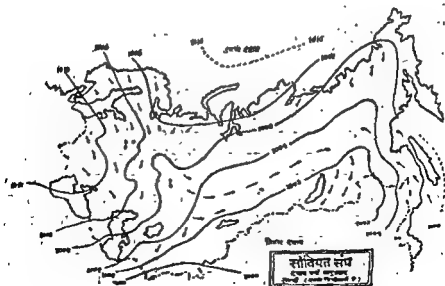
चित्र–5

विकसित कम दवाव केन्द्र की ओर हवाएँ जाती हैं। इसलिए धुर पूर्वी भागों में जाड़ों में हवाओं की दिशा प्रायः उत्तर या उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व को होती है। चूँकि ये हवायें भी शुष्क, ठण्डे भागों की तरफ से आती हैं, अतः प्रशांत महासागर का समकारी प्रभाव केवल तटवर्ती पट्टी में ही सीमित हो जाता है।

गर्मियों में जैसे-जैसे सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध में लम्बवत होता जाता है, ताप व दबाव सम्बन्धी दशाएँ बदलती जाती हैं। यहाँ तक कि जून के माह तक दशाएँ बिल्कुल उल्टी हो जाती हैं। साइबेरियन उच्च दबाव क्रम के स्थान पर निम्न दबाव क्रम विकसित हो जाता है जिसका केन्द्र बलूचिस्तान के ऊपर होता है। परन्तु विस्तार उत्तर-पूर्व की ओर आर्कटिक तटों तक होता है। सोवियत भूमि में कम दबाव केन्द्र अपेक्षाकृत हल्का (29·6 इन्च या 1002 मि. बा) होता है। 50° उत्तरी अक्षांश के सहारे-सहारे एक बहुत ही हल्के किस्म का उच्च दबाव क्रम भी उपस्थित रहता है जो कुछ सीमा तक वायु दिशा को प्रभावित करता है। इन दिनों सब तरफ से हवाओं का मुख्य आकर्षण केन्द्र मध्य व पश्चिम एशिया का निम्न दबाव केन्द्र होता है यूरोपियन रूस व पश्चिमी साइबेरिया में हवाओं का पश्चिम एवं उत्तर-पश्चिम से तथा मध्य एशिया में उत्तर एवं उत्तर-पूर्व से होता है। आर्कटिक तट के सहारे-सहारे हवाएँ साधारणतः पूर्व से बहती हैं। धुर पूर्व में चलने वाली हवाएँ वस्तुतः दक्षिणी-पूर्वी गर्मी के मानसून होते हैं जो तटवर्ती भागों में वर्षा भी करते है। भारत प्रायःद्वीप की तरफ से दक्षिणी-पश्चिमी मानसून पर्वतीय बाधा के कारण नहीं पहुँच पाते।

वायु राशियाँ एवं चक्रवात :

सोवियत भूखण्ड को तीन वायु-राशियाँ प्रभावित करती हैं।[12] ये हैं—

1. आर्कटिक
2. ध्रुवीय महाद्वीपीय
3. उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय

आर्कटिक वायु एशिया आर्कटिक महासागर के ऊपर विकसित होकर दक्षिण की तरफ रूसी निचले प्रदेशों को प्रभावित करती हैं। लक्षणों की दृष्टि से इनका स्वरूप प्रायः ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशियों जैसा ही होता है। इनमें भी तापक्रम बहुत नीचे, आर्द्रता कम एवं स्वच्छता अधिक होती है। इनका सर्वाधिक प्रभाव पूर्वी साइबेरिया में होता है जहाँ पछुआ हवाएँ नहीं पहुँच पाती। बसन्त तथा पतझड़ ऋतु में आर्कटिक वायु-राशियाँ दक्षिणी भागों तक पहुँच जाती है। फलस्वरूप इन क्षेत्रों में तापक्रम एकदम गिर जाते हैं, पाला पड़ जाता है।

---

12. Hoffman, G.W.—A Geography of Europe P. 65

ध्रुवीय महाद्वीपीय वायुराशियों का प्रभाव-क्षेत्र भी प्रायः वही है जो आर्कटिक वायु राशियों का। गर्मियों के दिनों में जब मध्य एशिया में वायु दबाव कम होता है तो दोनों ही वायु राशियों का स्वाभाविक आकर्षण उधर होता है। अतः इन दिनों साइबेरिया के उत्तरी तट प्रदेश के ऊपर ध्रुवीय तथा आर्कटिक वायु राशियों का सीमान्त बन जाता है। जिससे ठण्डे तूफान आते हैं।
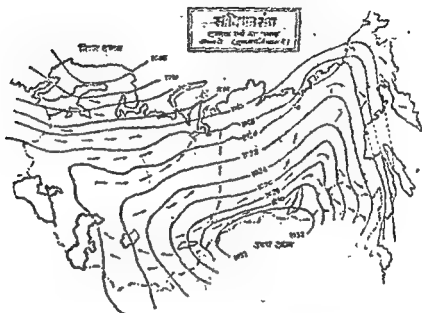
चित्र–6

गर्मियों के दिनों में एजोरे उच्च दबाव कम अपेक्षाकृत उत्तर की ओर खिसक जाता है तथा पछुआ हवाओं को नियन्त्रित करता है जो इन दिनों समस्त यूरोपियन रूस में चलती हैं। केवल आर्कटिक तथा प्रशांत तट ही इनसे वंचित रहते हैं। दक्षिणी यूरोपियन रूस में कभी-कभी एजोरे उच्च दबाव केन्द्र से प्रति चक्रवात आ जाते हैं जिनसे शुष्कता एवं अकाल की दशाएं बन जाती हैं।

उत्तरी अटलांटिक महासागर में विकसित 'समुद्री ध्रुवीय वायु राशियाँ' कभी भी रूस में शुद्ध रूप में नहीं पहुँच पाती क्योंकि यूरोप को पार करते-करते उनके सामुद्रिक गुण समाप्त हो जाते हैं तथा उनमें महाद्वीपीय वायु राशियों जैसे गुण बढ़ जाते हैं। ये वायु राशियाँ जाड़ों तथा गर्मी सभी समयों में शुष्क रहती हैं।

दक्षिणी सोवियत संघ का कुछ भाग उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय वायु-राशियों द्वारा प्रभावित होता है। ये मध्य एशिया, कजाकिस्तान तथा दक्षिणी रूसी मैदान में विकसित होती हैं। गर्मियों में इनका प्रभाव क्षेत्र स्टैप्स तथा टैगा वन ˝क्षिणी सीमा तक विस्तृत हो जाता है। इनका तापक्रम ज्यादा होता है।

अतः गर्मियों में तो बहुत ही भयानक सिद्ध होती है। आर्द्रता कम होती है अतः वर्षा नगण्य होती है एवं स्थानीय स्थितियों पर निर्भर करती है। जाड़ों में ये कमजोर पड़ जाती हैं। मध्य एशिया तक इस ऋतु में ध्रुवीय वायु-राशियाँ प्रभावकारी होती हैं।

तापक्रम :

जाड़ों के दिनों में सम ताप रेखाओं का उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व को विस्तार अटलांटिक महासागर के उस प्रभाव का द्योतक है जो पछुआ हवाओं के द्वारा यूरोपियन रूस और पश्चिमी साइबेरिया को पार कर यनीसी तक ले जाता है। जनवरी माह में सम्पूर्ण देश में तापक्रम हिमांक (32° फं. से नीचे) होता है, केवल क्रीमिया, ट्रांस काकेशिया तथा मध्य एशिया का दक्षिणी भाग ही इसके अपवाद होते हैं जहाँ तापक्रम हिमांक से कुछ ऊपर (35° से 40° फं) पाया जाता है। साधारणतः यूरोपियन रूस तथा धुर पूर्वी भागों के स्थितिजन्य तापक्रम समुद्री प्रभाव से संशोधित कर दिये जाते हैं जबकि साइबेरिया के तापक्रमों को उत्तर से चलने वाली ठण्डी हवायें और भी ज्यादा कम करती हैं। फलतः उत्तरी-पूर्वी साइबेरिया का भाग दुनिया का सबसे ठण्डा क्षेत्र हो जाता है। पश्चिम से पूर्व यानी यूरोपीयन रूस से साइबेरिया की तरफ तापक्रम किस गति से कम होता है इसका सही अनुमान कुछ स्थानों के तापक्रम आँकड़ों से हो जाता है। यथा, जाड़ों के दिनों (जनवरी) में आर्केगिलस्क एवं कजान का तापक्रम लगभग समान होता है यद्यपि पहला नगर 65° उत्तरी तथा दूसरा 55° उत्तरी अक्षांश पर स्थित है। इस प्रकार किसी भी एक ही अक्षांश पर पश्चिम से पूर्व की ओर तापक्रमीय ह्रास देखा जा सकता है।

चित्र–7
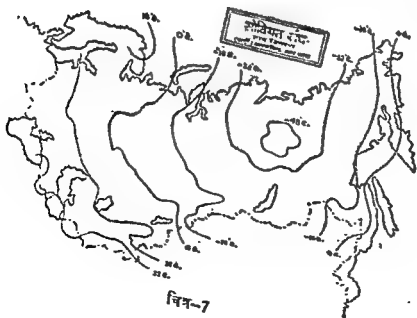
जनवरी का औसत तापक्रम कालीनिनग्राद में 27° फ़ै०, मास्को में 14° फ़ै०, कजान में 7° फ़ै०, टोमस्क में 3° फ़ै०, ओम्स्क में 10° फ़ै०, इगार्का में 22° फ़ै०, याकुत्स में 44° फ़ै० तथा बर्खोयांस्की 58° फ़ै० रहता है। इस माह में बर्खोयांस्की एन्टार्कटिका (94° फ़ै०) को छोड़कर विश्व का सर्वाधिक ठंढा भाग होता है। बर्खोयांस्की या लीना से आगे समताप रेखाएँ पुनः उत्तर-दक्षिण मोड़ ले लेती हैं जो धुर पूर्व में प्रशांत महासागरीय गर्म प्रभाव की द्योतक है। लेकिन यहाँ 'गर्म प्रभाव' भी सापेक्षार्थ तापक्रमयुक्त में प्रयुक्त किया गया है अन्यथा पूर्वी भाग भी हिमांक से नीचे तापक्रमयुक्त होते है यथा, कमचट्का के पेट्रोपावलोव्स्क में जनवरी का औसत ताप 17° फ़ै०, ब्लाडीवोस्टक में 6° फ़ै० एवं ओखोत्स्क में 13° फ़ै० होता है। हिमांक से ऊपर वाले प्रदेशों में भी 45° फ़ै० से ऊँचा तापक्रम नहीं होता। क्रीमिया तट पर स्थित याल्टा में 39 फ़ै० एवं ट्रांसकाकेशस के बातुमी नगर में 43° फ़ै० तापक्रम रहता है। मध्य एशिया के उत्तरी भागों में औसतन 23° फ़ै० तथा दक्षिणी भागों में 32° फ़ै. रहता है।

गर्मियों के दिनों में ताप वितरण पर अक्षांशीय प्रभाव स्पष्टतः प्रतीत होता है। इन दिनों अधिकांश समताप रेखाएँ पूर्व-पश्चिम दिशा में विस्तृत होती है इनमें थोड़ा सा मोड़ धुर पूर्व एवं पश्चिम में दिखाई पड़ता है जो संभवतः समुद्री प्रभाव के कारण है। यथा, बाल्टिक प्रदेश एवं रूसी मैदान में समताप रेखाएँ अपने दक्षिण-पश्चिम एवं धुर पूर्व में तेजी से दक्षिण की ओर मुड़ जाती हैं। यह झुकाव समुद्री प्रभाव द्वारा तट क्षेत्रों के तापक्रमों को नीचा करने का संकेत है। जाड़ों में अगर थोड़ा-सा भाग ही हिमांक से ऊपर तापक्रमों-युक्त होता है तो गर्मियों के दिनों में केवल थोड़ा सा उत्तरी भाग ही ऐसा होता है, जहाँ तापक्रम हिमांक से नीचे रहते है। सबसे नीचे तापक्रम आर्कटिक तट के सहारे स्थित क्षेत्रों में रिकार्ड किये गये है जहाँ होकर जुलाई माह की 50° फ़ै० की समताप रेखा गुजरती है। इन दिनों सबसे ऊँचे तापक्रम मध्य एशिया में पाये जाते है अनेक स्थानों पर 75° फ़ै० से ऊँचे (ताशकद 80° फ़ै०, टुर्टकुल 82° फ़ै०) तापक्रम होते है। पश्चिम में लेनिनग्राद या कालीनिनग्राद के ताप-आंकड़ों (दोनों में 63° फ़ै.) को देखने से अटलांटिक के सशोधक प्रभाव का स्पष्ट संकेत मिलता है। प्रशांत तट पर स्थित ब्लाडीवोस्टक का अगस्त का तापक्रम 69° फ़ै० होता है। जबकि उत्तर की ओर स्थित प्रशांत तटों के तापक्रम आर्कटिक तटीय तापक्रमों से बहुत अधिक भिन्न नहीं है। इस प्रकार स्पष्ट है कि गर्मियों के दिनों में तापक्रमों का प्रादेशिक-अन्तर उतना अधिक नहीं है जितना कि जाड़ों में होता है। जुलाई के अधिकतम (ताशकद 80° फ़ै०) व निम्नतम (सागास्तिर 41° फ़ै०) तापक्रमों में केवल 39° फ़ै० का अन्तर होता है जबकि जनवरी में यह अन्तर 101 फ़ै० (बातुमी 43° फ़ै० एवं बर्खोयांस्की 58° फ़ै०) तक हो जाता है।

सर्वाधिक गर्म एवं ठंडे महीनों के भारी तापांतर की उपस्थित रूसी जलवायु के महाद्वीपीय स्वरूप की प्रतीक है। एक बात और स्पष्ट है कि गर्मियों के बजाए

जाड़ों में तापांतर ज्यादा पाये जाते हैं। क्षेत्रीय दृष्टि से सबसे ज्यादा तापांतर सबसे ठंडे प्रदेश यानि पूर्वी साइबेरिया में मिलते हैं। बर्खोयांस्की के सर्वाधिक गर्म एवं ठंडे माह का तापांतर 117° फ़ं० होता है। यह सम्भवतः विश्व में सर्वाधिक है। तटवर्ती प्रदेशों में भी यहाँ पर्याप्त तापांतर मिलता है। बाल्टिक तट प्रदेशों में यह 30° फ़ं० एवं प्रशांत तटों पर 60° फ़ं० तक हो जाता है।

चित्र—8

जैसे-जैसे उत्तर की ओर बढ़ते हैं पाले रहित दिनों की संख्या कम होती जाती है। धुर उत्तरी भागों में लगभग 70 दिन ही ऐसे होते हैं जिन दिनों कि तापक्रम हिमांक से ऊपर हो जाता है। साइबेरिया की दक्षिणी सीमा पर यह संख्या 180 हो जाती है। यूरोपियन रूस में, उत्तरी तट पर 170 दिन, काले सागर के आस-पास 300 दिन तथा दक्षिणी क्रीमिया में 340 दिन (सर्वाधिक) पाले रहित होते हैं। मध्य एशिया में भी यही क्रम रहता है। उत्तर से दक्षिण को संख्या बढ़ती जाती है मध्य कजाकिस्तान में 200 से बढ़कर यह संख्या दक्षिणी सीमा के आस-पास 340 दिन हो जाती है।

वर्षा :

नीचे धरातल, देश के मध्य भाग में पर्वत श्रृंखलाओं की अनुपस्थित एवं जलवायु के महाद्वीपीय स्वरूप आदि तत्वों ने मिलकर सोवियत संघ के अधिकांश भागों में हल्की किन्तु समवितरित वर्षा प्रदान की है जो क्रमशः पश्चिम से पूर्व की ओर कम होती जाती है। पश्चिमी रूस में 20 इंच से लेकर पूर्वी साइबेरिया में 5 इंच तक औसत पाया जाता है। केवल धुर पूर्वी भाग को छोड़कर जहाँ प्रशांत

महासागरीय हवाओं से वर्षा होती है बाकी समस्त देश में अटलांटिक से आने वाली हवाओं से वर्षा होती है। चूंकि पछुआ हवाएँ पश्चिम से पूर्व की ओर क्रमशः शुष्क होती जाती है अतः वर्षा की मात्रा भी कम होती जाती है। 60° उत्तरी अक्षांश के समानान्तर आर्द्र क्षेत्र से उत्तर तथा दक्षिण की ओर भी वर्षा की मात्रा क्रमशः कम होती जाती है। देश का सबसे अधिक शुष्क भाग तूरान प्रदेश है जहाँ सम्पूर्ण वर्ष में 5" से अधिक पानी नहीं पड़ता।

अधिकतर बसे क्षेत्रों में 16 इंच से 20 इंच तक वर्षा होती है। यह मात्रा वस्तुतः यूरोपियन रूस एवं पश्चिमी साइबेरिया के बसे प्रदेशों की है परन्तु वहाँ भी क्षेत्रीय भिन्नताएँ मिलती हैं। यूरोपियन रूस के उत्तरी पश्चिमी भाग में जहाँ पछुआ हवाएँ ज्यादा प्रभावकारी होती हैं, वर्षा की मात्रा 25 इंच तक हो जाती है। सोवियत मध्य एशिया एवं दक्षिणी-पश्चिमी साइबेरिया के पर्वतीय क्षेत्रों की वर्षा-मात्रा ऊँचाई का प्रभाव स्पष्टतः प्रकट करती है। इन पर्वतों के चरण प्रदेशों (16 इंच) से ऊँचाई के साथ-साथ (चोटियों पर 50 इंच तक) मात्रा बढ़ती जाती है। धुर पूर्व में सिखोटेइलिन एवं कमचट्का प्रायः द्वीप में होने वाली भारी वर्षा के लिए दक्षिणी-पूर्वी मानसून उत्तरदायी हैं। कॉकेशस के दक्षिण-पश्चिमी ढाल प्रदेशों में स्थित बातूमी नगर में वर्षा 93 इंच तक रिकार्ड की गई है। काले सागर की निकटता एवं खड़ी तीव्र ऊँचाइयाँ ही इस भारी वर्षा के लिए परिस्थितियाँ प्रस्तुत करती हैं।

कम वर्षा वाले क्षेत्रों (16 इंच से कम) को दो समूहों में रखा जा सकता है। प्रथम, पूर्वी साइबेरिया एवं धुर पूर्व के भीतरी देश तथा दूसरा सोवियत मध्य एशिया। प्रथम क्षेत्रों में वर्षा कम होने का मुख्य कारण है कि यहाँ तक पछुआ हवाएँ पहुँच नहीं पाती तथा प्रशांत की ओर से आने वाली हवाओं को पूर्व के पर्वत क्रम रोक लेते हैं। लीना बेसिन में 8 इंच से भी कम वर्षा होती है। सागास्टिर का वार्षिक रिकार्ड 3.3 इंच है। सोवियत मध्य एशिया में, सीमावर्ती क्षेत्रों से प्रदेश के मध्य में स्थित रेगिस्तानी हृदय की ओर वर्षा क्रमशः कम होती जाती है। टर्टकुल का वार्षिक औसत 2.4 इंच है।

ज्यादातर भागों में गर्मियों में ही वर्षा का अधिकांश भाग प्राप्त होता है। यह दूसरी बात है कि टुंड्रा तथा टैगा प्रदेश में गर्मियों के उत्तरार्द्ध तथा स्टैप्स प्रदेश में पूर्वार्द्ध में ज्यादा पानी पड़ता है। यूरोपियन रूस तथा साइबेरिया में जुलाई एवं अगस्त सबसे ज्यादा आर्द्र माह होते हैं जबकि तूफानों के साथ जोर की वर्षा आती है। आमूर तथा उमूरी बेसिनों में, दक्षिणी-पूर्वी मानसून गर्मियों में तथा यूरोपियन रूस के उत्तरी-पश्चिमी भागों में पछुआ हवाएँ ज्यादातर पानी पतझड़ में डालती हैं। कैस्पियन सागर के पश्चिमी भागों में पतझड़, जाड़े तथा आर्मीनियन पठार में बसंत ऋतु में अधिकांश वर्षा होती है। मध्य एशिया में जो कुछ भी वर्षा होती है उसका अधिकांश भाग मार्च-अप्रैल एवं स्टैप्स प्रदेश में मई-जून [illegible] त होता है।
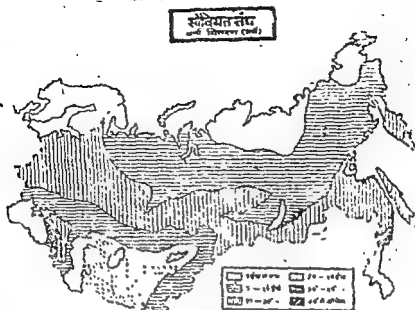
चित्र–9

इस प्रकार सोवियत संघ के ज्यादातर हिस्से गर्मियों में ही आर्द्रता प्राप्त करते हैं। इसके केवल कुछ ही अपवाद हैं। काले सागर के पूर्वी तट क्षेत्रों में क्रीमिया से तुर्की सीमा तक फैला भाग अपनी वर्षा का अधिकांश भाग जाड़ों में प्राप्त करता है जो काले सागर की ओर आने वाले चक्रवातों से होती है। रूस के पर्याप्त भागों में जाड़ों में हिम वर्षा होती है। यूरोपियन रूस के मध्य तथा उत्तरी भागों में मध्य नवम्बर से मार्च तथा आर्कटिक प्रदेश में सितम्बर से जून तक हिम-

चित्र–10
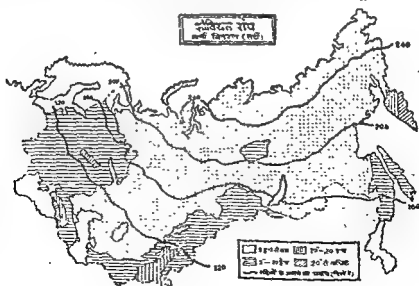
वर्षा होना साधारण बात है। औसतन रूप से उत्तरी साइबेरिया एवं टुंड्रा में 260 दिन, यूक्रेनिया-स्टैप्स में 40 दिन तथा मध्य एशिया में 20 दिन हिम-वर्षा होती। लगातार हिम-वर्षा से उत्तरी भागों में 36 इंच की मोटाई तक की हिम-पर्तें जम जाती है। हिम-आवरण की अवधि उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर क्रमशः कम होती जाती है।

जलवायु विभाग :

सोवियत संघ जैसे विशाल देश में, जहाँ अक्षांशीय विस्तार एवं स्थानीय परिस्थितियाँ जलवायु तत्वों पर पर्याप्त प्रभाव डालती हैं, विभिन्न प्रदेशों में विभिन्न प्रकार की जलवायु दशाओं का होना बहुत स्वाभाविक है। मोटे-तौर पर इस महादेश को निम्न जलवायु विभागों में विभक्त किया जा सकता है :

1. आर्कटिक प्रदेश
2. उप-आर्कटिक प्रदेश
3. यूरोपियन जंगल
4. पश्चिमी तथा मध्य साइबेरिया
5. मानसूनी प्रदेश
6. स्टैपी प्रदेश
7. रेगिस्तानी प्रदेश
8. ट्रांस-कॉकेशस प्रदेश
9. पर्वतीय प्रदेश

चित्र-11

आर्कटिक प्रदेश :

आर्कटिक या टुंड्रा जलवायु विभाग से सम्बन्धित भू-भाग, जो सोवियत संघ के उत्तरी सीमावर्ती क्षेत्रों में विद्यमान हैं, देश का 15% भाग घेरे हुए है। इसकी दक्षिणी सीमा का निर्धारण प्रायः जुलाई की 50° फ० समताप रेखा द्वारा किया जाता है। दूसरे शब्दों में, उत्तरी साइबेरिया उत्तरी तट प्रदेश तथा ग्रीनलैण्ड आदि में टुंड्रा तुल्य जलवायु मिलती है। यहाँ भीषण लम्बी ठंडी तथा कठोर तुषारमयी सर्दियाँ होती हैं। गर्मियों का मौसम बहुत छोटा होता है, परन्तु इन दिनों सूर्य लगातार चमकता रहता है; अतः दिन बहुत बड़े होते हैं। इस प्रकार केवल कुछ दिनों के लिए तापक्रम शारीरिक एवं मानसिक कार्यों के लिए उपयुक्त हो जाता है। ठंड की भीषणता क्रमशः पूर्व की ओर बढ़ती जाती है। वर्खोयांस्क एवं ओयमियाकोन के बीच के क्षेत्र में घोर महाद्वीपीय प्रभाव स्पष्ट होते हैं जहाँ लगभग 8 माह तक तापक्रम हिमांक से नीचा रहता है। ठंड की भीषणता इसमें चलने वाली तूफानी, बर्फीली हवाओं से और भी ज्यादा बढ़ जाती है। वर्षा कम होती है जिसकी मात्रा प्रदेशीय भिन्नता लिए होती है। बैरेन्ट सागर क्षेत्र में लगभग 15 इन्च तथा लीना डेल्टा में केवल 4 इन्च वर्षा होती है। अधिकांश वर्षा गर्मियों में फुहारों के रूप में होती है। वर्ष के सभी महीनों में हिम-आवरण देखा जा सकता है। परन्तु हिम-आवरण की मोटाई वर्षा-मात्रा में कमी एवं ठंडी हवाओं के कारण ज्यादा नहीं हो पाती। वायु-आर्द्रता अधिक रहती है। आकाश वर्ष के अधिकांश समय बदली आवरण युक्त होता है एवं तटवर्ती भागों में कोहरा व धुंध बना रहता है।

सागास्टिर (125° पूर्व 73° उत्तर, ऊँचाई 11 फीट)*

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फ़. में)	−34	−36	−30	−7	5	32	41	38	33	6	−16	−32	[illegible]
वर्षा (इं. में)	0.1	0.1	0.0	0.0	0.2	0.4	0.3	1.4	0.4	0.2	0.2	[illegible]	[illegible]

उप-आर्कटिक प्रदेश :

प्रदेशों से भी नीचा कर देती है। बर्खोयांस्क (जनवरी में–59° फ़ै०) तथा ग्रोमयाकान दुनिया के सबसे ठंडे स्थान हैं। जाड़ों के दिनों में इन प्रदेशों में प्रतिचक्रवातीय दशाएँ होती है। मौसम स्वच्छ, आकाश धूप-युक्त तथा जलवायु स्वास्थ्यप्रद होती है। लेकिन कभी-कभी जब बूरान बर्फानी हवाएँ चल जाती है तो जन-धन की अपार हानि होती है। गर्मियाँ गर्म होती हैं। दिन में तापक्रम 75° फ़ै० तक पहुँच जाता है। परन्तु रात्रि में तापक्रम के नीचे (हिमांक से जरा ज्यादा) हो जाने के कारण दैनिक तापांतर बहुत हो जाता है।

बर्खोयांस्क (68° उत्तरी 133° पूर्वी, 330 फीट)

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फ़ै०)	–58	–48	–22	8	35	54	59	51	36	–6	–34	–52	
वर्षा (इं.में)	0.2	0.1	0.0	0.1	0.2	0.5	1.5	0.9	0.2	0.2	0.2	0.2	4.0

यूरोपियन जंगली पट्टी :

इस जलवायु विभाग का उल्लेखनीय लक्षण जाड़ों के दिनों में आने वाले चक्रवात हैं। पूर्व की तरफ महाद्वीपी प्रभाव बढ़ता जाता है। दक्षिण से उत्तर की ओर तापक्रम क्रमशः कम होता जाता है। इस विभाग के अन्तर्गत यूरोपियन रूस का मध्य एवं उत्तरी भाग आता है। यहाँ गर्मियाँ हल्की गर्म तथा जाड़े लम्बे एवं ठंडे होते हैं। जाड़ों के दिनों में पश्चिमी तथा मध्य रूसी मैदान में गर्म, आर्द्र अटलांटिक वायु राशियाँ आकर तापक्रम को एकदम बढ़ा देती हैं। इस भाग में तापक्रम 45° फ़ै० से ऊँचा हो जाता है। नवम्बर और दिसम्बर के महीनों में जब देश के अन्य भाग हिमांक तापक्रमों की भीषणता को सहन करते हैं तब इन भागों में समुद्री प्रभाव के कारण मौसम मानसिक कार्यों के लिए बड़ा उपयुक्त रहता है। उत्तर में हिम-आवरण अक्टूबर से लेकर अप्रेल तक (लगभग 200 दिन) रहता है जबकि दक्षिण में यह अवधि केवल 80 दिन होती है। ठंड के फलस्वरूप उत्तरी यूरोपियन रूस में दिसम्बर के उत्तरार्द्ध से लेकर मध्य जनवरी तक नदियाँ जमी रहती हैं। मार्च में जब बर्फ पिघलती है तो सर्वत्र बाढ़ और दलदल हो जाती है। जाड़ों में आर्द्रता-युक्त वातावरण होने से साइबेरिया की तुलना में जहाँ इन दिनों प्रतिचक्रवातीय अवस्थाओं के कारण आकाश स्वच्छ होता है, यहाँ का मौसम कुछ धुंधला और मलसाया सा रहता है। वर्ष की लगभग एक-तिहाई वर्षा जून एवं अगस्त के महीनों में होती है। इन दिनों तूफान, आँधी और बिजली की चमक के

साथ जोर की बारिस गिरती है। गर्मियों में जाड़ों की अपेक्षा उत्तर एवं दक्षिण के भागों के तापक्रमों में कम अन्तर होता है। पतझड़ का मौसम छोटा किन्तु चमकीला और सुहावना होता है। यूराल के पश्चिमी ढाल प्रदेशों में सर्वाधिक वर्षा होती है। बाल्टिक तटीय पट्टी में समुद्र का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है यथा, यहाँ ठंड एवं गर्मी दोनों ही कम होते हैं। लेनिनग्राद के ताप-वर्षा के आँकड़ों से यह स्पष्ट है।

लेनिनग्राद (60° उत्तरी, 3° पूर्वी, 30 फीट)

	ज	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फं०)	18	18	25	37	49	58	63	60	51	41	30	22	
वर्षा (इं.में)	0.9	0.8	0.9	0.9	1.7	1.8	2.7	2.0	1.7	1.4	1.4	1.2	18.7

पश्चिमी तथा मध्य साइबेरिया :

पश्चिमी साइबेरिया के निचले प्रदेश वस्तुतः यूरोपियन रूस के जंगलों में पाई जाने वाली तथा यनीसी के पूर्व में सच्ची महाद्वीपीय जलवायु दशाओं के बीच एक तरह से संक्रमण स्थिति में हैं। जाड़ों के दिनों में समस्त साइबेरियन मंगोलिया क्षेत्र में उच्च दबाव कम विकसित होता है जिसके फलस्वरूप प्रतिचक्रवातीय दशाएँ होती हैं। आकाश खुला रहता है। इन परिस्थितियों में जाड़ों की ठंड और भी तीव्रतर हो जाती है। उत्तर की ठंडी हवाएँ जाड़ों को और भी भयानक बना देती हैं। 110° पूर्व एवं 160° पूर्वी देशांतर के मध्य प्रति चक्रवातीय दशाएँ अपने सघनतम रूप में होती हैं। जाड़े के मौसम में अधिकतर दिन पाले युक्त होते हैं। पाला पड़ना साधारणतया मध्य सितम्बर से ही प्रारम्भ हो जाता है। हर तरफ हिम आवरण का साम्राज्य रहता है। बसन्त में ताप व आर्द्रता दोनों कम होते हैं। उत्तर-पूर्व की तरफ बसन्त एवं गर्मी दोनों ऋतुएँ अपेक्षाकृत देरी से आती हैं। यूरोपियन रूस की तरह यहाँ भी नदियाँ बसन्त में बाढ़ और दलदल का दृश्य प्रस्तुत करती हैं।

गर्मियाँ अक्षांशीय दृष्टि से अपेक्षाकृत गर्म होती हैं। लेकिन गर्मियों की अवधि उत्तर में केवल 70 दिन तथा दक्षिण में 100 दिन होती है। दैनिक तापांतर ज्यादा होते हैं। वर्षा हल्की होती है। इसका अधिकांश भाग गर्मियों के उत्तरार्द्ध में होता है जबकि मध्य एशिया का निम्न दबाव क्रम अच्छी तरह से विकसित हो चुका होता है। इन दिनों उत्तर एवं उत्तर-पश्चिम से धूल भरी हवाएँ आती हैं जिनके साथ भारी मात्रा में मच्छर भी होते हैं। कभी-कभी जंगली भाग का धुआँ

भी इनके साथ आ जाता है। इस प्रकार ये हवाएँ गर्मियों के मौसम को कष्टप्रद बना देती है।

धुर पूर्वी मानसूनी प्रदेश :

स्टेनोवॉय पर्वत श्रेणी तथा प्रोखोत्स्क तटीय पहाड़ियों के पूर्व में स्थित संकरी पट्टी में दक्षिण-पूर्वी मानसून का प्रभाव स्पष्टतः दिखाई देता है। इस पट्टी की सर्दियां तो मध्य साइबेरिया जैसी ही ठण्डी होती हैं, तापक्रम अक्षांशीय अनुपात में ही नीचे होते हैं परन्तु गर्मियां कम गर्म एवं आर्द्र होती हैं। यह सम्भवतः प्रशांत की ओर से आने वाली उन हवाओं के फलस्वरूप है जो अपने साथ आर्द्रता लाती है। यहां वर्षा मानसूनों से होती है। वर्षा की अवधि मई से सितम्बर तक है परन्तु सर्वाधिक वर्षा जुलाई में होती है। तट से जैसे-जैसे भीतर की ओर जाते हैं वर्षा की मात्रा क्रमशः कम होती जाती है। सिखोटे एलिन क्षेत्र में वर्षा का औसत लगभग 40 इंच है। आर्द्रतायुक्त इन हवाओं के साथ बदली का आक्रमण भी होता है। कुल मिलाकर इन दिनों के मौसम को स्वास्थ्यवर्द्धक नहीं कहा जा सकता।

स्टेपी प्रदेश :

इस प्रदेश, जिसका विस्तार यूक्रेन से लेकर एक पूर्व-पश्चिम पट्टी के रूप में पश्चिमी साइबेरिया के दक्षिणी भाग और कुजनेत्स्क बेसिन तक है, की जलवायु वस्तुतः उत्तर की साइबेरियन एवं दक्षिण की रेगिस्तानी प्रदेशों की जलवायु दशाओं के मध्य 'संक्रमणात्मक' प्रकार की है। ठण्डे जाड़े, गर्म गर्मियां एवं बसन्त ऋतु में अधिकांश वर्षा इस प्रदेश की जलवायु के प्रमुख लक्षण हैं। वर्षा 8 से 16 इंच तक (भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न मात्रा) तक होती है जो क्रमशः पूर्व एवं दक्षिण की ओर घटती जाती है। अधिकांश वर्षा बसन्त या गर्मियों के पूर्वार्द्ध में ही हो जाती है। उत्तरार्द्ध में आर्द्रता की मात्रा कम एवं वाष्पीकरण की मात्रा ज्यादा होती है। जुलाई का तापक्रम समस्त प्रदेश में 75–80° फं. के बीच होता है। इस प्रकार दिन काफी गर्म होता है। सर्दियों में कम से कम 3–4 महीने ऐसे होते हैं जिनमें तापक्रम हिमांक से नीचे होते हैं। सीमित वर्षा होने से हिम आवरण की पर्त बहुत पतली और छिन्न-भिन्न रूप में ही होती है अतः लम्बे समय तक भयानक पाला पड़ता है।

ओडेसा (46° उत्तरी, 31° पूर्वी, 210 फीट)

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फं)	26	29	37	47	60	68	73	71	62	52	40	32	
वर्षा (इं.मं)	0·9	0 7	1·1	1·1	1·3	2·3	2·1	1·2	1·4	1·1	1·6	1·3	16·1

एशियाटिक स्टैप्स की तुलना में यूरोपियन स्टैप्स में दशाएँ अपेक्षाकृत कम भीषण हैं। यहाँ गर्मियां हल्की गर्म एवं जाड़े कुछ कम ठंडे होते हैं। स्टैप्स जलवायु में मिट्टी कटाव की समस्या भारी है। वर्षा की कमी एवं जो कुछ वर्षा होती है उसका स्वरूप दोनों ही मिट्टी को काटते हैं। बसन्त के अन्त में जो वर्षा होती है वह एकदम जोर से होती है अतः नाली-कटाव होता है। दूसरे, चूंकि गर्मियां गर्म होती हैं अतः वाष्पीकरण ज्यादा होता है। वनस्पति के विकास के लिए उपयुक्त मात्रा में आर्द्रता नहीं रह पाती। गर्मियों में सुबह का समय ठण्डा और शान्त होता है परन्तु जैसे-जैसे सूर्य चढ़ता है, तापक्रम तेजी से बढ़ता है और दोपहर बाद तो आँधियां चलने लगती हैं। कभी-कभी इनके साथ वर्षा हो जाती है। शाम का तापक्रम फिर नीचे और रात्रि में काफी नीचे हो जाता है। इन परिस्थितियों में विखण्डन और कटाव की समस्या उत्पन्न होती है। पाला भी यहाँ चट्टानी विखंडन का उल्लेखनीय साधन हो जाता है। गर्मियों के अन्तिम दिनों तक तो घास पूरी सूख जाती है। इन दिनों स्थानीय कम दबाव केन्द्र के विकसित होने से हवाएं आती हैं जो पर्याप्त धूल उड़ाती हैं।

रेगिस्तानी प्रदेश :

स्टैप्स प्रदेश के दक्षिण में रेगिस्तानी दशाएँ प्रारम्भ हो जाती हैं जो क्रमशः दक्षिण की ओर सघन होती जाती हैं। वर्षा यहाँ 10 इन्च से कम होती है जो स्थान मात्रा एवं समय सभी दृष्टियों से अनियमित है। स्टैप्स और सच्चे रेगिस्तानों के बीच संक्रमण पट्टी बहुत ही सँकरी है जिसे उत्तर में शुष्क स्टैप्स और दक्षिणी हिस्से में अर्द्ध-शुष्क भाग कहा जा सकता है। अरल सागर के पास आते-आते वास्तविक रेगिस्तान प्रारम्भ हो जाते हैं जो दक्षिण में कोपेतदाघ के चरण प्रदेशों तक विस्तृत हैं। गर्मियां भीषण गर्म एवं शुष्क होती हैं। वर्षा थोड़ी सी बसन्त ऋतु में होती है और उसके बाद यत्र-तत्र कुछ वानस्पतिक जीवन दिखाई पड़ता है परन्तु गर्मियों के प्रारम्भ होते ही दक्षिण की ओर से जो गर्म एवं शुष्क हवाओं का चलना प्रारम्भ होता है तो यह वनस्पति मुरझा जाती है। गर्मियों के दिनों में आकाश स्वच्छ रहता है, दैनिक तापान्तर बहुत होता है। पतझड़ का मौसम अपेक्षाकृत छोटा होता है जिसके समाप्त होते ही साइबेरियन प्रति चक्रवातीय दशाओं का विस्तार प्रारम्भ हो जाता है। कहीं-कहीं नदियां जम जाती हैं। उत्तर में कुल अवधि (60 दिन) के लिए हिम-आवरण भी होता है परन्तु दक्षिण में प्रायः नहीं होता।

टर्टकुल (41° उत्तरी, 61° पूर्वी, 295 फीट)

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फ़ं)	23	29	42	58	71	79	82	78	67	52	40	30	
वर्षा (इं.में)	0·3	0·4	0·5	0·6	0·2	0·0	0·0	0·1	0·0	0·1	0·1	0·1	2·4

ट्रांस काकेशस :

ट्रांस काकेशस प्रदेश में विशिष्ट प्रकार की जलवायु दशाएँ मिलती हैं जो सोवियत संघ के किसी भी हिस्से में नहीं हैं। प्रदेश के निचले, विशेषकर काले सागर के निकटवर्ती भागों में आर्द्र-उपोष्णीय दशाएँ मिलती हैं। जबकि पठारी भागों (आर्मीनिया) में महाद्वीपीय जलवायु दशाएँ होती हैं। निचले भागों में गर्म तथा आर्द्र जलवायु रहती है, भारी वर्षा एवं बदली-आवरण रहता है। वर्ष में ऐसा कोई समय नहीं होता जब थोड़ी बहुत वर्षा न होती हो। यद्यपि सर्वाधिक मात्रा पतझड़ एवं जाड़ों में होती है। गर्मियों के दिनों में समुद्र से थल की ओर ठण्डी एवं आर्द्र हवाएँ चलती हैं। इसके विपरीत जाड़ों में थल भाग से समुद्र की ओर स्थानीय शुष्क एवं गर्म हवाएँ चलती हैं। इस तरह स्थानीय परिस्थितियों में एक छोटा सा मानसूनी क्रम यहाँ विकसित हो जाता है। यहाँ दैनिक तापान्तर बहुत कम होता है।

आर्मीनियन पठारी भाग में महाद्वीपीय स्टैपी दशाएँ हैं। जाड़े बहुत ठंडे होते हैं। हिम-आवरण भी पाया जाता है। वर्षा की सर्वाधिक मात्रा बसन्त एवं प्रारम्भिक गर्मियों में आती है। गर्मियों के उत्तरार्द्ध में भारी गर्मी, वाष्पीकरण तथा शुष्कता के कारण वनस्पति मुरझाने लगती है।

उपर्युक्त दो स्वरूपों के अतिरिक्त एक तीसरा स्वरूप और ट्रांस कॉकेशस प्रदेश में मिलता है। काले सागर तट प्रदेश में सोची एवं सुखोमी के बीच के क्षेत्र में भूमध्य सागरीय प्रदेशों से मिलती-जुलती जलवायु दशाएँ मिलती हैं। उत्तर की ठंड से अप्रभावित इन क्षेत्रों में जाड़े सुहावने एवं गर्मियाँ शुष्क एवं गर्म होती हैं। वनस्पति आवरण खूब है। यह क्षेत्र स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा माना जाता है। अतः महाद्वीपीय भीषणताओं (अति ठंड) से बचने तथा स्वास्थ्य सुधारने के लिए अनेक लोग यहाँ आते हैं।

बातुमी (42° उत्तरी, 42° पूर्वी, 20 फीट)

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फ़ं.)	43	44	47	52	60	68	73	74	68	61	54	48	
वर्षा (इं.में)	10·2	6 8	6·2	5·0	2·8	5·9	6·0	8·2	11·9	8·8	12·2	10·0	93·3

पर्वत प्रदेश :

पर्वतीय प्रदेशों की जलवायु दशाओं पर अक्षांशीय स्थिति के बजाय ऊँचाई का प्रभाव ज्यादा पड़ता है। ऊँचाई के साथ-साथ तापक्रम घटने के कारण इन क्षेत्रों की अवस्थाएँ उत्तरी अक्षांशों में स्थित भागों जैसी हो जाती हैं। ऊपरी भागों में निरन्तर बर्फ जमी रहती है। कॉकेशस श्रृंखला (6000 फीट से ऊँची) का पश्चिमी भाग पूर्वी की अपेक्षाकृत ज्यादा गर्म एवं आर्द्र है। तिबिलिसि के निकट स्थानीय फोहन हवाएँ जाड़ों की भीषणताओं को कम कर देती है परन्तु ओलायुक्त तूफान प्रस्तुत कर खेतों को भारी हानि भी पहुँचती हैं। डॉगेस्तान वाले हिस्से में मौसम जाड़ों में शुष्क और धूपयुक्त रहता है। ऊँचाई के साथ वर्षा की मात्रा बढ़ती है। मध्य एशिया में पर्वतीय भाग पूर्णतः महाद्वीपीय जलवायु-युक्त हैं। वर्षा बहुत ऊँचे भागों में (12,000 फीट से ऊपर) अवरोधक चक्रवातों से हो जाती है। अतः वहाँ घने जंगल हैं। जबकि निचले भागों में अर्द्ध-रेगिस्तानी दशाएँ है। इन पर्वतीय भागों में हिम-रेखा की ऊँचाई उत्तरी ढालों पर 11,000 फीट तथा दक्षिणी ढालों पर 18,000 फीट है। दक्षिणी साइबेरिया के पर्वतीय भागों में भी महाद्वीपीय दशाएँ हैं। वैसे इनकी घाटियों में गर्मियों की भीषणता अवश्य कम पाई जाती है।

तिबिलिसी (42° उत्तरी, 45° पूर्वी, 1350 फीट)

	ज.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वार्षिक
तापक्रम (फं.)	32	37	44	53	62	70	76	76	67	57	45	37	
वर्षा (इं.में)	0·6	0·8	1·1	2·1	2·9	2·7	2·1	1·6	2·0	1·3	1·1	0 8	19·1

सोवियत संघ :
मिट्टी तथा प्राकृतिक वनस्पति
[Soil and Vegetation)

मिट्टी का स्वरूप एवं उत्पादकता उसकी पैतृक चट्टान जलवायु, वनस्पति, प्रौढ़ता आदि तत्वों पर निर्भर करती है। जलवायु, मिट्टी एवं वनस्पति ये तीनों तत्व परस्पर अत्यधिक सम्बन्धित है। इनमें भी - वनस्पति तथा मिट्टी एक-दूसरे पर इतने निर्भर हैं कि उन्हें अलग नहीं किया जा सकता। एक के स्वरूप को समझने के लिए दूसरे का अध्ययन बहुत जरूरी है। सोवियत संघ जैसे विशाल देश में जहां विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकारीय भौगोलिक दशाएँ हैं; मिट्टी एवं वनस्पति के स्वरूप से स्थानीय भिन्नता होना स्वाभाविक है। एल. एस. बर्ग[13] ने रूस की मिट्टियों का विस्तार से अध्ययन करके उनका वर्गीकरण किया है जो प्रायः सभी भूगोल-वेताओं को मान्य है। उनके विभाजन को आधार बनाते हुए रूस के मिट्टी तथा वनस्पति विभाग निम्न प्रकार हैं—

वनस्पति समूह	मिट्टियां
1. टुंड्रा तुल्य वनस्पति	1. टुण्ड्रा तुल्य मिट्टी
2. कोणधारी वन	2. पोड जोल मिट्टियां
3. मिश्रित वन	3. भूरी एवं पोडजोल की मिश्रित मिट्टी
4. चौड़ी पत्ती वाले वन	4. विविध मिट्टियां (भूरी तथा ग्रे)
5. स्टेप्स घास प्रदेश	5. चर्नोजम मिट्टियां
6. रेगिस्तानी प्रदेश	6. 'ग्रे' एवं खारवाली मिट्टियां
7. ट्रांस-कॉकेशियन उपोष्णीय आर्द्र प्रदेश	7. लेटराइट एवं स्टेपी
8. पर्वत	

1. टुण्ड्रा—टुण्ड्रा प्रदेश का विस्तार उत्तर में आर्कटिक तट के सहारे-सहारे एवं आर्कटिक द्वीपों में है। दक्षिण में इसकी सीमाएं 60° उत्तरी अक्षांश तक मानी

[13] g L. S.—Natural Regions of the U. S. S. R. Newyork 1950

जाती हैं। इस प्रदेश के अन्तर्गत समस्त देश का लगभग 1/10 भाग आता है। अत्यधिक ठंढ ही इस प्रदेश में मिट्टी तथा वनस्पति के विकास में बाधक है जिसके कारण 'माइक्रो ओर्गन्स' क्रियाशील नहीं रहते और न ही चट्टानों का विखंडीकरण हो पाता है। वनस्पति के अवशेष भागों के रूप में ह्यूमन तत्व नहीं मिल पाते हैं। केवल एक पतली सी पर्त मिट्टी की होती है जो सदा जमे रूप में रहती है इसमें उत्पादकता भी ज्यादा नहीं होती है। वर्ष भर तक धरातल में पूर्ण आर्द्रता रहने के कारण पीट एवं बॉग्स विकसित हो गये हैं। वृद्धि अवधि केवल 2–3 महीने की होती है जिसमें भी तापक्रम 50 फं० से ज्यादा नही होता। जाड़ों में भी तापक्रम 32 फं० से भी कम रहता है। वर्षा का वार्षिक औसत 8–10 इंच है जिसका ज्यादा भाग बर्फ के रूप में आता है।

इन जलवायु तथा मिट्टी की अवस्थाओं में वनस्पति का पूर्ण विकास नहीं हो पाता। वृक्ष तो विकसित हो नहीं पाते केवल छोटी-छोटी झाड़ियाँ या लिचेन काई उगती है वह भी छितरे रूप में। आम तौर पर लिचेन्स कुछ शुष्क भागों एवं मोम तथा सेज आर्द्र भागों में पायी जाती है। दक्षिणी भागों में गर्मियों के दिनों में रंग-बिरंगे फूल खिलते हैं। इस प्रदेश में रेनडियर, ध्रुवीय, लोमड़ी, लेमिंग, रीछ आदि जानवर मिलते हैं जो अपनी स्वच्छ-श्वेत फर के कारण आर्थिक महत्व के हैं। टुण्ड्रा की दक्षिणी सीमावर्ती पट्टी में कुछ-कुछ वृक्ष मिलने लगते हैं जो वस्तुतः टैगा के वनों एवं टुण्ड्रा के बीच संक्रमण पेटी के द्योतक है।
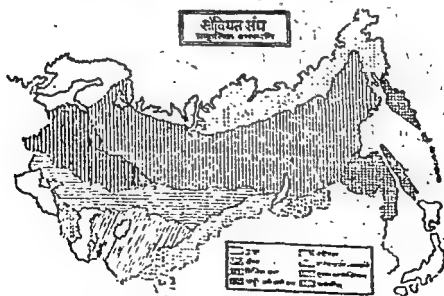
चित्र–12

2. टैगा के कोणधारी वन—टुण्ड्रा के दक्षिण में विस्तृत भागों में कोणधारी

वनों की पट्टी है जिसने साईबेरिया का लगभग आधा भाग घेर हुआ है। यूरोपियन रूस में भी इसका विस्तार उसी क्रम व मात्रा में है। इस प्रदेश में राख के रंग की पोड्जोल मिट्टियाँ हैं। इस मिट्टी के ऊपर से नीचे की ओर तीन पर्त स्पष्ट नजर आती हैं। पोड्जोल शब्द का अर्थ ही राख के नीचे होता है।[14]

प्रथम, सबसे ऊपर धरातलीय पर्त में श्वेत-सलेटी रंग की मिट्टी पाई जाती है। इसकी पर्त तीन इंच तक मोटी है। ये लीचिंग क्रिया से प्रभावित एसिडिक मिट्टियाँ हैं जिनमें सिलीका की मात्रा ज्यादा है परन्तु उत्पादक-शक्ति कम है। इनमें उपजाऊ तत्व ह्यूमस केवल 2 प्रतिशत होते हैं।

द्वितीय, जो प्रथम पर्त के नीचे 12 इंच की गहराई तक मिलती है। इसका रंग पूर्णतः राख जैसा होता है। कहीं-कहीं रंग में भूरापन भी आ गया है। इस पर्त में उपजाऊ तत्वों "ह्यूमस" का पर्याप्त बाहुल्य है। सिलीका की मात्रा भी पर्याप्त है।

तृतीय सबसे नीचे की पर्त लाल-भूरे रंग की है। इसका लाल रंग लौह अंशों (आयरन हाइड्रोक्साइड) के कारण माना जाता है। ऊपर की पर्तों से घुलकर बहुत से मिट्टी के कण इस पर्त में जमा हो गये हैं जिन्होंने इसके स्वरूप में कुछ भिन्नता ला दी है। पोड्जलीय क्रिया विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न मात्रा में हुई है। यह सर्वाधिक आर्द्रता युक्त 'क्लेई' भागों में पाई जाती है जहाँ कि जल-तल ऊँचा रहता है जबकि अपेक्षाकृत रेतीले शुष्क भागों में 'पोड्जलाईजेशन' बहुत कम हुआ है। वस्तुतः आर्द्रता ज्यादा होने से मिट्टी में लीचिंग क्रिया ज्यादा होती है।

रूस के कोणधारी वनों की पेटी विश्व की सबसे विस्तृत वन शृंखला है जो यूरोपियन रूस के उत्तरी भागों से प्रारम्भ होकर, यूराल को पार करके साईबेरिया के पूर्व तक लगभग 3000 मील की लम्बाई में फैली हुई है। उत्तर से दक्षिण की ओर इस शृंखला की चौड़ाई 600 मील है। इस प्रकार यह विश्व के कुल जंगलों का एक-तिहाई भाग प्रस्तुत करती है। यूरोपियन रूस के जंगलों में आर्द्र भागों में स्प्रूस तथा फर एवं शुष्क भागों में पाइन के वृक्षों का बाहुल्य है। साईबेरिया में लार्च, फर, स्टोन पाइन तथा बर्च आदि किस्मों द्वारा ज्यादातर भाग घेरा हुआ है। चूंकि इन जंगलों के विस्तृत भागों में एक ही प्रकार के वृक्ष पाये जाते हैं अतः इनकी कटाई आर्थिक सिद्ध हो सकती है टुण्ड्रा की तरह टैगा के कोणधारी वनों में भी धरातल पर बर्फ की तह जम जाती है क्योंकि वृक्षों के कारण उसके खिसकाव (ड्रिफ्टिंग) के कम अवसर रहते हैं।

3. मिश्रित जंगल—टैगा एवं दक्षिणी रूस में स्थित घास क्षेत्रों के बीच में वनों का मिश्रित स्वरूप है जिसमें कोणधारी तथा चौड़ी पत्ती वाले दोनों प्रकार के

14. Jorre, G. and others-The Soviet Union--the Land and its People p. 33

वृक्ष पाये जाते हैं। इनमें उत्तर की ओर स्प्रूस तथा पाइन एवं दक्षिणी भाग में एल्म, ओक, पेपिल तथा ऐश आदि वृक्षों का बाहुल्य मिलता है। मिश्रित वनों का विस्तार यूरोपियन रूस में देश की पश्चिमी सीमा से लेकर यूराल तक है। साईबेरिया में ये अल्टाई के चरण प्रदेश तथा आमूरिया में पाये जाते हैं। आमूर प्रदेश के मिश्रित वनों में उत्तर की ओर स्प्रूस, फर पाइन तथा लार्च आदि कोणधारी वृक्ष एवं दक्षिण में मंचूरियन वॉलनट, ओक, एल्म, एप्रीकॉट तथा पीच के वृक्ष मिलते हैं। इस भाग में पोडजोल मिट्टी का ही थोड़ा संशोधित स्वरूप मिलता है। एसिड की मात्रा कम होती है। वस्तुतः गर्मी की मात्रा अपेक्षाकृत ज्यादा होने से कार्बनिक तत्वों का अपघटन ज्यादा होता है अतः बैक्टोरिया और ह्यूमस की मात्रा पर्याप्त होती है। दक्षिण की तरफ मिट्टियाँ क्रमशः गहरे रंग की होती जाती है।

4. चौड़ी पत्ती वाले वन—ये वन धुर पूर्व में विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में खड़े हैं, जिनका सर्वाधिक घनत्व, आमुर-उसूरी प्रदेश में है। इनमें मंगोलियन बलूत, डारियन सनोवर, श्वेत सनोवर, खुबानी, झाड़, मंचूरियन अखरोट आदि का बाहुल्य है। आमूर में शर्नोजिम से मिलती-जुलती मिट्टी है।

5. स्टैप घास प्रदेश—यूरोपियन रूस के दक्षिणी भाग तथा साईबेरिया में अल्टाई तक विस्तृत ये घास क्षेत्र उत्तर के जंगल एवं दक्षिण के रेगिस्तानी प्रदेशों के बीच 'ट्रांजीशनल' स्थिति लिए हुए हैं। इन प्रदेशों में प्राकृतिक घास पाई जाती है। उत्तरी सीमावर्ती क्षेत्रों में घास के साथ-साथ कुछ पेड़ भी मिलते हैं जो जंगलों की निकटता को प्रकट करते हैं। दक्षिण की तरफ घास भी क्रमशः छोटी होती है और अन्त में जाकर रेगिस्तानी भागों में बदल जाती है। इस प्रकार स्टैप्स के उत्तरी भागों को जंगल युक्त स्टैप्स कहना ज्यादा उपयुक्त होगा। स्टैप्स प्रदेश में ही होकर मध्य युगों में मंगोल, तातार तथा अन्य एशियायी जातियों ने समय-समय पर यूरोप के नगरों पर आक्रमण किये थे। स्टैप्स प्रदेश सोवियत संघ के 12 प्रतिशत भू-भाग में फैले हुए हैं।

स्टैप्स का विस्तार विश्व प्रसिद्ध काली मिट्टी शर्नोजम में है जो दुनिया की सर्वोत्तम उपजाऊ मिट्टी में से मानी जाती है। यह रूस का दो-तिहाई फसली क्षेत्र प्रस्तुत करती है। आजकल स्टैप्स-जोन में से घास को काटकर गेहूँ के क्षेत्र विकसित कर लिये गये हैं। शर्नोजम का विकास लोयस व दोमट मिट्टियों पर हुआ है।[15] इसका रंग चाकलेटी-भूरे से काला तक पाया जाता है। रंग के बारे में मिट्टी-शास्त्रियों का मत है कि वनस्पति अंश के विघटन से इसकी ऊपरी पर्तों में ह्यूमस एकत्रित हो जाते हैं। जो पानी के साथ लीचिंग के फलस्वरूप अधःस्तरीय चट्टानों में नहीं घुसते क्योंकि इस क्षेत्र में इतनी वर्षा ही नहीं होती। अतः ऊपरी

---

15. Jorre. G. and others-The Soviet Union-the Land and its People p. 34

पर्तों की उपजाऊ शक्ति निरन्तर बनी रहती है। यही कारण है कि इसमें ह्यूमस का अंश 15 प्रतिशत तक होता है। कहीं-कहीं 20 प्रतिशत भी है। शर्नोजम पर्त की औसत मोटाई 3–5 फीट है। उत्तर की ओर पोडजोलिक तथा दक्षिण की ओर रेगिस्तानी चैस्टनट एवं ब्राउन मिट्टियों के साथ मिश्रण प्रारम्भ होने के कारण सीमावर्ती क्षेत्रों में शर्नोजम की उपजाऊ शक्ति कम है।

6. रेगिस्तानी प्रदेश—स्टैप्स के दक्षिण एवं दक्षिणी-पूर्वी भागों में रेगिस्तानी अवस्थाएं हैं जहां शुष्कता के कारण वनस्पति विकसित नहीं हो पाती। जो थोड़ी बहुत वर्षा होती है उसका पानी अत्यधिक गर्मी के कारण भाप बन कर उड़ जाता है। इस प्रकार की अवस्थाएँ कैस्पियन सागर तथा अरल सागर के आस-पास तूरानी निचले प्रदेशों तथा मध्य-एशिया में पर्वतों के निचले ढाल प्रदेशों में पाई जाती हैं। यहां वर्षा का औसत 8 इंच से कम ही होता है। इन शुष्क दशाओं में पैतृक चट्टानें ही मिट्टियों के स्वरूप तथा गुण निर्धारण में प्रधान तत्व होती हैं। वनस्पति के अभाव में 'ह्यूमस' तत्व मिट्टी में नहीं मिल पाते। अतः यहां की भूरी तथा चैस्टनट मिट्टियां कम उपजाऊ होती हैं। मिट्टी में नमक के अंशों तथा क्षार ने उसे व्यर्थ का बना दिया है। वाष्पीकरण के कारण नमक अंश धरातलीय पर्तों में आकर जमे रह जाते हैं जिनसे सोलोन्चाक तथा सोलोनैट प्रकार की नमकीन दलदलों का आविर्भाव हो गया है।[16] इनमें केवल 'साल्टवर्ट' झाड़ियां ही पनप सकती हैं। कुछ भागो में चिकनी मिट्टी भी मिलती है जिसमें ह्यूमस तत्वों का अंश अपेक्षाकृत ज्यादा है। कहीं पर्वतीय पदीय भागों में उपजाऊ मिट्टियां भी मिलती हैं जो मूलतः लोयस के ऊपर विकसित हुई हैं। इनको अगर जल पर्याप्त मात्रा में मिल जाये तो अच्छी फसलें दे सकती हैं। वनस्पति आवरण की दृष्टि से इन रेगिस्तानी भागों को दो श्रेणियों में रखा जा सकता है। उत्तरी भाग, जिनमें 10-15 इंच वर्षा होती है, कुछ झाड़ियां, छोटे-छोटे पेड़ जैसे सावसोल आदि मिलते हैं। यत्र-तत्र छोटी-छोटी घास भी मिल जाती हैं। इन्हें अर्ध रेगिस्तानी भाग कहना उपयुक्त होगा। दक्षिणी भाग में जहां वर्षा 4 इंच से भी कम तथा गर्मियों में तापक्रम 110–120 फॅ० तक पहुँच जाता है, चट्टानें नंगी खड़ी हैं।

7. ट्रांस कॉकेशियम उपोष्णीय आर्द्र प्रदेश—ट्रॉस कॉकेशिया के पश्चिमी भाग कोलचिस निचले प्रदेश तथा पूर्वी भाग तालिश के निचले प्रदेश में पतझड़ीय तथा कोणधारी वनों के मिश्रित जंगल हैं जिनमें ओक, हार्नबीम, बीच, मैपिल, एलमौंड, वॉलनट तथा पिस्तेचियों के वृक्ष पाये जाते हैं। इन भागों में गर्मी का मौसम गर्म तथा सुहावने जाड़े होते हैं। वर्षा साल भर तक समान रूप से होती है। अतः वनस्पति की वृद्धि खूब है। बदली आवरण तथा आर्द्रता पर्याप्त मात्रा में रहती है। हवाओं में मानसूनी लक्षण पाये जाते हैं तथा जाड़ों में गर्म

Hoffman, G. W.—A Geography of Europe P. 665.

तथा शुष्क एवं गर्मियों में ठंडी एवं आर्द्र हवाएँ चलती हैं। कभी-कभी पहाड़ों से उत्तर कर 'फोहन' हवाएं अवश्य वनस्पति वृद्धि में बाधा प्रस्तुत करती है। ऊँचाइयों पर भूरी तथा नदी जमाव कृत उपजाऊ मिट्टियाँ एवं नीचे भागों में लाल, पीली, लैट्राइट मिट्टियों का आधिक्य है।

8. पर्वत—पर्वतों पर हिमरेखा से नीचे अल्पाइन वनस्पति मिलती है जिनमें प्राकृतिक घास 'मैडोज' का बाहुल्य होता है। मैडोज की ऊँचाई पर्वतों की अक्षांशीय स्थिति पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए यूराल पर 1000 फीट की ऊँचाई पर 'मैडोज' प्रारम्भ हो जाती है परन्तु दक्षिण के उच्च पर्वतीय भागों (पामीर, अल्टाई सयान) में लगभग 9,000 फीट पर मिलती है। इसकी ऊपरी सीमा हिम रेखा होती है।

□□□

सोवियत संघ का आर्थिक विकास
(Development of Soviet Economy)

समाजवादी सोवियत संघ पिछले 65 वर्षों से अस्तित्व में है। इस अल्पावधि में यह एक ऐसे देश जो पूरी तरह कृषि पर निर्भर था, से उभर कर विश्व की दूसरे नम्बर की औद्योगिक शक्ति बन गया है। क्रान्ति से पूर्व सोवियत सीमाओं में आने वाला यह भू-भाग अत्यन्त पिछड़ी अवस्था में था। जो कुछ भी और जैसी भी आर्थिक क्रियाएं थीं वे सभी केवल यूराल के पश्चिम में ही सीमित थीं। कृषि या उद्योग, यातायात या व्यापार सभी दृष्टिकोणों से यह देश पश्चिमी यूरोपियन देशों विशेषकर ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से बहुत पीछे था। अधिकांश जनसंख्या कृषि में संलग्न थी पर उत्पादन मुश्किल से गुजारे लायक हो पाता था। फलतः इसे औद्योगिक कच्चे मालों, ईंधन व कई मायनों में खाद्य पदार्थों के लिए भी विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता था। 1913 में आवश्यकता का [illegible]5 प्रतिशत कोयला एवं 50 प्रतिशत कपास आयात की गई। यह उल्लेखनीय है कि इस समय यहाँ केवल वस्त्रोद्योग ही सबसे उन्नत एवं विस्तृत उद्योग था। अन्य उद्योगों जैसे—इस्पात, इंजीनियरिंग या रसायन आदि उद्योगों का विकास नगण्य था। कृषि भी अविकसित अवस्था में थी। कोयला केवल डोनबास तथा तेल बाकू प्रदेश तक सीमित था। रेल छितरे रूप में केवल पश्चिमी रूस (अपवाद स्वरूप ट्रांस-साइबेरिया रेलवे को छोड़कर) में ही थी। साइबेरिया, मध्य एशिया, कॉकेशिया या आर्कटिक प्रदेशों से रूस के नाम मात्र को ही सम्बन्ध थे। औद्योगिक संस्थान केवल लेनिनग्राद, मॉस्को, गोर्की तथा डोनबास तक ही सीमित थे।

वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक दो दशकों में रूस गृह युद्ध, विश्व युद्ध और बोल्शेविक क्रान्ति में फँसा रहा। फलतः क्रान्ति के बाद जो रूस साम्यवादियों को मिला वह ज़ार के रूस से बिल्कुल भिन्न था। आर्थिक ढाँचा पूरी तरह बर्बाद हो चुका था। भोजन, मकान एवं भुखमरी की नौबत थी। कच्चे मालों के अभाव व गृहयुद्ध से प्रभावित अनेक कारखाने ठप पड़े थे। ऐसी अवस्था में साम्यवादी पार्टी

के सामने यह समस्या थी कि कैसे लोगों को कम से कम साधारण उदर-पूर्ति की स्थिति तक लाया जाये, क्योंकि यह स्थिति आये बिना किसी भी प्रकार का आर्थिक आयोजन क्रियान्वित करना सम्भव नहीं था। फलस्वरूप लाखों नवयुवकों को पश्चिमी साइबेरिया में नये कृषि-क्षेत्र विकसित करने भेजा गया। 10वीं पार्टी कांग्रेस के समक्ष लेनिन ने जो 'नवीन आर्थिक नीति' रखी उसमें तीन बातों पर जोर दिया गया। प्रथम, किसी भी कीमत पर उत्पादन में वृद्धि करना।

द्वितीय, किसान एवं मजदूर वर्ग के सुदृढ़ सम्बन्ध स्थापित करके वर्ग भावना या राजनैतिक संकटों से बचाव करना।

तृतीय, राष्ट्रीय महत्व के आर्थिक संस्थानों जैसे बड़े-बड़े उद्योग, साख, मुद्रा, यातायात एवं कर प्रणाली का राष्ट्रीयकरण 1921 में शासन सत्ता में पूर्णतः जम जाने के बाद साम्यवादी सरकार का ये प्रयत्न रहा कि कैसे भी, चाहे कुछ सीमा तक सैद्धान्तिक प्रश्न को तिलांजलि देकर भी आर्थिक उत्पादन बढ़ाया जाये। इस समय सिद्धान्तों के बजाय व्यावहारिक रूप पर ज्यादा जोर दिया गया। यहाँ तक कि कुछ मायनों में इस समय के तरीके पूँजीवादी व्यवस्था के से लगने लगे। टैक्स देने के बाद किसान अपनी फसल बाजार में बेचने को स्वतन्त्र थे। व्यक्तिगत व्यापार एवं उद्योगों को छूट मिली। बहुत से कारखाने जो सरकार ने राष्ट्रीयकृत कर हस्तान्तरित कर लिये थे, लौटा दिए गए क्योंकि उत्पादन की दृष्टि से व्यक्तिगत अधिकार ज्यादा लाभकारी रहता है। इंगलैंड, जर्मनी, नार्वे आदि देशों से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाये गये। इस प्रकार एक तरह से मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया। कई क्षेत्रों में इसकी आलोचना भी हुई जिसका उत्तर लेनिन ने इस प्रकार दिया—"किसी भी सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देने में परिस्थितियाँ विपरीत आयें और उनको दृष्टि में रखते हुए अगर नीति में अस्थाई तौर पर संशोधन कर लिया जाये तो न तो यह सिद्धान्त से गिरना है और न पराजय" निस्सन्देह लेनिन द्वारा उठाया गया यह कदम बड़ा सामयिक, उचित एवं रूस के आर्थिक उत्पादनों के विकास में सहयोगी था।

अगले 7–8 वर्षों में स्थिति सुधर जाने के बाद आर्थिक आयोजन किया गया, पंचवर्षीय योजनाएँ चलाई गईं जिनका इस महादेश के आर्थिक विकास में आधारभूत स्थान रहा है और जो दुनिया के नव-विकसित राष्ट्रों के लिए प्रेरणा स्वरूप सिद्ध हुई हैं। रूस में योजनाओं का मुख्य उद्देश्य उत्पादन-वृद्धि एवं स्वावलम्बी-सुगठित आर्थिक व्यवस्था के अतिरिक्त उद्योग, व्यापार, मुद्रा, साख आदि का राष्ट्रीयकरण तथा कृषि-कार्यों का सामूहीकरण रहा है। योजनाओं के स्वरूप निर्धारण के लिए एक 'राष्ट्रीय आयोजन कमीशन' की स्थापना की गयी जिसने विभिन्न क्षेत्रों में अनुपातिक रूप में व्यय तथा लक्ष्यों का निर्धारण किया।

प्रथम पंचवर्षीय योजना 1 अक्टूबर, 1928 से 30 सितम्बर 1933 तक की अवधि के लिए रखी गई जिसका उद्देश्य भारी मूलभूत व प्रतिरक्षा सम्बन्धी उद्योगों की स्थापना व विकास करना था। साथ ही कृषि कार्यों का सामूहीकरण तथा उनमें यन्त्रों के प्रयोग को भी प्रोत्साहित करना था। इन पाँच वर्षों के लिए औद्योगिक उत्पादन में 180 प्रतिशत तथा कृषि क्षेत्र में 3,000 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया। 23 प्रतिशत खेतों एवं किसान परिवारों को सामूहिक खेतों (कोलखोज) में संगठित करने का निश्चय किया गया। निवासियों की लगन व अथक परिश्रम से योजना के लक्ष्य 4 वर्षों में ही प्राप्त कर लिये गये। राष्ट्रीय आय—1,566 करोड़ रूबल (1928) से बढ़कर 4,190 करोड़ रूबल (1932) हो गई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना 1933–38 की अवधि के लिए बनाई गई जिसमें देश की प्रतिरक्षा-क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया गया। कुल राशि का आधा भाग नये औद्योगिक संस्थानों की स्थापना में खर्च किया गया। इस योजना के अन्तर्गत औद्योगिक उत्पादन में 16 प्रतिशत वार्षिक की दर से 110 प्रतिशत की वृद्धि का लक्ष्य रखा गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना 1938–43 की अवधि में क्रियान्वित हुई जिसमें वार्षिक उत्पादन में 13·5%, उत्पादन साधनों में 15·2% एवं खपत साधनों में 11% वृद्धि की कामना की गई। इसी योजना में ये नारे दिये गये "यह योजना समाजवाद को साम्यवाद में बदलेगी" या तीसरी पंचवर्षीय योजना को रासायनिक योजना बनाइये" योजना के प्रारम्भिक तीन वर्षों में औद्योगिक उत्पादन 13% वार्षिक की दर से बढ़ा। कुछ क्षेत्रों जैसे यूराल-वोल्गा, साइबेरियन तथा मध्य एशिया के औद्योगिक केन्द्रों ने प्रथम दो वर्षों में ही 50% की उत्पादन-वृद्धि हुई। जून 41 में हिटलर के आक्रमण के फलस्वरूप योजना का कार्य बन्द हो गया।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के तुरन्त बाद 18 मार्च को 1946–50 की अवधि के लिए चतुर्थ पंचवर्षीय योजना लागू कर दी गई। इस योजना में युद्ध-कालीन विध्वंस के पुनः निर्माण पर जोर दिया गया। राष्ट्रीय उत्पादन में 38% वृद्धि का लक्ष्य रखा गया। संक्षेप में 1950 तक (1940 की तुलना में) इस्पात उद्योग में 35%, कोयला ने 51%, रसायन उद्योग में 51%, विद्युत उत्पादन में 60%, उपभोक्ता वस्तुओं में 36%, कपास में 25% तथा चुकन्दर में 22% वृद्धि का लक्ष्य रखा गया। इन पाँच वर्षों में 3,000 मील की लम्बाई में रेलों का विद्युतीकरण तथा 1,000 डीजल इंजनों के प्रयोग करने का लक्ष्य भी रखा गया। . के लक्ष्यों की पूर्ति न हो सकी क्योंकि पुनः निर्माण का कार्य अत्यन्त कठिन

था। दूसरे, उत्पादनों पर 1946 के अकाल ने बुरा प्रभाव डाला। हाँ, 1918 तक उत्पादन युद्ध-पूर्व के स्तर तक पहुँच चुका था।

पंचम पंचवर्षीय योजना 1951–52 की अवधि में क्रियान्वित हुई जिसमें भारी उद्योगों, सुरक्षा सम्बन्धी उद्योगों, कृषि में, सामूहीकरण और सहकारिता को व्यापक बनाने के कार्यों को प्राथमिकता दी गई। राष्ट्रीय आय की वृद्धि का लक्ष्य 60% तथा औद्योगिक उत्पादन वृद्धि का लक्ष्य 72% रखा गया। 1953 में स्तालिन की मृत्यु हो गई। फलस्वरूप 1954 से ही योजना की आधारभूत नीतियों में विकेन्द्रीकरण की नीतियों को अपनाया गया। औद्योगिक संस्थानों एवं कृषि क्षेत्रों में सरकारी नियन्त्रण को कम किया गया। केन्द्रीय सत्ता ने अपना कार्य 'संघीय गणराज्यों' एवं 'आर्थिक काउंसिलों' में विकेन्द्रित कर दिया। मार्च 1954 में सामूहिक खेतों के संचालन, उत्पादन, आयोजन तथा क्रय-विक्रय का कार्य सदस्य किसानों के संगठनों को सौंपा गया। 1955 में सामूहिक खेतों के आकारों में परिवर्तन की छूट दे दी गई। 1955-57 में लगभग 15,000 बड़े कारखाने तथा कुछ दिनों बाद अनेक छोटे कारखाने भी संघीय गणराज्यों के अधिकार में दे दिये गये। ये कारखाने अभी तक केन्द्रीय सरकार के अधीन थे। औद्योगिक संस्थानों की द्रुतगामी एवं सुचारु व्यवस्था हेतु 'आर्थिक काउंसिलों' का गठन किया गया। प्रत्येक काउंसिल अपने क्षेत्र के उद्योग धन्धों की देखभाल तथा विकास के लिए उत्तरदायी बनाया गया।

फरवरी 1956 में 1956-60 की अवधि के लिए 6वीं योजना की घोषणा की गई। यह योजना पिछली योजना के अन्तिम दिनों में होने वाले नीति सम्बन्धी परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में नियोजित की गई। इसमें औद्योगिक उत्पादन के विकास की गति को धीमा किया गया। पूँजीगत माल के उत्पादन की विकास-दर 70% एवं उपभोक्ता वस्तुओं की विकास-दर 60% रख कर दोनों के समन्वय करने की कोशिश की।

फरवरी 1959 की 21वीं पार्टी कांग्रेस में श्री ख्रुश्चेव ने 1959–65 की अवधि के लिए सप्तवर्षीय योजना का मसविदा प्रस्तुत किया। इस योजना में औद्योगिक उत्पादनों के विकास का लक्ष्य 80% रखा गया। कृषि में यन्त्रों के प्रयोग, स्वचालित नई तकनीकी विधियों तथा आवास समस्या पर ज्यादा जोर दिया गया। कुछ घण्टे कम करने पर विचार किया गया जो इतनी सफलता-पूर्वक क्रियान्वित हुआ कि 1960 में श्रमिक दिन में 7 घण्टे काम करने लगे। आगे और भी कमी हुई। 1961 में 40 घण्टे प्रति सप्ताह तथा 1964 में 35 घण्टे प्रति सप्ताह श्रम का औसत हो गया।

31 अक्टूबर, 1961 को पार्टी की 22वीं कांग्रेस में एक 20 साला योजना (1960-80) स्वीकार की गई। 1980 तक उत्पादन को बढ़ाने के लक्ष्य निम्न

प्रकार निर्धारित किये गये—विद्युत नौ गुनी, इस्पात चार गुना, कोयला दुगुना, तेल, पाँच गुना, मशीनरी दस गुनी, खादें नौ गुनी, सीमेंट पाँच गुना, वस्त्र तिगुने, चमड़ा-जूता दुगुने, खाद्यान्न दुगुने, दूध तीन गुना तथा माँस चार गुना।[17] यह निश्चित किया गया कि इस अवधि के दौरान कजाकस्तान तथा कुर्स्क क्षेत्र में दो नये विशाल इस्पात के कारखाने स्थापित किए जायेंगे। उत्तरी साइबेरिया की कई नदियों को जो उत्तर में आर्कटिक सागर की ओर बहती हैं, बाँधकर दक्षिण के विशेषकर मध्य एशियाई प्रदेशों को सिंचित करने का कार्यक्रम बनाया गया। 1980 तक आवास, जल, गैस, ईंधन, शहरी यातायात, स्कूली शिक्षा आदि सब नागरिक सुविधाओं को निःशुल्क करने का निर्णय लिया गया। इस प्रकार साम्यवाद के भौतिक तथा तकनीकी आधार की कल्पना की गई।

□□□

17. " year book 1970.

सोवियत संघ : कृषि
(Agriculture)

सोवियत संघ का बहुत बड़ा भू-भाग भौगोलिक प्रतिकूलताओं के कारण कृषि उपयोगी नहीं है। अधिकांश भाग उत्तर के उच्च अक्षांशों में स्थित हैं जहां ठण्ड बहुत ज्यादा पड़ती है, वृद्धि-अवधि बहुत कम होती है। साइबेरिया का अधिकांश भाग, जो कि देश के कुल भू-क्षेत्र का लगभग एक-तिहाई हिस्सा बनाता है, कोणधारी वनों ने घेरा हुआ है जिनकी एसिड-युक्त पोडजोलिक मिट्टियां ह्यूमस तत्वों की कमी होने की वजह से कृषि कार्यों के लिए ज्यादा उपयोगी नहीं हो सकती। इनके उत्तर में लगभग 15% भाग टुंड्रा एवं आर्कटिक वृत्त में स्थित होने के कारण व्यर्थ हो गया है। टैगा वनों के अतिरिक्त पर्याप्त भाग मिश्रित एवं चौड़ी पत्ती वाले वनों ने घेरा हुआ है। सोवियत मध्य एशिया के शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में भीषण गर्मी, पानी की कमी व भारी वाष्पीकरण के कारण किसी भी प्रकार का वनस्पतिक जीवन नहीं पनप पाता। इस प्रकार शुष्कता के कारण भू-भाग का दशमांश कृषि उपयोग की दृष्टि से व्यर्थ हो गया है। दक्षिण-पश्चिमी, दक्षिणी एवं दक्षिण-पूर्वी सीमावर्ती पट्टियों में जहां अक्षांशीय स्थिति की दृष्टि से ताप दशाएँ अनुकूल हो सकती हैं, ऊँचाई ने कृषि कार्यों में बाधा डाली है। इन क्षेत्रों में विशाल भू-भाग पर्वत श्रेणियों ने घेरा हुआ है।

भू-उपयोग

	दस लाख हैक्टेयर्स	%
कुल भू-क्षेत्र	2227.2	100.0
सभी प्रकार के फार्म्स में संलग्न भू-क्षेत्र	1052.5	47.7
कृषि संलग्न भू-क्षेत्र	545.1	24.4
उपजाऊ क्षेत्र	223.4	10.0
बोया गया क्षेत्र	226.6	9.4

सोवियत संघ की कृषि विकास सम्बन्धी कठिनाइयाँ इस तथ्य से भलीभाँति प्रकट हो जाती है कि सभी प्रकार के कृषि कार्यों के लिए कुल मिला कर लगभग एक-चौथाई भू-भाग ही प्रयुक्त है। इसमें भी ऐसा क्षेत्र, जिसमें फसलें बोई जा सकें या बोई जा रही हैं, दशमांश से भी कम है। निस्सन्देह, देश में विस्तृत मैदानी भाग हैं परन्तु मिट्टी, जल-प्रवाह एवं जलवायु की कठिनाइयों के कारण इन सभी भागों का कृषि के लिए उपयोग नहीं हो पाता। मैदान के उत्तरी भाग में कम वर्षा तथा निम्न तापक्रम मिल कर जलानुवेधन को जन्म देते हैं जिससे लीचिंग क्रिया होती है। मिट्टियाँ क्रमशः अनुपजाऊ होती जाती हैं। विस्तृत भाग सदा हिम-युक्त होने के कारण व्यर्थ हो गये हैं। अनुमानतः आधे देश में वृद्धि-अवधि 100 दिन से कम है। उत्तर की ओर से चलने वाली ध्रुवीय हवाएँ तापक्रम को हिमांक से नीचे ले जाती हैं जो कृषि विकास में एक बहुत बड़ी बाधा है। इस प्रकार सोवियत संघ का लगभग 15·20% भू-भाग केवल जलवायु सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण ही व्यर्थ हो गया है। इधर सोवियत सरकार इसके लिए प्रयत्नशील है कि न केवल खाद्यान्न वरन् औद्योगिक फसलों में भी देश स्वावलम्बी हो। परन्तु प्रतिकूल या कम अनुकूल भागों में ज्यादा से ज्यादा कृत्रिम परिस्थितियाँ उत्पन्न करके (जैसे कि उत्तरी साइबेरिया में) फसलें पैदा करने का मतलब है उसका उत्पादन-मूल्य ज्यादा होना। व्यावसायिक फसलों के लिए भूमि की बड़ी कमी महसूस की जा रही है।

बोई गई भूमि का उपयोग

	मिलियन हैक्टेयर्स में	%
कुल बोया गया क्षेत्र	226·6	100·0
खाद्यान्न	131·9	58·7
तकनीकी फसलें	16·4	7·1
आलू एवं सब्जियाँ	11·2	4·9
चारे की फसलें	66·1	29·3

जलवायु सम्बन्धी कठिनाइयों के अतिरिक्त सोवियत संघ के कृषि विकास में उपजाऊ मिट्टी की कमी भी एक उल्लेखनीय तथ्य है। इस दृष्टि से केवल चर्नोजम मिट्टी को ही उपयोगी कहा जा सकता है परन्तु उसका विस्तार (12% भूमि) बहुत कम है। अपने सम्पूर्ण विस्तार में यह भी समान रूप से उपजाऊ नहीं है। इसका दो-तिहाई भाग यूरोपियन रूस एवं एक-तिहाई भाग साइबेरिया में है। साइबेरियन चर्नोजम ज्यादा उपजाऊ नहीं है। देश के लगभग 40–45% भाग में ठंडी, एसिडयुक्त, कम ह्यूमस वाली पोडजोल मिट्टियों का विस्तार है जो अपनी

वर्तमान अवस्था में तो किसी भी प्रकार के कृषि कार्यों के उपयुक्त हैं नहीं; हाँ रासायनिक खाद देने पर इनका दक्षिणी भाग काम में लाया जा सकता है। इन भागों में जल-तल ऊँचा हैं अतः सोविंग से बचने के लिए किसी प्रकार की जल निकास व्यवस्था का होना जरूरी है। इससे यह लाभ होगा कि बसन्त ऋतु में यहाँ जो दलदलीय अवस्थाएँ हो जाती है उनको सुखाया जा सकेगा। शर्नोजम और पोडजोल के बीच संक्रमण स्थिति में स्थित जंगलयुक्त स्टेप्स की मिट्टी में थोड़े से प्रयत्नों से अवश्य अच्छी कृषि संभव हो सकती है। मध्य एशिया की पर्याप्त मिट्टियों को नमकीन अन ने बर्बाद कर दिया है।

ऐतिहासिक स्वरूप :

सोवियत संघ की कृषि के स्वरूप को सही रूप में समझने के लिए न केवल प्राकृतिक वरन् उन मानवीय परिस्थितियों का भी अध्ययन जरूरी है जो ऐतिहासिक दृष्टि से युगों से यहाँ की कृषि का स्वरूप निर्धारित करने के लिए उत्तरदायी रही हैं। बोल्शेविक क्रान्ति (1917) से पूर्व रूस एक कृषि प्रधान देश था।[18] 1913 में कृषि से होने वाली आय 58% थी। 19वीं शताब्दी में यह प्रतिशत और भी ज्यादा था। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि यहाँ क्रान्ति पूर्व समयों में कृषि को व्यवस्थित रूप से आर्थिक ढाँचे का महत्वपूर्ण आधार बनाया हुआ था। चूँकि पश्चिमी यूरोपियन देशों की तरह यहाँ उद्योग विकसित नहीं थे अतः कृषि ही, चाहे अत्यन्त अविकसित रूप में हो, जीवनयापन और आर्थिक ढाँचे का मुख्य आधार थी।

यूरोपियन रूस का दक्षिणी यानी शर्नोजम प्रदेश सदा से ही कृषि प्रधान रहा है, हजारों वर्षों से यहाँ खेती आजीविका के साधन के रूप में की जाती रही है। प्रारम्भ में जनसंख्या कम थी, विस्तृत कृषि-योग्य भूमि थी अतः भू-स्वामित्व प्रणाली नहीं थी। बाद में जब जमीन की कमी महसूस होने लगी तो भू-स्वामित्व प्रणाली का उदय हुआ। 8–9वीं शताब्दी में सामन्ती तथा जागीरदारी प्रथा का जन्म हुआ जो क्रमशः विकसित होती गई। इसी के साथ-साथ दास-प्रणाली भी पनपी जो 15–16वीं शताब्दी तक पूर्ण विकसित हो चुकी थी। सामन्तों की इस जमीन को 'बोचीना' तथा इनके मालिक को 'बोयर' कहा जाता था। 18वीं शताब्दी तक जागीरदारों का ज़ार शासन में भी अच्छा प्रभाव हो गया था। अधिकांश कृषि भूमि इस समय तक जार परिवार के सदस्यों, सामन्तों एवं चर्चों के अधीन हो चुकी थी कृषकों की स्थिति एक मजदूर जैसी थी। बाद में मजदूर से भी बिगड़ कर दास जैसी हो गई जिन्हें सामान की तरह बाजार में खरीदा-बेचा जा सकता था। पीटर महान् तथा कैथराइन द्वितीय के समय में अन्य क्षेत्रों

18. Mellor, R.E.H.—Geography of the U.S.S.R.

में देश में अवश्य प्रगति हुई परन्तु किसानों और कृषि-दशा में कोई अन्तर नहीं पड़ा।

1641 के 'सोबर नियम' ने सामन्तों को किसानों पर अत्याचार करने की ओर भी छूट दे दी। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में 'मीर' संगठन का विकास हुआ। यह संगठन सहकारी प्रवृत्तियों का द्योतक था परन्तु सामन्तों के प्रभाव से यह भी मुक्त नहीं था। 19वीं शताब्दी की प्रारम्भिक दशाब्दियों तक तो दास-प्रथा इतनी घिनौनी हो गई कि अन्तिम दशकों (1861) में किसान-दासों के बढ़ते हुए असन्तोष और विद्रोह की सम्भावनाओं से डर कर अलेक्जेंडर द्वितीय को दास-मुक्ति अधिनियम की घोषणा करनी पड़ी।

दास प्रथा के समय में दास की हैसियत में किसानों को खेतों पर काम करने का कोई उत्साह नहीं था परन्तु इस प्रथा के टूटने के बाद भी कृषि-व्यवस्था या उत्पादन में कोई अन्तर नहीं आया। किसान तो मुक्त हुए पर भूमि अभी भी सामन्तों और कुलकों के पास थी। अतः मन मार कर इनको दैनिक मजदूरी पर काम करना पड़ता था। थोड़े से लोगों के पास जमीनें थीं परन्तु उनके आर्थिक साधन इतने सीमित थे कि अच्छे बीज, खाद, पशु या यन्त्रों के अभाव में उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं कर सके। भूमि का कितना असमान वितरण था इसका अनुमान इन आँकड़ों से लगता है कि जनसंख्या का 80% भाग केवल 5% कृषि योग्य भूमि का मालिक था जबकि 20% लोगों के पास 95% भूमि थी। 1872 में वेलुयेव कमीशन ने एक और तथ्य प्रकट किया कि सामन्तों की तुलना में छोटे और गरीब किसानों को 10, 20 और 40 गुना तक ज्यादा देना पड़ता था[?] जिसका साफ मतलब था कि वे लगान चुकाने के लिए अपनी जमीन, कुलकों के पास गिरवी रखें।

रूस में भू-स्वामित्व (प्रतिशत में)

वर्ग	1877	1887	1905
सामंत	77.2	68.3	52
पूँजी-व्यापारी-कुलक	14.2	16.3	20.4
स्वयं-भू-किसान	7.0	13.1	23.9

सोवियत समयों में हुए भूमि-सुधार कार्यक्रम :

1917 की क्रान्ति के पश्चात् जैसे ही रूस में लेनिन के नेतृत्व में साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई, बड़े पैमाने पर भू-सुधार कार्यक्रम अपनाये गये। भूमि पर से जमींदारों का अधिकार बिना मुआवजे के छीन लिया गया। जार परिवार

के सदस्यों, चर्चों तथा सामन्तों और कुलकों से लगभग 40 करोड़ एकड़ भूमि छीन कर भूमिहीन किसानों को बाँटी गई। इसके अतिरिक्त लगभग $36\frac{1}{3}$ करोड़ एकड़ और नई जमीन भी भूमिहीन किसानों में वितरित की गई। नवीन आर्थिक नीति में बताया गया कि किसानों को गरीबी से मुक्ति दिलाने, उत्पादन बढ़ाने एवं आर्थिक-ढाँचे में कृषि को महत्वपूर्ण स्थिति तक पहुँचाने का एकमात्र उपाय सामूहिक कृषि है जिसमें खेत, पशु, औजार, मशीन, बीज एवं उत्पादन पर सबका समान अधिकार हो। इस प्रकार शोषण के अवसर समाप्त किए गये। सहकारिता का आन्दोलन व्यापक किया गया। किसानों ने भी कृषि के समूहीकरण में अपना हित समझा क्योंकि इस अवस्था में उन्हें सरकार से भी हर प्रकार की वित्तीय, यान्त्रिक एवं प्रावधिक सहायता मिल सकती है। परिणामतः सामूहीकरण का प्रचार एवं प्रसार बड़ी तेजी से हुआ। अगले 20–25 वर्षों में ही लाखों की संख्या में सामूहिक खेत, जिन्हें वहाँ 'कोल खोज' कहा जाता है, अस्तित्व में आ गये। हजारों खेत सरकार ने भी अपने हाथ में लेकर विकसित किये जिन्हें यहाँ सोव्खोज कहा जाता है।

कोल खोज :

सामूहिक फार्मों में भूमि तो वस्तुतः सरकार की ही होती है जो किसानों के एक निश्चित समूह को 'लीज' (पट्टे) पर दी जाती है। सारे सदस्य किसान अपने में से चुनी हुई समिति के निर्देशन में फार्म पर काम करते हैं। यह समिति ही भूमि के उचित प्रयोग, फसल, कटाई तथा उपज की बिक्री के सम्बन्ध में निर्णय लेती है। फसल प्रायः सरकारी एजेन्सीज को ही बेची जाती है। पहले सामूहिक फार्मों की नीति निर्धारण में केन्द्रीय कृषि अधिकारियों की राय आवश्यक थी। 1950 से अब ये फार्म्स इस दृष्टि से स्वतन्त्र हो गये हैं। सदस्य किसान परिवार फार्म, मशीनें, यन्त्र और उत्पादन के सामूहिक रूप से मालिक होते हैं। प्रत्येक किसान परिवार को भूमि का एक छोटा सा खण्ड उसके आवास और सब्जी वगैरह बोने के लिए दिया हुआ होता है। इसमें वे अपने पशु भी रखते हैं। फसल को बेच कर जो आय होती है उससे फार्म समिति अगली फसल के लिए बीज खरीदती है, यन्त्रों एवं उपकरणों में खर्च करती है तथा अपने भवनों व सामूहिक सुविधाओं (दुकान, स्कूल, पुस्तकालय, मनोरंजन गृह आदि) की व्यवस्था करती है। शेष आमदनी को सदस्य किसान परिवारों में बाँट लिया जाता है। फार्म अपनी उपज सरकारी विभाग को न बेच कर स्वतन्त्र रूप से भी बेच सकते हैं। कई दफा उत्पादन किस्म के रूप में भी सदस्यों में बाँट दिया जाता है। सदस्यों का हिस्सा उसके श्रम-घण्टों के आधार पर निर्धारित किया जाता है। आम प्रचलन यह हो गया है कि सभी सदस्य अग्रिम राशि प्रतिमाह ले लेते हैं जो जुड़कर उनके हिस्से में

---

19. ibid--P. 181.

कट जाती है। इस प्रकार सोवियत समयों में किसानों की हालत आशातीत रूप में सुधर गई है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में लगभग 23% किसान परिवारों को सामूहिक खेतों के रूप में संगठित करने का लक्ष्य रखा गया था परन्तु सफलता लक्ष्य से भी ज्यादा मिली। योजना के अन्त (1932) में सामूहिक कृषि सदस्यों की संख्या 1 करोड़ 40 लाख थी। यह देश के किसान परिवारों का लगभग 60% भाग था। 1934 में 75% किसान परिवार एवं 90 भूमि सामूहिक फार्म्स के रूप में संगठित हो चुके थे। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना तक देश के अधिकांश खेत कोल खोज के अन्तर्गत संगठित हो चुके थे।

1950 में सामूहिक फार्मों का पुनर्संगठन प्रारम्भ हुआ। आकार में छोटे एवं प्रति एकड़ कम उपज वाले फार्मों को बड़ी इकाइयों में संगठित किया गया। फलतः यह संख्या जो 1950 में 2,00,000 थी घट कर 1964 में 34,000 और 1982 में 26,300 हो गयी। इस ह्रास का एक प्रमुख कारण यह भी था कि राजकीय फार्मों (सोव्खोज) के संगठन पर ज्यादा जोर दिया गया। यही कारण है कि उक्त अवधि में राजकीय फार्मों की संख्या 4,857 से बढ़कर 21,600 हो गई। संलग्न भूमि के आकार में भी अन्तर आया। सामूहिक फार्मों में संलग्न भूमि का क्षेत्रफल 132 मि० हैक्टेयर से घट कर 98·9 मि० हुआ जबकि राजकीय फार्मों में 15.2 मि० है० से बढ़कर 120·8 मि० है० हो गया।

यह उल्लेखनीय है कि किसानों के अधिकार की अधिकांश भूमि सामूहिक फार्मों में संलग्न है। इनका उत्पादन भी देश के कृषि उत्पादन का बहुत बड़ा भाग बनाता है। 1980 में सामूहिक फार्मों ने 90% चुकन्दर, 66% कपास, 38% दूध, 50% अनाज, 32% मांस, 19% आलू, 7% अण्डे एवं 24% सब्जियाँ उत्पादित कीं। सामूहिक एवं राजकीय फार्मों के संगठन एवं वितरण की व्याख्या करते समय एक आधारभूत तथ्य ध्यान में रखना वांछनीय है और वह यह कि सामूहिक फार्म घने बसे तथा परम्परागत विकसित, अच्छी मिट्टी वाले पश्चिमी क्षेत्रों में है जबकि राजकीय फार्म पूर्वी क्षेत्रों (विशेषकर साइबेरिया) के कम बसे, अविकसित मिट्टी वाले भागों में हैं जहाँ वैज्ञानिक विधियों से कृषि का विकास किया जा रहा है।

सोव्खोज :

जैसाकि नाम से प्रकट है (रूसी भाषा में इसका अर्थ है सरकारी खेत) ये फार्म्स सरकार के स्वामित्व में हैं तथा उसी के अपने विभागों द्वारा संचालित किये जाते हैं। इनमें काम करने वाले किसानों की स्थिति वैतनिक श्रमिकों जैसी होती है। ये राजकीय फार्म्स वहाँ विकसित किए गये हैं जहाँ सामूहिक फार्म्स कम हैं,

उन्हें बनाना आर्थिक नहीं या जहां कृषि सम्बन्धी शोध कार्यों के लिए विस्तृत भूमि चाहिए। साधारणतया ये फार्म्स विभिन्न क्षेत्रों में सामूहिक फार्म्स के बीच-बीच में शोध एवं प्रशिक्षण केन्द्रों के रूप में हैं। इनमें प्रमुख क्षेत्रों की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार नयी फसलों बीजों व पशुओं की नस्लों पर शोध कार्य होता रहता है। इस प्रकार निकटवर्ती सामूहिक फार्म्स इनसे प्रेरणा लेते रहते हैं। इनमें तकनीकी प्रशिक्षण की भी व्यवस्था होती है जहाँ आस-पास के सामूहिक फार्म्स के किसान-श्रमिक यांत्रिक-प्राविधिक प्रशिक्षण लेते रहते हैं।

राजकीय फार्मों की शुरुआत 1920 से हुई। प्रारम्भ में इन्हें 'आदर्श फार्म' के रूप में स्थापित किया गया था बाद में इनका कार्य-क्षेत्र बढ़ गया। इनकी संख्या भी बढ़ती गई। 1928 में कुल मिलाकर 1,407 सोव्खोज थे जो बढ़कर 1950 में 4,988 हो गये। तब से संख्या और भी तेजी से बढ़ती गई और 1982 में सोवियत संघ में 21,600 सोव्खोज हो गये। वस्तुतः इनकी संख्या इसलिए बढ़ती गई क्योंकि इनकी स्थापना प्रायः नव-प्राप्त-कृषि भूमियों में की जाती है। पिछले 2-3 दशकों में कृषि योग्य-भूमि में वृद्धि के साथ इनकी संख्या में भी वृद्धि होती गई। यही कारण है कि अधिकांश राजकीय फार्म्स नवीन कृषि क्षेत्रों में हैं। कजाकिस्तान में कृषि भूमि का लगभग 80% भाग इन्हीं के द्वारा घेरा हुआ है। यह प्रतिशत राष्ट्रीय औसत से दूना है। स्वाभाविक है कि यूक्रेन जैसे परम्परागत कृषि विकसित क्षेत्र में इनकी संख्या कम है। इनका आकार साधारणतया सामूहिक फार्म्स से ज्यादा बड़ा होता है। 1967 में इनका औसत आकार 27,000 हे० था इसमें से 8,000 हे० भूमि फसल के अन्तर्गत थी। एक फार्म पर संलग्न व्यक्ति लगभग 4,000 थे। वर्तमान में लगभग 40 मिलियन व्यक्ति राजकीय फार्म्स पर रहते हैं।

पुनर्संगठन के फलस्वरूप सोवियत संघ की लगभग 55% फार्म्स में संलग्न भूमि राजकीय फार्म्स (सोव्खोज) तथा 42·5% भूमि सामूहिक-फार्म्स (कोलखोज) के नीचे है।

1958 से पूर्व सोवियत संघ के कृषि-संगठन में एक तीसरा तत्व और था जिसे मशीन-ट्रैक्टर स्टेशन के नाम से जाना जाता था। ये निकटवर्ती सामूहिक फार्म्स में ट्रैक्टर, कम्बाइन हारवेस्टर्स व अन्य मशीनें किराये पर दिया करते थे। 1958 में यह निश्चित किया गया कि इन स्टेशनों को समाप्त कर दिया जावे। इनके यन्त्र व उपकरण सामूहिक फार्म्स को बेच दिए गए। कुशल कारीगरों को भी विविध फार्म्स के साथ सम्बद्ध कर दिया गया। कुछ स्टेशनों को मरम्मत-तकनीकी केन्द्रों के रूप में रहने दिया है। ये मशीनों के अतिरिक्त 'पार्ट्स', तेल व मरम्मत की सुविधायुक्त है।[19A]

19A. Lydolph, P.E.—Geography of the U.S.S.R. P. 284

सामूहिक एवं राजकीय फार्मों के अतिरिक्त सोवियत संघ में कुछ निजी फार्म्स भी हैं। इनकी संख्या बहुत सीमित है। ये अधिकतर उन भागों में स्थित हैं जो द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद सोवियत संघ में मिलाये गये हैं। निजी फार्मों के अन्तर्गत वे छोटे-छोटे भू-खण्ड भी आते हैं जो सामूहिक खेतों के सदस्य किसानों को निजी उपयोग के लिए दिये गये हैं। यहाँ ये लोग सब्जियाँ वगैरह पैदा करते हैं। इन निजी भूखण्डों में बोई गई भूमि कुल बोई गई (देश की) भूमि का केवल 3·2% ही है। खाद्यान्न व औद्योगिक फसलों सम्बन्धी इनका उत्पादन नगण्य है परन्तु ये देश में कुल उत्पादित आलू व सब्जियों के आधे भाग के लिए उत्तरदायी हैं। इन छोटे-छोटे निजी भूखण्डों में देश के 2/5 दुग्ध-जानवर, एक-तिहाई सूअर व 1/5 भेड़ें पाली जाती हैं। स्पष्ट है कि समाजवादी देश रूस सब्जी, मांस तथा फलों के लिए निजी क्षेत्र पर अवलम्बित हैं।

फार्मों में संलग्न भूमि का विविध फसलों में उपयोग

(दस लाख हैक्टेयर्स में)

	सोवखोज	कोलखोज	निजी भूखण्ड	योग
बोया गया क्षेत्र	97·1	103·0	6·8	206·9
%	46·9	49·9	3·2	100·0
खाद्यान्न	61·7	59·4	1·1	122·2
%	50·4	48·5	1·1	100 0
तकनीकी फसलें	3·6	11·1	0·1	14·8
%	24·4	75·2	0·4	100·0
आलू एवं सब्जियाँ	2·1	3·0	5·2	10·3
%	20·5	29·2	50·3	100 0
चारे की फसलें एवं बोई गई घासें	29·7	29·5	0·4	59·6
%	49·8	49·5	0·7	100·0

विविध फार्म्स में उत्पादन 1980+
(प्रतिशत में)

	अन्न	कपास	चुकन्दर	आलू	सब्जियाँ	माँस	दूध	अंडा	ऊन
सोव्खोज	49	34	10	17	43	37	32	61	46
कोलखोज	50	66	90	19	34	32	38	7	32
निजी भू-खण्ड	1	0	0	64	33	31	30	32	22

खाद एवं यन्त्र :

विस्तृत खेती में खादों एवं यंत्रों का प्रयोग भारी मात्रा में किया जाता है। सोवियत संघ में तो इनका प्रयोग और भी ज्यादा वांछनीय है क्योंकि यहाँ की मिट्टियाँ अनुपजाऊ हैं तथा यहाँ मानव शक्ति की कमी है। सोवियत समय में दोनों की ही मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है। 1913 में रूस के खेतों में 1·8 लाख टन खनिज खाद डाली गई थी। 1950 में इसकी मात्रा 53 लाख टन तथा 1967 में 337 लाख टन हो गई। 1981 में प्रयुक्त खाद की मात्रा 840 लाख टन थी। 1 जनवरी 1982 को सोवियत फार्मों में 26 लाख ट्रैक्टर्स (15 अश्वशक्ति से ज्यादा) एवं 7,41,000 कम्बाइन हारवेस्टर्स कार्यरत थे। ग्रामीण क्षेत्रों में नियोजित लौरी बसों की संख्या 1·7 मि० से अधिक थी। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में यन्त्रीकरण का कितना अधिक लक्ष्य रखा जाता है इसका अनुमान 1966-70 की पंचवर्षीय योजना के आँकड़ों से लगाया जा सकता है जिसके दौरान खेतों में 17 लाख ट्रैक्टर्स एवं 5½ लाख 'ग्रेन कम्बाइन' बढ़ाने का निश्चय किया गया। लगभग सभी फार्मों को विद्युत की सुविधा प्राप्त है। 1940 में ग्रामीण विद्युत ग्रहों की उत्पादन क्षमता 2,65,000 कि० वा० थी जिसे बढ़ाकर 1976 में 2,90,000 कि० वा० तक कर दिया गया था। इस वर्ष 99·9% कोलखोज तथा 99% सोव्खोज विद्युत शक्ति का प्रयोग कर रहे थे। 1981 के पूरे वर्ष में कृषि क्षेत्रों में 1,13,88■ मिलियन कि० वा० घण्टा विद्युत की खपत हुई।[20]

कृषि में यन्त्रीकरण किस कदर तेजी से हुआ है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1981 में 91% दुग्ध-दोहन, 90% चुकन्दर की खुदाई एवं 68% कपास की चुनाई का कार्य मशीनों से सम्पादित किया गया। फार्मों की उपज का बड़ा भाग सरकार क्रय करती है। यथा 1980 में 69 4 मि० टन अनाज, 65·2 मि० टन चुकन्दर, 57·2 मि० टन दूध, 15·9 मि० टन माँस, 9·9 मि० टन कपास तथा 43,000 मि. अण्डे सरकार द्वारा खरीदे गये।

+ All data from Statesmen's year book 1984-85.
20. Statesman year book 1984-85 Macmillan.

नवीन भूमि की प्राप्ति :

क्रान्ति के तुरन्त बाद से ही इस ओर सतत प्रयत्न जारी है कि ज्यादा से ज्यादा नई भूमि प्राप्त कर के कृषि क्षेत्र बढ़ाए जाएँ। इसके लिए दलदलों को सुखाने, बाढ़ पर नियन्त्रण करने, सिंचाई की व्यवस्था तथा मिट्टी में रासायनिक खादें डाल कर उसकी उत्पादन शक्ति को बढ़ाने के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाई गई और उनमें सफलता भी मिली। 1954-56 के तीन वर्षों में ही लगभग 9 मिलियन एकड़ बंजर भूमि को कृषि कार्यों के अन्तर्गत लाया गया। इस नई प्राप्त भूमि का 45% अकेले रूस गणराज्य में था। शेष पश्चिमी साइबेरिया में विकसित किया गया। 1961 तक ऐसी नई भूमियों में सब जगह राजकीय फार्म्स स्थापित किये जा चुके थे।

बहुत से ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ जल-निकास की उचित व्यवस्था करने से कृषि के लिए भूमि प्राप्त हो सकती है। ऐसे भू-भाग रूस की उत्तरी पट्टी में अधिकांशतः स्थित हैं। यथा, पोलैंड की सीमा पर स्थित प्रिपेट दलदलीय क्षेत्र से लेकर पूर्व में लीना तक एक विस्तृत पट्टी में ऐसा भाग है जहाँ पानी की अधिकता के कारण 'लीचिंग' क्रिया होती है तथा जमीन सदा दलदल एवं जलानुवेधन से खराब हो गई है। इनको सुखाने का कार्य बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। पश्चिमी यूक्रेन, पश्चिमी बैलोरूस, बाल्टिक तटीय गणराज्यों (ईस्टोनिया, लैटविया, लिथुआनिया) यूरोपियन रूस के उत्तरी भागों एवं पश्चिमी साइबेरिया के निचले प्रदेशों में जल निकास की व्यवस्था करके लाखों हैक्टेयर भूमि प्राप्त की जा चुकी है। 1981 तक इस श्रेणी की प्राप्त नई जमीनों का विस्तार लगभग 170 लाख हैक्टेयर था जिसमें गेहूँ, सन, पटुआ आदि पैदा किये जा रहे हैं। काले सागर के तट भाग में जार्जिया के कोलचिस क्षेत्र में जहाँ दलदल और मलेरिया के कारण जमीन का कोई उपयोग नहीं हो पा रहा था, जमीन धीरे-धीरे साफ करके उष्ण कटिबन्धीय फसलों जैसे—चाय, चावल आदि की खेती के काम में लाई जा रही है। इसी प्रकार इल्मेन झील के पास पोलेसये तथा ओका घाटी क्षेत्र में बड़ी-बड़ी ड्रेनेज स्कीमें चल रही हैं। इन भागों में, ऐसी योजना है, जमीन प्राप्त होने पर दुग्ध व्यवसाय के लिए बड़े पैमाने पर चरागाह विकसित किए जायेंगे।

सोवियत संघ में ऐसे प्रदेश भी अनेक हैं जहाँ मिट्टी तथा तापक्रम उपयुक्त दशाओं में हैं परन्तु पानी की कमी से जमीन का कृषि के लिए कोई उपयोग नहीं हो पाता। सोवियत मध्य एशिया तथा ट्रांस काकेशिया में ऐसे भाग पर्याप्त मात्रा में हैं जो केवल पानी की कमी से ही बेकार पड़े थे। सोवियत समय में अनेक विधियों से जल प्राप्ति कर सिंचित क्षेत्रों का विस्तार बढ़ाने के प्रयत्न किये गये हैं। 1913 में देश में कुल सिंचित भाग 40 लाख हैक्टेयर था जिसे बढ़ाकर 1960 में 90 तथा 1981 में 118 लाख हैक्टेयर तक कर दिया गया है। बीस साला

योजना में यह लक्ष्य बनाया गया है कि मध्य एशिया में सिंचित भूमि का विस्तार लगभग 15 लाख हैक्टर्स हो सके। इसके अतिरिक्त पश्चिमी साइबेरिया की नदियों पर जो बाँध बनाये जा रहे हैं उनसे लगभग 100 लाख हैक्टेग्रर अतिरिक्त भूमि को जल प्रदान करने का लक्ष्य है।

पिछले दशकों में सर्वाधिक ध्यान मध्य एशिया की सिंचाई योजनाओं पर केन्द्रित किया गया है, सम्भवतः इसलिए कि यह भाग तापक्रमों की दृष्टि से बड़ा उपयुक्त है, पाले रहित वृद्धि-अवधि भी यहाँ ज्यादा है। अतः सिंचाई की व्यवस्था होने पर इसके उपयुक्त भागों को सघन-कृषि-केन्द्र बनाया जा सकना सम्भव है। कोपेतदाघ के पीडमोंट प्रदेश में जहाँ उपजाऊ लोयस का विस्तार है, कंकरीट की नहरें बनाई जा रही हैं ताकि मिट्टी पानी को सोख सकें। क्रॅस्नोवोडस्क के निकट कैस्पियन सागर के नमकीन जल को वाष्पीकरण करके सिंचाई की व्यवस्था की गई है। युद्ध के दिनों में सर दरया पर फरगना घाटी नहर बनाई गई जो लगभग 3 5 मिलियन एकड़ भूमि को सींचने में सक्षम है। इस नहर के जल को नियंत्रित एवं नियमित करने के लिए कासान्सी पर एक बाँध बनाया गया है। गोलोदनाया स्टैपी क्षेत्र में सर नदी का पानी पहुँचाने के लिए 1958 में एक योजना प्रारम्भ की गई। इस योजना में लगभग 1·1 मिलियन एकड़ भूमि की सिंचाई हो जाती है।

जिन क्षेत्रों में नदी या नहर नहीं है वहाँ ट्यूबैल्स का निर्माण किया गया गया है। उस्ट उर्ट के पठारी भाग में जहाँ पानी 350-400 फीट की गहराई पर प्राप्त होता है, आर्टीजियन-कूप के निर्माण को प्रोत्साहित किया जा रहा है। कई स्थानों पर हवा द्वारा संचालित विद्युत शक्ति से कुएँ चलाये जाने लगे हैं जिनसे एक दिन में कई हजार भेड़ों लायक पानी प्राप्त हो जाता है। मध्य एशिया में सम्भवतः ताशकन्द ऐसा क्षेत्र है जहाँ क्रान्ति से पूर्व भी नहरों से सिंचाई की जाती थी परन्तु क्षेत्र बहुत सीमित था जिसे बढ़ाकर कपास की खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। 1940 में चू नहर का निर्माण प्रारम्भ किया गया जो पूरा होने पर फ्रुंज क्षेत्र में लगभग 1,64,000 एकड़ भूमि को जल प्रदान करती है। यह नहर चू नदी से निकाली गई है। किजिल ओर्दा के पास तास-बुगेट बाँध बनाया गया है जो लगभग 3 लाख एकड़ भूमि को जल प्रदान करता है। समरकन्द एवं बुखारा प्रदेश की लगभग 1 मिलियन एकड़ भूमि को उन नहरों से जल प्राप्त होता है जो जोरावशान नदी (आमू की सहायक) से निकाली गई है। आमू की सहायक जल-धाराओं—प्यांज, वारवस तथा सुरर्खान पर भी बाँध बनाकर निकटवर्ती क्षेत्रों की सिंचाई की जाती है। अकेले वारवस बाँध से लगभग 1,000 मील की लम्बाई की नहरी व्यवस्था बनाई गई है जो 1·5 लाख एकड़ भूमि को सींचती है। डुशाम्बे के चारों ओर गिसार घाटी में भी सिंचाई की व्यवस्था की गई है जहाँ कजल-सू तथा यास-सू से 2·5 लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। मुर्गाब

नखलिस्तान को आमू की एक नहर से पानी पहुँचाया जाता है। इस प्रकार इन सिंचाई योजनाओं द्वारा मध्य एशिया की लोयस, लैटराइट व चैस्टन मिट्टियों के क्षेत्रों में कपास व अन्य फसलें पैदा करना संभव हो सका है।

ट्रांस काकेशिया व यूरोपीयन रूस में भी कई सिंचाई योजनाएँ क्रियान्वित करके विस्तृत भू-क्षेत्र कृषि कार्यों के अन्तर्गत लाये गये हैं। नीपर नदी की निचली घाटी से नहरें निकालकर काले सागर के उत्तर में स्थित अर्द्ध-शुष्क क्षेत्रों व उत्तरी क्रीमिया के लिए सिंचाई की व्यवस्था की गई है। कैस्पियन सागर के उत्तर में स्थित कृषि क्षेत्रों को वोल्गा की नहरों से सींचा जाता है। इसी प्रकार उत्तरी काकेशिया में कूबान, कूमा, टेरेक तथा मान्यच आदि नदियों पर सिंचाई के लिए अनेक बाँध बनाये गये हैं। लोअर-कूरा तथा आराक्स प्रदेश के लिए मिंगचौर बाँध से नहरें लाई जा रही हैं। आर्मीनिया प्रदेश के रजदान सिस्टम को सेवान झील से जोड़कर विस्तृत किया जा रहा है। इस प्रकार निरन्तर सिंचाई योजनाओं का विस्तार होता रहा है। 'उल्लेखनीय है कि क्रांत्योत्तर अवधि में सिंचित भू-क्षेत्र लगभग तीन गुना हो गया है और सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से सोवियत संघ, चीन एवं भारत के बाद विश्व में तीसरे स्थान पर है।

कुछ ऐसे प्रदेश हैं जहाँ भू-कटाव एक भारी समस्या के रूप में उभर रहा था। इसके लिए छोटे स्तर पर कोलखोजों द्वारा किये गये रोक कार्यों के अतिरिक्त सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर कदम उठाये गये हैं। उत्तरी यूराल से उत्तरी कॉकेशिया तक लगभग 3,500 मील के विस्तार में सरकार ने शृंखलाबद्ध वन लगाये हैं जो उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम दिशा में फैले हैं। वन वोल्गा, ओका, डॉन, डीनेस्ट्र आदि के बेसिन क्षेत्रों में खास-तौर पर लगाये गये हैं। इसी प्रकार जिन भागों में सदा एक ही फसल बोने से मिट्टी की उपजाऊ शक्ति क्षीण हो गई है उनमें फसलों का हेर-फेर, खादों का प्रयोग तथा एसिडिक मिट्टियों में चूने का सम्मिश्रण करके उपज बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्न किये जा रहे हैं।

कृषि उत्पादन :

वस्तुतः सोवियत संघ के कृषि-उत्पादन सम्बन्धी आँकड़े स्पष्ट रूप में पिछले 20 वर्षों से ही प्राप्त होने लगे हैं। 1950 से पहले के आँकड़े या तो प्राप्त नहीं थे या बड़े भ्रामक रूप में थे जैसे कि 'बार्नक्रॉप के आँकड़े।'* इसका कारण

---

* पहले खड़ी हुई फसलों (Barn Crops) को ही आँक कर उत्पादन-आँकड़े प्रकाशित कर दिये जाते थे। वास्तविक उत्पादन मात्रा उस अनुमानित मात्रा से बहुत कम होती थी इस प्रकार ये सरकारी आँकड़े बड़े भ्रमात्मक होते थे।

संभवतः यह था कि इस समय तक कृषि के क्षेत्र में रूस ज्यादा विकास नहीं कर कर पाया था। उद्योगों की तरफ ज्यादा ध्यान केन्द्रित था। कृषि अपने ऐतिहासिक स्वरूप, दो महायुद्धों एवं गृहयुद्ध के फलस्वरूप ज्यादा उल्लेखनीय विकास नहीं कर पाई थी। प्रथम तीन पंचवर्षीय योजनाओं में खनिज एवं उद्योगों की तुलना में कृषि पर खर्च की जाने वाली राशि अपेक्षाकृत कम थी। 1950 के बाद, निस्संदेह कृषि की तरफ ज्यादा ध्यान दिया गया।

बोये गये क्षेत्र का क्रमिक विस्तार 1913–81

भू-क्षेत्र मि० हैक्टेयर में
आधार-वर्ष 1913 = 100 (प्रकोष्ठ में)

उपयोग	1913	1940	1950	1981
कुल बोया गया क्षेत्र	118·2(100)	150·4(127)	146·3(124)	226·(190)
खाद्यान्न	104·6(100)	110·5(106)	102·9(98)	131·9(129)
तकनीकी फसलें	4·9(100)	11·8(241)	12·2(249)	16·4(335)
आलू एवं सब्जियाँ	5·1(100)	10·0(197)	10·5(206)	12·2(242)
चारे की फसलें एवं बोई गई घासें	3·3(100)	18·1(548)	20·7(627)	66·1(2000)

सोवियत संघ में कृषि के विकास की तीव्र गति का सही अनुमान संलग्न सारणियों से होता है जिनमें 1913 को आधार (100%) मानकर बाद के दशकों में वृद्धि प्रतिशत दिखाया गया है। इनसे स्पष्ट है कि प्रायः सभी उत्पादनों में कई गुणा वृद्धि हुई है। कहीं-कहीं तो यह वृद्धि प्रतिशत हजार से भी अधिक है।

सारणियों में दिये गये आँकड़ों को यदि जनसंख्या-वृद्धि के तथ्य को ध्यान में रखते हुए देखा जाये तो स्पष्ट होता है कि माँस, चर्बी, दूध या खाद्यान्नों के क्षेत्र में सोवियत संघ 5वें दशक तक भी अपनी स्थिति में कोई खास सुधार नहीं कर पाया था। इनका प्रति व्यक्ति उत्पादन क्रान्ति पूर्व समयों से भी कम था। (निस्सन्देह कुल उत्पादन कुछ ज्यादा था परन्तु जनसंख्या जिस अनुपात से बढ़ी उस अनुपात से ये नहीं बढ़ पाये) पशुधन में भी 1950 तक, बकरी को छोड़कर कोई

खास वृद्धि नहीं हो पाई। बोये गये क्षेत्र में लगभग एक-चौथाई वृद्धि हुई परन्तु वस्तुतः खाद्यान्नों में संलग्न भूमि में तो कमी हुई। कारण सम्भवतः यह रहा हो कि इन दशकों में व्यावसायिक फसलों, आलू व सब्जियों में संलग्न भूमि में काफी विस्तार हुआ। चुकन्दर, तिलहन एवं आलू का उत्पादन 1913 से लगभग दूना हो गया, कपास-उत्पादन तो पाँच गुना हो गया, फ्लैक्स कम उत्पादित हुई। 1950-60 दशक में खाद्यान्नों में संलग्न भूमि एवं उत्पादन में बड़ी तेजी से वृद्धि हुई थी। परन्तु सर्वाधिक ध्यान पशुधन के विस्तार एवं मिश्रित-कृषि पर दिया गया है। फलतः इनके उत्पादनों एवं संख्या में बड़ी तेजी से वृद्धि हुई है। पिछले दशकों में ढोरों एवं सूअरों की संख्या बढ़ी है तथा दूध, मांस एवं चर्बी का उत्पादन लगभग दुगुना हो गया है। इसी अवधि में चारे की फसलों तथा बोई गई घासों के अन्तर्गत भूमि लगभग ढाई गुनी हो गयी है। सोवियत सरकार का प्रयत्न है कि यह देश शीघ्र ही दुग्ध उत्पादनों एवं मांस-चर्बी आदि में न केवल स्वावलम्बी हो जाये वरन् संयुक्त राज्य अमेरिका के बराबर उत्पादन करने लगे। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अन्य औद्योगिक शक्तियों की तुलना में सोवियत संघ में कृषि-संलग्न जनसंख्या अपेक्षाकृत ज्यादा है। वर्तमान में कुल श्रमिकों का लगभग 40 प्रतिशत भाग कृषि में लगा है।[21] संयुक्त राज्य अमेरिका में यह 12 प्रतिशत है। इससे निष्कर्ष निकलता है कि चाहे सोवियत संघ कुल उत्पादन और प्रति व्यक्ति उत्पादन में प्रमुख औद्योगिक देशों के बराबर हो जाये या आगे निकल जाये परन्तु प्रति कृषि-संलग्न व्यक्ति उत्पादन में आगामी दशकों में यह अमेरिका जैसे देशों से पीछे ही रहेगा।

पशुधन में क्रमिक विस्तार 1913-81

पशु संख्या मिलियन में
आधार वर्ष 1913 = 100 (प्रकोष्ठ में)

पशुधन	1913	1940	1950	1981
समस्त पशुधन	58·4(109)	47 8(82)	58·1(99)	115·9(197)
गायें	28·8(100)	22·8(79)	24·6(87)	43·7(158)
सूअर	23·0(100)	22 5(97)	22·2(97)	73·3(317)
भेड़	89·7(100)	66·6(84)	77·6(84)	142·4(160)
बकरी	6·6(100)	10·1(153)	16·0(242)	6·1(92)

21. Deddney, J. C.—A Geography of the Soviet Union p. 88

कृषि उत्पादनों में क्रमिक वृद्धि 1913-81

उत्पादन मिलियन टनों में
आधार वर्ष 1913 = 100 (प्रकोष्ठ में)

उत्पादन	1913	1940	1950	1981
खाद्यान्न	72·5(100)	95·6(131)	81·7(107)	189·1(262)
कपास	0·7(100)	2·2(314)	3·5(500)	9·96(1450)
चुकन्दर	11·3(100)	18·8(159)	20·1(178)	81·0(760)
आलू	31·8(100)	76·1(239)	88·6(279)	67·1(213)
सब्जियाँ	5·4(100)	13·7(254)	9·3(172)	27·3(510)
मांस	4·8(100)	4·7(98)	4·9(102)	15·1(320)
दूध	28·8(100)	33·6(117)	35·3(123)	90·9(315)
अंडे (हजार मिलियनों में)	11·2(100)	12·2(109)	11·7(104)	67·9(606)

सोवियत संघ : कृषि प्रदेश

सोवियत संघ जैसे विशाल देश में, जहाँ भौगोलिक वातावरण सम्बन्धी भारी वैभिन्य है, कृषि स्वरूपों में क्षेत्रीय भिन्नता होना बहुत स्वाभाविक है। परन्तु जितना सरल इन भिन्नताओं की व्याख्या करना है उतना ही कठिन यहाँ के कृषि प्रदेशों का क्षेत्रीयकरण है। यहाँ अमेरिका की तरह कृषि मेखलाओं का अभाव है। दूसरे, एक ही प्रदेश में एक ही प्रकार के कृषि कार्य हों यह आवश्यक नहीं है। एक ही प्रदेश में फसलो विविधता का पाया जाना साधारण बात है। यही कारण है कि जब रूस के कृषि प्रदेशों के विभाजन का प्रश्न उठता है तो आर्थिक भूगोल-वेत्ताओं में मतैक्य नहीं हो पाता। कोई रूस को 30 कृषि देशों में विभाजित करता है तो दूसरा 20 में। वस्तुतः जितना कठिन कृषि प्रदेशों का विभाजन है

उससे कहीं ज्यादा उनका मानचित्र पर चित्रण, कारण कि एक ही प्रदेश में कई प्रकार की फसलें पाई जाती हैं। प्रस्तुत पुस्तक में भौगोलिक वातावरण, कृषि-उत्पादकों का आर्थिक महत्व व अमुक प्रदेश में सर्वाधिक क्षेत्र को घेरने वाली फसल के आधार पर रूस के कृषि प्रदेशों का विभाजन किया गया है। यह विभाजन अत्यन्त साधारण व सरल प्रकार का है जिसमें प्रादेशिक जटिलताओं की अपेक्षा कर दी गई है। इस विभाजन में सारे देश को, मोटे तौर पर, चार बड़े क्षेत्रों में रखा गया है जिसका आधार कृषि-उत्पादन मूल्य है। आगे प्रत्येक क्षेत्र को कई प्रदेशों में विभाजित किया गया है।

विभाजन निम्न प्रकार है :

प्रथम क्षेत्र, कम आर्थिक महत्व के उत्तरी क्षेत्र

Zone 1. (Northern areas of Low Agricultural Value)

- प्रदेश 1. रेनडियर पालन, शिकार एवं तटवर्ती मत्स्य-व्यवसाय
- प्रदेश 2. काष्ठ व्यवसाय, साधारण कृषि

द्वितीय क्षेत्र, मुख्य कृषि मेखला

Zone 2. Main Agricultural Belt

- प्रदेश 3. खाद्यान्न, फ्लैक्स, दुग्ध व्यवसाय
- प्रदेश 4. खाद्यान्न, हैम्प, आलू, ढोर एवं सूअर पालन
- प्रदेश 5. गेहूँ एवं पशुपालन
  - (अ) पूर्व में कम गहरी कृषि
  - (ब) पश्चिम में गहरी कृषि

तृतीय क्षेत्र, कम आर्थिक महत्व के दक्षिणी क्षेत्र

Zone 3. Southern areas of Low Agricultural Value

- 6. शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क प्रदेशों में पशुपालन
- 7. पर्वतीय क्षेत्रों में पशुपालन

चतुर्थ क्षेत्र, दक्षिण के अधिक आर्थिक महत्व के क्षेत्र

Zone 4. Southern Areas of High Agricultural Value

- प्रदेश 8. बागाती कृषि, तम्बाकू एवं अंगूर उत्पादन
- प्रदेश 9. उपोष्णीय फसलें
- प्रदेश 10. सिंचित कृषि-क्षेत्र
- प्रदेश 11. उप-नागरीय कृषि

अगर गहराई से देखा जाये तो स्पष्ट होगा कि उक्त चारों प्रमुख क्षेत्र विशिष्ट भौगोलिक प्रदेशों से सम्बन्धित हैं। यथा, प्रथम क्षेत्र टुंड्रा एवं टैगा, द्वितीय क्षेत्र मिश्रित एवं पर्णपाती वनों तथा स्टैपीज प्रदेश, तृतीय क्षेत्र सोवियत मध्य एशिया एवं चौथा क्षेत्र कॉकेशस प्रदेश एवं रेगिस्तानी-पर्वतों की सीमावर्ती पट्टी में स्थित प्रदेशों से सम्बन्धित है।

प्रदेश 2. रैनडियर पालन, शिकार एवं तटवर्ती मत्स्य व्यवसाय

इस प्रदेश का विस्तार सोवियत संघ के उत्तरी भागों में टुंड्रा व टैगा प्रदेशों में है। देश का लगभग एक-तिहाई भू-भाग इन्होंने घेरा हुआ है। कृषि-कार्य प्रायः अनुपस्थित हैं। कुछ लोग घुमक्कड़ जीवन व्यतीत करते हुए रैनडीयर पालने का धन्धा करते हैं। इनका क्षेत्र मुख्यतः प्रदेश का उत्तरी हिस्सा है। गर्मियों में जब थोड़ी सी अवधि के लिए टुंड्रा प्रदेश में चरागाह व अन्य प्रकार की वनस्पति विकसित होती है तो ये उत्तर की ओर चले जाते हैं जबकि जाड़ों में टैगा जंगलों की उत्तरी सीमावर्ती पट्टी में चारागाह तलाश करते हैं। अपने जीवन की समस्त आवश्यकताओं के लिए ये लोग रैनडीयर पर ही निर्भर हैं। जो लोग रैनडीयर नहीं पालते अन्य प्रकार के धन्धे जैसे शिकार, मत्स्य व्यवसाय, खान खुदायी या लकड़ी कटाई में संलग्न हैं। अन्तिम दोनों उद्यम यातायात के अभाव में नगण्य हैं। मध्य लीना बेसिन में स्थित याकुत गणराज्य इस प्रदेश में सम्भवतः एक मात्र ऐसा भाग है जहाँ गेहूँ, जौ, राई, जई आदि की थोड़ी सी कृषि होती है। परन्तु याकुत्स लोग भी प्राकृतिक चरागाहों की दृष्टि से पशुपालन पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित करते हैं।

प्रदेश 2. काष्ठ व्यवसाय एवं साधारण कृषि

प्रथम प्रदेश के दक्षिण में क्रमशः जैसे-जैसे गर्मियों की अवधि व ताप मात्रा में वृद्धि होती जाती है कृषि कार्य बढ़ते जाते हैं। यहाँ खाद्यान्न विशेषकर गेहूँ, राई, जौ, जई आदि पैदा किये जाते हैं। पशुपालन भी बढ़ता जाता है। आलू की खेती की जाती है। लेकिन वास्तविकता यह है कि कृषि अब भी जंगल कटाई, खनन आदि की तुलना में गौण है। कृषि केवल उन छोटे-छोटे भागों में यत्र-तत्र सीमित है जो खनन या काष्ठ केन्द्रों के चारों ओर स्थित हैं। नदियों के सहारे-सहारे अनेक ऐसे केन्द्र हैं जहाँ लकड़ी संग्रह की जाती है तथा उसकी चिराई के कारखाने हैं। कहीं-कहीं कागज व लुग्दी के भी कारखाने हैं। एशियाटिक भाग या साइबेरिया में यह पट्टी अत्यन्त सँकरी है परन्तु यूराल और यूरोपियन रूस में क्रमशः चौड़ी होती जाती है। यहाँ तक कि यूरोपियन रूस में इस प्रदेश की दक्षिणी सीमाएँ मॉस्को प्रदेश को छूने लगती हैं।
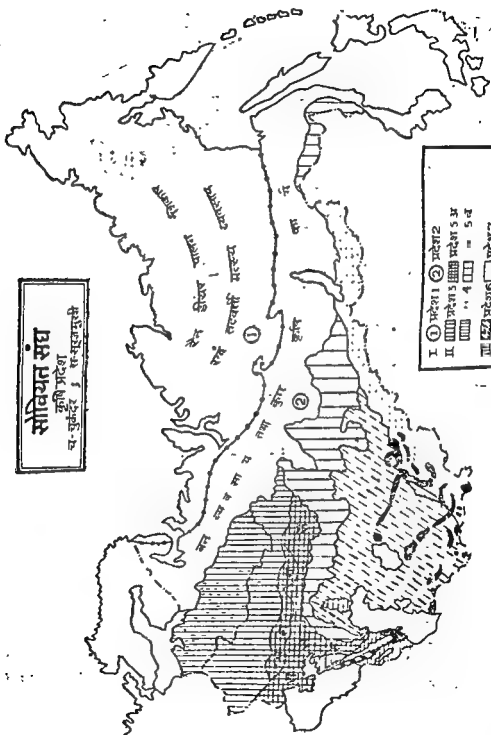
प्रदेश 3. खाद्यान्न फ्लेक्स एवं दुग्ध व्यवसाय

इस प्रदेश का विस्तार मिश्रित एवं पर्णपाती वनों की शृंखला के आधे उत्तरी भाग में (साधारणतया 56° उत्तरी अक्षांश के उत्तर में) माना जा सकता है। वर्षा यहाँ पर्याप्त होती है, तापक्रम मध्यम है परन्तु मिट्टी अनुपजाऊ है। मिट्टी के अनुपजाऊ होने का प्रधान कारण जल-निकास व्यवस्था का खराब होना है। वर्षा ज्यादा होती है, समतल भूमि है, तापक्रम कम होने से वाष्पीकरण कम होता है। ऐसी परिस्थितियों में लीचिंग क्रिया भारी मात्रा में होती है। अतः मिट्टियाँ एसिडयुक्त हैं। राई यहाँ की परम्परागत फसल रही है जिसके स्थान पर अब गेहूँ बोने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। जई एवं बोई गई घासें तथा चारे की फसलों के आधार पर पशुपालन अधिक मात्रा में प्रचलित है। सन भी इस प्रदेश की परम्परागत उपज है जो अब भी विस्तृत क्षेत्रों में बोया जाता है। पिछले दशकों में आलू का प्रचलन भी खूब बढ़ा है। प्रदेश के पश्चिमी भागों यानी बाल्टिक गणराज्यों में सन के स्थान पर आलू की खेती ज्यादा महत्व पाती जा रही है। इन राज्यों में सूअर-पालन भी प्रचलित है। वस्तुतः ठण्डी-आर्द्र जलवायु में ये कृषि क्रियाएँ अनुकूल भी रहती हैं।

प्रदेश का बहुत सा भाग आज भी दलदल और जंगलों ने घेरा हुआ है जिसे धीरे-धीरे साफ किया जा रहा है। स्वाभाविक है कि इस प्रकार के अप्रयोजित क्षेत्र का विस्तार दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़ता जाता है। दक्षिण में लगभग 60 प्रतिशत भाग का उपयोग किसी न किसी प्रकार के कृषि कार्यों में कर लिया गया है जबकि उत्तर में यह 10 प्रतिशत ही है।

प्रदेश 4. खाद्यान्न, 'हैम्प', आलू, ढोर एवं सूअर पालन

इस प्रदेश में मिश्रित एवं पर्णपाती वनों का शेष (यानी दक्षिणी) भाग शामिल किया जा सकता है जहाँ तापक्रम एवं वृद्धि-अवधि प्रथम प्रदेश की तुलना में ज्यादा अनुकूल हैं। इसका ज्यादातर भाग कृषि कार्यों के योग्य है। यही कारण है कि केवल थोड़े से ही भाग में प्राकृतिक वनों का आवरण मौजूद रह गया है। यहाँ तक कि प्राकृतिक घासें भी तीसरे प्रदेश की तुलना में कम हैं लगभग 50% भूभाग में कृषि कार्य होते हैं। रेशे वाली फसलों में यहाँ सन का स्थान पटुआ ने ले लिया है। यह इस बात का प्रतीक है कि वातावरण अपेक्षाकृत गर्म होता जाता है। दक्षिण की तरफ चुकन्दर भी दिखाई दे जाती है जो गेहूँ के साथ फसल-क्रम में बोई जाती है। खाद्यान्नों में प्रदेश के दक्षिणी भाग में गेहूँ तथा उत्तरी भाग में जौ-जई का प्रमुख स्थान है। आलू सर्वत्र बोये जाते हैं। सम्पूर्ण प्रदेश में आधुनिक स्तर पर दुग्ध व्यवसाय प्रचलित है।

इस प्रकार कृषि प्रदेश तीन और चार वस्तुतः मिश्रित कृषि के प्रदेश हैं जहाँ खाद्यान्न पैदा होते हैं परन्तु सघनतम पशु-पालन एवं दुग्ध-व्यवसाय की भी कमी नहीं है।

प्रदेश 5. गेहूँ एवं पशुपालन

यह प्रदेश सोवियत संघ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रदेश है। देश का अधिकांश गेहूँ इसी प्रदेश से प्राप्त होता है। संभवतः यही एक ऐसा प्रदेश है जिसे सदियों से रूस की 'रोटी की डलिया' होने का गौरव प्राप्त रहा है। यह स्टेप्स प्रदेश है जिसमें विश्व प्रसिद्ध उपजाऊ मिट्टी चर्नोजम का विस्तार है। मिट्टी के साथ ही इस कृषि प्रदेश का विस्तार पश्चिमी यूक्रेन से लेकर दक्षिणी साइबेरिया (कुजनेत्स्क बेसिन) तक माना जा सकता है। निस्संदेह पश्चिम से पूर्व की ओर प्रदेश की चौड़ाई क्रमशः कम होती जाती है। अगर वोल्गा के साथ-साथ एक-एक ऐसी रेखा खींची जाये जो दक्षिणी दिशा में चलकर कैस्पियन तथा काले सागर के बीच में होकर गुजरे तो यह रेखा इस प्रदेश को दो भागों में विभाजित करेगी। रेखा के पश्चिमी भाग में जहाँ चर्नोजम ज्यादा उपजाऊ है, वर्षा ज्यादा होती है तथा सर्दियों में तापक्रम अपेक्षाकृत ऊँचे रहते हैं। यह भाग ऐतिहासिक युगों से ही कृषि, विशेषकर गेहूँ की सघन खेती में उल्लेखनीय रहा है। पूर्वी भाग में जलवायु उतनी अनुकूल नहीं है अतः कम सघन कृषि होती है। दोनों भागों के विशिष्ट लक्षण इस प्रकार हैं :

(अ) वैसे तो इस सम्पूर्ण प्रदेश में गेहूँ ही प्रधान फसल है परन्तु वोल्गा के पूर्वी भाग में प्रति एकड़ उत्पादन क्रमशः कम होता जाता है। वोल्गा के पश्चिम में जाड़ों का गेहूँ तथा पूर्व में बसंत का गेहूँ बोया जाता है जो पूर्वी भाग की कठोर जलवायु का द्योतक है। पश्चिम भाग में भी नीपर के पूर्व में यत्र तत्र बसंती गेहूँ के दर्शन होने लगते हैं। गेहूँ के साथ गौण रूप में कुछ अन्य फसलें भी बोई जाती हैं। यथा, उत्तर-पश्चिम के ठण्डे भागों में राई तथा जई, दक्षिण-पश्चिम के आर्द्र भागों में मक्का तथा दक्षिण-पूर्व के शुष्क प्रदेशों में जौ तथा ज्वार बाजरे मुख्य सहायक फसलें हैं। यूरोपियन स्टेप्स में सदियों से गेहूँ की खेती होते रहने के कारण मिट्टी अनुपजाऊ होने लगी है। कटाव की समस्या भी बढ़ गई है। इन समस्याओं से बचाव के लिए खादों के अधिकाधिक प्रयोग के साथ-साथ कृषि-विशेषज्ञों की राय पर, पिछले दशकों से यहाँ कुछ औद्योगिक फसलों को भी बोया जाने लगा है। इनमें उत्तर-पश्चिम के आर्द्र भागों में चुकन्दर तथा दक्षिण-पूर्व के शुष्क भागों में 'सन फ्लावर' (सूरजमुखी) उल्लेखनीय है। बहुत से भागों में चारे की फसलें तथा चरागाह भी बोई जाती हैं। इससे दुग्ध व्यवसाय के साथ-साथ मांस उत्पादन भी बढ़ा है।

आर्द्र भागों में विशेषकर यूक्रेन में पशुओं का फार्मों पर ही बोई गई चारे की फसलों के आधार पर पाला जाता है। अतः अब पशुपालन व दुग्ध व्यवसाय प्रत्येक कोलखोज का एक आवश्यक अंग बन गया है। वोल्गा के पूर्व व दक्षिण में क्रीमिया प्रायःद्वीप की तरफ उपजाऊ भूमि का अनुपात घटता जाता है अतः पशुपालन चारण पर निर्भर है। इन फसलों के अतिरिक्त भारी मात्रा में, विशेषकर नगरों के आसपास फलों तथा सब्जियों का उत्पादन प्रचलित है। दक्षिणी भागों में नीपर तथा डॉन की नहरों से सिंचाई कर के वर्षा की कमी की पूर्ति कर ली जाती है। साधारणतः पश्चिमी स्टैप्स में कृषि का पूर्ण विकास हो चुका है। नवीन भूमि प्राप्ति की कोई सम्भावना नहीं है।

(ब) इस कृषि प्रदेश के पूर्व (वोल्गा के पूर्व) में स्थित भागों में कृषि के अपेक्षाकृत कम साधन हैं। बसन्त का गेहूँ मुख्य फसल है। इस भाग के उत्तरी हिस्सों में, जहाँ वर्षा ज्यादा विश्वसनीय है, मात्रा भी ज्यादा है, जई तथा राई भी पैदा की जाती है। दुग्ध व्यवसाय भी विकसित है। इस क्षेत्र में दुग्ध उत्पादन अतिरिक्त मात्रा में पैदा किए जाते हैं जिनका उपयोग देश के दूसरे हिस्सों में होता है। 1954 और 1961 के वर्षों में दक्षिणी-हिस्से में लगभग 40 मिलियन हैक्टर नई भूमि प्राप्त करके खेतों का विस्तार किया गया। नव-स्थापित ये फार्म्स अधिकांशतः दक्षिणी-पश्चिमी साइबेरिया और कजाकस्तान में विद्यमान हैं। इस भाग में अत्यधिक मशीनीकरण है। प्रति कृषक उत्पादन की दृष्टि से यह भाग यूक्रेन के बाद दूसरे नम्बर का है। संक्षेप में सोवियत संघ के खाद्यान्न स्रोतों में इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण स्थान होता जा रहा है।

तीसरे और चौथे कृषि-प्रदेश की तरह इस पाँचवें प्रदेश में भी मिश्रित कृषि प्रचलित है, पशुपालन व दुग्ध व्यवसाय होता है। परन्तु खाद्यान्न उत्पादन मुख्य एवं पशुपालन गौण है। वोल्गा के पूर्वी हिस्सों (कजाकस्तान, द०प० साइबेरिया) में अवश्य इसका प्रचलन ज्यादा होता जाता है।

प्रदेश 6. शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में पशु-पालन :

जैसे-जैसे दक्षिण की तरफ, विशेषकर मध्य एशिया में, बढ़ते हैं—वर्षा की मात्रा कम होती जाती है तथा वनस्पति का स्वरूप स्टैप्स से रेगिस्तानी प्रदेश में परिवर्तित होता जाता है। कृषि योग्य एवं उपजाऊ प्रदेश प्रायः नहीं हैं। प्राकृतिक घास यत्र-तत्र है। यह भाग सदियों से घुमक्कड़ जीवन व्यतीत करने वाले खिरगिज आदि लोगों का रहा है। जो सदियों से पानी और घास की तलाश में इधर से उधर घूमते रहे हैं। सोवियत समय में इस उद्यम को वैज्ञानिक स्तर पर आरम्भ किया

गया है। जगह-जगह घास के क्षेत्र विकसित किए गए हैं। भेड़ तथा बकरियों की देखभाल के लिए डाक्टरों की सुविधा है। अब ये लोग अनिश्चित की अवस्था में अपने झुण्डों को लेकर नहीं घूमते वरन् निश्चित मार्गों पर होकर आते-जाते हैं। इन सबके बावजूद इस विशाल प्रदेश का उत्पादन हिस्सा सोवियत कृषि में बहुत सीमित है।

प्रदेश 7. पर्वतीय क्षेत्रों में पशुपालन :

कठोर जलवायु एवं तीव्र ढाल पर्वतीय प्रदेशों में कृषि की सम्भावनाओं को सीमित करते हैं। यहाँ कृषि कार्य केवल घाटियों में सीमित हैं। साधारण ढाल प्रदेशों में पशुचारण होता है। वस्तुतः यहाँ मौसम के अनुसार पशुओं को ऊपर और नीचे ले जाने का प्रचलन है। काकेशस प्रदेश में दुग्ध-उत्पादन सम्बन्धी तथा मध्य एशिया के पर्वतीय भागों में जहाँ जलवायु अपेक्षाकृत शुष्क है, भेड़ों व मांस वाले जानवरों का बाहुल्य है।

प्रदेश 8. बागाती कृषि, तम्बाकू एवं अंगूर उत्पादन :

इस प्रदेश के अन्तर्गत उपयुक्त स्थानीय दशाओं वाले अनेक भाग जहाँ सघन कृषि होती है, शामिल किए जाते हैं; यथा मोल्देविया में अंगूर उत्पादन में विशिष्टता प्राप्त की गई है। यह छोटा सा गणराज्य सोवियत संघ के लगभग एक-तिहाई अंगूरों के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। यहाँ अन्य फल, सब्जियाँ तथा तम्बाकू भी पैदा किए जाते हैं। दक्षिणी क्रीमिया में, विशेषकर तट के सहारे विविध फल (सेब, आलूचा, अजीर, अंगूर) तथा तम्बाकू पैदा किए जाते हैं। इसी प्रकार निचली वोल्गा घाटी में, जहाँ मिट्टियाँ (कांप) उपजाऊ हैं, सिंचाई की सुविधा प्राप्त है, विविध प्रकार के फल पैदा किए जाते हैं।

प्रदेश 9. उपोष्णीय फसलें :

अन्य कृषि-प्रदेशों की तुलना में यह प्रदेश क्षेत्रफल में बहुत छोटा है परन्तु कृषि-उत्पादनों की दृष्टि से भारी महत्वपूर्ण है। यह सोवियत संघ का एकमात्र ऐसा प्रदेश है जहाँ भारी वर्षा और ऊँचे तापक्रम होने के कारण सदाबहार उप-उष्ण कटिबंधीय फसलें पैदा की जा सकती हैं। इस प्रकार चाय, आम्लिक फल, तम्बाकू, सब्जियाँ, चावल आदि ज्यादा कीमत वाली फसलें यहीं पैदा होती हैं।

प्रदेश 10. सिंचित कृषि प्रदेश :

यह प्रदेश भी वस्तुतः विशृंखलित है जिसमें ट्रांस-काकेशिया एवं सोवियत मध्य एशियाई गणराज्यों के सिंचित भागों को शामिल किया जाता है। इन सिंचित क्षेत्रों की सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं विस्तृत फसल कपास है। इसके अतिरिक्त चावल, चुकन्दर, पटुआ, तम्बाकू, अंगूर एवं फल उल्लेखनीय हैं। कपास के साथ फसल-क्रम में ल्यूसर्न घास बोई जाती है जिसके आधार पर यहाँ भेड़पालन (प्रमुख नस्ल कराकुल) उद्यम विकसित किया जा रहा है। प्रति एकड़ उत्पादन पर्याप्त है। ये सिंचित क्षेत्र ही सोवियत संघ को 90% से अधिक कपास पैदा करते हैं। पिछले दशकों में सिंचित भू-भागों के विस्तार के साथ-साथ इन भागों में जनसंख्या भी बढ़ी है। व्यावसायिक फसलों में अधिकांश जमीन लगे होने के कारण खाद्यान्न में ये भाग स्वावलम्बी नहीं हैं। कजाकस्तान से गेहूँ मँगाया जाता है।

प्रदेश 11. उप-नगरीय कृषि :

उप-नगरीय कृषि वस्तुतः भौगोलिक वातावरण की अपेक्षा आर्थिक तत्वों से ज्यादा प्रभावित होती है। चूँकि इसके उत्पादन जल्दी खराब होने वाले होते हैं अतः इस श्रेणी की कृषि बड़े-बड़े नगरों के आसपास ही विकसित की जाती है। इसमें सब्जियाँ, माँस, फल तथा दुग्ध उत्पादन पैदा किए जाते हैं। देश के प्रायः सभी बड़े नगरों के चारों ओर विस्तृत भागों में इस प्रकार की व्यवस्था है। नगरों तथा खेतों के बीच उत्तम यातायात व्यवस्था है। सोवियत संघ का लगभग 1/10 आलू इन्हीं खेतों में पैदा किया जाता है। किसान लोग इन फर्मों पर ही काँच वाले घरों में रहते हैं, मॉस्को के चारों ओर लगभग 2,00,000 वर्ग गज में फैले हुए काँच के घर मिलते हैं। लगभग 10% व्यक्ति इस नगर की उप-नगरीय-कृषि में संलग्न हैं। उप-नगरीय कृषि सघनतम प्रकार की कृषि होती है जिसमें मानव श्रम की ज्यादा आवश्यकता होती है।

मिश्रित कृषि :

सोवियत समय में, निस्संदेह कृषि के विभिन्न अंगों का विकास एवं विस्तार हुआ है परन्तु सर्वाधिक (अनुपातिक रूप में) विस्तार मिश्रित कृषि का हुआ है। आज इस देश में मिश्रित कृषि एक आम प्रचलन की वस्तु बन गई है। कैसी भी कृषि हो फार्म्स पर पशु पाले ही जाते हैं। यह पशुपालन व्यावसायिक स्तर पर होता है। हाँ, पशुओं का स्वरूप भौगोलिक वातावरण पर निर्भर करता है, यथा कहीं दुग्ध व्यवसाय, तो कहीं मांस-ऊन के लिए जानवर भी पाले जाते हैं। किन्हीं क्षेत्रों में

सूअर तो कहीं मुर्गी-पालन को प्राथमिकता दी गई है। इस प्रकार मिश्रित कृषि का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। पशुओं की संख्या के साथ-साथ चारागाह एवं घास-क्षेत्रों के आकार में भी वृद्धि हुई है। 1913 में कुल कृषि-गत भूमि के केवल 3% में ही चारे की फसलें बोई जाती थीं जबकि आज इन्होंने लगभग 29% भाग घेरा हुआ है। 1981 में यहां बोई गई घासें व चारे की फसलों का भू-क्षेत्र 66·1 मिलियन हैक्टर (कुल बोई गई भूमि 29·2%) था।

चारे की फसलें तथा घासें मिट्टी एवं जलवायु की दशाओं के अनुकूल ही विकसित की गई हैं। यथा, मध्य एशिया की चूने युक्त मिट्टियों में ल्यूसर्न तथा उत्तर की ठण्डी एवं भारी मिट्टियों में टिमो थी घासें लगाई गई हैं जो इनमें अच्छी तरह बढ़ती हैं। यूरोपियन रूस के विस्तृत भागों में एसपार्टो तथा अल्फाफा घासें बोई जाती हैं। उत्तर-पश्चिम के ठण्डे-आर्द्र प्रदेशों में मक्का एवं 'हे' चारे के रूप में पशुओं के काम में लाई जाती हैं। साइलेज बनाने का भी प्रचलन चल पड़ा है। आमतौर पर प्रत्येक राजकीय तथा सामूहिक फार्म पर एक बड़ा हिस्सा घास के लिए छोड़ दिया जाता है।

पशुओं की संख्या में वृद्धि एवं उनकी नस्लों में सुधार के लिए फार्मों के बीच-बीच में केन्द्र स्थापित किये गये हैं। 1981 में सोवियत संघ में लगभग 115·9 मिलियन ढोर, 73·3 मिलियन सूअर तथा 148·5 मिलियन भेड़-बकरी थे। विविध फार्म्स में इनका प्रतिशत निम्न प्रकार था:

विविध प्रकार के फार्म्स में पशुधन

(प्रतिशत में)

पशु	सोवखोज	कोलखोज	निजी भूखण्ड
कुल ढोर	28·8	40·9	30·3
गायें	24·3	34·9	40·8
सूअर	28·8	42·7	28·5
भेड़	38·4	41·4	20·2
बकरियां	3·6	12·5	83·9

पिछले तीन दशकों (1950–80) में पशुधन एवं मिश्रित-कृषि में अभूतपूर्व विकास हुआ है। यूरोपियन रूस के विस्तृत कृषि क्षेत्रों में अनाज-उत्पादन में संलग्न म को कम कर के चारे की फसलों तथा दुग्ध व्यवस्था को प्रोत्साहित किया गया। जिन भागों में वर्षा कम होती हैं, खाद्यान्नों की कृषि सम्भव नहीं है वहां केवल ण को ही आधुनिक स्तर पर विकसित किया गया है। ऐसे भागों में स्टैप्स,

अर्द्ध-स्टेप्स, अर्द्ध-शुष्क एवं मध्य एशिया के पर्वतीय ढ़ाल उल्लेखनीय हैं। टैगा जंगलों के दक्षिणी सीमावर्ती भागों में जहाँ जमीने साफ कर के खेती की जाने लगी है वहाँ फर वाले जानवरों को पालने का धन्धा वैज्ञानिक स्तर पर प्रारम्भ किया गया है। यूरोपियन रूस के सभी भागों में आर्द्रता होने के कारण मिश्रित कृषि व्यापक हो गई है। यथा, मध्य भाग में आलू, यूक्रेन में गेहूँ, पश्चिमी यूक्रेन तथा मोल्देविया में चुकन्दर की खेती के साथ-साथ गाय तथा भेड़ें पाली जाती हैं। ओका के निचले आर्द्र प्रदेशों में फल तथा सब्जियों का बाहुल्य है।

बाल्टिक गणराज्यों (ईस्टोनिया, लैटविया तथा लिथुआनिया) बैलोरूस तथा उत्तरी-पश्चिमी रूसी गणराज्य विशेषकर लेनिनग्राद के पृष्ठ प्रदेश में सन (फ्लैक्स) की खेती के साथ-साथ डेरी व्यवसाय भी विस्तृत स्तर तक पनप गया है। यहाँ की सीलन भरी जलवायु में अत्यधिक आर्द्रता के कारण गेहूँ नहीं पैदा होता। चूँकि गर्मियों में वर्षा होती है अतः गेहूँ के पकने में भी बाधा पड़ती है। सन (फ्लैक्स) के लिए गर्मियों की वर्षा उपयुक्त है। जाड़ों की फसल के रूप में यहाँ राई प्रमुख है। इस भाग की ठण्डी-आर्द्र जलवायु चारे की फसलों, घासों तथा स इलेज उत्पादन के लिए उत्तम है। इन परिस्थितियों में बाल्टिक गणराज्यों में डेरी व्यवसाय बड़ी तीव्रता से पनप रहा है।

पश्चिमी साइबेरिया एवं मध्य एशिया में भी कृषि का मिश्रित स्वरूप ही ज्यादा स्थान पाता जा रहा है। पश्चिमी साइबेरिया के नव-स्थापित फार्मों में खाद्यान्न के साथ डेरी भी चालू की गई है। बड़े फार्म होने से यहाँ चारागाह पर्याप्त हैं। मध्य एशिया के कम उपजाऊ मिट्टी वाले स्टैप्स प्रदेश तथा अर्द्ध-शुष्क भागों में भेड़-पालन ऊन तथा मांस उद्योग सफलतापूर्वक चल रहे हैं, गायें केवल नखलिस्तानों में पाली जाती हैं। सोवियत समय में रूसी लोगों ने यहाँ आकर सूअर पालना भी प्रारम्भ कर दिया है। घोड़ा इस प्रदेश का सदा से ही महत्वपूर्ण जानवर रहा है। ट्रांस-काकेशिया तथा क्रीमिया में भी मांस तथा ऊन के लिए भेड़ें पाली जाती हैं। यहाँ भेड़ के दूध से भी पनीर बनाया जाता है। दक्षिणी साइबेरिया में अल्टाई-सयान के चरण प्रदेशों एवं घाटियों में गायें, भेड़, बकरी, रैनडियर एवं माराल के झुंड के झुंड चरते दिखाई देते हैं। टुंड्रा प्रदेशों में रैनडियर पालन अब वैज्ञानिक तरीकों से होने लगा है। पर्वतीय भागों में होने वाले ट्रांस-ह्यूमस को भी व्यवस्थित एवं नियमित किया गया है।

सोवियत संघ इस बात के लिए प्रयत्नशील है कि दुग्ध उत्पादनों, मांस-ऊन आदि में वह स्वावलम्बी हो। पश्चिमी यूरोपियन देशों की तरह यहाँ भी अतिरिक्त दूध से मक्खन पनीर, केक आदि बनाये जाते हैं। उत्तरी यूरोपियन रूस एवं साइबेरिया में कुल उत्पादित दूध का आधा-सा भाग मक्खन बनाने के काम में आता है। काकेशिया आर्मीनिया एवं पश्चिमी साइबेरिया में पनीर बनाने की

बड़ी-बड़ी फैक्ट्रीज स्थापित की गई हैं। पश्चिमी साइबेरिया में, जहाँ दुग्ध-व्यवस्था वर्तमान शताब्दी में ही प्रारम्भ किया गया, कुर्गान, मक्खन एवं पनीर का बहुत बड़ा केन्द्र हो गया है। ट्रांस बेकालिया में जहाँ मंगोलियन नस्ल की गायें पाली जाती हैं प्रति वर्ष हजारों मन मक्खन तैयार करके पश्चिम में स्थित प्रौद्योगिक प्रदेशों को भेजा जाता है। आर्मीनिया में स्विस टाइप की पनीर भी बनायी जाती है।

मध्य एशिया में जहाँ वातावरण शुष्क है, दुग्ध व्यवसाय का स्थान माँस-ऊन उद्योग ने ले लिया है। क्रिम्सकाया, नोवोसिबिर्स्क, कुर्गान, ओमस्क, चीता, बायस्क एवं बोरज्या में माँस के बड़े-बड़े कारखाने हैं। कजाकिस्तान सदा से ही चमड़ा, जूता तथा खालों के लिए प्रसिद्ध रहा है। काकेशिया तथा मध्य एशिया रूस की तीन-चौथाई ऊन प्रस्तुत करते हैं। ताशकन्द, बुखारा, समरकन्द एवं अलमा आता में ऊन बँटने तथा कताई की आधुनिक फैक्ट्रीज स्थापित की गई हैं। संक्षेप में, सोवियत संघ के सभी कृषि प्रदेशों में मिश्रित कृषि विकसित की जा रही है।

सोवियत संघ : औद्योगिक संसाधन
(Industrial Resources)

विविध प्रकार के औद्योगिक संसाधनों—ईंधन शक्ति, धातु व अधातु खनिज आदि में सोवियत संघ धनी है। जार-कालीन रूस में इस प्राकृतिक सम्पदा का केवल आंशिक भाग ही प्रयोगित था। क्रान्ति के पश्चात् सोवियत समय में विस्तृत क्षेत्रों में भूगर्भिक सर्वेक्षण हुआ जिसके फलस्वरूप विविध प्रकार के खनिज पदार्थों का ज्ञान हुआ। पिछले कुछ दशकों में यह देश जो इतना भारी औद्योगिक विकास कर सका उसका बहुत कुछ श्रेय इस प्राकृतिक सम्पदा को भी है। सोवियत वैज्ञानिकों का दावा है कि उनके देश में विश्व के कुल सुरक्षित भण्डारों का 58 प्रतिशत कोयला, 58.7 प्रतिशत तेल, 41 प्रतिशत लौह-अयस्क, 76.7 एपाटाइट, 88 प्रतिशत मैंगनीज, 54 प्रतिशत पोटैशियम नमक 33 प्रतिशत फॉस्फेट तथा 25 प्रतिशत टिम्बर विद्यमान है।[22]

न केवल सुरक्षित भण्डार वरन् उत्पादन मात्रा की दृष्टि से भी सोवियत संघ कई खनिज पदार्थों में विश्व में अग्रणी है। यहाँ की खानों में उत्पादित कोयला स्वदेशी माँग की आवश्यकता पूर्ति करने में समर्थ है। लिगनाइट, तेल एवं विद्युत उत्पादन में भी इस समाजवादी देश ने उल्लेखनीय प्रगति की है। कोयला और लोहा दोनों के उत्पादन में रूस विश्व में नेतृत्व की स्थिति में है। इस्पात तैयार करने के लिए जिन मिश्रण की धातुओं की आवश्यकता होती है उनमें केवल टंगस्टन, मॉलबिडीनम एवं कोबाल्ट को छोड़कर अन्य सभी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। अलौह धातुओं में टिन, बोक्साइट, तांबा, सीसा तथा जस्ता, सोना एवं बैरीलियम आदि प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं।

औद्योगिक संसाधनों का वितरण भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है कि नवीन सर्वेक्षणों के फलस्वरूप विविध पदार्थों की जो नई खानें मिली हैं उनमें से अधिकांश यूराल के पूर्व (साइबेरिया) में स्थित है जबकि जनसंख्या का जमाव एवं बड़े-बड़े औद्योगिक संस्थान यूरोपियन रूस में। उदाहरणार्थ कोयला का लगभग 3/5 भाग

22. Statesman Year book 1984-85, Macmillan.

यूराल के पूर्व में मिलता है। कोयला शक्ति का प्रमुख साधन है जिससे तीन-चौथाई शक्ति उत्पादित की जाती है। परिणाम यह हुआ है कि यूरोपियन रूस में पिछले दशकों में पैट्रोल व प्राकृतिक गैस का प्रयोग बड़ी तेजी से बढ़ा है। निस्संदेह इसका कारण यूराल-वोल्गा प्रदेश में पाया जाने वाला तेल का विस्तृत भण्डार है। पहले यूरोपियन रूस में कुल प्रयोगित शक्ति का लगभग 60 प्रतिशत भाग कोयला प्रस्तुत करता था परन्तु अब यह प्रतिशत घट कर 45 हो गया है जबकि पैट्रोल एवं गैस का प्रतिशत बढ़कर 20 से 43 हो गया है। वैसे शक्ति-साधनों व खनिजों का वितरण देश की समाजवादी नीतियों को क्रियान्वित करने में बड़ा सहयोगी सिद्ध होगा। रूसी सरकार का सदा यह प्रयत्न रहा है कि देश के सभी भागों में (विशेष-कर पूर्वी भागों में) समान प्रोद्योगिक विकास किया जाये।

भूगर्भिक दृष्टि से प्रोद्योगिक संसाधनों के वितरण की व्याख्या सरल है। अधिकतर धातु खनिज प्राचीन चट्टानों (कैलीडोनियन एवं हरसीनियन युगों से सम्बन्धित) में प्राप्त हैं। बाद की भूगर्भिक हलचलों से इनकी पर्तें भी धरातल के निकट आ गई हैं। यूराल, कजाकस्तान, रूसी प्लेटफार्म एवं मध्य एशिया धातु लगभग 800 प्रकार के खनिज पदार्थ मिलते हैं। अधातु खनिज मुख्यतः कोयला, खनिजों (लौह, अलौह) की उपलब्धि की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। अकेले यूराल में लिगनाइट, पैट्रोल, गैस, गंधक पोटाश, एस्बैस्टस आदि अपेक्षाकृत नवीन पर्तदार चट्टानों में पाये जाते हैं।[23]

शक्ति के साधन

कोयला—कोयला सोवियत संघ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण शक्ति का साधन है। रूसी भूगर्भविदों का अनुमान है कि सोवियत भूमि में लगभग 87,60,000 मिलियन टन की सुरक्षित राशि दबी पड़ी है जिसमें से लगभग 77,65,000 मिलियन टन की राशि ऐसी है जिसका शोषण सम्भव है।[24] सुरक्षित राशि में से लगभग दो-तिहाई (65 प्रतिशत) हार्ड कोक-एन्थ्रासाइट एवं बिटूमिनस का है। शेष में लिगनाइट या भूरा कोयला है। ये आँकड़े वस्तुतः सम्भावनाओं पर ज्यादा आधारित हैं अतः बिल्कुल सही चित्र प्रस्तुत करने में असमर्थ हैं। पश्चिमी भूगर्भविदों के अनुसार इस राशि में से 5 प्रतिशत तो सिद्ध है, 15 प्रतिशत लगभग प्रामाणिक तथा 80 प्रतिशत संभावित है। लेकिन अगर 'सिद्ध' की गई राशि को ही माना जाये तो यह ही सोवियत आवश्यकता की पूर्ति अगले 500 वर्षों तक करती रहेगी। अधिकांश सुरक्षित मात्रा डोनेत्ज बेसिन, कुजनेत्स्क बेसिन, काराघंडा, मॉस्को, पिचोरा तथा यूराल प्रदेशों में विद्यमान है।

---

23. Mellar, R. E. H.—Geography of the U. S. S. R. P. 219-22
24. Dewdney, J. C.—*A Geography of the Soviet Union, Second Edition* P. 94

सोवियत संघ में कोयला उत्पादन 1913–68

दस लाख मैट्रिक टनों में (कुल उत्पादन का प्रतिशत प्रकोष्ठ में)

	1913	1940	1950	1968
सोवियत संघ	29·1(100%)	153·2(100%)	248·9(100%)	594(100%)
डोनबास	25·3(86·9)	85·5(55·8)	89·7(36·0)	195·0(32·8)
कुजबास	0·7(2·4)	21·1(13·8)	36·8(14·8)	105·0(17·7)
यूराल	1·2(4·1)	11·7(7·6)	32·2(12·9)	60·0(10·1)
मॉस्को बेसिन	0·3(1·0)	9·9(6·5)	30·6(12·3)	40·0(6·7)
पूर्वी साइबेरिया	0·8(2·7)	8·5(5·5)	15·1(6·1)	50·0(8·4)
कारागांडा	— —	6·3(4·1)	16·3(6·5)	50·3(8·9)
सुदूर पूर्व	0·4(1·4)	6·6(4·3)	12·0(4·8)	30·0(5·1)
पचोरा	— —	0·3(0·2)	8·7(3·5)	20·0(3·4)
मध्य एशिया	0·2(0·7)	1·9(1·2)	4·2(1·7)	10·0(1·7)
जार्जिया	0·1(0·3)	0·6(0·4)	1·7(·07)	3·0(0·5)
अन्य	0·1(0·3)	0·8(0·5)	1·6(0·6)	28·0(4·7)
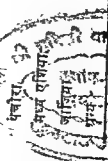
सोवियत संघ कोयला के उत्पादन में इस समय विश्व में प्रथम है। पिछली कुछ दशाब्दियों में ही यहाँ कोयला-उत्पादन में अभुत-पूर्व वृद्धि हुई। 1913 में रूस का कुल उत्पादन 29 मिलियन टन था जो बढ़कर 1932 में 64·4, 1950 में 261·1, 1960 में 513, 1965 में 578 मि० मीट्रिक टन हो गया। 1982 में यहाँ की खदानों ने 718 मि० मैट्रिक टन राशि प्रस्तुत की जिसका लगभग एक-चौथाई भाग कोकिंग कोल तथा एक-चौथाई भाग लिगनाइट के रूप में था। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सोवियत संघ के उत्पादन में तीव्र गति का ही यह परिणाम था कि छठे दशक (1950-60) के अन्तिम वर्षों में ही इसने इस क्षेत्र में सं० रा० अमेरिका को पीछे छोड़ दिया। दुनियाँ के अन्य किसी भी भाग में उत्पादन इतनी तीव्र गति से नहीं बढ़ा। यहाँ की प्रगति के प्रधान कारण नई खदानों की प्राप्ति, मशीनों का उपयोग एवं प्रशासन की सुव्यवस्था है।

सोवियत संघ का कोयला-उत्पादन कुछ क्षेत्रों में केन्द्रित है जो अच्छी किस्म का (लगभग सारा कोकिंग कोयला) कोयला प्रस्तुत करते हैं। इन क्षेत्रों में चार-डोनबास, कुजबास, कारागांडा तथा पेचोरा प्रमुख हैं। ये चारों सभी प्रकार के कुल उत्पादित कोयला का लगभग दो-तिहाई भाग प्रस्तुत करते हैं। अन्य क्षेत्रों में घटिया किस्म का कोयला निकलता है जो स्थानीय महत्व का है।

सातवें दशक के अन्त तक तो लगभग सभी कोयला क्षेत्र अपनी पूरी क्षमता में उत्पादन देने लगे थे और उनका स्वरूप प्रायः स्थिर हो चुका था। क्रान्ति के पश्चात् नये क्षेत्रों में उत्पादन किस तीव्रता से बढ़ा है उसे सही रूप में देखने के लिए वांछनीय है कि तीसरे से सातवें दशक तक की अवधि में कुछ प्रतिनिधि वर्षों (1913, 1940, 1950 एवं 1968) का उत्पादन जाना जाये। संलग्न सारणी में इन्हें दर्शाया गया है जिससे विविध क्षेत्रों के घटते-बढ़ते महत्व पर प्रकाश पड़ता है।

डोनबास

जैसाकि उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है, यह क्षेत्र प्रारम्भ से भी सोवियत संघ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कोयला-उत्पादक क्षेत्र रहा है। क्रान्ति से पूर्व यह देश का लगभग 85 प्रतिशत, युद्ध पूर्व लगभग आधा एवं वर्तमान में एक-तिहाई राशि प्रस्तुत करता है। उत्पादन निरन्तर बढ़ने के बावजूद प्रतिशत मात्रा में घटने का कारण अन्य क्षेत्रों में उत्पादन-वृद्धि है। न केवल उत्पादन-मात्रा कोयले की क्वालिटी एवं सुरक्षित राशि की दृष्टि से भी यह बेसिन महत्वपूर्ण है। देश का 60 प्रतिशत कोकिंग कोयला यहीं से उपलब्ध होता है।

डोनेटज बेसिन में कोयले की पर्तों की औसत मोटाई 1·3 से 2·5 फीट तक है। यद्यपि कहीं-कहीं 6 फीट तक भी पाई जाती है। बेसिन में दक्षिण की ओर

चित्र-14

कोयला क्रमशः अच्छा होता जाता है। यहाँ तक कि शास्टी के निकट सम्पूर्ण उत्पादन एन्थ्रासाइट का होता है। भूगर्भविदों के अनुसार डोनबास बेसिन की स्थिति रूसी प्लेटफार्म के एक चौड़े धंसाव क्षेत्र में है। पर्मोकार्बोनी फेरस के युग में यह भाग समुद्र के अन्तर्गत था उसी अवधि में यहाँ वनस्पति के दब जाने से कोयला की पर्तों का उदय हुआ।[25] निकटवर्ती लोह-अयस की खानों के कारण इस प्रदेश में विविध भारी उद्योगों का आविर्भाव हुआ है।

कुजबास

दक्षिणी साइबेरिया में स्थित यह बेसिन सोवियत संघ का दूसरे नम्बर का कोयला क्षेत्र है। कोकिंग कोल की उपलब्धि की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है। यहाँ का प्रति श्रमिक उत्पादन डोनबास की अपेक्षा दूना है जिसका कारण पर्तों की मोटाई (40-50 फीट) तथा आसान खुदाई (खुली विधि से) है। प्रधान खानें प्रोकोपयेस्क, बैलोवो श्रोसीनोव्का, लैनिनिस्क-कुजनेस्की आदि स्थानों पर हैं। क्रांति से पूर्व यहाँ उत्पादन ना के बराबर था। उत्पादन में वास्तविक वृद्धि 1930 में यूराल-कुजनेस्क कम्बाइन की स्थापना के बाद जबकि यूराल प्रदेश से यहाँ लोह-अयस और यहाँ से यूराल प्रदेश को कोयला भारी मात्रा में रेल्वे द्वारा ले जाया जाने लगा। युद्ध के दिनों में उत्पादन लगभग 50 प्रतिशत बढ़ा। वर्तमान में यह देश का लगभग 20 प्रतिशत कोयला प्रस्तुत करता है।

कारागांडा बेसिन

इस क्षेत्र में वास्तविक एवं बड़े पैमाने पर खुदाई 1930 से प्रारम्भ हुई यहाँ से दक्षिणी यूराल के नव-स्थापित इस्पात संस्थानों को कोकिंग कोयला सप्लाई किया जाने लगा। वर्तमान में यहाँ से मध्य एशिया तथा कज़ाक प्रदेश के कारखानों को कोयला प्रस्तुत किया जाता है। उत्पादन अच्छी क्वालिटी का है जिसमें 50 प्रतिशत कोकिंग प्रकार का है। पर्तों की मोटाई 25 फीट तक है। कारागांडा के उत्तर-पश्चिम में लगभग 250 कि. मी. की दूरी पर स्थित एकीवास्तुज क्षेत्र में बड़े पैमाने पर कोयले की खुदाई अभी हाल में प्रारम्भ हुई है। कारागांडा बेसिन महत्व की दृष्टि से सोवियत संघ का तीसरा कोयला क्षेत्र है।

पेचौरा बेसिन

आर्कटिक वृत्त में स्थित होने से इस क्षेत्र में कोयले का उत्पादन मूल्य ज्यादा पड़ता है। यूरोपियन रूस के धुर उत्तर-पूर्व में स्थित पेचौरा बेसिन में वुरकुटा तथा ईंटा के पास महत्वपूर्ण खानें हैं। इन खानों का विकास वस्तुतः विश्वयुद्ध के बाद ही हुआ है। 1941 तक उत्पादन नगण्य था। युद्धोत्तर

25. Mellor, R. E. H.—Geography of the U. S.S. R.P. 226

दिनों में वरकुटा से कोटलास तक रेलवे लाइन बनाने के फलस्वरूप ये खानें यूरोपियन रूस के औद्योगिक क्षेत्रों से जुड़ गईं और उत्पादन तेजी से बढ़ने लगा। चेरेपोवेत्स इस्पात संस्थान को तो यहीं से सारा कोकिंग कोयला उपलब्ध कराया जाता है। वरकुटा से यूराल को रेल से जोड़ने की योजना है इसके पूरा होने पर पेचोरा बेसिन का कोयला-उत्पादन और भी बढ़ जायेगा। एक उल्लेखनीय तथ्य है कि भौगोलिक कठिनाइयों के बावजूद इस बेसिन में प्रति खान उत्पादन डोनवास से ज्यादा है।

मॉस्को बेसिन

यहाँ की खानों से सारा उत्पादन लिगनाइट का होता है। यह सोवियत संघ का सर्वाधिक लिगनाइट प्रस्तुत करने वाला क्षेत्र है। देश का एक-चौथाई (40 मिलियन टन) लिगनाइट मॉस्को बेसिन से प्राप्त होता है। सुरक्षित राशि मॉस्को से दक्षिण व पूर्व में विद्यमान है। वर्तमान में अधिकतर उत्पादन टूला के आस-पास के क्षेत्रों से होता है। प्रधान खानें कालूगा, स्कॉपिन, नोवोमोस्कोस्क, टोवारकोवो तथा टूला के निकट स्थित हैं। यहाँ लिगनाइट की खुदाई तो पिछली शताब्दी (1855) से ही हो रही है परन्तु उत्पादन में ज्यादा वृद्धि दो युद्धों के अन्तराल व द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हुई जिसका उद्देश्य था कि अन्य क्षेत्रों से आयातित कोयले की निर्भरता को कम किया जाये। लिगनाइट से ही यहाँ के अधिकांश शक्ति-गृह चलाये जाते हैं।

यूराल प्रदेश

उत्पादन-मात्रा की दृष्टि से यूराल प्रदेश तीसरे स्थान पर है परन्तु एक तो यहाँ का कोयला घटिया किस्म (लिगनाइट) का है दूसरे खानें अत्यधिक बिखरे रूप में हैं। अतः ज्यादा महत्त्व का नहीं है। यहाँ की अधिकांश खानें पर्म, चेलियाबिन्स्क स्वर्दलोव्स्क तथा बश्कीर क्षेत्रों में विद्यमान हैं। उत्पादन का लगभग तीन-चौथाई भाग लिगनाइट प्रकार का होता है। कोकिंग कोयला नगण्य मात्रा में है। सम्भवतः यही कारण है कि यूराल के औद्योगिक संस्थानों को कोयला कुजबास व कारागाण्डा बेसिनों से मँगाना पड़ता है। सभी खानों में खुली विधि से खुदाई होती है। यहाँ पर्तें लगभग 500 फीट की गहराई पर स्थित हैं।

पूर्वी साइबेरिया

यहाँ के कोयला क्षेत्रों में भी उत्पादन पिछले दशकों में ही बढ़ा है। सरकार की योजना से, कि पूर्वी साइबेरिया में धातु उद्योग का तीसरा प्रधान क्षेत्र विकसित किया जाये, इस बात की सम्भावना बढ़ गई है कि यहाँ के कोयला-क्षेत्रों का विकास तीव्र गति से होगा। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कोयला क्षेत्र बैकाल झील के पश्चिम में स्थित इर्कुटस्क बेसिन है। इसके अतिरिक्त ट्रांस साइबेरियन रेल मार्ग पर क्रैस्नो-

यास्र्क के पूर्व में स्थित कांस्क-प्राचींस्क क्षेत्र (लिगनाइट) तथा यनीसी की ऊपरी घाटी में स्थित मीनसिंस्क बेसिन (बिटूमिनस) उल्लेखनीय हैं।

अन्य कोयला क्षेत्र

उपर्युक्त के अतिरिक्त मध्य एशिया (फरगना घाटी) धुर पूर्व (सखालिन) एवं जार्जिया में कोयला उत्पादित किया जाता है। उत्पादन मात्रा नगण्य है।

पैट्रोलियम

विश्व के अन्य भागों की तरह सोवियत संघ में भी पिछले दशकों में तेल का शक्ति संसाधन के रूप में भारी विस्तार हुआ है। 1968 में तेल और प्राकृतिक गैस देश में कुल उत्पादित शक्ति के 57 प्रतिशत भाग के लिए उत्तरदायी थे जबकि 1950 में यह प्रतिशत केवल 19 था। कोयले का प्रतिशत हिस्सा इसी अवधि में 65 से घट कर 38 हो गया। देश के भारी सुरक्षित भण्डारों को देखते हुए यह अनुमान करना भी स्वाभाविक है कि भविष्य में तेल का उपयोग और महत्व बढ़ता ही जायेगा। विश्व के कुल सुरक्षित भण्डारों का लगभग एक-चौथाई भाग सोवियत भूमि में दबा हुआ माना जाता है। इस राशि की तुलना सम्पूर्ण मध्य पूर्व (50%) उत्तरी अमेरिका (13%) एवं लैटिन अमेरिका (6%) से की जा सकती है। इस प्रकार दुनियाँ के अन्य किसी भी देश से यहाँ तेल की मात्रा व भविष्य अच्छा है। तेल के इन विशाल भण्डारों का पता सोवियत समय में हुए सर्वेक्षणों से चला। इन सर्वेक्षणों के फलस्वरूप यूराल-वोल्गा, उत्तरी कजाकस्तान, सखालिन व पश्चिमी साइबेरिया के तेल क्षेत्रों का ज्ञान हुआ। रूस की सुरक्षित राशि का लगभग 80% भाग यूराल-वोल्गा एवं पश्चिमी साइबेरिया तथा 10% भाग अजरबेजान गणराज्य में माना जाता है। यहाँ की ज्यादातर सुरक्षित राशि परतदार चट्टानों में है। उत्तरी-यूक्रेन, एम्बाफील्ड तथा उत्तरी साइबेरिया में जुरैसिक युगीन नमक की गुम्बदाकार चट्टानों में भी तेल होने की सम्भावनाएँ हैं।

रूसी तेल उद्योग का जन्म तो वस्तुतः पिछली शताब्दी के अन्त में ही हो गया जबकि 1890 में बाकू प्रदेश में तेल की खुदाई प्रारम्भ हुई। 1903 में रूस का उत्पादन दुनियाँ में सबसे ज्यादा था।[26] बाद के वर्षों में एक ओर यहाँ का उत्पादन घटा, दूसरे अमेरिका, वेनेज्वेला व मध्य पूर्व के देशों ने इस क्षेत्र में भारी प्रगति की। फलस्वरूप रूस इस क्षेत्र में पिछड़ गया। आधुनिक स्तर पर उद्योग संचालन वर्तमान शताब्दी के चौथे दशक से होने लगा जबकि 1933 में गोजनी 1937 में यूराल-वोल्गा तेल क्षेत्र का पता लगा।

Lydolph, P.E.--Geography of the U. S. S. R.

विभिन्न गणराज्यों में तेल उत्पादन 1913–68

मिलियन मेट्रिक टनों में (कुल उत्पादन का प्रतिशत प्रकोष्ठ में)

	1913		1940		1950		1968	
सोवियत संघ	10·29	(100%)	31·12	(100%)	37·89	(100%)	309·02	(100%)
*रूसी सो० सं० गणराज्य	1·30	(12·6)	7·04	(22·6)	18·23	(48·1)	251·55	(81·4)
+अजरबैजान	7·67	(74·5)	22·23	(71·4)	14·82	(39·1)	21·14	(6·8)
तुर्कमानिया	0·13	(1·3)	0·59	(1·9)	02·02	(5·3)	12·88	(4·2)
यूक्रेन	1·05	(10·2)	0·35	(1·1)	0·29	(0·8)	12·13	(3·9)
उजबेकिस्तान	0·01	(0·1)	0·12	(0·4)	1·34	(3·5)	1·85	(0·6)
कजाकस्तान	0·12	(1·2)	0·70	(2·2)	1·06	(2·8)	7·43	(2·4)
किरगिजया	—	—	0·02	(0·1)	0·05	(0·1)	0·31	(0·1)
जार्जिया	—	—	0·04	(0·1)	0·04	(0·1)	0·03	—
ताजिकिस्तान	0·01	(0·1)	0·03	(0·1)	0·02	(0·1)	0·13	—
बेलोरशिया	—	—	—	—	—	—	1·72	(0·6)

* उत्पादन का अधिकांश भाग यूराल-वोल्गा तेल क्षेत्र से। इसमें कोमी-उकथा तथा साइबेरियन तेल क्षेत्र भी शामिल हैं।

\+ उत्पादन मुख्यतः बाकू फील्ड से।

क्रान्ति के पश्चात् और मुख्य कर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद रूस के तेल के मानचित्र में आमूल परिवर्तन हो गया है। 1930 तक रूस का 85% तेल कॉकेशियन क्षेत्र (बाकू, मैकोप एवं ग्रोजनी) से आता था। जबकि वर्तमान में इन सम्मिलित उत्पादन देश के कुल उत्पादन का 5% से भी कम है। अब अधिकांश तेल पश्चिमी साइबेरिया (ट्यूमेन क्षेत्र) एवं यूराल-वोल्गा क्षेत्र से उपलब्ध होता है। पिछले 4–5 दशकों में सोवियत संघ का तेल उत्पादन कितनी तीव्र गति से बढ़ा है, नये-नये तेल क्षेत्र किस प्रकार उभर कर आये हैं तथा पुराने तेल क्षेत्रों का महत्व किस प्रकार कम होता गया, इसके सही विवेचन के लिए पिछले पाँच दशकों के कुछ प्रतिनिधि वर्षों (1913, 1940, 1950, 1968) का उत्पादन देखना वांछनीय है। संलग्न सारणी से यह सुस्पष्ट है।

वर्तमान में सोवियत संघ तेल उत्पादन की दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान पर है। निस्सन्देह, 1970 तक इस स्थान पर संयुक्त राज्य अमेरिका का वर्चस्व था परन्तु पिछले दशक (71-80) में पश्चिमी साइबेरियन तेल क्षेत्र के विकास के साथ ही रूसी तेल उत्पादन मात्रा में इतना भारी उछाल आया कि उत्पादन 352 मिलियन टन (1970) से बढ़कर एकदम 613 मिलियन टन (1982) हो गया। उछाल के इस स्वरूप को कुछ अन्य तेल उत्पादक देशों की तुलना में देखना उपयोगी होगा।

तेल उत्पादन में सोवियत संघ की अन्य देशों से तुलना
(उत्पादन—मिलियन टनों में)

देश	1960	1970	1982	1983
सोवियत संघ	148	352	613	618
सं० रा० अमेरिका	384	533	486	486
मैक्सिको	14	21	150	149
सऊदी अरब	61	176	323	246
ईरान	52	191	120	124
भारत	·4	6·8	19	24
ब्रिटेन	—	—	103	114

उक्त सारणी से स्पष्ट है कि सोवियत संघ तेल उत्पादन की दिशा में तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है। यहाँ के उत्पादन का 95% भाग तीन क्षेत्रों आता है। ये हैं—पश्चिमी साइबेरिया तेल क्षेत्र, यूराल-वोल्गा क्षेत्र एवं [illegible] तेल क्षेत्र। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य क्षेत्र हैं जिनमें एम्बा तथा नेबित [illegible] आदि उल्लेखनीय है।

पश्चिमी साइबेरियन तेल क्षेत्र :

ओब नदी की निचली घाटी क्षेत्र में विस्तृत पश्चिमी साइबेरिया में स्थित यह तेल क्षेत्र इस समय सोवियत संघ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र है जो देश का 50% तेल उपलब्ध कराता है। ट्यूमेन कॉम्प्लैक्स के नाम से जाने जाने वाले इस क्षेत्र का वास्तविक विकास पिछले दशक (1970-80) में ही हुआ है यद्यपि सर्वेक्षण का कार्य उससे पूर्व में हो हो चुका था। इस तेल क्षेत्र के मिलने से साइबेरिया के विकास में गति आ गयी है। यहाँ तेल-शोधक कारखाने भी स्थापित किये गये हैं।

यूराल-वोल्गा क्षेत्र :

यह सोवियत संघ का दूसरे नम्बर का महत्वपूर्ण क्षेत्र है जहाँ से देश का लगभग 40% उत्पादन (246 मि० टन) उपलब्ध होता है। द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व ही 1937 में इस क्षेत्र के तेल का पता लग गया था परन्तु वास्तविक विकास युद्धोत्तर वर्षों में ही हुआ। इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1940 में इस क्षेत्र का उत्पादन केवल 2 मिलियन टन था जो सातवें दशक में 180 मिलियन टन और आठवें दशक में 240 मि० टन हो गया।

इस तेल क्षेत्र का विस्तार लगभग 2 लाख वर्ग मील में है। यह उत्तर में कामा नदी से लेकर दक्षिण में वोल्गा मोड़ एवं पूर्व में यूराल के चरण प्रदेशों से लेकर पश्चिम में वोल्गा तक फैला है। आधे से ज्यादा तेल डैवोनियन तथा कार्बोनीफैरस युगीन चट्टानों से प्राप्त होता है। सबसे महत्वपूर्ण कुएँ चार क्षेत्रों में विद्यमान हैं। ये हैं—समरस्का ल्युका (कुबिशेव) टिमैजी (बश्कीरिया) इशीम्बाएव (बश्कीरिया) तथा पर्म क्षेत्र। सारा टोव प्रदेश के ट्रांस-वोल्गा क्षेत्र, ऊेलाला झील क्षेत्र एवं ओरेनबर्गस्की में भी नये तेल क्षेत्र प्राप्त हुए हैं। यूराल-वोल्गा क्षेत्र का तेल काकेशस तेल की तुलना में कुछ घटिया किस्म का है जिसमें गन्धक की मात्रा ज्यादा है। यहाँ का अधिकांश तेल गोर्की, कजान, कुबिशेव, साराटोव, यारोस्लाल, ऊफा, ओर्स्क, सालावाद तथा इशीम्बाएव के तेलशोधक कारखानों में साफ किया जाता है।

काकेशियन तेल क्षेत्र :

अजरबेजान में तेल का इतिहास पुराना है। यहाँ बाकू क्षेत्र में पिछली शताब्दी के अन्त से ही तेल की खुदाई हो रही है। 1940 तक यह देश का अग्रणी तेल क्षेत्र था। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से इसका महत्व घटने लगा। वर्तमान में इसका प्रतिशत हिस्सा केवल 6·8 है। बाकू के अतिरिक्त इस सम्भाग में ग्रोजनी एवं मैकोप में भी तेल उपलब्ध है। तीनों मिलकर देश का लगभग दशमांश तेल उत्पादित करते हैं।

सोवियत संघ
तेल क्षेत्र
पश्चिमी यूक्रेन
वोल्गा-यूराल
सखालिन
मैकोप
ग्रोजनी
एम्बा
मैंगीशलक
जार्जिया
दागेस्तान
बाकू
नैबितदाग
फरगाना
उत्पादक तेल क्षेत्र
अन्य तेल क्षेत्र

चित्र-12

एम्बा तेल क्षेत्र :

कैस्पियन सागर के उत्तरी-पूर्वी तट प्रदेश में एम्बा तेल क्षेत्र अपने उत्पादन की श्रेष्ठता के लिए उल्लेखनीय है। उत्पादन नगण्य (लगभग 1%) है। यहां का तेल ओर्स्क रिफाइनरी में साफ किया जाता है।

नेवितदाघ तेल क्षेत्र :

कैस्पियन सागर के दक्षिण-पूर्व में तुर्कमान गणराज्य के नेबितदाघ एवं चैलेकेन क्षेत्रों से भी तेल उपलब्ध है। उत्पादन मात्रा की दृष्टि से तुर्कमान गणराज्य देश में तीसरे स्थान पर है।

अन्य तेल क्षेत्र :

यूक्रेन का अधिकांश तेल 1945 में प्राप्त किये गये पोलिश क्षेत्रों, जो पश्चिमी सीमा पर स्थित हैं, से आता है। सुरक्षित मात्रा इस गणराज्य के अन्य भागों में भी है। इनके अतिरिक्त उजबेकिस्तान (फरगना की घाटी) किरगिज एवं ताजिक गणराज्यों, यूरोपियन रूस के उत्तर में स्थित कोमी-उकथा क्षेत्र तथा सखालिन से भी तेल उपलब्ध है। फरगना की घाटी में 21 जगह तेल के कुएँ हैं। फ्रुन्ज एवं तर्मेज के निकट भी तेल के कुएँ विकसित किये गये है। पश्चिमी कजाकस्तान में मैंगिश्लाक प्रायः द्वीप में भी नये तेल-क्षेत्र प्राप्त हुए हैं।

प्राकृतिक गैस :

रूस में प्राकृतिक गैस का उत्पादन और भी ज्यादा तीव्र गति से बढ़ा है। पिछले केवल 30 वर्षों में ही उत्पादन लगभग 75 गुना हो गया है। 1950 में कुल उत्पादन 6,000 मिलियन घन मीटर था जो बढ़कर 1982 में 4,67,000 मिलियन घन मीटर हो गया। यह वृद्धि भी पिछले दशकों (1960-80) में ही ज्यादा हुई है। 1960 में उत्पादन 45,000 मि० घ० मीटर तक पहुँच सका था। प्राकृतिक गैस का अधिकांश भाग दशावा तथा शैबेलिन्का (यूक्रेन) स्टाव्रोपोल (उत्तरी कॉकेशस) गजली (उजबेकिस्तान) कारादाघ (बाकू के निकट) भ्वोल (पेचौरा नदी की घाटी) बेरेजोवो (ओब की निचली घाटी) तथा यूराल-वोल्गा तेल क्षेत्र से प्राप्त होता है। पश्चिमी साइबेरिया के निचले प्रदेशों में भी प्राकृतिक गैस का विशाल भण्डार खोजा गया है।[27]

पिछले 20 वर्षों में बढ़ते हुए तेल एवं प्राकृतिक गैस के उत्पादन ने यह आवश्यक कर दिया है कि देश में पाइप लाइनों का विस्तृत जाल हो ताकि उत्पादन

27. Hodgkins, Jordan A. Soviet Power—Energy, Resources, Production a d Potentials, P. 139

क्षेत्रों से उपभोक्ता क्षेत्रों को शक्ति के ये महत्वपूर्ण साधन भेजे जा सकें। सोवियत संघ जैसे विशाल देश में यह और भी ज्यादा आवश्यक है क्योंकि यहां के उत्पादक क्षेत्र घने बसे या औद्योगिक क्षेत्रों से बहुत दूर हैं। इस दृष्टि से यूराल-वोल्गा तेल-गैस क्षेत्र से बिछाई गई पाइप लाइन ज्यादा उल्लेखनीय है, यहां से साइबेरिया तथा यूरोपियन मैदान दोनों ओर की लाइनें बिछाई गई हैं। साइबेरिया में इर्कुटस्क तक पैट्रोल प्रवाहिनी पाइप लाइन बनाई जा चुकी है। उसके पूर्व में प्रशांत तट तक जापान के सहयोग से बनाने की योजना है। रूस के लिए पाइप लाइनें बिछाना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि यहां से तेल अब निर्यात किया जायेगा। इस दृष्टि से 'फ्रेंडशिप' नामक वह पाइप लाइन महत्वपूर्ण है जो कि पश्चिम में पोलैण्ड, पूर्वी जर्मनी, हंगरी, चैकोस्लोवाकिया आदि को जोड़ते हुए बिछाई गई है। यहां तक कि पश्चिमी जर्मनी को भी रूस से तेल निर्यात किया जाएगा। इसके अलावा उत्पादक क्षेत्रों से तेल शोधक कारखानों को अनेक पाइप लाइनें बिछाई गई हैं। 1981 के अन्त तक 70,800 कि. मी. लम्बी तेल की लाइनें बिछाई जा चुकी थी। प्राकृतिक गैस भी न केवल देश के बड़े नगरों और औद्योगिक केन्द्रों को सप्लाई की जाती है वरन् पूर्वी यूरोपियन देशों को भी शीघ्र ही निर्यात की जावेगी। एड्रियाटिक तट पर स्थित ट्रीस्टे नगर तक एक लम्बी पाइप लाइन बिछाई जा रही है। देश के भीतर 1982 के अन्त तक लगभग 1,30,000 कि. मी. लम्बी गैस की पाइप लाइनें बिछा दी गई थीं।

प्राकृतिक गैस के समुचित उपयोग एवं उत्पादन के लिए वांछनीय है कि उत्पादन क्षेत्र एवं खपत क्षेत्र बड़ी-बड़ी पाइप लाइनों द्वारा जुड़े हुए हों। अतः पश्चिमी साइबेरिया एवं यूराल वोल्गा क्षेत्रों को पश्चिम के घने बसे भागों एवं औद्योगिक नगरों से जोड़ा जा रहा है। साथ ही, पूर्वी यूरोप के समाजवादी देशों को भी प्राकृतिक गैस के निर्यात हेतु पाइप लाइनें बिछाई जा रही हैं। 2750 कि. मी. लम्बी एवं 100 मि० घन मीटर प्रति दिन की क्षमता वाली गजली (खीवा के निकट) से मॉस्को तक फैली पाइप लाइन ने अक्टूबर 1967 में ही कार्य प्रारम्भ कर दिया था। इसी लाइन को आगे चैकोस्लोवाकिया तक आगे बढ़ा दिया गया है। वहां से 1000 कि.मी. की एक विस्तार पाइप लाइन और डाल कर ऑस्ट्रिया, इटली तथा जर्मनी तक इस गैस को भेजने की योजना क्रियान्वित की जा रही है।

पश्चिमी साइबेरिया के टयूमैन क्षेत्र से एक 3,000 कि० मी० लम्बी गैस पाइप लाइन मॉस्को तक बिछाई गयी जो 1974 से प्रयोग में आ रही है। इसी क्षेत्र के यूरेन्गोई क्षेत्र के गैस भण्डारों को यूरोपियन रूस के मध्य भागों से जोड़ने के लिए एक अन्य लाइन डाली गयी है। इसी पाइप लाइन को दक्षिण में यूक्रेन क्षेत्र तक बढ़ाने पर इसकी कुल लम्बाई 3,000 कि० मी० होगी। 1980 से इस

पाइप लाइन का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। यूराल क्षेत्र के ओरेनवर्ग प्राकृतिक गैस भण्डारों को 2,750 कि. मी. लम्बी पाइप लाइन द्वारा सोवियत संघ के पश्चिमी सीमान्त क्षेत्रों से जोड़ा गया है। यही पाइप लाइन आगे चैकोस्लोवाकिया, बल्गेरिया तथा हंगरी तक बढ़ा दी जावेगी। वर्तमान (1983) में सोवियत संघ में 1,24,000 कि. मी. से अधिक लम्बी पाइप लाइनों का एक ग्रिड सिस्टम बना दिया गया है ताकि सप्लाई सभी क्षेत्रों में निरन्तर बनी रहे।

दिसम्बर 1981 में पश्चिमी साइबेरिया के यूरेन्गोई प्राकृतिक गैस क्षेत्र को पश्चिमी यूरोपियन क्षेत्रों से जोड़ने वाली 5,000 कि. मी. लम्बी पाइप लाइन का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ। वस्तुतः इन पाइप लाइनों का सर्वाधिक विस्तार कार्य 10वीं पंचवर्षीय योजना में किया गया। जबकि 50,000 कि. मी. से अधिक पाइप लाइनें बिछाई गयीं।

शक्ति के अन्य साधन :

कोयला, तेल एवं प्राकृतिक गैस तीनों मिलकर सोवियत संघ में कुल उत्पादित शक्ति का लगभग 90% भाग प्रस्तुत करते हैं। शेष शक्ति जल विद्युत शक्ति, लकड़ी पीट, शेल-आयल आदि से प्राप्त होती है। पिछले वर्षों में जल-विद्युत शक्ति को छोड़ कर इनका अनुपातिक महत्त्व घटा है जो निम्न सारिणी द्वारा सुस्पष्ट हैं।

विद्युत :

सोवियत आयोजकों ने विद्युत के विकास पर भी पर्याप्त ध्यान दिया है। इसी का परिणाम है कि उत्पादन 2,000 मिलियन कि० वा० घ० (1913) से बढ़ कर 1,367,000 मिलियन कि० वा० घ० 1982 तक हो सका। कुल विद्युत का अधिकांश भाग ताप शक्ति-गृहों से प्राप्त होता है। केवल 20% भाग ही जल विद्युत गृहों से उपलब्ध है। ताप शक्ति-गृहों में मुख्यतः हार्ड कोक प्रयोग में लाया जाता है। केवल उन भागों में जहाँ हार्ड कोक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है जैसे मॉस्को बेसिन या यूराल प्रदेश वहाँ लिगनाइट या पीट से शक्ति गृह चलाये जाते हैं। जैसे-जैसे पाइप लाइनें बिछती जा रही हैं पेट्रोल एवं प्राकृतिक गैस का उपयोग विद्युत शक्ति उत्पादन में अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है।

क्रान्ति के पश्चात समाजवादी व्यवस्था के अन्तर्गत शक्ति के विविध स्रोतों का जिस प्रकार विकास हुआ और उस विकास के फलस्वरूप उनकी परस्पर प्रतिशत मात्रा में अन्तर पड़ा उसके सही मूल्यांकन के लिए क्रान्ति के पूर्व और बाद के कुछ प्रतिनिधि वर्षों (1913, 1940, 1950, 1968) का उत्पादन स्वरूप देखना उपयोगी होगा।

शक्ति पूर्ति 1913–68

मिलियन मैट्रिक टन हार्ड कोक के बेराबर

प्रकोष्ठ में कुल शक्ति का प्रतिशत

	1913	1940	1950	1968
सभी स्रोत	48.4 (100 0)	240.8 (100.0)	318.8 (100.0)	1206.9 (100.0)
कोयला	23.1 (47.7)	140.5 (58.3)	205.7 (64.5)	428.7 (35.5)
तेल	14.7 (30.5)	44.5 (18.5)	54.2 (17.0)	442.1 (36.6)
प्राकृतिक गैस	— —	4.4 (1.9)	7.3 (2.3)	201.2 (16.7)
जल विद्युत शक्ति	0.2 (0.4)	3.1 (1.3)	7.6 (2.4)	80.0 (6.6)
लकड़ी	9.7 (20.0)	34.1 (14.2)	27.9 (8.9)	28.7 (2.4)
पीट	0.7 (1.4)	13.6 (5.6)	14.8 (4.5)	18.6 (1.5)
शेल ऑयल	— —	0.6 (0.2)	1.3 (0.4)	7.6 (0 6)

सोवियत संघ की सम्भावित ज० वि० शक्ति का अधिक भाग साइबेरिया में है परन्तु ज्यादातर ज० वि० गृह यूरोपियन रूस में बनाए गए हैं जिसका कारण सम्भवत: घने बसे क्षेत्रों एवं औद्योगिक केन्द्रों की निकटता है। रूस के अधिकतर जल विद्युत गृह विशाल एवं भारी उत्पादन क्षमता वाले हैं क्योंकि ये प्राय: बड़ी नदियों पर स्थापित किए गए हैं। यथा नीपर, वोल्गा, कामा, इर्टिश, ओब, अंगारा आदि नदियों को विशाल बांधों द्वारा बांध कर विद्युत उत्पादित की जाती है। अंगारा नदी पर 4·5 मि. कि. वा. क्षमता का ब्रात्स्क प्लांट एवं यनीसी पर 6 मि. कि. वा. क्षमता का क्रैस्नोयार्क प्लांट दुनियाँ के विशालतम जल विद्युत केन्द्रों में से है। वोल्गा नदी पर कुविशेव एवं वोल्गा ग्राद क्रमशः 2·1 एवं 2·3 मिलियन कि.वा. क्षमता के शक्ति गृह बनाए गए हैं। 1960 में वोल्गा पर ही क्रेमेनचुग शक्ति गृह (625,000 कि.वा.) बनकर तैयार हुआ। इनके अतिरिक्त पूर्वी साइबेरिया का सयानो-सुसेन्सकाया प्लांट (1,000000 कि.वा.) आमू का नूरेक प्लांट (2.7 मि.कि.वा.) तथा सरदरया का टोक्टोगल प्लांट (1.2 मि.कि.वा) उल्लेखनीय हैं। इनमें अधिकांश वस्तुतः बहु उद्देश्यीय योजनाएँ हैं।

सोवियत संघ में विद्युत उत्पादन किस तीव्र गति से बढ़ा है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1938 में यहाँ के शक्ति गृहों की कुल उत्पादन क्षमता 8.7 मि.कि.वा. थी जो बढ़कर 1981 में 276.7 मि.कि.वा. हो गयी। 1982 में 57 ताप शक्ति गृह ऐसे थे जिनमें से प्रत्येक की उत्पादन क्षमता एक मिलियन कि.वा. से अधिक थी। ये शक्ति गृह देश के 80% विद्युत उत्पादन के लिए उत्तरदायी थे। वस्तुतः परम्परागत छोटे-छोटे शक्ति गृहों को बन्द कर दिया गया है। सभी बड़े नगरों को 'सैंट्रल थर्मल प्लांटस' से जोड़ा गया है। योजनानुसार 1981 तक सभी ताप एवं जल-शक्ति गृहों को जोड़कर एक राष्ट्रीय ग्रिड बना दिया गया है। लगभग 80 मि.कि.वा. की क्षमता वाले यूरोपियन रूसी ग्रिड के अतिरिक्त मध्य साइबेरिया में भी 20 मि कि.वा. की क्षमता का एक ग्रिड बनाया गया है। इस प्रकार सारे देश को एक 'संगठित शक्ति ग्रिड' के अन्तर्गत व्यवस्थित कर दिया गया है जिससे छोटे-बड़े लगभग 900 शक्ति गृह जुड़े हैं। इनका संचालन मॉस्को में स्थित 'केन्द्रीय नियंत्रण कक्ष' से होता है।

विश्व का प्रथम अणुशक्ति गृह 1954 में ओबनिंस्क में बनाया गया। तत्पश्चात बेलोयार्स्क, नोवो-वोरोनेफ, लेनिनग्राद, कुर्स्क, चैम्बोल, शेवचेन्को तथा आर्मीनिया में भी इसी प्रकार के शक्ति गृह व्यापारिक उपयोग हेतु बनाये गये। इनमें से अधिकांश 1 मि.कि.वा. की क्षमता वाले हैं। सोवियत संघ पूर्वी यूरोपियन समाजवादी देशों के विद्युत ग्रिड (मीर) का भी सदस्य है। सातवें दशक से प्रारम्भ हुए इस ग्रिड की क्षमता 58 मि.कि.वा. है।

धातु खनिज

लौह-अयस :

1983 में सोवियत संघ ने 245 मि. टन लौह-अयस उत्पादित किया। इस उत्पादन-मात्रा को तुलना 1913 की मात्रा (9.2 मि. टन) से करने पर ज्ञात होता है कि पिछले 60-65 वर्षों में उत्पादन लगभग 27 गुना हो गया है। कोयले की तरह लौह में भी सं० रा० अमेरिका को पीछे छोड़कर सोवियत संघ वर्तमान में प्रथम स्थान पर है। सोवियत विशेषज्ञों के अनुसार विश्व की 41% सुरक्षित राशि इस देश की भूमि में दबी पड़ी है। इस दावे की सत्यता जानना बड़ा कठिन है क्योंकि कई अन्य स्रोतों के अनुसार सुरक्षित राशि का सबसे बड़ा भाग (29%) भारत में दबा पड़ा है। सोवियत संघ की सुरक्षित राशि का बड़ा भाग कजाकस्तान तथा साइबेरिया में दबा पड़ा है। दक्षिणी साइबेरिया में स्थित कुजनेत्स्क बेसिन का भविष्य भी अच्छा है। कजाकस्तान में उपलब्ध लौह-अयस यूराल, पश्चिमी साइबेरिया तथा कारागांडा के औद्योगिक प्रदेशों की माँग की पूर्ति करेगा।

रूसी क्रांति के पश्चात सोवियत संघ में लौह-अयस की उत्पादन मात्रा में जिस तीव्र गति से वृद्धि हुई है उसका आभास निम्न सारिणी से होता है :—

लौह-अयस उत्पादन 1913-83
(उत्पादन मि० टनों में)

1913	1950	1960	1970	1980	1983
9·2	39·7	106·2	197·3	244·7	245

वर्तमान उत्पादन की दृष्टि से यूक्रेन, यूराल तथा कुजनेत्स्क बेसिन ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। थोड़ी सी मात्रा मुर्मांस्क के पास भी उपलब्ध है। उत्पादन का लगभग आधा भाग यूरोपियन रूस के लौह-क्षेत्रों से आता है जबकि 35% यूराल एवं 10% कुजनेत्सक बेसिन से प्राप्त होता है। कजाकस्तान की खानें अभी विकासशील अवस्था में हैं। यहाँ का अयस 39% मैग्नेटाइट, 38% हैमेटाइट एवं 15% फैरुगिनयस क्वार्टजाइट किस्म का होता है। विविध प्रदेशों में वितरण इस प्रकार है :—

यूक्रेन प्रदेश :

इस संभाग की महत्वपूर्ण खानें क्रिवोईरोग, कुर्स्क, तूला तथा लिपेटस्क आदि क्षेत्रों में विद्यमान हैं। इनमें प्रथम दो सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। कैर्चपेनिनशुला में भी कुछ वर्षों से लौह की खुदाई होने लगी है। उत्पादन तेजी से बढ़ रहा है।

क्रिवोईरोग में यूक्रेन प्रदेश की लगभग तीन-चौथाई सुरक्षित राशि विद्यमान है जो यहाँ 80 मील लम्बी एवं 3 मील चौड़ी कूटिका में स्थित है। ग्रयस में धातु प्रतिशत 40-50 के बीच रहता है। कहीं-कहीं धातु प्रतिशत 60 तक भी मिलता है। यहाँ लौह खनिज प्रमुखतः प्रीकैम्ब्रियन युगीन परिवर्तित चट्टानों में पाई जाती है।[29] खान खुदाई ग्रोपन एवं शफ्ट दोनों विधियों से की जाती है। मध्य यूरोपियन रूस में स्थित कुर्स्क क्षेत्र में लोह-ग्रयस का पता तो तीसरे दशक के अन्त में ही लग चुका था परन्तु बड़े पैमाने पर खुदाई द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही सम्भव हुई। यहाँ भी खुली विधि से खुदाई की जाती है। खनिज रूसी-प्लेटफार्म से सम्बन्धित पुरानी चट्टानों से प्राप्त है। धातु प्रतिशत अपेक्षाकृत कम (30%) है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण खानें टूला ग्रौर लिपैटस्क के ग्रासपास हैं।

यूरोपियन रूस के इस सबसे बड़े लौह-ग्रयस भण्डार से प्राप्त धातु एवं डोनबास बेसिन से प्राप्त कोयला के ग्राधार पर यूक्रेन प्रदेश में भारी उद्योगों का जन्म हुआ है।

यूराल प्रदेश :

वैसे तो सम्पूर्ण यूराल शृंखला ही धातु खनिजों का भण्डार है परन्तु उत्पादन मात्रा की दृष्टि से मैग्निटनाया गोरा, ब्लैगोडेट, मैग्नीटोगोर्स्क, वाक्सायागोरा एवं लैबियास की पहाड़ियों में स्थित खानें सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। यूराल प्रदेश में लोहे की खुदाई 18वी शताब्दी से ही प्रचलित है। दक्षिणी भाग में मैगनिटनायागोरा के ग्रासपास खुदाई अपेक्षाकृत नई है। यहाँ की ग्रधिकांश खानों वैनेडियम के अंश भी मिलते हैं। दक्षिणी यूराल में स्थित खालीलोवो-ग्रोर्स्क की खानों में लौह के साथ में लोह के साथ अन्य धातुएँ भी प्राप्त है। लैबियास की खानों में लोह के साथ निकिल, कोबाल्ट तथा क्रोमियम भी मिलता है। यूराल के ग्रयस में धातु प्रतिशत 40–50 तक पाया जाता है। पाखोलस्क-ग्रल्गयावस्क की खानों से प्राप्त ग्रयस में धातु प्रतिशत 60 तक होता है। यह यहाँ का सबसे ग्रच्छा ग्रयस माना जाता है। जब से कारागंडा ग्रौर कुजनेत्स्क बेसिन में ग्रच्छा कोकिंग कोल उपलब्ध हुग्रा है यूराल की लोहे की खानों की-उपयोगिता बढ़ गई है।

कुजनेत्स्क बेसिन :

युद्ध-पूर्व दिनों में भी कुजनेत्सक बेसिन की गोरनाया-शोरिया पहाड़ी से थोड़ा सा लौह-ग्रयस उपलब्ध था परन्तु उत्पादन मात्रा में वास्तविक वृद्धि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के दिनों में ही हुई। 1940 में यहाँ की सबसे बड़ी खान टाश्टागोल का पता चला जिसका युद्धोत्तर दिनों में भारी विस्तार हुग्रा। ग्रबाकान क्षेत्र की खानें भी महत्वपूर्ण हैं। कुजनेत्स्क बेसिन की खानों से लोहे के साथ सीसा एवं जस्ता भी उपलब्ध है। लौह-ग्रयस में धातु प्रतिशत 40 तक मिलता है।

29, Mellor, R.E.H.-Geography of the Soviet Union,

कजाखस्तान :

इस प्रदेश की भारी, सोवियत संघ में सर्वाधिक, सुरक्षित राशि इस महा देश के लोह इस्पात उद्योग की भविष्य की आशा है। युद्धोत्तर काल में हुए सर्वेक्षणों से पता चला है कि कुस्तैनाय, काचार, कु`भु`कुल, सोकोलोवोसारये एवं आयत क्षेत्रों में भारी लोहा दबा पड़ा है। कुछ स्थानों पर खुदाई प्रारम्भ की जा चुकी है और वहां अच्छी हैमेटाइट किस्म का अयस प्राप्त हुआ है। अटा-सू की खानों, जहां से टेमीरटाऊ के लोह इस्पात संस्थानों को अयस भेजा जाता है, में धातु प्रतिशत 54-60 तक है। लिज़ाकोव की खानों में फोस्फोरस की मात्रा ज्यादा है अतः इसको उपयोग में लाने के लिए थोमस गिल क्राइस्ट विधि आवश्यक है।

अन्य क्षेत्र :

उपयु`क्त बड़े एवं समूहबद्ध क्षेत्रों के अतिरिक्त बिखरे रूप में कई जगह लोह-अयस प्राप्त है। इनमें कोला तथा करेलिया प्रायद्वीपों की खानें उल्लेखनीय हैं जहां 1950 से ही येना, कोवडोर, ओलेनेगोरस्क तथा एफीकांडा आदि स्थानों पर खुदाई हो रही है। यहां के अयस में धातु प्रतिशत कम (28%) है। लोहे के साथ वेनेडियम तथा टिटेनियम भी निकलता है। ओनेगा झील के पूर्वी किनारे पर पुडोझगोरा एवं मध्य करेलिया में मैंझोगोरा पहाड़ियों से लोहा प्राप्त है। यहां धातु प्रतिशत भी ज्यादा है। मु`र्मास्क प्रायः द्वीप में ओलेनोगोरस्क तथा मैंचोगोरस्क के निकट लोहे की खुदाई होती है।

दक्षिणी साइबेरिया में अंगारा तथा लोअर टु`गुस्का की घाटियों में भी लोहे की खानें मिली हैं। इसी प्रकार चीता नगर के दक्षिण-पूर्व एवं दक्षिणी याकुटिया में लौह मिला है। धुर पूर्व में लिटिल खिगन श्रेणी के उत्तर तथा जेया-सेलेम्झा क्षेत्र में लोहा खोदा जाता है। इसमें धातु प्रतिशत 30.36 तक होता हैं।

अन्य इस्पात मिश्रण की धातुएं :

सोवियत संघ लोह-अयस के साथ-साथ इस्पात मिश्रण की अन्य धातुओं में भी बड़ा धनी है। लगभग सभी मिश्रण की धातुएँ यहां मिलती हैं। यूराल इनका सबसे बड़ा भण्डार है। प्रायः ये धातुएँ प्राचीन भूखण्डों में उपलब्ध हैं।

सोवियत संघ दुनिया में सर्वाधिक मैंगनीज उत्पादित करने वाला देश है। रूसी भूगर्भवेत्ताओं के अनुसार इस देश की भूमि में दुनिया की लगभग (88%) सुरक्षित राशि विद्यमान है। उत्पादन का अधिकांश भाग निकोपोल (यूक्रेन) चियातुरा (ट्रांसकॉकेशिया) उकाली (दक्षिणी यूराल) पौल्यूनोछनोये (उत्तरी यूराल) मार्गेनेटस तथा डोझेंदी (कजाक) की खानों से उपलब्ध है। वार्षिक उत्पादन लगभग 9.5 मिलियन मैट्रिक टन है। क्रांति से पूर्व तक टंगस्टन का उत्पादन केवल चीता के निकट स्थित दो खानों से होता था। सोवियत समय में हुए सर्वेक्षण के फलस्वरूप

बरयात गणराज्य ट्रांस बेकालया तथा मध्य एशिया के अल्टाई क्षेत्रों में नई खानें प्राप्त हुई हैं। मॉलविडीनम का अधिकांश उत्पादन टायरनी-ग्रोज एवं धुर पूर्व में स्थित उमालटिस्की की खानों से प्राप्त होता है। टायरनी ग्रोज में देश की तीन-चौथाई सुरक्षित राशि बताई जाती है। गोर्डोक तथा कुजनेत्स्क यालाटाऊ में भी कुछ संभावित राशि बताई जाती है।

क्रोमियम की अधिकांश मात्रा यूराल प्रदेश एवं यूराल कजाकस्तान सीमा पर स्थित खोम-टाऊ-खालीलोवो तथा कैम्फायर्स क्षेत्र की खानों से प्राप्त होती है। ये दुनिया की सबसे बड़ी क्रोमियम की खानें हैं। युद्ध-पूर्व समयों में कोबाल्ट केवल कॉकेशस प्रदेश की खानों से ही प्राप्त था परन्तु युद्धोत्तर कालीन सर्वेक्षणों के फल-स्वरूप कई नई खानें प्राप्त हुई हैं जिनमें खालीलोवो तथा बर्लेन (यूराल) नौरिलस्क (प. साइबेरिया) एवं कोला प्रायः द्वीप की खानें उल्लेखनीय हैं। इनसे देश का तीन चौथाई उत्पादन उपलब्ध है। निकिल की सर्वाधिक मात्रा ग्रोस्क-खालीलोवो क्षेत्र की खानों से प्राप्त होती है परन्तु सुरक्षित राशि सबसे ज्यादा कोला पेनिनशुला के मौन्चेगोरस्क एवं पेचेन्गा क्षेत्र में बताई जाती है।

टिटेनियम की खानें कूसा (यूराल) तथा पुडोझगोरा (करेलिया) में स्थित हैं। वैनेडियम की अधिकांश मात्रा कर्च प्रायः द्वीप तथा कजाकस्तान से प्राप्त होती है। कजाकस्तान के काराटाऊ क्षेत्र में वैनेडियम की पर्याप्त सुरक्षित मात्रा समझी जाती है।

ताँबा :

क्रांति से पूर्व तांबा नगण्य मात्रा में यूराल प्रदेश में उपलब्ध था। सोवियत समय में हुए विस्तृत सर्वेक्षणों के फलस्वरूप साइबेरिया, कजाकस्तान तथा मध्य एशिया में तांबे के नए भण्डार मिले हैं। इन भण्डारों के पूर्ण शोषण होने के बाद सम्भवतः रूस तांबे में स्वावलम्बी हो जाएगा। कजाकस्तान के सुरक्षित भण्डारों के बारे में क ा जाता है कि दुनिया में दूसरे नम्बर के समृद्ध भण्डार हैं। कजाक उच्च प्रदेश की कूडरेडिस्की, लेनिनोगोस्क तथा डोभैजकजगान खानों में द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व उत्पादन प्रारम्भ हुआ था। शीघ्र ही ये क्षेत्र रूस के सर्वाधिक तांबा उत्पादक क्षेत्र हो गए। अन्य क्षेत्रों में कारावाश तथा वेमाक (यूराल) टेमीर पेनिन शुला तथा आलमभाता (मध्य एशिया) उल्लेखनीय हैं। सोवियत संघ विश्व का तीसरा सर्वाधिक तांबा उत्पादक देश है।

बॉक्साइट :

बॉक्साइट के प्रधान स्रोत कोला प्रायः द्वीप, बोक्सीतोगोर्स्क (लेनिनग्राद के दक्षिण-पूर्व में) सेरोव तथा कामेंस्क-यूरालिस्की (यूराल) किरोवाबाद (अजरबैजान) तथा एमान्गेल्डी (कजाकिस्तान) आदि हैं। क्रांति से पूर्व बॉक्साइट का उत्पादन ना

के बराबर था। पंचवर्षीय योजनाओं में विस्तृत सर्वेक्षण के फलस्वरूप उक्त क्षेत्र प्राप्त हुए हैं। सर्वप्रथम 1932 में टिखविन बोक्सीटोगोर्स्क क्षेत्र में बॉक्साइट की खुदाई प्रारम्भ हुई। यूराल तथा कजाकस्तान की खानें बाद में प्रारम्भ की गई। इनकी धातु को गलाकर अल्युमिनियम बनाने के लिए पावलोदार में एक विशाल कारखाना स्थापित किया गया। पिछले दो दशकों में भी कुछ नए बॉक्साइट क्षेत्र खोजे गए हैं। इनमें मंगारक (कोला प्रायःद्वीप) याज्नो-यनीसेयस्की तथा जागलिक (कॉकेशिया) एवं पोलेविस्कोय (यूराल) उल्लेखनीय हैं। वार्षिक उत्पादन लगभग 6.5 मिलियन मैट्रिक टन है।

टिन :

क्रांति से पूर्व रूस में टिन प्राप्त नहीं थी। टिन-उत्पादन इस देश में 1933 में प्रारम्भ हुआ जबकि ट्रांस बैकालया की खोलोवयामाया, शेलोवाया तथा खार-चेरांगा की खानों से खुदाई होने लगी। 1938-41 की अवधि में सर्वेक्षण से प्राप्त उत्तर-पूर्वी साइबेरिया में स्थित खानों में उत्पादन प्रारम्भ होने से कुल उत्पादन मात्रा एक दम बढ़ गई। इस प्रदेश की प्रधान खानें देगेलाया, यांका रेम, एन्डोवालस्क तथा इम्टोटंका में स्थित हैं। यहीं टिन गलाने के प्लांटस भी स्थापित किए गए हैं। पूर्वी कजाकस्तान तथा धुर पूर्व में सिखोटे एलीन शृंखला में भी खानें खोदी गई हैं। सिगन पर्वत क्रम में मिकोयान नामक स्थान पर भी टिन उपलब्ध है। पोडोलस्क एवं नोवोनविस्कं में टिन-शोधक प्लांटस लगाए गए हैं।

सीसा एवं जस्ता :

द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व एचीसे तथा कोलिवान की खानें ही अधिकांश सीसा-जस्ता प्रस्तुत करती थीं परन्तु वर्तमान में तीन-चौथाई से अधिक मात्रा लेनिनगोर्स्क क्षेत्र से प्राप्त होती है। मध्य एशिया के कैन-टाक, कॉकेशिया के सादोन एवं कजाकस्तान के तेकेली नामक स्थानों पर भी नयी खानें प्राप्त हुई हैं। इनके अतिरिक्त पूर्व में सिखोटे-एलीन शृंखला का टेटयूखे क्षेत्र भी थोड़ी मात्रा में सीसा-जस्ता प्रस्तुत करता है। चिमकेंट एवं लेनिनगोर्स्क में इन धातुओं को शोधने के लिए विशाल प्लांटस लगाए गए हैं। वार्षिक उत्पादन दोनों धातुओं का लगभग 4.5 लाख टन (प्रत्येक का) है।

इसके अतिरिक्त एन्टीमनी (कोला प्रायः द्वीप) जिर्कोनियम (कोला प्रायःद्वीप, एजव तट प्रदेश) प्लेटीनम (यूराल, नोरिलिस्क, विलीयुय घाटी) सोना (पूर्वी साइबेरिया का अल्लाख-युन क्षेत्र, कजाकस्तान का स्टेपन्याक क्षेत्र, यूराल का डोभेतयाग्रा क्षेत्र) बेरीलियम, एमरेल्ड तथा चांदी भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। सोवियत संघ 11 महत्वपूर्ण खनिजों (एस्बेस्टस, बॉक्साइट, क्रोम, तांबा, सोना,

लोहा, सीसा, मैंगनीज, मॉलविडीनम, निकिल, टंगस्टन) के उत्पादन में विश्व में प्रथम, द्वितीय या तृतीय स्थान पर है।[30]

अधातु खनिज :

अधातु खनिजों की दृष्टि से भी सोवियत संघ काफी भाग्यवान है। यहाँ गंधक, नमक, फौस्फेट, पोटाश, एपीटाइट, केनाइट, बैराइट, मैग्नेजाईट, डोलोमाइट, जिप्सम, एस्बेस्टस, काओलियन, मायका तथा वर्मीकुलाइट के पर्याप्त भण्डार हैं जिनके आधार पर रूस का रसायन उद्योग विकसित हो रहा है। रूसी विशेषज्ञों के अनुसार सोवियत भूमि में विश्व का 54% पोटेशियम नमक तथा 33% फौस्फेट विद्यमान है। गंधक शुद्ध रूप में कुबिशेव (वोल्गा) तथा गौर्डक एवं सोरस (मध्य एशिया) क्षेत्रों से उपलब्ध है। फौस्फेट तथा ऐपीटाइट मध्य यूरोपियन रूस के येगोरयेवस्क, फौस्कोरिटनी; किनेश्मा तथा ब्यांस्क यूक्रेन के खेमेलिनिस्की तथा आइजयम एवं कजाकस्तान के एक्टोबिस्क आदि क्षेत्रों में प्राप्त हैं। पोटाश का प्रधान एवं एकमात्र क्षेत्र सोलिकामस्क है, जहाँ पोटाश की मोटी पर्तें विस्तृत भागों में फैली हैं। चट्टानी नमक सोलिकामस्क, आर्टेमोव्स्क, सोलाई लैलस्क, फरगना तथा नालिचैवान क्षेत्रों में खोदा जाता है।

अणु खनिज :

यूरेनियम की खानें दक्षिणी आर्मीनिया, कोल्मा नदी के किनारे, बैकाल झील के पास स्लायुदियान्का एवं ताशकंद के दक्षिण-पूर्व में आबोशार नामक क्षेत्रों में स्थित हैं।

□□□

30. Dewdney, John. C-A Geography of the Soviet Union p. 109.

सोवियत संघ : औद्योगिक विकास
(Industrial Development)

क्रान्त्योत्तर अवधि में सोवियत रूस के औद्योगिक ढांचे में अभूतपूर्व परिवर्तन एवं विस्तार हुआ। आज उद्योगों में देश की लगभग 40% जनसंख्या संलग्न है। 1913 में यह प्रतिशत 20 से कम था। परन्तु इन आंकड़ों से विस्तार का सही स्वरूप परिलक्षित नहीं होता। क्योंकि इस अवधि (1913–80) में उद्योगरत जनसंख्या लगभग सात गुनी हो गई है जबकि कुल जनसंख्या में वृद्धि केवल 70 प्रतिशत हुई है। आज सोवियत संघ में विविध उद्योग विकसित हैं। औद्योगिक विकास विशेषकर उत्पादनों की दृष्टि से यह देश संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद दुनिया में दूसरे स्थान पर है। कई क्षेत्रों में तो उसने अमेरिका को भी पीछे छोड़ दिया है। सोवियत औद्योगिक ढांचे को सही रूप से समझने के लिए केवल शक्ति ससाधनों, खनिज पदार्थों या कृषिगत कच्चे मालों का वितरण जानना ही पर्याप्त नहीं है। इसके विकास और वितरण की जटिलताओं को समझने के लिए ऐतिहासिक एवं राजनैतिक पृष्ठभूमि का भी थोड़ा-सा ज्ञान आवश्यक है।

रूस के आधुनिक उद्योगों का श्रीगणेश 1632 में हुआ जबकि डच लोगों ने मॉस्को-टूला क्षेत्र मे (सोल्वीचेगोडस्क) लोहे का प्रथम कारखाना खोला। 18वीं शताब्दी में पीटर महान् ने अनेक विदेशी कारीगरों को बुलाकर उद्योगों के विकास का भारी प्रयत्न किया। 1695 में मॉस्को प्रदेश में लोहे के 16 कारखाने थे जबकि यूराल में एक भी नहीं था। 1725 में देश में 52 लोह से सम्बन्धित इकाइयां थी जिनमें से 13 यूराल प्रदेश में थी। स्पष्ट है कि 18वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों (पीटर का समय) में उद्योगों की ओर विशेष ध्यान दिया गया। इस समय यूरोपियन रूस के मध्य भाग में कुछ हल्के उद्योग भी पनपे जिनमें वस्त्र (रेशमी, सूती) तथा चायना ग्लास उल्लेखनीय है। प्रथम सूती मिल ईवानोवो में स्थापित की गई। बाद में मॉस्को तथा लेनिनग्राद के आस-पास यह उद्योग विकसित हो गया। कपास पूर्णतया आयातित थी। 1850 में देश में सब प्रकार की फैक्ट्रीज 536 थी जिनमें 110,000 व्यक्ति संलग्न थे।

1870 में रूस में विदेशी पूंजी का आगमन हुआ। ब्रिटेन एवं स्वीडन प्रबल प्रतिद्वन्दियों के रूप में आगे बढ़े, जिसका परिणाम यह हुआ कि अगले तीन-चार दशकों में डोनेत्ज बेसिन, मॉस्को बेसिन, लेनिनग्राद क्षेत्र, बाल्टिक तट प्रदेश एवं यूराल प्रदेश में विविध उद्योगों का विकास हुआ। मॉस्को बेसिन देश का तीन-चौथाई वस्त्र प्रस्तुत कर रहा था तो डोनबास बेसिन लगभग इतना ही इस्पात। बाकू में तेल उद्योग पनप रहा था। परन्तु यह सारा विकास यूरोपियन रूस में था। 95 प्रतिशत उद्योग मॉस्को, डोनबास, यूराल, लेनिनग्राद तथा बाकू प्रदेश में थे।

प्रथम विश्व युद्ध और क्रान्ति से ध्वस्त रूस जब साम्यवादी प्रशासन में आया तो यह लक्ष्य बनाये गये कि क्षतिग्रस्त औद्योगिक संस्थानों के पुनः संगठन तथा नये औद्योगिक संस्थानों की स्थापना के साथ-साथ देश के विस्तृत पूर्वी भागों में प्राकृतिक संसाधनों की खोज के लिए भी सर्वेक्षण किया जाये। नये उद्योगों की स्थापना में इस बात का भी ध्यान रखा गया कि प्रादेशिक समानता की दृष्टि से उन्हें पूर्व के क्षेत्रों में विकसित किया जाए। अगले 2–3 दशकों में मध्य एशिया, कॉकेशिया तथा साइबेरिया में किये गये सर्वेक्षणों के फलस्वरूप विविध शक्ति-साधनों एवं खनिज पदार्थों का पता चला। इनके आधार पर कुजबास बेसिन, कारागांडा, धुर पूर्व, मध्य एशिया में अनेक उद्योग स्थापित किए गए। कुजनेस्क के कोयला क्षेत्रों को यूराल के लोह-क्षेत्रों से जोड़ कर (यूराल-कुजनेस्क कम्बाइन द्वारा) दोनों जगह इस्पात उद्योग को प्रोत्साहित किया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान इस 'पूर्व की ओर विस्तार' प्रवृत्ति को और भी बल मिला। इन पांच वर्षों में लगभग 1,300 छोटे-मोटे कारखाने पूर्व की ओर स्थानान्तरित किये गये।

इस प्रकार पिछले 30–40 वर्षों में पूर्वी भागों में आश्चर्यजनक औद्योगिक विकास हुआ। इर्कुटस्क, अमूर-उसूरी, कारागांडा तथा कुजबास क्षेत्र, पश्चिमी साइबेरिया के ओमस्क, नोवोसिबिर्स्क, नोवोकुजनेस्क, मध्य एशिया के ताशकन्द, दुशांबे, समरकन्द आलम आता तथा ट्रांस कॉकेशिया के रुस्तावी, येरेवान, तिबिलिसी एवं नोवोरसियस्क आदि नगर औद्योगिक केन्द्रों के रूप में प्रतिष्ठित हुए। यूराल के दक्षिण में मैग्नीटोगोर्स्क-ओर्क खालीलोवो तथा वोल्गा-यूराल प्रदेश में अनेक नगरों में नए कारखाने (यूराल प्रदेश में इस्पात तथा यूराल-वोल्गा में तेल-शोधक) स्थापित हुए। सप्तवर्षीय योजना (1951–65) में यूराल एवं उसके पूर्वी औद्योगिक प्रदेश ने उत्पादन लक्ष्यों के अनुसार देश का 43 प्रतिशत पिग-आयरन, 47 प्रतिशत इस्पात, 50 प्रतिशत कोयला, 46 प्रतिशत विद्युत, 85 प्रतिशत तांबा, 71 प्रतिशत अल्युमिनियम एवं 45 प्रतिशत लकड़ी उत्पादित की।

औद्योगिक ढांचे का वर्तमान स्वरूप पृथक्-पृथक् उद्योग समूहों के विवरण से स्पष्ट होगा।

लोह एवं इस्पात उद्योग :

सोवियत संघ के आर्थिक आयोजकों ने देश के औद्योगिक विकास की रूप-रेखा में इस आधारभूत उद्योग पर विशेष ध्यान दिया। इसी का परिणाम है 1913–1981 की अवधि में यहाँ का पिग आयरन-उत्पादन 25 गुना इस्पात पिण्डों का उत्पादन 37 गुना तथा ढ़ाले हुए इस्पात का उत्पादन लगभग 29 गुना हो गया। 1913 में पिग आयरन, इस्पात एवं ढ़ाले हुए इस्पात का उत्पादन क्रमशः 4·2, 4·3 एवं 3·5 मिलियन टन था जो बढ़कर 1981 में क्रमशः 107, 148 एवं 118 मिलियन टन हो गया। 1968 में यहाँ के इस्पात संस्थानों ने 78·8 मिलियन टन पिग-आयरन, 107·0 मिलियन टन इस्पात पिण्ड एवं 85·3 मिलियन टन ढ़ाला हुआ इस्पात तैयार किया। यह मात्रा उत्पादित कर सोवियत संघ संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद विश्व में सर्वाधिक इस्पात तैयार करने वाला देश है।

बाद के वर्षों, प्रमुखतः आठवें दशक में सोवियत संघ ने संयुक्त राज्य अमेरिका को इस्पात उत्पादन में पीछे छोड़ दिया। वस्तुतः सोवियत संघ का उत्पादन तीव्रता से बढ़ा जबकि स० रा० अमेरिका का उत्पादन घटा। क्रान्ति के बाद जिस गति से इस्पात का उत्पादन सोवियत संघ में बढ़ा है वह निम्न सारिणी द्वारा सुस्पष्ट है।

सोवियत संघ में इस्पात उत्पादन 1913-81

वर्ष	पिग-आयरन	इस्पात पिण्ड	ढ़ाला हुआ इस्पात
1913	4·2	4·2	3.5
1932	6·2	5·9	4·4
1940	14·9	18·3	13·1
1950	19·2	27·3	20·9
1960	46·8	65·3	50·9
1970	85·9	115·9	80·6
1981	107·8	148·4	118·2

रूसी सोवियत समाजवादी संघीय गणराज्य (R.S.F.S.R.) एवं यूक्रेन दोनों मिलकर देश का लगभग 96 प्रतिशत पिग-आयरन एवं इस्पात तैयार करते है। रूसी गणराज्य के इस्पात केन्द्र मॉस्को बेसिन, यूराल, कुजबास बेसिन, पिचोरा

बेसिन व अन्य कई बिखरे क्षेत्रों में स्थित हैं। अगर अलग-अलग गणराज्यों के उत्पादन की दृष्टि से देखा जाये तो इस गणराज्य का उत्पादन सर्वाधिक बैठता है। परन्तु प्रादेशिक दृष्टि से यूक्रेन के इस्पात क्षेत्र इस्पात उत्पादन की दृष्टि से देश में प्रथम हैं। कारण कि यूक्रेन गणराज्य के इस्पात उद्योग का केन्द्रीयकरण एक ही प्रदेश (डोनबास कोयला क्षेत्र तथा क्रिवोई रोग लौह क्षेत्र को शामिल करता हुआ) में है। पिछले दिनों में कुछ इस्पात केन्द्र मध्य एशिया, कॉकेशिया में भी स्थापित किए गए हैं। साइबेरिया के कुजनेस्क बेसिन, सुदूर पूर्व के क्षेत्र तथा कजाकस्तान का कारागांडा क्षेत्र भी तेजी से विकास कर रहे हैं। परन्तु इसके बावजूद भी इस उद्योग पर आधिपत्य अभी भी पुराने इस्पात केन्द्रों का ही है। यूक्रेन, मॉस्को एवं यूराल प्रदेश तीनों मिलकर देश का लगभग तीन-चौथाई-पिग-आयरन एवं इस्पात प्रस्तुत करते हैं। 1968 में कुल उत्पादन का 38 प्रतिशत पिग आयरन एवं 40 प्रतिशत इस्पात पूर्वी क्षेत्रों (पूर्वी यूराल पश्चिमी साइबेरिया, सुदूर पूर्व तथा मध्य एशिया) से प्राप्त हुआ। इससे स्पष्ट है, कि केन्द्रीयकरण के बावजूद लौह-इस्पात उद्योग भारी केन्द्रीयकरण यूरोपियन रूस के यूक्रेन, मॉस्को, लैनिनग्राद, करेलिया, कोला तथा पिचोरा बेसिन में है।

रूस के प्रमुख इस्पात उत्पादक क्षेत्र: रूसी सो० स० स० गणराज्य, यूक्रेन, कजाखस्तान तथा जार्जिया आदि राज्यों में विद्यमान हैं। क्रान्ति से पूर्व एवं बाद के वर्षों में इस्पात उत्पादन में इनका हिस्सा प्रतिशत किस प्रकार से घटा-बढ़ा है यह कुछ प्रतिनिधि वर्षों (1913, 40, 50, 68) के उत्पादन देखने से स्पष्ट है।

क्षेत्रीय दृष्टि से सोवियत संघ के इस्पात केन्द्रों को निम्न क्षेत्रों में समूहबद्ध किया जा सकता है।

1. यूक्रेन प्रदेश (डोनेत्ज बेसिन)
2. मॉस्को क्षेत्र
3. यूराल प्रदेश
4. कुजनेस्क बेसिन
5. कजाकस्तान के इस्पात केन्द्र
6. सुदूर पूर्व के इस्पात केन्द्र
7. अन्य बिखरे केन्द्र।

विविध गणराज्यों में पिग-आयरन उत्पादन

उत्पादन मिलियन मैट्रिक टनों में (प्रकोष्ठ में कुल का प्रतिशत)

	1913		1940		1950		1968	
सोवियत संघ	4·2	(100·0)	14·9	(100·0)	19·2	(100·0)	78·8	(100·0)
रूसी सो. सं. सं. गणराज्य	1·3	(31·0)	5·3	(35·6)	10·0	(52·1)	37·6	(47·5)
यूक्रेन	2·9	(69·0)	9·6	(64·4)	9·2	(47·9)	38·6	(49·0)
कजाकस्तान	—	(—)	—	(—)	—	(—)	1·7	(2·3)
जार्जिया	—	(—)	—	(—)	—	(—)	0·9	(1·2)

विविध गणराज्यों में इस्पात-उत्पादन

उत्पादन मिलियन मैट्रिक टनों में (प्रकोष्ठ में कुल का प्रतिशत)

	1913		1940		1950		1968	
सोवियत संघ	4·3	(100·0)	18·5	(100·0)	27·9	(100·0)	106·9	(100·0)
रूसी सो. सं. सं. गणराज्य	1·8	(41·9)	9·3	(50·3)	18·5	(66·3)	57·6	(53·4)
यूक्रेन	2·4	(55·8)	8·9	(48·1)	8·4	(30·0)	44·3	(41·4)
जार्जिया	—	(—)	0·2	(1·1)	0·8	(2·9)	1·4	(1·3)
कजाकस्तान	—	(—)	—	(—)	0·1	(0·3)	1·4	(1·3)
अजरबेजान	—	(—)	न		न		0·8	(0·7)
उजबेकिस्तान	—	(—)	0·1	(0·5)	0·1	(0·3)	0·4	(0·4)
लैटविया	0·1	(2·3)	न		न		0·5	(0·5)

न = नगण्य

यूक्रेन प्रदेश :

जैसाकि उपर्युक्त सारणियों से स्पष्ट है कि 1913 में यूक्रेन रूस का दो-तिहाई पिग आयरन एवं आधे से अधिक इस्पात प्रस्तुत करता था। अन्य इस्पात केन्द्रों के विकास के कारण यद्यपि इसका प्रतिशत हिस्सा कम हो गया है परन्तु क्षेत्रीय दृष्टि से आज भी यह देश का सबसे महत्वपूर्ण इस्पात-उत्पादन इकाई प्रस्तुत करता है जहां लगभग 5) प्रतिशत पिग आयरन एवं 20 प्रतिशत इस्पात आज भी उत्पादित होता है। उल्लेखनीय है कि 1913 की तुलना में इस्पात उत्पादन यहां लगभग 16 गुना अधिक होता है। यहां से पिग आयरन व इस्पात देश के विविध क्षेत्रों को विभिन्न मशीन एवं इंजीनियरिंग उद्योगों में प्रयोग करने को भेजा जाता है। यूक्रेन के इस्पात उद्योग के विकास के आधार डौनबास बेसिन में प्राप्त कोयला एवं क्रिवोई रोग क्षेत्र में उपलब्ध लौह-अयस रहे हैं। लाइम स्टोन भी स्थानीय रूप से प्राप्त है। मैंगनीज निकोपोल की खानों से मिल जाता है। काले सागर से होकर समुद्री यातायात की सुविधा उपलब्ध है। इन परिस्थितियों में यूक्रेन की औद्योगिक शृंखला काले सागर उत्तर में डौनबास बेसिन तथा क्रिवोई-रोग के लौह क्षेत्रों के बीच में फैली है।

इस सम्पूर्ण पेटी में लौह इस्पात के कारखाने बिखरे रूप में विद्यमान है। सर्वाधिक केन्द्रीयकरण डौनबास बेसिन में डोनेत्स्क (पहले स्टैलिनो) एवं माकेयेव्का औद्योगिक नगरों में है। ये दोनों मिलकर समस्त डोनेरज बेसिन की लगभग आधी धातु गलाते हैं। माकेयेव्का में विश्व प्रसिद्ध 'किरोव इस्पात का कारखाना स्थित है। यहाँ विशाल स्वचालित प्रभात भट्टियाँ (ब्लास्ट फर्नेस) हैं। 19वीं शताब्दी के मध्य तक डौनबास बेसिन के ये इस्पात केन्द्र स्थानीय धातु का उपयोग करते थे परन्तु, बाद के वर्षों में क्रिवोई रोग-कुर्स्क क्षेत्रों से रेल द्वारा जुड़ जाने के पश्चात समस्त धातु वहां से आयात होने लगी इससे दोहरा प्रभाव हुआ। । डौनबास बेसिन में अन्य इस्पात केन्द्र विकसित हुए तथा यहाँ से ले जाने वाले कोयले के आधार पर क्रिवोई रोग, कुर्स्क तथा नीपर मोड़-क्षेत्र में भी कई भारी उद्योग-संस्थान स्थापित किए गए।

अन्य बड़े इस्पात केन्द्रों में येनाकीयेव (ढाला हुआ इस्पात) कौस्टैंटनोव्का तथा क्रामा टोर्स्क (विद्युत उपकरणों के उपयोग में आने वाला इस्पात) महत्वपूर्ण हैं। कोयला पेटी के पूर्व में खान खुदाई तथा विविध इंजीनियरिंग से सम्बन्धित सामान भी इस्पात के साथ-साथ तैयार किए जाते हैं। इस प्रकार के कारखाने लंगास्क, कौमूनार्स्क तथा आल्पाज नाया आदि नगरों में विद्यमान है। एजव सागर के तट पर स्थित झदनोव तथा एजवस्ताल में भी आधुनिकतम इस्पात के कारखाने स्थापित किए गए हैं।

उधर क्रिवोई रोग क्षेत्र एवं नीपर के मोड़-क्षेत्र में नैप्रोपैट्रोव्स्क, नैप्रोभरझिस्क तथा जापोरोझ्ये में इस्पात के विशाल कारखाने बनाए गए हैं। जहां इस्पात के अतिरिक्त पिग आयरन चद्दरें, पाइप एवं ढाले हुए इस्पात की विविध वस्तुएं तैयार की जाती हैं। क्रीमिया प्रायः द्वीप के कैर्च क्षेत्र में प्राप्त धातु एवं डोनबास से प्राप्त कोयला के आधार पर कैर्च में भी इस्पात के कारखाने विकसित हो गये हैं।

चित्र 16

यूराल प्रदेश :

यह सोवियत संघ का दूसरे नम्बर का धातु-उद्योग क्षेत्र है। इस प्रदेश में लोहे को गलाकर इस्पात बनाने का धन्धा तो 18वीं शताब्दी से ही प्रचलित है। परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी में जब डोनबास बेसिन में कोकिंग कोयला से लोहा बड़ी मात्रा में गलाया जाने लगा तो यहां का उद्योग ह्रासोन्मुख हुआ क्योंकि यहां का प्रधान ईंधन लकड़ी भी मात्र चारकोल था। 1930 के बाद से फिर तेजी से यहां के इस्पात उद्योग ने प्रगति की जिसका प्रधान कारण यूराल-कुजनेत्स्क गठबंधन (1200 मील लम्बी रेल लाइन) का निर्माण था जिससे कुजनेत्स्क बेसिन से यहां सस्ता कोयला आने लगा। ऐसी ही व्यवस्था बाद में कारागांडा के कोयला क्षेत्रों

में हो गई। इधर दक्षिण यूराल में लौह-अयस की नयी खानें मिलीं। इस्पात मिश्रण की अधिकांश धातुएं (मेंगनीज, कोबाल्ट, टंगस्टन, एंटीमनी) यहां स्थानीय रूप से उपलब्ध हैं ही। इन परिस्थितियों में यूराल प्रदेश के लौह इस्पात उद्योग ने बड़ी तेजी से प्रगति की और आज देश का लगभग 40% इस्पात इस प्रदेश के कारखाने प्रस्तुत करते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध में, जब यूक्रेन प्रदेश के औद्योगिक संस्थान बढ़ती हुई जर्मन फौजों से आक्रांत थे, यूराल प्रदेश के इस्पात संस्थानों को देश की सम्पूर्ण आवश्यकता की पूर्ति करनी पड़ी थी। इन वर्षों में यहां की क्षमता का भारी विकास हुआ।

यूराल क्रम के विविध क्षेत्रों में इस्पात उद्योग विकसित है। उत्तरी यूराल में सैरोव, निझनीतागिल तथा अलापेयेव्स्क आदि नगरों के आस-पास विशाल लौह इस्पात के कारखाने हैं। मध्य भाग में स्वर्डलोव्स्क, पोलेस्कोय तथा चेलियाबिंस्क में उच्च श्रेणी का इस्पात तैयार किया जाता है जो मशीन एवं उपकरण बनाने के काम आता है। यूराल शृंखला के दक्षिण में स्थित मैग्नीटोगोर्स्क सोवियत संघ का सबसे बड़ा इस्पात केन्द्र है जिसकी स्थापना केवल 35–40 वर्ष पूर्व हुई थी। इस नगर के इस्पात संस्थान लगभग 10 मिलियन टन इस्पात व इतना ही पिग-आयरन प्रस्तुत करते हैं। मैग्नीटोगोर्स्क के निकट ही ओर्स्क तथा खालीलोवो में भी लौह के कारखाने विकसित हो गए हैं।

यूराल शृंखला के पश्चिम में, मुख्यतः ऊपरी कामा बेसिन में भी कुछ लोहे के कारखाने विकसित हो गये हैं जिनमें चूसोवोय इस्पात केन्द्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण है यहां इस्पात, एंगिल आयरन, प्लेट, नालियां तथा चद्दरें तैयार की जाती है। पश्चिमी यूराल के अन्य केन्द्रों में पर्म, इजहैव्स्क तथा लाइसवा उल्लेखनीय हैं। यहां के कारखाने कोयला किजेल तथा लोहा कूसा की खानों से प्राप्त करते हैं।

मास्को प्रदेश :

मास्को प्रदेश के धातु उद्योग के विकास में कच्चे मालों की अपेक्षा बाजारी मांग, यातायात, व्यापार, बसाव की सघनता तथा प्रशासनिक केन्द्रीकरण आदि तत्वों का ज्यादा सहयोग रहा है। यहां लौह-अयस टूला तथा लिपेटस्क के लौह-क्षेत्रों से मंगाया जाता है। कुर्स्क से भी आयात किया जाता है। कोयला डोनबास बेसिन से मंगाया जाता है। पिग-आयरन एवं इस्पात यूक्रेन प्रदेश से आता है। स्थानीय लिगनाइट से विद्युत तैयार करके विद्युत-भट्टियों का प्रचलन भी प्रारम्भ हुआ है। अधिकतर धातु के कारखाने मास्को एवं गोर्की के निकट स्थित हैं। अन्य धातुयोगिक केन्द्रों में टूला, लिपेटस्क कोमायागोरा तथा बेभिरसा आदि है। इंजीनियरिंग, आटोमोबाइल्स, लोकोमोटिव, वस्त्रोद्योग की मशीनें तथा विविध

प्रकार के यन्त्र निर्माण सम्बन्धी कारखानों का बाहुल्य है। वस्तुतः यहां के अधिकतर धातु उद्योग नागरिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित उत्पादन करने में रत हैं जो यातायात के खर्चे की बचत के कारण मॉस्को प्रदेश की घनी बसी जनसंख्या को सस्ते में पड़ जाते हैं।

कुजनेत्स्क बेसिन :

यूराल-कुजनेत्स्क कम्बाइन से जहां यूराल प्रदेश को कोकिंग कोयले की उपलब्धि हुई, कुजनेस्क बेसिन को यूराल प्रदेश से लोह-प्रयस प्राना सुगम हो गया। फलतः यहां भी इस्पात उद्योग विकसित हुआ। बाद के वर्षों में अल्टाईसयान क्षेत्र में स्थानीय रूप से लोह-प्रयस की प्राप्ति से यहां के धातु उद्योग में और भी ज्यादा प्रगति हुई। नोवोकुजनेत्स्क इस क्षेत्र का सबसे बड़ा इस्पात केन्द्र है जहां इस्पात, छड़ें, चद्दरें एवं पटरियां तैयार की जाती हैं। गुरयेव्स्क में वायुयानों में प्रयोग किए जाने वाला इस्पात तैयार किया जाता है। नोवोसिबिर्स्क में गर्म एवं ठण्डी दोनों प्रकार की ढलाई होती है।

कजाकस्तान के इस्पात केन्द्र :

वर्तमान उत्पादन एवं उद्योग के विस्तार की दृष्टि से तो कजाकस्तान उपर्युक्त उल्लेखित प्रदेशों से बहुत पीछे है लेकिन भविष्य में यहां का धातु उद्योग बहुत विकसित अवस्था में होगा, यह निर्विवाद सत्य है। यहां स्थानीय रूप में प्राप्त कोयला (कारागाडा) एवं लोह-अयस (कुस्तेनाय) इस विस्तार के आधार होंगे। वर्तमान में कजाकस्तान का सबसे बड़ा इस्पात केन्द्र नूरा नदी पर स्थित टेमीर टाऊ है।

सुदूर पूर्व के इस्पात केन्द्र :

पिछले दो दशकों में पूर्वी साइबेरिया के औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुए पूर्व में कुछ इस्पात केन्द्र स्थापित किये गये हैं जिनमें कोमसोमोल्स्क-नाआमूर तथा पेट्रोव्स्क (बेकाल के पूर्व में) के कारखाने उल्लेखनीय हैं। पेट्रोव्स्क में इस्पात संस्थान वस्तुतः इर्कुटस्क प्रदेश में औद्योगिक विकास के लिए स्थापित किया गया है। कोमसोमोल्स्क के इस्पात केन्द्र को लोह-अयस सिखोटे एलिन की श्रेणियों से तथा कोयला ब्लाडीवोस्टक क्षेत्र में स्थित कोयले की खानों से प्राप्त हो जाता है।

अन्य बिखरे इस्पात केन्द्र :

स्थानीय इस्पात सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति एवं धातु-प्रयोगित उद्योगों के विकास की दृष्टि से विविध क्षेत्रों में स्थानीय महत्व के इस्पात केन्द्र स्थापित

किए गए हैं। ट्रांस कॉकेशिया में जार्जिया के कोयला एवं स्थानीय लोहे की खानों से प्राप्त धातु के आधार पर रूस्तावी, जैस्ताफोनी (जार्जिया) तथा समगेट (बाकू के पास) में इस्पात के कारखाने विकसित हुए हैं। मध्य एशिया में ताशकन्द के निकट बेगोबात में लौह इस्पात का कारखाना है। वोल्गोग्राद के इस्पात-संस्थान के विकास के आधार कच्चे माल न होकर रेल तथा जल यातायात की सुविधा है। इनके अतिरिक्त लेनिनग्राद, राईब्रिस्क, करोलिया, लिपेपाया, चेरेपोवेट्स एवं पिचोरा बेसिन के वरकुटा आदि में (सभी यूरोपियन रूस में) लौह-इस्पात के मध्यम श्रेणी के कारखाने है।

इन्जीनियरिंग उद्योग :

क्रांति से पूर्व सोवियत संघ के इन्जीनियरिंग उद्योग प्रायः अविकसित अवस्था में थे। जलयान एवं रेल्वे इन्जीनियरिंग से सम्बन्धित सामानों को छोड़कर उत्पादन बहुत कम था। अधिकांश मशीनें आयात की जाती थीं। पिछले 55 वर्षों में स्थिति में बहुत सुधार हुआ है। आज सोवियत संघ के उद्योगों में लगे कुल मजदूरों का लगभग एक-तिहाई भाग इन्जीनियरिंग उद्योगों में संलग्न है। मशीनों का आयात भी बहुत कम रह गया है। दुनिया के अन्य उद्योग प्रधान देशों की तरह यहाँ के इन्जीनियरिंग उद्योग की मुख्यतः शक्ति इस्पात केन्द्र एवं बाजार (वह उद्योग जिसमें इजीनियरिंग उत्पादनों की खपत होती है) की सुविधा के आधार पर विकसित हुए हैं। सोवियत संघ में भारी इन्जीनियरिंग उद्योगों के विकास पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया है जो मुख्यतः डोयबास, यूराल एवं कुजबास जैसे भारी धातु उद्योग क्षेत्रों में स्थित हैं।

इन्जीनियरिंग उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्रीयकरण मॉस्को लेनिनग्राद तथा गोर्की क्षेत्रों में हुआ है। मॉस्को में वायलर्स टरबाइन, डीजल एंजिन, लोकोमोटिव तथा ऑटोमोबाइल्स के अनेक कारखाने हैं, लेनिनग्राद में मैराइन-इंजन तथा जलविद्युत गृहों में प्रयोगित यन्त्रों के निर्माण में विशिष्टता प्राप्त की गई है। गोर्की अपने ऑटोमोबाइल उद्योग के लिए प्रसिद्ध है। साराटोव एवं मिंस्क में बालबियरिंग के विशाल कारखाने हैं। अन्य इन्जीनियरिंग उद्योग केन्द्रों में खारकोव, रीगा, कुविरोव, स्वर्डलोव्स्क तथा टागान्रोक महत्वपूर्ण हैं।

मशीन टूल्स एवं विद्युत उपकरणों में कच्चे माल कम किन्तु श्रमिक कुशलता की ज्यादा आवश्यकता होती है। अतः इनका केन्द्रीयकरण पुराने परम्परागत औद्योगिक क्षेत्रों में हुआ है। सोवियत संघ के लगभग एक-चौथाई मशीन टूल्स मॉस्को क्षेत्र से आते हैं। वस्त्रोद्योग से सम्बन्धित मशीनें मॉस्को, इवानोवो, तूया, विलनोस्क तथा लेनिनग्राद में बनाई जाती हैं। प्रिसिसन इंस्ट्रूमेंट्स के बड़े कारखाने मॉस्को, कुर्गान, टोमस्क तथा खार्कोव में स्थित है। राई-

विस्क अपनी छपाई तथा टूला सिलाई की मशीनों के लिए उल्लेखनीय है। कुर्स्क, ओरेल, स्वेकीनो, कीव तथा ओडेसा में खाद्य पदार्थ उद्योगों से सम्बन्धित मशीनें बनाई जाती हैं। कालीनिन तथा ईवानोवो अपनी पीट खुदाई में उपयुक्त मशीनों के निर्माण के लिए प्रसिद्ध हैं। अन्य में गोर्लोव्का, खारकोव, लूगान्स्का (खान खुदाई की मशीनें) नोवोक्रमो टोस्क (इन्जीनियरिंग मशीनें) इर्कुटस्क तथा क्रस्नोयार्स्क (सोने तथा हीरे की खुदाई में उपयुक्त मशीनें) उल्लेखनीय हैं।

जलयान निर्माण सम्बन्धी केन्द्र परम्परागत रूप में यूरोपियन रूस के उत्तरी भागों में नदियों के किनारे स्थित थे। परन्तु सोवियत समय में अपेक्षाकृत दक्षिणी भागों में इस्पात केन्द्रों के निकट तथा साईबेरिया में यह उद्योग आधुनिक स्तर पर विकसित हुआ है। वर्तमान में अधिकांश जलयान निर्माण केन्द्र वोल्गा के किनारे पर स्थित हैं। गोर्की जलयान एवं उनके एंजिन बनाने का सबसे बड़ा केन्द्र है। वोल्गा की निचली घाटी में क्रस्नोरमेस्क तथा अस्त्राखान नगरों में जलयानों की मरम्मत तथा छोटे जलयान बनाने की व्यवस्था है। कामा नदी पर स्थित पर्म तथा वोटकिस्क में यह व्यवसाय विकसित हुआ है। अन्य केन्द्रों में कीव, निकोपोल (नीपर) आर्खांगेल्स्क (उत्तरी द्वीना) कोटलास (सुखोना) एवं लेनिनग्राद महत्वपूर्ण है। बाल्टिक तट पर स्थित पेट्रोक्रपोस्ट में मत्स्य व्यवसाय से सम्बन्धित जलयान तैयार किये जाते हैं। विशाल समुद्री जलयान लेनिनग्राद,

चित्र–17

निकोलायेव, मार्गीनस्क, मुर्मास्क तथा ब्लाडीवोस्टक में तैयार किये जाते हैं। साईबेरिया में टयूमेन (इरटिश) क्रस्नो यास्र्क (यनीसी) तथा कीचुगा (लीना) में नये जलयान निर्माण केन्द्र स्थापित किए गए हैं।

लोकोमोटिव उद्योगों–रेल के इन्जन, डिब्बे, पटरी आदि में साधारणतया ज्यादा धातु की आवश्यकता होती है। अतः ज्यादातर लोकोमोटिव वर्क्स इस्पात क्षेत्रों के निकट स्थापित किए गए हैं। खार्कोव तथा लूगांस्क रेल के डीजल इंजन बनाने के सबसे बड़े केन्द्र हैं। नोवोचेर कास्क में विद्युत संचालित रेल-इंजन तैयार लिए जाते हैं। गोर्की भी विविध प्रकार के रेल इंजनों का बड़ा निर्माण-केन्द्र है। इन केन्द्रों को इस्पात एवं पिग-आयरन डोनबास बेसिन से सप्लाई किया जाता है।

ऑटोमोबाइल उद्योगों की स्थापना में भी धातु की सप्लाई महत्वपूर्ण तत्व रही है। मांग तथा घनी बसी जनसंख्या भी प्रभावकारी तत्व रहे हैं। यही कारण है कि देश की तीन-चौथाई कारें यूरोपियन रूस के मध्यवर्ती औद्योगिक केन्द्रों से उपलब्ध होती हैं। यहाँ मॉस्को तथा गोर्की प्रधान केन्द्र हैं। इस प्रदेश के अतिरिक्त मोटर गाड़ियाँ वोल्गा, यूराल, श्वेत रूस (बेलो रूस) यूक्रेन तथा जार्जिया प्रदेश में भी बनाई जाती हैं। यारोस्लाल भी मोटर उद्योग का बड़ा केन्द्र है। यूराल प्रदेश में मियास, वोल्गाघाटी में उल्यानोव्स्क तथा ट्रांस कॉके-शिया में स्थित कुटैसी के मोटर के कारखाने हाल में ही विकसित हुए हैं। मिन्स्क में भी मोटरकारों तथा मोटर-साइकिलों का एक बड़ा प्लांट लगाया गया है। 1983 में सोवियत संघ ने 8,65,700 मोटर लॉरी तथा 1,300,000 मोटर कारें उत्पादित की।

जारकालीन रूस में बहुत कम कृषि यन्त्र बनते थे परन्तु वर्तमान में सोवियत संघ दुनिया के प्रमुख कृषि यन्त्र निर्यात करने वाले देशों में से एक है। स्वयं के कृषि प्रदेशों में भी अधिकांश कार्य यन्त्रों से होने लगा है अतः इनकी मांग बढ़ती जा रही है। कृषि यन्त्र उद्योगों की स्थापना में इस बात का ध्यान रखा गया है कि वे कृषि क्षेत्रों के निकट हों ताकि यन्त्रों की उपयोगिता जांचने की सुविधा रहे। दूसरे, कृषि क्षेत्रों को यन्त्र उपलब्ध कराने में यातायात का व्यर्थ समय और खर्चा भी बचे। ऐसे केन्द्रों में दक्षिणी यूरोपियन रूस में रॉस्टोव मध्य एशिया में ताशकंद वोल्गा घाटी में साराटोव तथा पश्चिमी साइबेरिया में कुर्गान एवं ओमस्क महत्वपूर्ण है।

रॉस्टोव-आन-डॉन में सोवियत संघ के लगभग 1/5 कृषि यन्त्र तैयार होते है। उत्पादन विविध है। ट्रैक्टर्स बनाने के पुराने कारखाने खार्कोव, चेलियाबिन्स्क एवं स्टैलिन ग्राद में हैं। पिछले दिनों में ब्लादीमीर तथा लिपेट्स्क (मध्य यूरो-पियन रूस) रुब्तोव्स्क (पश्चिमी साइबेरिया) एवं मिन्स्क में भी ट्रैक्टर के कारखाने

खोले गये हैं। ताम्बोव ओडेसा तथा पेंजावोदस्क में भी यह उद्योग विस्तृत पैमाने पर प्रचलित है। 1983 में यहां के कारखानों ने 49 मि. अश्वशक्ति के ट्रैक्टर्स तैयार किए। आडेसा में शक्कर बनाने की मशीनें भी तैयार की जाती हैं। उत्तरी कॉकेशिया को कृषि यन्त्र अर्मावीर, स्टाव्रोपोल, क्रेस्नोदर आदि कस्बों से प्राप्त होते हैं। वोल्गा घाटी के प्रधान केन्द्र साइज्रान, कजान एवं साराटोव हैं। अन्य केन्द्रों में कामेन्का, टूला, रायजान (मध्य यूरोपियन रूस) गोमेल तथा लीदा (बैलोरूस) पावलोदार (कजाकस्तान) क्रेस्नोयार्क (पूर्वी साइबेरिया) एवं फ्रूंज (मध्य एशिया) उल्लेखनीय हैं।

सोवियत संघ : इन्जीनियरिंग उद्योगों के उत्पादन

लोकोमोटिव	1913	1950	1970	1983
1. डीजल एंजिन (हजार अश्व-शक्ति)	—	125 0	3794.0	3800.0
2. विद्युत लोकोमोटिव एंजिन (हजार अश्वशक्ति		2428.0	2428.0	3800.0
3. लॉरी तथा बसें (हजारों में)	—	294.0	571.9	865,7
4. ट्रैक्टर्स (मि. अश्व शक्ति)	—	5.5	24.9	49.3
5. क्लॉक एवं घड़ियाँ (मिलि. में)	—	8	40	69
6. रेडियो (मिलियन में)	—	1	8	9
7. टैलीविजन सैट (मिलि. में)	—	—	7	9
8. रैफ्रीजिरेटर्स (हजारों में)	—	1	4,140	5700

रसायन उद्योग :

सोवियत संघ के औद्योगिक ढांचे में रसायन उद्योग अपेक्षाकृत नये योग के रूप में हैं जिनकी विकास-गति प्रमुखतः द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही तीव्र रही है। समस्त औद्योगिक ढांचे के अनुपात में रसायन उद्योग अभी भी अल्प विकसित अवस्था में है। प्रधान उत्पादन विविध खनिज उर्वरक, सल्फरिक एसिड, कॉस्टिक सोडा, सिंथेटिक रबर, रंग, प्लास्टिक्स, कृत्रिम रेशे एवं दवाइयाँ हैं।

उर्वरक :

फोस्फेट उर्वरकों को बनाने के लिए जितने कच्चे पदार्थों की आवश्यकता होती है उसका लगभग 80% भाग कोला प्रायः द्वीप से प्राप्त एपाटाइट से पूरी हो जाती है। सुपर फॉस्फेट बनाने के प्रधान कारखाने लेनिनग्राद ओडेसा कौंस्टेंटनोव्का, जर भिस्क पर्म एवं आल्मा में विद्यमान हैं। दक्षिणी कजाकस्तान के धुलाकटाऊ फोस्फोराइट के भण्डारों से प्राप्त कच्चे माल के आधार पर समरकंद, कोकंद एवं आम्बूल के उर्वरक के कारखाने चलाएं जाते हैं। नाइट्रोजन उर्वरकों के लिए कच्चा माल नाइट्रोजन गैस कोकिंग कोयला से कोक बनाने वाली भट्टियों या वायु से प्राप्त की जाती है। बिटूमिनस कोयला से कोक बनाते समय बहुत सी नाइट्रोजन गैस उप-उत्पादन (बाई-प्रोडक्ट) के रूप में पृथक् होती है। यही कारण है कि अधिकांश नाइट्रोजन उर्वरक के प्लांटस कोयला क्षेत्रों में स्थित है। गोर्लोव्का (डोनबास) केमेरोवो (कुजबास) स्टैलिनोर्स्क (मॉस्को बेसिन) तथा बेरेझिकी (यूराल) देश के प्रमुख नाइट्रो-उर्वरक उत्पादक केन्द्र हैं। उजबेक गणराज्य के चिरचिक नामक स्थान पर भी एक नाइट्रोजन गैस हवा से प्राप्त की जाती है। पोटाश से खाद बनाने की फैक्ट्रीज यूराल प्रदेश में बेरेझिकी तथा सोलिकामस्क में हैं। यूक्रेन में इसका सबसे बड़ा कारखाना कालुश में है। बेलोरूस में भी स्टारोबिन नामक स्थान पर एक कारखाना सप्तवर्षीय योजना के अन्तर्गत स्थापित किया गया है। विविध उर्वरक सोवियत रसायन उद्योग के प्रमुख उत्पादन है जिनकी उत्पादन-मात्रा 70,000 टन (1913) से बढ़कर 84,000,000 टन (1981) हो गई है।

सल्फरिक एसिड :

इसका उपयोग विविध उद्योगों में किया जाता है। कच्चे माल के रूप में टूला के कारखानों में कोयला, यूराल, ट्रांसकॉकेशियात या साइबेरिया के कारखानों में पायराइट तथा मध्य एशिया के कारखानों में शुद्ध गंधक के भण्डारों से प्राप्त गंधक का उपयोग किया जाता है। 1983 में सोवियत संघ ने 24.7 मिलियन टन सल्फरिकएसिड तैयार की। कजाकस्तान के आल्मा एक्टीविस्क में पायराइट से सल्फरिक एसिड बनाने का नया कारखाना खोला गया है।

कास्टिक सोडा :

कच्चे माल के रूप में साधारण नमक (सोडियम क्लोराइड) का उपयोग किया जाता है। प्रधान कारखाने सोलिकाम्स्क तथा सोलिलैटस्क (यूराल) आर्टेमोव्स्क (डोनबास) तथा निचली वोल्गा के सहारे-सहारे स्थित हैं।

कृत्रिम रबर :

सोवियत संघ में असली रबर पैदा नहीं होती। पहले यह सोचा गया था लेटेक्स-उत्पादक कुछ अन्य वृक्षों जैसे कोक-सागिज टाऊ-सागिज तथा गुआयुले

आदि से प्राप्त पदार्थ से असली रबर की कमी पूर्ति की जा सकेगी। लेकिन इसमें ज्यादा सफलता नहीं मिली। अतः कृत्रिम रबर बनाने की विधियाँ विकसित की गयीं। आजकल यहाँ आलू से 'डिस्टिल' करके बनाए गए ईथिल-अल्कोहल से कृत्रिम रबर बनाई जाती है। इसके प्रधान कारखाने यारोस्लाव, वोरोनेझ, टूला, ओम्लास्ट तथा कजान में हैं। आर्मीनिया के येरेवान नगर में कृत्रिम रबर का कारखाना है जहाँ स्थानीय चूने के पत्थर से प्राप्त किए कैलशियम कार्बाइड से रबर बनाई जाती है। जैसे कृत्रिम रबर का प्रसार हुआ है, मांग बढ़ी है वैसे-वैसे यह पैट्रो-कैमीकल उद्योगों से प्राप्त उत्पादनों के ऊपर निर्भर होती जा रही है।

पैट्रोकैमीकल्स

पिछले दशकों में जैसे-जैसे सोवियत संघ के तेल-उद्योग का विस्तार हुआ है, उत्पादन बढ़ा है वैसे-वैसे तेल-शोधन और उसी के साथ सम्बद्ध रूप में रसायन उद्योग की इस नयी शाखा का भी विकास हुआ है। स्वाभाविक है इसके अधिकांश कारखाने तेल शोधक कारखानों और तेल क्षेत्रों के पास स्थित हैं। सप्तवर्षीय योजना में इन उद्योगों की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। इस अवधि में रेग्जीन, प्लास्टिक्स आदि के कई नए प्लांटस स्थापित किए गए है।

अन्य रसायन उद्योग केन्द्रों में मॉस्को, जैरोस्के, कोलोम्ना, लिपैटस्क, गोर्की, ब्लादीमीर व लेनिनग्राद उल्लेखनीय हैं। हाल में ही ओमस्क (प. साइबेरिया) में पैट्रोकैमीकल तथा क्रैस्नोयास्कं (पूर्वी साइबेरिया) में कृत्रिम रबर के प्लांट स्थापित किए गए हैं।

वस्त्रोद्योग :

वस्त्रोद्योग उन गिने-चुने उद्योगों में से एक है जो क्रान्ति से पूर्व भी पर्याप्त विकसित था। 18वीं शताब्दी तक मिश्रित वन शृंखला के यूरोपियन रूस वाले भाग में परम्परागत रूप से लिनेन के वस्त्र बनाए जाते थे। 19वीं शताब्दी में आधुनिक यानि मशीनी-वस्त्रोद्योग का प्रारम्भ सूती वस्त्रोद्योग के रूप में हुआ जिसका केन्द्र मॉस्को क्षेत्र था। तब से लेकर आज तक सूती वस्त्रोद्योग ही वस्त्रोद्योगों में प्रमुख रहा है निस्सन्देह पिछले कुछ वर्षों में उसके हिस्सा-प्रतिशत में कमी आई है यथा 1913 में सभी प्रकार के उत्पादित वस्त्रों में सूती वस्त्रों का प्रतिशत 86 था जबकि आजकल 75% रहता है। सोवियत समय के प्रारम्भ यानी दोनों महायुद्धों के अन्तराल में भारी उद्योगों की तुलना में वस्त्रोद्योगों का विकास धीमा था। 1913–50 की अवधि में अन्य सभी उद्योगों का उत्पादन कई गुना हो गया जबकि सभी प्रकार के वस्त्रोद्योगों से सम्बन्धित उत्पादनों में 60% से भी कम की वृद्धि हुई। 1950 के बाद निस्सन्देह तीव्र गति से विकास हुआ और 1968 में जाकर उत्पादन दुगुने से भी ज्यादा हो गया।

सोवियत संघ
लैनिनग्राद
कीव
उरता
पर्म
गोर्की
कजान
स्वर्डलोव्स्क
ओमस्क
कारागांडा
इर्कुटस्क
वोल्गोग्राड
बाकू
क्रास्नोवोडस्क
चिरचिक
समरकंद
फरगाना
1 नोवोसिबिर्स्क
2 ग्रोजनी
विविध रसायन उद्योग
तेल शोधन उद्योग
रबड़ उद्योग
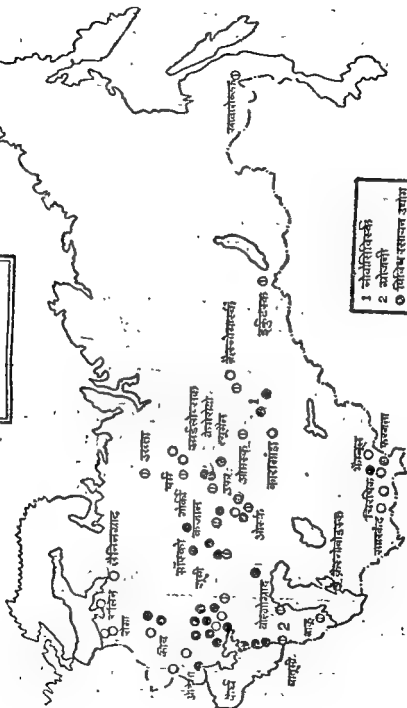
वस्तुतः द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ही सोवियत प्रायोजकों ने वस्त्रोद्योगों की तरफ ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया। कच्चे मालों की पूर्ति के लिए मध्य एशिया, कजाकस्तान तथा कॉकेशिया में कपास की खेती एवं भेड़-पालन का विस्तार किया गया। रासायनिक उद्योगों का विस्तार कृत्रिम रेशे वाले वस्त्रों को विकसित करने की योजना बनाई गई। वस्त्रोद्योग केन्द्रों को उनके कच्चे मालों के निकट ही विकसित करने के सफल प्रयास किए गए। फलतः पिछले दो दशकों में सोवियत संघ में वस्त्रोद्योग ने इतना विकास किया है कि आज वह न केवल स्वदेशी मांग की पूर्ति करने में समर्थ है वरन् कुछ मात्रा में वस्त्र निर्यात भी करता है। निस्संदेह सभी प्रकार के वस्त्रों की प्रगति गति एक समान नहीं रही है। सर्वाधिक विस्तार रेशमी वस्त्रोत्पादन एवं सबसे कम विस्तार सूती वस्त्रोत्पादन में हुआ है। क्रान्ति के पहले एवं बाद के कुछ प्रतिनिधि वर्षों (1913, 40, 50, 68) के उत्पादन के अवलोकन से यह तथ्य स्पष्ट है।

वस्त्रोद्योग उत्पादन 1913-68

उत्पादन मिलियन वर्ग मीटरों में

प्रकोष्ठ में संकेत संख्या, 1913 = 100 के आधार पर

	1913	1940	1950	1968
सूती वस्त्र	1817 (100)	2704 (148)	2745 (151)	6115 (337)
ऊनी वस्त्र	138 (100)	152 (110)	193 (140)	585 (424)
लिनैन	121 (100)	268 (221)	257 (212)	676 (559)
रेशम (कृत्रिम वस्त्रों सहित)	35 (100)	64 (183)	106 (303)	950(2714)
योग	2111 (100)	3188 (151)	3 01 (156)	8326 (394)

सूती वस्त्रोद्योग :

यह एक ऐसा उद्योग है जिसके विकास में कच्चे माल (रूई) का भारी महत्व होते हुए भी कपास उत्पादक क्षेत्रों की अपेक्षा ऐसे भागों में विकसित हुआ है जहां कपास पैदा नहीं होती। रूसी सोवियत स. स. गणराज्य में कपास नगण्य मात्रा में पैदा होती है फिर भी वह 75% सूती वस्त्रों के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। इसमें भी 65% इसके मध्य भाग में (मॉस्को के आस-पास) उत्पादित होता है। यही अनुपात 1913 में भी था। ट्रांस कॉकेशिया एवं मध्य एशिया देश के प्रमुख कपास उत्पादक प्रदेश हैं परन्तु 1/5 भाग से भी कम वस्त्रोत्पादन करते

हैं। पिछले वर्षों से इस बात के प्रयत्न किए जा रहे हैं कि इन भागों में सूती वस्त्रोद्योग का विकास हो ताकि उत्पादन-मूल्य कम बैठे। इसीलिए मध्य एशिया व ट्रांस कॉकेशिया में अनेक नई मिलें खोली गई हैं।

सूती वस्त्रोद्योग का सबसे अधिक केन्द्रीयकरण आज भी मॉस्को प्रदेश में है। सर्वप्रथम मिल ईवानोवो में स्थापित की गई थी और तब से लेकर आज तक यही इस उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है। यूरोपियन रूस के इस मध्य भाग में अधिकांश मिल मॉस्को के उत्तर-पूर्व में राजधानी और ऊपरी वोल्गा के मध्य में स्थित हैं। यहाँ लगभग 40 कस्बों में यह व्यवसाय प्रचलित है। इवानोवो के अतिरिक्त अन्य केन्द्रों में ब्लादीमीर, कोवरोव, शूया, किनेश्मा, नोगिंस्क तथा पावलोविस्की महत्वपूर्ण हैं। लेनिनग्राद के आस-पास भी कई मिलें हैं। यूरोपियन रूस के अन्य सूती केन्द्रों में नार्वा तालिन (बाल्टिक गणराज्य) पोल्टावा, खेर्सन किरोवाबाद (यूक्रेन) क्रस्नोरमेंस्क एवं कामिशन (वोल्गा प्रदेश) उल्लेखनीय हैं।

पिछले दशकों में मध्य एशिया तथा ट्रांस कॉकेशिया में आधुनिकतम सूती मिलें स्थापित की गई हैं जिनमें लेनिनाकान, गोरी, बाकू, अश्खाबाद तथा दुशांबे में स्थित मिल महत्वपूर्ण है। साइबेरिया के बरनौल तथा कांस्क में भी यह व्यवसाय विकसित किया गया है। मध्य एशिया के परम्परागत केन्द्रों में ताशकन्द फरगना तथा फ्रून्ज सबसे बड़े हैं। संक्षेप में, सोवियत समय में सूती वस्त्रोद्योग का सर्वाधिक विस्तार एवं विकास कजाकस्तान, तुर्कमेनिस्तान, उजबेक, अजरबेजान, खिरगिजिस्तान, तद्जिकिस्तान, आर्मीनिया तथा जार्जिया आदि गणराज्यों में हुआ है। इन गणराज्यों में कपास उत्पादन तथा वस्त्रोद्योग दोनों का ही विस्तार किया जा रहा है ताकि यहाँ से उत्पादित सस्ते वस्त्र देश के घने बसे भागों को सप्लाई किए जा सकें। पश्चिमी साइबेरिया के बिस्क, केमेरोवो तथा लेनिनिस्क कुजनेत्स्की एवं कजाकस्तान के आलम आता तथा कुस्तैनाय नगरों में भी विशाल उत्पादन-क्षमता वाली सूती मिल स्थापित की जा रही हैं। मॉस्को, ताम्बोव, तुला एवं यूक्रेन तथा जार्जिया गणराज्यों के कई नगरों में सूती मिलों में काम में आने वाली मशीनें एवं कल-पुर्जे के कारखानों को विकसित किया जा रहा है। पिछले 50 वर्षों में सर्वाधिक उल्लेखनीय परिवर्तन इस वस्त्रोद्योग के बारे में यह हुआ है कि पहले लगभग आधी कपास आयात करनी पड़ती थी जबकि आज आवश्यकता की पूर्ति स्वदेशी स्रोतों से ही हो जाती है।

ऊनी वस्त्रोद्योग :

क्रान्ति-पूर्व समय से आज यद्यपि तीन गुना अधिक ऊनी वस्त्रोत्पादन होता है परन्तु यह मात्रा सूती वस्त्रों की उत्पादन-मात्रा से 1/10 से भी कम है। ऊनी वस्त्रोद्योग यद्यपि अपेक्षाकृत ज्यादा बिखरे रूप में है लेकिन इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्र सूती वस्त्रोद्योग की तरह मॉस्को प्रदेश ही है। यह उद्योग यहाँ

परम्परागत रूप में विकसित रहा है जिसका प्रधान आधार यहाँ की ठण्डी जलवायु रही है। शताब्दियों से मॉस्को एवं लेनिनग्राद क्षेत्र में उच्चकोटि के एवं यूक्रेन तथा वोल्गा क्षेत्र में साधारण कोटि के ऊनी वस्त्र तैयार किए जाते हैं। क्रान्ति से पूर्व इस उद्योग में प्रयोगित ऊन का पर्याप्त भाग विदेशों से आयात किया जाता था। पंचवर्षीय योजनाओं में जार्जिया, कजाकस्तान, खिरगिजस्तान, तुर्कमान, आर्मीनिया आदि गणराज्यों एवं यूराल साइबेरिया प्रदेश में भेड़-ऊन के विस्तार के सफल प्रयत्न किए गए। साथ ही इन भागों में अनेक नई ऊनी वस्त्र मिल भी स्थापित की गई। पिछले दो दशकों में इन गणराज्यों में ऊनी वस्त्रोद्योग ने बड़ी तेजी से विकास किया है।

यूरोपियन रूस के प्रधान ऊनी केन्द्र ईवानोवो, कुंटसेवो, ब्रयांस्क, पावलोविस्की, कीव, खार्कोव, स्लोनिम तथा मॉस्को हैं, मॉस्को में उत्तम कोटि के ऊनी वस्त्र तैयार किए जाते रहे हैं। निकट स्थित ल्यूबेरसी तथा मोनिनो नगरों में आधुनिकतम ऊनी मिल खोली गई हैं जो प्रमुखतः उत्तम श्रेणी का कपड़ा ही तैयार करेंगी। ईस्टोनिया, बेलोरूस तथा यूक्रेन आदि गणराज्यों में भी अनेक नई मिलें खोली गई हैं। मध्य एशिया के आलमआता, फ्रुन्ज, दुशांबे तथा मेरी में स्थापित ऊनी मिल देश का लगभग 20% ऊनी वस्त्र तैयार करने लगी हैं। नवीन विकसित ऊनी केन्द्रों में यूक्रेन गणराज्य के चेरनीगोव, क्रेमेनचुग, खार्कोव बेलोरूस के मिंस्क, विटेब्स्क, ग्रोदनो, ट्रांस कॉकेशिया के कुटेसी, बाकू तथा येरेवान एवं उत्तरी कॉकेशस के क्रेस्नदर आदि महत्वपूर्ण हैं।

सोवियत संघ : वस्त्रोद्योग उत्पादन

	1913	1950	1960	1980	1983
सूती वस्त्र (मि० मीटर)	2,672	3,899	6,387	8,063	
ऊनी वस्त्र (मि० मीटर)	108	156	342	564	11,400
रेशमी वस्त्र (मि० मीटर)	43	130	810	1,632	

लिनेन एवं रेशमी वस्त्रोद्योग :

लिनेन वस्त्रोद्योग यूरोपियन रूस के मध्य एवं उत्तर-पश्चिमी भाग में विकसित है। सूती वस्त्रोद्योग के अनेक केन्द्रों में लिनेन वस्त्र भी उत्पादित किए जाते हैं। कोस्ट्रोमा सबसे प्रमुख केन्द्र है। अन्य लिनेन-केन्द्रों में व्याजनिकी,

स्योलैस्क तथा पस्कोव उल्लेखनीय हैं। सप्तवर्षीय योजना में कोतोमीर तथा रोव्नो में भी कई लिनेन की मिलें खोली गई हैं। बेलोरूस एवं बाल्टिक गणराज्यों में भी यह विकासशील अवस्था में है। 1980 में रूसी मिलों ने 1,632 मिलियन मीटर रेशमी वस्त्र तैयार किए।

रेशमी एवं कृत्रिम रेशा वस्त्रोद्योग प्रमुखतः तीन प्रदेशों—मध्य एशिया, ट्रांस कॉकेशिया एवं मध्य यूरोपियन रूस में स्थित है। ये तीनों मिलकर रूस का लगभग 70% कृत्रिम रेशम तैयार करते हैं। शुद्ध रेशम केवल ट्रांस कॉकेशिया में पैदा होती है अतः वहाँ विशुद्ध रेशमी वस्त्र तैयार किए जाते हैं। अन्य भागों में नकली रेशम (रेयन) तैयार की जाती है। परम्परागत रूप से यह व्यवसाय यूरोपियन रूस के मॉस्को, कुण्टसेवो, व्लादीमीर, कालीनिन, नारो-फोमिस्क आदि नगरों में होता रहा है। कीव, यूक्रेन प्रदेश का सबसे बड़ा रेशमी वस्त्रोत्पादक केन्द्र है। पिछले दशकों में रेशम की मिलें ट्रांस कॉकेशिया के कुटैसी, तिबिलिसी, वेलावी तथा नूखा, उजबेकिस्तान के समरकन्द, बुखारा एवं मार्गेलन, खिरगिजिस्तान के श्रोश, तदभि-किस्तान के दुशांबे एवं तुर्कमान गणराज्य के अश्खाबाद तथा चारजऊ आदि नगरों में स्थापित की गई हैं।

खाद्यपदार्थ सम्बन्धी उद्योग :

इन हल्के उद्योगों की स्थापना में बाजार एवं यातायात के साधन—ये दो तत्व बहुत प्रभावकारी होते हैं। यूरोपियन रूस के मध्य-उत्तरी एवं उत्तर-पश्चिम के आर्द्र ठण्डे प्रदेशों में चारागाह, पशुपालन एवं दुग्ध व्यवसाय विकसित है। खाद्यान्नों सम्बन्धी उद्योग मुख्यतः स्टैप्स या शेर्नोजम मिट्टी की पट्टी में है जहाँ अधिकांश खाद्यान्न पैदा किए जाते हैं। मांस एवं ऊन उद्योग यूराल, कजाकस्तान, मध्य एशिया तथा कॉकेशिया में विकसित हैं। फल तथा सब्जियों से सम्बन्धित उद्योग उत्तरी कॉकेशस, यूक्रेन एवं मोल्देविया में हैं। मक्खन तैयार करने की विशालाकार फैक्ट्रीज वोल्गा की घाटी, उत्तरी-पश्चिमी यूरोपियन रूस तथा पश्चिमी साइबेरिया में ओमस्क–नोवोसिबिर्स्क पेटी में केन्द्रित हैं। मांस को डिब्बों में बन्द करने के प्लांटस, गोर्की, मॉस्को, लेनिनग्राद तथा स्वर्डलोव्स्क आदि नगरों में हैं। मक्खन तथा पनीर के नए कारखाने अजरबेजान, यूक्रेन तथा जार्जिया आदि गणराज्यों में खोले गए हैं। मांस उद्योग के नए केन्द्रों में अर्मावीर, क्रेस्नोदर, बाकू, लेनिनाकान, ओस्कं, दुशांबे, फ्रुन्ज तथा चीनी उद्योग के नए केन्द्रों में आलमआता, झिम्बूल, बिस्क, अलीस्क, कामबुलाक तथा फ्रुन्ज महत्वपूर्ण हैं। नवीन आर्थिक नीति के अनुसार सोवियत संघ में खाद्य पदार्थों, विशेषकर दुग्ध-व्यवसाय से सम्बन्धित उत्पादनों के विकास पर काफी जोर दिया गया है। घास एवं चारे की फसलों का क्षेत्रफल बढ़ाया जा रहा है। इन सब प्रयत्नों का ही परिणाम है कि सोवियत संघ दो-तीन दशकों में ही दुनिया के प्रधान मांस, मक्खन एवं पनीर उत्पादक देशों में से एक हो गया है।

सोवियत संघ : खाद्य पदार्थ उद्योग उत्पादन

	1913	1950	1970	1983
मांस (मि. टनों में)	5	5	12	16
मक्खन (हजार टनों में)	104	336	963	1,500
शक्कर (हजार टनों में)	1,363	2,532	10,221	12,400
'केन्ड' फूड (मि० टिन में)	116	1,113	10,678	17,100

लकड़ी से सम्बन्धित उद्योग :

रूस के लगभग 700 मिलियन हैक्टर्स (2,800,000 वर्गमील) भू-भाग में या दूसरे शब्दों में इस महादेश के लगभग एक-तिहाई भू-भाग में विस्तृत वनों का विस्तार है। यह वन शृंखला कोणधारी मुलायम वृक्षों से सम्बन्धित होने के कारण प्लाइवुड, कागज तथा लुग्दी के लिए उपयुक्त मुलायम लकड़ी का अक्षय भंडार है। काष्ठ पर आधारित उद्योगों में सोवियत संघ के कुल उद्योगरत श्रम का लगभग दशमांश संलग्न है। प्रतिवर्ष लगभग 270 मि. घ. मी. टिम्बर काटी जाती है। (विश्व का लगभग 30%) जिसका एक-तिहाई भाग ईंधन तथा शेष भाग कागज, लुग्दी रसायन व अन्य उद्योगों में प्रयुक्त होता है।

यद्यपि टिम्बर के विस्तृत सुरक्षित भण्डार साइबेरिया में है, परन्तु काटी गई टिम्बर का लगभग 75% भाग यूरोपियन रूस वाले अंभाग से प्राप्त होता है। इसका प्रधान कारण खपत-केन्द्रों की निकटता है। वैसे अब धीरे-धीरे साइबेरियन हिस्से में भी काष्ठ सम्बन्धी उद्योगों को विकसित किया जा रहा है। साइबेरिया की नदियों पर जल विद्युत गृह स्थापित कर के विविध प्रदेशों में नव-विकसित कागज तथा लुग्दी उद्योगों को शक्ति प्रदान करने की योजना है। यूरोपियन रूस के प्रधान काष्ठ उद्योग केन्द्र स्टैलिनग्राद, लेनिनग्राद तथा आर्केन्जेल है। यूराल प्रदेश रूस को लगभग 20% लकड़ी की वस्तुएं प्रस्तुत करता है जहाँ इस उद्योग का केन्द्रीयकरण पर्म एवं स्वर्डलोव्स्क दोनों में हुआ है।

साइबेरिया में ट्रांस-साइबेरियन रेल्वे के सहारे-सहारे कई नगरों में लकड़ी उद्योग का भारी विकास हुआ है इनमें नोवोसिबिर्स्क तथा क्रॅस्नोयार्स्क प्रमुख हैं। यहाँ माचीस, रेजीन, कर्पूर तथा डिपसनाइ तैयार की जाती हैं। ट्यूमेन में प्लाईवुड, टॉमस्क में काष्ठ-रसायन तथा ब्लाडीवोस्टक में प्लाईवुड बनाने के कारखाने हैं। नदियों पर स्थित इगार्का नगर साइबेरिया सबसे बड़ा टिम्बर ग्रहण केन्द्र है

जहाँ से प्रदेश के विभिन्न भागों में स्थित काष्ठ सम्बन्धी उद्योगों को टिम्बर सप्लाई की जाती है। उल्लेखनीय है कि साइबेरिया के 25% में से पूर्वी साइबेरिया 15% तथा शेष टिम्बर पश्चिमी साइबेरिया प्रस्तुत करता है। समस्त रूस में जो टिम्बर काटी जाती है उसका लगभग आधा भाग कागज, लुग्दी, गत्ता, सैल्यूलोज आदि बनाने के काम आता है।

कागज उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र यूरोपियन रूस उत्तर-पश्चिम में लैंडोगा झील के आस-पास है जहाँ के कारखाने देश का लगभग एक-चौथाई कागज प्रस्तुत प्रस्तुत करते हैं। इस समूह में कॅम्डोपोगा तथा पेंट्रोक्रेपोस्ट के कारखाने महत्वपूर्ण हैं। यूराल प्रदेश में स्थित क्रैस्नोकामस्क, बेरोज्स्क तथा नोवाया-ल्याला के कारखाने देश का लगभग 20% विशिष्ठ श्रेणी का कागज प्रस्तुत करते है। बाल्टिक गण-राज्यों की मिल लगभग दशमांश कागज प्रस्तुत करती है। सोवियत संघ की सबसे बड़ी कागज की मिल मॉस्को, गोर्की, कीव तथा पर्म में स्थित हैं। पिछले दशकों में स्थापित किए गए कागज के कारखानों में से बालाख्ना (गोर्की क्षेत्र), कौंडोपोगा तथा सेगेझ (कालिनिनग्राद क्षेत्र), कामा, नोवाया-ल्याला, विशेरा तथा सोलिकाम्स्क (यूराल प्रदेश) इग्गुरी (ट्रांस-कॉकेशस) लेनिनग्राद एवं ताशकन्द में स्थित कारखाने उत्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। कार्ड-बोर्ड बनाने के कारखाने झिदाचेव (ल्वोव क्षेत्र) रखोव (जकर्पात्स्काया क्षेत्र) तथा सखालिन मे विकसित किए गए हैं। 1968 में सोवियत संघ के जंगलों से 290 मिलियन घन मीटर लकड़ी काटी गई। इस वर्ष कागज का उत्पादन 4 मिलियन टन था।

सीमेंट उद्योग :

पिछले 60 वर्षों में सीमेंट का उत्पादन लगभग 71 गुना (1913–1.8 मि० टन, 1983–128 मि० टन) हो गया है। इतने तीव्र विकास का आधार वस्तुतः बढ़ती हुई माँग थी। सोवियत समयों में जैसे-जैसे आर्थिक प्रगति हुई, जैसे-जैसे हर क्षेत्र में नए सिरे से कारखाने, स्कूल, अधिवास, फार्म-हाउस आदि बने, वैसे-वैसे सीमेंट की मांग बढ़ी, उत्पादन बढ़ा। यह उद्योग पूरे देश में वितरित है। वर्तमान में अधिकांश सीमेंट चूने के पत्थर से ही बनाया जाता है परन्तु जिन भागों में यह पत्थर नहीं है वहाँ अन्य विधियाँ अपनाई जा रही हैं। यथा, भविष्य में नैफेलाइट को अलुमूनियम में परिवर्तित करते समय जो उप-उत्पादन बचेगा उससे सीमेंट बनाने की योजना है। कोयला क्षेत्रों मे आजकल कोयला को जला कर गैस बनाने से जो पदार्थ बचता है उससे भी सीमेंट बनाया जाने लगा है।

सीमेंट के सबसे पुराने कारखाने यूरोपियन रूस में मध्य वोल्गा पर स्थित वोल्स्क तथा काले सागर क्षेत्र में स्थित नोवोरोसिस्क में है जिनकी उत्पादन क्षमता सोवियत समय में काफी बढ़ा दी गई है। पिछले दशकों में सैकड़ों सीमेंट के नए कारखाने स्थापित किए गए हैं जिनमें यूराल क्षेत्र के मैग्नीटोगोर्स्क, मजरगोजान के

कारादाय उजबेकिस्तान के कुवासाई, कजाकस्तान के कारागांड़ा कुस्तैनाय तथा चिमकंद, साइबेरिया के क्रेश्नोयार्क तथा प्राचिस्क, यूराल प्रदेश के ही निभनीतागिल एवं प्रोस्क प्रादि नगरों में विद्यमान प्लांटस महत्वपूर्ण हैं।

प्रौद्योगिक प्रदेश :

पश्चिमी यूरोपियन देशों की तुलना में सोवियत संघ के उद्योग काफी बिखरे रूप में हैं। सोवियत समय में हुए नए सर्वेक्षणों के फलस्वरूप मिले प्राकृतिक संसाधनों एवं सोवियत नीति (सभी संभाग समान रूप से विकसित हों) के परिणाम स्वरूप यह विकेन्द्रीकरण प्रौर भी ज्यादा हुप्रा है। फिर भी, कुछ ऐसे विशिष्ट प्रदेश हैं जहाँ प्रौद्योगिक सघनता ज्यादा है। यह सघन स्वरूप वस्तुतः भौगोलिक सुविधाप्रों के कारण हैं। सोवियत संघ की पश्चिमी सीमा से लेकर यूराल के पूर्वी ढाल प्रदेशों तक सोवियत संघ के लगभग तीन चौथाई उद्योग विद्यमान हैं। यूक्रेन, यूराल, मॉस्को बेसिन, वोल्गा एवं लेनिनग्राद–ये पाँचों मिलकर सोवियत संघ के 50% प्रौद्योगिक उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। 25% प्रौद्योगिक उत्पादन उन कारखानों से सम्बन्धित है जो यूरोपियन रूस में बिखरे रूप में स्थित हैं तथा शेष एक चौथाई उत्पादन मध्य एशिया, ट्रांस कॉकेशिया साइबेरिया एवं धुर पूर्व के नव-विकसित प्रौद्योगिक केन्द्रों से उपलब्ध होता है। इनमें पश्चिमी साइबेरिया के कुजबास बेसिन या किसी सीमा तक कारागांडा क्षेत्र, जहाँ कोयला खुदाई एवं धातु उद्योग विकसित हो गए हैं, को ही प्रौद्योगिक प्रदेश के रूप में गिना जा सकता है। संक्षेप में सोवियत उद्योगों को निम्न प्रौद्योगिक प्रदेशों में समूहबद्ध किया जा सकता है :

1. यूक्रेन प्रदेश
2. यूराल प्रदेश
3. मॉस्को बेसिन
4. वोल्गा प्रदेश
5. लेनिनग्राद क्षेत्र
6. पश्चिमी साइबेरिया के प्रौद्योगिक प्रदेश : कुजबास बेसिन एवं कारगांडा
7. मध्य एशिया के प्रौद्योगिक केन्द्र
8. ट्रांस-कॉकेशिया एवं कॉकेशस के प्रौद्योगिक केन्द्र
9. धुर पूर्व के प्रौद्योगिक केन्द्र

यूक्रेन प्रदेश

सोवियत संघ के इस सबसे पुराने प्रौद्योगिक प्रदेश का विकास स्थानीय कच्चे मालों के प्राधार पर हुप्रा है। डोनाबास से कोयला, क्रिवोईरोग से लौह-मयस, निकोपोल से मैंगनीज, स्थानीय रूप से प्राप्त नमक, पारा तथा भौगोलिक

स्थिति आदि तत्व इस प्रदेश के उद्योगों के विकास एवं स्वरूप निर्धारण में आधार रूप में रहे हैं। वर्तमान मे यह रेल द्वारा देश के सभी भागों से जुड़ा है। वोल्गा यूराल प्रदेश से पाइप लाइनों द्वारा तेल आ जाता है, अनेक ताप-विद्युत गृह कोयला से चला लिए जाते हैं। पानी की कमी नदियों से पूरी हो जाती है।

वैसे डोनबास बेसिन से लेकर पश्चिम में नीपर नदी तक फैली इस पेटी में विविध औद्योगिक नगर हैं परन्तु तीन क्षेत्रों में ज्यादा केन्द्रीयकरण प्रतीत होता है। ये हैं—डोनबास बेसिन, नीपर-मोड़ तथा क्रिवोईरोग क्षेत्र। लौह-इस्पात के अतिरिक्त यहां लोकोमोटिव, ऑटोमोबाइल्स, इंजीनियरिंग, कृषि यन्त्र, मशीन टूल्स, कोक निर्माण आदि उद्योग विकसित हैं।

डोनबास बेसिन के प्रधान उद्योग केन्द्रों में डोनेस्क (इस्पात) माकेयेव्का (इस्पात) येनाकीयेव (ढ़ाला इस्पात) क्रामाटोर्स्क (विद्युत इस्पात) लूगास्क (इंजीनियरिंग) कोमूनास्कं (इंजीनियरिंग) एवं कुविशेव महत्वपूर्ण हैं। नीपर-मोड़ क्षेत्रों के कारखानों में विद्युत यन्त्र तथा क्रिवोईरोग क्षेत्र में इस्पात तथा रासायनिक उद्योग विकसित हैं। यहां नेप्रोपेट्रोव्स्क, नेप्रोभरजिस्क, जापोरझ्ये आदि बड़े उद्योग केन्द्र हैं एजव सागर के तट पर स्थित झद्नोव तथा एजवस्ताल एवं केर्च प्रायःद्वीप में भी भारी उद्योग हैं।

यूक्रेन गणराज्य के इस उद्योग प्रधान संभाग में चहुँ-ओर खान, खनिज बस्तियों, कारखानों, धूंआ, चिमनी, रेल-पटरियों, गोदाम, रेलवे स्टेशन, मजदूर बस्तियों तथा कोयले की ढ़ेरियों के ही नजारे देखने को मिलते हैं।

यूराल प्रदेश :

लौह-अयस, विविध इस्पात मिश्रण की धातुओं, जल, चारकोल आदि यहां औद्योगिक विकास के प्रधान प्रेरणा स्रोत रहे हैं। यह रूस के पुराने उद्योग क्षेत्रों में से एक है जहां 18वीं शताब्दी में भी लकड़ी और चारकोल से लोहा गलाया जाता था। यूराल प्रदेश की सबसे बड़ी कमी शक्ति-साधन की है जो 1930 में यूराल-कुजनेस्क कम्बाइन बनने से दूर हो गई है। आजकल यहां यूराल-वोल्गा प्रदेश से तेल एवं प्राकृतिक गैस भी उपलब्ध है। इस प्रदेश में प्रमुखतः भारी उद्योग यथा लौह-इस्पात, इंजीनियरिंग तथा भारी रासायनिक उद्योग हैं। कागज एवं लुग्दी उद्योग भी कई नगरों में है। अनेक जल विद्युत गृह यूराल शृंखला से निकलने वाली जलधाराओं पर स्थापित किए गए हैं। इंजीनियरिंग शाखा के यहां लोकोमोटिव, मशीन निर्माण, खनन-यन्त्र, विद्युत-यन्त्र तथा परिवहन उपकरण निर्माण उद्योग विकसित हैं।

अधिकतर कारखाने खानों के समीप समूहबद्ध रूप में हैं। पूर्वी ढ़ालों पर उत्तर में सेरोव, मध्य में निझनीतागिल तथा चेलियाबिंस्क तथा स्वर्डलोव्स्क एवं

दक्षिण में मैग्नीटोगोर्स्क ग्रोस्कं, खालीलोवो के पास-पास उद्योग संस्थान विद्यमान हैं। पश्चिमी ढालों पर ऊपरी कामा, बेरेझिन्की, सोलिकाम्स्क, पर्म तथा बेलाया घाटी क्षेत्र उल्लेखनीय ग्रौद्योगिक केन्द्र है।

मास्को बेसिन :

मॉस्को बेसिन में सोवियत संघ के लगभग 20% उद्योग विद्यमान हैं। यहाँ अधिकांश हल्के उद्योगों का केन्द्रीयकरण है जिनमें विविध प्रकार के वस्त्रोद्योग, इन्जीनियरिंग, रसायन, खाद्य पदार्थों व काष्ठ-उद्योग समूहों से संबंधित सैंकड़ों प्रकार के उद्योग विकसित पाए जाते हैं। ग्रौद्योगिक विविधता की दृष्टि से यह सोवियत संघ में प्रथम प्रदेश है। संक्षेप में, यहाँ सूती वस्त्र, ऊनी वस्त्र, लिनेन, कृत्रिम रेशा वस्त्र, विद्युत यन्त्र, उपकरण परिवहन-उपकरण, मशीनें, खनन यन्त्र, दवाइयाँ रंग, लोको, ऑटोमोबाइल्स कृषि यन्त्र घरेलू उपयोग की वस्तुएँ, औजार व खाद्य पदार्थों सम्बन्धी उत्पादन होते हैं।

लिगनाइट के अतिरिक्त प्रोत्साहक तत्वों में ऐतिहासिक परम्परा खपत केन्द्रों एवं बाजारों की निकटता, कुशल श्रम, यातायात की सुविधा तथा जल उल्लेखनीय है। यहाँ कच्चे मालों व शक्ति साधनों का अभाव है परन्तु पूर्ति होने में कोई कठिनाई नहीं है। डोनबास से पिग-आयरन व इस्पात, यूराल-वोल्गा प्रदेश से तेल व प्राकृतिक गैस पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। यातायात का यह सबसे बड़ा केन्द्र है। मॉस्को से ग्यारह दिशाओं को रेल जाती है। वोल्गा द्वारा यह प्रदेश कैस्पियन, काले बाल्टिक व श्वेत सागर से जुड़ा है। इस सुविधा से संसार के किसी भी भाग से कैसा भी कच्चा माल यहाँ आ सकता है।

रूस के चाहे अन्य अनेक भागों में ग्रौद्योगिक विकास हो गया है परन्तु तकनीकी दृष्टि से आज भी मॉस्को बेसिन सोवियत संघ का केन्द्र है। रूस में सबसे पहले यहीं आधुनिक उद्योगों का श्री गणेश हुआ था। अतः मॉस्को बेसिन को 'रूसी उद्योगों की जननी' भी कहा जाता है। उपनगरों सहित मॉस्को प्रदेश का विस्तार 300 मील के अर्द्धव्यास में है जिसमें कारखाने बिखरे रूप में हैं, विशिष्टीकरण की कुछ प्रवृत्ति यहाँ भी है। इन्जीनियरिंग एवं रासायनिक उद्योगों का केन्द्रीकरण मॉस्को नदी के सहारे-सहारे बसे खिमकी और नागटिनो उपनगरों में है। इसी प्रकार वस्त्र व्यवसाय क्लेजमा बेसिन लिगनाइट खनन तूला क्षेत्र तथा मशीन निर्माण गोर्की क्षेत्र में केन्द्रित हैं। मॉस्को के अतिरिक्त अन्य ग्रौद्योगिक केन्द्रों में गोर्की, तूला, क्लिन, कोलोम्ना, ईवानोवो, कोस्ट्रोमा, कालीनिन, यारोश्लाल, रयाजान एवं लिपैटस्क आदि उल्लेखनीय हैं।

वोल्गा प्रदेश :

वोल्गा प्रदेश सोवियत संघ के अपेक्षाकृत नए एवं विकासशील ग्रौद्योगिक प्रदेशों में से एक है। यहाँ के प्रमुख ग्रौद्योगिक केन्द्र तेल-शोधन, पैट्रोकैमील्स,

रसायन, इंजीनियरिंग एवं खाद्य-पदार्थों सम्बन्धी उद्योगों में संलग्न हैं। इनके अतिरिक्त विद्युत-रासायनिक टिम्बर, कागज, सीमेंट, कृषि यन्त्र तथा चमड़ा उद्योग भी विकसित हैं। वोल्गा प्रदेश का औद्योगिक विकास पिछले 3–4 दशकों में ही हुआ है जिसके प्रधान आधार यहाँ मिलने वाले पदार्थ जैसे पेट्रोल, प्राकृतिक गैस एवं नमक हैं। चूँकि ये सभी छितरे हैं अतः औद्योगिक संस्थान भी केन्द्रित स्थिति में न होकर छितरे रूप में हैं। प्रदेश के सभी भागों को वोल्गा जल-प्रवाह की सुविधा प्राप्त है। इसके अतिरिक्त कई पूर्व-पश्चिम फैली रेल लाइनें गुजरती हैं। प्रमुख तेल-शोधक कारखाने पर्म, कजान, सालावात, साराटोव, वोल्गाग्राद तथा कुविशेव आदि नगरों में हैं। इन्हीं में अन्य उद्योग भी विकसित हो गये हैं।

लेनिनग्राद क्षेत्र :

मॉस्को बेसिन की तरह लेनिनग्राद क्षेत्र के उद्योग केन्द्र भी ऐसे उद्योगों में संलग्न है जिनमें चातुर्य की ज्यादा एवं कच्चे मालों की कम आवश्यकता होती है। यहाँ प्रिसिशन-इन्स्ट्रूमेंटस, विद्युत-उपकरण, रसायन, अच्छे वस्त्र, मशीनें, यातायात सम्बन्धी इंजन व गाड़ियाँ, जलयान तथा दैनिक उपयोग की वस्तुएँ तैयार की जाती हैं। स्थानीय रूप से प्राप्त संसाधनों में शेल-आयल, पीट या तटवर्ती स्थिति ही उल्लेखनीय हैं। तटवर्ती स्थिति, बन्दरगाह की सुविधा एवं पर्याप्त समय तक (विशेषकर उस समय जबकि पीटर महान् रूस को पश्चिम के रंग में रंग देना चाहता था) राजधानी रहने के कारण ही यहाँ औद्योगिक विकास सम्भव हुआ। वर्तमान में कोयला पिचौरा बेसिन एवं इस्पात तथा पिग आयरन डोनबास से मंगाए जाते हैं। लेनिनग्राद यातायात के तीव्रगामी साधनों द्वारा देश के भीतरी एवं बाहरी भागों से जुड़ा है। अधिकांश कारखानें लेनिनग्राद नगर के चारों ओर नेवा डेल्टा की धाराओं के सहारे-सहारे फैले हैं। लेनिनग्राद के निकट ही स्थित गैचीना एवं कौलपीनो भी बड़े औद्योगिक केन्द्र हैं। नार्वा रीगा तथा तालिन में भी तेजी से हल्के उद्योग विकसित हो रहे हैं।

पश्चिमी साइबेरिया के औद्योगिक प्रदेश :

पश्चिमी साइबेरिया के औद्योगिक केन्द्रों का विकास सोवियत समय में कच्चे मालों एवं शक्ति के साधनों की प्राप्ति के बाद हुआ है। अतः इनके केन्द्रीकरण में खनिज-केन्द्रों की निकटता ने प्रभाव डाला है। टौम नदी की घाटी एवं कुजबास कोयला क्षेत्र के अतिरिक्त कुछ नागरीय औद्योगिक केन्द्र भी हैं जिनमें नोवोसिविर्स्क, बारनॉल एवं रूब्तसोव्स्क आदि महत्वपूर्ण हैं। इन औद्योगिक केन्द्रों को लौह-अयस गौनियाशेरिया श्रृंखला कोयला कुजबास बेसिन, पैट्रोलियम यूराल-वोल्गा क्षेत्र, विद्युत दक्षिणी-साइबेरिया में नव-स्थापित किए गए जल-शक्ति गृहों से तथा टिम्बर टैगा जंगलों से प्राप्त होती है। कुजबास बेसिन एवं नोवोसिविर्स्क

में कोक, पिग-आयरन, अर्द्ध तैयार इस्पात, इंजीनियरिंग एवं मशीन टूल्स के कारखाने हैं। रूस्तावोस्क में ट्रैक्टर्स व कृषि यन्त्र तथा बारनोल में वस्त्र उत्पादित करने के कारखाने हैं। वस्त्र व्यवसाय के लिए कपास मध्य एशिया से आ जाती है। मुद्री एवं कागज के कारखाने बिखरे रूप में हैं। इस संभाग में यातायात के साधनों का अभाव है। सारा माल एवं यात्री परिवहन दो रेल मार्गों (ट्रांस साइबेरियन, तुर्क साइबेरियन) द्वारा होता है। अतः स्वाभाविक है कि इस प्रदेश में जो भी उद्योग केन्द्र विकसित हुए हैं या होंगे वे यातायात मार्गों पर हों।

मध्य एशिया के औद्योगिक केन्द्र :

मध्य एशिया में उद्योग अत्यन्त सीमित व बिखरे रूप में है। प्रधान उद्योग केन्द्र ताशकन्द (वस्त्रोद्योग) क्रस्नोवोड्स्क (तेल शोधन तथा पैट्रोकेमीकल) समरकंद एवं तिबिलिसी आदि हैं। सोवियत समय में यहां भी विस्तृत सर्वेक्षण हुआ जिसके फलस्वरूप यहां पैट्रोल, कोयला एवं गैस की राशियां मिलीं। मनुसारण परम्परागत रूप से था जिसे वैज्ञानिक स्तर पर प्रारम्भ किया गया। सिंचाई बढ़ाकर कपास-उत्पादन का विस्तार किया गया। पिग-आयरन एवं इस्पात यूराल प्रदेशों से लाने की व्यवस्था की गई। फलतः यहां इन्जीनियरिंग, मशीन टूल्स, औजार, खनिज खादों तथा खाद्यपदार्थों सम्बन्धी अनेक कारखाने पिछले 3–4 दशकों में स्थापित किए गए हैं।

ट्रांस कॉकेशिया एवं काकेशस के औद्योगिक केन्द्र :

क्रांति से पूर्व आधुनिक उद्योगों में यहां तेल-शोधन उद्योग प्रमुख था जो बाकू-मैकोपग्रोजनी क्षेत्रों में पाये जाने वाले तेल के आधार पर विकसित हुआ। सोवियत समय में यहां भी सर्वेक्षण हुए जिसके फलस्वरूप कई धातु व अधातु खनिज मिले हैं। इन प्राकृतिक संसाधनों के आधार पर ही यहां के उद्योगों का स्वरूप निर्धारित किया गया है। तेल-शोधक-केन्द्रों में पैट्रो केमीकल उद्योग के प्लांटस लगाए गए हैं। इस उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र बाकू है। ट्रांस कॉकेशिया में लोह-अयस कोयला व मिश्रण की धातुएं मिली हैं जिनके आधार पर जार्जिया (रुस्तावी) में लौह-इस्पात उद्योग स्थापित किया गया है जिसमें पाइप, ट्यूब, तेल खनन एवं तेल शोधन के उपकरण तैयार किए जाते हैं। ट्रांस कॉकेशिया सोवियत संघ का एक ऐसा प्रदेश है जहां परम्परागत रूप से तीनों वस्त्र सम्बन्धी कच्चे माल—कपास, ऊन, रेशम, पैदा की जाती रही है। इनके उपयोग के लिए कई छोटी-छोटी वस्त्र मिलें स्थापित की गई हैं। यहां फल व अंगूर बहुत पैदा होते है। अतः शराब के कई कारखाने है। काकेशस शृंखला में उपलब्ध चूने के आधार पर सीमेंट उद्योग विकसित हुआ है। यहां का सीमेंट केन्द्र नोवोरोसियस्क

सोवियत संघ में सर्वाधिक सीमेंट उत्पादित करने वाला नगर है। खाद्यपदार्थों सम्बन्धी विविध उद्योग विकसित हैं।

सुदूर पूर्व के औद्योगिक केन्द्र :

साइबेरिया के पूर्वी हिस्से में कुछ स्थानों पर लौह, कोयला व रासायनिक पदार्थ मिले हैं। टिम्बर तो पर्याप्त मात्रा में है ही। इन संसाधनों का उपयोग व क्षेत्रीय विकास की दृष्टि से पूर्वी साइबेरिया में कुछ स्थानों पर उद्योग विकसित किए गए हैं। इनमें दो-इर्कुटस्क व अमूर-उसूरी क्षेत्र ज्यादा उल्लेखनीय हैं। प्रथम क्षेत्र में भारी रासायनिक व इंजीनियरिंग उद्योग केन्द्रित हैं। कोयला एवं नमक स्थानीय रूप से मिल जाता है। धातु ट्रांस-साइबेरियन रेल्वे द्वारा उपलब्ध हो जाती है। इर्कुटस्क सबसे बड़ा उद्योग केन्द्र है। अमूर-उसूरी क्षेत्र में इस्पात, जलयान निर्माण, कागज एवं लुग्दी उद्योग विकसित हैं। इस प्रदेश में खाद्य पदार्थ सम्बन्धी विशेषकर मछली के विविध उत्पादन तैयार करने वाली अनेक फैक्ट्रियाँ हैं जो यत्र-तत्र बिखरी है। खाबारोस्क में इंजीनियरिंग, तेल शोधन एवं जलयान निर्माण सम्बन्धी उद्योग हैं। व्लाडीवोस्टक में विविध प्रकार के जलयान-स्टीमर्स एवं मत्स्याखेट सम्बन्धी जलयान तैयार किए जाते हैं। इस प्रदेश के जलयान उद्योग केन्द्रों को इस्पात कोमसोमोल्स्क इस्पात केन्द्र से उपलब्ध हैं।

□□□

सोवियत संघ : यातायात

(Transport)

सोवियत संघ जैसे विशालाकार देश में, देश के विभिन्न दूरस्थ भागों में स्थित प्राकृतिक संसाधनों के सदुपयोग, नए साधनों की खोज व उनका दोहन (उपयोजन) औद्योगिक विकास, कृषि विस्तार एवं समस्त देश को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में बाँधने के लिए एक अच्छी और सुव्यवस्थित यातायात का होना अतीव आवश्यक है। सोवियत समय में इस आवश्यकता की ओर विशेष ध्यान दिया गया है।

1982 में सोवियत संघ में पक्की सड़कों की लम्बाई 7,61,000 कि. मी. थी। इन सड़कों पर इस वर्ष 25,900 मिलियन वजन ढोया गया तथा 43,691 मिलियन यात्रियों ने यात्रा की। उल्लेखनीय है कि यातायात के विविध स्वरूपों का विकास मुख्यतः क्रान्ति के बाद के वर्षों में हुआ है। सही तुलनात्मक रूप के अध्ययन के लिए यह वांछनीय है कि कुछ प्रतिनिधि वर्षों (1913, 40, 50 तथा 68) में कुल ढोये गये माल व यात्रियों की मात्रा एवं संख्या पर नजर डाली जाये। निम्न सारणियों से यह स्पष्ट है।

सोवियत रूस में माल-परिवहन

(हजार मिलियन टन-किलोमीटर्स में)

(प्रकोष्ठ में कुल यातायात का प्रतिशत भाग)

	1913	1940	1950	1968
रेल्वे	76.4(60.6)	415.0(85.1)	602.3(84.4)	2274.8(66.5)
सड़क	0.1 (0.1)	8.9 (1 8)	20.1 (2.8)	187.1 (5.5)
भीतरी जल	28.9(22.9)	36.1 (7.4)	46.2 (6.5)	155.4 (4.5)

यातायात समुद्र	20.3(16.1)	23.8 (4.9)	36.7 (5.6)	586.8(17.1)
वायु यातायात	— (—)	न (न)	0.1 (न)	1.8 (0.1)
पाइप लाइन	0.3 (0.2)	3.8 (0.8)	9.4 (0.7)	215.9 (6.3)
योग	126 0(100.0)	487.6(100.0)	713.3(100.0)	3421.8(100.0)

न = नगण्य

जैसाकि सारणियों से भी स्पष्ट है यातायात के इस भारी विकास के साथ-साथ यातायात के विभिन्न अंगों के आनुपातिक महत्व में भी परिवर्तन आया है। क्रांति से पूर्व लगभग 80% माल परिवहन रेलों के द्वारा होता था, शेष के लिए भीतरी एवं तटवर्ती जल-यातायात उत्तरदायी था। दोनों युद्धों के अन्तराल में रेलों का महत्व तो बना रहा परन्तु जल-यातायात का थोड़ा सा कम हुआ और सड़कों का महत्व बढ़ा। द्वितीय विश्वयुद्ध और विशेषकर 1950 के बाद से रेलों के उपयोग-महत्व में थोड़ा सा ह्रास हुआ है जबकि सड़कें दिन प्रतिदिन ज्यादा महत्वपूर्ण होती जा रही हैं। यद्यपि अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के देशों की तुलना में सड़कों का अनुपातिक महत्व अब भी यहाँ कम है। पिछले दो दशकों में तरल पदार्थों (तेल आदि) का गैस परिवहन में पाइप लाइनों का प्रयोग भी बहुत तेजी से बढ़ा है। इन्हीं दिनों में यात्री परिवहन में तटवर्ती समुद्री यातायात में भी अपेक्षाकृत वृद्धि हुई है। यात्री-परिवहन में रेलों का उपयोग कम हो गया है। 1950 तक 90% यात्री परिवहन के लिए रेलें उत्तरदायी थीं। अब छोटी दूरियों में सड़कों तथा बड़ी दूरियों के लिए वायु-यातायात का प्रसार होता जा रहा है।

सोवियत रूस में यात्री-परिवहन

(हजार मिलियन यात्री-किलोमीटर्स में)
(प्रकोष्ठ में कुल यात्री-परिवहन का प्रतिशत)

	1913	1940	1950	1968
रेल्वे	30.3 (92.7)	98.0 (92.2)	88.0 (89.5)	254.1 (51.7)
सड़क	— (—)	3.4 (3.2)	5.2 (5 3)	168 5 (34 3)
भीतरी जल यातायात	1.4 (4.3)	3.8 (3.6)	2.7 (2.8)	5.5 (1 1)
समुद्र	1.0 (3.0)	0.9 (0.8)	1.2 (1.2)	1.7 (0.3)
वायु	— (—)	0.2 (0 2)	1.2 (1.2)	62.1 (12 6)
योग	32.7(100.0)	106.3(100.3)	98.3(100.0	491.9(100.0)

रेल्वे—साम्यवादी प्रशासन को जार प्रशासन से विरासत के रूप में 58,500 कि. मी. लम्बे रेल मार्ग मिले थे जो इन पिछले 60–65 वर्षों में दूने से अधिक (1,43,300 कि. मी. 1983 में) हो गए हैं। इस लम्बाई की तुलना सं.रा. अमेरिका के रेल मार्गों की लम्बाई (3,60,000 कि. मी.) से की जा सकती है। रेल मार्गों का सर्वाधिक घनत्व यूरोपियन रूस विशेषकर वोल्गा जल-प्रवाह के पश्चिम मे हैं जहाँ मास्को से चारों तरफ को रेल लाइनें फटती प्रतीत होती है। सोवियत समय में कई महत्वपूर्ण रेल लाइनों का निर्माण हुआ है जैसे, तुर्किस्तान-साइबेरिया रेल मार्ग जो मध्य एशिया को ट्रांस-साइबेरिया रेल्वे से जोड़ता है या वरकुटा रेल्वे जो पेचोरा कोल फील्डस को यूरोपियन रूस के उद्योग क्षेत्रों से जोड़ती है। चीन एवं रूस के बीच कई नये रेल मार्ग बनाये गये हैं। इनमें वह रेल मार्ग प्रमुख हैं जो उलान उडे से उलान-बैटोर (मंगोलियन गणराज्य की राजधानी) होता हुआ पेकिंग तक जाता है। यह 1955 में बन कर तैयार हुआ। मध्य-एशिया से सिनक्याग होते हुए कांसू प्रान्त के लनचाऊ (चीन) को भी रेल मार्ग बनाया जाने वाला था पर दोनों देशों में बढ़े हुए विवाद के कारण यह योजना ठप्प हो गई।

पिछले कुछ वर्षों से एक प्रवृत्ति देखने में आ रही है नये रेल-मार्ग के निर्माण को (अस्थायी रूप से) सीमित कर पुराने मार्गों के ही विकास एवं सुधार पर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। लगभग तीन-चौथाई रेल-मार्गों को दोहरा कर दिया गया है। 95 प्रतिशत माल परिवहन, डीजल या विद्युत चालित एन्जिनों के द्वारा संचालित किया जाता है। 1969 के अंत तक 1,05,000 कि० मी० लम्बे मुख्य रेल मार्गों को विद्युत या डीजल संचालित मार्गों में बदल दिया गया था। इस वर्ष 96% माल ऐसे मार्गों पर ही ढोया गया।[31] संकेत व संचालन विधियों में भी सुधार हुआ। इन सबसे सोवियत संघ की रेल्वेज की क्षमता बढ़ गई है जो माल-परिवहन एवं यात्री-परिवहन में 1950 की तुलना में लगभग तीन गुनी एवं दुगुनी हो गई है। परिवहन घनत्व (ट्रैफिक डेन्सिटीज) रूसी रेलों में विश्व में सर्वाधिक है। सर्वाधिक व्यस्त एवं प्रयोगित रेल-मार्ग वे हैं जो पूर्वी यूक्रेन, यूराल, कारागांडा, कुजबास बेसिन एवं मास्को के औद्योगिक प्रदेशों को जोड़ते हैं। सारे ढोये जाने वाले माल में 85% भाग भारी परन्तु कम कीमत वाले सामान का होता है जिसमें कोयला-कोक (25%) भवन निर्माण पदार्थ (25%) अयस एवं धातु (14%), पैट्रोल उत्पादन (9%), टिम्बर (6%), अनाज (4%) तथा उर्वरक (?%) प्रमुख है।

---

31. Statesman year book 1984-85 Macmillan.

सप्तवर्षीय योजना में ट्रांस साइबेरियन, मास्को-गोर्की-स्वर्ड लोव्स्क, मास्को कजान-स्वर्डलोव्स्क, मास्को-रोस्टोव-कॉकेशस, मास्को-डोनेत्ज-लेनिनकान-लेनिनग्राद तथा मास्को बेकाल रेल मार्गो का विद्युतीकरण किया गया। 1980 में रूसी रेलों ने माल-परिवहन का 60% एवं यात्री-परिवहन का 40% भाग ढोया।

प्रशासन की सुविधा के लिए समस्त रेल मार्गों को 32 खण्डों में विभाजित किया हुआ है।

बैकाल-अमूर मैजिस्ट्रल प्रोजेक्ट (BAM) सोवियत संघ रेल्वेज की सर्वाधिक महत्वाकांक्षी योजना है। लीना नदी पर स्थित लीना नगर से प्रारम्भ होकर यह रेलमार्ग ग्रामूर नदी पर कोमसोमोल्स्क नगर तक जायेगा। अपनी पूरी लम्बाई (3,145 कि० मी०) में यह रेल-मार्ग दोहरी पटरी वाला एवं विद्युत संचालित होगा। यह रेल-मार्ग ट्रांस साइबेरियन रेल-मार्ग के उत्तर में स्थित है तथा पूर्वी बन्दरगाहों को जोड़ने वाला प्रमुख मार्ग होगा। अपनी पूरी लम्बाई में यह रेल-मार्ग हिमाच्छादित प्रदेशों से गुजरता है।

भीतरी जल-यातायात :

नदी एवं नहरें ऐतिहासिक समय से ही रूस में यातायात का महत्वपूर्ण साधन रही हैं। यद्यपि अब इनके द्वारा ढोये जाने वाला सामान कुल माल-परिवहन का केवल 5 प्रतिशत भाग बनता है। (1913 में यह प्रतिशत 23 था) परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि इनका उपयोग घटा है। क्रांति के बाद के समय में इनके द्वारा ढोये गये माल की मात्रा चौगुनी हो गई है। यातायात योग्य भीतरी जल मार्गों की लम्बाई 1,42,000 कि. मी. है जिसमें से 79,000 कि. मी. लम्बे नदी-मार्ग व शेष नहरी-मार्ग हैं।

एशियाटिक रूस में, विशेषकर ट्रांस-साइबेरियन रेल लाइन के उत्तर में आर्कटिक सागर की ओर बहने वाली विशाल नदियां यातायात की प्रधान साधन हैं। इसके बावजूद इनमें ढोया जाने वाला माल बहुत कम होता है। ये नदियाँ कम विकसित भागों में होकर जमे हुए समुद्रों की ओर बहती है। साल में 5–6 महीने जमी रहती हैं। इनकी बहाव दिशा दक्षिण से उत्तर की ओर है जबकि नव-विकसित आर्थिक केन्द्रों की विस्तार दिशा पूर्व-पश्चिम है। इस दृष्टि से यूरोपियन रूस की नदियाँ—वोल्गा, डॉन, नीपर, पेचोरा आदि महत्वपूर्ण हैं। पीटर महान् के समय से ही इन नदियों को विविध लम्बाई की नहरों द्वारा जोड़कर भीतरी जल-यातायात को सुव्यवस्थित करने का क्रम निरन्तर रहा है। सोवियत समय में भी कई लम्बे नहरी मार्ग बनाये गये है जिनमें बाल्टिक को श्वेत सागर से जोड़ने वाली नहर (235 कि. मी.), मास्को-वोल्गा कैनाल (113 कि. मी.), वोल्गा-डॉ नहर (110 कि. मी.) अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं।

वोल्गा रूस का सबसे बड़ा नाव्य जल प्रवाह देश की समस्त नाव्य जल-धाराओं की लगभग एक-चौथाई लम्बाई में विस्तृत है। वोल्गा एवं उनकी सहायक नदियाँ तथा जुड़ी हुई नहरें सोवियत रूस के 70 प्रतिशत भीतरी जल यातायात के लिए उत्तरदायी हैं। इतने अधिक उपयोगी होने के कारण इस जल-प्रवाह की मध्यवर्ती स्थिति है। वोल्गा जल-प्रवाह का विस्तार बाल्टिक से लेकर कैस्पियन और काले सागर तक तथा मास्को से लेकर यूराल तक है। नहरों द्वारा वोल्गा को सुखोना नदी (उत्तरी द्वीना की सहायक, उत्तरी द्वीना के मुहाने पर श्वेत सागर का आर्कंजेल बन्दरगाह स्थित है) तथा ओनेगा एवं लैडोगा झीलों से जोड़ दिया गया है। उल्लेखनीय है कि लैडोगा झील नेवा नदी द्वारा लेनिनग्राद और बाल्टिक सागर से जुड़ी है। इधर ओनेगा झील से एक नहर मुर्मांस्क बन्दरगाह तक जाती है। इस प्रकार उकेर में वोल्गा क्रम को बेरेंट, बाल्टिक तथा श्वेत सागर से धीरे-धीरे जोड़ दिया गया है।

वोल्गा कैस्पियन सागर में गिरती है। कैस्पियन सागर एक भीतरी जलाशय है। निकटवर्ती काले सागर में होकर भूमध्य सागरीय अन्तर्राष्ट्रीय जल-मार्गों में पहुँचा जा सकता है। अतः वोल्गा नदी को वोल्गाग्राद पर 110 कि. मी. लम्बी वोल्गा-डॉन नहर द्वारा डॉन नदी से जोड़ दिया गया है जो काले सागर में गिरती है। वोल्गा-डॉन जलमार्ग (540 कि. मी.) 1952 से जल यातायात के लिए खोल दिया गया है। वोल्गा-डॉन जलमार्ग 110 कि.मी. तक तो नहर के रूप में (वोल्गा-डॉन नहर) है। शेष लम्बाई में डॉन नदी को और भी गहरा तथा चौड़ा करके आधुनिक जलयानों के लिए उपयुक्त बना लिया गया है।

सारांशतः सोवियत संघ के भीतर जल-यातायात पर वोल्गा जल-प्रवाह का पूर्ण प्रभुत्व है। यह यूरोपियन रूस के उत्तर एवं दक्षिण में स्थित सभी सागरों से जोड़ दिया गया है। जोड़ने वाली नहरों या नदियों को आधुनिक यातायात के लिए उपयुक्त बनाया गया है। 1 अक्टूबर 1964 को बाल्टिक-वोल्गा जलमार्ग (2340 कि.मी.) जल यातायात के लिए खोला गया। यह बाल्टिक तट पर स्थित क्लेईपेदा को नीपर के मुहाने पर स्थित काहोव्का से जोड़ता है। इस जलमार्ग में होकर 5,000 टन भार के जलयान आसानी से गुजर सकते हैं। ऊपरी वोल्गा पर स्थित राईबिस्क को एक नहर द्वारा लेनिनग्राद से जोड़ा गया है। इस प्रकार 18वीं शताब्दी की इस नहर को पूर्णतः नये रूप में प्रस्तुत किया गया है। मैरीन्स्की नामक नहर का सम्पूर्ण कार्य सप्तवर्षीय योजना में पूरा हुआ। बाल्टिक-श्वेत नहर 1930 तथा ऊपरी वोल्गा-मास्को नहर 1937 में तैयार हुई। इस प्रकार सोवियत समय में वोल्गा भीतरी यातायात क्रम को सब दृष्टियों से पूर्ण एवं अनुकूल बनाने का प्रयत्न किया गया है।

मध्य एशिया में भी कुछ बड़ी, यातायात के लिए उपयुक्त नहरों का निर्माण किया गया है। 1962 में तुर्कमेनिस्तान गणराज्य की नहर, जो कराकुम रेगिस्तान को काटते हुए चलती है, बनकर तैयार हुई। एक दूसरी नहर आमू नदी पर स्थित बूसाग से लेकर आर्कनान तक फैली है जिसे कैस्पियन सागर तक बढ़ाने की योजना कार्यरत है।

समुद्री यातायात—प्रकृति ने सोवियत संघ को महाद्वीपीय बनाया है। निस्सन्देह, यहाँ की तटरेखा लम्बी है परन्तु ज्यादा उपयोगी नहीं है। उत्तर में आर्कटिक महासागरीय तट यातायात की दृष्टि से व्यर्थ है। इसी प्रकार प्रशान्त तटीय व्यापार का भी कोई खास महत्व नहीं रहा क्योंकि उसका पृष्ठ प्रदेश आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा रहा है। यद्यपि सोवियत समय में इसके विकास के साथ-साथ तट का महत्व भी बढ़ता जा रहा है। ब्लाडी वोस्टक चूँकि कुछ महीने जम जाता था अतः अब साल भर खुले रहने वाला एक नया बन्दरगाह नॉखोदका विकसित किया जा रहा है। वस्तुतः रूस के सामने, जैसाकि प्रस्तुत अध्ययन के परिचय में दिया गया है, सदा से ही खुले समुद्रों की समस्या रही है और इसके लिए पीटर महान् के समय से ही प्रयत्न होते रहे हैं। सोवियत समय में ही बाल्टिक सागर में होकर अटलान्टिक महासागरीय, वोल्गा-डॉन नहर और काले सागर के माध्यम से भू-मध्य सागरीय तथा हिन्द महासागरीय व्यापार एवं यातायात विकसित किए गए हैं। वर्तमान में आधे से ज्यादा समुद्री व्यापार काले सागर में होकर होता है। जहाँ ओडेसा, फ़ादनोव, निकोलायेव, नोवोरोसिस्क तथा बातूमी आदि प्रधान बन्दरगाह हैं। कैस्पियन सागर के बन्दरगाहों बाकू, अस्त्राखान, माखा चाल्का तथा क्रैस्नोवोड्स्क से पैट्रोल व सम्बन्धित उत्पादन निर्यात किए जाते हैं। बाल्टिक तट पर प्रधान बन्दरगाह लेनिनग्राद, रीगा, तालिनलेपाजा तथा कालिनिनग्राद आदि हैं। इनमें अन्तिम दो ही वर्ष भर खुले रहते हैं। उत्तर में बेरेन्ट सागर पर स्थित मुर्मास्क बन्दरगाह उत्तरी एटलान्टिक ड्रिफ्ट के कारण साल भर खुला रहता है।

1977 में सोवियत व्यापारिक जहाजी बेड़े में छोटे-बड़े सब मिलाकर 7,000 जलयान थे। उल्लेखनीय है कि रूसी जहाजी बेड़ा अपेक्षाकृत नया है जिसे मुख्यतः 1957 एवं 1966 के 10 वर्षों में खड़ा किया गया है। 1977 में यहाँ का जहाजी बेड़ा 16 मिलियन ग्रो० र० टन भार का था जिसकी भार-वाहन क्षमता 20 8 मि० टन थी। परम्परागत रूप से रूस एक थलीय शक्ति वाला देश रहा है। भौगोलिक वातावरण ही इसका कारण है। दक्षिण में थलीय सीमाओं तथा धुर पूर्व एवं पश्चिम के समुद्रों के जमे होने के कारण रूस का समुद्री व्यापार भूतकाल में कभी विकसित नहीं रहा। एक खुले समुद्री मार्ग की उसे सदा जरूरत

रही है जो उसकी भू-राजनीति में स्पष्टतया प्रतिबिम्बित है। पिछले वर्षों में, निस्सन्देह, रूस ने कुछ बन्दरगाह विकसित किये है जिनमें वोस्तोचनी (धुर पूर्व) ग्रिगोरेव्स्की (काला सागर) मुर्मास्क तथा आर्केन्जेल (आर्कटिक सागर) उल्लेखनीय है।

सड़कें—क्रांत्युत्तर अवधि में हुए पर्याप्त विस्तार के बावजूद सोवियत संघ का सड़क यातायात अभी भी विकासशील स्थिति में ही माना जाता है। कुल लगभग 900,000 मील (1,440,000 कि. मी.) लम्बी सड़कों में मोटर-परिवहन योग्य अच्छी सड़कें केवल 5,00,000 मील (7,61,000 कि.मी.) लम्बाई की है। यह लम्बाई देश के विस्तार को देखते हुए बहुत कम है। सीमेंट या एस्फाल्ट की सड़कें तो केवल 1,80,000 कि. मी. है। लेकिन ये आंकड़े भी पर्याप्त प्रगति के द्योतक हैं क्योंकि 1945 में इस श्रेणी की सड़कें केवल 10,200 कि. मी. लम्बी थीं। परम्परागत सड़कें यूरोपियन रूस में ही थी वे भी बहुत छोटी-छोटी। पिछले दशकों में अनेक लम्बी सड़कें बनी हैं जिनमें साईबेरिया (ट्रांस-साइबेरियन रेलवे के स्टेशन से उत्तर की ओर बनाई गई जैसे आल्दान हाईवे जो मचूरिया सीमा पर स्थित नेवर नगर से उत्तर में याकुत्स तक जाता है) मध्य एशिया व कॉकेशिया में बनी सड़कें उल्लेखनीय हैं। यूरोपियन रूस में महत्वपूर्ण सड़को के सुधार पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित किया गया है। साधारणतः माल-परिवहन में सड़को का महत्व अब भी कम (5 प्रतिशत) है। इनका उपयोग रेलवे यातायात के पूरक के रूप में है। हाँ, यात्री-परिवहन में अवश्य सड़कों का उपयोग व महत्व बढ़ा है। रेलवे यातायात का एकाधिकार समाप्त होकर सड़कों का शेयर प्रतिशत बढ़ा है। दोनों का प्रतिशत अब क्रमशः 52 एवं 34 है। देश के विशालाकार होने के कारण माल-परिवहन में तो भविष्य में भी रेलवे-यातायात का ही महत्व बना रहेगा, यह निश्चित है।

वायु-यातायात—माल-परिवहन में वायु यातायात का प्रयोग अभी नगण्य मात्रा में है। हां, यात्री-परिवहन में इसका उपयोग एवं महत्व तेजी से बढ़ा है। देश के विस्तार के कारण देश का भीतरी वायु यातायात तेजी से बढ़ा है। साइबेरिया, कॉकेशिया व मध्य एशिया के दूरस्थ स्थानों को वायु सेवाएँ नियमित रूप से प्रारम्भ हो गई हैं। मास्को से किसी भी सोवियत संघ के नगर को 12 घण्टे में पहुँचा जा सकता है। भीतरी वायु सेवाएँ नियमित रूप से लगभग 8·1 लाख कि. मी. की लम्बाई के मार्गों पर उपलब्ध है। साइबेरिया के धुर पूर्व में मास्को-अनादिर विमान सेवा (1 फरवरी 1941 को चालू) द्वारा पहुँचा जा सकता है जो आर्केजेल, इंगार्का, खटंगा, टिक्सी खाड़ी तथा केपश्मिट में होकर

सोवियत संघ : विदेश व्यापार
(Foreign Trade)

सोवियत संघ में समाजवादी व्यवस्था होने के कारण विदेश व्यापार पर सरकार का अधिपत्य है। सरकार प्रतिवर्ष विविध विभागों से आई हुई मांग एवं उत्पादन रिपोर्ट के आधार पर आयात एवं निर्यात के स्वरूप तथा मात्रा का आयोजन करती है। उसी के आधार पर विदेश मन्त्रालय आयात-निर्यात का लाइसेंस बनाता है। विविध वस्तुओं के व्यापार के लिए श्रेणियाँ बनाई गई हैं और प्रत्येक श्रेणी से सम्बन्धित व्यापार का उत्तरदायित्व उसी के लिए विशेष रूप से गठित एक 'राजकीय निगम' का होता है। इन्हीं निगमों के द्वारा विभिन्न देशों के साथ व्यापारिक समझौते किए जाते हैं। वर्तमान में सोवियत संघ में इस प्रकार के लगभग 30 आयात-निर्यात संगठन कार्य कर रहे हैं।

क्रान्ति के प्रारम्भिक वर्षों में, खासकर स्टैलिन की लोह-पर्दा नीतियों के कारण, *सोवियत संघ का व्यापार बहुत कम था।* 1938 में व्यापार की मात्रा 1913 की मात्रा से एक-तिहाई कम थी। 1940 और विशेषकर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद रूस का व्यापार बहुत तेजी से बढ़ा। इसका कारण विश्व की राजनैतिक परिस्थितियाँ थीं। शीत युद्ध का जमाना था। विश्व दो गुटों में विभक्त हो गया था। अतः समाजवादी देश परस्पर व्यापार में विश्वास रखते थे और इनका ज्यादातर सम्बन्ध रूस या चीन से था। यथा, अल्बानिया का 97% बाहरी मंगोलिया का 82%, पूर्वी जर्मनी का 45%, चीन का 44% तथा चैकोस्लोवाकिया का 60% व्यापार रूस से था। यही अवस्था अन्य साम्यवादी देशों—पोलैंड, हंगरी, बल्गारिया, रूमानिया, यूगोस्लाविया आदि की थी। इसका परिणाम यह हुआ कि रूस का व्यापार मूल्य 10 वर्षों में ही पाँच गुना हो गया। 1946 में विदेश-व्यापार मूल्य 1·8 मिलियन डालर था जो बढ़कर 1957 में 8·3 मिलियन डालर हो गया।

पिछले दशकों (1960–80) में उपरोक्त ढाँचे में कुछ अन्तर आया और यह अन्तर भी विश्व की राजनैतिक परिस्थितियों के बदलाव के कारण ही हुआ।

चीन के साथ रूस के सम्बन्ध अच्छे नहीं रहे। कुछ देश (जैसे अल्बानिया) जो साम्यवादी खेमे में चीन के ज्यादा नजदीक थे उनकी घनिष्ठता भी रूस से घट गई। पूर्वी यूरोप के कुछ साम्यवादी देशों (यूगोस्लाविया, रूमानिया) ने अगर पश्चिमी देशों के साथ सांस्कृतिक और व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने का साहस कर एक नए रास्ते की शुरुआत की तो फ्रांस एवं पश्चिमी जर्मनी (विलीब्रांट युग) जैसे पश्चिमी देशों ने समाजवादी देशों की तरफ उदारता का रुख अपना कर उनसे व्यापारिक समझौते किए। इस सब का प्रभाव यह पड़ा कि साम्यवादी देशों के बीच व्यापार का जो आकार था उसमें कमी आई। रूस भी इससे प्रभावित हुआ। परन्तु उसके व्यापारिक सम्बन्ध एशियाई (जैसे भारत) व अफ्रीकी देशों से बढ़े। अनेक देशों के व्यापारिक मंडलों की मॉस्को यात्रा एवं सोवियत संघ के सभी देशों से शान्ति-सन्धि के प्रस्ताव जैसे कदमों को देखकर तो लगता है कि वह दिन दूर नहीं जबकि सोवियत संघ का व्यापार पश्चिमी खेमे के प्रमुख देशों से भी होने लगेगा। वर्तमान में हालत यहां तक आ पहुँची है कि लगभग एक तिहाई व्यापार समाजवादी खेमे से बाहर के देशों के साथ होता है।

पिछले दशकों में हुए विकास के फलस्वरूप सोवियत आयात-निर्यात के स्वरूप में भी अन्तर आया है। 1913 में कुल आयात का 51% भाग ईंधन व कच्चे मालों से सम्बन्धित होता था जबकि 1968 में यह प्रतिशत केवल 22.5 था। इसी अवधि में मशीनरी व उपकरणों का आयात प्रतिशत 16.6 से बढ़कर 36.9 एवं उपभोक्ता वस्तुओं का प्रतिशत 10.3 से बढ़कर 19.9 हो गया। खाद्यान्नों की निर्यात मात्रा में कमी आई है क्योंकि अब निर्यात के लिए अन्य कई प्रकार के उत्पादन हैं। 1940 तक यहां के आयातों में मशीनों एवं औद्योगिक यन्त्रों का बाहुल्य रहा परन्तु जैसे-जैसे यहां औद्योगिक विकास होता गया इनमें कमी आई और आजकल यहां के आयातों में उष्ण कटिबंधीय उपजों चाय, काफी, रबर, चावल, खालें आदि की प्रमुखता रहती है। सैनिक सज्जा की दृष्टि से रूस प्राकृतिक रबर भारी मात्रा में आयात करता है।

निर्यात में, जैसाकि स्वाभाविक है, औद्योगिक उत्पादनों (50% से अधिक का बाहुल्य रहता है। यहां से मुख्यत: पिग आयरन, इस्पात, क्रूड आयल, कोयला मेंगनीज अल्युमीनियम तथा काष्ठ-उत्पादन निर्यात किए जाते हैं। वर्तमान में रूस विश्व के प्रमुख मशीन व औद्योगिक उपकरण निर्यात करने वाले देशों में से एक है। लोह-मयम के निर्यात में इसने कनाडा, फ्रांस व स्वीडन को पीछे छोड़ दिया है। कागज, लुग्दी, गत्ता आदि के निर्यात में रूस कनाडा [illegible] नम्बर पर है। कृत्रिम रबर, रासायनिक खादें, कपास, पट्रोलियम, अनाज एवं [illegible] भी यहां के निर्यात में उल्लेखनीय स्थान बनाते हैं। इस समय रूस दुनिया की एक

तिहाई नापथेलेन तथा 20% तारपीन निर्यात करता है। यह दुनियाँ का चौथे नम्बर का कृत्रिम रबर, दूसरे नम्बर का सन (फ्लैक्स) एवं तीसरे नम्बर का कपास निर्यातक देश है। निम्न सारिणी से 1982 के प्रमुख निर्यातों का स्वरूप स्पष्ट है।

सोवियत संघ दुनियाँ के उन इने-गिने भाग्यवान देशों में से एक है जिनका निर्यात-मूल्य आयात मूल्य की अपेक्षा ज्यादा रहता है। यह नए सर्वेक्षणों से प्राप्त विविध संसाधनों एवं औद्योगिक विकास के कारण ही सम्भव हो सका।

सोवियत संघ के प्रधान निर्यात पदार्थ (1982)

निर्यात पदार्थ	मात्रा	निर्यात पदार्थ	मात्रा
लौह अयस (मि० टनों में)	33.2	वनस्पति तेल (हजारों टनों में)	113.9
ढाला हुआ स्पात (मि० रूबल्स में)	1614.2	ट्रैक्टर्स (मि० एवंरूबल्स में)	252.1
तेल एवं तेल-उत्पाद (मि०रूबल्स में)	25,382·8	मोटर कारें (हजारों में)	252.4
कागज (हजार टनों में)	691.2	क्लॉक एवं घड़ियाँ (मि० में)	21.7
कपास (हजार टनों में)	948.8	अनाज (मि० रूबल्स में)	284.8

□□□

सोवियत संघ : जनसंख्या
(Population)

वृद्धि :

अंतिम अधिकृत जनगणना (1979) के अनुसार सोवियत संघ की जनसंख्या 262.4 मिलियन थी जिसमें से 122.3 पुरुष एवं 140.1 मिलियन महिलाएँ थीं। कुल जनसंख्या का एक बड़ा भाग (163.6 मिलियन) नगरों में निवास कर रहा था। लगभग 38% जनसंख्या (98.6 मिलियन) ग्रामीण क्षेत्रों में बसी हुई थी। 1970 एवं 1979 के नौ वर्षों में शहरी जनसंख्या में 27.6 मि० की वृद्धि हुई जो प्राकृतिक वृद्धि एवं ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर पलायन के फलस्वरूप थी। अनुमानित आँकड़ों के आधार पर जनवरी 1983 में सोवियत संघ की कुल जनसंख्या 271.2 मिलियन थी। इसमें से 126.9 मि० पुरुष तथा 144.3 मि० महिलायें थीं। शहरों में इनमें से 174.6 मिलियन लोग निवास कर रहे थे तथा 96.6 मिलियन लोग गाँवों में बसे हुए थे।

इस प्रकार वर्तमान में रूस दुनिया का तीसरे नम्बर (चीन, भारत के बाद का सर्वाधिक आबादी वाला देश है लेकिन जनसंख्या का औसत घनत्व केवल 25 मनुष्य प्रति वर्ग मील हैं। स्पष्ट है कि दुनिया का यह सबसे विशाल देश अपने आकार की तुलना में बहुत कम जनसंख्या को आश्रय दिए हुए है। इसका क्षेत्रफल पृथ्वी के थल-भाग का लगभग 1/6 है जबकि इसमें दुनिया की केवल 1/15 जनसंख्या निवास कर रही है। सोवियत रूस ग्रेट ब्रिटेन से क्षेत्रफल में 90 गुना बड़ा है परन्तु जनसंख्या केवल चार गुनी ही अधिक है। योरूपियन रूस में अर्थात् यूराल के पश्चिम में देश की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या बसी है। दूसरे शब्दों में रूसी बेलोरसियन एवं यूक्रेनियन लोग मिलकर के सोवियत संघ की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या प्रस्तुत करते हैं। शेष एक चौथाई जनसंख्या में अन्य सकड़ों जाति समूह है।

सोवियत रूस दुनिया के उन इने गिने देशों में से है जहाँ दो शताब्दी पूर्व ही जनगणनाओं का क्रम प्रारम्भ हो गया था। यहां की प्रथम जनगणना पीटर

प्रथम के समय में 1724 में हुई। उस समय रूसी साम्राज्य की जनसंख्या 3 तथा 4 करोड़ के बीच में थी। 1897 के बाद जार शासन में नियमित रूप से जनगणनाएँ होती रही कुछ प्रतिनिधि वर्षों की जनसंख्या निम्न प्रकार है।

1897	(रूसी साम्राज्य)	12.69	करोड़
1913	(रूसी साम्राज्य)	17.09	"
1913	(वर्तमान सीमाएँ)	15.92	"
1939	(जनगणना)	17.06	"
1940	(अनुमानतः)	19.17	"
1959	(जनगणना)	20.88	"
1970	(जनगणना)	24.1	"
1983	(अनुमानतः)	27.1	"

द्वितीय विश्व युद्ध में यहां की मानवता को भारी क्षति पहुँची, लगभग 17 मिलियन लोग मारे गये। यही नहीं इससे सम्भावित जन्म-मात्रा को भी हानि पहुँची। रूसी जनगणना विशेषज्ञों का अनुमान है कि अगर द्वितीय विश्व युद्ध न हुआ होता तो वर्तमान जनसंख्या लगभग 300 मिलियन से अधिक होती।

1979 की जनगणना से यह तथ्य स्पष्ट प्रकट हुआ कि सोवियत रूस की स्वाभाविक वृद्धि दर बहुत ऊँची है। हर वर्ष 3 मिलियन से अधिक लोग बढ़ जाते हैं। इस प्रकार प्रतिशत वृद्धि 1.7 है जो पश्चिम योरुप सं० राज्य अमेरिका एवं अफ्रेशिया के भी कई देशों से अधिक है। इतनी तेज वृद्धि का कारण जीवन स्तर ऊंचा उठने एवं चिकित्सा विज्ञान की प्रगति से जहाँ मृत्यु दर का कम होना है वहाँ साथ ही साथ जन्म दर का भी ऊँचा होना है। जार के समय में रूस की जन्म दर 40 प्रति हजार थी। वर्तमान में यह 25 प्रति हजार है, फिर भी पश्चिमी योरुप की तुलना में काफी अधिक है। जनसंख्या को बढ़ाने में सरकार की ओर से भी भरसक प्रोत्साहन मिला है। 1930 में सरकार की जनसंख्या नीति प्रकाशित हुई जिसमें स्पष्ट था कि देश को मानव शक्ति की जरूरत है। अतः जनसख्या तेजी से बढ़ाई जाए। गर्भपात को अवैध घोषित किया गया; तलाक को हतोत्साहित किया गया, सरकार ने गर्भिणी औरतों एवं नव शिशुओं के लालन पालन की विशेष व्यवस्था की तथा बड़े परिवारों को विशेष भत्ते दिए जाने लगे। 10 बच्चों या उससे अधिक वाली माताओं को वीरांगणा मां की पदवी से गौरवान्वित किया जाने लगा। इस श्रेणी की औरतों के चित्र व विवरण प्रकाशित कराए गए, उनको पारितोषिक दिए गए। इन सब साधनों से जन्म दर

में वृद्धि हुई। मृत्यु दर दिन प्रतिदिन घटती जा रही है जिसका औसत एक हजार पर केवल साढ़े छः का बैठता है। इन दिनों प्रत्येक वर्ष यहाँ 3.4 मिलियन लोग बढ़ जाते हैं।

ऊँची वृद्धि दर के अतिरिक्त यहाँ की जनसंख्या की दूसरी विशेषता उसमें स्त्रियों की अधिकता होना है। 1926 एवं 1939 की जनगणना के समय स्त्रियों का प्रतिशत 52 था जो बढ़कर 1959 में 55 हो गया। यह वृद्धि द्वितीय विश्व-युद्ध में मारे गए सैनिकों की ओर संकेत करती है। युद्ध में हुई मानव क्षति ने यहाँ के आयु ढाँचे को भी प्रभावित किया। 1959 की जनगणना के समय यहाँ की जनसंख्या में 32 वर्ष या उससे कम आयु के लोगों का बाहुल्य था जो द्वितीय युद्ध के समय बहुत बच्चे रहे होंगे। इस दृष्टि से रूस निस्संदेह बड़ा भाग्यवान है।

जाति समूह :

सोवियत संघ की जनसंख्या की तीसरी विशेषता उसमें अनेक जाति समुदायों तथा राष्ट्रीय तत्वों का होना है। अनुमानतः यहाँ 100-150 जातियों के लोग निवास कर रहे हैं। इनमें से कई मिलियन वाले जाति समुदाय जैसे रूसी, यूक्रेनियन आदि के अलावा ऐसे भी हैं जिनकी कुल संख्या 20,000 से अधिक नहीं है। 1926 में यहाँ 188 जाति समूह थे। 1939 में 20,000 से अधिक जनसंख्या वाले जाति समुदाय 49 थे। अगर इनमें उत्तरी साइबेरिया की घुमक्कड़ जातियाँ (जो 1944 में सोवियत संघ में शामिल कर ली गई) को भी जोड़ लिया जाए तो यह संख्या 54 हो जाएगी। 1959 में 108 जाति समूह जनगणना के अन्तर्गत थे जिनमें से 20,000 मनुष्यों से अधिक वाले समुदायों की संख्या 68 थी। भाषा की दृष्टि से इनका सही स्वरूप समझ में आता है।

सोवियत संघ की भाषाएँ एवं जाति समूह

(1919 की अन्तिम अधिकृत जनगणना के अनुसार)

भाषा परिवार	उप भाषा समूह	मुख्य भाषा एवं उसे प्रयोग में लाने वाला समुदाय	समुदाय की जनसंख्या (1000 में)
इण्डो यरोपियन	स्लाविक	रूसी	137,414
		यूक्रेनियन	42,330
		बेलोरशियन	9,515
	बाल्टिक	लैटवियन	1,400
		लिथुआनियन	2,945

सोवियत संघ
जाति समुदायों का वितरण

भाषा परिवार	उप भाषा समूह	मुख्य भाषा एवं उसे प्रयोग में लाने वाला समुदाय	समुदाय की जनसंख्या (1000 में)
	ईरानियन	तद्भिक	2,975
		ओसेशियन	410
		ताता	11
		कुर्दिश	59
	आर्मीनियन	आर्मीनियन	4,115
	रोमन्स	मोल्देवियन	3,025
तुर्की	तुर्की	तातार	6,354
		बश्कीर	1,425
		अजरबेजानी	5,512
		उजबेक	12,500
		कजाक	6,662
		खिरगिज	1,912
		तुर्कमैन	2,005
		याकुत	237
फिनिक	पूर्वी शाखा	कोमी	431
		मोर्देवियन	1,285
		चूवाश	1,815
		मारी	540
		उदमर्त	625
		सैमोइडी	23
	पश्चिमी शाखा	इस्टोनियन	989
		करेलियन	260
		लैप्स	2
कॉकेशियन	दक्षिणी	जार्जियन	3,618
	उत्तरी	अबखाज	65
		चेरकीज	30
		काबार्दियन	204
		चेचेन-इन्गुश	525
		डागेस्तान भाषा	947
मंगोलियन		बुरयात	253

	कालिमक,	106
मंचूरियन	तुगंज	25
पैलियेशियाटिक	साइबेरिया की छोटी-छोटी भाषाएं	—

तालिका से प्रकट है कि रूसी लोग समस्त सोवियत संघ की जनसंख्या का लगभग दो-तिहाई भाग बनाते हैं। एशियायी रूस में इनका प्रतिशत लगभग 60 है, तथा इतना ही यूरोपियन रूस में है। इनका सबसे ज्यादा प्रतिशत (83%) रूसी सोवियत समाजवादी गणराज्य में है। अन्य गणराज्यों में 25 से लेकर 35 तक इनका भाग है। यूक्रेनियन एवं बैलोरसियन समस्त देश की जनसंख्या का क्रमशः 18 एवं 4.5 प्रतिशत भाग बनाते हैं। इस प्रकार स्लाविक तत्व सोवियत रूस के 3/4 बसे भाग में विस्तृत है। द्वितीय श्रेणी के जाति समूहों में तुर्की तथा फिनिश लोग आते हैं जिनका सम्मिलित शेयर 11 प्रतिशत का है। तुर्की लोग (समस्त जनसंख्या का 8 प्रतिशत) ज्यादातर एशिया में फैले हैं जबकि फिनिश लोगों (3 प्रतिशत) का केन्द्रीयकरण मुख्यतर योरुपियन रूस में ही है। टुण्ड्रा प्रदेशों में भी इनका ही अंश है। अन्य में तातार, मंगोल, कजाक, खिरगीज तथा उजबेक लोग उल्लेखनीय है।

धर्म :

क्रान्ति से पूर्व जार शासन के समय आर्थोडौक्स चर्च को स्टेट की मान्यता प्राप्त थी और स्वयं जार इसका प्रधान होता था। क्रान्ति के बाद साम्यवादी प्रशासन में धर्म को राज्य द्वारा कोई प्रोत्साहन नहीं दिया गया। वरन् अनेक चर्चों एवं पूजागृहों को सामाजिक-भवनों (क्लब, पुस्तकालय, पुरातत्व संग्रहालय आदि) में परिवर्तित कर दिया गया। बहुत से नगरों और कस्बों में चर्च अब भी है परन्तु योजना के अनुसार जो नई कृषि एवं औद्योगिक बस्तियां बन रही हैं उनके 'प्लान' में कहीं भी चर्चों को जगह नहीं दी गई है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पुनः एक बार लहर उठी और लोगों ने धार्मिक स्वतन्त्रता के विषय में अपनी स्थिति चाही। सरकार की ओर से धर्म निजी मामला बतलाया गया। न कोई सरकारी धर्म है और न किसी धर्म को सरकार प्रोत्साहन देती है। इस समय 50 मिलियन लोग रूसी आर्थोडॉक्स चर्च के अनुयायी हैं जिसका प्रधान केन्द्र मॉस्को में है। अन्य धर्म स्थानीय महत्व के हैं जिनमें जार्जियन चर्च, ईवान्जैलीकल क्रिश्चियन बैप्टिस्ट तथा लूथेरन्स आदि उल्लेखनीय हैं।

जनसंख्या का क्षेत्रीय वितरण :

सोवियत समय में (1917) के बाद विभिन्न क्षेत्रों की जनसंख्या की मात्रा, सम्पूर्ण देश के प्रतिशत एवं स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है जिन्हें समझे बिना

जनसंख्या का वितरण स्पष्ट नहीं हो पाता। सुविधा के लिए सोवियत संघ को चार क्षेत्रों में विभाजित कर लेते हैं, ये हैं—योरुपियन रूस, साइबेरिया, काकेशिया तथा मध्य एशिया। निम्न सारिणी से इन प्रदेशों में होने वाले जनसंख्या सम्बन्धी परिवर्तन स्पष्ट परिलक्षित हैं। आंकड़े 1959 की अधिकृत जनगणना तक के हैं।

सोवियत संघ में जनसंख्या का क्षेत्रीय वितरण 1897-1959

	1897		1926		1939		1959	
	मिलि॰	%	मिलि॰	%	मिलि॰	%	मिलि॰	%
यूरोपियन रूस	97.6	83.6	116.9	70.5	129.9	75.9	152 8	73.2
ट्रांस काकेशिया	5.9	5.0	5.9	4	4.6	8.1	9 5	4.6
साइबेरिया तथा सुदूरपूर्व	5.7	4.9	10.5	7.2	16.7	9 8	23.6	11.3
मध्य एशिया	7.6	6.5	13.7	9.3	1[illegible].6	9.7	22 9	10.9
योग	117.2		147.0		170 6		208.8	

सोवियत रूस दुनियां के अत्यन्त कम बसे देशों में से एक है। यहाँ का जनघनत्व 25 मनुष्य प्रति वर्गमील है। 80 प्रतिशत जनसंख्या योरुपियन रूस में है। देश का तीन चौथाई भाग ऐसा है। जहाँ औसत घनत्व 5 मनुष्य प्रतिवर्गमील बैठता है। यह भाग एशियाटिक रूस में है पिछले दिनों में पश्चिमी साइबेरिया एवं मध्य एशिया में अवश्य जनसंख्या बढ़ी है परन्तु यह वृद्धि भी खनिज एवं औद्योगिक केन्द्रों तक ही सीमित है। बाकी समस्त एशियायी रूस अवसित या अल्पवसित है। इस भाग में जनसंख्या के विकास में भौगोलिक तत्व काफी सीमा तक बाधक रहे हैं। पर्वतों एवं जमे समुद्रों से घिरा यह विशाल भू-खण्ड अपनी भीषण ठंड, विस्तृत भाग में फैले जंगल, असंख्य नदी एवं झीलों तथा शुष्क जलवायु के कारण सदा उपेक्षित रहा है। क्रांति के बाद जब कई स्थानों पर खनिज भण्डारों का पता चला था तब पश्चिमी साईबेरिया में बंजर भूमि को साफ करके खेतों में परिवर्तित किया गया तभी इसमें मानवता का श्रीगणेश हुआ, अन्यथा जार के समय में केवल ट्रांस साइबेरियन रेल मार्ग के सहारे ही पतली सी पट्टी में बसाव था। धुर उत्तर में टुण्ड्रा प्रदेश तो अब भी जनशून्य सा ही है, केवल खनिज कैम्पों या टिम्बर केन्द्रों में ही कुछ मानवता मिलती है। समस्त साईबेरिया का औसत घनत्व 5-10 मनुष्य प्रतिवर्गमील से अधिक नहीं है। धुर

पूर्व में तटवर्ती पट्टी के सहारे सहारे जहाँ मानसूनी जलवायु के कारण कुछ अनुकूल दशाएं हैं मानवता का विकास हुआ है।

(ग्र) योरुपयिन रूस :

एशियाटिक रूस के विपरीत योरुपियन रूस में, विशेषकर वोल्गा के पश्चिम में जनघनत्व मध्य योरुप की तरह है जहाँ का औसत 250 मनुष्य प्रति वर्गमील है। डोनेतस्बेसिन एवं मध्य योरुपियन रूसी औद्योगिक पेटी में 500 तक पाया जाता है। इसी भाग में सोवियत रूस के ज्यादातर बड़े नगर विद्यमान है जिनमें मास्को (6,643,000) गोर्की (1,155,000) कीव (1,508,000) खार्कोव 1,170, 000)कजान (762,000) डोनेत्स्क (889,000) तथा ओड़ेसा (735,000) आदि विद्यमान हैं। दक्षिण में निचली नीपर एवं उत्तरी क्रीमिया प्रदेश में जन घनत्व अपेक्षाकृत कम है क्योंकि यह एक कृषि प्रधान भाग है जहाँ ज्यादातर ग्रामीण जनसंख्या निवास करती है। निकोलायेव (280,000) तथा खेरसन (210,000 दो बड़े नगर हैं। क्रीमिया में क्रीमिया पर्वतों के दक्षिणी भागों का बसाव पुनः घना हो जाता है। यहाँ याल्ता तथा आलूश्ता स्वास्थ्य केन्द्र है। योरुपियन रूस के उत्तरी भाग एवं बाल्टिक स्टेट्स में औसत घनत्व 100-125 मनुष्य प्रति वर्गमील है। बड़े-बड़े कस्बों के पास ज्यादा बसाव है। लेनिनग्राद (3,641,000 मिंस्क (717,000) कालिनिनग्राद (253,000) रीगा (658,000) तथा तालिन (320,000) इस प्रदेश के मुख्य नगर हैं। वोल्गा प्रदेश के उत्तरी भाग में बड़े नगरों के पास बसाव ज्यादा है। अन्यथा शेष भागों में छितरा (75 मनुष्य प्रति वर्गमील) है। वोल्गाग्राद के नीचे अर्द्ध-स्टेपी प्रदेश में बसाव और भी कम है। साराटोव (683,000) अस्त्राखान (342,000) एवं वोल्गाग्राद (700,000) सबसे बड़े नगर है।

वोल्गा एवं यूराल के बीच में घनी जनसंख्या केवल हाल में ही प्राप्त तेल क्षेत्रों में पाई जाती है। यहाँ के सभी कस्बे नए हैं। उदाहरण के लिए ओक्टे-बिस्की की जनसंख्या 1950-65 के 15 वर्षों में ही लगभग 70,000 हो गई है। यूराल प्रदेश की 17 मिलियन जनसंख्या का दो तिहाई भाग औद्योगिक कस्बों में निवास करता है। शेष भाग में अत्यन्त छितरा बसाव है। स्वर्डलोवस्क (919, 000) चेलिया बिनस्क (805,000) तथा पर्म (764,000) इस क्षेत्र के बड़े कस्बे हैं। मैग्नी-टोमोर्स्क (348,000) तथा नोवोटोरिस्क वस्तुतः पिछली 3 दशाब्दियों के ही नगर हैं। यूराल प्रदेश में सबसे अधिक घना बसा प्रदेश इसका मध्य भाग है जो अपेक्षाकृत नीचा भी है। इसमें लगभग 100 कस्बे हैं। पश्चिमी ढ़ाल प्रदेशों में ऊपरी कामा बेसिन के औद्योगिक केन्द्र (पर्म के चारों ओर) बेलावा घाटी तथा तेलकूप क्षेत्रों को छोड़कर अन्य सभी भाग पूर्वी ढ़ालों की बजाय कम

बसे हैं क्योंकि पूर्वी ढालों पर ही ज्यादातर खनिज एवं औद्योगिक केन्द्र हैं। यूरोपियन रूस का उत्तरी पूर्वी भाग यद्यपि साईबेरिया की तुलना में तो ज्यादा बसा है परन्तु अन्य यूरोपियन रूसी भागों की तुलना में अत्यन्त छितरा है। यहाँ की जनसंख्या लकड़ी काटने व रेनडीयर पालने का कार्य करती है। कुछ अधिक बसे केन्द्र उकथा तेल क्षेत्र तथा पिचौरा कोयला क्षेत्रों में यरकुटा (60,000) के आस-पास पाए जाते हैं। पैट्रोजावोदस्क (157,000) सबसे बड़ा नगर है।

(ब) साइबेरिया

साइबेरिया प्रदेश में मानव बसाव केवल रेल्वे मार्गों के सहारे, पश्चिमी साइबेरिया के कृषि क्षेत्रों, नदियों की घाटियों या खनिज तथा औद्योगिक केन्द्रों में विकसित हुआ है। यहाँ कुर्गान (198;000) ओमस्क (721;000) तथा नोवोसिविस्कं (1,029,000) सबसे बड़े नगर हैं। कुजनेस्क में लगभग 8 कस्बे ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या 50,000 से ऊपर है इनमें सबसे बड़ा नोवोकुजनेस्क 475,000) है और भी आगे पूर्व में बसाव एक पतली पट्टी में ट्रांस साइबेरिया रेल्वे के सहारे-सहारे मिलता है। यहाँ क्रसनोयार्स्क (531,000) तथा इर्कुटस्क (401,000) बड़े नगर हैं। बेकाल झील के पूर्व में बसाव की यह पट्टी और भी पतली हो जाती है जहाँ चीता (198,000) तथा उलान-उदे पृथक् कस्बों के रूप में स्थित हैं। आमूर बेसिन विशेषकर आमूर उसूरी के संगम क्षेत्र में तथा ब्लाडीबोस्टक के निकट बसाव अपेक्षाकृत ज्यादा है। टैगा प्रदेश में नदियों के सहारे-सहारे कृषि क्षेत्र विकसित हुए हैं या फिर कहीं खनिज केन्द्रों में जन बसाव बढ़ा है अन्यथा सम्पूर्ण टैगा एवं टुन्ड्रा बहुत ही कम बसा है जहाँ समोइडी, टुगुंज व लैप्स लोग रेनडीयर चराते फिरते हैं।

(स) कॉकेशिया :-

कॉकेशिया प्रदेश के उत्तरी भाग में जहाँ तेल क्षेत्र विकसित हुए है जन बसाव पर्याप्त है परन्तु वोल्गा के दक्षिण-पूर्व में जहाँ केवल कृषि ही मुख्य उद्यम है बसाव छितरा है। प्रधान नगर क्रसनोदार, साराटोव, बाकू तथा ग्रोजनी आदि है जो पिछले दिनों में पर्याप्त औद्योगिक हो गये हैं। कॉकेशिया के पर्वतीय भागों में बसाव केवल घाटियों में मिलता है। ट्रांस-कॉकेशिया के गांव एवं जीवन भूमध्य सागरिय प्रदेशों से मिलता-जुलता है। काले सागर के तटवर्ती गर्म तथा आर्द्र प्रदेशों से जहाँ चाय व फलों की खेती होती है घनत्व 155 मनुष्य प्रति वर्ग मील तक है। यहाँ बड़े-बड़े सामूहिक फार्म मिलते हैं। कुटेसी, जैस्ताफोनी एवं तिबिलिसी प्रधान कस्बे हैं। ट्रांस-काकेशिया के पूर्वी शुष्क भागों विशेषकर कूरा निचले प्रदेशों तथा आर्मिनियन पठार में बसाव छितरा है औसत घनत्व 50 है। केवल घाटियाँ ही अधिक बसी है जहाँ यरवान (633,000) तथा लेनिनाकान (127, 000) जैसे कस्बे बढ़ गए हैं। बाकू, ग्रोजनी एवं मैकोप तेल क्षेत्र घने बसे है।

(द) मध्य एशिया :

मध्य एशिया के बसाव में क्षेत्रीय अन्तर बहुत है। उपजाऊ समतल नखलिस्तानों में भारी बसाव केन्द्र विकसित हो गए हैं जबकि रेगिस्तानी शुष्क प्रदेशों एवं पर्वतीय भाग निर्जन हैं। बसाव का प्रधान स्रोत पानी है अर्थात् जहाँ कहीं भी पानी प्राप्त है बसाव बढ़ गए हैं। अर्द्ध शुष्क भागों में अभी भी घुमक्कड़ तुर्की जातियाँ अपनी भेड़ों को लिये घूमती हैं। जिनका बसाव घनत्व 3 से 10 मनुष्य प्रति वर्गमील बैठता है। उस्ट-उर्ट पठार, कराकुम एवं किजिल कुम रेगिस्तान (अरल सागर के दक्षिण एवं पूर्व में) तथा बेट-पाकदाला क्षेत्र पूर्णतः शुष्क हैं जिनकी जनसंख्या बहुत ही छितरी है। निःसंदेह सोवियत काल में खान एवं उद्योग केन्द्रों के सहारे कई नए कस्बे विकसित हो गए हैं। इनमें कारागांडा (482.000) बल्काश (60,000) तथा टैमीर-टाऊ (142,000) उल्लेखनीय हैं जो पिछले 25 वर्षों में ही बढ़े हैं। मध्य एशिया की पर्वत शृंखलाओं के चरण प्रदेशों में स्थित लोयस भागों में जहाँ कहीं भी किसी जलधारा या अन्य किसी स्रोत से जल प्राप्त हो गया है, अच्छी कृषि होती है, वहाँ बड़े-बड़े गाव हैं। घनत्व औसतन 75–250 मनुष्य प्रति वर्ग मील है। विस्तृत भागों में शुष्क कृषि होती है जहाँ 25 से 50 मनुष्य तक एक वर्गमील में आश्रय लिए हुए हैं। फरगना-घाटी, जैरावशान का सिंचित प्रदेश एवं कोपेतदाघ के फुटहिल्स क्षेत्र ज्यादा बसे हैं जिनमें औद्योगिक नगर ताशकन्द (1 106,000) समरकन्द (233,000) फ्रन्ज (360,000) अश्खाबाद (226,000) तथा आलमआता (623,000) सबसे बड़े नागरिक केन्द्र है। सर एवं आमू नदी की घाटियों में कई नखलिस्तानी विकसित हो गए हैं जिनमें औसत घनत्व 75–125 मनुष्य प्रति वर्गमील है।

शहरी एवं ग्रामीण जनसंख्या का वितरण 1913-83

वर्ष	कुल जनसंख्या (मिलियनों में)	शहरी जनसंख्या (मिलियनों में)	ग्रामीण (मिलियनों में)	जनसंख्या शहरी	प्रतिशत ग्रामीण
1913	159.2	28.1	131.1	18	82
1926	147.0	26.2	110.7	18	82
1939	170.6	56.1	114.5	33	67
1959	208.8	99.8	109.0	48	52
1961	216.2	108.3	107.9	50	50
1963	223 0	115.0	108 0	51.6	48
1983	271.2	174.6	96.6	64	36

शहरी एवं ग्रामीण जनसंख्या :

अगर 1926, 1939 एवं 1959 की तीन जन-गणनाओं की तुलना की जाए तो स्पष्ट होगा कि इस अवधि में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत तेजी से बढ़ रहा है। यह वृद्धि पुराने नगरों में तो हुई है परन्तु अनेक नये नगर बन जाने से अन्तर स्पष्ट हो गया है। पिछली 3–4 शताब्दियों में सैकड़ों नए नगर बनाए गए हैं इनमें अधिकतर नदियों के किनारे, खनिज-क्षेत्रों यातायात केन्द्रों में औद्योगिक नगरों के रूप में विकसित किए गए हैं। इन नए नगरों [या पश्चिमी साइ-के कृषि क्षेत्रों में योरुपियन रूस से लोग आकर बसे हैं। वस्तुतः योरुपीय रूस में भी इन दिनों में बसाव के स्वरूप में पर्याप्त अन्तर आए हैं।

1926 में इस भाग में केवल 1/5 लोग नगरों में थे शेष 4/5 खेतिहर क्षेत्रों में खेती करते थे परन्तु 1960 में यह अनुपात आधा-आधा था। इन वर्षों में शहरी जनसंख्या में 81.8 मिलियन की वृद्धि हुई जबकि ग्रामीण कृषिगत क्षेत्रों में 127 मि० लोग कम हुए।

सामूहिक कृषि अभियान ने बसाव को एक नया मोड़ दिया। अब तक किसान लोग विभिन्न आकारों एवं प्रकारों के गाँवों में रहते थे जिनमें से बहुत से नगला या पूर्वा थे। समूहीकरण के कारण सभी सदस्य किसानों ने एक स्थान पर बसने की व्यवस्था की। इस प्रकार फार्मों पर फार्म-अधिवास या ग्रामीण नगरों जिन्हें रूसी भाषा में 'एग्रोगोरोद' कहते हैं, का अभ्युदय हुआ। इनका बसाव एक निश्चित योजना एवं व्यवस्था से किया गया। 1950 तक ऐसे कई हजार गाँव बसाये जा चुके थे। नागरिक जनसंख्या का लगभग 74 प्रतिशत भाग औद्योगिक नगरों में हैं जो मॉस्को, डोनेत्ज, यूराल, कजाक, कारागांडा तथा कुजनेत्स्क बेसिन में है। औद्योगिक नगरों की वृद्धि बड़ी तेजी से हुई है इस समय 165 नगर ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या एक लाख से अधिक है जबकि 1939 में ऐसे नगर केवल 79 थे। कारगाडा 1930 में एक छोटा सा गाँव था जो बढ़कर 1939 में 166,000 एवं 1969 में 513,000 की आबादी वाला नगर हो गया।

संयुक्त राज्य अमेरिका

शक्ति, सभ्यता और समृद्धि का प्रतीक संयुक्त राज्य अमेरिका उत्तरी महाद्वीप में उत्तर से दक्षिण की ओर 1,600 मील एवं पूर्व से पश्चिम की ओर लगभग 2,800 मील की लम्बाई में फैला है। आकार की दृष्टि से दुनियाँ के इस पाँचवें बड़े देश का अक्षांशीय विस्तार 25° से 49° उत्तर तथा देशान्तरीय विस्तार 67° से 125° पश्चिमी देशान्तर तक है। प्रति मिनट एक मील की रफ्तार से चलने वाली रेलगाड़ी में अगर कोई यू.एस.ए. के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जाए तो उसे लगातार दो दिन एवं दो रात यात्रा करनी पड़ेगी। इतने विशाल देश में विभिन्न प्रकार के भौगोलिक वातावरणों का पाया जाना स्वाभाविक है। आर्थिक समृद्धि एवं उत्पादन की दृष्टि से वैभिन्य का यह तत्व देश के उत्थान में सहायक ही सिद्ध हुआ है। उद्योगों के लिए भारी मात्रा में कोयला, लोहा, ताँबा, मैंगनीज, टिन, बॉक्साइट, मॉलिब्डेनम, वैनेडियम, टंगस्टन, सीसा, जस्ता, सोना, चाँदी, यूरेनियम एवं थोरियम यहाँ की भूमि में विद्यमान हैं तो शक्ति के साधनों के रूप में पैट्रोल एवं जल शक्ति के अक्षय भण्डार है। कृषि कार्यों के लिए विशाल उपजाऊ मैदानी भाग है। इसकी समृद्धि बढ़ाने में समुद्री प्रभाव लम्बी तटरेखा एवं प्रोत्साहक जलवायु भी कम महत्वपूर्ण तत्व नहीं है। परन्तु जितना महत्व देश के भौतिक विकास में, इन प्राकृतिक वरदानों का है उतना ही मानवीय तत्व का भी है जिसने अपनी दृढ़ निश्चयी इच्छा शक्ति के द्वारा इन सभी प्राकृतिक वरदानों को खोजकर (एक्सप्लोर) उनका सदुपयोग किया। यह अमेरिकन भू-भाग का सौभाग्य था कि यहाँ यूरोप की सर्वश्रेष्ठ, साहसी एवं प्रेरणामय मानव शक्ति ही सबसे पहले बसने का उद्देश्य लेकर आई।

अक्षय प्राकृतिक संसाधनों एवं मानव के अथक प्रयासों के फलस्वरूप यह देश आज आर्थिक, सैनिक, तकनीकी, औद्योगिक एवं वैज्ञानिक आदि सभी दृष्टियों से विश्व पर छाया हुआ है। उसके रहन-सहन, रीति-रिवाज एवं भौतिकवादी विचारधारा दिन प्रतिदिन विश्व के सभी भागों में तेजी से फैलती जा रही है जिसे 'अमेरिकन सभ्यता' का नाम दिया जाता है। 19वीं शताब्दी अगर ब्रिटेन या यूरोप की थी तो 20वीं शताब्दी निश्चित रूप से अमेरिका की मानी जाती है।

सं.रा. अमेरिका
राजनैतिक विभाजन
वाशिंगटन
औरेगन
मौंटाना
इडाहो
व्योमिंग
उतरी डकोटा
दक्षिणी डकोटा
मिनेसोटा
विस्कांसिन
मिशीगन
नेवाडा
कैलीफोर्निया
उटाह
कोलोरैडो
नैब्रास्का
कंसास
आईओवा
मिसूरी
इलीनौइस
इंडियाना
ओहियो
पेंसिलवेनिया
न्यूयॉर्क
वरमौंट
मेन
न्यू हैम्पशायर
मैसाचूसेटस
रोडद्वीप
न्यू जर्सी
डेलावेयर
मैरीलैण्ड
वर्जीनिया
कैंटुकी
टैनेसी
उ. कैरोलिना
दक्षिणी कैरोलिना
जार्जिया
फ्लौरिडा
अलाबामा
मिसीसिपी
लूज़ियाना
अर्कन्सास
ओकलाहामा
टैक्सास
न्यू मैक्सिको
एरीज़ोना
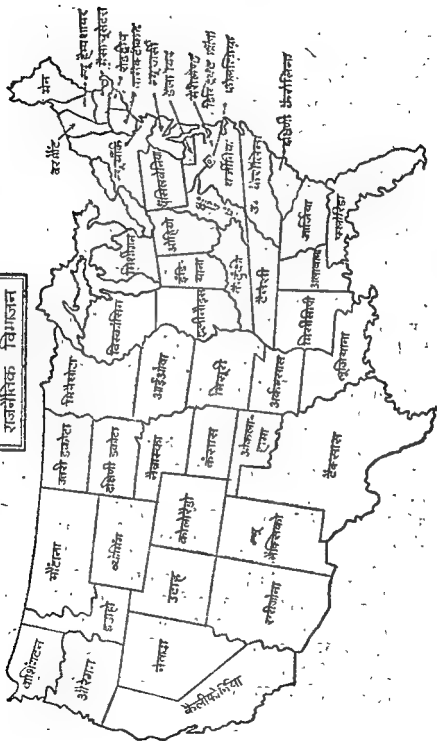
यह सब यहाँ के निवासियों की पिछली 550 वर्षों की तपस्या का फल है। इस अवधि में यहाँ के निवासियों ने अपने देश को इतना समृद्ध बना दिया है कि आज यहाँ भौतिकवाद अपनी चरम सीमा पर पहुँच रहा है। सुख और सुविधाएँ इतने अधिक हैं कि लोग उनसे उकता चले हैं। बीटल्स, हिप्पी तथा अन्य प्रकार के आंदोलन इसी उकताहट के परिचायक हैं। भौतिकवाद की चरम सीमा पर पहुँचने के बाद अब यहाँ आध्यात्मवाद का श्री गणेश हो रहा है।

15वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में कोलम्बस ने अमेरिका का पता लगाया। 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से यहाँ उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के देशों से लोग आकर बसने लगे जिनमें अधिकांश ब्रिटेन, हालैंड, फ्रांस, स्पेन तथा नार्वे आदि देशों से संबन्धित थे। ये लोग सर्वप्रथम उत्तरी-पूर्वी भाग में आकर बसे। यहाँ परिस्थितियाँ ब्रिटेन जैसी थी अतः इसका नाम न्यू इंगलेण्ड प्रदेश रखा गया। प्रारम्भ में यह सारा भाग ब्रिटिश उपनिवेश के रूप में था जो 4 जुलाई, 1776 को मुक्त हुआ जबकि 13 राज्यों को स्वतन्त्र घोषित किया गया। इन सब राज्यों ने मिलकर 'संयुक्त राज्य अमेरिका' की स्थापना की। 30 नवम्बर, 1782 को इन नए संगठित राज्य को ब्रिटेन द्वारा मान्यता मिली। 3 सितम्बर, 1783 को ब्रिटेन एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच 'शान्ति सन्धि' हुई। 17 सितम्बर 1787 को नया संविधान लागू हुआ और आज तक इसी संविधान के अनुसार यहाँ की शासन व्यवस्था चली आ रही है।

संविधान के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका एक संघात्मक राज्य है जिसमें अनेक राज्य (वर्तमान में 50) शामिल हो सकते हैं। राज्यों के ऊपर केन्द्रीय सरकार है जो राष्ट्रपति के अधीन कार्य करती है। राष्ट्रपति में ही यहाँ कार्य-पालिका की सर्वोच्च शक्तियाँ विद्यमान हैं। रक्षा, विदेश विभाग तथा सन्देशवाहन को छोड़ अन्य सभी विभाग राज्यों के अपने मामले हैं। 1776 में इस संघ में केवल 13 राज्य थे। बाद में जैसे-जैसे पश्चिमी भागों में आबादी बढ़ती गई और नए-नए राज्य बनते गए, वैसे-वैसे संघ के सदस्य राज्यों की संख्या भी बढ़ती गई। 1958 तक मुख्य भूमि पर 48 राज्य हो चुके थे। 1659 में अलास्का में तथा 1960 में हवाई द्वीप को भी राज्य का दर्जा दिया गया। इस प्रकार वर्तमान यू. एस. ए. में 50 राज्य हैं। इनके अतिरिक्त कुछ औपनिवेशिक क्षेत्र भी हैं जिनमें प्यूरिटो रिको, वर्जिन द्वीप, समोआ, गुआम पनामा नहर क्षेत्र आदि उल्लेखनीय हैं। राज्यों के नाम, भू-क्षेत्र, जनसंख्या तथा जन-घनत्व निम्न प्रकार है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के संघीय राज्य[1]

भौगोलिक प्रदेश एवं राज्य (संघ में शामिल होने का वर्ष)	भू-क्षेत्र–1970 (वर्गमील में)	जनसंख्या 1 अप्रैल, 1980 की जनगणना के अनुसार	जनसंख्या घनत्व प्रति वर्गमील (1980)
संयुक्त राज्य अमेरिका	3,536,855	226,545,805	64·0
न्यू इंगलैंड प्रदेश	62,951	12,348,493	196·0
1. मेन (1820)	30,920	1,124,660	36·3
2. न्यू हैम्पशायर (1788)	9,027	920,610	102·4
3. वरमोंट (1791)	9,267	511,456	55·2
4. मैसाचुसेटस (1788)	7,826	5,737,037	733·3
5. रोड द्वीप (1790)	1,049	947,154	897·9
6. कनैक्टीकट (1788)	4,862	3,107,576	637·8
मध्य अटलांटिक प्रदेश	100,318	36,786,790	368·9
7. न्यूयार्क (1788)	47,831	17.558,072	370·6
8. न्यू जर्सी (1787)	7,521	7,364,823	986·2
9. पेंसिलवेनिया (1787)	44,966	11,863,895	264·3
पूर्वी उत्तरी मध्य प्रदेश	244,101	41,682,217	170·9
10. ओहियो (1803)	40,975	10,797,630	263·3
11. इंडियाना (1816)	36,097	5,490,224	152·8
12. इलीनाइस (1818)	55,748	11,426,518	205·3
13. मिशीगन (1835)	56,817	9,262,078	162·6
14. विस्कांसिन (1848)	54,464	4,705,767	86·5
पश्चिमी उत्तरी मध्य प्रदेश	507,723	17,183,453	33·8
15. मिनेसोटा (1858)	79,289	4,075,970	51·2
16. आयोवा (1846)	55,941	2,913,808	52·1
17. मिसूरी (1821)	68,995	4,916,686	71·3

1. The Statesman's Year book 1984-85

भौगोलिक प्रदेश एवं राज्य (संघ में शामिल होने का वर्ष)	भू-क्षेत्र-1970 (वर्गमील में)	जनसंख्या 1 अप्रैल 1980 की जनगणना के अनुसार	जनसंख्या घनत्व प्रति वर्गमील (1980)
18. उत्तरी डकोटा (1889)	69,273	652,717	9·4
19. दक्षिणी डकोटा (1989)	75,955	790,768	9.1
20. नेब्रास्का (1867)	76,483	1,569,825	20.5
21. कंसास (1861)	81,787	2,363,679	28.9
दक्षिणी अटलांटिक प्रदेश	266,970	36,959,123	138.5
22. डेलावेयर	1,982	594,338	307.6
23. मेरीलैंड	9,891	4,216,975	428.7
कोलम्बिया डिस्ट्रिक्ट (D.C,) (राजधानी वाशिंगटन) 1791	61	638,333	10,132.3
24. वर्जीनिया (1788)	39,780	5,346,818	134.7
25. पश्चिमी वर्जीनिया (1863)	24,070	1,947,644	80.8
26. उत्तरी कैरोलिना (1789)	48,798	5,881,766	120.4
27. दक्षिणी कैरोलिना (1788)	30,225	3,121,820	103.4
28. जार्जिया (1788)	58,073	5,463,105	94.1
29. फ्लोरिडा (1845)	54,050	9,746,324	180.0
पूर्वी दक्षिणी मध्य प्रदेश	178,972	14,666,423	82 0
30. केन्टुकी (1792)	39,640	3,660,777	92 3
31. टैनेसी (1706)	41,328	4,591,120	111.6
32. अलाबामा (1819)	50,708	3,893,888	76.7
33. मिसीसीपी (1817)	47,296	2,520,638	53.4
पश्चिमी दक्षिणी मध्य प्रदेश	427,791	23,746,816	55.6
34. अर्कन्सास (1836)	51,945	2,286,435	43.9
35. लूजियाना (1812)	44,930	4,205,900	94.5
36. ओकला हामा (1907)	68,782	3,025,290	44.1
37. टैक्सास (1845)	262,134	14,229,191	54.3
पर्वतीय प्रदेश	856,047	11,372,785	13·3
38. मोंटाना (1889)	145,587	886,690	5.4
39. इडाहो (1890)	82,677	943.935	11.5
40. व्योमिंग (1890)	97,203	469,557	4.8

भौगोलिक प्रदेश एवं राज्य (संघ में शामिल होने का वर्ष)	भू-क्षेत्र-1970 (वर्गमील में)	जनसंख्या 1 अप्रैल 1980 की जनगणना के अनुसार	जनसंख्या घनत्व प्रति वर्गमील (1980)
41. कोलोरैडो (1876)	103,766	2,889,964	27.9
42. न्यू मैक्सिको (1912)	121,412	1,302,894	10.7
43. एरीजोना (1912)	113,417	2,718,215	23.9
44. ऊटाह (1896)	82,096	1,461,037	17.8
45. नेवादा (1864)	109,889	800,493	7.3
प्रशांत तटीय प्रदेश	891,972	31,799,705	35 5
46. वाशिंगटन (1889)	66,570	4,132,156	62.1
47. ओरेगन (1859)	96,184	2,633,105	27.4
48. कैलीफोर्निया (1850)	156,261	23,667,902	151.4
49. अलास्का (1959)	566,432	401,851	0.7
50. हवाई द्वीप (1960)	6,425	964,691	150.1
बाह्य अधिकृत क्षेत्र	4,914	3,565,376	760
1. प्यूरिटो रिको	3,421	3,196,520	909
2. वर्जिन द्वीप (1917)	132	96,869	731
3. अमेरिकन समोआ (1900)	76	32,297	419
4. गुआम (1898)	209	105,679	507
5. उत्तरी मैरियानी (1947)	184	16,780	91
विदेशों में बसे अमेरिकन लोग			

□□□

सं० रा० अमेरिका :
भूगर्भिक संरचना एवं धरातलीय स्वरूप

न केवल धरातलीय स्वरूप वरन् भूगर्भिक संरचना की दृष्टि से भी उत्तरी अमेरिका महाद्वीप का वह भू-भाग जो संयुक्त राज्य अमेरिका के नाम से जाना जाता है, बड़ा जटिल है यहाँ लगभग सभी भूगर्भिक युगों की प्रतिनिधि चट्टानें उपलब्ध है। जिनसे इस संभाग के संरचना-इतिहास पर प्रकाश पड़ता है। पिछले दशकों में तेल की खुदाई के लिए जब काफी गहराई तक खुदाई की गई तो ज्ञात हुआ कि कई अधः स्तरीय चट्टानें उन भूगर्भिक युगों से सम्बन्धित हैं जिनके बारे में यह सोचा जाता था कि इन युगों की संरचनाओं का विस्तार इस देश में नहीं है। भूगर्भिक इतिहास देखने के लिए विविध युगों से सम्बन्धित रचनाओं का क्रमबद्ध अध्ययन वांछनीय है।

उत्तरी अमेरिका में प्री-कैम्ब्रियन युगीन रचना के रूप में कनाडियन या लॉरेंशियन शील्ड उल्लेखनीय हैं। इसका विस्तार मुख्यतः उत्तरी-पूर्वी कनाडा में हडसन की खाड़ी के चारों ओर है। अब तक यह माना जाता था कि इस प्राचीन, स्थिर भूखण्ड का विस्तार महान् झीलों के उत्तर में ही है। संयुक्त राज्य अमेरिका में इससे सम्बन्धित रचनाएँ नहीं हैं। परन्तु पिछले दिनों तेल के लिए खुदाई करते समय पता चला कि लॉरेंशियन शील्ड का विस्तार दक्षिण में ग्रांड केनयान(पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलोरैडो के पठार में स्थित कोलोरैडो नदी द्वारा बनाई गई 5000 फीट गहरी संकरी घाटी) घाटी तक है।[2] यहाँ यह शील्ड अधःस्तरीय क्रमों में है जिसके ऊपर बाद के जमावों से बनी चट्टानें बिछी है। यह शील्ड वस्तुतः उन ऊँचे पर्वतीय क्रमों के घर्षित अवशिष्ट भाग है जो लाखों-लाखों वर्ष पूर्व अपने पूर्ण अस्तित्व में थे और बाद में क्षयकारी शक्तियों द्वारा काट दिए गए। इनका उत्थान पूर्व-कैम्ब्रियन युगीन घटनाओं के फलस्वरूप हुआ। इस स्थिर भूखण्ड में प्रमुखतः नीस, शीस्त, ग्रेनाइट तथा क्वार्टजाइट चट्टानें पाई जाती है।

---

2. Monkhouse, F.J. & Cain, H.R.—North America p. 4.

पुराकल्प के अधिकांश समय में दो विस्तृत समुद्री भाग थे जो वर्तमान उत्तरी अमेरिका के पूर्वी और पश्चिमी सीमावर्ती भागों में उत्तर-दक्षिण विस्तार लिए फैले थे इनका स्वरूप लगभग भूसंनतियों जैसा था। इनमें लगभग 10-12 मीटर की मोटाई का तलछट जमा था जिसे क्षयकारी शक्तियों ने पूर्व कैम्ब्रियन युगीन रचनाओं से काट-बहा कर इनमें जमा किया। मिट्टी एवं दलदल के अतिरिक्त इन समुद्री भागों में मूँगा व अन्य समुद्री जीवों के अवशेष भी जमा हुए जो बाद में चूने की चट्टानों में परिवर्तित हुए। यह धँसाव ग्रस्त क्षेत्र धीरे-धीरे ठोस पदार्थों के मलबे से भराव की स्थिति में आया। फिर दलदलीय अवस्थाएँ हुई और विस्तृत भागों में वन विकसित हुई। कालांतर में ये वन बाद के जमावों के नीचे दब गए और इन्हीं से परिवर्तित चट्टानों के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्व में स्थित विस्तृत कोयला-क्षेत्र बने।

भूगर्भिक समय सारणी

कल्प	युग	अनुमानित समय (मिलियन वर्षों में)	पर्वत निर्माणकारी घटना
टरशरी या नव कल्प	नवीन नवकल्प या क्वार्टरनरी		
	आधुनिक		
	प्लीस्टोसीन	2	
	प्राचीन नव कल्प		
	प्लीओसीन		
	मायोसीन	70	टरशरी
	ओलिगोसीन		या
	इओसीन		अल्पाइन
मध्य कल्प	पैलेइयोसीन		
	क्रैटेशियश		
	जुरैसिक	135	
	ट्रियैसिक	180	
पुरा कल्प	नवीन पुरा कल्प	225	
	परमियन		
	कार्बोनीफेरस	270	
	डेवोनियन	350	हरसीनियन
		400	या
			अमेरिकन

	प्राचीन पुराकल्प		
	सिलूरियन	440	कैलीडोनियन
	ओर्डोविसियन	500	
	कैम्ब्रियन	600	
उषा कल्प	पूर्व-कैम्ब्रियन		

पुराकल्प के अन्तिम समयों में हरसीनियन पर्वत निर्माणकारी घटना हुई जिसके फलस्वरूप उपरोक्त वर्णित भूसंनति में जमा पर्तदार पदार्थों में मोड़ पड़े और अप्लेशियन पर्वत क्रम का उदय हुआ।

मध्य कल्प में भूगर्भिक हलचलों का बहुत कम प्रभाव उत्तरी अमेरिका पर पड़ा। महाद्वीप के पश्चिमी भागों में इस कल्प में दलदलीय जंगल विकसित हुए जिनके दब जाने से उन कोयला क्षेत्रों का आविर्भाव हुआ जो शृंखलाबद्ध रूप में अलबर्टा से लेकर मैक्सिको तक फैले हैं। कोयला अप्लेशियन क्षेत्रों की तुलना में घटिया किस्म का है। इस कल्प की मुख्य उल्लेखनीय घटना अप्लेचियन पर्वत क्रम के पूर्व में स्थित समुद्रों में अप्लेचियन से काटे गए मलबे का जमाव है। इसी तलछट के जमाव से स० रा० अमेरिका की अटलांटिक तटवर्ती पट्टी का उदय हुआ।

नव कल्प के प्रारम्भ में वह महत्वपूर्ण घटना हुई जिसके फलस्वरूप अमेरिका के प्रमुख पर्वत क्रम रॉकी का उत्थान हुआ। यह पर्वत निर्माणकारी घटना वस्तुतः मध्य कल्प के अन्तिम दिनों में ही प्रारम्भ हो गई थी। दूसरे शब्दों में लारामिडे पर्वत निर्माण कारी घटना के नाम से जानी जाने वाली यह हलचल अल्पाइन पर्वत निर्माणकारी घटना (जिसमें आल्पस तथा हिमालय बने) से कई मिलियन वर्ष पूर्व हो गई थी लारामिडे घटना के फलस्वरूप पश्चिमी भूसनति (उपरोक्त वर्णित) में जमा पर्तदार मलबे में मोड़ पड़े। इस समय (मध्य कल्प के अन्त) और बाद में नव-कल्प में भी बड़े पैमाने पर मोड़ एवं दरारी क्रिया हुई जिसके फलस्वरूप अनेक भूभाग ऊपर उठ गए जिनमें सियरा नेवदा क्रम उल्लेखनीय है। संयुक्त राज्य अमेरिका के इस संभाग में अभी भी भूकम्प और ज्वालामुखी क्रियाशील हैं जिनसे स्पष्ट है कि यह भाग अभी भी संतुलित नहीं हो पाया है।

आधुनिकतम भूगर्भिक समयों में लगभग 10,000 वर्ष पूर्व से लेकर 60,000 वर्ष तक का समय ऐसा था जबकि वर्तमान की तुलना में तापक्रम बहुत नीचे थे और यूरोप की तरह अमेरिका का भी अधिकांश भाग हिमपर्तों के नीचे दबा था। इस समय को प्रायः हिमयुग के नाम से जाना जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका का अधिकांश उत्तरी भाग पर्याप्त मोटाई के हिमनदों से ढका हुआ था जो दक्षिण में खिसक कर सिएटिल-सेंट लुइस-न्यूयार्क को मिलाने वाली रेखा तक आ जाते थे। हिमयुग के इन विशाल हिमनदों द्वारा लारेंशियन शील्ड या

चित्र–2
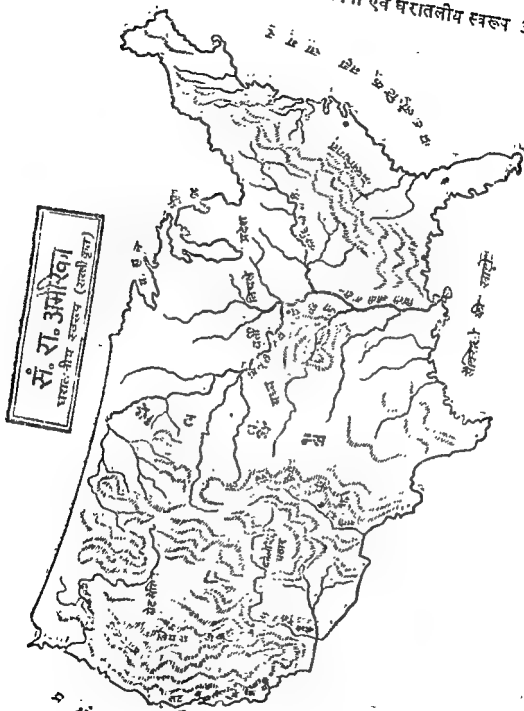
कनाड़ा के भाग में मुख्यतः अपक्षय तथा महान् झीलों के दक्षिण यानी संयुक्त राज्य अमेरिका में अधिकांशतः निक्षेप का कार्य किया गया। मैनीटोबा, मिनेसोटा मिसूरी, मिसीसीपी तथा इलीनॉइस आदि राज्यों में जो श्रृंखलाबद्ध कूटिकाएँ मिलती हैं वस्तुतः वे अन्तिम-मोरेन के जमावों से बनी हैं। इन भागों में हिमानियों के साथ आयी तलछट के बिछ जाने से पर्याप्त उपजाऊ मिट्टी पायी जाती है।

उत्तरी अमेरिका को हिमयुग की सबसे बड़ी देन वे विशाल जलाशय है जो महान् झीलों के नाम से जाने जाते हैं। हिमयुग की समाप्ति के दिनों में हिम-पिघलाव से बना पानी उन भागों में भर गया जो वर्तमान में महान् झीलों तथा कनाडियन प्रेयरीज के रूप में हैं। कनाडियन प्रेयरीज में एकत्रित तत्कालीन पानी को अगासिज झील के नाम से जाना जाता है। ये भाग वस्तुतः हिम खुरचन से नीचे हो गए थे। इस प्रकार हिम-पिघलाव के फलस्वरूप लगभग एक लाख वर्ग मील के भूभाग में जल भर गया। अगासिज झील बाद के भरावों से निम्न घास दलदलीय क्षेत्रों के रूप में परिणित हो गयी जबकि महान् झीलें आज भी कनाड़ा और स० रा० अमेरिका की सीमा के रूप में विद्यमान हैं। हडसन-मोहॉक तथा सेंट लारेंस की घाटियाँ वस्तुतः इन झील प्रदेशों से प्रवाहित जल से ही बनी हैं।

धरातल :

संयुक्त राज्य अमेरिका का लगभग एक तिहाई भू-क्षेत्र पश्चिमी कोर्डीलेराज ने घेरा हुआ है। इस देश में कनाड़ा की अपेक्षाकृत इन पर्वत क्रमों की चौड़ाई बहुत ज्यादा है। मैक्सिको में फिर ये क्रमशः संकरे हो गये है। संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य भाग में इनकी चौड़ाई 1000 मील से ज्यादा है। पुगेट साउन्ड के दक्षिण में, महाद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी भाग की सकरी घाटियाँ क्रमशः चौड़ी होकर उत्तर-दक्षिण फैले हुए देशांतरीय निचले धँसा-ग्रस्त क्षेत्रों (वाशिंगटन, ओरेगन तथा मध्यवर्ती कैलीफोर्निया) में परिवर्तित हो जाते है। अलास्का तथा ब्रिटिश कोलम्बिया (कनाड़ा की तटवर्ती श्रेणियाँ यू० एस० ए० में आकर कास्केडस (सियरा नेवादा, सियरा मादरे) का रूप ले लेती हैं। कार्डीलेराज के पूर्वी पर्वत क्रम रॉकी नाम से जाने जाते हैं। ये भी कनाड़ा की अपेक्षा यू० एस० ए० में ज्यादा विस्तार और ऊँचाई वाले हैं। कोलोरेडो राज्य में कई चोटियाँ 14,000 फीट से ज्यादा ऊँची है।

प्रशांत सागर के तट के सहारे-सहारे फैली पर्वत श्रेणियों और रॉकी क्रम के बीच में अधिकांश भाग बेसिनों और अन्तःपर्वतीय पठारों ने घेरा हुआ है। ऐसे तीन प्रदेश उल्लेखनीय हैं। संयुक्त-राज्य अमेरिका के उत्तर-पश्चिम में स्थित स्नेक-कोलम्बिया पठार, ग्रेट बेसिन (मध्य-पश्चिमी यू. एस. ए. में स्थित एक

अन्तः प्रवाह प्रदेश) एवं दक्षिणी पश्चिमी यू० एस० ए० में स्थित कोलारैडो का पठार।

मध्यवर्ती कनाड़ा की तरह संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य भाग में भी भीतरी मैदानों का विस्तार है। भीतरी मैदानी भाग पश्चिम यानी रॉकी क्रम की तरफ ऊँचे होते जाते हैं। यथा 100° पश्चिमी देशांतर के पश्चिम में इनकी ऊँचाई 3000 फीट तक है। मिसिसीपी नदी के पूर्व में मैदान बहुत धीमी गति से आप्लेचियन्स की तरफ उठते जाते हैं। इस विशाल भीतरी मैदानी भाग को एक तरह से मिसिसीपी का बेसिन कहा जा सकता है। पूर्व तथा पश्चिम के उच्च प्रदेशों से निकाल कर सभी जलधाराएँ मिसीसीपी क्रम में मिल जाती हैं। मैदान में यत्र-तत्र कुछ उच्च प्रदेश भी हैं।

भीतरी मैदान के पूर्व में दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व दिशा में फैले अप्लेचियन पर्वत हैं। हरसीनियन घटना से सम्बन्धित ये पर्वत वर्तमान में घर्षित अवस्था में हैं। कई जगह तो इनका स्वरूप केवल कटे फटे पठारी भाग जैसा ही लगता है। दक्षिण में अप्लेचियन अलाबामा राज्य में समाप्त हो जाते हैं, मैक्सिको की खाड़ी तक नहीं पहुँच पाते। उत्तर में न्यू इंग्लैंड के उच्च प्रदेश साधारणतः अप्लेचियन के ही विस्तार-भाग प्रतीत होते हैं परन्तु ये वस्तुतः लॉरेंशियन शील्ड से सम्बन्धित हैं। न्यूयार्क राज्य के अडीरोंडाक पर्वत में इस शील्ड की चट्टानें स्पष्ट रूप में हैं।

मैक्सिको की खाड़ी के सहारे-सहारे मिसीसीपी के बाढ़कृत मैदान तथा पूर्व में अटलांटिक तटवर्ती मैदानों में आधुनिक तलछट के जमाव से बने निचले मैदानी भाग हैं जिनमें मुख्यतः नदी तथा समुद्र जमाव कृत तलछट हैं।

महान् झीलें कनाड़ा और संयुक्त राज्य अमेरिका की सीमा पर स्थित हैं। मिशीगन को छोड़कर जो पूर्णतया यू० रा० अमेरिका में है शेष चारों झीलों के मध्य जलों में होकर इन दोनों देशों की सीमा से गुजरती है। पूर्व में कुछ दूरी तक सीमा सेंटलारेंस नदी के साथ-साथ चलती है परन्तु मांट्रियल के पास सम्पूर्ण नदी कनाडा में आ जाती है।

उपरोक्त वर्णित संरचना एवं धरातलीय आम-स्वरूप के आधार पर स. रा. अमेरिका को निम्न धरातलीय स्वरूपों में विभाजित किया जा सकता है।

1. अटलांटिक तटीय मैदान।
2. अप्लेचियन पर्वत।
3. खाड़ी के तटीय मैदान।
4. मध्यवर्ती निचले भाग।

5. भीतरी उच्च प्रदेश।
6. ग्रेट प्लेन्स।
7. रॉकी शृंखला।
8. अन्तःपर्वतीय पठार।
9. प्रशांत तटीय भीतरी शृंखलाएं।
10. धँसाव क्षेत्र।
11. तटवर्ती पहाड़ियां।

अटलांटिक तटीय मैदान :

अटलांटिक तट तथा अप्लेचियन पर्वत शृंखला के मध्य में स्थित अपेक्षाकृत नवीन परतदार चट्टानों के बने हुए मैदानी भाग हैं। तटवर्ती पट्टी की चौड़ाई साधारणतया दक्षिण से उत्तर की ओर कम होती जाती है। दक्षिणी राज्यों जैसे जार्जिया तथा फ्लोरिडा में ये मैदान 250–300 मील तक चौड़े हैं जबकि न्यूयार्क न्यूजर्सी क्षेत्र में समाप्त प्रायः हो गए। भूगर्भविदों का अनुमान है कि अटलांटिक तटीय पट्टी वस्तुतः एक महाद्वीपीय चबूतरा था जो बाद में ज्यों की त्यों स्थिति में उठकर थल स्वरूप में परिणत हुआ।[3] यह सम्पूर्ण भाग मैदानी है और कुछ

चित्र—3

3. White. G. L. and Forgue. E. J.—Regional Geography of Anglo—America p. 103

स्थानों पर ही वह समुद्रीतल से 100 फीट से ज्यादा ऊँचा है। जल निकास व्यवस्था ही इस मैदानी पट्टी के कुछ भागों के विकास और बसाव में सबसे बड़ी बाधा है, यथा वरजीनिया और उत्तरी कैरोलिना राज्यों के तटवर्ती भाग में दल-दलीय अवस्थाओं ने मानव बसाव के सामने बड़ा प्रश्न चिन्ह लगा दिया।

अतलांतक तट के सहारे-सहारे विस्तृत इन मैदानों को वर्तमान स्वरूप प्रदान करने वाले तत्वों में वे छोटी-छोटी नदियाँ भी उल्लेखनीय हैं जो अप्लेचियन पर्वत से निकल कर पीडमॉट प्रदेश से होकर अपने साथ लाए मलवा को इन समतल भागों में जमा करती हुई अटलांटिक महासागर में गिर जाता है। इनमें पोटोमैक, डेलावेयर, अटलांटा, सेवाना, योर्क, जेम्स, रापाहानोक आदि जलधाराएँ प्रमुख हैं। चूँकि मैदानी पट्टी की पश्चिमी सीमा पीडमॉट प्रदेश से मिली है जो 100 फीट से 1500 फीट तक ऊँचा है तथा चट्टानी संरचना की दृष्टि से अटलांटिक तटीय मैदानों से पृथक है। अतः ये जलधाराएँ जब पश्चिम के इन क्षयित उच्च प्रदेशों से मैदानों में उतरती है तो स्वाभाविक रूप से अनेक प्रपातों को जन्म देती हैं। चट्टानी संरचना और जल-कटाव की शक्ति की भिन्नता के फल स्वरूप बने ये प्रपात पंक्तिबद्ध रूप में हैं अतः इसे 'प्रपात पंक्ति' भी कहा जाता है। इन सभी प्रपातों पर जल विद्युतगृह स्थापित किए गए हैं।

हिम युग की समाप्ति पर अटलांटिक के जल-तल में वृद्धि हुई, फलतः इस मैदानी पट्टी के अनेक भाग समुद्रगत हो गये और तटवर्ती प्रदेश में कई नयी भू-आकृतियों का आविर्भाव हुआ। अनेक 'ड्रमलिन' (हिम जमाव से बनी कूटिकाएँ) गोल द्वीपों, मोरेनिक जमाव प्रायः द्वीपों या द्वीपों में परिवर्तित हो गए। केप-कॉड या लॉगद्वीप इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। तट के सहारे-सहारे अनेक अवरोधक-मुँडेरों का भी उदय हुआ। कुछ राज्यों जैसे वर्जीनिया, न्यूजर्सी या डेलावेयर आदि में तट भाग आज भी शनैः-शनैः धँसावग्रस्त हो रहा है। अनुमान लगाया गया है कि वर्जीनिया तट प्रति 50 वर्ष में एक फुट की दर से समुद्रगत हो रहा है। इसी प्रकार के प्रमाण चैसापीक की खाड़ी में भी देखने को मिले हैं। इस जल मग्नीकरण क्रिया के द्वारा तट के आसपास अनेक छोटी-छोटी झीलें बन गयी हैं जिनमें गहराई बहुत कम है तथा तल में थलीय चट्टानें हैं।

धुर दक्षिण में फ्लोरिडा प्रायःद्वीप, अटलांटिक महासागर तथा मैक्सिको की खाड़ी को पृथक करता हुआ, समुद्र में 300 मील की लम्बाई तक आगे बढ़ गया है। यह एक धंसित नीचा भाग है जो कहीं भी 400 फीट से ज्यादा ऊँचा नहीं है। अधिकतर भाग चूने की चट्टानों का बना है जिसमें भूमिगत जल ने अनेक भू-आकार बनाकर कार्स्ट भू-दृश्यावली प्रस्तुत की है। जल-तल बहुत ऊँचा है यहाँ तक की दक्षिणी भाग में अधिकांश धरातल दलदल और झीलों द्वारा घेरा हुआ

अप्लेचियन उच्च प्रदेशों का क्रॉस सैक्शन
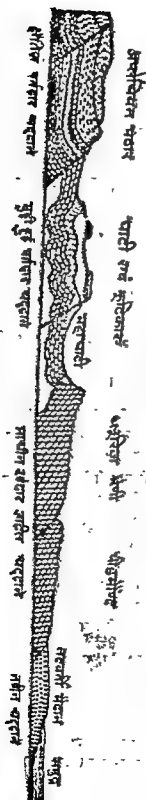
है। तट रेखा के पास-पास रेतीले टीले एवं लेगून झीलों का क्रम है। प्रायःद्वीप के धुर दक्षिण में छोटे-छोटे द्वीपों की शृंखला है जिसे 'फ्लोरिडा-कीज' नाम से पुकारते हैं। इनमें से अधिकांश द्वीप मूंगे के बने हैं।

अप्लेचियन पर्वत उच्च प्रदेश :

अप्लेचियन उच्च प्रदेश का विस्तार न्यूयार्क राज्य में स्थित हडसन-मोहाक घाटी से लेकर दक्षिण में मध्य आलाबामा राज्य तक है। जहाँ ये खाड़ी के तटवर्ती मैदानों में क्रमशः समाप्त प्रायः हो जाते हैं। इस उच्च प्रदेश-क्रम की आम दिशा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व को है। भौगोलिक दृष्टि से अप्लेचियन की पूर्वी सीमा ब्लूरिज और पीडमांट प्रदेश की संक्रमण-पट्टी मानी जा सकती है। पश्चिमी सीमा वहाँ मानी जाती है जहाँ अप्लेचियन पठार अपना स्थान भीतरी मैदानों को दे देते हैं।

अप्लेचियन को पर्वत-क्रम कहना उसके भूगर्भिक इतिहास की ओर संकेत करना मात्र है अन्यथा इसका वास्तविक स्वरूप एक कटे-फटे पठारी प्रदेश जैसा है जिसकी सर्वाधिक ऊँचाई 6,684 फीट (माउंट मिचैल) है। अप्लेचियन का वर्तमान स्वरूप एक लम्बे भूगर्भिक इतिहास और घटनाओं का फल है। इसका प्रथम उत्थान पुराकल्प के अन्तिम युगों (पर्मियन, डैवोनियन, ओर्डोविसियन) में हरसीनियन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप हुआ। कालांतर में क्षयकारी शक्तियों ने काट-काट कर इसे बहुत नीचा (पैनी प्लेन) कर दिया। बाद की भूगर्भिक हलचलों के फलस्वरूप इसमें पुनः उठाव हुआ, मोड़ एवं दूसरी क्रिया हुई और पुनः क्षयकारी शक्तियों को क्षय-चक्र क्रियाशील हुआ।

अप्लेचियन उच्च प्रदेशों को तीन उपविभागों में रखा जाता है। ये हैं— 1. पूर्व में ब्लूरिज, 2. मध्य में कूटिका एवं घाटी प्रदेश, 3. पश्चिम में अप्लेचियन का पठार जो स्थिति के अनुसार पुनः दो उपविभागों में रखा जाता है। यथा, उत्तर में अलघेनी का पठार तथा दक्षिण में कम्बरलैंड। कई भूगोल वेत्ता पीडमांट प्रदेश को भी अप्लेचियन उच्च प्रदेशों से ही सम्बन्धित मानते हैं[4]

(अ) ब्लूरिज श्रेणी : ब्लूरिज श्रेणी मुख्यतः आग्नेय तथा परिवर्तित आदि रवेदार चट्टानों (ग्रेनाइट, नीस, शीस्ट, डायोराइटस तथा स्लेट) युक्त है। पैंसिलवेनिया से जार्जिया राज्य तक फैली यह श्रेणी पूर्व की सभी श्रेणियों से ज्यादा ऊँची है। रोआनोके के उत्तर में ब्लूरिज क्रमशः संकरी होती जाती है और कई 'गैपों' द्वारा पार भी जाती है जबकि दक्षिण में इनकी चौड़ाई 100 मील तक

4. F. J. Monkhouse, in his book Geography of North America, puts the Piedmont. Region with Appalachians,

है। यही इनका वास्तविक पर्वतीय स्वरूप है जिसमें विस्तार लिए एक पर्वतीय पिण्ड है जिसे 'ग्रेट स्मोकी माउंटेन' के नाम से जाना जाता है। कई घाटियाँ भी हैं। इस सम्भाग में पर्वत तीव्रढ़ाल वाले, चट्टानी तथा वनों से ढके हैं। यहीं पूर्वी संयुक्त राज्य अमेरिका की सबसे ऊँची चोटी माउन्ट मिचैल (6,684 फ़ीट) उत्तरी कैरोलिना राज्य में स्थित है। पर्याप्त वर्षा के फलस्वरूप ब्लूरिज श्रेणी सघन वनों से ढकी थी। ओक, चैस्टनट तथा हिकरी जैसे कठोर लकड़ी वाले वृक्षों का यहाँ बाहुल्य था। इस मूल्यवान प्राकृतिक वनस्पति का अधिकांश भाग 19वीं शताब्दी में चारकोल बनाने के लिए काट लिया गया। ब्लूरिज को कुछ स्थानों पर रेल मार्गों ने 'गैप्स' में होकर पार किया है। यथा, हार्पर्स फैरी से होकर बाल्टीमोर तथा ओहियो को जोड़ने वाली रेलें दौड़ती हैं।

(ब) पीडमॉंट प्रदेश—ब्लूरिज श्रेणी के पूर्व में, श्रेणी से लगा हुआ ही, एक ऐसा प्रदेश है जो धरातलीय स्वरूप की दृष्टि से मैदान और पर्वत के बीच संक्रमण स्वरूप लिए है। पीडमॉंट के नाम से प्रसिद्ध इस प्रदेश में गोल पहाड़ियाँ, घाटियाँ तथा कूटिकाओं के आधिक्य ने इसे अत्यन्त असमान बना दिया है। ऊँचाई कहीं भी 1,500 फीट से ज्यादा नहीं है। इसे नदियों ने बहुत काटा-छाँटा है, यह उत्तर से दक्षिण को श्रृंखलाबद्ध है परन्तु चौड़ाई में भिन्नता है। यथा, उत्तर में 30 मील जबकि उत्तरी कैरोलिना राज्य में यह 125 मील तक चौड़ा है। ब्लूरिज की तरह पीडमॉंट प्रदेश भी प्राचीन रवेदार चट्टानों का बना है जो क्रमशः पूर्व की ओर अपेक्षाकृत नवीन चट्टानों के नीचे दबती चली गयी हैं। तटवर्ती मैदानी पट्टी एवं पीडमॉंट प्रदेश के बीच प्रपात-पंक्ति को विभाजक रेखा माना जा सकता है।

पीडमॉंट प्रदेश एवं ब्लूरिज दोनों मिलकर, ऐसा भूगर्भविदों का अनुमान है, पूर्व-निर्मित अप्लेचियन्स का स्वरूप प्रस्तुत करते हैं जबकि मध्यवर्ती घाटी कूटिका-क्रम एवं अप्लेचियन पठार आदि अपेक्षाकृत बाद की रचनाएँ हैं जो यूरोप के अल्टाइड्स के समकालीन हैं।[5] ये बाद के या नवीन अप्लेचियन्स कैम्ब्रियन से कार्बोनीफेरस युग तक की चट्टानों के बने हैं। परमियन युग में कूटिका-घाटी सम्भाग की इन चट्टानों पर अत्यधिक दबाव के फलस्वरूप मोड़ पड़े। दबाव की मात्रा उत्तर में सर्वाधिक थी जहाँ शेल चट्टानें स्लेट तथा कोयला एन्थ्रासाइट में परिवर्तित हो गयीं। यह स्थिति लगभग ब्रिटेन जैसी रही जहाँ दक्षिणी-वेल्स के पश्चिमी भाग में अधिक दबाव के फलस्वरूप तीव्र मोड़ों में एन्थ्रासाइट तथा शेष जगह सर्वत्र बिटूमिनस ही निकलता है। अप्लेचियन में भी अन्य स्थानों पर बिटूमिनस का प्राधान्य है।

---

5. Dury, G. H. and Mathieson, R. S.—The United States and Canada. P. 18.

(स) कूटिका-घाटी प्रदेश—पूर्व में ब्लूरिज तथा पश्चिम में अप्लेचियन पठार (कम्बरलैंड अलघेनी) के बीच एक ऐसा संभाग है जिसमें लगातार समानांतर घाटियों और कूटिकाओं का क्रम है। साधारणतया इस सम्भाग में एक कूटिका, फिर घाटी, फिर कूटिका, फिर घाटी……का क्रम है जिसका स्वरूप पेंसिलवेनिया तथा दक्षिणी-पश्चिमी वर्जीनिया राज्य में अत्यन्त स्पष्ट हो गया है। न्यूयार्क की हडसन की घाटी से मध्य अलाबामा राज्य तक विस्तृत बृहत-घाटी विश्व की सबसे लम्बी प्राकृतिक पहाड़ी घाटी है। अप्लेचियन की ग्राम-दिशा के अनुरूप ही इसको दिशा भी उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम है। अधिक विस्तार के कारण विभिन्न-क्षेत्रों में यह अलग-अलग नामों से जानी जाती है, यथा, डेलावेयर के पास लेहाइ घाटी सस्केहाना के उत्तर में लेबानोन घाटी, सस्केहाना के दक्षिण में कम्बरलैंड घाटी, उत्तरी वर्जीनिया में शेनान्डोआह तथा सम्पूर्ण वर्जीनिया राज्य में वर्जीनिया घाटी तथा टैनेसी राज्य में पूर्वी-टैनेसी की घाटी के नाम से जानी जाती है।

वृहद घाटी के रूप में अप्लेचियन्स को दक्षिण-उत्तर पार करने का बहुत सुगम साधन प्रकृति ने प्रदान किया है। इसके अतिरिक्त यह पूर्व का महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र भी प्रस्तुत करती है। घाटी के अधिकांश भागों में स्लेटी-भूरी मिट्टियाँ मिलती हैं, अपवाद स्वरूप दक्षिण में लाल-पीली मिट्टियों का आधिक्य है। वस्तुतः घाटी की अधिकांश मिट्टियाँ शेल तथा लाइमस्टोन जैसी पैतृक चट्टानों से बनी हैं। इसके विपरीत कूटिकाओं में कठोर बलुआ पत्थर तथा क्वार्ट-जाइट चट्टानें हैं। वृहत-घाटी के पश्चिम में अनेक शृंखलाबद्ध कूटिकाएँ हैं जो ऊँचाई तथा चौड़ाई की दृष्टि से अत्यधिक असमानता लिए हैं। सभी कूटिकाओं में 'गैप्स' हैं। नोक्सविले के दक्षिण में कूटिका-घाटी सम्भाग वृहत-घाटी में ही मिल जाता है। पूर्व में ब्लूरिज तथा पश्चिम अलघेनी-कम्बरलैंड की पहाड़ियों के प्रभाव के कारण कूटिका-घाटी सम्भाग में वर्षा अपेक्षाकृत कम (40 इंच) है। वृद्धि अवधि उत्तर में 176 तथा दक्षिण में 200 दिन है। यहाँ भी पहले सघन वन (ओक, हिकरी) तथा घास थी जिसे आदिवासी इन्डियनों एवं प्रारम्भिक प्रवासी-यूरोपियनों ने काट-जला कर समाप्त कर दिया।

(ब) अप्लेचियन-पठार—अप्लेचियन उच्च प्रदेश का पश्चिमी भाग अप्लेचियन-पठार के नाम से जाना जाता है। यह ऊँचा, शृंखलाबद्ध पठारी प्रदेश अपने उत्तर-दक्षिण विस्तार में भिन्न-भिन्न चौड़ाई लिए है। उत्तर में इसकी चौड़ाई 200 मील तक है परन्तु टिनेसी राज्य (दक्षिण) में अधिकतम चौड़ाई केवल 30 मील है। अधिक विस्तार होने के कारण इसके विविध स्थानीय नाम हैं यथा, उत्तर में कैटसकिल पर्वत पश्चिमी वर्जीनिया में अलघेनी [illegible] तथा आगे दक्षिण में यह कम्बरलैंड पठार के नाम से पुकारा जाता है। अप्लेचियन पठार एक पुनः उठा हुआ, अत्यधिक क्षयित तथा लगभग समान धरातल वाला पठार है। पठार में

शेल तथा बलुआ-पत्थर आदि चट्टानों का प्राधान्य है जिनके नीचे कोयला की मोटी पर्तें विद्यमान हैं। मोड़ पड़ने के कारण वे घाटियों के दोनों ओर खुली खुदाई के लिए उपलब्ध हैं।

अलघैनी पठार के उत्तरी भाग में हिमयुग में हिमनदों का विस्तार था जिनके फलस्वरूप इस सम्भाग में हिम-प्राकारों के स्पष्ट दर्शन होते हैं। हिम-घिसाव के कारण धरातल प्रायः समान है। घाटियों में हिम-बन्ध के कारण अनेक झीलों का आविर्भाव हुआ है। घाटियों में उत्तर-दक्षिण फैली ऐसी छः झीलें उल्लेखनीय हैं जो उत्तरी ओहियो एवं पेंसिलवेनिया राज्यों में हैं। अलघैनी पठार के उत्तरी भाग में स्लेटी-भूरी पोड्जोल मिट्टियों का विस्तार है अलघैनी पठार का दक्षिणी भाग, जो हिम-आकाश से मुक्त था, ज्यादा कटा-फटा है। कई घाटियाँ अत्यन्त सँकरी और गहरी (1,500 फीट तक) हैं। कानाव्हा घाटी में जलधारा पठार के तल से लगभग 1,400 फीट गहराई पर स्थित है।

कम्बरलैंड का पठार इतना अधिक कटा फटा है कि टैनेसी राज्य के कुछ भागों को छोड़कर उसका पठारी स्वरूप ही समाप्त हो गया है। अलघैनी तथा कम्बरलैंड के बीच की सीमा केंटुकी नदी की ऊपरी घाटी समझी जाती है।

अप्लेशियन क्रम की दोनों रचनाएँ, (प्राचीन एवं नवीन) उत्तर में न्यू इंगलैंड प्रदेश तक आगे बढ़ गयी हैं। इनमें से प्रथम यानी प्री-कैम्ब्रियन (पूर्वी) शृंखला न्यू इंगलैंड के पठार के रूप में विद्यमान है जबकि द्वितीय यानी पुराकल्पीय (पश्चिमी) हुडसन की खाड़ी के सहारे-सहारे आगे बढ़ती है। न्यू इंगलैंड के पठारी भाग पूर्व में समुद्र की ओर धीमा ढाल लिए हुए हैं। पठार के बीच-बीच में अत्यन्त प्राचीन एवं कठोर चट्टानों के भाग ऊँची चोटियों के रूप में खड़े हैं जो अनावृतिकरण के तीन चक्रों द्वारा भी पूरी तरह क्षयित नहीं हो पाए हैं। इन्हें मोनेडनॉक पर्वतों के नाम से जाना जाता है। ऊँचाई 4500–5000 फीट के बीच में है। सर्वाधिक ऊँचाई माउण्ट वाशिंगटन (6,288 फीट) के रूप में है। अपने सम-अक्षांशीय भागों की तरह न्यू इंगलैंड प्रदेश भी हिम-युग में हिम आवरण के नीचे था जिसने यहाँ की असमानताओं को घिसकर धरातल को समान बनाया है। यत्र-तत्र हिम खरोंच से बनी झीलें भी पर्याप्त हैं।

खाड़ी के तटीय मैदान :

संरचना की दृष्टि से खाड़ी के तटीय मैदान अटलांटिक तटवर्ती पट्टी से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं। यहाँ भी आधारभूत पतंदार चट्टानें दक्षिण (खाड़ी) की ओर क्रमशः गहरी होती जाती हैं। दूसरे शब्दों में क्रमशः काँप व अन्य नवीन जमावकृत तलछट की मोटाई बढ़ती जाती है। तटवर्ती पट्टी में कठोर चट्टानों के ऊपर उठे रह गए भाग 'एस्कार्पमेंटस' स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। यत्र-तत्र ये चिकनी मिट्टी गहरी, उपजाऊ मिट्टियों युक्त हैं जिनमें 'ह्यूमस' (उपजाऊ तत्व) की अधिकता

है। अटलांटिक तट की तरह यहाँ भी तट रेखा के सहारे-सहारे दलदल, लेगून-झीलें, रेत की अवरोधक मुंडेर तथा रेतीले टीलों का बाहुल्य है।

मिसीसीपी का विशाल डेल्टा प्रदेश सर्वाधिक समतल है। इस भाग में मिसीसीपी अपनी सहायकों सहित प्रतिवर्ष अरबों टन मिट्टी जमा करती है फलतः विस्तृत भागों में बाढ़ एक सामान्य समस्या हो गयी है। बाढ़कृत मैदान का विस्तार न्यू ग्रालिएन्स के 600 मील उत्तर तक में है। जलधाराओं के सहारे कृत्रिम-किनारे बनाकर इस समस्या पर नियन्त्रण के प्रयत्न किए गए हैं परन्तु पूर्णतः सफलता नहीं मिली है। मिसीसीपी किस गति से मलवा जमा कर रही है इसका अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि उसका डेल्टा समुद्र में चिड़िया के पंजे की तरह बहुत आगे तक बढ़ गया है। इस नदी-निर्मित थल भाग का विस्तार एवं भू-क्षेत्र वेल्स (ब्रिटेन) से कहीं अधिक है।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि खाड़ी के तट प्रदेश में उठाव हो रहा है। ऐसा सोचने के कई आधार हैं यथा, वर्तमान तट रेखा से भीतर की ओर लगभग 250 फीट की ऊँचाई पर भी तट रेखा होने के प्रमाण मिले हैं। कई स्थानों पर समुद्री जीवों के अवशेष भी मिले हैं जो इस तथ्य की सम्भावना प्रकट करते हैं कि यह भाग कभी न कभी समुद्र के नीचे महाद्वीपीय चबूतरे के रूप में रहा होगा। निष्कर्ष रूप में यह माना जा सकता हैं कि इस प्रदेश को वर्तमान स्वरूप प्रदान करने में उठाव तथा मिसीसीपी का भारी मात्रा में जमाव–इन दोनों तथ्यों का सहयोग रहा है।

मैक्सिको खाड़ी का युकतान प्रायःद्वीप भी धरातलीय स्वरूप में फ्लोरिडा से मिलता-जुलता है। यह भी एक नीचा भाग है जहाँ चूने की चट्टानों में भूमिगत जल ने अनेक कन्दराओं, छेदों आदि को जन्म देकर कार्स्ट-दृश्यावलि का स्वरूप प्रस्तुत किया है। लेकिन दोनों में एक स्पष्ट अन्तर है। युकतान प्रायःद्वीप में जल-तल औसत धरातल से 400 फीट नीचा है अतः अधिकांश भाग सूखा तथा चट्टानी है जबकि फ्लोरिडा में ऊँचा जल-तल होने से आर्द्र तथा दलदलीय दशाएँ हैं।

मध्यवर्ती निचले भाग[6] :

---

6. कभी-कभी 'मध्यवर्ती निचले भाग' शब्द से उस विशाल भू-भाग का अर्थ लगा लिया जाता है जो हडसन की खाड़ी, अप्लेचियन्स, मैक्सिको तथा रॉकी क्रम के बीच स्थित है वस्तुतः इस विशाल भू-भाग में विविध भू-आकृतियाँ और धरातलीय स्वरूप हैं। अतः इस शब्द का प्रयोग एक सीमित भू-क्षेत्र के सन्दर्भ में उचित है और जैसा इस पुस्तक में किया गया है।

स० रा० अमेरिका के इस कृषि हृदय प्रदेश का विस्तार पश्चिम में लगभग 100° पश्चिमी देशान्तर, पूर्व में अप्लेशियन के पठार उत्तर में महान् झीलों एवं दक्षिण में खाड़ी के तटीय मैदानों तक है। इस प्रकार यह पूर्व-पश्चिम में लगभग 800–900 मील तथा उतना ही उत्तर-दक्षिण में फैला है। यह विशाल निचला प्रदेश पूर्णतः समतल मैदान न होकर वस्तुतः असमतल ढालू मैदानी स्वरूप लिए है। इसके धरातलीय स्वरूप, मिट्टियों व अन्य स्वरूपों को सही रूप में समझने के लिए इस प्रदेश के भूगर्भिक इतिहास पर सामान्य दृष्टिपात वांछनीय है।

भूगर्भविदों का अनुमान है कि इस भाग में पहले समुद्र था जिसके तल में पैलियोजोइक युगीन तलछट के प्रभाव से इस निचले मैदानी भागों का उदय हुआ। मिसीसीपी, मिसूरी, ओहियो व टिनेसी आदि नदियों ने भी भारी मात्रा में तलछट जमा करके इसके वर्तमान स्वरूप के निर्माण में सहयोग किया है। पूर्वी भाग में इन जमावों ने प्राचीन रवेदार चट्टानों को ढक लिया है वस्तुतः पूर्व में आन्तरिक मैदान एवं अप्लेशियन उच्च प्रदेशों के संक्रमण क्षेत्र हैं जहाँ अधःस्तरीय चूने की चट्टानों के ऊपर बाद की परतदार चट्टानों मुख्यतः सैंडस्टोन का जमाव है। अप्लेशियन उच्च प्रदेशों के मूल एवं पुनरोत्थान के समय इस संक्रमण पट्टी पर भी दबाव पड़ा और ये कुछ ऊपर उठ गए। कहीं-कहीं इनकी ऊँचाई 800–900 फीट तक है। हल्के मोड़ भी पाए जाते है। सम्भवतः इसीलिए इन्हें कभी-कभी भीतरी नीचे पठार के नाम से भी जाना जाता है। जहाँ कहीं भी अधःस्तरीय चूने की चट्टानें ऊपर निकल आयी हैं, जल के सहयोग से कार्स्ट-भू-दृश्यावलि का आविर्भाव हो गया है।

क्वाटरनरी हिमयुग में आन्तरिक मैदान का उत्तरी भाग हिम आवरण युक्त था। अनुमान किया जाता है कि हिमनदों का अन्तिम पड़ाव सेंट लुई तक था। मैदान के उत्तरी भागो में हिमानीकृत मलवा से बने चूर्ण का बाहुल्य इस तथ्य का द्योतक है। अपने सम्पूर्ण विस्तार में 500 फीट से नीचा (समुद्रतल से) यह मैदानी भाग अपने अधिकतर भागों में उपजाऊ मिट्टियों से ढका है। आधे उत्तरी भाग में मोरेनिक जमावो से प्राप्त चूरा बिछा है। यथा, ओहियो, इण्डियाना एवं इलीनॉइस राज्यों में सम्पूर्ण कृषिगत भूमि में इसी प्रकार की मिट्टियों का विस्तार है। मैनीटोबा तथा उत्तरी डकोटा राज्यों का पर्याप्त भाग झील क्षेत्रों के भराव से बना मैदानी क्षेत्र है[7] अतः यहाँ उपजाऊ मिट्टियां हैं। शेष भाग, जैसे ओकलाहामा या टैक्सास राज्यों में, जो कभी भी हिम आवरण से ढका नहीं था, काँप या लोयस मिट्टियो का विस्तार है।

महान् झीलों, जो आन्तरिक निचले प्रदेश के उत्तर में स्थित है, का निर्माण-काल आज से लगभग 20–25 वर्ष पूर्व माना जाता है जबकि क्वाटरनरी हिमयुग

7. Monkhouse, F. J. & Cain, H.R.—North America P. 71.

में विशाल हिमानियों की खुरचनों के फलस्वरूप ये धँसाव क्षेत्र बने। हिमयुग की समाप्ति पर हिम-पिघलाव से प्राप्त जल इनमें भर गया। मैदान का ठीक मध्य भाग जो देशान्तरीय विस्तार में मिसीसीपी डेल्टा से झीलों तक एक उत्तर-दक्षिण फैली पट्टी के रूप में है बहुत बाद में भरा गया है। इसे भरने का श्रेय मुख्यतः मिसीसीपी जल प्रवाह क्रम को ही है। यूरोपियन प्रवासियों के आने के समय पर इसका पर्याप्त भाग दलदलीय था जिसे सुखाकर कृषि मेखलाओं में परिवर्तित किया गया।

यू. एस. ए. के विशाल आन्तरिक मैदानी भाग की सभी जलधाराएँ मिसीसीपी जल प्रवाह क्रम में मिलकर मैक्सिको की खाड़ी में गिरती हैं। इस देश में पूर्व में अप्लेचियन तथा पश्चिम में रॉकी क्रम दो बड़े जल विभाजक हैं। रॉकी के पश्चिम की नदियाँ प्रशान्त तथा अप्लेचियन के पूर्व की नदियाँ अटलांटिक महासागर में गिरती हैं। इन दोनों उच्च प्रदेशों से जो जलधाराएँ भीतर की ओर प्रवाहित हैं उनमें से अधिकांश मिसीसीपी में मिलकर मैक्सिको की खाड़ी में जाती है। इस प्रकार मिसीसीपी-क्रम में पश्चिम या रॉकी-क्रम से मिसूरी तथा अर्कन्सास एवं पूर्व या अप्लेचियन-क्रम से ओहियो तथा टिनेंसी आदि बड़ी-बड़ी नदियाँ आकर मिलती हैं। इन बड़ी नदियों के अतिरिक्त पश्चिम से रैड, प्लाटे, पेकोज तथा कोलोरैडो (यह कोलोरैडो पठार की कोलोरैडो नदी से पृथक है) एवं पूर्व से कम्बरलैंड तथा अलघैनी नदियाँ आकर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में मिसीसीपी के जल में वृद्धि करती हैं। भीतरी मैदान के निर्माण में इन सभी जलधाराओं द्वारा लाए और जमा किए गए मलबे का आनुपातिक महत्व रहा है। अतः इनके प्रवाह स्वरूप पर विहंगम दृष्टि वांछनीय है।

मिसीसीपी संसार की बड़ी नदियों में से एक है जिसकी लम्बाई 3,760 मील है। अगर इसकी प्रधान सहायक मिसूरी को भी इसमें जोड़ लिया जाए तो यह लम्बाई 4,500 मील तथा यह नदी विश्व का सबसे बड़ा जल-प्रवाह क्रम हो जाती है। मिसीसीपी का बेसिन साइबेरिया की नदियों की तरह भारी विस्तार में है। मिसीसीपी का उद्‌गम सुपीरियर झील के पश्चिम की ओर होती है जहाँ यह सेंट पॉल, लां-कोसे आदि नगरों को जोड़ती हुई चलती है। डेवेन पोर्ट के निकट आकर इसकी दिशा दक्षिणवर्ती हो जाती है। सेंट लुई के पास इसमें मिसूरी अपनी सहायकों सहित आ मिलती है। आगे चलकर यह नदी ओजार्क ओचीता उच्च प्रदेशों का चक्कर लगाती, कैरो के निकट अप्लेचियन उच्च प्रदेशों से निकल कर ओहियो तथा कम्बरलैंड आदि नदियों को शामिल करती हुई क्रमशः चौड़ी होती जाती है। मेम्फिस से लगभग 250 मील दक्षिण में अर्कन्सास नदी इसमें आकर मिलती है। अर्कन्सास की तरह रैड नदी भी इसकी पश्चिमी सहायक है जो डेल्टा प्रदेश के ऊपरी भाग में आकर मिलती है। नील की तरह मीसीसीपी भी

विशाल, तिकोनाकार डेल्टा बनाती न्यूग्रार्लीन्स के पास मैक्सिको की खाड़ी में गिरती है। डेल्टा प्रदेश की लम्बाई 130 मील से अधिक है।

अगर प्रति वर्ष अरबों मन काँप जमा करके, विशाल बाढ़कृत मैदान एवं डेल्टा बनाने की दृष्टि से मिसीसीपी कृषि क्षेत्रों में वरदान स्वरूप है तो इसकी भयानक बाढ़ें एक भीषण अभिशाप भी रही है। पिछली शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही यह हालत थी कि प्रति वर्ष लाखों लोग बेघरबार हो जाते थे और हजारों एकड़ भूमि जलानुवेधन का शिकार हो जाती थी। नदी को नियन्त्रित एवं बाढ़ों को संयमित करने के लिए अनेक प्रयत्न भी किए गए परन्तु सब व्यर्थ। अन्त में इस प्राकृतिक शक्ति से मानव ने समझौता किया, जलानुवेधन क्षेत्रों में घास, वन लगाए गए, कुछ भराव किया गया। अब मिसीसीपी की बाढ़ें उतनी भयानक नहीं है।

रॉकी क्रम के सानजुग्रान पर्वतों से निकल कर अर्कन्सास (1,400 मील) नदी प्यूबिलो के निकट मैदान में प्रवेश करती है। यह पहले पूर्व फिर दक्षिण-पूर्व की ओर बह कर तुलसा से जरा आगे कर्नेडियन को मुख्य सहायक के रूप में अंगीकार करती, ओजार्क-ओचीता उच्च प्रदेश को बीच में अपनी घाटी द्वारा काटती हुई अर्कन्सास सिटी के पास मिसीसीपी नदी में मिल जाती है। रॉकी-क्रम से ही निकल कर आने वाली मिसूरी मिसीसीपी की प्रधान सहायक है और उसके आधे से जल का अविरल स्रोत है। बिगबेल्ट पर्वत से निकल कर आने वाली यह नदी फोर्टपैक तथा गैरीसन झील में होकर प्रवाहित है। येलोस्टोन तथा प्लाटे इसकी प्रधान सहायक है जिनके जल को लेकर सेंट लुई के पास यह मिसीसीपी से मिलने को ही होती है कि कसांस नदी और आकर इसके जल में वृद्धि कर देती हैं।

पूर्व से आकर मिलने वाली जलधाराओं में ओहियो सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। ईरी झील के उत्तर-पूर्व में एल मीरा के निकट अप्लेशियन उच्च प्रदेशों से निकल कर आने वाली यह नदी अपनी प्रमुख सहायक टैनेसी और कम्बरलैण्ड को साथ लेती हुई, लगभग 1,300 मील लम्बाई में बहकर कैरो नगर के निकट मिसीसीपी में मिल जाती है। संगम पर कई मीलों तक मिसीसीपी एवं ओहियो के जल पृथक नजर आते हैं जो शुष्क पश्चिमी एवं आर्द्र पूर्वी भागों की दशाओं को भली-भांति प्रतिबिम्बित करते हैं। मिसीसीपी का जल भूरा एवं गन्दला होता है जबकि ओहियो का जल नीला तथा स्वच्छ दिखाई देता है।

भीतरी उच्च प्रदेश :

मिसीसीपी के बाढ़कृत मैदान के उत्तरी भाग के दोनों ओर लगभग मेम्फिस तथा सेंट लुइस के बीच में नीचे पठार सादृश्य उच्च प्रदेशों का विस्तार है जो संरचना व धरातल की दृष्टि से एक-दूसरे से पर्याप्त भिन्नता लिए हैं।

पूर्वी भीतरी उच्च प्रदेशों का विस्तार केंटुकी व टेनेसी राज्यों में है। ये उच्च प्रदेश उन परतदार चट्टानों में ऊर्ध्ववर्ती मोड़ पड़ने से बने हैं जो वर्तमान अप्लेशियन पठार क्रम के ठीक पश्चिम में पेलियोजोइक युगीन उथले सागरों में जमा थीं। इनमें नीचे चूने की चट्टानों का विस्तार था जो कि यत्र-तत्र ऊपर की सैंड-स्टोन चट्टानों के हट जाने से उघड़ आयी है। जलीय क्रियाओं से इनमें कार्स्ट दृश्यावलि बन गयी है। केंटुकी राज्य की मैमथ कंदराएँ जो अब राष्ट्रीय-पार्क के रूप में सुरक्षित रखी गयी हैं, इसी प्रकार की रचनाएँ हैं।

इसी प्रकार की कार्स्ट दृश्यावली ओजार्क पठार में मिलती है। मिसीसीपी के पश्चिम में मिसूरी, अर्कन्सास, कन्सास तथा ओकला आदि राज्यों के भागों में विस्तृत ओजार्क-ओचीता उच्च प्रदेश दूसरा भीतरी उच्च प्रदेश प्रस्तुत करते हैं। इन उच्च प्रदेशों को तीन उपविभागों में रखा जा सकता है—(1) ओजार्क संभाग, जो सबसे बड़ा पठारी भाग है। इसमें सलेम तथा स्प्रिंग फील्ड एवं सेंट फ्रांकोइस (मिसूरी) तथा बोस्टन (अर्कन्सास) की पहाड़ियाँ शामिल हैं। (2) अर्कन्सास नदी की घाटी, जो वस्तुतः भूगर्भिक हलचलों से बनी एक दरार घाटी है जिसे नदी ने अपना लिया। बनावट की दृष्टि से यह ठीक अप्लेशियन के कूटिका-घाटी प्रदेश की घाटियों जैसी हैं। (3) ओचीता पर्वत, जिसकी सर्वाधिक ऊँचाई (2800 फीट) अर्कन्सास ओकलाहामा राज्यों की सीमा के निकट है गुम्बदाकार ओजार्क पठार प्री-कैम्ब्रियन युगीन ग्रेनाइट जैसी कठोर चट्टानों का बना है। सीमावर्ती तथा पर्वत-पदीय प्रदेशों में कार्बोनीफरस युगीन चट्टानें हैं जबकि ग्रेनाइटस शिखर क्षेत्र में नग्न रूप में विद्यमान हैं। ओजार्क उच्च प्रदेश कहीं भी 1600 फीट से ज्यादा ऊँचे नहीं हैं।

ग्रेट प्लेन्स :

100° पश्चिमी देशांतर से लेकर रॉकी पर्वत के चरण प्रदेश तक धरातल तेजी से उठता चला गया है। तेजी से उठाव का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि ग्रेट प्लेन्स के पूर्वी सीमांत समुद्र से 1800 फीट तथा पश्चिमी सीमांत लगभग 4500–5000 फीट ऊँचे हैं। दूसरे शब्दों में उठाव की यह गति प्रति वर्ग मील में 8-10 फीट है। अगर ढाल तत्व को नजरअंदाज कर दिया जाए तो मोटे तौर पर ये मैदानी भाग समतल ही हैं। इनकी चौड़ाई दक्षिण से उत्तर को क्रमशः कम होती जाती है। मिसीसीपी के डेल्टा प्रदेश तथा रॉकी के बीच में टेक्सास राज्य में इनकी चौड़ाई लगभग 600 मील है जबकि उत्तर की ओर क्रमशः कम होती जाती है। दूसरे शब्दों में क्रमशः उत्तर की ओर रॉकी क्रम तथा कनाडियन शील्ड जैसे-जैसे एक दूसरे के नजदीक आते-जाते हैं, ग्रेट प्लेन्स सँकरे होते जाते हैं।

भूगर्भिक संरचना की दृष्टि से ये भी मध्यवर्ती निचले प्रदेशों से मिलते-जुलते हैं। अधःस्तरीय चट्टानों के रूप में पेलियोजोइक युगीन तलछट बिछी है जिसके ऊपर रॉकी क्रम से निकलकर पूर्व को प्रवाहित नदियों ने भारी मात्रा में तलछट जमा कर दी है। ग्रेट प्लेन्स का थोड़ा सा उत्तरी मार्ग कभी हिमानी-निर्मित झील अगासिज का भी तल रहा है। झील के सूखने पर यह भाग उपजाऊ मैदान के रूप में प्रस्तुत हुआ। दक्षिणी डकोटा राज्य में अपवाद स्वरूप प्राचीन कठोर, रवेदार चट्टानों से बनी पहाड़ियाँ (6000 फीट) हैं। संक्षेप में, दक्षिण से उत्तर की ओर ग्रेट प्लेन्स को निम्न धरातलीय उपविभागों में रखा जा सकता है : (1) रायो ग्रांडे प्लेन (2) एडवाईस पठार (3) ऊँचे मैदान (4) राटन मैसा (5) रेतीली पहाड़ियाँ (6) काली पहाड़ियाँ (7) बैड लैंटस (8) उत्तरी ग्रेट प्लेन्स। इनमें से राटन मैसा, नैब्रास्का की रेतीली पहाड़ियाँ, दक्षिण डकोटा की काली पहाड़ियाँ तथा डकोटा के बैडलैंडस (प्राचीन कठोर चट्टानों से बने) वस्तुतः पर्वतीय पहाड़ी क्षेत्र हैं। इन्हें ग्रेट प्लेन्स में इनकी मध्यवर्ती स्थिति के कारण शामिल किया जाता है।

ग्रेट प्लेन्स में भू-क्षरण की समस्या बड़ी गंभीर है। जलवायु शुष्क है, वनस्पति का अभाव है, तीव्र हवाएँ चलती हैं, नदियों द्वारा भी नाली कटाव होता है। फलतः नेब्रास्का, ओकलाहामा, टैक्सास, अर्कन्सास तथा डकोटा आदि राज्यों में प्रति वर्ष हजारों एकड़ भूमि क्षरण के समर्पित हो जाती है। पिछले तीन दशकों में यहाँ भौगोलिक वातावरण के अनुकूल ही शुष्क कृषि करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

रॉकी पर्वत शृंखला :

पूर्व में ग्रेट प्लेन्स एवं पश्चिम में अन्तःपर्वतीय पठारी भागों के मध्य संयुक्त राज्य अमेरिका की सबसे ऊँची एवं क्रमबद्ध पर्वत शृंखलाएँ विद्यमान हैं जो रॉकी-माला के नाम से जानी जाती हैं। रॉकी पर्वत क्रम का विस्तार सम्पूर्ण उत्तरी महाद्वीप में, अलास्का के ब्रुक्स पर्वत से लेकर मेक्सिको के सियरामाद्रे तक है। वस्तुतः यह पश्चिमी कॉर्डीलेराज[8] का पूर्वी संभाग है जिसमें पर्वत शृंखलाएँ अपेक्षाकृत ज्यादा क्रमबद्ध हैं। रॉकी-क्रम की चौड़ाई विभिन्न स्थितियों में भिन्न-भिन्न औसतन 100 से 300 मील तक है। सर्वाधिक चौड़ाई मध्य भाग यानी सं० रा० अमेरिका में है। आम विस्तार दिशा दक्षिण तथा उत्तर-पूर्व है। न केवल चौड़ाई वरन् ऊँचाई की दृष्टि से भी अमेरिका वाला भाग ज्यादा महत्वपूर्ण है। लगभग 346 चोटियाँ, इस संभाग में, 13,000 फीट से ज्यादा ऊँची हैं।

8. Cordillera, a Spanish word frequently used to describe a long series of broadly Parallel mountain ranges.

भूगर्भविदों का अनुमान है कि जिस स्थल पर आज विशाल रॉकी पर्वत सिर उठाए खड़े हैं वह भाग क्रेटेशियस युग में एक उथले सागर के रूप में था। जिसका विस्तार मैक्सिको की खाड़ी से लेकर आर्कटिक महासागर तक था।[9] युग के अन्तिम दिनों में इस भाग में उठाव हुआ, लगभग 20,000 फीट मोटी तह में जमा तलछट में मोड़ पड़े। इस उठाव के बाद क्षयकारी शक्तियों ने घिसना शुरू किया। ऊँची चोटियों का बहुत सा भाग काट कर बेसिनों में जमा कर दिया गया। नदियों ने अपनी घाटियाँ विकसित कर लीं। बाद में टरशरी युग में अल्पाइन पर्वत निर्माणकारी घटना के समय पुनः इस भाग में दबाव पड़ा तथा पुनः उठाव क्रिया हुई। इस पुनरोत्थान के साथ नदियों की घाटियाँ और गहरी हुईं। टरशरी युग के बाद फिर से क्षयकारी शक्तियों ने अपना चक्र प्रारम्भ कर दिया। क्वाटरनरी हिमयुग में उत्तरी रॉकी श्रेणियाँ हिमानियों से प्रभावित रहीं। आज भी ऊँचे भागों में हिमानियाँ क्षय कार्य में रत हैं। रॉकी के दक्षिणी संभाग में हिमानियों का इतना प्रभाव नहीं रहा है। अक्षांशीय स्थिति के कारण यहाँ हिम रेखा की ऊँचाई भी ज्यादा है। केवल कुछ चोटियाँ ही हिम-आवरण युक्त हैं।

स्पष्ट है कि रॉकी पर्वत अल्पाइन-व्यवस्था के पर्वतों के उत्थान से पूर्व ही अपने अस्तित्व में आ चुके थे। इनके उत्थान के साथ भारी पैमाने पर ज्वालामुखी क्रिया, मोड़ एवं दरारी क्रिया हुई। इन सबको सम्मिलित रूप से लारामिडे उत्थान क्रांति के नाम से जाना जाता है। इसी भूगर्भिक क्रांति के फलस्वरूप, रॉकी शृंखलाओं के साथ-साथ विशाल इडाहो ज्वालामुखी पर्वत (20,000 वर्ग मील में फैला एवं 12,000 फीट ऊँचा) का उदय हुआ। साथ ही 900 मील लम्बी उस घाटी का आविर्भाव हुआ जिसमें होकर कोलम्बिया, फ्रेजर, पैरेस्निप तथा फिनले आदि नदियाँ बहती हैं। लावा के उद्गारों ने न्यू मैक्सिको तथा व्योमिंग आदि राज्यों के विस्तृत भागों में लावा की पर्त बिछा दी हैं। अनेक 'गैसर' एवं गर्म स्रोतों का आविर्भाव हुआ। इन प्रदेशों को 'यलोस्टोन नेशनल पार्क' के रूप में प्रकृति की नग्न दृश्यावलियों को देखने के लिए सुरक्षित रखा गया है।

रॉकी पर्वत माला को साधारणतया चार संभागों में रखा जा सकता है। 1. दक्षिणी रॉकी 2. मध्य रॉकी 3. उत्तरी रॉकी 4. बेसिन एवं पार्क। मध्य एवं दक्षिणी रॉकी उत्तरी रॉकी (जो यलोस्टोन नेशनल पार्क के उत्तर से प्रारम्भ होता है) से सर्वथा भिन्न हैं। यहाँ शृंखलाएँ उत्तर-दक्षिण विस्तार में रेखात्मक रूप में फैली हैं जबकि उत्तरी रॉकी जो प्रमुखतः पर्तदार चट्टानों के बने

9. Wallace, W. Alwood—The Physiographic Provinces of North America. p. 295-300.

हैं, में रेखात्मक व क्रमबद्ध श्रेणियाँ न होकर पृथक-पृथक पर्वत समूह है। हिमानियों ने गहरी 'यू' आकार की घाटियों का निर्माण किया है। इन घाटियों पर खड़ी पर्वत चोटियाँ और भी ज्यादा ऊँची लगती हैं। ऊपरी भागों में दृश्यावली ठीक आल्प्स जैसी है जहां हिमानियों ने चोटियों को खरोंच-खरोंच कर गोलाकार एवं घाटियों को चौड़ा तथा गहरा कर दिया है।

संयुक्त राज्य अमेरिका की सीमा में स्थित रॉकी क्रम में सबसे ज्यादा ऊँची एवं क्रमबद्ध श्रेणी पूर्व में है। आगे भी शृंखलाबद्ध रूप में चलती गई यह श्रेणी ग्रेट प्लेन्स के ऊपर ठीक दीवाल जैसा स्वरूप लिए है। अन्य शृंखलाओं में वासाच तथा पार्क आदि उल्लेखनीय हैं इन शृंखलाओं को अनेक स्थानों पर अनावृतिकरण के साधनों ने इतना काट दिया है कि आधारभूत रवेदार चट्टानें निकल आई हैं। ग्रेट प्लेन्स के ऊपर खड़ी हुई शृंखला की औसत ऊँचाई 10, से लेकर 14,000 फी० तक है। सर्वाधिक ऊँचाई माउंट एलबर्ट (14,431 फी०) के रूप में है। यह चोटी पार्क श्रेणी में उस घाटी के थोड़ा दक्षिण में स्थित है जहां कोलोरैडो नदी रॉकी को काट कर दक्षिण-पश्चिम की ओर आगे बढ़ती है। दक्षिण में उत्तर की ओर यह शृंखला विविध, क्रमशः ग्वाडालूपे, सांग्रे-डीक्राइस्टो, पार्क, विडरिवर एवं बिगहॉर्न आदि नामों से जानी जाती है। लगातार होने के कारण रॉकी की यह शृंखला यातायात में सदा से एक बहुत बड़ी बाधा रही है। इसके सम्पूर्ण विस्तार (स. रा. अमेरिका में) केवल एक दर्रा है जो व्योमिंग राज्य में 7000 फी. की ऊँचाई पर स्थित है। इसी दर्रे में होकर अन्तर्महाद्वीपीय यातायात मार्ग गुजरते हैं।

अन्तः पर्वतीय पठारी प्रदेश :

पूर्व में रॉकी पर्वत क्रम एवं पश्चिम में सियरानेवादा तथा कास्केड पर्वत शृंखलाओं के मध्य स्थित यह प्रदेश स. रा. अमेरिका का एक विशिष्ट प्रकार का प्रदेश है। इसका विस्तार बहुत है। वाशिंगटन, एरीजोना, कोलोरैडो, उटाह, इडाहो, नेवादा, ओरेगन, व्योमिंग तथा न्यूमैक्सिको आदि राज्यों को पर्याप्त भाग इन शुष्क, उच्च पठारी भागों ने घेरा हुआ है। धरातल बड़ा असमान है। कुछ स्थानों पर पठार ही रॉकी शृंखलाओं के बराबर ऊँचे हैं जबकि मृत्यु घाटी में धरातल समुद्रतल से भी लगभग 280 फी. नीचा है। मोड़ एवं दरारी क्रिया खूब हुई है। काडोलैराज के उत्थान के समय इन भागों में भी दबाव पड़ा और उत्थान हुआ। फलतः क्षय में तीव्रता आई, नदियों में कटाव की शक्ति बढ़ी तथा घाटियाँ बहुत गहरी हुईं। अधिकांश हिस्सों में मौलिक चट्टानें हैं। यथा, ऊटा तथा नेवादा राज्यों में विस्तृत ग्रेट बेसिन पठार में जमावकृत पुराकल्पीय चट्टानों का विस्तार है तो कोलम्बिया पठार में क्षैतिज क्रम में लावा की पर्तें बिछी हैं। तटवर्ती पहाड़ियों तथा नेवादा कॉस्केड क्रम के एक प्रकार से वृष्टि छाया प्रदेश बन जाने के

कारण समस्त अंतर्पर्वतीय पठार शुष्क है। बहुत से भाग ऐसे हैं जहाँ 1 इन्च भी वर्षा नहीं होती। अतः गर्मी एवं सूखा से चट्टानों में विखंडन एक निरन्तर प्रक्रिया है। सारांश में सम्पूर्ण प्रदेश में प्रकृति की विचित्रताएँ अपने नग्न रूप में विद्यमान हैं। अध्ययन की सफलता के लिए पठारी प्रदेश को तीन उपविभागों में समूहबद्ध किया जा सकता है। 1. कोलम्बिया एवं स्नेक लावा पठार 2. ग्रेट बेसिन 3. कोलोरैडो पठार।

कोलम्बिया एवं स्नेक लावा पठार—कोलम्बिया पठार पश्चिम में कॉस्केडस तथा पूर्व में रॉकी पर्वत शृंखलाओं के मध्य स्थित है। कोलम्बिया नदी पठार के उत्तरी भाग तथा स्नेक मध्य में होकर बहती है। साधारणतः जैसा कि नाम से भी

पश्चिमी सं.रा. अमेरिका
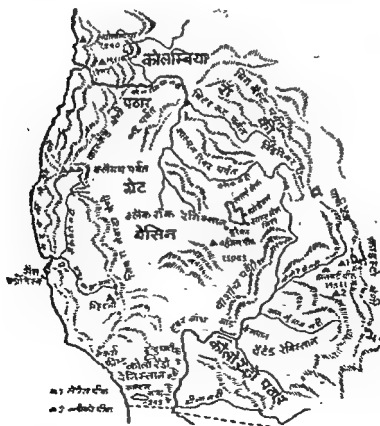
चित्र–5

प्रकट है, इस संभाग को पठारी स्वरूप ही समझा जाता है जबकि धरातलीय लक्षण कुछ अन्य हैं। एक पठार की तरह इसका धरातल समान नहीं है वरन विविध भू-आकारों (पर्वत, पठार, पहाड़ी, दरारें, मैदान, कूटिकाएं, घाटियाँ) युक्त हैं। कैनोजोइक युग में इस भाग में भारी मात्रा में ज्वालामुखी क्रिया हुई और समस्त क्षेत्र में लावा प्रसारण हुआ।[10] लावा की मोटी पर्तें जम गई जैसाकि कोलम्बिया और स्नेक ने जो घाटियाँ और जल प्रपात बनाए हैं, उनसे स्पष्ट है। लावा की पर्तों के जमाव के पश्चात दबाव तथा मोड़ पड़े। फलस्वरूप धरातल में असमानताएँ आयीं, कूटिकाएं तथा पहाड़ियाँ बनीं। आज स्थिति यह है कि कुछ भाग समुद्रतल से भी नीचे है जबकि कुछ एक पर्वत 6000 फी. ऊँचे हैं। इस संदर्भ में वह शृंखला उल्लेखनीय है जो लावाकृत क्षेत्र को दो बराबर भागों में विभाजित करती हुई वाशिंगटन तथा ओरेगन राज्यों में फैली है। ब्लू पर्वत के नाम से जानी जाने वाली यह शृंखला मोड़ों के शिखर भाग से बनी कूटिका है।

हिम युग में यह सम्भाग भी प्रभावित हुआ। कोलम्बिया नदी ने इस समय में अपना मार्ग कई बार बदला तथा कई अस्थायी घाटियाँ बनायी। ऐसी ही एक घाटी (ग्रांड कूली) में बाँध बनाकर जल विद्युत शक्ति गृह स्थापित किया गया है। प्रदेश में कुछ उपजाऊ बेसिन उल्लेखनीय हैं। दक्षिण-पूर्वी वाशिंगटन राज्य में चारों तरफ लावा जमाव कृत उच्च प्रदेशों से घिरा हुआ कोलम्बिया बेसिन है। इस बेसिन का पूर्वी भाग, जिसे पालुजे कहते हैं, लोयस से ढकी नीची पहाड़ियों युक्त है। वर्षा भी यहाँ पर्याप्त होती है। अतः कृषि की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। दक्षिणी इडाहो राज्य में स्नेक नदी बेसिन स्थित है। मध्य ओरेगन राज्य में हार्नी बेसिन तथा उच्च मैदान (रेतीले भाग) विद्यमान हैं जो ब्लू पर्वत तथा ग्रेट बेसिन के मध्य छोटे, भीतरी, उथले बेसिनों के समान हैं।

(ब) ग्रेट बेसिन : फ्रांस के बराबर भू-क्षेत्र घेरे यह शुष्क प्रदेश पश्चिम में सियरे नेवादा-कॉस्केडस क्रम तथा पूर्व में वाशाच पर्वत एवं उटाह के उच्च पठारी प्रदेश के मध्य स्थित है। इसके अन्तर्गत नेवादा तथा ऊटा के अधिकांश भाग शामिल है। प्रदेश के प्रमुख धरातलीय लक्षण उत्तर-दक्षिण फैली पर्वत श्रेणियाँ, जो एक दूसरे से पृथक हैं तथा आंतरिक जल-प्रवाह है। इसके धरातलीय स्वरूप के आधार पर वस्तुतः इसे बेसिन तथा पर्वत श्रेणी प्रदेश कहना ज्यादा उपयुक्त होगा। भूगर्भविदों का अनुमान है कि ग्रेट बेसिन का उत्थान टरशरी युग में सिरारानेवादा-कॉस्केडस के अभ्युदय के समय हुआ। इसकी औसत ऊँचाई 3 से 7000 फीट है। मध्य भाग में उत्तर-दक्षिण फैली श्रेणियाँ प्रायः छोटी हैं। सर्वाधिक ऊँचाई व्हीलर पीक (13,003 फीट) के रूप में है।

---

10. Hudson, F.S.-North America p. 311

मध्यवर्ती श्रेणियों एवं वाशाच पर्वत के बीच स्थित एक विशाल दरार क्रम हैं जिसके पर्याप्त भाग अब पट गए हैं। इसी दरार क्रम के उत्तरी भाग में विशाल 'साल्ट लेक' विद्यमान है जो लगभग 2000 वर्गमील भू-भाग घेरे हुए है। ऐसा अनुमान है कि यह झील पहले आज से दस गुनी बड़ी थी जिसके प्राचीन तटवर्ती चिन्ह आज भी देखे जा सकते हैं। ये चिह्न थल में सैकड़ों फीट की ऊँचाई पर विद्यमान हैं। अभी भी निरंतर साल्ट लेक सिकुड़ रही है। वाशाच से जो नदियाँ इसमें आकर गिरती थीं उन्हें सिंचाई के लिए प्रयोग किया जाने लगा है। वर्तमान मे साल्ट लेक की अधिकतम गहराई 18 फीट है। पानी अत्यधिक खारा है।' इस विशाल अन्तः जल-प्रवाह प्रदेश में साल्टलेक के अतिरिक्त अन्य झीलों में कारसन, पैरामिड तथा हम्बोल्ट उल्लेखनीय हैं। ये तीनों प्लीस्टोसीन युगीन एक विस्तृत झील लाहोन्तान की अवशिष्ट हैं। इसी प्रकार से साल्टलेक भी प्लीस्टोसीन युगीन विस्तृत बोनेविले का अवशेष भाग है।[11]

दक्षिणी-पश्चिमी भाग में अनेक नमकीन चट्टानों वाले टीलों और श्रेणियों के मध्य गहरी घाटियाँ हैं। समुद्र तल से 280 फीट नीची मृत्यु घाटी भी इसी प्रकार की एक घाटी है 130 मील लम्बी तथा 6–14 मील चौड़ी यह घाटी पूर्णतया रेगिस्तानी है। इसका निर्माण भू-भाग के धँसकने से बनी एक दरार घाटी में हुआ है। यह घाटी इतनी गर्म और शुष्क है कि प्राणी जगत के लिए इसमें निवास करना असम्भव है।

ग्रेट बेसिन के आंतरिक जल प्रवाह प्रदेश का विस्तार लगभग 2 लाख वर्ग मील में है। हम्बोल्ट ग्रेट बेसिन की सबसे बड़ी नदी है। यह नेवादा राज्य में होकर, लगभग 500 मील बहने के पश्चात् अपने नाम की ही एक नमकीन झील में मिल जाती है।

(स) **कोलोरैडो पठार :** प्रदेश के दक्षिण-पूर्व में स्थित इस उच्च पठारी भाग का विस्तार एरीजोना, न्यूमैक्सिको तथा ऊटा आदि राज्यों में है। पठार के उत्तरी भाग, जो 5000 से 10,000 फीट तक ऊँचे हैं, में वाशाच, ऊइनटाश, मध्य एरीजोना के उच्च प्रदेश तथा रॉकी पर्वत हैं। दक्षिणी भाग (जिसमें दक्षिणी-पश्चिमी एरीजोना राज्य का गीला बेसिन भी शामिल है) में धरातल का स्वरूप साधारणतया वही है जो ग्रेट बेसिन में देखने को मिलता है, यथा, बेसिन, घाटियाँ तथा श्रेणियाँ एक दूसरे के बाद क्रम में स्थित हैं। ऐसा माना जाता है कि कोलोरैडो पठार का उत्थान क्षैतिजवर्ती पैलियोजोइक चट्टानों में हुआ है जिसके ऊपर पर्तदार तलछट जमा हैं।

पठार की उल्लेखनीय भू-आकृतियाँ ग्रांड-केनयान (125 मील लम्बी) तथा मारबल-केनयान (66 मील लम्बी) हैं। ग्रांड केनयान केलोरैडो नदी ने काटकर

11. ibid—p. 299.

निर्मित की है। जैसे-जैसे पठार का उठाव होता गया, कोलोरेडो की कटाव-शक्ति बढ़ती गयी, फलस्वरूप 6000 फीट गहरी इस सँकरी घाटी का आविर्भाव हुआ। जलधारा ने अपनी पर्तों में स्थित समस्त पर्तदार व पैलियोजोइक चट्टानों को काटकर घाटी का तल नीचे महाद्वीपीय आर्कियन पर्त तक पहुँचा दिया है। यह घाटी इस प्रदेश के भूगर्भिक इतिहास का सुस्पष्ट 'क्रॉस सेक्सन' है जिसके द्वारा चट्टानों का क्रम, ऊपर से नीचे की ओर देखा जा सकता है। अत्यधिक गहराई (1 मील से ज्यादा) के कारण घाटी में नीचे झाँकने पर बड़ा भय प्रतीत होता है और कोलोरेडो नदी इस घाटी के ऊपर से केवल एक पतली धारा सी प्रतीत होती है। क्रास सेक्सन को देखने से स्पष्ट होता है कि घाटी का ऊपरी 4/5 भाग विभिन्न संगठन की पर्तदार चट्टानों का है। वर्तमान में नदी धारा प्राचीन कठोर रवेदार चट्टानों (ग्रेनाइट) तथा रूपांतरित शैलों को काट रही है जो अधःस्तरीय स्थिति लिए हैं।

2450 मील लम्बी कोलोरेडो नदी पार्क पर्वत श्रेणी के पूर्वी ढाल से निकल कर मांउट एलबर्ट के उत्तर में गहरी घाटी द्वारा पर्वतों को काटती हुई, कोलोरेडो पठार से होकर कैलीफोर्निया की खाड़ी में गिरती है।

प्रशांत तटीय भीतरी शृंखलाएँ :

इस क्रम के अन्तर्गत वाशिंगटन एवं ओरेगन राज्यों में विस्तृत कास्केडस तथा कैलीफोर्निया की सियरानेवाद शृंखला शामिल की जाती हैं। ये पश्चिमी तट के समानांतर सम्पूर्ण लम्बाई में उत्तर-दक्षिण दिशा में फैले हैं। यही क्रम आगे ब्रिटिश कोलम्बिया के तटवर्ती पर्वतों तथा अलास्का की श्रेणियों के रूप में आगे बढ़ गया है। अलास्का में इसका अन्त उत्तरी अमेरिका की सबसे ऊँची चोटी मांउट मेकिनले के रूप में होता है। 20,320 फीट ऊँची इस चोटी के अतिरिक्त अन्य कई चोटियाँ इस क्रम में 18,000 फीट से ज्यादा ऊँची हैं। अपनी सम्पूर्ण लम्बाई में यह क्रम शृंखलाबद्ध रूप में है। केवल तीन स्थानों पर 'गैप्स' हैं जिनमें होकर फ्रेजर, कोलम्बिया तथा कोलोरेडो नदियाँ प्रवाहित हैं।

49° उत्तरी अक्षांश के उत्तर में पर्वतों पर हिम-आवरण बहुत ज्यादा है। विशालाकार हिमनद हैं जिनका आकार-विस्तार क्रमशः उत्तर की ओर बढ़ता जाता है। यथा ब्रिटिश कोलम्बिया और अलास्का में स्थायी हिम-क्षेत्र तथा हिमनद दोनों ही भारी मात्रा में है। विश्व प्रसिद्ध हिमनद मालास्पिना एवं अथाबास्का इसी क्रम में स्थित है। यू आकार की घाटियों के तटवर्ती विस्तार ने फ्योर्डस को जन्म दिया है। यू० एन० ए० में चूँकि ये पर्वत तट तक फैले नहीं हैं अतः इस प्रकार के फ्योर्डलैंडस का अभाव है।

इन पर्वतों की प्रमुख विशेषता ज्वालामुखी पर्वतों का बाहुल्य है। ऐसा माना जाता है कि कास्केडस का उत्थान ज्वालामुखी क्रिया के साथ हुआ है। लावा की

पर्वत एवं अनेक ज्वालामुख यहाँ विद्यमान है । कॉस्केडस पर्वत-क्रम में ही सं० रा० अमेरिका का एक मात्र क्रियाशील ज्वालामुखी विद्यमान है । एक अन्य (कैलीफोर्निया का माउट लैसिन) अन्तिम बार 1914–15 में विस्फोटित हुआ था । कई ज्वालामुखी पर्वत चोटियों के रूप में हैं जैसे माउट रैनर तथा ह्विटनी । दोनों ही 14,000 फीट से ज्यादा ऊँचे हैं । टरशरी युग की अल्पाइन पर्वत निर्माणकारी हलचल से सम्बन्धित सियरानेवादा तथा कॉस्केडस का पूर्वी ढाल बहुत तीव्र है । इसके सही स्वरूप का अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि माउंट ह्विटनी तथा मृत्यु घाटी में क्षैतिज दूरी केवल 60 मील की है परन्तु घाटी के तल से चोटी की ऊँचाई में लगभग 15,000 फीट का अन्तर है ।

धंसाव क्षेत्र :

कॉर्डीलेराज का पश्चिमी भाग अलास्का तथा कनाडा में एक शृंखला के रूप में ही प्रशांत तट के सहारे-सहारे स्थित है परन्तु पुगेट साउंड के दक्षिण में यह क्रम दो श्रेणियों में बँट जाता है, यथा पूर्व में कॉस्केडस तथा सियरानेवादा एवं पश्चिम में ठीक तट के ऊपर फैली तटवर्ती श्रेणियाँ । इन दोनों के मध्य में, इनके समानातर ही यानी उत्तर-दक्षिण दिशा में फैले कुछ निचले प्रदेश हैं । दोनों ओर पर्वत श्रेणियों के होने के कारण इनका स्वरूप घाटी जैसा हो गया है । इस देशांतरीय धंसाव पट्टी को बीच में बर्फमय पर्वतों ने अवरुद्ध कर दिया है । फलतः दो घाटियाँ हो गयी हैं जो उत्तर में विलामेटे तथा दक्षिण में कैलीफोर्निया की 'सैंट्रलवैली' के नाम से जानी जाती हैं । दूसरे शब्दों में, उत्तर में कॉस्केडस तथा तटवर्ती पहाड़ियों के मध्य में विलामेटे एवं दक्षिण में सियरानेवादा तथा तटवर्ती पहाड़ियों के मध्य में कैलीफोर्निया की घाटी विद्यमान है । इस घाटी के धुर दक्षिण में तटवर्ती पहाड़ियाँ तथा सियरानेवादा आपस में मिल जाते हैं । इस संगम स्थल के ठीक दक्षिण में पूर्व-पश्चिम फैली एक छोटी दरार घाटी है । इसी में लॉसएंजिल्स नगर बसा है ।

भूगर्भविदों का अनुमान है कि इन घाटियों का उदय, पश्चिमी कार्डीलेराज के उत्थान के समय, दरारी क्रिया के फलस्वरूप हुआ । बाद में स्थानीय स्थितियों से दोनों के धरातलीय स्वरूप में अन्तर आया । हिमानीकृत मलवा, नदीकृत जमाव आदि की वजह से इन घाटियों के बाह्य धरातल एवं स्वरूप में पर्याप्त भिन्नता आ गयी है । विलामेटे घाटी हरियाली-युक्त है जबकि कैलीफोर्निया की घाटी में तलछट जमाव के फलस्वरूप बनी उपजाऊ मिट्टी के बावजूद कोई कृषि उपयोग नहीं था । यह सूनी घाटी है । इस सूखा पर नियन्त्रण पाने के लिए 'वृहत मध्य घाटी परियोजना के अन्तर्गत इस घाटी में प्रवाहित सैक्रेमेंटो एवं सानजोआकिन नदियों पर बाँध बनाकर सिंचाई की व्यवस्था की गयी है । विलामेटे घाटी में समस्या

विपरीत थी। यहाँ प्रति वर्ष इस नाम की ही नदी में भारी बाढ़ आती थी जिस पर नियन्त्रण पाने के लिए 1936 में विलामेटे नदी-घाटी योजना क्रियान्वित की गयी।

तटवर्ती पहाड़ियाँ :

ओरेगन तथा कैलीफोर्निया राज्यों में, देशांतरीय घाटियों के पश्चिम में प्रशांत तट के सहारे-सहारे नीची पहाड़ियाँ फैली हैं। उत्तर यानी वाशिंगटन राज्य में इन पहाड़ियों का क्रम अवरुद्ध हो गया है। बीच-बीच में ये समुद्र द्वारा हस्तगत कर ली गयी हैं अतः स्वरूप द्वीपीय हो गया है। इन द्वीपों में सबसे बड़ा वैंकूवर द्वीप है। पुगेट साउंड के निकट 9000 फीट ऊँचा ओलम्पिक पर्वत भी इसी क्रम का एक अंग है। इन पहाड़ियों का भीतरी घाटियों (विलामेटे एवं कैलीफोर्निया) की वर्षा मात्रा पर भारी प्रभाव है। प्रभाव की मात्रा भी इनकी क्रमबद्धता और ऊँचाई पर निर्भर करती है। यथा, कैलीफोर्निया की घाटी पर लगातार दीवाली स्वरूप होने के कारण उसमें वर्षा बहुत कम होती है। इस सम्भाग में इनका क्रम केवल एक जगह (सैनफ्रांसिस्को के निकट गोल्डन गेट) टूटा है और उसके सामने पड़ने वाले क्षेत्र में कैलीफोर्निया की घाटी के अन्य भागों की अपेक्षा ज्यादा वर्षा होती है। तटवर्ती पहाड़ियों की औसत ऊँचाई 1500 फीट है।

भूगर्भविदों का अनुमान है कि यह पृथ्वी के अस्थायी क्षेत्रों में से, एक है। सैनफ्रांसिस्को के ठीक पश्चिम में स्थित सानएन्ड्रियास दरार में प्रायः भूकम्प आते रहते हैं। 1906 के एक इसी प्रकार के भूकम्प से भारी धन-जन की हानि हुई।

□□□

सं० रा० अमेरिका : जलवायु दशाएँ

रॉकी पर्वत माला सं० रा० अमेरिका का मुख्य जल विभाजक है परन्तु मुख्य जलवायु विभाजक कहीं पूर्व में स्थित है जो मोटे तौर पर 100° पश्चिमी देशांतर के सहारे-सहारे विस्तृत है। इस जलवायु विभाजक के पश्चिम में पर्याप्त दूरी तक, प्रशांत तटीय पर्वत शृंखलाओं तक, वर्षा 20 इन्च से कम होती है। उच्च प्रदेशों को छोड़कर अधिकांश भागों में प्राकृतिक वनस्पति के नाम पर घास या झाड़ियाँ हैं जिनमें पशुचारण के अतिरिक्त अन्य कोई उद्यम (भू-उपयोग) नहीं हो सकता। जलवायु विभाजक के पूर्व में वर्षा हर जगह 20 इन्च से ज्यादा है। प्राकृतिक वनस्पति के रूप में प्रायः सर्वत्र वन या गहरी ऊँची घास है तथा समस्त निचले भागों में कृषि, दुग्ध व्यवसाय तथा मिश्रित कृषि प्रचलित है। यह उल्लेखनीय है कि सं० रा० अमेरिका की सर्वाधिक वर्षा (140 इन्च) इस विभाजक के पश्चिम में ही उत्तर-पश्चिमी वाशिंगटन राज्य, जो देश के धुर उत्तरी-पश्चिमी कोने में स्थित है, में होती है।

स्पष्ट है कि इस देश में जलवायु दशाओं सम्बन्धी भारी वैभिन्य है और इसके जैसे महादेश (विस्तार की दृष्टि से) में यह अस्वाभाविक भी नहीं। सं० रा० अमेरिका का अधिकांश भाग शीतोष्ण कटिबंध में है। देश का कोई भी भाग 49° उत्तरी अक्षांस से ऊपर नहीं है। अतः यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इसके अधिकांश भागों में सम-शीतोष्णीय कटिबन्धीय जलवायु दशाएँ होंगी, परन्तु वस्तुतः ऐसा नहीं है। तापांतर, वर्षा मात्रा, चक्रवातों की बारम्बरता तथा धूपीली अवधि आदि दृष्टियों से विचार किया जाए तो विविध भागों में भारी अन्तर मिलता है। ग्रेट प्लेन्स में तापांतर 70° फै० तक हो जाता है, जबकि पश्चिमी तट पर, सैन-फ्रांसिस्को के निकट, 10° फै० पूर्वी तट पर, न्यूयार्क के निकट, 40° फै० से अधिक तापांतर हो जाना असाधारण बात समझी जाती है। पश्चिम के अन्तःपर्वतीय पठारी-बेसिन प्रदेश में कुछ ऐसे क्षेत्र भी है जहाँ एक इन्च पानी भी नहीं पड़ता, जबकि उन्हीं क्षेत्रों के कुछ पश्चिम में प्रशांत तट प्रदेश में 100 इन्च से अधिक वर्षा होती है। ग्रेट प्लेन्स में वर्षा की कमी से शुष्क कृषि विधि अपनायी गयी है जबकि पूर्वी भागों में 50 इन्च तक पानी गिरना साधारण बात है। यही नहीं, बल्कि

कभी-कभी तो एक ही अक्षांश पर स्थित स्थानों के तापक्रम और वर्षा मात्रा में भारी अन्तर देखने को मिलता है।

आखिर इन भारी मौसमी अन्तरों की पृष्ठभूमि में क्या है ? सूक्ष्म पर्यवेक्षण से स्पष्ट हो जाता है कि अक्षांसीय स्थिति के अतिरिक्त अन्य कई ऐसे तत्त्व हैं जो जलवायु पर पृथक्-पृथक् तथा सामूहिक रूप से भारी प्रभाव डालते हैं। इनमें धरातलीय स्वरूप, पर्वत शृंखलाओं की विस्तार दिशा, जलधाराएँ, भीतरी जलाशय चक्रवात, दबाव केन्द्र तथा वायु-राशियाँ आदि प्रमुख हैं। इन पर प्रकाश डालने से स. रा. अमेरिका की जलवायु दशाओं की भिन्नता का रहस्य अपने आप खुल जाता है।

धरातल :

धरातल पर दृष्टिपात करते समय प्रमुखतः उन भू-आकारों पर विचार करना होता है जिनका जलवायु पर सीधा-सीधा प्रभाव पड़ता है। सं० रा० अमेरिका के धरातल में ऐसे धरातलीय तत्त्व पश्चिम से पूर्व की ओर क्रमशः पश्चिमी कॉर्डीलैराज, भीतरी मैदान व अप्लेचियन क्रम हैं। धुर पश्चिम में प्रशांत तटीय पहाड़ियाँ (लगभग 1000 से 1500 फीट) फैली हैं जो अपने पूर्व में स्थित धँसाव क्षेत्रों को समुद्री प्रभाव से वंचित करती हैं। विलामेटे तथा कैलिफोर्निया की मध्यवर्ती घाटी में वर्षा कम होने का प्रधान कारण इन तटवर्ती पहाड़ियों की वृष्टि छाया प्रदेश में स्थित हो है। इन घाटियों के पूर्व में 5 से 10,000 फीट तक ऊँची पर्वत शृंखलाएँ (कास्केडस, सियरानेवादा) दीवाल की तरह खड़ी है और जलवायु के संदर्भ में वास्तव में एक बहुत बड़ी बाधा है। ये शृंखलाएँ प्रशांत महासागर की ओर से आने वाली पछुआ हवाओं की नमी हथिया लेने में सफल होती हैं फलतः इनके पूर्वी भाग (ग्रेट बेसिन, कोलोरैडो पठार, कोलोम्बिया स्नेक पठार) शुष्क रह जाते हैं। जाड़ों के दिनों में जब प्रशांत तट पर घनघोर, वर्ष की अधिकतम, वर्षा होती है तो इन शृंखलाओं के पूर्व में स्थित भाग एक-एक बूँद जल के लिए तरसते रहते हैं।

कॉस्केडस-सियरानेवादा एवं रॉकीज के मध्य में स्थित अन्तःपर्वतीय पठार वस्तुतः दोनों ओर के समुद्री प्रभाव से वंचित रह जाता है। न तो प्रशांत और न अटलांटिक तथा मैक्सिको की खाड़ी का समकारी प्रभाव यहाँ तक पहुँच पाता है। बहुत कम वर्षा होती है जिसका अधिक अंश उत्तर में बसंत तथा दक्षिण में पतझड़ के दिनों में होता है। ऊँचाई और वर्षा मात्रा का स्पष्ट सम्बन्ध होता है। यथा, राकी शृंखलाएँ, अपनी ऊँचाई के कारण, पूर्व में स्थित ग्रेट प्लेन्स एवं पश्चिम में स्थित उच्च शुष्क पठारों की तुलना में ज्यादा वर्षा प्राप्त करती हैं।

स्वयं रॉकी पर्वत में भी नीचे ढालों की अपेक्षा ऊंचे भागों में ज्यादा वर्षा होती है। दक्षिणी राकीज की तुलना में उत्तर की श्रेणियों में हवाओं से आर्द्रता प्राप्त करने की क्षमता ज्यादा है। यह एक अवसर की बात है कि स. रा. अमेरिका के ज्यादातर पर्वत उत्तर-दक्षिण, फैले हैं अतः दोनों अटलांटिक तथा प्रशांत महासागर की ओर से आने वाली हवाओं को रोक कर, हवाओं के रुख में सामने पड़ने वाले ढालों पर वर्षा गिरा लेते हैं और भीतरी भाग वृष्टि छाया प्रदेश बन जाने के कारण कम वर्षा प्राप्त करते हैं। अगर इन पर्वत शृंखलाओं की विस्तार-दशा पूर्व से पश्चिम होती तो सम्भवतः देश का कोई भी भाग रेगिस्तान न बनता, जैसी स्थिति यूरोप में है।

रॉकी क्रम के पूर्व में विशाल भीतरी निचला मैदानी भाग स्थित है जिसका विस्तार पूर्व में अप्लेचियन्स तक है। सच्चाई तो यह है कि यह सम्भाग न तो मध्यवर्ती है, न निचला या मैदानी भाग।[12] ढालू स्वरूप वाले ग्रेट प्लेन्स समुद्र से 4500-5000 फीट ऊंचे हैं जबकि मिसीसीपी की घाटी की मध्य घाटी के क्षेत्र 1000 फीट से ज्यादा ऊंचे नहीं हैं। बीच-बीच में कुछ उच्च प्रदेश (ओजार्क, ओचिता, टैनेसी) स्थित हैं। अप्लेचियन्स के पास ये मैदानी भाग पर्याप्त ऊंचे हो गए हैं। इन असमानताओं का वर्षा की मात्रा पर प्रभाव पड़ा है। यह विचारणीय है कि भीतरी मैदान के मध्य एवं उत्तरी भागों में समुद्र से दूरी होने के कारण अगर जलवायु में महाद्वीपी तत्वों की प्रधानता है तो महान् झीलों एवं मैक्सिको की खाड़ी के आस-पास के भागों पर इन जलाशयों का समकारी प्रभाव है।

पूर्वी कॉर्डीलेराज या अप्लेचियन्स की ऊंचाई इतनी पर्याप्त नहीं है कि वह अटलांटिक के समकारी प्रभाव या आर्द्रता भरी हवाओं को भीतरी भागों की तरफ आने से रोके।

जलधाराएं एवं भीतरी जलाशय :

समुद्री जलधाराओं का भी जलवायु दशाओं (विशेषकर तटवर्ती क्षेत्र) पर उल्लेखनीय प्रभाव होता है। उत्तरी प्रशांत ड्रिफ्ट के ऊपर होकर जो हवाएं ब्रिटिश कोलम्बिया या वाशिंगटन की ओर जाती हैं, स्वभाविक रूप से उन्हें गर्मी प्रदान करती हैं क्योंकि अक्षांशीय स्थिति की तुलना में जितना तापक्रम होना चाहिए, इन हवाओं का उससे ज्यादा होता है। इसी गर्म जलधारा का प्रभाव है कि न केवल यू. एन. ए. के उत्तरी-पश्चिमी सागरों में वरन् बेरिंग जलडमरु मध्य तक बर्फ नहीं जम पाती। इसी प्रकार दक्षिण की ओर बहने वाली ठंडी कैलोफो-निया की धारा के ऊपर होकर जो हवाएं पूर्व की ओर जाती हैं वे गर्मियों को

---

12. Jones, L. R. & Bryan, P. W.—North America p. 120

भीषणता को कम करती हैं। परन्तु पूर्वी तटों के साथ-साथ बहने वाली धाराओं जैसे ठंडी लैब्रोडोर या गर्म गल्फ स्ट्रीम आदि का प्रभाव ज्यादा नहीं होता क्योंकि इधर हवाओं का मुख्य प्रवाह थल से बाहर की ओर होता है। इन दिनों विपरीत स्वभाव के जलों वाली धाराओं का जल न्यू इंगलैंड प्रदेश के पास जब परस्पर मिलता है तो भारी मात्रा में कोहरा उत्पन्न हो जाता है। जुलाई 1956 में इसी कोहरे से दिशाभ्रम होकर, नांटुकट द्वीप के पास इटली का यात्री वाहक जलयान अमेरिका के एक माल वाहक जलयान से टकराकर डूब गया था।

मैक्सिको की खाड़ी गर्म जल का भंडार है जहां से निकटवर्ती भू-भागों में न केवल आर्द्रता भरी हवाएं आती हैं वरन् तापक्रम भी प्रभावित होता है। इसी प्रकार उत्तर में महान् झीलें अपने आस-पास के स्थानों पर समकारी प्रभाव डालकर उन्हें महाद्वीपीयता से दूर रखती हैं। यही कारण है कि शिकागो के तापांतर 40° फ़ं० से ज्यादा नहीं हो पाता, जबकि भीतरी भागों में उन्हीं अक्षांशों में स्थित स्थानों में 65° फं० तक हो जाता है।

वायु दबाव केन्द्र—मोटे तौर पर उत्तरी अमेरिका के वायु-प्रवाह को निम्न वायु दबाव केन्द्र नियंत्रित करते हैं।

1. एल्युशियन एवं आइसलैंडीय निम्न भार केन्द्र।

चित्र—6
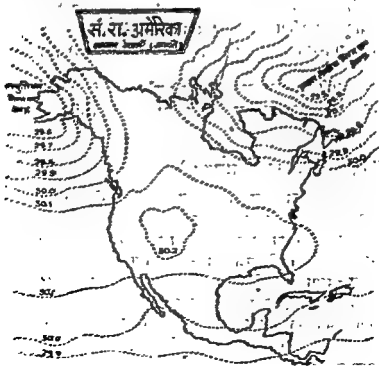
2. प्रशांत एवं अटलांटिक महासागरीय उच्च दबाव केन्द्र।

3. महाद्वीपीय भूखण्ड में विकसित होने वाली गर्मियों (निम्न) तथा सर्दियों (उच्च) के दबाव केन्द्र।

सर्दियों के दिनों में एल्युशियन तथा आइसलैंडीय निम्न दबाव केन्द्रों (क्रमशः 29.6, 29.5 इन्च) एवं महाद्वीपीय अधिक दबाव केन्द्र (30.2) के बीच तीव्र दबाव-प्रवणता रहती है। गर्मियों में ये दोनों और उत्तर की ओर खिसक जाते हैं और दबाव-प्रवणता महाद्वीपीय निम्न दबाव केन्द्र (29.8) एवं प्रशांत (30.3) तथा अटलांटिक महासागरीय (30.2) उच्च दबाव केन्द्रों के बीच होती है। दबाव प्रवणता वायु-प्रवाह विशेषकर चक्रवातों को नियंत्रित करती है। निस्संदेह स्थानीय दशाओं के प्रभाव के फलस्वरूप इनके क्रम में कुछ बाधा पड़ जाती है।

वायु राशियाँ :

पिछले दशकों में पृथ्वी के विविध प्रदेशों में उत्पन्न होने वाली वायु राशियों का गहन अध्ययन हुआ है। जैसे-जैसे इनके बारे में जानकारी बढ़ती जा रही है यह तथ्य स्पष्टतर होता जा रहा है कि जलवायु पर इनका भारी प्रभाव होता है। इस सम्भाग में प्रवाहित वायु राशियों को चार श्रेणियों में रखा जा सकता है। ये हैं—

1. ध्रुवीय सामुद्रिक वायुराशियाँ—ठंडी तथा आर्द्र ये वायुराशियाँ सं. रा. अमेरिका में उत्तरी प्रशांत तथा उत्तर अटलांटिक महासागर से उत्पन्न होकर आती हैं।

2. ध्रुवीय महाद्वीपीय वायुराशियाँ—ठंडी तथा शुष्क ये वायुराशियाँ उत्तरी कनाडा से आती हैं।

3. उष्ण कटिबन्धीय सामुद्रिक वायुराशियाँ—गर्म तथा आर्द्र ये वायु राशियाँ दक्षिण-पूर्व के समुद्री भागों से सं. रा. अमेरिका में पहुँचती हैं।

4. उष्ण कटिबन्धीय महाद्वीपीय वायुराशियाँ—गर्म तथा शुष्क ये वायुराशियाँ मैक्सिको एवं एरीजोना राज्यों के शुष्क भागों में उत्पन्न होती हैं। इनका प्रभाव उत्तरी अमेरिका में अपेक्षाकृत कम है। यह प्रभाव उतना उल्लेखनीय नहीं जितना कि यूरोप में, जहाँ कि सहारा जैसे विशाल उद्गम प्रदेश से भारी गर्म तथा शुष्क वायु राशियाँ आती हैं।

प्रभावकारी तीनों वायुराशियों के भी अपने अलग-अलग प्रभाव-क्षेत्र हैं। यथा, रॉकी माला के पूर्व में स्थित विशाल भीतरी निचला प्रदेश ध्रुवीय-महाद्वीपीय

चित्र-7

तथा उष्ण कटिबंधीय-सामुद्रिक वायु राशियों से प्रभावित रहता है जबकि रॉकी माला के पश्चिम में स्थित अन्तःपर्वतीय पठार एवं प्रशांत तटीय प्रदेश के मौसमों में ध्रुवीय-सामुद्रिक (उत्तरी प्रशांत से) तथा उष्ण कटिबंधीय सामुद्रिक वायु राशियाँ संशोधन करती रहती हैं। अटलांटिक तटीय भागों को उत्तरी अटलांटिक महासागर से आने वाली ध्रुवीय-सामुद्रिक तथा दक्षिणी-पूर्वी सागरों से आने वाली उष्ण कटिबंधीय-सामुद्रिक वायु राशियाँ प्रभावित करती हैं।

उत्तरी कनाडा में उत्पन्न होकर ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशियाँ सं. रा. अमेरिका के मध्य भाग तक आ जाती हैं। गर्मियों में इनके आगमन के साथ मौसम स्वच्छ तथा तापक्रम सुहावने ठंडे हो जाते हैं। सर्दियों में इनके कारण भयानक ठंडी हो जाती है और पाला पड़ता है। तटवर्ती भागों को छोड़कर सं. रा. का आधा उत्तरी भाग हिमांक से नीचे तापक्रमों-युक्त होता है। इधर उष्ण कटिबंधीय सामुद्रिक वायु राशियाँ जब मैक्सिको की खाड़ी से उठकर उत्तर की ओर बढ़ती हैं तो भीतरी भागों में विशेषकर मिसिसीपी के बेसिन में असहनीय सड़ी गर्मी पड़ती है क्योंकि ये हवाएँ गर्म होने के साथ-साथ आर्द्र भी होती हैं। ऐसी स्थिति प्रायः गर्मियों में होती है। जाड़ों में इनके साथ वर्षा, आँधी, तूफान, कोहरा आदि आते हैं। रॉकी क्रम को पार करके ये वायु राशियाँ पश्चिम की तरफ नहीं जा पातीं।

जब कभी उत्तर से आयी ठंडी महाद्वीपीय तथा दक्षिण की तरफ से आयी गर्माद्र वायु राशियां परस्पर मिलती हैं तो मौसमी दशाओं में बड़ी तेजी से बदलाव होते हैं। गर्मियों के दिनों में इनका मिलन-क्षेत्र महान् झीलों के दक्षिण में होता है। अतः इन दिनों देश के मध्य-पश्चिमी भाग में बदलती मौसमी दशाएं रहती हैं। कभी ठंड और स्वच्छाकाश के साथ शुष्क मौसम (ध्रुवीय महाद्वीपीय वायु राशि

चित्र–8

के साथ) हो जाता है तो थोड़ी देर में गर्मी और आर्द्रता (उष्ण कटिबंधीय वायु राशि के साथ) एकदम बढ़ जाती है। इस प्रकार सम्पूर्ण भीतरी मैदानी भाग परिवर्तित मौसमी दशाओं से प्रभावित होता है। वायु राशियों का मिलन-क्षेत्र भी सूर्य की स्थिति के साथ-साथ बदलता रहता है।

पश्चिमी तटप्रदेश के उत्तरी भाग में उन ध्रुवीय सामुद्रिक वायु राशियों का प्रभाव रहता है जो प्रशांत महासागर के उत्तरी भागों से पैदा होती हैं। जाड़ों के दिनों में ये जाड़ों की भीषणता को कम करके मौसम को सुहावना तो बनाती ही हैं साथ ही कुछ आर्द्रता भी प्रदान करती हैं। निस्संदेह वर्षा दक्षिण की ओर क्रमशः कम होती जाती है। गर्मियों के दिनों में यू० एस० ए० के पश्चिम में स्थित

अन्तःपर्वतीय शुष्क पठारी भागों में दबाव पर्याप्त कम हो जाता है जबकि उत्तरी प्रशांत महासागर में अधिक—वायु—भार विकसित हो जाता है अतः इन दिनों ध्रुवीय-सामुद्रिक वायु राशियों का पश्चिमी तट प्रदेशों पर और भी ज्यादा प्रभाव रहता है। इस प्रकार ये भाग लगभग वर्ष भर इन हवाओं से प्रभावित रहते हैं।

पूर्व में स्थित अटलांटिक तट प्रदेश के मौसम वस्तुतः तीन, ध्रुवीय-महाद्वीपीय, ध्रुवीय-सामुद्रिक (उत्तरी अटलांटिक में ग्रीनलैंड के पास) तथा खाड़ी से उत्पन्न उष्ण कटिबन्धीय सामुद्रिक वायु राशियों की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। ध्रुवीय सामुद्रिक वायु राशि उत्तरी-पूर्वी तटवर्ती पट्टी में जाड़ों के दिनों में हल्की बौछारें करके ठंड की भीषणताओं को कम करती हैं। गर्मियों में भी तापक्रमों को नीचा करके थोड़ी वर्षा प्रदान करती हैं। दक्षिणी तट प्रदेशों में उष्ण कटिबन्धीय हवाओं का प्रभाव रहता है जो उत्तर की ओर ठंडी हवाओं के साथ मिलकर आंधीयुक्त चक्रवात उत्पन्न करती हैं जिन्हें 'हरीकेन्स' कहा जाता है। भयानकता में इनका स्वरूप ठीक वैसा ही होता है जैसा दक्षिणी-पूर्वी एशिया में 'टायफून्स' का।

नियतवाही तथा स्थानीय पवन :

इस संदर्भ में पछुवा हवाएँ तथा 'चिनुक' उल्लेखनीय हैं। सं. रा. अमेरिका का अधिकांश तटवर्ती भाग (कैलीफोर्निया की घाटी के कुछ हिस्सों को छोड़कर) लगभग वर्ष भर तक पछुआ हवाओं के प्रभाव में रहता है। अगर तटवर्ती पर्वत-श्रेणियां न होती तो निश्चित रूप से ये हवाएँ काफी भीतर तक आर्द्रता प्रदान करतीं। रॉकी शृंखला को पार करके पूर्व में जो हवाएँ मैदानों की ओर जाती हैं उनका स्वरूप ठीक गरम लहर जैसा होता है। इन्हें 'चिनुक हवाएँ' कहा जाता है। नीचे उतरने से दबाव के कारण इन हवाओं का तापक्रम एकदम बढ़ जाता है।

ताप-वितरण :

जनवरी के महीने की समताप रेखाओं को देखने से स्पष्ट होता है कि सभी रेखाएँ भीतरी भागों में काफी नीचे तक हैं परन्तु दोनों तटवर्ती भागों की ओर ऊपर को चली गयी हैं। इस आर्द्ध वृत्ताकार स्वरूप की सीधी-सीधी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि समुद्र के समकारी प्रभाव के कारण तटवर्ती प्रदेशों में तापमान अपेक्षाकृत ऊँचे रहते हैं। 32° फे. की समताप रेखा उल्लेखनीय है जो देश के उत्तरी भाग में स्थानीय प्रभावों के कारण बड़े अनियमित स्वरूप में होकर गुजरती है। इस महीने में समस्त न्यू इंगलैंड प्रदेश, न्यूयार्क, लगभग सभी झीलों के तटवर्ती राज्य, डकोटा, मोंटाना, व्योमिंग तथा वाशिंगटन एवं

ओरेगन राज्यों के पूर्वी भागों में तापक्रम हिमांक से नीचे रहता है। समताप रेखाओं के झुकाव के स्वरूप में भी पूर्वी एवं पश्चिमी भागों में अन्तर है। पश्चिमी भागों में यह झुकाव ज्यादा प्रतीत होता है क्योंकि पश्चिमी तट पर ध्रुवीय-सांमुद्रिक वायु राशियों तथा उत्तरी प्रशांत ड्रिफ्ट का प्रभाव रहने से तापक्रम अपेक्षाकृत ऊँचे हैं, और उसी अनुपात में अन्तःपर्वतीय पठारी प्रदेश, जो दोनों
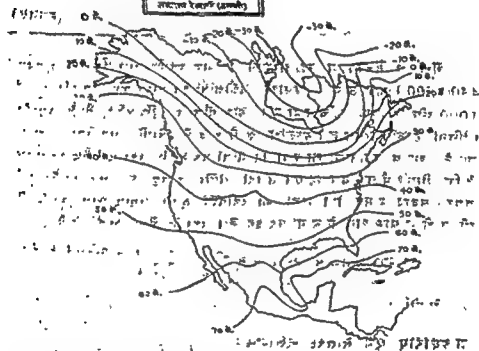
चित्र-9

ओर से पर्वतीय दीवालों द्वारा घिरे होने के कारण बाह्य प्रभावों से वंचित रहता है, बहुत ठंडा होता है। अतः इस सम्भाग में समताप रेखाओं का झुकाव ज्यादा है। पूर्वी तट प्रदेश में उत्तर से लेकर दक्षिण की ओर तापक्रम 20° फ. तथा 65° फ. के बीच में रहता है। फ्लोरिडा के दक्षिण में इन दिनों खूब धूपीला वातावरण होता है। सम्भवतः इसीलिए मियामी बीच इन दिनों सैलानियों का केन्द्र बन जाता है। पश्चिमी तटवर्ती पट्टी में तापक्रम 30° और 70° फ. के बीच रहता है। भीतरी मैदान के अधिकांश भाग हिमांक से ऊपर तापक्रम युक्त होते हैं। मैक्सिको की खाड़ी के तटवर्ती भागों में सर्वत्र तापक्रम 60° फ. से ऊपर होता है।

(प्रदेश)	प्रशांत तट	भैंसाव क्षेत्र	अन्तःपर्वतीय पठार	ग्रेट प्लेन्स	भीतरी निचले भाग	कम्बरलैंड पठार	अटलांटिक तट
जुलाई	55.3	82.1	76.2	76.5	75.4	74.7	73.5
जनवरी	46.9	45.4	28.8	21.2	23.1	31.0	30.2
(प्रतिनिधि नगर)	युरेका (कैलीफोर्निया)	रेड ब्लफ (कैलीफोर्निया)	साल्टलेक सिटी (उटाह)	लिंकन (नेब्रास्का)	पियोरिया (इलीनॉइस)	पिटस बर्ग (पेंसिलवेनिया)	न्यूयार्क (न्यूयार्क)

जहाँ तक पश्चिमी सं. रा. अमेरिका का सम्बन्ध है, जनवरी की समताप रेखाओं से सही स्थिति सामने नहीं आती, बल्कि बड़ी गलत सूचना मिलती है।[13] इसका प्रधान कारण है कि ये समुद्रतल पर फैला कर दिखाई जाती है अतः ठंड की वास्तविक भीषणता स्पष्ट नहीं हो पाती। सही स्थिति का कुछ अनुमान पाले की अवधि या पाले रहित अवधि से हो सकता है। अन्तःपर्वतीय पठार का अधिकांश भाग वर्ष में केवल 120 दिन पाला रहित होता है। यह अवधि पूर्व में क्रमशः बढ़ती जाती है। ग्रेट प्लेन्स, झीलों के तटवर्ती राज्य तथा उत्तरी-पूर्वी राज्यों में यह अवधि 180 दिन से ज्यादा है। जबकि शेष भागों यानी खाड़ी के तटवर्ती, भीतरी, दक्षिणी-पूर्वी तथा समुद्री तटों के दक्षिणी भागों में 200 से अधिक दिन ऐसे होते हैं जिनमें कृषि कार्य किये जा सकते हैं।

गर्मियों के दिनों में तापक्रम भीतरी भागों में ज्यादा ऊँचे होते हैं अतः समताप रेखाओं का वक्रात्मक उभार ऊपर की ओर होता है। समुद्र तटों पर अपनी अक्षांसीय स्थिति के अनुपात में, भीतरी भागों की तुलना में काफी कम तापक्रम होते हैं। इसका अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि धुर उत्तर में स्थित मोंटाना और डकोटो राज्यों में औसत तापक्रम 80° फै. होता है जबकि कैलीफोर्निया राज्य में 70° फै.। सर्वाधिक ऊँचे तापक्रम दक्षिणी-पश्चिमी भीतरी शुष्क भागों में होते हैं। एरीजोना और न्यू मैक्सिको में औसत 90° फै. से ज्यादा होता है यद्यपि दिन के समय 110 फै. तक पहुँच जाना भी कोई असाधारण बात नहीं।

तापांतर समुद्र तटों से भीतरी भागों की ओर क्रमशः बढ़ता जाता है। यथा, कैलीफोर्निया के तट भाग में 10° फै., ओरेगन के तट-प्रदेश में 14° फै. तथा

13. Jones, L. R.—& Bryan, P. W.—North America p. 143.

वाशिंगटन तट पर जनवरी और जुलाई के तापक्रमों में 16° फ. से ज्यादा अन्तर नहीं मिलता। अन्तः-पर्वतीय पठारी भाग में तापांतर 150° फ. तक (जनवरी में रात्रि में –40° फ. तथा जुलाई में दिन में 110 फ.) हो जाता है। इस प्रकार यहाँ की ताप अवस्थाएं मध्य एशिया जैसी ठीक महाद्वीपीय हैं। भीतरी निचले प्रदेशों में भी पर्याप्त तापांतर हो जाता है। शिकागो में जनवरी का औसत 25° फ. तथा जुलाई का 70° फ. है। पूर्वी तट के तापक्रम दोनों स्थितियों में मानसिक एवं शारीरिक विकास के लिए उपयुक्त हैं। जाड़ों में अधिकांश भाग हिमांक से ऊपर तापक्रमों (30–50 फ.) युक्त होते हैं जबकि गर्मियों में समुद्री प्रभाव के कारण ज्यादा न होकर 65°–75° फ. के बीच में रहते हैं। इस प्रकार तापांतर 25°–30° फ. से ज्यादा नहीं हो पाता। मानवीय कार्यों पर जलवायु विशेषकर तापक्रमों की अनुकूलता क्या प्रभाव रखती है यह इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि यू. एस. ए. की अधिकांश जनसंख्या ऐसे प्रदेशों में रहती है जहाँ वार्षिक तापक्रम 30° और 65° फ. के बीच में रहते हैं।
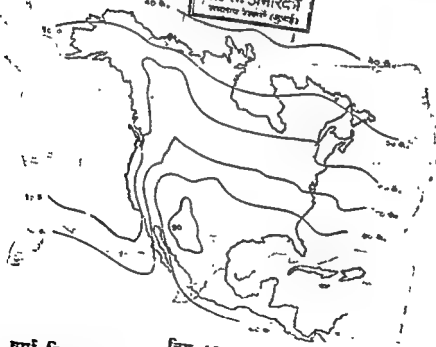
चित्र–10

वर्षा वितरण :

संयुक्त राज्य अमेरिका में वर्षा वितरण को पर्वत क्रमों की विस्तार दिशा ने बहुत प्रभावित किया है। 100° पश्चिमी-देशांतर, जिसे इस देश की जलवायु

विभाजक रेखा कहा जाता है, के लगभग साथ-साथ ही 20 इंच की सम-वर्षा रेखा भी गुजरती है। इसे अमेरिका की 'दुर्भाग्य रेखा' कहा जाता है क्योंकि इसके पश्चिम (ग्रेट प्लेन्स) में प्राकृतिक वर्षा के आधार पर कृषि करना असंभव है। यहाँ अर्द्ध शुष्क वातावरण है तथा शुष्क एवं गर्म हवाएँ चलती हैं जिनका स्वरूप कई बार आँधियों जैसा होता है। पानी एवं वनस्पति के अभाव में भू-कटाव की समस्या बड़े प्रबल रूप में है। साधारणतया 20 इंच की समवर्षा रेखा ग्रेट प्लेन्स को पूर्वी सीमाओं पर होकर गुजरती है। पूर्व में, यानी भीतरी निचले प्रदेशों की ओर वर्षा की मात्रा क्रमशः बढ़ती जाती है। अधिकतर मध्यवर्ती निचले भागों में 40 इंच तथा अप्लेचियन्स में 60 इंच तक वर्षा हो जाती है। साधारणतः दक्षिण से उत्तर एवं अतलांतक तट से भीतरी भागों की ओर वर्षा क्रमशः कम होती जाती है। मिसीसीपी के डेल्टा प्रदेश का औसत 80 इंच है। देश के दक्षिण-पूर्वी भाग में लगभग मानसूनी दशाएँ होती हैं जहाँ गर्मियों में 50–60 इंच तक वर्षा होती है। उत्तरी-पूर्वी तटीय भागों में शीतोष्ण चक्रवातों से जल गिरता है।

चित्र–11

पश्चिमी संभाग में, वर्षा वितरण स्वरूप पर कॉस्केड-सियरानेवादा पर्वत क्रम का भारी प्रभाव है। पश्चिमी तट के समानांतर फैली इस श्रृंखला से टकराकर पछुआ हवाएँ अपनी आर्द्रता का बड़ा भाग समाप्त कर देती हैं। फलतः

पश्चिमी ढालों पर 100 इंच से ज्यादा वर्षा हो जाती है जबकि पूर्व का विशाल भू-क्षेत्र, जो देश का लगभग आधा भाग घेरे है, वृष्टि छाया प्रदेश बन जाता है। वर्षा यहाँ 5 इंच से भी कम होती है। कोलम्बिया-स्नेक पठार, कोलोरैडो पठार तथा ग्रेट बेसिन आदि इसी प्रकार से बने शुष्क प्रदेश हैं। रॉकी क्रम के पश्चिमी ढालों के उच्च भागों में कम वर्षा होती है।

मोटे तौर पर संयुक्त राज्य अमेरिका को वर्षा-मात्रा की दृष्टि से आठ भागों में विभाजित कर सकते हैं—

1. प्रशांत तटीय प्रदेश का उत्तरी भाग जहाँ वर्षा 100 इंच से ज्यादा होती है। अधिकांश वर्षा जाड़ों में होती है।
2. प्रशांत तटवर्ती पट्टी में दक्षिण की तरफ वर्षा क्रमशः कम होती जाती है। कैलीफोर्निया में गर्मियों में सूखा तथा जाड़ों में वर्षा होती है।
3. कोलम्बिया पठार तथा ग्रेट बेसिन में वर्षा अत्यन्त सीमित मात्रा तथा केवल कुछ ही भागों में होती है। शेष शुष्क रहते हैं। जो कुछ भी वर्षा होती है वह जाड़ों के छः महीनों में होती है, थोड़ी-सी बसन्त ऋतु में भी होती है।

चित्र–12

4. कोलोरैडो पठार में भी अवस्थाएँ लगभग उपर्युक्त प्रदेश जैसी ही है। अन्तर केवल यह है कि यहाँ थोड़ी सी वर्षा पतझड़ के प्रारम्भ में भी हो जाती है।

5. अन्तः पर्वतीय पठारी प्रदेश का पूर्वी भाग प्रायः शुष्क है। केवल रॉकी के उच्च भागों में थोड़ी वर्षा होती है। ठीक यही अवस्था ग्रेट प्लेन्स के पश्चिमी भाग की है। यहाँ गर्मियों में वर्षा होती है।

6. भीतरी निचले प्रदेश का पश्चिमी तथा उत्तरी भाग (झीलों के आस-पास) मध्यम वर्षा वाला क्षेत्र है। यहाँ वर्षा सुवितरित है। इसकी मात्रा 20–30 इंच तक है जो पूर्व की ओर क्रमशः बढ़ती जाती है।

7. न्यू इंगलैंड प्रदेश में वर्षा 40 इंच से अधिक होती है। वैसे तो साल भर तक यहाँ सुवितरित मात्रा है परन्तु पतझड़ तथा सर्दियों के प्रारम्भ में अपेक्षाकृत वर्षा कुछ ज्यादा होती है।

8. देश के दक्षिण-पूर्व एवं अप्लेचियन उच्च प्रदेशों में वर्षा साल भर सुवितरित रूप में गिरती है परन्तु बसन्त तथा गर्मियों के प्रारम्भिक दिनों में औसत से ज्यादा होती है। औसत वर्षा मात्रा 40 से 60 इंच तक है।

जलवायु प्रदेश :

वर्षा मात्रा की दृष्टि से किए गए उपर्युक्त विभाजन में 3, 4 तथा 5वाँ विभाग ऐसा है जिसमें न केवल वर्षा मात्रा वरन् आर्द्रता, ताप व अन्य मौसमी दशाओं की दृष्टि से भी पर्याप्त समानता है। अतः इन्हें एक जलवायु विभाग में रखा जा सकता है।

मोटे-तौर पर संयुक्त राज्य अमेरिका को निम्न जलवायु विभागों में रखा जा सकता है :

(1) आर्द्र उपोष्णीय जलवायु प्रदेश—इस प्रकार की जलवायु दशाएँ मुख्यतः देश के दक्षिणी-पूर्वी भाग में मिलती हैं। दूसरे शब्दों में मेक्सिको की खाड़ी के तटवर्ती राज्यों (अलबामा, जार्जिया, मिसीसीपी, लूजियाना) तथा अटलांटिक तटीय पट्टी के दक्षिणी राज्यों (टैनेसी, कैरोलिना एवं फ्लोरिडा) में आर्द्र-उपोष्णीय या गर्म शीतोष्ण जलवायु दशाएँ मिलती हैं। गर्मियों में तापक्रम 80° फं० तक पहुँच जाते हैं तो सर्दियों में सदा हिमांक से ऊपर रहते हैं। लगभग 7 माह की अवधि पाला रहित होती है। वर्षा का अधिकांश भाग गर्मियों में आता है। समुद्री प्रभाव के कारण कभी-कभी गर्मियाँ बड़ी सड़ी एवं असहनीय होती हैं। सर्दियों का मौसम अच्छा होता है। भीषण तूफान हरीकेन्स यहाँ की जलवायु के प्रमुख लक्षण हैं।

(2) ठण्डी शीतोष्ण जलवायु प्रदेश—इस प्रकार की जलवायु दशाएँ अटलांटिक तट प्रदेश के उत्तरी भाग विशेषकर न्यू इंगलैंड प्रदेश में पाई जाती है। समुद्री प्रभाव के कारण जाड़ों में तापक्रम भीतरी भागों की अपेक्षाकृत ऊँचे

तथा गर्मियों में सुहावने होते हैं। यथा, जाड़ों में लगभग 30° फ़ै० तथा गर्मियों में 60–70° फ़ै० तापक्रम मानसिक एवं शारीरिक कार्यकुशलता के लिए अति उत्तम है। वर्षा 40 से 60 इंच तक होती है। उत्तर की ओर क्रमशः पाले की अवधि बढ़ती तथा वृद्धि-अवधि घटती जाती है।

(3) महाद्वीपीय जलवायु तुल्य प्रदेश—पूर्व में अप्लेशियन उच्च प्रदेश तथा पश्चिम में रॉकी माला के मध्य स्थित विशाल भीतरी निचले प्रदेश में जलवायु का प्रधान लक्षण महाद्वीपीयपन है। यहां गर्मियों में भीषण गर्मी तथा सर्दियों में बर्फीले जाड़े पड़ते हैं। निस्सन्देह दक्षिण में खाड़ी तथा उत्तर में महान् झीलों के निकटवर्ती भागों में भीषणता नहीं मिलती। जाड़ों में तापक्रम हिमांक से नीचे होते हैं जबकि गर्मियों में औसतन 65–70 फ़ै० के बीच रहते हैं। इस प्रदेश की पश्चिमी सीमा रॉकी शृंखला के बजाय 20 इंच की सम-वर्षा रेखा को मानना ज्यादा उपयुक्त होगा क्योंकि उसके पश्चिम में स्थित ग्रेट प्लेन्स में अर्द्ध-शुष्क जलवायु पाई जाती है। वर्षा अधिकतर भागों में 30–40 इंच तक होती है जो पूर्व की ओर क्रमशः बढ़ती जाती है।
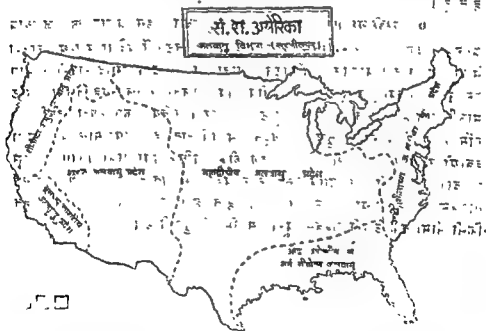
चित्र–13

(4) **शुष्क जलवायु प्रदेश**—संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी राज्यों (ऊटा, नेवादा, इडाहो, एरीजोना, मोंटाना, व्योमिंग, कोलोरैडो, ओरेगन तथा न्यू मैक्सिको आदि) में शुष्क तथा अर्द्ध-शुष्क जलवायु मिलती है। सियरा नेवादा तथा कॉस्केड पर्वत शृंखलाओं के वृष्टि छाया प्रदेश बनने के कारण इन राज्यों में बहुत

कम वर्षा होती है । सम्पूर्ण प्रदेश (जिसमें ग्रेट बेसिन, कोलोरैडो, कोलम्बिया-स्नेक आदि शुष्क पठारी भाग शामिल है). का वर्षा-औसत 5 से 10 इंच है पर वस्तुतः बहुत से ऐसे भाग हैं जहां नाम-मात्र को भी पानी नहीं पड़ता । गर्मियों में भीषण गर्मी पड़ती है । कई स्थानों पर तापक्रम 100 फ़ै० से ज्यादा ऊँचा होता है। वनस्पति तथा पानी के अभाव में चट्टानें नंगी है जिनमें विखण्डन क्रिया निरन्तर होती रहती है अतः कई स्थानों पर रेतीले रेगिस्तानों जैसी अवस्थाएँ भी विकसित हो गई हैं । तापान्तर बहुत होता है ।

(5) भूमध्य सागरीय तुल्य जलवायु प्रदेश — संयुक्त राज्य अमेरिका के धुर दक्षिण-पश्चिम में स्थित कैलीफोर्निया राज्य जलवायु की दृष्टि से देश के अन्य भागों से पर्याप्त पृथक हैं । साधारणतः यहां की जलवायु गर्म-शीतोष्ण तुल्य है । यहां की जलवायु का प्रमुख लक्षण जाड़ों की वर्षा है जिसके कारण जाड़े कम ठंडे तथा सुहावने होते है । वस्तुतः महाद्वीप के पश्चिमी तट पर 30°–40° अक्षांशों में स्थित होने के कारण यह भाग केवल जाड़ों के दिनों में ही पछुआ हवाओं के मार्ग में आ जाता है । अतः वर्ष की अधिकांश वर्षा (85% से अधिक) जाड़ों के दिनों में ही होती है । जाड़ों के कम ठण्डे होने के कारण तापान्तर बहुत कम होते हैं ।

(6) ठण्डी-शीतोष्ण सामुद्रिक जलवायु प्रदेश — इस प्रकार की जलवायु अवस्थाएँ देश के उत्तरी-पश्चिमी कोने में प्रशांत के तटवर्ती प्रदेशों में स्थित राज्यों में पाई जाती हैं । ओरेगन, वाशिंगटन, इडाहो तथा मोंटाना आदि राज्यों के भाग इस सुन्दर जलवायु से युक्त है । मानवीय कार्य-कुशलता के लिए यह जलवायु श्रेष्ठ मानी जाती है । उत्तरी-प्रशांत ड्रिफ्ट के कारण सर्दियां कम ठण्डी होती है। गर्मियां भीतरी भागों की तुलना में बहुत कम गर्म होती है । वर्षा साल भर पछुआ हवाओं से होती है । इसी प्रदेश में देश की सर्वाधिक वर्षा मात्रा (100 इंच से ज्यादा) पाई जाती है । वार्षिक तापान्तर बहुत कम होते हैं । जनवरी में औसत तापक्रम 40 फ़ै० तथा जुलाई में 65° फ़ै० होता है । इस प्रदेश की जलवायु बहुत किसी सीमा तक उत्तरी-पश्चिमी यूरोप से मिलती-जुलती है ।

□□□

सं. रा. अमेरिका :
मिट्टियाँ एवं प्राकृतिक वनस्पति

मिट्टी एवं प्राकृतिक वनस्पति परस्पर सम्बन्धित हैं। दोनों के स्वरूप को निर्धारित करने वाले तत्व प्रायः समान ही हैं। मिट्टियों की उपजाऊ शक्ति, पर्तों की मोटाई, रंग आदि को सही रूप में समझने के लिए उनकी प्राकृतिक पृष्ठ भूमि को गहराई से देखना होगा। दूसरे शब्दों में, स्थिति, भू-बनावट, जलवायु, वनस्पति, अवधि (मिट्टी की उम्र) आदि तत्व मिट्टी के स्वरूप को निर्धारित करते हैं। वनस्पति का प्राकृतिक आवरण भी इन्हीं तत्वों द्वारा निर्धारित किया जाता है। तीन तत्व, यथा स्थिति, जलवायु एवं मिट्टी इस दृष्टि से ज्यादा उल्लेखनीय हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विशाल देश में, जहाँ धरातलीय स्वरूप एवं जलवायु सम्बन्धी भारी विविधता है, मिट्टी तथा वनस्पति के स्वरूप में भारी क्षेत्रीय अन्तर होना स्वाभाविक है।

संयुक्त राज्य अमेरिका की सर्वाधिक उपजाऊ मिट्टियाँ प्रेयरी प्रदेश की हैं जो देश के भीतरी निचले प्रदेशों में विस्तृत हैं। कनाडा में इनका विस्तार क्रमशः कम हो जाता है। सबसे कम उपजाऊ पोडजोल मिट्टियाँ हैं जिनका विस्तार सं. रा. अमेरिका में कनाडा की तुलना में बहुत कम है। टुंड्रा-तुल्य मिट्टियाँ केवल उच्च पर्वतीय भागों तक ही सीमित हैं। मोटे तौर पर, संयुक्त राज्य अमेरिका की सभी मिट्टियों को दो समूहों में रखा जा सकता है। इस प्रकार का वर्गीकरण उन मिट्टियों के स्वरूप तथा विकास को समझने के लिए भी बहुत जरूरी है। साधारणतः पश्चिमी संयुक्त राज्य की मिट्टियाँ पैडोकेल प्रकार की मिट्टियाँ है जिनमें चूने की प्रधानता है। जबकि पूर्व के आर्द्र भागों में अधिकांश मिट्टियाँ 'पैडाल्फर' प्रकार की हैं जो एसिडयुक्त हैं।

पश्चिम के शुष्क प्रदेशों में अत्यधिक गर्मी के कारण वाष्पीकरण ज्यादा होता है। यहाँ जलांश मिट्टी के कणों में होकर ऊपर को उठता है, उसकी ऊर्ध्व-वर्ती गति होती है। उसके साथ कई पदार्थ घुले रूप में होते हैं जो धरातल पर पड़े रह जाते हैं। इस प्रकार क्रमशः धरातलीय पर्तों में चूने व नमक आदि का

अंश बढ़ता जाता है। दूसरे, यह भी सच है कि इन शुष्क भागों में चट्टानों का विखण्डन तो खूब होता है परन्तु जल के रूप में यातायात के साधनों का अभाव होने से वे तत्व ऊपरी पर्त पर ही पड़े रह जाते हैं। इस प्रकार इन भागों की मिट्टियों में चूने के अंशों की प्रधानता रहती हैं इसलिए इस समूह की मिट्टियों को सम्मिलित रूप से मोटे तौर पर 'पैडोकल' कहते हैं।

आर्द्र प्रदेशों में इससे उल्टी गति होती है जिसे 'लीचिंग क्रिया के नाम से जाना जाता है। लीचिंग क्रिया के फलस्वरूप जल के साथ विविध नमक व चूने के अंश घुलकर धरातल के छिद्रों में होकर नीचे की तरफ चले जाते हैं। परिणाम-स्वरूप धरातल पर विद्यमान मिट्टी की पर्तें कैलशियम में बहुत गरीब होती है। उनमें एलुमिनियम तथा लोह अंशो की प्रधानता होती है। इस प्रकार की मिट्टियों को पैडाल्फर नाम से जाना जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्वी आर्द्र एवं वनयुक्त भागों में इसी प्रकार की मिट्टियों का विकास हुआ है। अत्यधिक शुष्क एवं रेतीले भागों में स्थित मिट्टियों को छोड़कर साधारणतः पैडोकल मिट्टियां पैडाल्फर मिट्टियों की तुलना में ज्यादा उपजाऊ होती है। उनमें उपजाऊ तत्वों (ह्यूमस) की मात्रा अधिक होती है। इसका कारण संभवतया यह हो सकता है कि घास पेड़ों की पत्तियों की तुलना में ह्यूमस में जल्दी और आसानी से परिवर्तित हो जाती हैं।[14]

जलवायु दशाओं एवं मिट्टियों के वितरण को ध्यान में रखकर इस महादेश के विभिन्न प्रदेशों में पाई जाने वाली प्राकृतिक वनस्पति का भली-भाँति अनुमान किया जा सकता है। लेकिन इस पर विचार करते हुए यह तथ्य भी निरन्तर ध्यान में रखना होगा कि यू. एस. ए. जैसे विकसित देश के अधिकांश वनित भागों से वनस्पति-आवरण का प्राकृतिक स्वरूप नष्ट किया जा चुका है। ज्यादातर जंगल काट दिए गए हैं, घासों को साफ करके खेतों में परिवर्तित कर लिया गया है। इसके बावजूद भी लगभग 1 मिलियन वर्गमील भू-भाग में वनस्पति अभी भी अपने प्राकृतिक स्वरूप में है। ऐसे भाग खासकर पश्चिम के अवसित प्रदेशों व पर्वत-क्रमों में है। व्यापारिक महत्व की दृष्टि से ये जंगल महत्वपूर्ण हैं। जंगलों में व्यापारिक महत्व की लकड़ियों का प्रतिशत इस प्रकार है—डगलस फर 24%, पश्चिमी यलोपाइन 10%, दक्षिणी यलोपाइन 8% अन्य मुलायम लकड़ियां 39% एवं कठोर लकड़ियां 19%। वर्तमान (1982) में व्यापारिक महत्व के जंगल लगभग 482 मिलियन एकड़ में फैले हैं। इस प्रकार इन्होंने देश का लगभग 1/5 भू-भाग घेरा हुआ है।

जिस प्रकार मिट्टियों को मोटे तौर पर दो समूहों में रखा गया है (पूर्व में पैडाल्फर, पश्चिम के शुष्क प्रदेशों में पैडोकल्स) उसी प्रकार से प्राकृतिक वनस्पति

14. Hudson, F.S.—North America, Macdonald & Evans Ltd. P. 147.

के आवरण को भी दो समूहों में रखा जा सकता है यथा पश्चिम के शुष्क भागों में घास तथा झाड़ियों का प्राधान्य है जबकि पूर्व के आर्द्र प्रदेशों में वन विकसित हैं। लेकिन इस मोटे वर्गीकरण की ओट में स्थानीय वनस्पति स्वरूपों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। उल्लेखनीय है कि कनाडा की तरह इस देश में भी सबसे घने और मुलायम लकड़ी के महत्वपूर्ण भण्डार के रूप में वन प्रशांत तट पर फैले अधिक वर्षायुक्त उच्च प्रदेशों में स्थित हैं। वाशिंगटन, ओरेगन तथा उत्तरी कैलीफोर्निया आदि संयुक्त राज्य अमेरिका के कागज तथा लुग्दी उद्योग को मुलायम लकड़ी प्रदान करने वाले भागों में अग्रणी हैं। अलास्का के प्रशांत तटीय भागों में भी उपयोगी कोणधारी वन है यद्यपि भीतरी भागों एवं उत्तर में टुंड्रा-तुल्य वनस्पति के दर्शन होते हैं। पूर्वी संयुक्त राज्य में कठोर लकड़ियों के वृक्षों का बाहुल्य है। अपवाद स्वरूप झील प्रदेश तथा खाड़ी-अटलांटिक तटवर्ती मैदानी पट्टी में कीमती पाइन के जंगल भी उपलब्ध हैं।
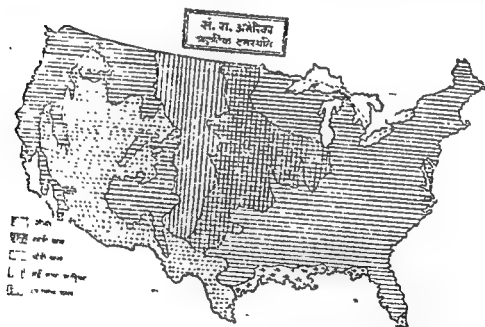
चित्र–14

प्राकृतिक वनस्पति का विध्वंस तथा यूरोपियन प्रवासियों की विस्तार-दिशा एक ही रही है। जब यूरोपियन लोग पहली बार इस भू-भाग में आए और पूर्व में अटलांटिक तट प्रदेश में आकर रुके तो उन्हें सर्वत्र सघन जंगल मिले। अप्लेचियन उच्च प्रदेश कठोर लकड़ी के वृक्षों से भरे हुए थे। इन जंगलों ने यूरोपियन प्रवासियों को क्रियाशील होने की प्रेरणा दी, औजार दिए। प्रवासी लोगों ने इन्हें काट-काट कर खेतों तथा बागों के लिए नई भूमि प्राप्त की। यह प्रक्रिया क्रमशः

पश्चिमोत्तर नए क्षेत्र प्रदान करती रही और अन्त में अप्लेचियन्स को पार करके एक ऐसे चौड़े मैदानी क्षेत्र में पहुँचे जहाँ विस्तृत भागों में ऊँची-ऊँची घास थी। इसे 'प्रेयरीज' नाम दिया गया। पश्चिम की ओर यह घास क्रमशः छोटी होती जाती है। यहाँ तक कि ग्रेट प्लेन्स के पश्चिमी भागों में इसकी लम्बाई 6 इंच ही रह जाती हैं। लम्बी तथा छोटी घास की अनुमानित सीमा 100 पश्चिमी देशांतर मानी जा सकती है जिसके पश्चिम में 20 इंच से कम वर्षा होती है। फिर आया रॉकी-क्रम, जहाँ वनस्पति का स्वरूप ऊँचाई द्वारा नियन्त्रित है। यथा, नीचे भागों में घास, अनुकूल घाटी क्षेत्रों में वन तथा बहुत ऊँचाई पर टुंड्रा-तुल्य वनस्पति के दर्शन होते हैं। आगे और पश्चिम में शुष्क झाड़ियों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। अनेक भाग वनस्पति विहीन नंगी चट्टानोंयुक्त हैं। धुर पश्चिम में, प्रशांत तटीय पर्वत श्रेणियों पर घने जंगल हैं जिनके विकास का आधार वह भारी आर्द्रता है जो इस सभाग में चलने वाली आर्द्र हवाओं द्वारा प्रदान की जाती है।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि में संयुक्त राज्य की मिट्टियों तथा प्राकृतिक वनस्पति को निम्न समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

समूह	मिट्टियाँ	प्रा. वनस्पति
(अ) पेंडोकल्स		
	1. काली मिट्टी या शर्नोजम	1. पश्चिमी प्रेयरीज
	2. भूरी एवं चेस्टनट	2. छोटी घास
	3. 'ग्रे' रंग की रेगिस्तानी मिट्टियाँ	3. झाड़ियाँ
(ब) पेंडालफर्स		
	4. प्रेयरी मिट्टियाँ	4. पूर्वी (लम्बी) प्रेयरीज
	5. ग्रे-ब्राउन जंगली मिट्टियाँ	5. कठोर लकड़ी वाले जंगल
	6. पोडजोल मिट्टियाँ	6. कोणधारी जंगल
	7. लाल-पीली मिट्टियाँ	7. मिश्रित जंगल
(स) अन्य मिट्टियाँ		
	8. पर्वतीय मिट्टियाँ	8. पर्वतीय जंगल
	9. काँप की मिट्टियाँ	

शर्नोजम मिट्टियाँ :

काली मिट्टी का विस्तार ग्रेट प्लेन्स तथा प्रेयरीज की संक्रमण पट्टी में है। और भी स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि यह ग्रेट प्लेन्स के अर्द्ध पूर्वी भाग तथा प्रेयरीज घास क्षेत्रों के पश्चिमी भाग में स्थित है जिसका विस्तार व्योमिंग, कोलोरेडो, न्यू मैक्सिको आदि राज्यों की पूर्वी सीमावर्ती पट्टियों एवं ओकलाहामा,

टैक्सास, कन्यास, नैब्रास्का तथा दक्षिणी डकोटा राज्यों के पश्चिमी भागों में है शर्नोजम की ऊपरी पर्त उपजाऊ तत्वों (ह्यूमस) युक्त है तथा रंग गहरे भूरे से काला तक है। रंग से प्रतिबिम्बित होता है कि इस पर्त में कार्बनिक तत्वों का बाहुल्य है। मिट्टी की दूसरी पर्त भीतर की ओर लगभग 3–4 फीट मोटी है। रंग इसका गहरा भूरा है। इस पर्त में नीचे की ओर कैलशियम कार्बोनेट का पर्याप्त जमाव है जिससे मिट्टी की उत्पादकता और भी बढ़ गई है।

शर्नोजम मिट्टी वाले भाग में वर्षा 20–35 इंच तक होती है जिसमें प्राकृतिक रूप से लम्बी घास उगती रही है। कुछ भागों में आज भी ब्लूस्टैम घास मिलती है जिसकी ऊँचाई 6 फीट तक है। इस घास के निरन्तर मिश्रण से ही यहाँ की मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ, काली तथा पर्याप्त ह्यूमस युक्त हो गई है। इस भाग की काली शर्नोजम मिट्टी सोवियत संघ के यूक्रेन प्रदेश जैसी है। वर्तमान समय में ज्यादातर क्षेत्रों में घास को साफ करके गेहूँ के खेतों में बदल लिया गया है।
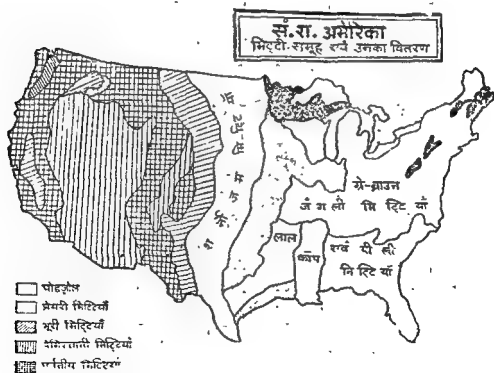
चित्र–15

भूरी एवं चेस्टनट मिट्टियाँ :

इस प्रकार की मिट्टियाँ ग्रेट प्लेन्स में पाई जाती हैं जहाँ अर्द्ध-शुष्क अवस्थाएँ हैं और प्रेयरीज बहुत छोटे यानी छोटी घास के रूप में हैं। दूसरे शब्दों में इनका

विस्तार ग्रेट प्लेन्स के अर्द्ध-पश्चिमी भागों में, जो अपेक्षाकृत ऊँचे हैं, रॉकी के चरण प्रदेशों में स्थित है, व्योमिंग, कोलोरैडो तथा न्यू मैक्सिको आदि राज्यों में है। इन मिट्टियों की ऊपरी पर्त शर्नोजम की तुलना में पतली है। उपजाऊ तत्व 'ह्यूमस' भी कम है। रंग शर्नोजम की अपेक्षा हल्का है जो इस बात का द्योतक है कि छोटी घास में विकसित होने के कारण इन मिट्टियों में कार्बन तत्व कम है। ये मिट्टियाँ भी उपजाऊ हैं परन्तु आर्द्रता के अंश की कमी में खेती के बजाए चारागाहों के लिए ज्यादा उपयुक्त है। पिछले दशकों में इन मिट्टियों पर शुष्क-कृषि विधि के अन्तर्गत गेहूँ की खेती भी की गई है परन्तु मिट्टी-कटाव की भीषण समस्या के फलस्वरूप पूर्णतः फलवती सिद्ध नहीं हुई।

ग्रेट प्लेन्स की पूर्वी सीमा 20 इंच की सम-वर्षा रेखा मानी जाती है। इसके पश्चिम की तरफ ज्यों-ज्यों ऊँचाई बढ़ती जाती है वर्षा की मात्रा तथा घास की ऊँचाई क्रमशः घटती जाती है। इस भाग में घास की लम्बाई पूर्व में 3 फीट से लेकर पश्चिम में 1 फीट तक है। बीच-बीच में कहीं रेगिस्तानी झाड़ियाँ तथा यत्र-तत्र रूप में वृक्ष भी मिलते हैं। छोटी घास में अनेक किस्म मिलती हैं जिनमें 'व्हीट ग्रास' 'ग्रामास' तथा 'बफैलो ग्रास' आदि उल्लेखनीय है। इनका विस्तार मध्य टैक्सास से लेकर न्यू मैक्सिको तक है।

'ग्रे' (भूरी) रंग की रेगिस्तानी मिट्टियाँ :

भूरे रंग की रेगिस्तानी मिट्टियों का विस्तार पश्चिमी कोर्डीलेराज के मध्य स्थित अन्तःपर्वतीय शुष्क पठारी भागों में है। कोलोरैडो पठार तथा ग्रेट बेसिन में इस प्रकार की मिट्टियों ने पर्याप्त भाग घेरा हुआ है। इनका विस्तार एरीजोना, नेवादा, ऊटा, इडाहो, ओरेगन तथा पूर्वी कैलीफोर्निया आदि राज्यों में है। ये पतली पर्त वाली मिट्टियाँ हैं जिनमें कार्बनिक तत्वों की बहुत कमी है जिसका कारण स्पष्टतः वनस्पति की कमी है। कैलशियम कार्बोनेट का जमाव पर्याप्त है। धरातल के कुछ इंच नीचे ही कार्बोनेट की पर्तें मिलने लग जाती हैं। मिट्टी में नमकीन अंश पर्याप्त है। जिन भागों में नमकीन अंश की कमी है वहाँ सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर कृषि की जा सकती है। पानी एवं वनस्पति की कमी, भारी विखण्डन तथा वायु की क्रियाशीलता के कारण ऊपरी पर्तों में रेतीले कण या गेवाल का बाहुल्य है। नीचे की पर्त (बी) 'ग्रे' या मटमैले रंग की है। पैतृक चट्टानों के आधार पर इन मिट्टियों का रंग एवं स्वरूप भिन्न भिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है। यथा, कहीं लाल, कहीं 'ब्राउन' तथा कहीं 'ग्रे' रंग की है।

इस सम्भाग में वर्षा बहुत कम होती है जिसका औसत 5 से 10 इंच तक है। लेकिन बहुत से ऐसे भी भाग हैं जहाँ वर्षा बिल्कुल नहीं होती। अतः वहाँ वनस्पति आवरण ना के बराबर है। जो कुछ भी वनस्पति होती है वह अत्यधिक गर्मी के कारण झुलस कर समाप्त हो जाती है। यत्र-तत्र कँटीली झाड़ियाँ बिखरे

रूप में मिलती हैं। जहाँ वर्षा कुछ ज्यादा हो जाती है, छोटी-छोटी घास पनपती है। ये घास 'ग्रामास', 'ड्रोपसीड' तथा 'कर्ली मैस्क्वाइट' आदि किस्मों की होती है। ऐरीजोना तथा पश्चिमी टैक्सास में भी इस प्रकार के कुछ घास क्षेत्र हैं।

प्रेयरी मिट्टियाँ :

भीतरी निचले प्रदेश के पूर्वी भाग में, जहाँ लम्बी घास होती हैं, प्रेयरी मिट्टियां पाई जाती हैं। दूसरे शब्दों में इस मिट्टी समूह का विस्तार शर्नोजम मिट्टी प्रदेश के ठीक पूर्व में है। यद्यपि प्रेयरी मिट्टियाँ पैडाल्फर किस्म की हैं तथापि इसमें लीचिंग क्रिया ज्यादा न होने से उत्पादकता बनी हुई है। इसी आधार पर कई मिट्टी शास्त्री इन्हें पश्चिम की पैडोकल तथा पूर्व की पैडाल्फर मिट्टियों के बीच सक्रमण स्थिति की मानते हैं। ये गहरी पर्त वाली मिट्टियाँ हैं। उत्पादन शक्ति की दृष्टि से इसकी 'ए' तथा 'बी' क्षैतिज पर्तों में कोई खास अन्तर नहीं है। वर्षा इस क्षेत्र में पर्याप्त होती है अतः शर्नोजम की तुलना में ये कृषि की दृष्टि से ज्यादा महत्वपूर्ण है। तुलनात्मक रूप में इन्हें कम खादों की आवश्यकता होती है। उत्पादन शक्ति में शर्नोजम की बराबर होते हुए भी इनमें एक गुण और ज्यादा है कि ये नमी को ज्यादा मात्रा और समय तक धारण कर सकती हैं। इनका विस्तार देश के मध्य-पूर्वी भाग में ओकलाहामा, कन्सास, नेब्रास्का तथा आयोवा आदि राज्यों में है। अमेरिका की प्रसिद्ध 'मक्का मेखला' इसी मिट्टी समूह में स्थित है।

पहले इसमें 6–8 फीट लम्बी घास का विस्तार था जिसे अब पूर्णतः साफ करके खेतों में परिवर्तित कर लिया गया है।

ग्रे-ब्राउन जंगली मिट्टियाँ :

इन मिट्टियों का विस्तार संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तरी-पूर्वी राज्यों (इलीनॉय, ओहियो, पैंसिलवेनिया, विस्कांसिन, न्यूयार्क, वर्जीनिया, पश्चिमी वर्जीनिया) में है। ये मध्यम किस्म की मिट्टियाँ हैं जिन पर कठोर लकड़ी वाले पतझड़ी वन विकसित हुए। ऊपर की पर्तें पतली है। परन्तु वनस्पति (पत्तियां) के संयोग से ह्यूमस युक्त है। लीचिंग क्रिया के कारण 'बी' क्षैतिज पर्त में खनिज अंश ज्यादा है। लीचिंग की मात्रा उत्तर की ओर क्रमशः ज्यादा हुई है। जंगलों को साफ करके खेत विकसित किए गए हैं परन्तु लगातार अच्छी फसल लेने के लिए इस मिट्टी में खादों का मिश्रण अत्यन्त आवश्यक है। इस संभाग में [illegible] प्रकार की कृषि होती है।

इस संभाग में साल भर मन्द वितरित वर्षा होती है। [illegible] जाड़े कठोर किन्तु कम लम्बे होते हैं। मिट्टियां [illegible] पोडजलीय क्रिया उत्तर की [illegible] कम हुई है। [illegible]

लकड़ी वाले पतझड़ीय वन जैसे बीच, बर्च, मैपिल तथा ओक उल्लेखनीय हैं जो हल्की रेतीली मिटियों में पनपते हैं। कुछ किस्में कोणधारी वनों की भी हैं जिनमें लाल तथा श्वेत स्प्रूम, पाइन एवं हैमलॉक महत्वपूर्ण हैं। कोणधारी वृक्ष प्रायः उत्तर की ओर मिलते हैं।

पोडजोल मिट्टियाँ :

इन मिट्टियों का विस्तार संयुक्त राज्य में बहुत कम हैं। ये महान् झीलों के पश्चिम में मिनेसोटा तथा विस्कांसिन राज्यों तथा कुछ क्षेत्रों में न्यू इंगलैंड प्रदेश में मिलती हैं। राख की रंग की इन मिट्टियों का प्रादुर्भाव भारी लीचिंग क्रिया के फलस्वरूप हुआ है। उपजाऊ तत्व बहुत कम हैं। ये आम्लिक मिट्टियाँ है जिनकी 'बी' क्षैतिज पर्त में लोह अंशों की अधिकता के कारण पौधों की जड़ों का भीतर की ओर जाना भी कठिन होता है। इन मिट्टियों से युक्त उच्च प्रदेशों में कोणधारी वन हैं तथा निचले भागों में दुग्ध व्यवसाय के लिए चारे की फसलें या आलू तथा जई पैदा की जाती है। इन क्षेत्रों के मूल वृक्ष शंकुल वनों से सम्बन्धित है जिनमें पाइन, डगलस, फर, सीडार तथा हैमलॉक उल्लेखनीय हैं।

लाल-पीली मिट्टियाँ :

देश के दक्षिण-पूर्वी भाग में अत्यधिक गर्मी एवं भारी वर्षा के कारण लीचिंग क्रिया बहुत हुई है जिसके फलस्वरूप आम्लिक प्रतिक्रिया हुई है। लाल-पीला रंग इस बात का संकेत है कि ये धीरे-धीरे लैटराइट होती जा रही हैं। धरातलीय या 'ए' क्षैतिज पर्त भूरे रंग की है जिसमें ह्यूमस तत्वों की मात्रा कम है। नीचे वाली या 'बी' क्षैतिज पर्त लाल एवं पीले रंग की है। साधारणतः कपास मेखला में यह पर्त पीले तथा अप्लेचियन क्षेत्र में लाल रंग की है। संरचना की दृष्टि से कहीं रेतीली तथा कहीं 'क्ले' प्रकार की है। इन मिट्टियों का विस्तार फ्लोरिडा, लूजियाना मिसीसीपी, अलाबामा, जार्जिया, टैनेसी, अर्कन्सास तथा दक्षिणी कैरोलिना आदि राज्यों में है।

वर्तमान में इस संभाग में संयुक्त राज्य अमेरिका की विश्व प्रसिद्ध कपास मेखला विद्यमान है। मूल रूप से यहाँ उष्ण कटिबंधीय वन पनपते रहे हैं जिनमें ओक तथा पाइन का बाहुल्य रहा है। इस भाग में गर्मियाँ भीषण गर्म, कम ठंडे जाड़े तथा पर्याप्त वर्षा होती है। अतः वृक्षों की वृद्धि के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ हैं। यही कारण है कि यहाँ के वृक्षों की ऊँचाई सैंकड़ों फीटों तक होती है। ओक तथा पाइन के अतिरिक्त महोगनी, सायप्रस, एबोनी तथा मैन्ग्रोव के वृक्ष मिलते है। यत्र-तत्र घास क्षेत्र भी हैं। पाइन के जंगल अधिकांशतः रेतीले भागों में मिलते हैं।

पर्वतीय मिट्टियाँ :

पर्वतीय प्रदेशों में ऊँचाई के अनुसार मिट्टि एवं वनस्पति दोनों के स्वरूपों में अन्तर आ जाता है। अंतःपर्वतीय पठारी भाग के पर्वतों के निचले भागों में जहाँ शुष्क दशाएँ हैं रेगिस्तानी भागों जैसी 'ग्रे' मिट्टियाँ मिलती हैं। फुट हिल्स प्रदेश में रेगिस्तानी दशाएँ स्टैप्स में बदल जाती हैं। जैसे-जैसे ऊँचाई बढ़ती जाती है मिट्टि की पर्त पतली होती जाती है तथा उनमें चूने के अंश बढ़ते जाते हैं। ऊँचे ढालों पर यत्र-तत्र भूरि मिट्टियों के दर्शन होते हैं।

पश्चिमी कॉर्डीलेराज में ऊँचाई के साथ-साथ वनों के बदलते हुए स्वरूप को आसानी से देखा जा सकता है। यथा, रॉकी के नीचे भागों में घास एवं छितरे वृक्ष, 4–6000 फीट के बीच पिनयान एवं जूनिपर तथा अधिक ऊँचे भागों में अल्पाइन मैडोज तथा कोणधारी वृक्ष मिलते हैं। पश्चिम में प्रशांत तटीय भाग विशेषकर तटवर्ती श्रेणियों कॉस्केड एवं सियरानेवादा के ढाल प्रदेशों में, जहाँ पर्याप्त वर्षा होती है, गहन वन पाए जाते हैं। समुद्र तल से लेकर 8000 फीट की ऊँचाई तक घने मिश्रित वन मिलते हैं जिनमें चौड़ी पत्ती वाले एवं कोणधारी दोनों प्रकार के ही वृक्ष हैं। दूसरे प्रकार के वृक्ष अपेक्षाकृत उत्तरी एवं ऊँचे भागों में ही पाए जाते हैं। यहाँ के जंगलों में स्प्रूस, डगलस फर, पाइन, रेड वुड तथा सीडार आदि के वृक्षों का बाहुल्य है।

कांप की मिट्टियाँ :

ये मिट्टियाँ नदियों की घाटियों में रेखात्मक स्वरूप में विद्यमान हैं। इसका सबसे बड़ा भाग मिसीसीपी जल प्रवाह क्रम का बाढ़कृत मैदान है जो लूजियाना, आर्कन्सास तथा मिसीसीपी आदि राज्यों में विस्तृत है। प्रति वर्ष नई पर्तें बिछती रहने के कारण इनकी मिट्टियाँ उपजाऊ बनी रहती हैं।

□□□

नहीं हो पाती, परन्तु इनका किसी भी प्रकार का अभाव यू.एस.ए. को नहीं देखना पड़ता क्योंकि लैटिन अमेरिकन देशों, जो प्रधानतः उष्ण कटिबंध में ही स्थित हैं, से ये उपज साधारणतः उपलब्ध हैं।

अमेरिका के कृषि-विकास का इतिहास इस देश में आबादी के विस्तार के इतिहास के साथ-साथ चलता है। 16-17वीं शताब्दियों में यूरोपियन लोग यहाँ आकर बसे। उस समय तक औद्योगिक क्रांति का श्रीगणेश नहीं हुआ था अतः यहाँ के निवासियों, जो यद्यपि मुख्यतः पश्चिमी यूरोपियन देशों से आकर बसे थे, का प्रधान आर्थिक उद्यम कृषि था। लगभग 90% लोग कृषि में लगे थे। परन्तु देश के उत्तरी-पूर्वी सम्भाग, जहाँ आकर ये लोग बसे, में पर्वत, दलदल, जंगल आदि के कारण कृषि योग्य भूमि का अभाव था। अतः समस्त जन की खाद्य पूर्ति के लिए यह आवश्यक था कि अधिकाधिक नई कृषि योग्य भूमि की प्राप्ति हो। वस्तुतः इस आवश्यकता ने ही अप्लेचियन उच्च प्रदेशों के उस पार जाकर भू-क्षेत्रों को आबाद करने तथा प्रेयरी-प्रदेशों को फार्म्स में बदलने में महत्वपूर्ण प्रेरणात्मक सहयोग दिया।

19वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में प्रवासी समुदायों ने अपना पश्चिमोत्तर अभियान प्रारम्भ किया। अप्लेचियन को पार करके जैसे ही ये लोग आगे बढ़े, एक विशाल निचले मैदानी भाग ने इनका स्वागत किया। लगभग 1500 मील लम्बा तथा 1250 मील चौड़ा यह विशाल भू-भाग कृषि विकास की सभी सम्भावनाओं से युक्त था जिसने उत्तरी अमेरिका की कृषि व्यवस्था में क्रांति ला दी। 1825 में इरी नहर खोली गयी जो हडसन नदी को महान् झीलों के पूर्वी भाग से जोड़ती थी। अगले कुछ दशकों में झील क्षेत्र में रेल लाइनें बिछाई गयीं। 1852 में न्यूयार्क-शिकागो लाइन खुली। इसका परिणाम यह हुआ कि गेहूँ की खेती, जो अब तक केवल उत्तरी-पूर्वी राज्यों तक सीमित थी, का विस्तार इलीनाइस राज्य तक हो गया। 1860-70 में इसी क्रम की पुनरावृत्ति हुई और अब विस्कांसिन तथा आयोवा राज्यों तक गेहूँ की खेती की जाने लगी। 1880 में उत्तरी पैसफिक रेलवे बनी और इसी के साथ-साथ गेहूँ का विस्तार और भी पश्चिम की ओर हुआ।

इस प्रकार पिछली शताब्दी के अन्त तक अप्लेचियन और रॉकी शृंखला के मध्य स्थित विशाल भू-भाग को साफ करके कृषि क्षेत्रों में परिवर्तित कर लिया गया। चूँकि कृषकों की संख्या के अनुपात में कृषि भूमि का विस्तार बहुत था अतः बड़े-बड़े फार्म्स बनाए गए। यातायात के साधनों के विकास की गति तथा फार्म्स की स्थापना की प्रक्रिया प्रायः साथ-साथ चली। प्रारम्भिक फार्म्स रेलवे मार्गों के सहारे-सहारे स्थापित किए गए। बाद में भीतरी भागों तक सड़कों द्वारा पहुँचा गया और घास क्षेत्रों को साफ करके फार्म्स में बदल दिया गया। इस विशाल भू क्षेत्र तथा बड़े आकारों के फार्म्स में यंत्रों द्वारा ही कृषि सम्भव थी अतः 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है' के अनुसार विविध प्रकार के कृषि-यंत्रों का विकास किया

(1) आर्द्रता (क्योंकि इस सम्भाग में वर्षा बहुत कम होती है) को मिट्टी में ज्यादा से ज्यादा सुरक्षित रखना। नमी को बनाए रखने के लिए जोत लगाने के बाद पटेला फेर दिया जाता है। वाष्पीकरण से बचने के लिए जुताई गहरी की जाती है। फसलें एक साल छोड़कर दूसरे साल बोयी जाती हैं ताकि परती जमीन ज्यादा आर्द्रता सचित कर सके।

(2) इस प्रकार की फसलें बोना जिन्हें कम आर्द्रता की जरूरत पड़ती है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु यहाँ पौधों के बीच की दूरी आर्द्र क्षेत्रों की अपेक्षा ज्यादा रखी जाती है ताकि पौधे को अपेक्षाकृत ज्यादा भू-क्षेत्र में संचित नमी प्राप्त हो सके। इस सम्भाग में बोने के लिए गेहूँ एवं सोरघम की ऐसी फसलें विकसित की गयी हैं जिन्हें कम नमी की आवश्यकता पड़ती है। यद्यपि इनका दाना छोटा होता है। आर्द्रता के अभाव में दाना फूल नहीं पाता।

(3) भू-कटाव को रोकने के लिए जुताई ढाल के आर-पार की जाती है। मिट्टी के कणों को संगठित करने के लिए वृक्षावलियाँ तथा इस वातावरण में पनप सकने वाली घासें भी लगायी गयी हैं।

पश्चिम के शुष्क भागों में सिंचाई की व्यवस्था करना अत्यन्त आवश्यक था। अर्द्ध शुष्क पठारी एवं बेसिन भाग में सिंचाई की कितनी आवश्यकता है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 11 पश्चिमी राज्यों (कोलोरैडो, न्यू मैक्सिको, व्योमिंग, इडाहो, ओरेगन, वाशिंगटन, नेवादा, ऊटा, मोंटाना, कैलीफोर्निया एवं एरीजोना) में कुल कृषिगत भूमि के लगभग एक तिहाई भाग में सिंचाई द्वारा ही कृषि सम्भव होती है। स्वाभाविक रूप से तीन प्रकार के क्षेत्रों में सिंचाई की व्यवस्था की गयी। प्रथम, अनियमित वर्षा वाले क्षेत्र जहाँ सूखा व अकाल का डर सदा बना रहता था। द्वितीय, उन क्षेत्रों में जहाँ कृषि पहले से होती थी परन्तु वर्षा की कमी से उपज बहुत कम थी। तृतीय, पश्चिम के पूर्णतः शुष्क भागों में जहाँ सिंचाई के फलस्वरूप अच्छे किस्म की कपास पैदा होने लगी है।

वर्तमान में, देश में लगभग 50.8 मिलियन एकड़ भूमि को सिंचाई की सुविधा प्राप्त है। 15 मिलियन एकड़ भूमि में अतिरिक्त सिंचाई की व्यवस्था करने का लक्ष्य है। सिंचाई की सुविधायुक्त फार्मों की संख्या 3,02,674 है। पश्चिमी शुष्क पठारी भागों में सिंचित कृषि क्षेत्र नदियों को घाटियों के सहारे-सहारे विकसित किए गए हैं। स्नेक, सेंटमरी, यैलो स्टोन, बिघोर्न, प्लाटे, अर्कन्सास, पैक्रो, रायोग्रांडे, सानजुआन तथा इस सम्भाग की सभी अन्य नियमित नदियों के बेसिन में नहरों तथा 'लिफ्ट इरीगेशन मैथड' से सिंचाई की जाती है। कुछ ऐसे भी भू-भाग थे जहाँ बाढ़ की समस्या थी अतः वहाँ बाढ़ नियन्त्रण, जल निकास तथा सिंचाई

की बहुउद्देशीय योजनाएँ क्रियान्वित की गयी हैं। इनमें ग्रांड कूली बाँध योजना (कोलम्बिया नदी) टेनेसी नदी घाटी योजना (टेनेसी नदी) हूवर बाँध योजना (कोलोरैडो) विलामेटे नदी घाटी योजना एवं 'सेंट्रल वैली प्रोजेक्ट' आदि उल्लेखनीय हैं।

सं० रा० अमेरिका के कृषि-क्षेत्रों का विकास भारी वैभिन्नय युक्त भौगोलिक वातावरण में हुआ है और उसी का परिणाम है कि यहाँ के कृषि-उत्पादनों में भारी विविधता है। यह भी उल्लेखनीय है कि विविधता होते हुए भी सभी क्षेत्रों में उत्पादन मात्रा बहुत औपनिवेशिक समय से लेकर 1920 तक कृषि-उत्पादन की मात्रा बढ़ने का प्रधान कारण कृषि योग्य भूमि में वृद्धि थी। इस अवधि के प्रत्येक दशक में हजारों एकड़ भूमि को साफ करके खेतों में बदला गया। ऐसा माना जाता है कि इस अवधि में लगभग 320 मिलियन एकड़ भूमि में विस्तृत जंगलों को काट कर खेतों तथा चारागाहों में परिवर्तित किया गया।[15] अगले 20 वर्षों में कृषि फार्मों की संख्या लगभग 6.5 मिलियन हो गई। कृषि फसलों में संलग्न भूमि का विस्तार भी प्रायः स्थिरवत स्थिति (लगभग 330 मिलियन एकड़) में आ गया। आगे के वर्षों के लिए यह लक्ष्य निर्धारित किया गया कि कृषि-संलग्न भूमि के उतने ही आकार-विस्तार में उत्पादन बढ़ाने के प्रयास किए जाएँ। घोड़े तथा खच्चरों के स्थान पर शक्तिचालित कृषि यंत्रों का प्रयोग आरम्भ हुआ। भूमि के विकास एवं मिट्टी की उत्पादन शक्ति बढ़ाने पर जोर दिया गया। प्रति वर्ष हवा और जल की कटाव-क्रियाओं के फलस्वरूप जो मिट्टी कट जाती है उसे रोकने के लिए योजनाएँ बनायी गयीं जो 1930–40 दशक से लेकर अब तक निरन्तर क्रियान्वित होती रही हैं।

इस प्रकार, पिछले दशकों में मानव श्रम घटा और मशीनों का प्रयोग बढ़ा। अच्छी रासायनिक व वानस्पतिक खादों के प्रयोग का प्रचलन बढ़ा। अच्छे बीज विकसित किए गए। संकर बीजों का प्रयोग सभी कृषि-मेखलाओं में हुआ, विशेषकर गेहूँ तथा मक्का के ऐसे बीज तैयार किए गए जिनसे उत्पादन मात्रा कई गुना बढ़ गयी। बीमारियों और फसलों में लगने वाले कीड़ों पर प्रभावी नियन्त्रण किया गया। विकसित नस्लों के पशु पाले गए, उनके लिए अच्छे चारागाह, मकान तथा अन्य सुविधाओं की व्यवस्था की गयी। कृषि क्षेत्रों में अनेक शोध केन्द्र खोले गए। इन सबका परिणाम यह हुआ कि पिछले दशकों, विशेषकर द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के दिनों में प्रति एकड़ उत्पादन तेजी से बढ़ा। यही कारण है कि इन दिनों में कोई वृद्धि न होने के बावजूद भी कुल कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि हुई। आगे दी गई उत्पादन-सम्बन्धी सारणियों से यह स्पष्ट है।

---

15. The statement's year book 1984-85.

फार्म्स :

पिछले दशकों में फार्म्स की कुल संख्या में कमी आई है। पिछली शताब्दी में जैसे-जैसे भूमि साफ की गयी वैसे-वैसे फार्म्स स्थापित किए जाते रहे। इनमें बहुत से फार्म्स बहुत छोटे थे। बाद में जब यंत्रों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ और कृषि को विशुद्ध वैज्ञानिक-आर्थिक स्तर पर आंका जाने लगा तो पाया गया कि छोटे-छोटे फार्म्स अनार्थिक हैं अतः उनका पुनर्संगठन किया गया। यह तथ्य निम्न आँकड़ों से सुस्पष्ट है। 1870 में फार्म्स में लगभग 500 मिलियन एकड़ भूमि संलग्न थी जो बढ़कर 1950 में 1200 मिलियन एकड़ हो गयी।[16] यह चरम स्थिति थी। इसके बाद कृषि-संलग्न में योजनाबद्ध ह्रास किया गया, और 1982 में, इस तथ्य के बावजूद कि 1960 में अलास्का तथा हवाई द्वीप शामिल हो गए थे, कृषि सलग्न भूमि का आकार 1118 मिलियन एकड़ हो गया।

पुनर्संगठन के फलस्वरूप फार्म्स की संख्या में भी कमी आई है। 1940 में सभी आकारों के फार्म्स की संख्या 6 35 मिलियन थी जो घटकर 1982 में 2.4 मिलियन रह गयी। वर्तमान (1971) में फार्म्स का औसत आकार 433 एकड़ है यद्यपि बाहुल्य उन फार्मों का है जिनका आकार हजारों एकड़ का है। इस दृष्टि से सं० रा० अमेरिका की स्थिति भारत या जापान से उल्टी है। यहाँ छोटे फार्म्स की संख्या बहुत कम तथा बड़े फार्म्स ज्यादा हैं। प्रायः देखने में आता है कि बड़े नगरों के निकट एवं देश के उत्तरी-पूर्वी (घने बसे) भाग में फार्म्स का आकार अपेक्षाकृत छोटा है जबकि पश्चिम की तरफ क्रमशः बढ़ता जाता है। देश में लगभग 63,635 फार्म्स ऐसे हैं जिनका आकार 2000 एकड़ से ज्यादा है।

फार्म्स का आकार	फार्म संख्या -	फार्म संख्या
	1974	1978
1. 10 एकड़ से छोटे	128,254	215,088
2. 10 से 49 एकड़	379,543	475,241
3. 50 से 179 एकड़	827,884	814,689
4. 180 से 499 एकड़	616,098	596,356
5. 500 से 999 एकड़	207,297	215,112
6. 1000 से 1999 एकड़	92,712	98,521
7. 2000 एकड़ से बडे फार्म्स	62,225	63,735

16. यह भूमि फसली तथा चरागाह—दोनों प्रकार के फार्म्स की है।
17. The Statesman's year book 1984-85.

ज्यादातर फार्म्स उनके मालिकों या हिस्सेदारों द्वारा ही बोए जाते हैं। किराए पर देने की प्रथा दिन प्रति दिन कम होती जा रही है। यह प्रवृत्ति 1930 में अपनी चरम स्थिति में थी उस समय की तुलना में आज केवल 2/5 फार्म्स ही किराए पर उठे हुए हैं। वर्तमान में 21,65,000 (कुल फार्म्स का 82%) फार्म्स मालिकों तथा 3,14,000 (कुल का 13%) किराएदारों द्वारा संचालित हैं। मशीनीकरण के फलस्वरूप फार्म्स पर काम करने वाले लोगों की संख्या में अपेक्षाकृत थोड़ी सी अवधि में ही भारी कमी आई है। 1950 में लगभग 10 मिलियन लोग खेतों पर कार्यरत थे जबकि वर्तमान में केवल 5.1 मिलियन। इसमें से अधिकांश व्यक्ति (2.6 मिलियन) मालिकों के परिवारों से है। केवल आधे लोगों (2.5 मिलियन) की स्थिति ही वैतनिक श्रमिक जैसी है। यांत्रिक-सहयोग से मानव की क्षमता में पर्याप्त विकास हुआ है। 1950 में फार्म्स पर काम करने वाला एक व्यक्ति 15 लोगों के लिए कृषि-उत्पादन करता था जबकि आज वह 78 व्यक्तियों के लिए कृषि-उपज जुटाने में समर्थ है।

विस्तृत-खेती तथा यन्त्रों के प्रयोग के विकास के फलस्वरूप यू० एस० ए० के जनसंख्या-ढांचे में पर्याप्त अन्तर आया है। एक शताब्दी पूर्व देश की समस्त जनसंख्या का लगभग तीन-चौथाई भाग ग्रामीण था जबकि वर्तमान (1980) में 26% से भी कम जनसंख्या ग्रामीण है। फार्म्स पर कुल मिलाकर 6 मिलियन लोग निवास करते हैं जो समस्त जनसंख्या का 3% से भी कम भाग बनाते हैं।

कृषि के स्वरूप की दृष्टि से संयुक्त राज्य अमेरिका के फार्म्स को दो भागों में बांटा जा सकता है।

1. व्यापारिक उत्पादनों में संलग्न फार्म्स।
2. स्व-आवश्यकता की पूर्ति में संलग्न फार्म्स।

प्रथम प्रकार के फार्म्स देश की आर्थिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं इनको तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है।

(अ) विस्तृत फार्म्स—ये फार्म्स बड़े आकार के हैं। इनमें से प्रत्येक फार्म में लगभग 20,000 डॉलर की कीमत का उत्पादन होता है। ये पूर्णतः यांत्रिक हैं। बड़े होने के कारण वैतनिक श्रमिक भी इनमें संलग्न हैं। ये देश के समस्त फार्म्स का 20% तथा बेचे जाने वाली फार्म-उपजों का 74% भाग प्रस्तुत करते हैं।

(ब) मध्याकार व्यापारिक पारिवारिक फार्म्स—इस श्रेणी के फार्म्स में से प्रत्येक की वार्षिक उत्पादन क्षमता 2500 से 20,000 डालर तक की है। ये समस्त फार्मों का लगभग 39% भाग बनाते हैं एवं बेचे जाने वाली फार्म-उपजों का 23% भाग प्रस्तुत करते हैं।

(स) छोटे व्यापारिक फार्म्स — ये समस्त फार्मों के 41% हैं। ये बेचे जाने वाली कुल फार्म उपजों का 3% भाग प्रस्तुत करते है। इनमें से प्रत्येक फार्म का उत्पादन-मूल्य औसतन 50 से 2500 डालर तक का होता है।

अन्य सभी प्रकार के फार्म्स दूसरी श्रेणी में रखे जा सकते हैं जो स्थानीय या स्वदेशी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादन में रत हैं। ऐसे फार्म्स देश के समस्त फार्म्स का लगभग 32% भाग बनाते है। औसतन उत्पादन क्षमता लगभग 2500 डालर है। ये आकार में छोटे हैं। ये प्रायः छोटे किसान-परिवारों के स्वामित्व में हैं।

भारत या जापान के खेतों के विपरीत अमेरिका की फार्म्स की सीमाएँ सीधी हैं जिन्हें तारों या लट्ठों से सीमाबद्ध किया गया है। सीमाओं के सहारे-सहारे या बीच में होकर छोटी सड़कें बनाली जाती हैं जो व्यवस्था की दृष्टि से उपयोगी हैं। फार्म के एक कोने में रिहायशी क्वार्टर होता है। प्रायः इसी के पास पशुओं के घर बनाए होते हैं। सभी फार्म्स पर आजकल सूअर, गाय, मुर्गियाँ आदि पाले जाने लगे हैं। इस प्रकार ये अमेरिकी फार्म्स दिन प्रतिदिन मिश्रित कृषि का स्वरूप लेते जा रहे हैं। अमेरिका के फार्म्स दुनियाँ के सर्वाधिक 'मैकनाइज्ड' फार्म्स हैं। देश के सभी फार्म्स को विद्युत-शक्ति प्राप्त है। भूमि की जुताई, फसल की बुवाई, निराई, कटाई एवं भूसे से अनाज साफ करने तक के सभी कार्य मशीनों द्वारा सम्पादित किए जाते हैं। दूध दुहना, गायों को सानी करना भी मशीनों का कार्य है। मुर्गी पालन में विद्युत शक्ति का भरपूर प्रयोग किया जाता है। इस समय देश में लगभग 68 लाख ट्रैक्टर्स खेतों में कार्य कर रहे है। भूसा तथा अनाज के यातायात के अन्य कार्यों के लिए 33 लाख से अधिक ट्रक खेतों में कार्यरत हैं। कपास मेखला में रूई चुनती हुई या मक्का मेखला में भुट्टों को एकत्र करती हुई मशीनें यहाँ के कृषि क्षेत्रों की विकासशील अवस्था की द्योतक हैं। मानव का कार्य केवल इन मशीनों का संचालन मात्र है। कितना अन्तर है एक भारतीय कृषक, उसके कृषि-औजारों और कृषि-विधियों तथा इन अमेरिकन आधुनिक किसानों के क्रिया कलाप में।

फार्म-हाउस :

अमेरिका के कृषि क्षेत्रों या फार्म्स का अध्ययन 'फार्म-हाउस' या फार्म-स्टैड के सन्दर्भ के बगैर अधूरा होगा। प्रविकीर्ण का स्वरूप प्रस्तुत करते हुए अमेरिका के फार्म-हाउस अपने ही प्रकार की एक अनुपम अधिवास-इकाई है जिनका एकांत, शांत किन्तु सुविधायुक्त जीवन इतना आकर्षक है कि दुनियाँ के सभी भागों, यहाँ तक कि फ्रांस या भारत के गाँव-प्रधान कृषि क्षेत्रों में भी, इनका प्रचार होता जा रहा है। प्रायः शंक्वाकार छतों के बने, चार-पाँच कमरों वाले ये घर फार्म के

मालिक परिवार के लिए पर्याप्त होते हैं। इनको पानी, बिजली, रेडियो, टैलीविजन, पॉवर लाइन तथा टैलीफोन आदि की सभी सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं। प्रत्येक फार्म-घर सड़कों द्वारा जुड़ा होता है। रिहायशी घर के पास ही गोदाम, मशीन घर, गैरेज, पशु एवं मुर्गी घर होते हैं।

कई फार्मों के बीच एक बाजारी-केन्द्र होता है जहाँ सिनेमा, चर्च, पोस्ट-आफिस, होटल, रेस्ट्राँ, कपड़े व अन्य आवश्यकताओं सम्बन्धी दुकानें होती हैं। प्रत्येक रविवार को आसपास के फार्म वासी इन बाजारी-केन्द्रों पर एकत्रित होते हैं, खरीददारी एवं मनोरंजन करते हैं। इन्हीं केन्द्रों में प्राथमिक व माध्यमिक शालाएँ होती हैं जहाँ बस द्वारा फार्म-वासियों के बच्चे पढ़ने आते हैं। अमेरिका के खुशहाल किसानों का उन्मुक्त स्वरूप इन फार्म्स में देखा जा सकता है। सम्पूर्ण यू० एस० ए० में शायद ही कोई ऐसा फार्म हो जहाँ रेडियो न लगा हो, या उसमें मोटर गाड़ी न हो। लगभग 92% फार्म्स में टलीविजन सेट लगे हैं। कृषि मेखलाओं के बीच-बीच में 80-82 ऐसे रेडियो स्टेशन है जो मुख्यतः इन फार्मों के लिए ही कार्यक्रम प्रसारित करते है। इन कार्यक्रमों में संगीत तथा ताजा समाचारों के अतिरिक्त कृषि-सुधार, बीज, यन्त्र, कृषि के नए तरीकों तथा फसलों की बीमारियों से सम्बन्धित वार्ते होती हैं। 2.5 मिलियन फार्म्स में टेलीफोन तथा 2.4 मिलियन फार्म्स में शीतालयों की सुविधा है।

मिश्रित कृषि :

पिछले दशकों में, कृषि के पुनर्संगठन में अनुपातिक रूप में सबसे महत्व मिश्रित-कृषि को मिला है। महान् झीलों के आस-पास न्यू इंगलैंड प्रदेश में तो चारे की फसलों के उत्पादन तथा पशु पालन एवं दुग्ध व्यवसाय का केन्द्रीकरण है ही, पिछले दशकों में अन्य कृषि मेखलाओं में भी पशुपालन का प्रचलन बढ़ा है। प्रत्येक फार्म पर अब गाय, सूअर तथा मुर्गियाँ आदि पाले जाने लगे हैं। मक्का मेखला में तो सूअर पालन का कार्य इतने बड़े पैमाने पर किया जाता है कि कभी-कभी इसे 'सूअर-मेखला' भी कहा जाता है। इस प्रवृत्ति का विकास इस विचारधारा के आधार पर हुआ है कि सभी कृषि-क्षेत्र खाद्यान्नों के साथ-साथ दुग्ध-उत्पादन एवं मांस-पूर्ति की दृष्टि से भी पर्याप्त स्वावलम्बी हों। यही कारण है कि पिछले दशकों में ढोरों, विशेषकर दूध देने वाली गायों एवं सूअरों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है। फार्म्स पर पाए जाने वाले पशु धन में कितनी तीव्रता से वृद्धि हुई है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1930 में समस्त फार्मों पर 6,061 मिलियन डालर की कीमत का पशुधन (मुर्गियों को छोड़कर) था जो बढ़कर 1970 में 22,897 मिलियन डालर का हो गया। इस वर्ष 19 मिलियन भेड़ों ने 161 मिलियन पौंड ऊन प्रदान की।

फार्म्स पर पशु धन
(1000 में)

	1930	1940	1950	1960	1982
1. घोड़े	13,742	10,444	5,548	—	—+
2. खच्चर	5,382	4,034	2,233	—	—
3 ढोर सभी प्रकार	61,003	68,309	77,963	96,236	1,15,700
4. दूध की गायें	23,032	24,940	23,853	19,527	10,730
5. भेड़-मेंमना	51,565	52,107	29,826	33,170	14,336
6. सूअर	55,705	61,165	58,937	59,026	58,690

+ 1961 में गणना बन्द कर दी गयी।

कुछ समस्याएं—अन्य कृषि प्रधान देशों की तरह यू. एस. ए. में भी कृषि सम्बन्धी कुछ मूलभूत समस्याएं हैं जिनके निवारण के लिए कृषि विशेषज्ञ एवं अर्थशास्त्री रत हैं। यथा, फार्म्स के समक्ष उनके अतिरिक्त उत्पादन को बेचने की समस्या है। यह देश आवश्यकता से कहीं अधिक खाद्यान्न, कपास, मक्का पैदा करने वाला देश है। अतः भाव गिराए बिना सभी उपज को विक्रय करने की समस्या स्वाभाविक है। कुछ वर्ष पूर्व भारी मात्रा में संचित गेहूं एवं कपास के भण्डार को बेचने की समस्या काफी भीषण हो गयी थी। वस्तुतः इसीलिए मिश्रित कृषि के विकास पर ज्यादा जोर दिया जा रहा है।

भू-संरक्षण एक भीषण समस्या है जिससे प्रतिवर्ष हजारों एकड़ भूमि की ऊपरी उपजाऊ पर्त कट कर बह जाती है या हवाओं द्वारा उड़ा ले जायी जाती है। ऐसा अनुमान है कि पश्चिम से शुष्क प्रदेशों के अतिरिक्त पूर्तवर्ती कृषि प्रदेशों में लगभग 44 मिलियन एकड़ भूमि भू-संरक्षण द्वारा बेकार कर दी गयी है। 87 मि. एकड़ भूमि इसके द्वारा किसी रूप में प्रभावित है।[18] भू-रक्षण नाली तथा पर्त दोनों प्रकार का ही यहाँ होता है। उत्तर-पश्चिम में कोलम्बिया का पठार, ग्रेट बेसिन या उत्तर पूर्व में न्यू इंगलैंड प्रदेश इस प्रकार की समस्या से सर्वाधिक पीड़ित क्षेत्र है। साधारणतया वनस्पति का अभाव, ढाल, तीव्र हवाएं एवं शुष्क जलवायु आदि परिस्थितियों में भू-रक्षण होता है। परन्तु दक्षिण के कपास उत्पादक क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव का कारण कुछ दूसरा ही है। यहाँ तीव्र वर्षा वाले, ढालू प्रदेशों में अनेक वर्षों से निरन्तर एक ही फसल (कपास)

18. Jones & Bryan—North America—p. 178.

की खेती करने के कारण मिट्टियों की ऊपरी पर्तें क्षरित हुई हैं।[19] ग्रेट प्लेन्स में, प्रारम्भ में सीमावर्ती थोड़ी वर्षा वाले क्षेत्रों में अवैज्ञानिक ढंग से गेहूँ की कृषि करने का परिणाम था कि ऊपर की उपजाऊ मिट्टी की पर्तें असंगठित होकर हवा द्वारा उड़ा दी गयी।

इन दोनों व भू-क्षरण से प्रभावित अन्य सभी क्षेत्रों में इस हानिकारक प्रवृत्ति को रोकने के प्रभावी उपाय किए जा रहे हैं। इन उपायों में वृक्षावलियों का रोपण, फसलों का उचित हेर फेर, मिश्रित-कृषि व्यवस्था का विकास, ढाल के विपरीत जुताई तथा मेंढ़ निर्माण आदि उल्लेखनीय हैं। भू-कटाव को नियंत्रित करने के इन उपायों से मध्य एवं मेंढ़ निर्माण आदि उल्लेखनीय हैं। भू-कटाव को नियन्त्रित करने के इन उपायों से मध्य एवं पूर्वी ओकलाहामा, दक्षिणी पीडमॉंट प्रदेश, ऊपरी टेनेसी घाटी, केंटुकी के पठार, आयोवा राज्य के दक्षिणी भाग तथा मिसूरी राज्य में पर्याप्त लाभ हुआ है। पश्चिमी शुष्क ग्रेट प्लेन्स में विकसित भयानक रेतीले गड्ढों में घास जमा कर पशु चारण प्रारम्भ कर दिया गया है। कटाव ग्रस्त भागों से प्राप्त जमीनों में फोस्फेटस मिलाकर मटर तथा बीन्स जैसी फसलों की खेती की जाने लगी है।

यू. एस. ए. के कृषि सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण आंकड़े

भू-उपयोग		
कृषि गत फसलें	—	23.9%
चरागाह	—	32.7%
वन एवं पर्वत	—	33.2%
भूमि का अनुत्पादक उपयोग (अधिवास, सड़कें)	—	10.2%

फार्म्स में संलग्न भूमि (लाख एकड़ में)

वर्ष	भूमि
1850	2930
1860	4070
1870	4080
1880	5360
1890	6230
1900	8390
1910	8790

19. Hudson, F. S.—North America, Macdonald & Evans Ltd. p. 156.

1920	9550
1930	9870
1940	10610
1950	11590
1960	11580
1964	11590
1967	11400
1971	11180
1982	10390

उपरोक्त सारणियों से कुछ तथ्य प्रकट होते हैं जो सं. रा. अमेरिका की कृषि-प्रवृत्तियों पर कुछ महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। यथा, 1930 तक सभी फसलों में संलग्न भूमि में विस्तार हुआ परन्तु 1940 से गेहूँ को छोड़कर सभी प्रधान फसलों—मक्का, कपास, जो, जई, तम्बाकू आदि में संलग्न भूमि में घटाव हुआ। गेहूँ में भी 1950 के बाद क्रमशः ह्रास हुआ। परन्तु संलग्न भूमि में ह्रास के बावजूद सभी फसलों में कुल उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई है, जो कृषि की नई तकनीकों, अच्छे बीज, खाद तथा उर्वरकों के प्रयोग के फलस्वरूप प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि के कारण हैं। वस्तुतः फसलों में संलग्न भूमि में ह्रास योजनाबद्ध और विज्ञान सम्मत हैं ताकि उपलब्ध जमीन पर नयी फसलें बोई जा सकें। सोयाबीन तथा चावल अमेरिकन कृषि की नई फसलें हैं जिनका प्रचार-प्रसार पिछले दो-तीन दशकों में ही हुआ है। सोयाबीन का विस्तार चार दशकों (1930–70) में 40 गुना हो गया है। चावल का प्रसार कितनी तीव्र गति से हो रहा है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1962 में चावल का विस्तार 1.8 मिलियन एकड़ भूमि में था जो बढ़कर 1968 में 2.3 मिलियन एकड़ हो गया।

प्रधान कृषि फसलें, संलग्न भूमि, कुल एवं प्रति एकड़ उत्पादन–1982

फसल	संलग्न भूमि (1000 एकड़ में)	उत्पादन (1000 बुशल में)	उत्पादन प्रति एकड़
मक्का	73,152	8,397,334	114.8 बु.
गेहूं	78,841	2,808,737	35.6 बु.
जई	10,561	616,981	58.4 बु.
जो	9,113	522,387	57.3 बु.
सोयाबीन	70,783	2,276,976	32.3 बु.
सन	815	11,635	14.3 बु.
चावल	3,252	154,216 हू. ट.	4,742 पौंड
आलू	1,273	349,268 हू. ट.	274 हू. ट.
कपास	9,728	12,010 गाँठ	593 पौंड
तम्बाकू	907	1,982.245 पौंड	2,183 पौंड

प्रमुख चार कृषि-फसलें.संलग्न भूमि व उत्पादन

	मक्का		कपास		गेहूं		सोयाबीन	
	मिलियन एकड़	मिलियन बुशल	मिलियन एकड़	मिलियन बुशल	मिलियन एकड़	मिलियन बुशल	मिलियन एकड़	मिलियन बुशल
1866	30.0	731	7.6	2.1	15.4	170		
1870	38.4	1125	9.2	4.4	20.9	254		
1880	62.5	1707	15.6	6.6	38.1	502		
1890	78.4	1650	20.9	8.7	36.7	449		
1900	94.9	2662	24.9	10.1	49.2	599		
1910	102.3	2853	31.5	11.6	45.8	625		
1920	101.4	3070	34.4	13.4	62.3	843	0.4	5
1930	101.5	2080	42.4	13.9	62.6	887	1.1	14
1940	86.4	2457	23.9	12.6	53.2	815	4.8	78
1950	81.8	3075	17.8	10.0	61.6	1019	13.8	229
1960	71.6	3422	14.7	13.9	51.9	1356	23.7	555
1982	73.1	8397	9.7	12.1	* 78.8	2808	70.7	2276

* कपास का उत्पादन (1982) मिलियन गाँठों में, प्रत्येक गाँठ 500 पौंड की ।

कृषि मेखलाएँ :

उत्तर मे लारैंशियन शील्ड, पूर्व में अप्लेचियन उच्च प्रदेश एवं पश्चिम में रॉकी क्रम के मध्य स्थित विशालाकार भीतरी निचले प्रदेश स्थित हैं। अमेरिकन कृषि के हृदय प्रदेश कहे जाने वाले इस विशाल भू-भाग का दक्षिणी विस्तार मैक्सिको की खाड़ी तक है। कहने को इसे एक भौगोलिक-इकाई कह दिया जाता है परन्तु वास्तविकता यह है कि इसमें भी भारी भिन्नताएँ हैं। पूर्व से पश्चिम की ओर वर्षा की मात्रा तथा दक्षिण से उत्तर की ओर वृद्धि-अवधि में अन्तर आता जाता है। उत्तर में हिमनद-जमाव ने मिट्टियों का स्वरूप दक्षिण की लाल-पीली मिट्टियों से बिल्कुल पृथक् कर दिया है। पाले की अवधि एवं ताप-मात्रा में भारी भिन्नता लिए हुए हैं। कृषि के स्वरूप, फसल एवं उत्पादन मात्रा पर इन सब तत्वों का आधार भूत प्रभाव होता है। भौगोलिक वातावरण के इन प्रभावकारी तत्वों से समझौता करते हुए ही यू. एस. ए. में कृषि की विशिष्ट मेखलाएँ विकसित की गयी है।

कृषि मेखला, जैसा कि नाम से सुस्पष्ट है, एक ही फसल की क्रम बद्ध शृंखला है जिसका विस्तार स्वाभाविक रूप से, अनुकूल भौगोलिक दशाओं के विस्तार-स्थल तक है। यू. एस. ए. में कृषि-योग्य पर्याप्त भूमि है। बहुत बड़े-बड़े फार्म्स हैं। विस्तृत कृषि है। इन अवस्थाओं में कृषि मेखलाओं का विकास आर्थिक

चित्र–:6

दृष्टि से लाभकारी एवं वैज्ञानिक दृष्टि से अनुकूल है। सैकड़ों मील चले जाइए, एक ही फसल, एक ही स्वरूप, एक ही प्रकार के कृषि-यंत्र नजर आते हैं। यांत्रिक-कृषि में, कृषि-यंत्रों के सफल एवं आर्थिक उपयोग के लिए विस्तृत खेती आवश्यक भी है। आतरिक मैदानों की देखा देखी पश्चिम क्षेत्रों में भी, जहाँ पर्याप्त बाद में कृषि विकास हुआ, मेखला व्यवस्था ही रखी गयी है।

यू. एस. ए. के कृषि-क्षेत्रों का विभाजन श्री प्रो. ई. वेकर के नाम से जुड़ा हुआ है जिन्होंने भौगोलिक वातावरण, उत्पादन की सघनता, उत्पादन-आंकड़ों तथा अन्य प्रकार के सांख्यिकी-आधारों पर इस देश के कृषि प्रदेशों को कृषि-मेखलाओं में विभाजित किया है। प्रस्तुत पुस्तक में उन्हीं के विभाजन को आधार मानकर, कुछ संशोधन करते हुए कृषि -मेखलाओं का विभाजन किया गया है जो इस प्रकार हैं।

1. कपास मेखला।
2. मक्का मेखला।
3. मक्का तथा जाड़े के गेहूँ की मेखला।
4. गेहूं मेखला।
5. चरागाह एवं दुग्ध-व्यवसाय मेखला।
6. पशु चारण एवं सिंचित कृषि मेखला।
7. आर्द्र-उपोष्णीय कृषि मेखला।

कपास मेखला :

कपास आज भी उत्पादन मात्रा एवं मूल्य की दृष्टि से वस्त्रोद्योग के कच्चे मालों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। पिछले दशकों में यद्यपि कृत्रिम रेशों का प्रचलन बढ़ा है, इसके बावजूद वस्त्र निर्माण में कपास का सर्वाधिक प्रयोग होता है। सं. रा. अमेरिका दुनियां की आधी से अधिक कपास प्रस्तुत करता है।

सं. रा. अमेरिका के कपास क्षेत्रों को देखने से स्पष्ट होता है कि इनका विस्तार देश के दक्षिणी-पूर्वी हिस्से में उन भागों में हैं जो कपास उत्पादन के लिए आदर्श भौगोलिक वातावरण प्रस्तुत करते हैं। पश्चिम में ओजार्क तथा पूर्व अप्लेचियन-क्रम के दक्षिण उच्च प्रदेशों के मध्य एक ऐसा सम्भाग है जो धरातलीय दृष्टि से समतल है तथा जिसमें टरशरी एवं क्रेटेशियन-युगीन अपेक्षाकृत नवीन परतदार जमाव हैं। ज्यादातर भाग में दोमट, कांप, 'क्ले' तथा चूने के अंश वाली मिट्टियों का विस्तार है। यही स्वरूप पूर्व में अटलांटिक तट तथा दक्षिण में मैक्सिको की खाड़ी तक है। इस सम्भाग को ही कपास मेखला का विस्तार टैक्सास, लूजियाना ओकला हामा, आर्कन्सास, टैनिसी, मिसीसीपी, अलाबामा, जार्जिया, फ्लोरिडा, उत्तरी तथा दक्षिणी कैरोलिना आदि राज्यों में हैं।

कपास एक उपोष्णीय पौधा है जिसके लिए मध्यम मात्रा में वर्षा (30-40 इंच) ऊँचे तापक्रम, चमकीली धूप, स्वच्छ आकाश तथा पाले रहित वृद्धि-अवधि आवश्यक है। पाला इसका सबसे बड़ा दुश्मन है। यू. एस. ए. की इस कपास मेखला में लगभग 200 दिन पाले रहित होते हैं। दूसरे शब्दों में कपास की खेती का विस्तार या इसकी उत्तरी सीमा वहीं तक है जहाँ 200 दिन पाले रहित होते हैं। पौधों की वृद्धि के दिनों में पर्याप्त ऊँचे तापक्रमों की आवश्यकता होती है। दिन और रात्रि दोनों गर्म होने चाहिए। जून, जुलाई तथा अगस्त में किसी भी हालत में तापक्रम 77° फ़. से नीचे नहीं जाना चाहिए। सौभाग्य से कपास मेखला में जून-अगस्त तक तापक्रम निरन्तर बढ़ते हैं। सितम्बर-अक्टूबर में तापक्रम गिरने लगते हैं परन्तु चूँकि इस समय तक कपास पकने लगती है अतः तापक्रम के थोड़े गिराव से कोई हानि नहीं होती।

मेखला के अधिकांश भागों में 40 इंच के लगभग वर्षा होती है। इसकी पश्चिमी सीमा 20 इंच की सम-वर्षा रेखा है। यद्यपि अपवाद स्वरूप उत्तरी-पश्चिमी-टैक्सास में वहाँ भी कपास पैदा की जाती है जहाँ वर्षा 17 इंच से ज्यादा नहीं है। और कई कृषि-विशेषज्ञों का कहना है कि इस क्षेत्र में ठंडी रात्रि और शुष्क वातावरण के कारण 'बॉल वेविल' के अवसर कम हैं परन्तु यह भी सच है कि ऐसे भागों में कपास की क्वालिटी गिर जाती है। इस प्रकार से दक्षिण-पूर्व में अपेक्षाकृत ज्यादा वर्षा (60 इंच) भी अच्छी क्वालिटी की कपास के लिए ज्यादा उपयुक्त नहीं है। इस प्रकार के ज्यादा वर्षा वाले भागों की कपास में ज्यादा चमक नहीं होती और बीमारियाँ ज्यादा लगती हैं।

कपास के लिए काली, चिकनी एवं नदी जमावकृत कांप आदि मिट्टियाँ उत्तम मानी जाती हैं। यही कारण है कि मेखला में कपास-उत्पादन के बावजूद उन्हीं क्षेत्रों में घनत्व तथा उत्पादन-मात्रा सर्वाधिक है जहाँ जलवायु के साथ-साथ मिट्टियों की दशाएँ अनुकूल हैं। ऐसे प्रदेशों में अलाबामा राज्य का काली मिट्टी का प्रदेश, मिसीसीपी का निचला बेसिन एवं टैक्सास राज्य का पूर्वी भाग, जहाँ काली प्रेयरी मिट्टी मिलती है, उल्लेखनीय हैं। मिसीसीपी की निचली घाटी के बाढ़कृत मैदानों में प्रति वर्ष मिट्टी की नई पर्त जम जाती है अतः बिना ज्यादा रासायनिक खाद दिए ही यहाँ उत्पादन अधिक रहता है। टैक्सास राज्य के पूर्वी भाग में प्रेयरी क्षेत्र की, शर्नोजम से मिलती जुलती काले एवं गहरे-भूरे रंग की मिट्टी का विस्तार है जिसमें ह्यूमस तत्व बहुत है। अलाबामा राज्य में काली मिट्टी भूमि की ऊपरी पर्तों में पाई जाती है जो अपने वनस्पति अंशों के मिश्रण के कारण पर्याप्त उपजाऊ है।

सारांशतः कपास के लिए सुहावनी-गर्म बसंत ऋतु जिसमें हल्की-हल्की बौछार हों, तीव्र गर्म-आर्द्र गर्मियाँ तथा लम्बे शुष्क, ठंडे तथा पाले रहित पत...

का मौसम आदर्श रूप में उपयुक्त रहते हैं। मौसमी तथा मिट्टी की दशाओं को आधार मानकर यू. एस. ए. की कपास-मेखला का सीमांकन करें तो स्पष्ट होगा कि इसकी उत्तरी सीमा 200 पाले रहित दिनों की अवधि तथा पश्चिमी सीमा 20 इन्च की सम-वर्षा रेखा द्वारा निर्धारित की जाती हैं। फिर पूर्वी और दक्षिणी सीमाएँ क्या हों ? क्या इसका विस्तार इन दिशाओं में क्रमशः अटलांटिक और मैक्सिको की तट रेखा तक मान लिया जाए ? सम्भवतः यह उचित नहीं होगा। वर्जीनिया से लेकर पश्चिम में रायो ग्रांडे तक समस्त तट रेखा के पीछे दल-दल एवं लैगून झीलों की क्रमबद्ध शृंखला है और इस शृंखला के पीछे रेतीले टीलों का क्रम है। अतः रेतीले टीलों, दलदल तथा जंगलों की सीमा को ही कपास मेखला की अन्तिम सीमा मानना उचित होगा।

वस्त्रोद्योग में प्रयुक्त होने वाली रूई वस्तुतः 'गौसिपियम'[20] नामक एक झाड़ी के बीज को चारों तरफ विकसित होने वाले रेशों से उपलब्ध होती है। ऐसे पौधों का फूल केवल एक दो दिन ही रहता है। उसके तुरन्त बाद फल आ जाता है जिसे डोढ़ा कहते है। डोढ़ा फटता है और उसमें बीजों के चारों ओर लिपटे रुई के रेशे प्रकट होते हैं। इन रेशों की लम्बाई के आधार पर कपास को कई भागों में विभाजित किया जाता है। $\frac{7}{8}$ इन्च से $1\frac{1}{8}$ इन्च तक की लम्बाई के रेशे वाली कपास सबसे घटिया और $2\frac{1}{2}$ इन्च लम्बे रेशे की कपास सबसे अच्छी मानी जाती है जिसे 'द्वीपीय कपास' कहते हैं। पहले इस प्रकार की कपास जजिया तथा कैरोलिना आदि राज्यों के तट प्रदेशों के निकट स्थित द्वीपों में पैदा की जाती थी। आजकल इसका उत्पादन समाप्त प्रायः है। कपास मेखला अधिकांशतः मध्यम रेशे वाली कपास पैदा की जाती है जिसके रेशे की लम्बाई $1\frac{1}{8}$ इन्च तक होती है।

मार्च-अप्रेल के महीनों में समस्त मेखला में कपास की बुवाई प्रारम्भ हो जाती है। अक्षांशीय स्थिति के फलस्वरूप उत्तरी तथा दक्षिणी भागों में कुछ दिनों का अन्तर स्वाभाविक है। यथा, दक्षिणी भाग में मार्च के प्रथम सप्ताह तथा सुदूर उत्तरी भाग में अप्रेल के तीसरे सप्ताह में बुवाई का कार्य पूरा होता है। यह उत्तरी-सीमा बड़ी असमान है। यह अटलांटिक तट पर चैसापीक खाड़ी के मुहाने से प्रारम्भ होकर पीडमांट प्रदेश तथा ब्लूरिज के फुट हिल्स की संक्रमण पट्टी के साथ-साथ दक्षिण एवं दक्षिण-पश्चिम की ओर जाकर, अप्लेचियन क्रम के दक्षिणी सिरे का चक्कर लगाकर, उत्तर-पश्चिम की ओर मुड़ जाती है। आगे उत्तर में कई मोड़ खाती, नदी बेसिनों (टैनेसी-ओहियो आदि) को शामिल करती मिसीसीपी-

20. वर्तमान में ज्यादातर "Cossypium herbaceum" किस्म बोई जाती है। सर्वश्रेष्ठ कपास "Gossypium barbadense" नामक किस्म से उपलब्ध होती है। इसे द्वीपीय कपास कहते हैं।

ओहियो के संगम स्थल के कैरो तक पहुँचती है। यहाँ दक्षिण-पश्चिम दिशा में जाकर, ओजार्क को शामिल करते हुए उत्तर-पश्चिम में ओकलाहामा की सीमा के साथ-साथ चलती है। वहाँ से दक्षिण-पश्चिम में, लगभग तीन चौथाई टैक्सास राज्य को शामिल करते हुए, जाती है।

जून, जुलाई तथा अगस्त के तीन महीनों में तापक्रम की वृद्धि के साथ-साथ पौधा बढ़ता है। इन महीनों में बीच-बीच में कुछ बौछारें भी हो जाती हैं जो पौधे की वृद्धि में सहायक होती हैं। सितम्बर में डोड़ों का खिलना प्रारम्भ होता है। इन दिनों का स्वच्छ आकाश तथा चमकीली धूप रेशे की चमक को बढ़ाती है। अक्टूबर में चुनाई प्रारम्भ हो जाती है। कपास चुनने का कार्य बड़े श्रम और धैर्य का है। अनुभव जन्य कुशलता भी आवश्यक है। इसीलिए सस्ते श्रम के रूप में इस संभाग में नीग्रो लोगों को यहाँ लाकर बसाया गया था। आजकल सम्पूर्ण मेखला में चुनाई का कार्य मशीनों (कम्बाइन हार-वैस्टर्स) द्वारा संपादित किया जाता है। केवल छोटे फार्म्स पर ही मजदूर कपास चुनते हैं।

कपास में कई प्रकार की बीमारियों विशेषकर 'बॉल-वेविल' नामक कीड़े का लगने का डर बहुत होता है। 1892 में समस्त कपास मेखला इससे क्षतिग्रस्त हो गई थी। अतः अब इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है। समय-समय पर कृमि-नाशक पदार्थ फसल पर छिड़के जाते हैं। विस्तृत खेती होने के कारण यू. एस. ए. का प्रति एकड़ उत्पादन कम, 437 पौंड है जो रूस (630 पौंड) से तो कम है परन्तु भारत (110 पौंड) व चीन (390 पौंड) से कहीं ज्यादा है। आजकल कपास-मेखला में खेतों को बँटाई पर देने की प्रथा पुनः चल पड़ी है क्योंकि पैट्रोल व अन्य प्रकार के व्यवसायों के प्रारम्भ होने से फार्म मालिक उधर आकर्षित हो गए हैं। कई बड़े फार्म मालिकों ने सूती वस्त्रोद्योग विकसित कर लिए हैं। मिलें फार्म्स में ही बनाई गयी हैं। इस प्रकार कपास को मिल तक पहुँचाने में होने वाला यातायात का खर्चा बच गया है।

कृषि-सघनता एवं उत्पादन मात्रा की दृष्टि से कपास-मेखला में तीन प्रदेश उल्लेखनीय हैं।

1. मिसीसीपी–याजू बाढ़ कृत मैदान।
2. पूर्वी टैक्सास राज्य।
3. अलाबामा राज्य का काली मिट्टी का प्रदेश।

अलाबामा राज्य के दक्षिणी-मध्य में काली मिट्टी का विस्तार है। इसमें क्रैटेशियस युगीन चूने की चट्टानों के विखंडन से बने चूर्ण के शामिल होने से यह मिट्टी कपास के लिए उपयुक्त है। मिट्टी की ऊपरी पर्त में मोटी 'क्ले' की पर्तें हैं

जो आर्द्रता को समाए रखने की क्षमता युक्त होने के कारण उपयोगी हैं। मिट्टी के गहरे रंग के कारण इस क्षेत्र को कभी-कभी काली-पट्टी के नाम से भी जाना जाता है। अपने रंग के कारण ही इस भाग की मिट्टी राज्य के अन्य भागों की हल्के रंग की मिट्टियों से भिन्न है। इस मिट्टी की एक मात्र यही कमी है कि

चित्र–17

गर्मियों में यह सूखकर बहुत कड़ी हो जाती है तथा सर्दियों में लिसलिसी रहती है। इस क्षेत्र में तीन चौथाई लोग नीग्रो प्रजाति के हैं जिनसे सस्ता श्रम प्राप्त हो जाता है। अधिकांशतः इस क्षेत्र में छोटे रेशे वाली कपास बोई जाती है। इस भाग की मिट्टी के उपजाऊ तथा गहरे रंग होने के संदर्भ में भूगर्भविदों का अनुमान है कि यह भाग मूलतः घास प्रदेश था। अतः मिट्टी में वनस्पति के अंशों के निरन्तर संमिश्रण के कारण मिट्टी उपजाऊ है। कपास की भारी उत्पादन-मात्रा ने ही अलबामा राज्य में सूती वस्त्रोद्योग को प्रोत्साहित किया है।

गॉलवेस्टन बंदरगाह से लगभग 200 मील भीतर ऑस्टिन तथा डलास के मध्य पूर्वी टेक्सास का 'ब्लेक वैक्सी प्रेयरी प्रदेश' विद्यमान है जो वर्तमान में न केवल स. रा. अमेरिका वरन् विश्व का सर्वाधिक कपास पैदा करने वाला क्षेत्र है। अनुकूल वर्षों में टैक्सास राज्य 4–5 मिलियन गाँठ तक कपास उत्पन्न कर सकने में सक्षम है जो कि विश्व के समस्त उत्पादन का लगभग 1/6 भाग होता है। राज्य के पूर्वी

भाग में प्रेयरी प्रदेश में विकसित, शर्नोजम में मिलती-जुलती काले एवं गहरे-भूरे रंग की मिट्टी का विस्तार है। ह्यूमस तत्व अधिक होने से यह पर्याप्त उपजाऊ है। पर्याप्त हिस्से में 'क्ले' से आवरित क्रेटेशियस युगीन चूने की चट्टानों का विस्तार है। इस दृष्टि से इसकी तुलना अलाबामा राज्य की काली पट्टी से की जा सकती है। टेक्सास का सघन कपास प्रदेश हल्के उत्पादन वाली रेतीली मिट्टी की एक पट्टी द्वारा दो भागों में विभाजित है। उत्तर में स्थित अपेक्षाकृत कम महत्व-पूर्ण क्षेत्र रेड-प्रेयरीज के नाम से जाना जाता है। दक्षिण में विश्व प्रसिद्ध 'ब्लैक वैक्सी प्रदेश' विद्यमान है। इसी प्रदेश में टेक्सास के बड़े-बड़े नगर स्थित हैं।

टेक्सास के कपास उत्पादन पर सबसे ज्यादा नियंत्रक प्रभाव वर्षा का है। कपास प्रदेश की दक्षिणी-पूर्वी सीमाएं दलदल, रेत तथा जंगलों द्वारा निर्धारित की जाती है परन्तु उत्तर तथा पश्चिम में एक मात्र नियंत्रक तत्व जलवायु है। पश्चिम में जहाँ वर्षा 20 इंच से कम होने लगती है, कपास भी अदृश्य होने लगती है। पूर्वी भाग में वर्षा की मात्रा (20 इंच) बहुत उपयुक्त न होकर केवल संतोष-प्रद ही है। परन्तु उस समय गिरती है जबकि पौधा बढ़ रहा होता है। अतः बहुत उपयोगी सिद्ध होती है।

मैम्फिस के दक्षिण में, मिसीसीपी के सहारे-सहारे टेनेसी राज्य में लगभग 200 मील की लम्बाई में कपास के सघन उत्पादन का तीसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र विद्यमान है। इस क्षेत्र में मिसीसीपी के अतिरिक्त अन्य कई नदियाँ हैं जिनमें याजू उल्लेखनीय है। अनेक जल-धाराओं द्वारा प्रतिवर्ष भारी मात्रा में काँप के जमाव होने के फलस्वरूप इस बाढ़ कृत मैदान की मिट्टियों की उपजाऊ शक्ति निरंतर बनी रहती है। जल-धाराओं के आस-पास भू-भाग कुछ ऊंचे हैं, उपजाऊ भी ज्यादा हैं। यहाँ भी इस व्यवसाय में अधिकांशतः नीग्रो लोग मुख्य उपज लम्बे रेशे वाली कपास है जिसकी लम्बाई $1\frac{1}{8}$ से $1\frac{1}{2}$ इंच तक होती है। कैलीफोर्निया तथा एरी-जोन के सिंचित प्रदेशों में पैदा की जाने वाली कपास के अलावा यह कपास देश की सर्वश्रेष्ठ कपास मानी जाती है। अपनी लम्बाई, चमक तथा मजबूती की दृष्टि से यह द्वीपीय कपास के बाद दूसरे स्थान पर रखी जाती है और अच्छे किस्म के कपड़ों को तैयार करने के लिए भारी माँग रहती है। पूर्व के सघन कपास उत्पादक प्रदेश (अलबामा) एवं मिसीसीपी-याजू बाढ़कृत मैदान के मध्य स्थित लोयस प्रदेश भी कपास उत्पादन की दृष्टि से उल्लेखनीय है। मिसीसीपी के पश्चिम में रैड तथा अर्कन्सास नदियों की घाटियों के सहारे-सहारे लम्बी-संकरी कपास-उत्पादक पट्टी फैली हैं।

अगर उत्पादन-मात्रा के विकास की तीव्रता को आधार माना जाए तो पश्चिम के राज्यों में कपास की खेती ने सबसे तीव्र गति से प्रगति की है। कपास मेखला से बाहर स्थित इन कपास-क्षेत्रों में कपास की खेती पिछली 3-4 शताब्दियों

की ही देन है। परन्तु इस अल्पावधि में ही कुछ राज्यों में बड़े पैमाने पर कपास पैदा की जाने लगी है। इसके प्रमुख क्षेत्र कैलीफोर्निया तथा विलामेंट की घाटियां हैं। यहां भी लम्बे रेशे वाली कपास पैदा की जाती है जिसके विकास में इन घाटियों में नदियों द्वारा जमाई गई उपजाऊ मिट्टी, सिंचाई के लिए पर्याप्त नहरें तथा उपयुक्त तापक्रम आदि तत्वों का सहयोग रहा है। अन्तः पर्वतीय शुष्क पठारी क्षेत्र में भी नदी-बांध योजनाओं द्वारा उपलब्ध सिंचाई के आधार पर कपास की खेती की जाने लगी है। इस दृष्टि से न्यू मैक्सिको, एरीजोना, नेवादा आदि राज्य उल्लेखनीय हैं। पश्चिम के इन राज्यों ने कपास उत्पादन में किस तेजी से विकास किया है इसका अनुमान इस तथ्य से लग सकता है कि अगर उपरोक्त चारों राज्यों की उत्पादन मात्रा में टैक्सास राज्य की उत्पादन मात्रा और जोड़ दी जाए तो यह देश समस्त उत्पादन का लगभग 53% भाग होता है।

यू. एस. ए. के विविध राज्यों के कपास उत्पादन-1980

(उत्पादन 1000 गांठों में, प्रत्येक गांठ 480 पौंड की)

राज्य	उत्पादन	राज्य	उत्पादन
टैक्सास	3,350	एरीजोना	1,413
मिसीसीपी	1,150	टैनेसी	200
कैलीफोर्निया	3,150	जार्जिया	290
अर्कन्सास	450	मिसूरी	210
लूजियाना	455	दक्षिणी कैरोलिना	265
अलाबामा	275	उत्तरी कैरोलिना	125
ओकलाहामा	216	न्यू-मैक्सिको	184

मक्का मेखला :

मक्का का स्थान सं० रा० अमेरिका में वही है जो चाय का लंका या रबर का मलाया में। अमेरिका में फार्म्स का भले ही कोई विशिष्ट प्रकार न हो परन्तु मक्का विशिष्ट और परम्परागत रूप से अमेरिकन फसल ही है।[21] संलग्न भूमि एवं उत्पादन मात्रा की दृष्टि से मक्का उत्तरी अमेरिका के खाद्यान्नों में प्रथम है। अनुमानतः यह सं० रा० अमेरिका के तीन-चौथाई फार्म्स पर बोयी जाती है एवं गेहूँ, जई, जौ, राई तथा चावल आदि खाद्यान्नों में सम्मिलित रूप से लगी भूमि से कहीं अधिक भूमि इस अकेली फसल में संलग्न है। देश में खाद्यान्न फसलों से होने वाली कुल आय का लगभग आधा भाग अकेली मक्का से प्राप्त होता है।

21. Haystead and Fite—The Agricultural Regions the United States.

मक्का एक उष्ण कटिबन्धीय फसल है जिसका मूल स्थान अमेरिका (मध्य अमेरिका) ही माना जाता है। यहाँ इसे 'रेड इण्डियन' लोग बोया करते थे। यूरोपियन लोगों को इनका ज्ञान कोलम्बस के द्वारा प्राप्त हुआ जो अपने साथ यहाँ से मक्का ले गया था। यूरोप में भी इसका प्रचार हुआ और वहाँ इसे 'कॉर्न' नाम से जाना जाने लगा। बाद में यूरोपियन लोग आए उन्होंने भी इसी नाम को प्रचलित रखा। देश की आर्थिक व्यवस्था विशेषकर कृषि-ढाँचे के विकास में मक्का का कितना महत्वपूर्ण स्थान है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि भीतरी आन्तरिक मैदानों में प्रवासी यूरोपियनों की सफलता का राज मक्का में ही निहित है। जो वन या घास प्रदेश साफ किए गए उनमें मक्का आसानी से पनप गयी और उसके साथ ही इन भागों में प्रवासी लोगों का जमाव भी बढ़ता गया। पशुओं को चारा और मनुष्यों को भोजन प्रदायनी यह फसल अगर उस समय इस सम्भाग में न पनपी होती तो शायद अमेरिकन कृषि का स्वरूप कुछ दूसरा ही होता।[22]

कुछ मामूली अपवादों को छोड़कर मक्का दक्षिण में मैक्सिको की खाड़ी तथा उत्तर में महान् झीलों एवं पश्चिम में ग्रेट प्लेन्स तथा पूर्व में अटलांटिक तट के मध्य स्थित लगभग समस्त आन्तरिक निचले मैदानी भाग में पैदा की जाती है। दूसरे शब्दों में धुर उत्तरी-पश्चिमी भाग तथा पश्चिम में स्थित अर्द्ध-शुष्क भाग को छोड़कर मक्का की खेती समस्त मिसीसीपी बेसिन तथा अटलांटिक तटवर्ती मैदानी पट्टी में की जाती है। इस प्रकार इस फसल का विस्तार पूर्व से पश्चिम लगभग 1,500 मील तथा उत्तर से दक्षिण लगभग 1,000 मील लम्बे भू-भाग में है। निस्सन्देह उत्पादन की सघनता एवं मात्रा की दृष्टि से इस भाग में भारी भिन्नता है और इस भिन्नता के कारण हैं—मिट्टी की दशाएँ, धरातल का स्वरूप एवं जलवायु दशाएँ आदि। इस बड़े विस्तार वाले भाग के अन्तर्गत एक ऐसा भाग है जहाँ मक्का की अत्यन्त सघन खेती होती है। इसी भाग को 'मक्का मेखला' के नाम से जाना जाता है। इस मेखला का विस्तार इलीनॉय, आयोवा, कन्सास, ओकला हामा, कोलोरैडो, ओहियो, नेब्रास्का तथा व्योमिंग आदि राज्यों में है। महान् झीलों के दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम में स्थित मक्का मेखला की शुरुआत ओहियो राज्य से होकर, पश्चिम में इलीनॉय, आयोवा, उत्तरी मिसूरी तथा मध्य नेब्रास्का की ओर विस्तृत है। एक दूसरा विस्तार-भाग पूर्वी कन्सास तथा ओकलाहामा आदि राज्यों में होकर दक्षिण में टैक्सास राज्य की तरफ चला गया है।

मक्का मेखला में सबसे ज्यादा सघन उत्पादन के क्षेत्र आयोवा तथा इलीनॉय राज्यों में हैं जो क्रमशः मिसीसीपी के पश्चिम एवं पूर्व में (शिकागो के दक्षिण) में

22. Jenes and Bryan—North America p. 224.

स्थित हैं। दोनों राज्यों में से प्रत्येक लगभग 400 मिलियन बुशल मक्का पैदा करता है। इन दोनों राज्यों में अगर इण्डियाना उत्पादन और संलग्न भूमि भी जोड़ दी जाए तो उत्पादन समस्त देश का लगभग आधा हो जाता है। मक्का यू. एस. ए. में निस्सन्देह खाद्यान्न है परन्तु मानवों का नहीं सूअरों का। देश में उत्पादित समस्त मक्का का लगभग आधा भाग सूअरों को खिला दिया जाता है। एक-चौथाई भाग भेड़ व अन्य जानवरों के काम में आ जाता है। शेष भाग का उपयोग ग्लूकोज, स्टार्च बनाने व बेकरी में हो जाता है। मक्का में चिकनाई तथा मोटा करने की क्षमता ज्यादा होती है। अतः इसे खाकर सूअर बहुत मोटे ताजे हो जाते हैं। अनुमान किया गया है कि एक पौंड 'बीफ' (गाय के मांस) के लिए 11 पौंड तथा 1 पौंड पोर्क (सूअर का मांस) के लिए केवल 3–4 पौंड मक्का की जरूरत होती है। सूअर का मांस अमेरिकावासियों का प्रिय एवं प्रधान भोजन है। इस दृष्टि से सूअर को 'मक्का को मांस में बदलने वाली मशीन'; एवं मक्का की पेटी को 'सूअर के गोश्त की पेटी' कहा जाए तो ज्यादा उपयुक्त होगा। सं० रा० अमेरिका में लगभग 120 मिलियन सूअर हैं जिनका तीन-चौथाई भाग मक्का-मेखला में विद्यमान है। यहाँ सूअर काटने के बड़े-बड़े कट्टीघर हैं जिनमें रोजाना लगभग 3 लाख सूअर काटे जाते हैं। शिकागो न केवल सं० रा० अमेरिका वरन् विश्व की सबसे बड़ी गोश्त की मण्डी है। अन्य में ओमाहा, कन्सास तथा सिन सिनाटी आदि उल्लेखनीय हैं।

मक्का-मेखला में फसल अप्रैल के अन्तिम या मई के प्रथम सप्ताह में बोई जाती है, यद्यपि दक्षिणी भागों में खाड़ी के तट के आस-पास, मक्का की बुवाई फरवरी-मार्च में ही हो जाती है। वस्तुतः बुवाई का समय इस बात पर आधारित होता है कि अमुक क्षेत्र पाले से मुक्त कब होता है। धरातल का तापक्रम इस समय 55° फ़.होता है जो पौधे के पनपने के लिए अत्यन्त उपयुक्त माना जाता है। पाले-रहित अवधि मक्का-मेखला में 140 से 180 दिन तक होती है। मेखला के उत्तरी-पश्चिमी भाग में यह औसतन 140 दिन का रहता है जबकि दक्षिणी भागों में लगभग 180 दिन पाले का कोई डर नहीं रहता। आदर्श रूप में लगभग 160 दिन ऐसे चाहिए जो पाले से मुक्त हों। इस अवधि में भिन्नताएँ होती रहती हैं। 1917 तथा 1924 में इस अवधि के छोटा होने के कारण मक्का की फसल को पर्याप्त हानि हुई थी।

वृद्धि-अवधि के अन्तिम दिनों में मक्का बहुत तेजी से बढ़ती है। इन दिनों दिन के समय के ऊँचे तापक्रम तथा गर्म रातें मक्का की वृद्धि के लिए उपयोगी सिद्ध होती है। जून-जुलाई-अगस्त के महीनों में दिन का तापक्रम 70° से 80° फ़. तक होता है, रात्रि में भी तापक्रम 55° फ़० से नीचे नहीं जाते। ये दशाएँ मक्का के लिए आदर्श होती हैं जो सौभाग्य से मक्का मेखला के प्राकृतिक रूप में विद्यमान

सं.रा. अमेरिका
मक्का उत्पादक प्रदेश
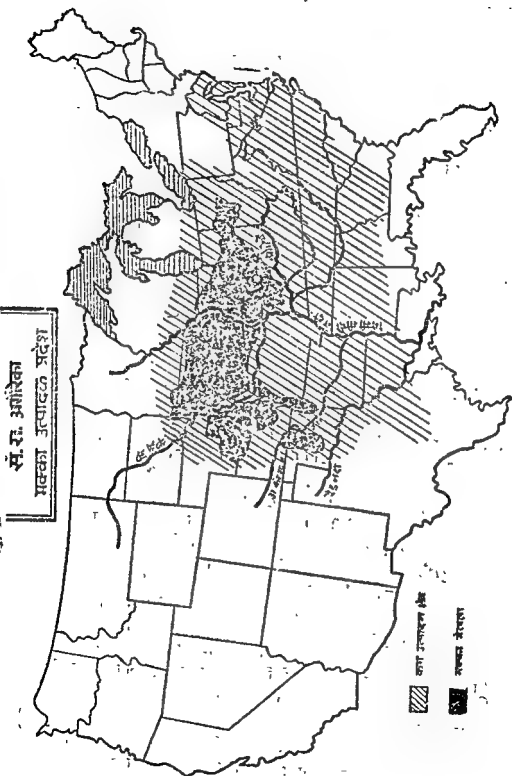
है। मक्का के लिए वर्षा 30 इंच से 40 इंच तक पर्याप्त है परन्तु होनी चाहिए नियमित अन्तरों से। दूसरे शब्दों में जल प्रारम्भ में यानी वृद्धि के समय ही ज्यादा आवश्यक होता है। मई-जून-जुलाई ये तीन माह ऐसे होते हैं जब मेखला में बोयी मक्का को पानी की जरूरत होती है। मक्का मेखला में यद्यपि 30 इंच ही वर्षा होती है परन्तु होती इन्ही तीन महीनों में है अतः लाभकारी है।

कृषि विशेषज्ञों तथा सं. रा. अमेरिका के मौसम विभाग का कहना है कि मक्का की वृद्धि, आकार तथा प्रति एकड़ उत्पादन जुलाई की वर्षा पर बहुत निर्भर करते है। यह तथ्य 1901 में और भी उजागर हो गया जबकि जुलाई में वर्षा न होने के कारण प्रति एकड़ उपज बहुत कम हुई। अनुभवों से प्रकट हुआ है कि जब मक्का मेखला में जुलाई के महीने में 4 इंच वर्षा होती है, फसल औसतन रूप में यानि प्रति एकड़ लगभग 30 बुशल होती है। अगर इस महीने में वर्षा 3 इंच हो तो उत्पादन औसत से कहीं कम बैठता है लेकिन अगर जुलाई के महीने में पानी 5 इंच तक पड़ जाए तो औसत 40 बुशल प्रति एकड़ का बैठ जाता है। सर्वाधिक अनुकूल दशाएं, मक्का मेखला में तब होती हैं जब दिन गर्म होते हैं और बोछारें प्रायः रात्रि में आती हैं।

इस प्रकार मक्का एक गर्म-आर्द्र मौसम की फसल है जिसके प्रति एकड़ उत्पादन पर भौगोलिक दशाओं का बड़ा नियंत्रक प्रभाव होता है। प्रो. ई. बेकर ने मक्का-मेखला के ही अन्तर्गत ऐसे क्षेत्रों का भी संकेत दिया है जहाँ प्रति वर्गमील भू-भाग में उत्पादन का औसत 3000 बुशल बैठता है। स्वाभाविक रूप से ऐसे भाग अनुकूलतम भौगोलिक दशाओं युक्त हैं। ऐसे भाग मिसीसीपी मेखला के उत्तरी-पश्चिमी सम्भाग में स्थित है। इनकी तुलना पश्चिम के भागों से की जा सकती है जहाँ अपेक्षाकृत कम वर्षा होती है। यथा, टैक्सास तथा ओकलाहामा आदि राज्यों में ऐसी किस्में विकसित की गयी हैं जो कम पानी में भी पनप सकें। मेखला के उत्तरी भागों में जल्दी पकने वाली नस्लें बोयी जाती हैं क्योंकि यहाँ उच्च तापक्रम युक्त अवधि अपेक्षाकृत छोटी होती है। मक्का की नस्लों की विविधता जितनी संयुक्त राज्य अमेरिका में है उतनी शायद और कहीं न होगी यहाँ पौधे तीन फुट से लेकर 15–16 फुट तक के होते हैं। मिट्टी के स्वरूप परिवर्तन का भी फसल के स्वरूप पर प्रभाव सुस्पष्ट है। मेखला के पश्चिमी भाग में प्रेयरी मिट्टी एवं पूर्वी भाग में पोटजलीय मिट्टियाँ हैं जो हिमानियों द्वारा छोड़े गये अन्तिम मौरेनों के चूर्ण से बनी हैं। इन मिट्टियों में लीचिंग क्रिया अपेक्षाकृत कम हुई है, अतः ये उपजाऊ ज्यादा हैं।

लेकिन यह समझना भी भ्रांति होगी कि समस्त मक्का मेखला में केवल एक ही फसल बोयी जाती है तथा समस्त भू-भाग मक्का ही ने घेरा हुआ है। वस्तुतः यहाँ भी फसल-क्रम है और इस क्रम में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग मक्का

का होता है। जहाँ सूअर-पालन या माँस उद्योग विकसित है वहाँ भी [illegible] आवश्यकीय रूप से बोई ही जाती है। औसतन लगभग 40% [illegible] दिया जाता है। फसल-क्रम को अन्य फसलों में जई, जाड़े का गेहूँ [illegible] फसलें मुख्य हैं जो, प्रत्येक लगभग 15% भाग घेरे हैं। पश्चिमी भाग [illegible] कुछ शुष्कता है, फसल क्रम में अल्फाफा घास बोयी जाती है। [illegible] आलू, मटर, बीन्स, मूँगफली आदि भी उल्लेखनीय हैं। पिछले वर्षों में [illegible] का प्रयोग चारे की फसल के रूप में काफी बढ़ा है। सोयाबीन का [illegible] केन्द्रीकरण इलीनाइस राज्य के दक्षिण-पूर्व में स्थित कम उपजाऊ मिट्टियों [illegible] हुआ है।

पिछले 3–4 दशकों में मक्का में संलग्न भूमि में भारी कमी की गयी है। 1910 में मक्का का विस्तार 110 मिलियन एकड़, 1920 में 101, 1940 में 86, 1950 में 81, 1960 में 71 मिलियन एकड़ में था। 1970 में केवल 57 मिलियन एकड़ भूमि में मक्का बोयी गयी। यह कमी इसलिए नहीं कि यू. एस. ए. के कृषि-ढाँचे में मक्का का महत्व कम हो गया है वरन् प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ जाने से (80 बुशल से ज्यादा) अतिरिक्त मात्रा वाली जमीन दूसरी फसलों में लगा दी गई है। 1910 में 110 मिलियन एकड़ भूमि में 2,853 मिलियन बुशल तथा 1970 में उससे आधी जमीन (57 मि. एकड़) में उससे लगभग दुगुनी फसल (4,109 मि. बुशल) हुई। यंत्रीकरण, कृत्रिम एवं मिश्रित किस्मों के अच्छे खाद तथा बीजों के प्रयोग एवं गहरी कृषि की ओर झुकाव होने के कारण उत्पादन प्रति वर्ष बढ़ता जा रहा है। 1982 में प्रमुख मक्का उत्पादन राज्यों का उत्पादन इस प्रकार था—

आयोवा	—	1591 मिलियन बुशल
इलीनॉय	—	1453 " "
इण्डियाना	—	815 " "

मक्का तथा 'जाड़े के गेहूँ' की मेखला :

मक्का तथा जाड़े के गेहूँ की मेखला, जैसा कि [illegible] स्पष्ट किया है, उत्तर में मक्का मेखला तथा दक्षिण में कपास मेखला के मध्य [illegible] पहाड़ियों से लेकर पूर्व में अप्लेशियन पठार तक फैली है। आगे पूर्व में यह उत्तर-पूर्व की ओर मुड़ गई है जहाँ इसका चारे की फसल एवं दुग्ध व्यवसाय मेखला तथा कपास मेखला के मध्य है। फ्लिंट पहाड़ियों का विस्तार 33 इंच की [illegible] सहारे-सहारे है। अतः दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि इस [illegible] आर्द्र यानी पेडालफर मिट्टियों का विस्तार है। मक्का मेखला की तुलना

भाग अपेक्षाकृत ज्यादा असमान, जंगलयुक्त तथा घास क्षेत्रों से युक्त है। यही कारण है कि कुल भू-क्षेत्र में मक्का मेखला से बड़े होते हुए भी इस मेखला में केवल आधी मूल्य की कृषि-उपज प्राप्त होती है। इसके निम्न प्रधान कारण हैं—

1. असमान धरातलीय स्वरूप होने के कारण यथार्थ में फसलों में लगी भूमि कम है।

2. मक्का मेखला की हिमानीकृत मिट्टीयों की तुलना में इस सम्भाग की मिट्टियाँ कम उपजाऊ हैं।

3. भू-क्षरण से प्रभावित जमीन इस मेखला में ज्यादा है।

4. मिट्टियों की उत्पादक शक्ति शीघ्र ही थक जाती है अतः निरंतर खाद तथा उर्वरकों का प्रयोग वांछनीय है।

धरातलीय स्वरूप, मिट्टी की विविधता तथा जलवायु आदि तत्व इस मेखला के विभिन्न क्षेत्रों में समता एवं एकता स्थापित करते हैं। और सम्भवतः इसीलिए फसलों सम्बन्धी विविधता और किसी एक फसल के प्राधान्य के अभाव में भी बेकर ने इसे एक मेखला का नाम दिया है। यह मेखला लगभग 1000 मील की लम्बाई में फैली है। सम्पूर्ण लम्बाई के एक-तिहाई पश्चिमी भाग में ही वर्षा 40 इंच से कम है अन्यथा सर्वत्र ज्यादा है। मेखला का कोई भी भाग ऐसा नहीं है जहाँ वर्षा 33 इंच से कम होती हो। गर्मियों में मेखला के उत्तरी भागों में 75° फै. तथा दक्षिणी भागों में 77° फै. तक तापक्रम रहता है। पालेरहित दिनों की अवधि 180 से 200 दिन तक रहती है। सर्दियों में तापक्रम हिमांक से ऊपर ही रहते हैं। यही वजह है कि यहाँ सर्दियों में ही गेहूँ की फसल सफलता-पूर्वक बो दी जाती है।

मक्का जाड़े का गेहूँ चारे की फसलें तथा अधिकांश फार्म्स की प्रमुख फसलें हैं। निस्संदेह गेहूं का अनुपात क्रमशः उत्तर तथा पश्चिम की ओर बढ़ता जाता है। पहाड़ियों के पास जो फार्म्स हैं वहाँ गेहूँ अनुपस्थित है। ऐसे असमान धरातल वाले प्रदेश में मक्का, चारागाह तथा फार्मवासियों के उपयोग के लिए सब्जियाँ पैदा की जाती हैं। वर्जीनिया तथा मेरीलैंड के समतल उपजाऊ तटवर्ती मैदानी भागों में तम्बाकू प्रधान फसल है। तम्बाकू के उत्पादन में सं. रा. अमेरिका विश्व में प्रथम है। 1980 में तम्बाकू में प्रधान उत्पादक राज्यों का उत्पादन निम्न प्रकार था। उत्तरी कैरोलिना-763 मिलियन पौंड कैंटुकी-409 मिलियन पौंड, दक्षिणी कैरोलिना 125 मिलियन पौंड। दक्षिणी-पूर्वी पेंसिलवेनिया राज्य के पीडमांट प्रदेश, वर्जीनिया तथा उत्तरी-पश्चिमी कैरोलिना में मेखला का आम स्वरूप ही है यानी मक्का, जाड़े के गेहूं तथा चारे की फसलों का प्राधान्य है परन्तु बीच-बीच में जैसे ब्लूरिज के ढाल प्रदेशों या शेनानडोआह घाटी के दोनों

तरफ सेबों के बाग या पीडमॉट प्रदेश में तम्बाकू के खेतों ने चित्र में परिवर्तन कर दिया है। आगे दक्षिण-पश्चिम में अप्लेचियन पठार के ऊबड़ खाबड़ प्रदेश हैं जहाँ जंगलों का प्राधान्य है। बीच-बीच में कहीं-कहीं फार्म्स नजर आते हैं।

वस्तुतः इस मेखला के अन्तर्गत ही विविध भौगोलिक इकाइयों में कृषि फसलों में विविधता आ गई है। अतः इसे 'मिश्रित मेखला' भी कहा जाय तो गलत न होगा। लैक्सिंगटन तथा नॉशविले के विखंडित धरातल में मिट्टी फॉस्फोरस तथा चूने के अंश युक्त होने के कारण चरागाहों एवं घोड़ा पालन के लिए बड़ी उपयुक्त रही है। तम्बाकू में भी इस क्षेत्र में विशिष्टता प्राप्त की गई है। ओजार्क औचिता पर्वत प्रदेश में मिट्टियाँ प्रायः अनुपजाऊ या बहुत कम उपजाऊ हैं जिनका उपयोग बागों के लिए किया गया है। उपयुक्त स्थलों पर सेब तथा नाशपाती के बागान हैं। और भी आगे पश्चिम में, पूर्वी कन्सास राज्य के प्रेयरी मैदानों में खाद्यान्नों की कृषि तथा सघन पशु पालन (मुख्यतः सूअर) होता है क्योंकि यहाँ की प्रेयरी मिट्टियाँ काली, गहरी एवं उपजाऊ है।

गेहूँ मेखला :

संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व के अग्रणी गेहूँ उत्पादक व निर्यातक देशों में से एक है। विश्व का लगभग 15% गेहूँ यहाँ पैदा किया जाता है। लगभग एक दशक पूर्व तक यह देश गेहूँ-उत्पादन मात्रा दृष्टि से विश्व में प्रथम था, अब सोवियत संघ के बाद दूसरे स्थान पर है। गेहूं एक शीतोष्ण कटिबन्धीय पौधा है जो सर्दियों में बोया जाता है एवं बसंत में बढ़कर गर्मियों के प्रारम्भ तक तैयार हो जाता है। बोते समय इसके लिए 50° फै. तापक्रम उपयुक्त रहता है। बाद में तापक्रम में क्रमशः वृद्धि होनी चाहिए और पकते समय, लगभग दो महीने तापक्रम 70° फै. रहना चाहिए। वर्षा प्रारम्भिक दिनों में 30 इंच पर्याप्त है। अगर कमी हो तो सिंचाई द्वारा पूरी की जा सकती है। इसके लिए दोमट मिट्टी अच्छी मानी जाती है। परन्तु साधारणतया यह किसी भी ऐसी मिट्टी में, जिसमें बलुआ अंश थोड़े-बहुत हों, बोया जा सकता है। आजकल भौगोलिक परिस्थितियों के संदर्भ में ऐसी भी गेहूं की किस्में तैयार कर ली गई है जो अपेक्षाकृत कम उपयुक्त परिस्थितियों में भी पैदा की जा सकती है।

गेहूं की फसल के लिए उपयुक्त भौगोलिक विशेषकर जलवायु दशाओं से स्पष्ट है कि जिस समय बीज पनप रहा हो उस समय तापक्रम नीचे होने चाहिए। तापक्रम का वितरण अक्षांशीय स्थिति पर निर्भर करता है। यू. एस. ए. के भीतरी मध्य भागों में जाड़ों में तापक्रम हिमांक से कुछ ऊंचा रहता है (जो गेहूं के बीज पनपने के लिए उपयुक्त है) लेकिन उत्तर में तापक्रम कम हो जाता है, हिमांक से नीचे चला जाता है। अतः वहाँ जाड़ों में फसल नहीं बोयी जाती वरन् बसन्त ऋतु में बोई

जाती है। दूसरे शब्दों में तापक्रम जैसी दशाएँ मध्य भाग में सर्दियों में होती हैं उत्तरी भाग में बसन्त ऋतु में होती है अतः उसे 'बसन्त का गेहूं' कहा जाता है। इस दृष्टि से सं. रा. अमेरिका के गेहूं प्रदेशों को दो समूहों में रखा जा सकता है—

1. शीतकालीन कठोर गेहूँ की पेटी
2. बसन्तकालीन गेहूं की पेटी

शीतकालीन कठोर गेहूँ की पेटी :

'मक्का तथा जाड़े के गेहूं की मेखला' के ठीक पश्चिम में शीतकालीन कठोर गेहूँ की मेखला स्थित है। इस मेखला का क्षेत्र कई दृष्टियों से संक्रमणीय स्थिति में है। इसके पूर्व में आर्द्र-कृषि के क्षेत्र तथा पश्चिम में ग्रेट-प्लेन्स विद्यमान है जिनमें पशुचारण के अतिरिक्त और कोई कार्य सम्भव नहीं। इस मेखला के पूर्वी भागों में वर्षा 33 इंच तथा पश्चिमी भागों में 20 इंच होती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि पूर्व में 33 इंच से अधिक वर्षा वाले भागों में मक्का पैदा की जाती है और पश्चिम में फसली कृषि (जाड़े का गेहूँ) की सीमा 20–18 इंच की सम-वर्षा रेखा है। धरातलीय दृष्टि से यह पूर्व के निचले प्रेयरी मैदानों तथा पश्चिम के ऊँचे ग्रेट प्लेन्स (शुष्क) के मध्य संक्रमणीय स्थिति में है। मिट्टी की दृष्टि से भी यही स्थिति है। लगभग चौकोर आकार में विस्तृत इस मेखला का विस्तार टैक्सास, ओकलाहामा, कन्सास, कोलोरैडो, नेब्रास्का, न्यू मैक्सिको, मिसूरी आदि राज्यों में हैं।

ग्रेट प्लेन्स के पूर्वी सीमांत में इस मेखला की भौगोलिक दशाएँ जाड़े के गेहूँ के लिए प्राकृतिक रूप से ही उपयुक्त है। यहाँ जाड़ों में तापक्रम 40° फ़ै० एवं गर्मियों में 65–70° फ़ै० तक रहते हैं। जाड़ों के दिनों में निस्संदेह पाला पड़ता है परन्तु इतना नहीं होता जो गेहूँ के पौधे के पनपने में बाधक हो। ग्रेट प्लेन्स में घास को साफ करके जहाँ इस मेखला के फार्म स्थापित किए गए हैं वहाँ मिट्टी चर्नोजम से मिलती-जुलती है। मेखला के अर्द्ध-पश्चिमी भाग में पानी की कमी अवश्य एक भीषण समस्या है जिसके कारण वनस्पति का अभाव एवं मिट्टी का कटाव होता ही है साथ ही गेहूँ के दाने को प्रभावित करता है। वस्तुतः नमी की कमी के कारण ही यहाँ का दाना लाल, कठोर एवं छोटा होता है। अब कुछ सिंचाई की व्यवस्था की गई है। दूसरे, यहाँ बोई जाने वाली किस्म ऐसी विकसित की गई है कि जिसे पानी की ज्यादा जरूरत नहीं पड़ती।

मिट्टी एवं भू-क्षरण की स्थिति को देखते हुए मेखला के पश्चिमी शुष्क भाग में कुछ अन्य तरीके भी अपनाए गए हैं। भू-क्षरण को रोकने के लिए वृक्षावलियाँ लगाई गई हैं। ढलुआ जमीन पर थोड़ी दूर-दूर पर मेड़ें बनाई गई हैं एवं

जुताई भी ढाल के आर-पार की जाती हैं ताकि नमी सुरक्षित रहे और जो कुछ भी पानी है वह जमीन में ही समा जाए, बह कर नहीं जाए। कई फार्मों में भूमि कुछ समय को खाली भी छोड़ दी जाती है ताकि नमी एकत्रित हो जाए। सिंचाई के लिए अनेक ट्यूबवैल खोदे गए हैं।

मेखला के विभिन्न राज्यों में जाड़े के गेहूँ का आकलित उत्पादन 1980 में इस प्रकार था—मिसूरी–89.5 मिलियन बुशल, कंसास–430 मि० बु०, ओकला-होमा-195 मि०बु० टैक्सास-130 मिलियन बुशल, नेब्रास्का–112 मि० बुशल तथा कोलोरैडो–109 मि० बु०।

बसन्तकालीन गेहूँ की पेटी :

बसन्त कालीन गेहूँ सं. रा. अमेरिका के उत्तर-मध्य एवं सुदूर उत्तर-पश्चिम में कोलम्बिया बेसिन में पैदा किया जाता है। उत्तर-मध्य में स्थित मेखला का विस्तार उत्तरी डकोटा, दक्षिणी-डकोटा, मोंटना (पूर्वी भाग) आदि राज्यों में है। जाड़े के गेहूँ की मेखला की तरह यह सम्भाग भी अर्द्ध-आर्द्र या अर्द्ध-शुष्क प्रदेश में स्थित है। मिट्टियाँ यहाँ काली या चैस्टनट प्रकार की हैं। हिमयुगीन आगा-सिज झील का क्षेत्र होने से मिट्टियाँ उपजाऊ हैं। इनमें से ह्यूमस तत्त्व पर्याप्त हैं। जाड़ों के दिनों में, उत्तर-मध्य यू. एस. ए. में स्थित राज्यों में तापक्रम हिमांक से नीचे हो जाते हैं, बर्फ जमती है अतः गेहूँ को बोने या उसके अंकुर फूटने लायक तापक्रमीय दशाएँ वस्तुतः मार्च में ही आ जाती हैं। इसीलिए इसे बसन्तकालीन गेहूँ के नाम से पुकारा जाता है।

सं. रा. अमेरिका के उत्तर-पश्चिम में कोलम्बिया बेसिन में कोलम्बिया तथा स्नेक नदियों से जल उपलब्ध कर गेहूँ का क्षेत्र विकसित किया गया है। वस्तुतः यहाँ गेहूँ की यह मेखला अन्तःपर्वतीय शुष्क पठारों में विकसित की गई है अतः पूर्णतया सिंचाई पर आधारित है। इस मेखला का विस्तार वाशिंगटन, इडाहो तथा ओरेगन आदि राज्यों में है। भीतरी भाग में स्थित होने के कारण यह संभाग प्रशांत महासागरीय प्रभाव से कम लाभान्वित है। जाड़ों के दिनों में इस भाग में समताप रेखाओं का विस्तार तट रेखा के समानांतर दक्षिण से उत्तर की ओर होता है स्वाभाविक रूप में यहाँ जाड़ों में तापक्रम हिमांक से नीचे ही रहते हैं। अतः यहाँ भी गेहूँ की बुवाई बसन्त ऋतु में ही होती है। बसन्त ऋतु के बाद तापक्रम एकदम ऊँचे उठने लगते हैं जो गेहूँ की बालों को शीघ्र पकाने में सहयोग करते हैं। बसन्ती गेहूँ अपेक्षाकृत जल्दी पकता है।

बसन्त कालीन गेहूँ मेखला में जमीन की तैयारी जुताई एवं [illegible] का कार्य सर्दियों से पहले ही, अक्टूबर के माह में कर लिया जाता है। [illegible] ये भाग अत्यधिक सर्दी से जमे जैसे हो जाते हैं। इसलिए [illegible]

माह को खाली छोड़ दिया जाता है। अगर इन दिनों बोया जाए तो अत्यधिक ठण्ड के कारण (10° फे. से भी कम) पौधा पनप ही नहीं सकता। बसन्त के प्रारम्भ के साथ-साथ जैसे-जैसे हिम पिघलने लगती है, इन जमीनों में नमी बढ़ने लगती है। तापक्रम भी इस समय तक 45°–50° फे. हो जाते हैं जो बुवाई के लिए उपयुक्त है। मई-जून में ताप के साथ-साथ पौधा बढ़ता है। अगस्त के अन्त तक फसल तैयार हो जाती है और अगस्त-सितम्बर तक खेतों में हारवेस्टर्स दिखाई देने लगते है। सितम्बर तक फसल कट कर दूसरी फसल के लिए तैयारी होने लगती है। इस प्रकार बसन्त कालीन गेहूँ की पेटी में एक ही फसल होती है। इस पेटी के खेत अपेक्षाकृत बड़े हैं। सारा कार्य मशीनों से होता है।

विविध राज्यों में बसन्त कालीन गेहूँ का उत्पादन 1970
(1000 बुशल में)

उत्तरी डकोटा	—	1,79,650
दक्षिणी डकोटा	—	52,141
मोंटाना	—	1,19,800
वाशिंगटन	—	1,60,200
इडाहो	—	96,030

आर्द्र-उपोष्णीय कृषि मेखला :

संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी-पूर्वी तट प्रदेशों यानी कपास मेखला की समुद्री की ओर पट्टी में गर्मी एवं आर्द्रता दोनों ही ज्यादा हैं। दलदल, रेत तथा जंगलों का आधिक्य है। पतझड़ के दिनों में भारी वर्षा होती है। ये भौगोलिक दशाएँ कपास या साधारणतया अन्य कृषि कार्यों के लिए आकर्षक नहीं हैं। यहाँ उपयुक्त क्षेत्रों में भलीभांति पनप सकती हैं। ऐसी फसलों में चावल प्रमुख है जो पिछले दशकों में पर्याप्त विस्तृत हुई है। क्षेत्रीय दृष्टि से इस पेटी का विस्तार, टेक्सास, लूजियाना, मिसीसीपी, अलाबामा एवं केरोलिना आदि राज्यों के तटवर्ती प्रदेशा में है।

चावल का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र टेक्सास का पूर्वी आर्द्र भाग है जो मूलतः प्रेयरीज प्रकार का भाग था। अतः यहाँ गहरी एवं उपजाऊ मिट्टियाँ हैं। वर्षा पर्याप्त होती है। यहाँ चावल के खेतों में, पूर्व के विपरीत, प्रत्येक कार्य यन्त्रो से होता है। खेतों की जुताई फसल की बुवाई, निराई एवं कटाई आदि सभी कार्य मशीनों से होते हैं अतः चावल की कृषि में संलग्न प्रति व्यक्ति की उत्पादन-मात्रा पूर्व की तुलना में कहीं ज्यादा है। निस्संदेह प्रति एकड़ उत्पादन यहाँ कम है।

वर्षा के बावजूद सिंचाई की जाती है। जल-तल काफी उथला है अतः पम्पों द्वारा सिंचाई सुगम एवं प्रचलित साधन है। इस सम्भाग के अतिरिक्त चावल अर्कन्सास नदी के बाढ़कृत मैदान एवं कैलीफोर्निया राज्य में सैक्रमेंटो नदी की घाटी में पैदा किया जाता है। प्रति वर्ष लगभग 38-40 मिलियन ह. ट. चावल पैदा किया जाता है जो देश की आवश्यकता पूरी करने में समर्थ हैं क्योंकि यहाँ चावल की खपत साधारणतः बहुत कम है। प्रति एकड़ उत्पादन लगभग 4500 पौण्ड है।

चावल क्षेत्र से सटा हुआ, थोड़ा पूर्व में, लूजियाना के तटवर्ती प्रदेश में यू.एस.ए. का एक मात्र गन्ना उत्पादक क्षेत्र विद्यमान है। दक्षिणी ब्राजील, न्यू साउथ वेल्स या नैटाल की तरह यहाँ गन्ना क्षेत्र भी जलवायु की दृष्टि से एक तरह से संक्रमणीय स्थिति में है, जहाँ जाड़ों में फसल को पाले का डर रहता है। बल्कि कुछ वर्षों पूर्व तो ऐसी नौबत आ गई थी कि सस्ते श्रम के अभाव तथा पौधों सम्बन्धी कई प्रकार की बीमारियों के प्रचलित हो जाने के कारण गन्ने की खेती बन्द करने की योजनाएँ बनाई गईं। यहाँ के गन्ना फार्म्स अधिकांशतः शक्कर मिलों के अधिकार में हैं जहाँ वे गन्ने की नई एवं उपयुक्त किस्मों का रोपण करते रहते हैं। इस क्षेत्र से देश में प्रयोगित कुल शक्कर का लगभग 6-7% भाग प्राप्त हो जाता है।

मिसीसीपी के पूर्व में तट के पास अपेक्षाकृत ज्यादा रेतीली मिट्टियों वाला भाग है। इन मिट्टियों में नाइट्रोजन का तो अभाव है परन्तु तापक्रम ज्यादा रहता है तथा सब्जियाँ आसानी से बोई जा सकती हैं। अतः उत्तर में स्थित बाजारों के लिए सब्जियों के उत्पादन हेतु उपयुक्त हैं। इस सम्भाग में ढोर भी पाले जाते हैं। जितने भी जानवर इन तटवर्ती क्षेत्रों में पाले जाते हैं उनका लगभग आधा भाग माँस तथा एक-चौथाई भाग दुग्ध-व्यवसाय में संलग्न है। उपोष्णीय फसलों का एक छोटा सा क्षेत्र पश्चिम में कैलीफोर्निया की घाटी में भी है जहाँ चावल के अतिरिक्त कई प्रकार के फल भी पैदा किए जाते हैं। यहाँ दशाएँ भूमध्यसागरीय जलवायु से मिलती-जुलती है।

चरागाह एवं दुग्ध-व्यवसाय मेखला :

महान् झीलों के सहारे-सहारे, पूर्व में सेंटलॉरेंस घाटी के साथ-साथ फला क्षेत्र, अपने उत्तर और दक्षिण में स्थित प्रदेशों के मध्य, वस्तुतः संक्रमण प्रकार का है। एक समय यह सम्पूर्ण भाग जंगलों से घिरा था। हिम युग में हिमानियों द्वारा ढ़ँका था जिससे यहाँ धरातल पर हिम-निमृत तलछट का जमाव हुआ और अनेक छोटी मात्र झीलें बनीं। यह भाग जंगलों की अपेक्षा कृषि विकास के लिए ज्यादा उपयुक्त एवं आर्थिक है और कृषि-कार्यों में फसली-कृषि की अपेक्षा चरागाह तथा चारे की फसलों के लिए ज्यादा अनुकूल है। उत्तरी अमेरिका के इसी संभाग में बड़े-बड़े नगर व औद्योगिक केन्द्र विद्यमान हैं अतः दुग्ध उत्पादनों की

मांग निरन्तर बनी रहती है। चरागाह एवं दुग्ध व्यवसाय मेखला का विस्तार उत्तरी-पूर्वी राज्यों—मिनेसोटा, विस्कांसिन, मिशीगन, ओहियो, वरमोंट, न्यू-हैम्पशायर, न्यूयार्क, मेन तथा पैंसिलवेनिया आदि में है।

इस मेखला के अधिकांश भागों में ठण्डी तथा आर्द्र जलवायु है। दुग्ध व्यवसाय के लिए इसी प्रकार की जलवायु दशाएँ उपयुक्त मानी जाती हैं। इस मेखला में ठण्ड दक्षिण भागों यानी मक्का मेखला से ज्यादा पड़ती है। गर्मी की ऋतु अपेक्षाकृत छोटी ही है। केवल तीन माह तापक्रम ऊँचे रहते हैं। इस कारण इस क्षेत्र में खाद्यान्न व अन्य प्रकार की फसलें भी नहीं बोई जा सकतीं। जिस समय यूरोपियन लोग यहाँ सर्वप्रथम आए थे तो उन्होंने यहाँ गेहूँ की खेती की थी परन्तु ऊँचे तापक्रम के अभाव में इसके पकाव में पूर्णतया नहीं आ पाती थी। इसलिए भीतरी निचले भागों में फसलों के लिए उपयुक्त क्षेत्र मिलने पर इसे चरागाह व दुग्ध व्यवसाय मेखला में परिवर्तित कर दिया गया। समुद्र एवं झीलों के प्रभाव के कारण आर्द्रता बनी रहती है; वर्षा 30–40 इंच तक हो जाती है जो घास तथा चारे की फसलों की वृद्धि के लिए उपयुक्त है। गर्मी की छोटी अवधि का उपयोग इस मेखला से चारे की फसलें बोने के लिए किया जाता है जिसे 2-3 महीने में ही काट कर 'साइलेज' बनाने व पशुओं को खिलाने के काम में ले लिया जाता है।

मेखला की दक्षिणी सीमावर्ती पट्टी में कुछ मात्रा में फसली कृषि भी होती है जिसका स्थानीय महत्व है। दक्षिणी विस्कांसिन तथा दक्षिणी मिशीगन में जाड़े का गेहूँ पैदा किया जाता है परन्तु इसका स्थान फसल-क्रम में ही है। मेखला के दक्षिणी-पश्चिमी सिरे के भागों में मक्का भी पैदा की जाती है। परन्तु उसे भुट्टे आने की स्थिति से पहले ही काट कर साइलेज बनाने के काम में लिया जाता है। जई लगभग समस्त मेखला में पैदा की जाती है। परन्तु खाद्यान्नों में संलग्न भूमि चारे की फसलों में संलग्न भूमि की तुलना में बहुत कम है। वस्तुतः सुवितरित वर्षा, वाष्पीकरण के कम अवसर तथा रेतीले अंश लिए हुए मिट्टियाँ आदि तत्व इस प्रदेश को स्थायी चरागाह तथा बोयी गयी चारे की फसलों के लिए उपयुक्त बनाती हैं। यही कारण है कि समस्त देश के दुग्ध-व्यवसायी पशुओं का एक बड़ा भाग इस मेखला में विद्यमान है।

उद्यम की सघनता की दृष्टि से दक्षिणी विस्कांसिन, ऊपरी ओंटेरियो पैनिनशुला, न्यूयार्क राज्य के मैदानी भाग, मेन तथा वरमोंट आदि राज्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। विस्कांसिन राज्य इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। नई वैज्ञानिक तथा तकनीकी खोजों एवं फसली कृषि की तुलना में दुग्ध उत्पादनों की कीमत ज्यादा होने के कारण इस राज्य में किसानों का आकर्षण दुग्ध-व्यवसाय की ओर बढ़ा। आज यह राज्य दुग्ध उत्पादनों की दृष्टि से संघ में प्रथम है। मक्खन, पनीर

य अन्य उत्पादन अतिरिक्त मात्रा में होते है। यातायात एवं संदेश वाहनों का इस राज्य में पर्याप्त विकास है जो इस उद्यम में परोक्ष रूप से काफी महत्वपूर्ण हैं। इस व्यवसाय में लाभ तभी सम्भव है जबकि उत्पादन शीघ्रातिशीघ्र खपत केन्द्रों तक पहुँच जाए।

दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से वरमोंट राज्य भी महत्वपूर्ण है। यहाँ दूध के लिए गायें पाली जाती हैं जो उत्तम चारे, देखभाल एवं स्वस्थ होने के कारण एक दिन में 30–40 किलो तक दूध देती हैं। जानवरों को रखने के लिए प्रायः वातानुकूलित घर हैं। दूध मशीनों से निकाला जाता है। फर्मों के बीच-बीच में डेरी हैं जहाँ दूध एकत्र होता है तथा निकटवर्ती मक्खन एवं पनीर की फैक्ट्रीज को भेज दिया जाता है। मेन राज्य के दक्षिणी भाग एवं वरमोंट राज्य की नदी घाटी तथा चैम्पलेन झील के आस पास का क्षेत्र क्षेत्रीय दृष्टि से दूध उत्पादन में अग्रणी हैं। यहाँ का दूध प्रमुखतः आइसक्रीम बनाने के काम में आता है। न्यूयार्क, बोस्टन, फिलाडेलफिया, क्लीवलैंड, पीटस बर्ग व अन्य सभी बड़े नगर डेरी मेखला के उत्पादनों के प्रधान केन्द्र हैं। झीलों के दक्षिणी राज्यों (विस्कांसिन-मिशिगन-ओहियो) में पनीर तथा सूखे दूध के उत्पादन में विशिष्टता प्राप्त की गई है।

डेरी मेखला के अतिरिक्त दुग्ध व्यवसाय देश के धुर उत्तरी-पश्चिमी भाग तथा पश्चिम के धँसावकृत क्षेत्रों में भी विकसित है। समुद्र की निकटता, पछुआ हवाओं द्वारा प्रदत्त आर्द्रता तथा सुहावने तापक्रमों युक्त वातावरण में चरागाह एवं पशुचारण के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ हैं। असमान धरातल होने के कारण खाद्यान्न फसलें उतनी आर्थिक सिद्ध नहीं होती। फिर, पिछले दशकों में कैलीफोर्निया राज्य के नगर केन्द्रों में दुग्ध-उत्पादनों की माँग तेजी से बढ़ी है। इन सब परिस्थितियों ने मिलकर इस भूभाग को सं॰ रा॰ अमेरिका का नं॰ 2 का दुग्ध व्यवसायी प्रदेश बना दिया है।

पशुचारण एवं सिंचित-कृषि मेखला :

सं॰ रा॰ अमेरिका के पश्चिम में रॉकी क्रम तथा कॉस्केडस के मध्य एक ऐसा विशाल भू-भाग विद्यमान है जो अपनी धरातलीय विषमता शुष्क जलवायु तथा अनुपजाऊ मिट्टियों के कारण कृषि विकास तथा जन बसाव की दृष्टि से बहुत पिछड़ा है। इस शुष्क पठारी-बेसिन के अधिकांश भाग ऐसे हैं जहाँ वर्षा 5 इंच से भी कम होती है। जलाशय बहुत कम हैं। ऐसी स्थिति में कृषि केवल कुछ भागों, जो निचले मैदानों में सिंचाई की सुविधा युक्त है, तक ही सीमित है। विस्तृत भागों में पशुचारण होता है। पशुचारण यहाँ सर्व-प्रथम आए हुए स्पेनिश प्रवासियों द्वारा प्रारम्भ किया गया जो वर्तमान में, श्वेत तथा आदिवासी इण्डियन्स, दोनों द्वारा किया जाता है। चूँकि ऐसे चरागाह नहीं हैं जहाँ वर्ष भर तक जानवरों

को चराया जा सके अतः 'ट्रांस ह्यूमेंस'[23] की प्रथा प्रचलित है। गर्म-शुष्क दक्षिण के पठारी भागों में तो प्रत्येक झुण्ड स्थानान्तरित होता है। चरागाह और घास क्षेत्रों का कितना अभाव है इसका अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि इस भाग में प्रति 100 एकड़ भू-भाग में 1 जानवर का औसत पड़ता है। पशुओं में भेड़ प्रमुख है। यू.-एस. ए.-में उत्पादित ऊन का अधिकांश भाग यहाँ से प्राप्त होता है।

केवल 3% भूमि फसली कृषि में लगी है जिसमें चुकन्दर, आलू, अल्फाफा (उत्तर में) तथा कपास (दक्षिणी भागों में) पैदा की जाती हैं। स्वाभाविक रूप से समस्त फसली कृषि सिंचित भागों में की जाती है। एक तरह से कृषि का मरूधानी स्वरूप है। वैसे छोटे-छोटे सैकड़ों सिंचित क्षेत्र हैं पर विस्तार तथा महत्व की दृष्टि से बड़े सिंचित कृषि क्षेत्रों में साल्टलेक क्षेत्र, एरीजोना का गीला बेसिन, स्नेक नदी बेसिन, कोलम्बिया बेसिन तथा कोलोरेडो प्रोजेक्ट बेसिन के क्षेत्र उल्लेखनीय हैं। सिंचाई इस प्रदेश में वर्षा रहित एवं कम वर्षा वाले भागों में (अनिश्चितता से बचने के लिए) की जाती है। कुछ सिंचित क्षेत्रों में फसली कृषि के अतिरिक्त चरागाह भी पाये जाते हैं। सिंचित क्षेत्रों के चरागाहों से पर्याप्त मात्रा में चारा जाड़ों के शुष्क दिनों के लिए रखा जाता है। प्रमुख फसलें कपास, चुकन्दर, सब्जियाँ तथा फल हैं। कपास के लिए इन प्रदेशों की चमकीली धूप पाले रहित अवधि एवं रेतीली मिट्टियाँ आदि तत्व बहुत अनुकूल हैं।

□□□

---

23. चरागाहों की तलाश में चरवाहे अपने पशुओं को घाटियों तथा पर्वतीय ढाल क्षेत्रों में परस्पर स्थानान्तरित करते रहते हैं इस प्रक्रिया को 'ट्रान्सह्यूमेंस' कहते हैं।

सं० रा० अमेरिका शक्ति-संसाधन एवं खनिज सम्पदा

संयुक्त राज्य अमेरिका न केवल विविध प्राकृतिक कृषि-संसाधनों में धनी है वरन् इन सबके शोषण में वह इतना क्रियाशील रहा है कि गत कई दशकों से विश्व में नेतृत्व की स्थिति में है। वस्तुतः इस महादेश की महानता की पृष्ठभूमि में कोयला, पैट्रोल, जल-शक्ति व अणु-खनिजों की भी महत्वपूर्ण स्थिति रही है। इनकी उपस्थिति का ही सुफल है कि यह देश औद्योगिक, तकनीकी व सैनिक शक्ति में इतना आगे बढ़ सका। यद्यपि उसका विश्व प्रतिशत (दूसरे देशों की उत्पादन मात्रा बढ़ने के कारण) दिनों-दिन गिरता जा रहा है इसके बावजूद भी आज यह देश विश्व के लगभग 20% कोयला, 25% जल विद्युत उत्पादन क्षमता, 30% पैट्रोल एवं 25% यूरेनियम के लिए उत्तरदायी है। उत्पादन एवं प्रयोग के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि इस देश के संसाधन सुवितरित हैं। यथा पैट्रोलियम कॉर्डीलैराज के सीमान्तों में स्थित परतदार बेसिनों, कैलीफोर्निया, ग्रेट प्लेन्स तथा मध्य-पूर्व में खाड़ी के तटवर्ती क्षेत्रों में विद्यमान हैं।[23] कोयला के महत्वपूर्ण खनन-क्षेत्र उद्योग प्रधान पूर्वी यानी अप्लेचियन प्रदेश में स्थित हैं। जल विद्युत की सर्वाधिक सम्भावित व उत्पादित क्षमता अटलांटिक तटवर्ती पट्टी के अधिक बसे भागों के पास-पास प्रपात पंक्ति के रूप में विद्यमान है। यूरेनियम कोलोरैडो व अन्य पर्वतीय राज्यों तथा थोरियम दक्षिणी कैलीफोर्निया एवं दक्षिणी कैरोलिना में उपलब्ध है।

तीन चार दशक पूर्व तक उद्योग, यातायात एवं शक्ति के अन्य उपयोग क्षेत्रों में कोयले का आधारभूत स्थान था परन्तु पिछले वर्षों में शक्ति प्रयोग के ढांचे में अन्तर आया है। कोयला भारी होने के साथ-साथ खुदाई तथा यातायात की दृष्टि से महंगा पड़ता है अतः उसका स्थान क्रमशः पैट्रोल एवं प्राकृतिक गैस लेते जा रहे हैं। अग्रलिखित सारणी में दिये हुए विभिन्न साधनों के खपत का प्रतिशत यह तथ्य सुस्पष्ट है।

---

23. Hudson, F.—North America; Macdonald & Evans Ltd.

सं० रा० अमेरिका में शक्ति खपत 1930-60

(विभिन्न साधनों का खपत प्रतिशत)

वर्ष	एन्थ्रासाइट	बिटू मिनस	पैट्रोलियम	प्रा० गैस	जल शक्ति
1930	7.7	53.5	25.4	9.9	3.5
1940	5.2	47.2	31.4	12.4	3.8
1950	3.0	34.8	37.2	20.3	4.7
1960	1.0	22.2	41.4	31.5	3 9

कोयला :

ब्रिटेन की तरह सं. रा. अमेरिका में भी औद्योगिक विस्तार के आधार में वह ताप शक्ति रही जो कोयला को जलाकर प्राप्त की गयी। एक शताब्दी से भी ज्यादा समय तक कोयला उद्योगों का आधार रहा। इस अवधि में देश के विभिन्न भागों का सर्वेक्षण किया गया, कोयले के विस्तृत भंडार प्राप्त किए गए। ऐसा अनुमान है कि इस देश के भूगर्भ में विश्व की कुल संचित राशि का लगभग एक तिहाई भाग विद्यमान है।[24] पिछले दशक में किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार यहाँ 1,95,000 मिलियन मैट्रिक टन की राशि विद्यमान है जिसका अधिकांश भाग व्योमिंग उत्तरी डकोटा, मोंटाना, इलीनोइस, कोलोरैडो, कैंटुकी तथा पश्चिमी वर्जीनिया आदि राज्यों में है। यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि सुरक्षित राशि के दृष्टिकोण से देश का पश्चिमी भाग ज्यादा महत्वपूर्ण है जहाँ समस्त राशि का लगभग 65% आंका जाता है जबकि पूर्वी भागों में सुरक्षित राशि का केवल 35% भाग माना जाता है। इसके विपरीत वास्तविक उत्पादन पूर्वी भाग में ज्यादा होता है। यू. एस. ए. के पूर्वी राज्य कुल उत्पादन के लगभग 80% भाग के लिए उत्तरदायी हैं जबकि पश्चिम के सब राज्यों का सम्मिलित उत्पादन भी एक चौथाई से ज्यादा नहीं होता। और यह भी मुख्यतः द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से होने लगा है।

वस्तुतः शुष्क जलवायु, पर्वतीय-पठारी धरातल, औद्योगिक एवं अन्य आर्थिक संस्थानों का अभाव, यातायात की कमी एवं जनसंख्या का छितरा बसाव— ये सभी तत्व ऐसे हैं जिनके कारण पश्चिमी भागों में संचित राशि का शोषण उचित रूप में नहीं हो पाता। परन्तु वह दिन दूर नहीं जबकि देश को अपने पश्चिमी भंडारों पर निर्भर रहना पड़ेगा। लेकिन इसमें समस्या यही आती है कि पूर्वी भागों में ही चूंकि ज्यादातर भारी उद्योग हैं अतः उन तक कोयला पश्चिमी भागों से

24. Monkhouse M.R: Cain—North America P. 193

लाने में बहुत महँगा पड़ेगा। इसी कारण से प्रति दिन उद्योगों को तेल, जल शक्ति व अन्य साधनों से संचालित करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

कोयला उत्पादन एवं मात्रा मूल्य [25]

प्रकार	1969		1980	
	उत्पादन मात्रा (1000 ट. में)	उत्पादन मूल्य (1000 डा. में)	उत्पादन मात्रा (1000 ट. में)	उत्पादन मूल्य (1000 डा. में)
1. बिटूमिनस एवं लिगनाइट (शॉर्ट टन)	560,505	2,795,509	823,000	20,240,000
2. पैंसिलवेनियन एन्थ्रासाइट (शॉर्ट टन)	10,473	100,769	6,000	270,000

पिछले पाँच दशकों में अमेरिका के प्रमुख कोयला उत्पादक राज्यों की उत्पादन-मात्रा के तुलनात्मक अध्ययन से कोयला-खनन व्यवसाय की प्रवृत्ति पर प्रकाश पड़ता है। निम्न सारणी द्वारा यह तथ्य स्पष्ट है।

सं. रा. अमेरिका–कोयला उत्पादन 1929-1942-1982 [26]

(उत्पादन मिलियन शॉर्ट टनों में)

प्रदेश	राज्य	1929	1942	1982
अप्लेशियन	1. पैंसिलवेनिया एन्थ्रासाइट	73.8	59.9	4.1
	बिटूमिनस	143.5	143.2	71.9
	2. पश्चिमी वर्जीनिया	138.5	156.8	96.4
	3. ओहियो	23.7	34 0	37.4
	4. अलाबामा	17.9	18.9	27.5
	5. वर्जीनिया	12.7	19.9	41.9
	6 टेनेसी	5 4	7.4	9.1
	7. मेरीलैंड	2.6	1.9	3.5

25. The Statsman s year book 1984-85

26. 1929 तथा 1942 के आँकड़े North Americaby jones & Bryan एवं State sman's year book 1984-85 पर आधारित।

प्रदेश	राज्य	1929	1942	1982
	8. केंटुकी (पूर्वी)	46.0	46.0	150.2
मध्य पूर्वी	केंटुकी (पश्चिमी)	14.4	14.0	
	9. इंडियाना	18.3	25.4	30.9
	10. इलीनॉय	60.7	63.7	51.7
मिशिगन	11. मिशिगन	.8	.3	नगण्य
मध्य पश्चिमी	12. आयोवा	4.2	2.9	1.1
	13. कन्सास	3.0	8.0	1.3
	14. मिसूरी	4.0		4.5
मध्यदक्षिणी	15. ओकलाहामा	3.8	4.1	नगण्य
	16. अर्कन्सास	1.7		.2
	17 टेक्सास	1.1	.3	नगण्य
उत्तरी प्रेट-प्लेन्स एवं रॉकी-प्रदेश	18. कोलोरेडो	9.9	8.0	5.2
	19. व्योमिंग	6.7	8.0	6.5
	20. ऊटाह	5.2	5.7	2.5
	21. न्यू मैक्सिको	2.6	1.7	.9
	22. मोंटाना	3.4	3.9	1.1
	23. उत्तरी डकोटा	1.9	2.5	17.9
प्रशांत तट	24. वाशिंगटन	2.5	2.0	.2

उपर्युक्त आंकड़ों से यह सुस्पष्ट है कि कोयला की उत्पादन-मात्रा में पिछले 4–5 दशकों में कोई उल्लेखनीय वृद्धि-गति नहीं रही है यद्यपि यहाँ के भूगर्भ में सुरक्षित राशि पर्याप्त है। द्वितीय विश्व युद्ध में हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार यहाँ 1,400 बिलियन शॉर्ट टन कोयला दबा पड़ा है जो वर्तमान खपत-मात्रा की दर से समस्त विश्व के लिए आगामी 1000 वर्षों के लिए पर्याप्त होगा। इस तथ्य के बावजूद भी वृद्धि ज्यादा नहीं है, उसका कारण यह है कि इन दशाब्दियों में शक्ति के नये सस्ते एवं आसान साधनों के प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो जाने के फलस्वरूप कोयला का महत्व औद्योगिक तथा यातायात के क्षेत्र में घटा है। उपयोग क्षेत्र में ह्रास का प्रभाव उत्पादन-मात्रा पर पड़ा है। कोयले का स्थान क्रमशः तेल

लेता जा रहा है। कोयले के सीधे प्रयोग की बजाय उससे विद्युत उत्पादित कर प्रयोग में लाने की प्रवृत्ति चल पड़ी है। उत्तरी अप्लेचियन के औद्योगिक प्रदेशों में कोयले से कोक तैयार कर उद्योगों में उपयोग होता है। इसमें बिटूमिनस का प्रयोग होता है। यही कारण है कि पश्चिमी वर्जीनिया या ओहियो जैसे राज्यों, जहाँ मुख्यतः बिटूमिनस खोदा जाता है, को छोड़कर कोयले की उत्पादन-मात्रा ह्रासोन्मुख है। दूसरे, जैसे-जैसे खानें गहरी होती जाती हैं, उत्पादन महँगा पड़ता है। दक्षिण एवं पश्चिम के राज्यों में जहाँ तेल उपलब्ध है कोयला उत्पादन क्रमशः कम होता जा रहा है। भीतरी राज्यों में यथावत स्थिति ही प्रतीत होती है। पश्चिमी राज्यों में निस्संदेह पर्याप्त सुरक्षित राशि है परन्तु वर्तमान वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रवृत्तियों को देखते हुए लगता है कि भविष्य में अगर वहाँ शक्ति-उत्पादन की व्यवस्था विकसित की गयी तो वह अणु खनिजों पर आधारित होगी न कि कोयला पर।

ब्रिटेन की तरह अमेरिका में भी आजकल कोयला की खुदाई के लिए आधुनिकतम यंत्र एवं सुरक्षापूर्ण तरीके काम में लाये जाते हैं। मशीनीकरण बहुत बढ़ गया है फलतः मजदूरों की संख्या घटी है। इस घटाव का सही अनुमान पेंसिलवेनिया राज्य की खदानों में संलग्न मजदूरों की संख्या से हो सकता है जहाँ 1914 में 1,80,000 मजदूर कार्य करते थे परन्तु वर्तमान में 20,000 से भी कम हैं।

मोटे तौर पर अमेरिका के कोयला क्षेत्रों को तीन समूहों में रखा जा सकता है :

1. अप्लेचियन कोयला क्षेत्र .
2. पूर्वी भीतरी कोयला क्षेत्र
3. पश्चिमी भीतरी कोयला क्षेत्र

ये तीनों क्षेत्र मिलकर सं. रा. अमेरिका का 90% से अधिक कोयला प्रस्तुत करते हैं। इनके अतिरिक्त बिखरे रूप में कुछ कोयला उत्पादक क्षेत्र हैं परन्तु उत्पादन नगण्य है। इन तीनों में भी कोयला की किस्म, कार्बन की मात्रा, पर्तों की मोटाई, पर्तों तक पहुँच आदि की दृष्टि से भारी वैभिन्य है। वस्तुतः आर्थिक कारणों के फलस्वरूप विशाल कोयलायुक्त भू-भागों में से केवल छोटे-छोटे खण्डों में ही खुदाई सम्भव हो सकी है। प्रस्तुत पुस्तक के विषय-क्षेत्र कोध्यान में रखते हुए वांछनीय है कि केवल उन क्षेत्रों पर दृष्टिपात किया जाए जहाँ वास्तव में कोयला की खुदाई क्रियाशील रूप में है न कि उन समस्त क्षेत्रों का अध्ययन जहाँ-जहाँ कि कोयला की पर्तें भूगर्भ में विद्यमान हैं।

अप्लेचियन कोयला क्षेत्र :

कोयले की विविधता एवं उत्पादन-मात्रा की दृष्टि से यह क्षेत्र न केवल अमेरिका वरन् विश्व का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र है। अप्लेचियन

क्षेत्र की खदानें अमेरिका का लगभग तीन-चौथाई कोयला प्रस्तुत करती हैं। इस उत्पादन में लगभग सभी किस्मों का कोयला होता है। गैस तथा कोकिंग-कोल उत्तरी तथा दक्षिणी खानों से पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। वस्तुतः शक्ति की इतनी आसान पूर्ति के आधार पर ही इस शृंखला के उत्तर (पिट्सबर्ग) तथा दक्षिण (बर्मिघंम) में भारी लोह-इस्पात उद्योग के कारखाने विकसित हो सके। पूर्वी पेंसिलवेनिया के कूटिका-घाटी क्षेत्र में एन्थ्रासाइट कोयला उपलब्ध है जिसने शताब्दियों पूर्व इस सम्भाग में लौह-अयस गलाने का साधन प्रस्तुत किया। मध्य के क्षेत्रों (केंटुकी तथा पश्चिमी वर्जीनिया) से भारी मात्रा में 'स्टीम कोल' तथा घरेलू खपत में प्रयोगित कोयला उपलब्ध है। यहाँ यह इतनी अधिक अतिरिक्त मात्रा में प्राप्त है कि उल्लेखित दोनों राज्य प्रतिवर्ष लगभग 150 मिलियन टन कोयला निकटवर्ती औद्योगिक प्रदेशों को निर्यात करते हैं।

अप्लेचियन क्रम की कोयला-पर्तें घाटी एवं कूटिकाओं के समानांतर ही दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर फैली हैं। इस सम्भाग में संनति एवं प्रतिनति स्वरूप एक दूसरे के समानांतर विस्तृत हैं। कोयले की पर्तें उन घाटियों में विद्यमान हैं जो अप्लेचियन क्रम की कूटिकाओं के बीच-बीच में स्थित हैं। अनावृत्तिकरण के साधनों मुख्यकर जलधाराओं ने ऊपरी जमाव को छील दिया है। फलस्वरूप कोयले की पर्तें काफी नजदीक आ गयी हैं एवं उनकी खुदाई सरल है। स्थिति के आधार पर इस समस्त कोयलाक्रम को तीन उप-विभागों में रखा जा सकता है।:

(अ) उत्तरी अप्लेचियन या पिटसबर्ग कोयला क्षेत्र—इस क्षेत्र की कोयला खदानों का विस्तार ओहियो तथा पेंसिलवेनिया आदि राज्यों में लगभग 5500 वर्ग मील भूमि में है। कोयला व्यवसाय में पेंसिलवेनिया राज्य का अपना एक महत्व है। देश का लगभग समस्त एन्थ्रासाइट कोयला इस अकेले राज्य में निकलता है जिसका वर्तमान उत्पादन मात्रा तो बहुत कम (लगभग 10 मि. टन) है परन्तु किसी समय बहुत महत्वपूर्ण था। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान पेंसिलवेनिया का एन्थ्रासाइट अपनी चरम सीमा पर था जबकि 1916 में यहाँ की खदानों ने 98 मि. टन एन्थ्रासाइट प्रस्तुत किया। एन्थ्रासाइट का उत्पादन दिन-प्रति दिन कम होता जा रहा है। 1929 में 73.8 मि. टन, 1935 में 54; 1965 में 15 तथा 1970 में केवल 10 मि. टन एन्थ्रासाइट खोदा गया। इस ह्रास का प्रधान कारण इस कोयले की उपयोगिता का स्वरूप है। एन्थ्रासाइट वर्तमान में केवल घरों को गर्म करने के काम में लाया जाता है, औद्योगिक प्रयोग में नहीं। इस पर भी विद्युत इसका स्थान लेती जा रही है। एन्थ्रासाइट की खदानें पेंसिलवेनिया राज्य के पूर्वी भाग में 'वृहत घाटी प्रदेश' तथा ब्लूरिज के पश्चिम में स्थित संकरी, समानांतर घाटियों में स्थित है। इस क्षेत्र की सस्केहाना तथा डेलावेयर आदि

सं० रा० अमेरिका
कोयला उत्पादक क्षेत्र
संभावित राशि वाले प्रदेश
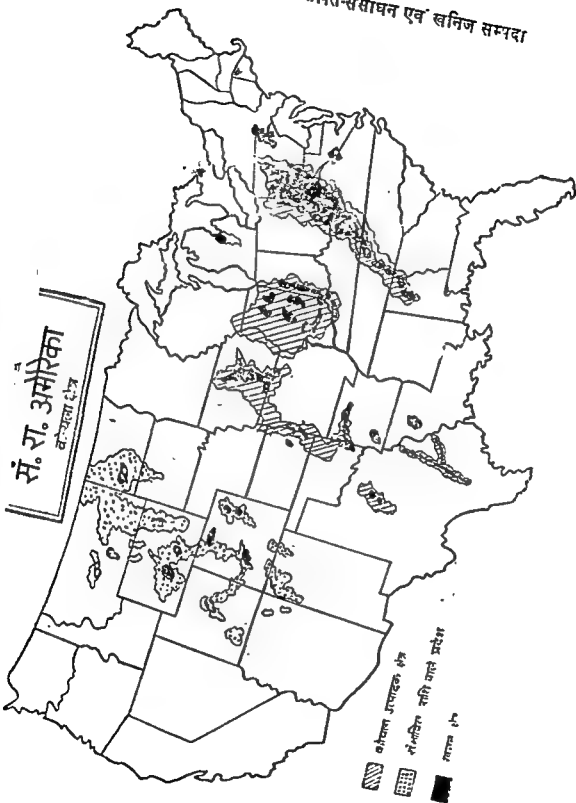
नदियां इस कोयला के यातायात की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। उल्लेखनीय है कि विटूमिनस कोकिंग कोयला का उत्पादन भी सर्वप्रथम पैंसिलवेनिया राज्य के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में आरम्भ हुआ था।

अप्लेचियन क्रम का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कोयला क्षेत्र पिट्सबर्ग नगर के पूर्व एवं दक्षिण में विस्तृत है। इसका विस्तार पैंसिलवेनिया राज्य के अतिरिक्त पश्चिम की तरफ ओहियो एवं दक्षिण में पश्चिमी वर्जीनिया तथा मैरीलैंड राज्यों में है। अगर ओहियो राज्य वाले भाग को थोड़ी देर के लिए दृष्टि में न रखें तो स्पष्ट होगा कि यह समस्त क्षेत्र मध्य तथा निचली मोनोन गहेला (सहायकों सहित) तथा कॉनेमाघ (निचली अलघेनी की बाँयी सहायक) नदियों द्वारा जल-पूरित है। इन सभी नदियों का केन्द्र एक स्थान पर है और वह है स्थान पिट्सबर्ग। इसीलिए इस क्षेत्र की जितनी भी सड़कें और रेलवे लाइनें हैं वे इस नगर को केन्द्र बना कर विकसित हुई हैं। चारों तरफ से यहाँ आने वाली रेल्वेज कोयला लाती हैं जिसका उपयोग यहाँ के इस्पात उद्योग में होता है जबकि पिट्सबर्ग से बाहर चारों तरफ फैले हुए खनन क्षेत्रों को जाने वाली रेलवेज रसद एवं तैयार माल ले जाती हैं। सुस्पष्ट है कि विश्व के इस सबसे विशाल इस्पात केन्द्र के विकास में चारों तरफ फैली विटूमिनस कोयले की पर्तों का आधारभूत सहयोग रहा है।

पिटसबर्ग कोयला क्षेत्र, जिसे कभी-कभी 'पिटसबर्ग डिस्ट्रिक्ट' के नाम से भी जाना जाता है, की प्रधान खानें नगर के दक्षिण एवं पूर्व में स्थित हैं। वैसे अनेक पर्तें इस सम्भाग में विद्यमान हैं परन्तु उत्पादन मात्रा की दृष्टि से वह कोयला पर्त उल्लेखनीय है जिसे पिटसबर्ग पर्त के नाम से जाना जाता है। यह पर्त चूने के चट्टानों के आधार में स्थित है जिसे बलुआ पत्थर तथा 'शेल' चट्टानों ने ढका हुआ है। इस पर्त तथा चूने की चट्टानों को मोनोनगहेला-क्रम के नाम से जाना जाता है कारण कि इस प्रकार की रचनाएँ मोनोनगहेला की घाटी में ही पूर्ण रूप से विकसित हैं। इस पर्त के कुछ विशिष्ट लक्षण हैं जिन्होंने इसे आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण बना दिया है। सम्पूर्ण पर्त क्षैतिजवर्ती क्रम में एक विशाल भाग में फैली है, धरातल के बहुत पास है, कहीं भी 400 फीट से ज्यादा गहरी नहीं है। पर्त की मोटाई समान है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात है कि पर्त इस प्रदेश की घाटियों के जल-तल के लगभग ऊँचाई पर है। बहुत सी जगह पर्त धरातल के निकट ही आ गयी है अतः आसानी से खोदी जा सकती है। प्रचलित खानें अधिकतर इसी प्रकार की हैं। नदियों ने जहाँ घाटियाँ काटी हैं वहाँ अनेक पर्तें आसान खुदाई के लिए प्रस्तुत हैं। पिटसबर्ग पर्त की औसत मोटाई 6 फीट है।

नदी घाटियों के आधार पर पिटसबर्ग कोयला क्षेत्र को भी तीन उप-विभागों में रखा जा सकता है। ये हैं—

1. कौनेल्सविले कोकिंग क्षेत्र।

2. अलघैनी-वाशिगटन क्षेत्र ।
3. कम्ब्रिया क्षेत्र ।

कोनेल्सविले नगर अपने ही नाम के कोयला क्षेत्र का संग्रह-केन्द्र है जहाँ से भारी मात्रा में कोकिंग कोयला औद्योगिक प्रदेशों को निर्यात किया जाता है। प्रमुखतः कोकिंग कोल प्रस्तुत करने वाला यह क्षेत्र मोनोनगहेला की सहायक यूगियोघैनी की घाटी में फैला है। यह नदी मोनोनगहेला में पिटसबर्ग से 10 मील दक्षिण में दक्षिण-पूर्व दिशा से मिलती है। संगम से 40 मील दक्षिण में कोनेल्सविले नगर स्थित है अलघैनी-वाशिगटन क्षेत्र, जो कि पिटसबर्ग नगर के पास ही स्थित है, उत्तम श्रेणी का स्टीम तथा गैस-कोल प्रस्तुत करता है जिसका उपयोग आस-पास के क्षेत्रों में ही हो जाता है। कम्ब्रिया क्षेत्र में प्रमुखतः घरेलू उपयोग का कोयला निकलता है जिसका पर्याप्त भाग अप्लेशियन के उस पार अटलांटिक तट के नगरों – न्यूयार्क, बाल्टीमोर, फलाडेलफिया को भेज दिया जाता है।

पैंसिलवेनिया तथा ओहियो राज्य सम्मिलित रूप से देश का लगभग 17% कोयला प्रस्तुत करते हैं। 1982 में इनका सम्मिलित उत्पादन लगभग 115 मिलियन शॉर्ट टन था।

(ब) मध्य अप्लेशियन कोयला क्षेत्र—अप्लेशियन क्रम के मध्यवर्ती क्षेत्र अपने कोकिंग कोयला के लिए विख्यात हैं। इस सम्भाग में कोयले की राशि का विस्तार लगभग 9500 वर्ग मील भू-क्षेत्र में है जो प्रशासनिक दृष्टि से तीन राज्यों —कैंटुकी, टैनेसी एवं वर्जीनिया में आता है। पश्चिमी वर्जीनिया उत्पादन की दृष्टि से बहुत आगे है। यह अकेला राज्य लगभग 100 मिलियन टन कोयला प्रस्तुत करता है। वर्जीनिया एवं टैनेसी दोनों मिलकर 46 मिलियन टन तथा कैंटुकी 150 मिलियन टन से अधिक कोयला पैदा करता है। कैंटुकी राज्य के कोयला क्षेत्र अप्लेशियन तथा भीतरी दोनों में विभक्त हैं। अप्लेशियन क्रम में कैंटुकी के पूर्वी कोयला क्षेत्र आते हैं। यह उल्लेखनीय है कि देश का लगभग 60% कोकिंग कोयला अप्लेशियन क्षेत्रों से निकाला जाता है जिसका तीन-चौथाई भाग इन मध्यवर्ती राज्यों से प्राप्त होता है।

मध्य अप्लेशियन कोयला क्षेत्रों का सम्पूर्ण प्रदेश पठारी एवं ऊबड़-खाबड़ है जिसमें खुदाई तथा ढुलाई अवश्य महँगी पड़ती हैं परन्तु इस क्षेत्र का भविष्य उज्जवल है क्योंकि यहाँ का अधिकतर उत्पादन उत्तम कोटि के कोकिंग कोयले का है जिसका उपयोग उत्तर में स्थित लोह-इस्पात के कारखानों में किया जाता है। पश्चिमी वर्जीनिया के कोयला क्षेत्रों के सन्दर्भ में न्यू रिवर प्रदेश उल्लेखनीय है क्योंकि इस राज्य की महत्वपूर्ण खदानें इसके आस-पास विद्यमान हैं। नदी के दक्षिण में पश्चिमी वर्जीनिया प्रमुख कोयला क्षेत्र स्थित है। जिसका विस्तार ड्रोवेल तथा मरकर काउंटीज में है। पास में ही वर्जीनिया राज्य का प्रधान क्षेत्र

ताजेवैल काउंटी में स्थित है। इस संभाग में तुगफोर्क तथा बिगसैंडी नदियों की ऊपरी घाटियाँ फैली हैं। इस भाग की ड़ंवी पर्तें अपने शुद्ध मुलायम कोक के लिए उल्लेखनीय हैं जिनसे उप-उत्पादन कोक तैयार किया जाता है। इस क्षेत्र से पश्चिमी वर्जीनिया राज्य के कुल उत्पादन का लगभग 2/5 भाग प्राप्त होता है। सम्भाग के दो पोकाहोन्टास तथा मैक डौवेल इस उत्पादन के अधिकतर भाग के लिए उत्तरदायी हैं। इन दोनों क्षेत्रों से, उत्तमकोटि का स्टीम-कोल उपलब्ध है जिसके बारे में अमेरिकन भूगर्भिक सर्वेक्षण विभाग की राय है कि यह कोयला वेल्स (ब्रिटेन) के स्टीमकोल के स्तर का है।[27]

पश्चिमी वर्जीनिया का दूसरा महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र न्यू रिवर प्रदेश है जहाँ कोयले की खदानें फायेटी तथा रैले नामक काउंटीज में कार्यरत हैं। क्षेत्र का विस्तार लगभग 25 मीलों में न्यू रिवर तथा गॉली नदियों के संगम के ऊपर है। इसी क्षेत्र का एक विस्तार भाग मुख्य क्षेत्र के दक्षिण में कोल नदी (न्यू रिवर की एक सहायक) के शीर्षस्थ क्षेत्र में स्थित है।

(स) दक्षिणी अप्लेचियन या अलाबामा कोयला क्षेत्र—पोकाहोन्टास से लगभग 400 मील दक्षिण में अप्लेचियन क्रम का तीसरा और धुर दक्षिणी कोयला क्षेत्र है जो अलाबामा राज्य के बर्मिंघम नगर के चारों ओर फैला है। अलाबामा राज्य के उत्तरी भाग में स्थित अधिकांश कोयला पर्तें खोद ली गयी हैं परन्तु बर्मिंघम के आस-पास सुरक्षित रूप में है। पिट्सबर्ग क्षेत्र की तरह यहाँ भी एक पर्त प्रमुख स्थिति लिए है। एक समय तो ऐसा भी रहा जबकि अलाबामा का सारा उत्पादन इसी पर्त से था यह पर्त जो प्राट-पर्त के नाम से जानी जाती है, वारियर कोयला क्षेत्र की प्रमुख स्रोत है। पर्त की मोटाई औसतन 4 फीट है परन्तु पिट्सबर्ग की पर्त की तरह यह सभी जगह समान मोटाई की नहीं है। इस कोयला क्षेत्र के अतिरिक्त दो क्षेत्र काहाबा तथा कूसा और उल्लेखनीय हैं जो कुछ पूर्व में स्थित हैं। प्राट पर्त से उत्तम कोटि का कोकिंग कोयला उपलब्ध है जिसने बर्मिंघम के लौह इस्पात उद्योग को प्रोत्साहित किया है। पास में ही लौह अयस तथा चूने की चट्टानों की उपलब्धि से बर्मिंघम का इस्पात दुनियाँ में सबसे सस्ता पड़ता है। इस राज्य का वार्षिक उत्पादन लगभग 27 मिलियन टन है जो स्थानीय उद्योगों में ही खप जाता है।

पूर्वी भीतरी कोयला क्षेत्र :

अप्लेचियन क्रम के कोयला क्षेत्रों के बाद यह दूसरे नम्बर का कोयला क्षेत्र है जिसका विस्तार इलीनॉय, इण्डियाना तथा पश्चिमी कैंटुकी आदि राज्यों में

---

27. Rodwell Jones & Bryan—North America, Methven, P. 262.

है। देश के कुल उत्पादन का लगभग 16% भाग इन क्षेत्रों से प्राप्त होता है। इस सम्भाग की खदानें मध्यम किस्म का बिटूमिनस कोयला उत्पादित करती हैं जिसमें गंधक की मात्रा ज्यादा होती है और अप्लेचियन क्रम की सभी किस्मों की तुलना में ताप कम देता है। परन्तु ये कोयला क्षेत्र भीतरी भाग के बाजारी केन्द्र नगरों (शिकागो, सेंटलुइ आदि) के पास स्थित हैं, अतः महत्वपूर्ण हैं। दूसरे, यह गुण भी कम महत्वपूर्ण नहीं कि इस भाग की खदानों में पर्तें धरातल के बहुत नजदीक हैं। अधिकतर खुदाई 50–60 फीट की गहराई पर होती है। कोयला प्रदेश का ग्राम-स्वरूप एक उथले बेसिन जैसा है जहाँ किनारे वर्ती क्षेत्रों में ऊपर उठे हुए भागों से कोयले की खुदाई होती है। पिटसबर्ग की तरह यहाँ भी पर्त की औसत मोटाई 6 फीट है। पर्तों में पानी की मात्रा बहुत ज्यादा है। गंधक और आर्द्रता के अंशों के कारण यहाँ का कोयला कोक बनाने का मतलब का नहीं है। अधिकतर उत्पादन का उपयोग घरेलू कार्यों में होता है।

ह्यूरन झील के दक्षिण-पश्चिम में स्थित मिशीगन राज्य की खानें घटिया किस्म का बिटूमिनस उत्पादित करती हैं। उत्पादन नगण्य है परन्तु झील मार्ग तथा पूर्व में औद्योगिक क्षेत्रों की निकटता ने इसे भी महत्वपूर्ण कर दिया है। उत्पादन मात्रा की दृष्टि से इलीनॉय और इण्डियाना राज्य उल्लेखनीय है जिनका सम्मिलित उत्पादन लगभग 85 मिलियन टन है।

पश्चिमी भीतरी कोयला क्षेत्र :

इस समूह के अन्तर्गत पश्चिमी, दक्षिणी-पश्चिमी, उत्तरी ग्रेट प्लेन्स तथा रॉकी पर्वत में स्थित कोयले के क्षेत्र शामिल किए जा सकते हैं। इन सब भागों में उत्पादन नगण्य है। समूह के सब कोयला उत्पादक राज्यों का सम्मिलित उत्पादन 50 मिलियन टन से अधिक नहीं है। आयोवा, कन्सास, मिसूरी एवं ओकलाहामा राज्यों में घटिया किस्म के बिटूमिनस कोयले की खानें है। उत्तर में मौंटाना उत्तरी तथा दक्षिणी डकोटा राज्यों में लिगनाइट पैदा होता है। थोड़ी सीमात्रा में बिटूमिनस भी मिलता है। टैक्सास तथा न्यू मैक्सिको राज्य में पहले थोड़ासा उत्पादन होता था परन्तु तेल की प्रतियोगिता ने इसे ठप्प कर दिया है।

पश्चिम के शुष्क भागों, विशेषकर कोलोरैडो, ओरेगन, ऊटाह व्योमिंग तथा वाशिंगटन आदि राज्यों में कोयले की सुरक्षित राशियां बिखरे रूप में विस्तृत भागों में विद्यमान है परन्तु उत्पादन दृष्टि से ये महत्वपूर्ण नहीं हैं। बहुत से क्षेत्रों में तो अभी खुदाई ही नहीं हुई है। उदाहरण के लिए कोलम्बिया नदी के बेसिन में कोयला के विस्तृत भंडार हैं परन्तु शोषण उचित पैमाने पर नहीं हो रहा है। वस्तुतः इन प्रदेशों के कोयला खनन उद्योग में कई प्रकार की बाधाएं हैं जिनके कारण वे अविकसित तथा अप्रयोगित पड़े हैं।

ये पठारी, शुष्क एवं कम बसे भाग हैं। औद्योगिक क्षेत्रों के रूप में खपत केन्द्र भी इस संभाग में बहुत कम हैं। यातायात साधनों का भारी अभाव है जिनसे कि देश के दूसरे भागों को यहाँ का उत्पादन पहुँचाया जाए। कठोर वातावरण, अवस्थित क्षेत्र व अन्य प्रतिकूल अवस्थाओं में खोदे गए कोयले का उत्पादन मूल्य ज्यादा बैठता है। पैट्रोल तथा गैस की तुलना में कोयले का शक्ति के साधन के रूप में उपयोग ज्यादा महँगा पड़ना है अतः सं. रा. अमेरिका जैसे विकसित देश में कोयले के विकास की सम्भावनाओं की ओर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया जाता है। पश्चिमी भाग अणु खनिजों के विशाल भंडार हैं। सरकार चाहती है कि उनका ही विकास हो। वे ज्यादा आर्थिक सिद्ध होंगे। निस्संदेह, कुछ क्षेत्रों का कोयला भी घटिया किस्म का है। इन परिस्थितियों में पश्चिमी अमेरिका में कोयला-व्यवसाय उन्नत नहीं हो पाया है। प्रशांत तटीय क्षेत्रों में अवश्य पिछली दशाब्दियों में कोयला का उत्पादन बढ़ा है। यहाँ कैलीफोर्निया तथा वाशिंगटन राज्य में पुगेटसाउंड के पास खुदाई होने लगी है।

वर्तमान में सं. रा. अमेरिका विश्व में सर्वाधिक मात्रा में कोयले का निर्यात करने वाला देश है। यहाँ का कोयला प्रमुखतः जापान तथा पश्चिमी यूरोप के देशों को जाता है जहाँ यह कम उत्पादन-मूल्य के कारण स्थानीय कोयले से भी प्रतियोगिता करने में समर्थ है।

पैट्रोलियम :

पिछले दशकों में पैट्रोल का शक्ति के साधनों के रूप में बड़ी तेजी से प्रसार हुआ है। इसकी खपत एवं उत्पादन मात्रा की दृष्टि से संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व में प्रथम स्थान पर है। अमेरिका की यह नेतृत्व की स्थिति पिछले 5-6 दशकों से अक्षुण्ण रही है। हाँ, उसके विश्व प्रतिशत में अन्तर आया है और वह भी बहुत तीव्रता से। जैसाकि निम्न सारणी से भी प्रकट है 1950 में यह अकेला विश्व के लगभग आधे तेल उत्पादन के लिए उत्तरदायी था। दस वर्ष पश्चात् यह प्रतिशत घटकर 36 हुआ और अगले दस वर्ष बाद घट कर 25% हो गया तथा वर्तमान में अमेरिका का शेयर प्रतिशत 20 से भी कम है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि अमेरिका के उत्पादन में ह्रास हुआ है। वस्तुतः आर्थिक-कूटनैतिक महत्व के इस तरल की खोज पिछले दशकों में इतनी तीव्रता से हुई कि अनेक भागों में नए तेल क्षेत्र प्राप्त हुए। दुनियाँ के अन्यान्य देशों में उत्पादन तेजी से बढ़ा। विशेषकर सोवियत संघ व मध्य पूर्व के देशों में तो वृद्धि गति बहुत तीव्र रही।

विश्व के प्रमुख पेट्रोल उत्पादक देश एवं उत्पादन

(उत्पादन 1000 मैट्रिक टनों में)

देश	1950	1960	1970	1983
कनाड़ा	3,800	27,480	69,954	76,500
मैक्सिको	10,269	14,125	21,877	149,000
वैनीज्वाला	78,140	148,690	193,209	97,500
सं. रा. अमेरिका	285,200	384,080	533,677	487,700
सोवियत संघ	37,500	148,000	352,667	618,000
रोमानिया	4,100	11,500	13,377	12,500
ईराक	6,650	47,480	76,600	46,000
ईरान	32,260	52,065	191,663	124,000
स. अरब	26,620	61,090	176,851	246,000
कुवैत	17,290	81,860	137,397	54.000
मिश्र	2,370	3,600	16,404	14,250
हिंदेशिया	6,450	20,560	42,102	63,000
समस्त विश्व	538,470	1,090,680	2,336,176	2,722,687

न केवल उत्पादन मात्रा वरन् सुरक्षित भंडारों की दृष्टि से भी सं. रा. अमेरिका तेल के मामले में धनी है। हाल के भूगर्भिक सर्वेक्षणों से पता चलता है कि इस देश की धरती में लगभग 27 अरब बैरल तेल विद्यमान है जो, अगर वर्तमान गति से ही खुदाई होती रही तो भी, अगले 100 वर्षों तक इस देश की तेल संबंधी आवश्यकता पूरी करने में समर्थ होगा। अनुमान है कि यहाँ के तेल क्षेत्रों का विस्तार लगभग 10,000 वर्ग मील भूमि में है। तेलयुक्त चट्टानें अधिकतर नयी रचनाओं में स्थित है। सर्वेक्षणों से पता चला है कि टेक्सास, कैलीफोर्निया एवं लूजियाना आदि राज्यों में विस्तृत रूप में सुरक्षित राशियाँ विद्यमान हैं। भूगर्भ-विदों का अनुमान है कि इन तीनों राज्यों में समस्त देश की सुरक्षित राशि का लगभग क्रमशः 40, 15 एवं 10 प्रतिशत भाग विद्यमान है। सुरक्षित राशि की दृष्टि से अन्य राज्यों में इलीनॉय, कोलोरेडो, न्यू मैक्सिको, ओकलाहोमा एवं व्योमिंग आदि उल्लेखनीय हैं। वर्तमान में उत्पादन-मात्रा का अधिकांश भाग टेक्सास, ओकलाहोमा, लूजियाना, न्यू मैक्सिको, कैलीफोर्निया, व्योमिंग, कन्सास, तथा इलीनॉय आदि राज्यों में उपलब्ध है।

सं. रा. अमेरिका के प्रमुख तेल उत्पादक राज्य

उत्पादन मिलियन बैरलस (1 बै = 42 गैलन) में

प्रदेश	राज्य	उत्पादन मात्रा 1982
उत्तरी पूर्वी	पैंसिलवेनिया	2.1
	इलीनॉय	24
	इण्डियाना	5
मध्य महाद्वीपीय	टैक्सास	945
	ओकलाहामा	154
	लूजियाना	158
	कन्सास	59
	अर्कन्सास	18.9
खाड़ी के तटवर्ती	अलाबामा	4.2
	मिसीसीपी	34.3
रॉकी क्रम	मोंटाना	31
	उत्तरी डकोटा	47
	व्योमिंग	82
	न्यू मैक्सिको	70.5
प्रशांत तट	कैलीफोर्निया	373

सं. रा. अमेरिका के तेल उद्योग की गाथा[28] केवल एक शताब्दी पुरानी है। 1850 में पैंसिलवेनिया राज्य में स्थित पिट्सबर्ग क्षेत्र में तेल निकला। ड्रेक नामक कूएं से उपलब्ध इस तेल से ही यहाँ के तेल उद्योग का इतिहास शुरू हुआ। सम्भावनाओं को देखते हुए शीघ्र ही अप्लेचियन-कूटिकाओं के पश्चिम भाग में स्थित इलीनॉय इण्डियाना व ओहियो आदि राज्यों के अनेक स्थानों पर कूएं खोदे गए और व्यापारिक स्तर पर तेल निकाला जाने लगा। वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक दशक में वायुयानों के विकास ने तेल उद्योग को और भी प्रोत्साहित किया। 1882 में जे. डी. रॉकफेलर का 'स्टैंडर्ड आयल ट्रस्ट' स्थापित हुआ जिसने शीघ्र ही सारे तेल व्यवसाय पर अधिकार कर लिया। उत्पादन, शोधन यहाँ तक कि वितरण की भी इकाइयाँ इस संगठन के अधिकार में आ गयीं।

---

28 पैट्रोलियम उत्पादन सम्बन्धी समस्त आंकड़े Statesman's year book 1984-85 पर आधारित।

1867 में कपास मेखला के दक्षिणी पश्चिमी कोने में एक स्थान पर तेल उपलब्ध हुआ, परन्तु उत्पादन बहुत कम था। यह स्थानीय महत्व का ही रहा। दक्षिण-पश्चिम में व्यापारिक स्तर पर तेल उत्पादन 1890 से प्रारम्भ हुआ जबकि टैक्सास राज्य में कौर्सिकाना नामक स्थान पर तेल उपलब्ध हुआ। यहां बड़ी तेजी से उत्पादन व व्यवसाय बढ़ा। 1895 में टैक्सास का उत्पादन जो केवल 50 बैरल था 1897 में बढ़कर 66,000 बैरल हो गया। अगले वर्ष में बढ़कर यह 546,000 बैरल हो गया। अगले वर्षों में भी नए तेल क्षेत्रों की खोज के प्रयत्न किए गए परन्तु उल्लेखनीय उपलब्धि 1911 से पहले न हो सकी जबकि टैक्सास राज्य में विचिता प्रपात के पास एलेक्ट्रा क्षेत्र में भारी मात्रा में तेल का भंडार मिला। अगले वर्षों में और भी तेजी से नए क्षेत्रों की खोज के प्रयास किए गए फलस्वरूप कई नए क्षेत्र मिले जिनमें टैक्सास राज्य के रेंजर, बर्क बर्नेट, मैक्सिया तथा पौवेल तथा अर्कन्सास राज्य के स्मैकोवर तथा एल-डौरेडो आदि क्षेत्र उल्लेखनीय हैं। लूजियाना तथा ओकलाहामा राज्य में भी कई नए तेल क्षेत्र मिले। पिछली शताब्दी के अन्तिम दिनों में ही कैलीफोर्निया राज्य में भी तेल उद्योग का श्रीगणेश हुआ।

1930 का वर्ष अमेरिकन तेल उद्योग में क्रांति का वर्ष माना जाता है। और यह क्रांति हुई पूर्वी टैक्सास के भारी तेल भंडार का इस वर्ष पता लगने से। पूर्वी टैक्सास का यह तेल क्षेत्र बाद के वर्षों में विश्व का सबसे महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र सिद्ध हुआ जिसने दक्षिण-पश्चिमी यू.एस.ए. के आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्रों पर भारी प्रभाव डाला। इसकी खोज का इतिहास भी मनोरंजक है। उल्लेखनीय है कि पहले इस सम्भाग को भूगर्भविदों ने तेल-सम्भावनाओं की दृष्टि से रद्द कर दिया था क्योंकि यहां कोई भी ऐसा चिन्ह उन्हें प्राप्त नहीं हुआ जो अन्य तेल क्षेत्रों में सम्भावनाओं के प्रतीतात्मक रूप में मिले थे। फलतः किसी भी बड़ी कम्पनी ने यहां तेल के लिए कूएं नहीं खोदे। छोटे-छोटे भूस्वामी निजी स्तर पर प्रयत्नशील अवश्य थे। इन्हीं में से एक सी. एम. जोइनर नामक व्यक्ति को 8 सितम्बर 1930 को क्षेत्र के दक्षिण में रस्क काउंटी में एक कूएं में तेल मिला।[29] यह उसके द्वारा खोदा गया तीसरा कुआं था। दो कूएं सूखे निकल गये थे। इस कूएं से प्राप्त मात्रा (300 बैरल प्रति दिन) भी कोई ज्यादा उत्साहजनक नहीं थी। 28 दिसम्बर, 1930 को दूसरा कुआं वरदान सिद्ध हुआ जिसका दैनिक उत्पादन 10 से 15,000 बैरल तक था। फिर क्या था आस-पास अनेक कूएं खोदे गए, सभी तेल से भरपूर मिले फलतः आर्थिक क्षेत्र में क्रांति हो गई। अगले वर्षों में प्रतिवर्ष कितने नए कूएं खोदे गए यह तथ्य अग्रलिखित सारणी द्वारा सुस्पष्ट है।

---

29. White and Foscue--Regional Geography of Anglo-America.Second ed.p. 175.

पूर्वी टैक्सास में खोदे गए तेल के कूएं[30]

वर्ष	तेल के कूएँ	गैस के कूएँ	शुष्क कूएँ
1930	5	0	0
1931	3,299		41
1932	5,723	6	64
1933	2,424	0	27
1934	3,696	6	60
1935	3,999	4	121
1936	2,509	1	117
1937	2,380	2	84
1938	1,765	0	41
1939	417	0	8

चूँकि पूर्वी टैक्सास क्षेत्र पूर्णतः निजी स्वामित्व में था अतः सभी ने, जिनके पास आर्थिक साधन थे, कूएँ खोदे। फल यह था कि लगभग 42 मील लम्बे और 9 मील चौड़े इस भूखण्ड में 27,000 से ज्यादा कार्यरत कूएँ हो गए। कई छोटे-छोटे जैसे किलगोरे या ग्लैडी वाटर आदि विकसित हो गए। पूर्वी टैक्सास के इस समृद्ध तेल क्षेत्र में उत्पादन इतना अधिक था कि थोड़े ही दिनों में अमेरिकन बाजारों में तेल की बाढ़ आ गयी। फलतः मूल्य गिरा। इस क्षेत्र की खोज के समय पैट्रोल प्रति बैरल कीमत 1.1 डालर थी जो घट कर 15 सेंट हो गई। इससे सारा अमेरिकन तेल उद्योग चरमरा उठा। अन्ततः 17 अगस्त 1931 को टैक्सास के गवर्नर ने सम्बन्धित पक्षों की एक मीटिंग बुलायी। राष्ट्रीय स्तर पर भी इस पर विचार-विमर्श हुआ और निष्कर्ष यह निकला कि उत्पादन की निश्चित मात्रा की व्यवस्था की गयी। परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध में उत्पादन तेजी से बढ़ा। आवश्यकता थी अतः संघीय सरकार ने भी इसमें सहयोग दिया। इस प्रकार तेल उत्पादक राज्यों की परस्पर प्रतिस्पर्धा में कमी आयी। वर्तमान में यहाँ का तेल उद्योग लगभग प्रौढ़ावस्था में है। उत्पादन वृद्धि भी संतुलनात्मक स्थिति में है।

सं० रा० अमेरिका में तेल उत्पादन

1966	1967	1968	1969	1982
3,069	3,217	3,329	3,371	3,146

30. ibid. p. 176.

(उत्पादन इकाई-मिलियन बैरल में)

सं० रा० अमेरिका के तेल क्षेत्रों को निम्न प्रादेशिक स्वरूपों में समूहबद्ध किया जा सकता है।

1. मध्य महाद्वीपीय तेल क्षेत्र।
2. खाड़ी के तेल क्षेत्र।
3. कैलीफोर्निया के तेल क्षेत्र।

चित्र-16

उपर्युक्त तीन मुख्य क्षेत्रों के अतिरिक्त दो गौण क्षेत्र हैं।

4. रॉकी श्रृंखला के तेल क्षेत्र।
5. उत्तरी पूर्वी तेल क्षेत्र।

मध्य महाद्वीपीय तेल क्षेत्र :

यह सं. रा. अमेरिका का सबसे अधिक महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र है जिसमें देश के 50% से अधिक तेल का उत्पादन होता है। न केवल अमेरिका वरन् उत्पादन की दृष्टि से यह विश्व का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण तेल क्षेत्र है। इसका महत्व यह तथ्य जानकर और भी बढ़ जाता है कि यहाँ यह व्यवसाय पूर्वी भागों के बाद पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में प्रारम्भ हुआ। इस तेल क्षेत्र का विस्तार टैक्सास, ओकलाहामा, अर्कन्सास, लूजियाना, कन्सास तथा न्यू मैक्सिको आदि राज्यों में है। इन राज्यों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण टैक्सास है जो अकेला इस क्षेत्र का दो-तिहाई से अधिक तेल के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है।

टैक्सास राज्य न केवल इस प्रदेश या सं० रा० अमेरिका वरन् विश्व की सबसे अधिक तेल उत्पादकों का रिकार्ड है। यह राज्य सम्पूर्ण अमेरिका का एक-तिहाई (1200 मिलियन बैरल से अधिक) प्रस्तुत करता है। यह उत्पादन मात्रा विश्व के कुछ देशों से ज्यादा है। सौभाग्य से इस राज्य के प्रत्येक हिस्से में तेल निकलता है। यह तेल ही है जिसने इस अर्द्ध शुष्क राज्य को कुछ वर्षों की अवधि में ही इतना धनी बना दिया है कि सम्पूर्ण राज्य की काया पलट हो गयी है। और यह भी तेल ही है जिसने टैक्सास निवासियों को एक तरह से बौरा दिया है। इसी के उन्माद में उन्होंने अनुदारवादी होने की ख्याति या कुख्याति अर्जित की है। वस्तुतः इसी अनुदार भावना के शिकार कैनेडी बंधु तथा मार्टिन लूथर किंग जैसे लोकप्रिय उदारवादी नेता हुए। तेल गैस से प्राप्त धन के आधार पर चन्द वर्षों (पिछले 40 वर्ष) में इस शुष्क राज्य ने इतना आर्थिक विकास किया कि जिसकी मिशाल सारी दुनियाँ के इतिहास में नहीं मिलती। 1968 में यहाँ देश के 46.9 प्रतिशत सुरक्षित तेल भंडार आंके गए।

धरातलीय दृष्टि से, महाद्वीपीय तेल-क्षेत्रों का विस्तार उस भू-भाग में है जो मिसीसीपी के पश्चिम, मिसूरी के दक्षिण, रॉकी श्रृंखला के पूर्व एवं खाड़ी के तटवर्ती प्रदेशों के उत्तर में स्थित है। अध्ययन की सुगमता के लिए इस समूह के तेल क्षेत्रों को निम्न चार उप-समूहों में रखा जा सकता है:

(अ) ओकलाहामा-अर्कन्सास क्षेत्र—क्षेत्रीय विस्तार की दृष्टि से मध्य महाद्वीपीय तेल समूह का सबसे बड़ा यह तेल क्षेत्र ओजार्क पर्वत के पश्चिम में स्थित है। महत्त्वपूर्ण कूएँ ओकलाहामा राज्य के पूर्वी तथा अर्कन्सास राज्य के दक्षिणी भाग में विद्यमान हैं। इन्हीं कूओं में विश्व प्रसिद्ध कुशिंग ग्लैन, वाटर्सविले, जैनिंग्स व शैमरॉक आदि शामिल हैं जिनका नाम इस सम्भाग के तेल उद्योग के विकास के इतिहास में उल्लेखनीय है। अगर इस क्षेत्र तथा टैक्सास लूजियाना क्षेत्र की उत्पादन मात्रा को जोड़ दिया जाए तो सम्मिलित उत्पादन सं० रा० अमेरिका में सर्वाधिक तथा विश्व के कुल उत्पादन का लगभग 15% होगा। मध्य महाद्वीपीय तेल समूह के कूओं में कुशिंग सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है जिसने अकेले ही 1912-7 के पांच वर्षों में 170 मिलियन बैरल तेल उत्पादित किया। उन दिनों इस अकेले कूएँ का उत्पादन मैक्सिको (उस समय तेल उत्पादन में दुनियाँ के दूसरे स्थान पर) के बराबर था। उत्पादन मात्रा की दृष्टि से ओकलाहामा देश का चौथा राज्य है।

(ब) ओकलाहामा, उत्तरी टैक्सास क्षेत्र—यह तेल रैड नदी के सहारे-सहारे फैला है जिसके महत्त्वपूर्ण तेल के कूएँ दक्षिणी ओकलाहामा तथा उत्तरी-पश्चिमी टैक्सास में स्थित हैं। टैक्सास के पैन-हैण्डिल जिले में इस दिशा में काफी विकास हुआ है। यहाँ से पाइप लाइनें सीधे तेल-बाजारों तक बिछा दी गयी हैं।

तेल शोधन के प्लांट्स भी यहां लगा दिए गए हैं। रैड नदी के सहारे-सहारे जमीन अपेक्षाकृत मुलायम है जिसमें कूएँ खोदना आसान है।

चित्र 21

(ख) मध्य टैक्सास क्षेत्र—मध्य टैक्सास का तेल उद्योग 1890 की एक घटना के फलस्वरूप हुआ जबकि कौसिकाना नामक स्थान पर पानी के लिए एक कूआं खोदा गया। यह कस्बा (कौसिकाना) ट्रिनिटी नदी की एक सहायक जल-धारा के किनारे बसा है। सर्वेक्षण किया गया तो पता चला कि इस सम्भाग में तेल धरातल के पर्याप्त निकट है। अतः कूओं की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ी। कौसिकाना एवं उससे 8 मील की दूरी पर स्थित पौवेल कूएँ ने मिलकर 1906 में लगभग एक मिलियन बैरल तेल उत्पादित किया।

(द) उत्तरी-पूर्वी टैक्सास एवं उत्तरी-पश्चिमी लूजियाना क्षेत्र-यह तेल क्षेत्र रैड नदी की निचली घाटी में स्थित हैं जहाँ प्रसिद्ध तेल केन्द्र कैडो-डी-सोटो नदी के बिल्कुल पास ही स्थित है। यहाँ से तेल पाइप लाइनों द्वारा सेबाइन लेक-पोर्ट्स को भेज दिया जाता है। खाड़ी तट के निकट स्थित होने के कारण शोधन कार्य यहाँ सीमित है। ज्यादातर क्रूड-ग्रायल तटवर्ती तेल शोधक कारखानों को भेज दिया जाता है। लूजियाना राज्य टैक्सास के बाद तेल उत्पादन की दृष्टि से अमेरिका में दूसरे स्थान पर है जहाँ का वार्षिक उत्पादन 800 मिलियन बैरल से अधिक है।

खाड़ी के तेल क्षेत्र :

पैट्रोल एवं प्राकृतिक गैस ही खाड़ी के तटवर्ती क्षेत्रों की ग्राथिक आधार हैं। खाड़ी के तेल क्षेत्र विश्व के प्रसिद्ध तेल क्षेत्रों में से एक हैं और उत्तरी अमेरिका में मध्य-महाद्वीपीय तेल क्षेत्रों के बाद दूसरे नम्बर पर माने जाते हैं। इनका विस्तार तट के सहारे-सहारे टैक्सास तथा लूजियाना राज्यों में है। इस क्षेत्र में तेल पट्टी का विस्तार तट के भीतर की ओर लैगून एवं दलदलों के पीछे शृंखलाबद्ध रूप में तेल प्रतिनीतियों में नहीं वरन् उन गुम्बदाकार टीलों में पाया जाता है जो स्थानीय ऊँचाइयों के सादृश्य यत्र-तत्र स्थित हैं। इनमें खार की मात्रा ज्यादा है। तेल गैस के दबाव के फलस्वरूप ऊपर आता है। यद्यपि तेल पट्टी का विस्तार टैक्सास राज्य के माना गोर्दा कस्बे से मिसीसीपी तक लगभग 400 मील में है परन्तु मुख्यतः कूएँ हाउस्टन तथा सेबाइन नदियों के बीच स्थित एक छोटे से क्षेत्र में स्थित है।

खाड़ी क्षेत्र के तेल उद्योग का श्रीगणेश 1901 में स्पिण्डिल टॉप नामक कूएँ में तेल की उपलब्धि के साथ हुआ। बाद में तटवर्ती लैगून-दलदल शृंखला के पीछे हजारों कूएँ खोदे गए। इसी क्रम में मम्बले, गूजक्रीक, तथा सारा टोगा जैसे महत्व-पूर्ण कूएँ भी प्राप्त हुए। 1916 में अकेले गूजक्रीक का उत्पादन 3 लाख बैरल था। भूगर्भिक सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि तेल की पट्टी आगे खाड़ी की ओर बढ़ी हुई है। अतः आजकल महाद्वीपीय चबूतरे में तेल के कूएँ खोदे जा रहे हैं। खाड़ी के अन्दर के तेल भंडारों पर संघीय सरकार व सम्बन्धित राज्यों के बीच विवाद भी हुआ। अन्त में अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट ने 1960 में इस बारे में फैसला किया जिसके अनुसार टैक्सास का 9 तथा लूजियाना का 3 नॉटिकल मील तक के तेल भंडारों पर अधिकार होगा।[31] इस फैसले का सीधा प्रभाव लूजियाना राज्य पर यह हुआ कि अब वह उन 1500 तेल कूओं से प्राप्त रॉयल्टी का दावेदार नहीं है जो 3 नॉटिकल मील से आगे जल में स्थित हैं।

---

31. Hudson F. S.—North America Second edi. 1968 p. 272.

खाड़ी क्षेत्र से उत्पादित अधिकांश तेल बहुत भारी है एवं ईंधन के रूप में प्रयुक्त अति होने के लिए उत्तम है। शोधन की व्यवस्था तट पर स्थित बंदरगाहों में है। यहाँ से बहुत-सा तेल तटवर्ती औद्योगिक संस्थानों तथा शेष अटलांटिक तटीय नगरों को चला जाता है।

कैलीफोर्निया के तेल क्षेत्र :

कैलीफोर्निया की घाटी में तेल उद्योग का श्रीगणेश तो 1870 में ही हो गया था। वास्तविक विकास 50 वर्ष बाद हुआ जबकि कई महत्वपूर्ण तेल भंडार मिले। यहाँ के तेल क्षेत्रों में (अ) लॉस एंजिल्स (विलिमिंगटन केन्द्र) (ब) सांता बारबरा (वेंतुरा, सांतामारिया) (स) कुयामा तथा सैलिनॉस एवं (द) सान जोआक्विन (वेकर्स फील्ड) आदि महत्वपूर्ण हैं। सांता बारबरा क्षेत्र में समुद्र के भीतर भी तेल की खुदाई कार्यरत है। लॉस एंजिल्स तथा वेकर्स फील्ड में अनेक तेल-शोधक कारखाने हैं जिनमें यहाँ का क्रूड ऑयल साफ करके प्रशांत तटीय नगरों को पाइप लाइनों द्वारा भेजा जाता है। कैलीफोर्निया उन तीन (टैक्सास, लूजियाना एवं कैलीफोर्निया) सुरक्षित राशि वाले राज्यों में से एक है जिनके ऊपर देश की भावी तेल-पूर्ति निर्भर करती है। उत्पादन की दृष्टि से कैलीफोर्निया राज्य टैक्सास तथा लूजियाना के बाद तीसरे स्थान पर है। अमेरिका में उत्पादित प्रत्येक 10 गैलन पैट्रोल में से एक गैलन पैट्रोल कैलीफोर्निया के तेल क्षेत्रों से होता है।

रॉकी तेल क्षेत्र :

इस शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में शृंखला के आस-पास के क्षेत्रों में स्थित नवीन परतदार चट्टानों में तेल का सर्वेक्षण किया गया जिसके फलस्वरूप मौंटाना, व्योमिंग, कोलोरैडो आदि राज्यों में तेल की प्राप्ति तो हुई परन्तु मुख्य बसाव तथा औद्योगिक केन्द्रों से दूर होने के कारण इनका ज्यादा विकास नहीं हो सका। निस्संदेह स्थानीय माँग की दृष्टि से ये महत्वपूर्ण हैं। उत्पादन की दृष्टि से व्योमिंग तथा न्यू मैक्सिको उल्लेखनीय हैं जो क्रमशः 82 तथा 70.5 बैरल (1982) तेल उत्पादित करते हैं। सम्मिलित रूप से यह क्षेत्र का लगभग 7% तेल प्रस्तुत करता है।

उत्तरी-पूर्वी तेल क्षेत्र :

यह देश का सबसे पुराना परन्तु ह्रासोन्मुख तेल क्षेत्र है जिसके अन्तर्गत पैंसिलवेनिया, पूर्वी ओहियो, इण्डियाना इलीनॉय तथा कैंटुकी के तेल केन्द्र शामिल किए जा सकते हैं। उत्पादन मात्रा की दृष्टि से (24 मि. बै.) इलीनॉय राज्य ही कुछ सीमा तक महत्वपूर्ण है अन्यथा अन्य राज्यों में औसतन 10 मि० बै० से भी कम तेल पैदा होता है जो अमेरिका के विशाल तेल उद्योग में कोई मायना नहीं रखता। निस्संदेह पैंसिलवेनिया राज्य का तेल क्वालिटी की दृष्टि से उल्लेखनीय

है। तेल के साथ-साथ यहाँ प्रा. गैस भी उपलब्ध है। पैंसिलवेनिया में तेल केन्द्र दक्षिण-पश्चिम में स्थित हैं। इसी क्षेत्र से अमेरिका के तेल उद्योग का श्रीगणेश हुआ। पास में ही इलीनॉय के तेल क्षेत्र हैं जहाँ तेल की पट्टी का विस्तार मिशीगन झील के दक्षिणी भाग से लेकर ओहियो नदी तक है। प्रधान कूएँ क्लार्क, क्रौफोर्ड तथा लारेंस आदि काउंटीज में स्थित हैं।

इस समूह का तीसरा केन्द्र ओहियो राज्य के लीमा नगर के आस-पास है जिसका विस्तार पूर्व में ओहियो, पश्चिम में मिसीसीपी तथा उत्तर में झीलों के बीच है। यहाँ पिछली शताब्दी के अन्तिम वर्षों (1885) से ही तेल का उत्पादन हो रहा है। इण्डियाना राज्य के तेल के कूएँ ओहियो से लगती सीमा के निकट हैं जहाँ तेल उत्पादन वर्तमान सदी की प्रथम दशाब्दी से हो रहा है। लीमा-इण्डियाना क्षेत्र के तेल में गंधक की मात्रा ज्यादा होने के कारण औद्योगिक क्षेत्रों में उसकी माँग कम है। इस घटिया किस्म के तेल का स्थानीय महत्व अवश्य है।

प्राकृतिक गैस :

प्राकृतिक गैस दुनियाँ के अधिकतर भागों में उन्हीं क्षेत्रों से प्राप्त होती है जहाँ पैट्रोल निकलता है। परन्तु कुछ ऐसे भी क्षेत्र होते हैं जहाँ केवल गैस के ही भंडार हैं। सं. रा. अमेरिका में कई क्षेत्रों में गैस की खोज तेल के साथ-साथ ही पिछली शताब्दी के अन्तिम दशकों में हो चुकी थी परन्तु इसका वास्तविक विकास उपयोग में वृद्धि के साथ-साथ इसी शताब्दी में हुआ। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद तो इसका प्रयोग इस देश के प्रत्येक घर में होने लगा है। तेल की तरह गैस के उत्पादन में भी सं. रा. अमेरिका विश्व में प्रथम है 1982 में प्राकृतिक गैस का उत्पादन 20, 376,000 मिलियन घन फुट था। उत्पादन कितनी तेजी से बढ़ रहा है इसका अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि पिछले 15 वर्षों में 25% की वृद्धि हुई। यथा, 1965 में उत्पादन मात्रा 16,080,753 मिलियन घन फुट थी। 90% प्राकृतिक गैस तेल क्षेत्रों से प्राप्त होती है। इस प्रकार मध्य महाद्वीपीय तेल क्षेत्र कैलीफोर्निया एवं खाड़ी के तटवर्ती तेल क्षेत्र देश के प्रधान गैस उत्पादक क्षेत्र हैं। प्रधान गैस उत्पादक राज्य एवं उनका उत्पादन निम्न प्रकार है—

सं. रा. अमेरिका में गैस उत्पादन–1982

उत्पादक राज्य	उत्पादन मात्रा (मि. घन फुट में)	उत्पादक राज्य	उत्पादन मात्रा (मि. घन फुट में)
टैक्सास	7,010,000	मिसीसीपी	229,404
न्यू मैक्सिको	965,447	पैंसिलवेनिया	122,454
कैलीफोर्निया	378,000	मौंटाना	56,565
कोलोरेडो	146,000	कंसास	1,211

उल्लेखनीय है कि सं. रा. अमेरिका का प्राकृतिक गैस का उत्पादन सोवियत संघ से चार गुना तथा कनाड़ा से ग्यारह गुना अधिक है और इस सारी उत्पादित मात्रा का उपयोग देश में हो जाता है। इस शताब्दी में गैस घरेलू कार्यों में तो ईंधन के रूप में लोकप्रिय हुई ही है साथ ही कुछ उद्योगों जैसे सीमेंट, कांच, प्लास्टिक तथा कृत्रिम रेशे निर्माण में इसका प्रयोग काफी बढ़ गया है। तेल के समान ही उत्पादक क्षेत्रों तक गैस की पाइप लाइनें बिछाई गयी हैं।

विद्युत शक्ति :

सं. रा. अमेरिका में विद्युत उत्पादन के लिए कोयला, पैट्रोल एवं जल तीनों ही प्रयोग में लाए जाते हैं। कुल विद्युत उत्पादन में से 1/5 भाग जल तथा शेष 4/5 भाग कोयला तथा पैट्रोल से सम्बन्धित होता है। भीतरी भागों में प्रायः सभी जगह तापशक्ति गृहों का प्रचलन है, केवल उच्च प्रदेशों तथा नदियों की घाटियों में जल-शक्ति-गृह स्थापित हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जल-विद्युत उत्पादन क्षमता एवं वास्तविक उत्पादन की दृष्टि से भी यह देश विश्व में प्रथम है। उत्तरी अमेरिका अन्य सभी महाद्वीपों से उत्पादन-क्षमता में कहीं आगे है। सम्भावित राशि की दृष्टि से भी केवल अफ्रीका को छोड़कर यह प्रथम है। वर्तमान में यहाँ कुल विद्युत उत्पादन 1,000,000 मिलियन कि. वा. घ. से ज्यादा है। जिसमें से लगभग 8,00,000 मि. वा. घ. ताप साधनों से तैयार होती है।

देश के ज्यादातर सम्भावित उत्पादक क्षेत्र पश्चिमी पर्वत श्रेणियों, प्रशांत तट, न्यू इंगलैंड बेसिन तथा मिसीसीपी बेसिन में है। प्रायः सभी बड़ी नदियों को शक्ति उत्पादन में संलग्न कर लिया गया है, फिर भी लगभग 110 मिलियन कि. वा., सम्भावित शक्ति और है जिसका आधे से अधिक भाग पश्चिमी पर्वतीय भागों तथा प्रशांत तटीय क्षेत्र में स्थित है। अकेले वाशिंगटन राज्य में सम्भावित राशि का 1/6 भाग विद्यमान है। यहाँ कोलम्बिया नदी पर विशाल ग्रांडकूली एवं बोनविले बांध बना दिए गए हैं फिर भी विशाल सम्भावनाएँ बाकी हैं। इस प्रकार की भारी उत्पादित एवं सम्भावित राशियाँ कोलोरेडो, स्नेक, सानजुआन व अन्य नदियों से सम्बन्धित हैं। वस्तुतः पश्चिमी एवं उत्तर-पश्चिम में इन अर्द्ध-शुष्क प्रदेशों में, जहाँ कोयला तथा पैट्रोल का अभाव है, जल विद्युत एक महत्वपूर्ण वरदान है जिसके सदुपयोग के पूर्ण प्रयत्न किए गए हैं और किये जा रहे हैं। हूवर (कोलोरेडो नदी पर) तथा ग्रांडकूली (कोलम्बिया नदी पर) विशाल बांधों के निर्माण में विद्युत शक्ति उत्पादन भी महत्वपूर्ण लक्ष्य रहा है। इनके अतिरिक्त मैक क्लाउड, फेदर, किग्स, सान डियेगो, सैलिनास, सान गैब्रियल, सांतानेज तथा मैड आदि नदियों की घाटियों में जल-विद्युत की भारी सम्भावनाएँ मौजूद हैं।

मिसीसीपी बेसिन, न्यू इंगलैंड प्रदेश पीडमांट पठार आदि प्रदेश भी जल-विद्युत उत्पादन एवं सम्भावित राशि की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। भारी वर्षा, बंसन

ऋतु में हिम पिघलाव, पर्याप्त प्राकृतिक झीलें, हिम-निर्मित अनेक जल धाराएं आदि प्राकृतिक परिस्थितियों ने न्यू इंगलैंड प्रदेश को इस दृष्टि से भाग्यवान बनाया है। अप्लेचियन क्रम से निकलकर अनेक नदियाँ अटलांटिक तटवर्ती मैदान की ओर जाती हैं। स्वाभाविक रूप से अप्लेचियन क्रम की प्राचीन कठोर चट्टानों तथा तटवर्ती पट्टी की नवीन चट्टानों के संधि-क्षेत्र में अनेक प्राकृतिक जल प्रपातों का उदय हुआ है जो जल-विद्युत के लिये आदर्श हैं। इन सभी पर शक्ति-गृह स्थापित किए गए हैं। सामूहिक रूप से इसे 'प्रपात पंक्ति' के नाम से जाना जाता है। उत्पादित विद्युत अटलांटिक तट के नगरों को सप्लाई की जाती है।

मिसीसीपी नदी में मिसूरी, ओहियो, टैनेसी आदि कई बड़ी नदियाँ आकर मिलती हैं। जिनके अधिकतम और निम्नतम बहावों के पृथक-पृथक समय हैं। फलतः बेसिन में जल की मात्रा वर्ष के ज्यादातर समय में पर्याप्त रहती है। यह तत्व जलविद्युत उत्पादन के लिए आदर्श हैं। धरातलीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मिसीसीपी में जल-विद्युत उत्पादन की कई योजनाएं बनायी गयी हैं जिनमें 'टैनेसी घाटी योजना' सबसे महत्वपूर्ण है। टैनेसी घाटी योजना वस्तुतः यहाँ की एक बहु-उद्देशीय योजना है जिसके अन्तर्गत टैनेसी को 32 बाँधों एवं जलाशयों में बाँधा गया है। पहले यह नदी अपनी भीषण बाढ़ों के लिए विख्यात थी। 1933 में केन्द्रीय सरकार ने 'टैनेसी वैली ऑथोरिटी' की स्थापना की और न केवल बाढ़ को समाप्त करना वरन् विद्युत उत्पादन नाव्य विकास, मत्स्य विकास आदि लक्ष्य भी इस योजना में रखे गये। 32 बाँधों में से 9 बाँधों के निकट शक्ति गृह स्थापित किए गए हैं जिनसे उत्पादित शक्ति का विवरण निम्न प्रकार है।

टैनेसी नदी पर बाँध

	ऊँचाई	स्थिति	पूर्ण हुआ–	उत्पादन क्षमता
1. केंटुकी	160 फी.	22.4 मील	1914	160,000 कि. वा.
2. पिकविक	113 फी.	206.7 मील	1938	216,000 कि. वा.
3. विल्सन	137 फी.	259.4 मील	1926	444,000 कि. वा.
4. व्हीलर	72 फी.	274.9 मील	1937	259,000 कि. वा.
5. गुंटर्सविले	94 फी.	349.0 मील	1935	97,000 कि. वा.
6. हेल्स बार	83 फी.	431.1 मील	1913	50,483 कि. वा.
7. चीकामौगा	129 फी.	471.0 मील	1941	108,000 कि. वा.
8. वाटस बार	97 फी.	529.9 मील	1942	159,000 कि. वा.
9. फोर्ट लोडोन	135 फी.	602.3 मील	1944	96,000 कि. वा.

□□□

सं० रा० अमेरिका : लौह एवं इस्पात मिश्रित धातुएं

न केवल कोयला, पेट्रोल या अन्य खनिजों ईंधनों में ही वरन् आधुनिक औद्योगिक विकास के आधार रूप में वांछनीय लौह तथा इस्पात मिश्रण की धातुओं में भी सं० रा० अमेरिका बहुत धनी है। लौह-अयस उत्पादक देशों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। 1957 तक यह देश लौह-अयस के उत्पादन में विश्व में प्रथम था। इस वर्ष यहाँ का उत्पादन 55.4 मिलियन लौंग टन था जो विश्व के समस्त उत्पादन का लगभग एक-चौथाई भाग बनाता था। बाद के वर्षों में सोवियत संघ आगे निकल गया। इस समय अमेरिका दूसरे नम्बर पर है। दोनों महाशक्तियों की तुलना करने पर, लौह-अयस के उत्पादन के संदर्भ में, एक तथ्य सुस्पष्ट है। वह यह है कि इस क्षेत्र में सोवियत संघ की वृद्धि-दर बहुत ज्यादा है। साथ ही कभी-कभी ऐसा प्रतीत होने लगता है कि अमेरिका का उत्पादन घट रहा है। निम्न आंकड़ों से यह प्रवृत्ति सुस्पष्ट है।

सोवियत संघ तथा सं० रा० अमेरिका में लौह उत्पादन[32]

वर्ष	1913	1940	1950	1960	1969	1983
सोवियत संघ (मि० टनों में)	9.2	29.9	39.7	106.2	186.1	245.0
वर्ष	1965	1966	1967	1968	1969	1981
सं० रा० अमेरिका (मि० लौंग टनों में)	84.4	90.0	82.4	81.9	89.8	72.1

32. दोनों देशों के उत्पादन सम्बन्धी आंकड़े Statesman's year books 1965-66 to 84-85 पर आधारित।

अमेरिका का इस्पात उद्योग विश्व में सबसे विशाल है। स्वाभाविक है उसे भारी मात्रा में अयस की आवश्यकता होती है। अपने उत्पादन के अतिरिक्त शेष मात्रा की पूर्ति यह लैटिन अमेरिका, स्वीडन, कनाडा तथा स्पेन जैसे देशों से करता है।

एक समृद्ध एवं उन्नत लोह इस्पात उद्योग के लिए इस्पात-मिश्रण की धातुएँ भी उतनी ही आवश्यक है जितना लोह-अयस। इस मिश्रण का धातुओं की दृष्टि से सं. रा. अमेरिका एक धनी देश है। यहाँ पर्याप्त मात्रा में मैंगनीज, मॉल विडीनम, वैनीडियम, कोबाल्ट, निकिल, क्रोमियम तथा टंगस्टन उपलब्ध है। इस्पात-उद्योग के लिए इनकी उपलब्धि वरदान है कारण कि इस्पात को मजबूत, टिकाऊ एवं जंगरहित बनाने के लिए उसमें इनका मिश्रण आवश्यक है। यह देश विश्व के समस्त उत्पादन के 70% मॉल विडीनम, 60% वैनीडियम, 40% टिटैनियम तथा 12% कोबाल्ट के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। यह उल्लेखनीय है कि इन धातुओं का अधिकांश भाग पश्चिम के अर्द्ध शुष्क राज्यों में उपलब्ध है। कोलोरैडो, न्यू मैक्सिको, ऊटा, एरीजोना, नेवादा, मौंटाना आदि राज्यों के अर्द्ध शुष्क उच्च पठारी भाग इस दृष्टि से भारी महत्वपूर्ण हैं।

इस्पात मिश्रण की धातुओं में मैंगनीज का स्थान सर्वोपरि है। यह धातु सभी प्रकार के इस्पातों में मिलाई जाती है। मैंगनीज कच्चे लोहे के कई अणुओं को दूर कर उसे मजबूत एवं टिकाऊ बनाता है। एक टन इस्पात में लगभग 15 पौंड मैंगनीज मिलाया जाता है। यह धातु प्रायः परतदार चट्टानों में एवं कहीं-कहीं लोह अयस के साथ मिलती है। सं. रा. अमेरिका में मैंगनीज के प्रधान उत्पादक राज्य मौंटाना, मिनेसोटा, मिशीगन, अर्कन्सास, टेनेसी, जार्जिया, एवं द. डकोटा आदि राज्य हैं। मौंटाना में यह ताँबे के साथ तथा सुपीरियर झील क्षेत्र में लोह-अयस के साथ निकलता है। प्रमुखतः कोलोरैडो तथा ऊटा राज्य में प्राप्त क्रोमियम धातु का उपयोग उस इस्पात में किया जाता है जिससे बंदूक, पुर्जे आदि बनाए जाते हैं क्योंकि इससे मिश्रित इस्पात में जंग नहीं लगती, दूसरे इस्पात सदा चमकदार बना रहता है। क्रोमियम का आयात भी करना पड़ता है।

निकिल के उत्पादन में सं. रा. अमेरिका गरीब है। आवश्यकता का केवल 12% निकिल ही यहाँ मौंटाना, ऊटा एवं एरीजोना आदि राज्यों से प्राप्त है। इस धातु में तार जैसे खिंचने के अतिरिक्त मजबूती तथा ऊँचे तापक्रम सहने का गुण भी होता है अतः यांत्रिक अस्त्र-शस्त्रों एवं यानों में प्रयोग की जाने वाली चद्दरों के इस्पात में मिलाया जाता है। इसी कारण यू. एस. ए. को प्रतिवर्ष करोड़ों डालर की कीमत की निकिल कनाडा (विश्व का सर्वाधिक निकिल उत्पादन देश) से आयात करनी पड़ती है। वैनीडियम के उत्पादन में सं. रा. अमेरिका विश्व में

प्रथम है। यहाँ विश्व का लगभग तीन-चौथाई वैनीडियम पैदा होता है। प्रमुख खानें पश्चिम के अर्द्ध-शुष्क राज्य कोलोरैडो, न्यू मैक्सिको, एरीजोना तथा ऊटा आदि में है। यह भी इस्पात को कठोरता प्रदान करता है।

मॉल विडीनम की खानें कैलीफोर्निया, नेवादा, ऊटा तथा कोलोरैडो आदि राज्यों में प्रायः ऊँचे एवं पठारी भागों में मिलती है जहाँ खुदाई बड़ी मँहगी तथा कठिन पड़ती है। दृढ़ता तथा कठोरता के लिए इसको इस्पात में मिलाया जाता है। इसके मिश्रण से तैयार इस्पात अधिकतर यंत्रों एवं मशीनों में प्रयोग होता है। इस महत्वपूर्ण धातु के उत्पादन में भी सं. रा. अमेरिका विश्व में प्रथम है जो दुनिया के कुल उत्पादन के तीन-चौथाई भाग के लिए उत्तरदायी है। कोलोरैडो इस संदर्भ में उल्लेखनीय है जो विश्व का लगभग 30% मॉल विडीनम प्रस्तुत करता है। 1982 में यू. एस. ए. ने 77.7 मिलियन पौंड मॉल विडीनम उत्पादित किया जिसमे से 40.2 मिलियन पौंड कोलोरैडो राज्य की खानों से आया।

पर्याप्त ऊँचा तापक्रम सहन करने में समर्थ इस्पात को तैयार करने के लिए टंगस्टन का मिश्रण आवश्यक है। प्रवात भट्ठियों में प्रायः इसी श्रेणी का इस्पात प्रयोग किया जाता है। इसमें भी अमेरिका की स्थिति अच्छी है। नेवादा, इडाहो, कोलोरैडो तथा कैलीफोर्निया की खानें जो टंगस्टन प्रस्तुत करती हैं वह उत्पादन मात्रा की दृष्टि से, चीन के बाद विश्व में दूसरे नम्बर पर आंका जाता है। कोबाल्ट धातु की यह विशेषता है कि बहुत ऊँचे तापक्रम पर भी इसकी धार बनी रहती है। अतः कटाई तथा घर्षण के काम में आने वाले औजारों को बनाने वाले इस्पात में इसका मिश्रण किया जाता है। विश्व का लगभग 12% कोबाल्ट मौंटाना, एरीजोन, ऊटा तथा नेवादा की खानों से उपलब्ध होता है।

वैसे तो 18 वीं शताब्दी में न्यू इंगलैंड तथा उत्तरी अप्लेचियन प्रदेश में स्थानीय लौह-अयस को चारकोल एवं लकड़ियों से गलाकर इस्पात तैयार किया जाता था परन्तु बड़े पैमाने पर आधुनिक लौह-इस्पात उद्योग की शुरूआत सुपीरियर झील क्षेत्र के लौह-अयस के भंडारों की प्राप्ति के बाद ही हुई। 1844 में सर्वेक्षणों से यह ज्ञात हुआ कि सुपीरियर झील के तटवर्ती क्षेत्रों में धरातल के पर्याप्त निकट ही धातु विद्यमान है। परन्तु कोयला क्षेत्रों से दूर स्थित होने के कारण उत्पादन में विशेष वृद्धि न हो सकी। दोनों आधारभूत पदार्थों को जोड़ने वाले यातायात का अभाव था। यह समस्या 1855 में सू- नहर बन जाने से दूर हो गयी। फिर लौह-अयस की आवश्यकता दिनों दिन बढ़ती गयी, और सर्वेक्षण किए गए। फलत: 1890 में विश्व-प्रसिद्ध लौह भंडार मैसाबी शृंखला का पता चला। यहाँ के अयस में धातु प्रतिशत 55 से 65 तक था। यह हैमेटाइट किस्म का लौह था। इसकी ज्यादातर पर्तें भी धरातल के निकट थीं इन सब परिस्थितियों

में उत्पादन तेजी से बढ़ा, और तब से निरन्तर यह क्षेत्र देश की लौह-सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति करता रहा है। आजकल झील क्षेत्र का लौह बड़ी झीलों के मार्ग से कोयला क्षेत्र में स्थित औद्योगिक केन्द्रों जैसे पिटसबर्ग, यंगसटाउन तथा डेट्रोइट आदि को भेजा जाता है। लौटते हुए जलयान उधर से कोयला ले आते हैं। इस प्रकार लौह क्षेत्रों में भी औद्योगीकरण सम्भव हो सका है।

बाद के सर्वेक्षणों से अलबामा व पश्चिम के कुछ राज्यों में भी लौह उपलब्ध हुआ है परन्तु उत्पादन मात्रा बहुत कम है। साधारणतः अमेरिका के लौह क्षेत्रों को चार समूहों में रखा जा सकता है। ये हैं—सुपीरियर झील क्षेत्र, अलाबामा क्षेत्र, पूर्वोत्तर लौह क्षेत्र, तथा पश्चिमी लौह क्षेत्र। इनमें से अन्तिम दो क्षेत्र उत्पादन की दृष्टि से नगण्य ही है।

सुपीरियर झील क्षेत्र—इस क्षेत्र के लौह-खनन व्यवसाय का अध्ययन वस्तुतः उन छः श्रेणियों का अध्ययन है जो देश का लगभग 83% लौह प्रस्तुत करती है। ये श्रेणियाँ सुपीरियर झील के दक्षिण-पश्चिम में विस्कांसिन, मिशीगन तथा मिनेसोटा आदि राज्यों में फैली हैं। यह समूह न केवल इस देश वरन् विश्व में सर्वाधिक लौह पैदा करने वाला क्षेत्र है। इन तीनों राज्यों में भी मिनेसोटा, जहाँ कि मैसाबी श्रेणी स्थित है, सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है जो सम्पूर्ण राष्ट्र का आधे से अधिक लौह प्रस्तुत करता है। 1981 में यहाँ का उत्पादन लगभग 50 मिलियन टन था। इसी वर्ष मिशीगन राज्य, जो दूसरे स्थान पर है, का उत्पादन 6.7 मि. टन था। क्षेत्र में उत्पादित लौह का उत्पादन-वितरण छः श्रेणियों में निम्न प्रकार है।

मैसाबी	71.5%
वरमिलियन	2%
कुयुना	3%
पेनोकी-गोगेबिक	10.5%
मारक्वेट	11%
मैनोमिनी	2%

मैसाबी श्रेणी न केवल सं. रा. अमेरिका वरन् विश्व की सबसे समृद्ध एवं सर्वाधिक लौह प्रस्तुत करने वाली अकेली इकाई है। तीन मील लम्बी तथा एक मील चौड़ी इस श्रेणी से समस्त क्षेत्र का लगभग तीन-चौथाई लौह उपलब्ध होता है। इस श्रेणी में लौह की पर्तें उन बड़े-बड़े पिण्डों में विद्यमान है जो धरातल के निकट ही लगभग 2000 फीट लम्बाई 1500 फीट चौड़ाई एवं 500 मोटाई के आयामों में फैले हैं।[33] ये पिण्ड चिकनी मिट्टी की पतली सी पर्त से ढ़के हैं अतः

33. Jones & Bryan—North America p. 277.
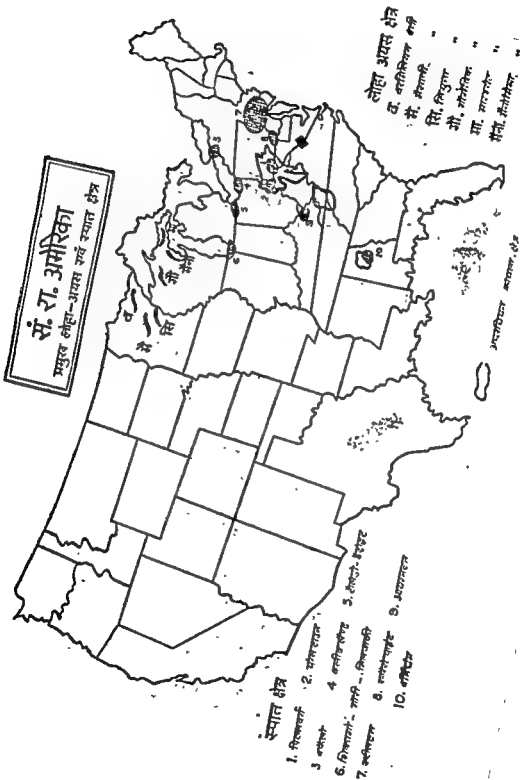
खुदाई बड़ी आसान है। खुदाई के लिए यहाँ 'शाफ्ट' या सुरंगे बनाने की जरूरत नहीं है। इस पर्त को भाप द्वारा संचालित विशालाकार 'ब्लेड' युक्त मशीनों द्वारा साफ कर दिया जाता है और लौह-अयस के पिण्ड उघड़ आते हैं जिन्हें सीढ़ीदार क्रम में काट-काट कर बाहर निकाला जाता है। अन्दर से ये खानें देखी जाएँ तो पूर्व के सीढ़ीदार खेत जैसा दृश्य प्रस्तुत करती हैं ।[34] उल्लेखनीय है कि 'स्टीम शोवेल' के ब्लेडस एक दफा में $4\frac{1}{2}$ टन मिट्टी उठाते हैं तथा 9 फीट की गहराई तक खोद देते हैं। इन अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों के कारण मैंसाबी श्रेणी में खोदा गया लौह बहुत सस्ता पड़ता है।

मैंसाबी के थोड़े पश्चिम में स्थित युकुना में भौगोलिक परिस्थितियाँ लगभग समान ही हैं परन्तु इस श्रेणी में खनन का विस्तार अभी कम है। वरमिलियन श्रेणी मैंसाबी के उत्तर-पश्चिम में लगभग 10 मील की दूरी पर स्थित है। यह श्रेणी पूर्णतया सं. रा अमेरिका इस्पात निगम के अधिकार में है। निगम का मिनेसोटा राज्य के तीन भंडारों (मैंसाबी, कुयुना, वरमिलियन) की सुरक्षित राशि के 3/5 भाग पर स्वामित्व है।

शेष तीन लौह उत्पादक श्रेणियाँ झील के दक्षिण में स्थित हैं। तीनों जल के बहुत निकट है तथा पश्चिम से पूर्व की ओर पैनोकी-गोमेबिक, मारक्वेट तथा मैनोमिनी--इस क्रम में विद्यमान हैं। झील मार्ग से निकटता की दृष्टि से ये तीनों खानें ज्यादा अनुकूल स्थिति में हैं क्योंकि मैंसाबी जल से लगभग 75 मील की दूरी पर स्थित है। इन श्रेणियों में भी धातु बड़े-बड़े पिण्डों में है। परन्तु धरातल व चट्टानों के संदर्भ में इन पिण्डों की स्थिति उतनी अनुकूल नहीं है। पिण्ड एक तो काफी गहराई पर हैं दूसरे चारों तरफ कठोर चट्टानों से घिरे है। अतः 'शाफ्ट' विधि से खुदाई होती है जो काफी मँहगी पड़ती है।

अलाबामा क्षेत्र--अप्लेचियन श्रृंखला के दक्षिण में स्थित अलाबामा राज्य में बर्मिंघम नगर के आस-पास भी कई लौह खानें हैं जहाँ पिछली शताब्दी से खुदाई चल रही है। सौभाग्य से लौह-क्षेत्रों के निकट ही कोयला उपलब्ध है अतः इस सम्भाग में भारी उद्योग विकसित हो सके हैं। निस्सन्देह, लौह खनिज सुपीरियर झील वाली अयस से घटिया किस्म की है परन्तु चूने की मात्रा होने से भट्टियों में आसानी से गल जाती है तथा शुद्ध होने में सरलता पड़ती है। इस राज्य में देश का लगभग 10% लौह उत्पादित होता है।

पूर्वोत्तर लौह क्षेत्र--लौह अयस की खुदाई की दृष्टि से यह सबसे पुराना क्षेत्र है जहाँ दो शताब्दी पूर्व ही अडीरंडाक (न्यूयार्क) तथा कार्नवाल (पैंसिलवेनिया)

---

34. Ibid. p. 278.

की खानों से मैग्नेटाइट धातु प्राप्त करके उसी लकड़ी तथा चारकोल से गला कर इस्पात बनाया जाता था। वर्तमान में इस क्षेत्र में बहुत कम खानें ही उत्पादनरत है। ये हैं— 1. चैम्पलेन झील के पश्चिम में मिनेविले पोर्ट तथा हैनरी फिशर क्षेत्र की खान, 2. पिटसबर्ग के पश्चिम में ल्योन पर्वत, 3. अडीरंडाक पर्वत के दक्षिणी ढ़ालों पर मैक इन्ट्रे की खान 4. क्लिफटन खानें, 5. पर्वत के उत्तरी-पश्चिमी ढ़ाल पर बैनन की खान। इन खानों में पिछली शताब्दी से लौह-अयस की खुदाई होती रही है। कुछ दशक पूर्व खुदाई तथा यातायात महंगे होने के कारण इनमें कई बंद कर दी गयी थीं। परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध में इस्पात के कारखानों के लिए लोह-अयस की बढ़ती मांग से प्रोत्साहित होकर कई बड़ी कम्पनियों ने इन्हें खरीद कर उत्पादन बढ़ाया। इन खानों में अधिकांश उत्पादन मैग्नेटाइट अयस का है जिसमें धातु प्रतिशत 69 (मैसाबी में 55-65%) तक है।

पश्चिमी क्षेत्र—सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि पश्चिम में ऊटा, नेब्रास्का, इडाहो, व्योमिंग, कोलोरैडो तथा कैलीफोर्निया आदि राज्यों में लौह-भंडार दबे पड़े हैं परन्तु क्रियाशील औद्योगिक क्षेत्रों से दूरी, यातायात का अभाव एवं प्रतिकूल भौगोलिक वातावरण होने के कारण इनका विकास सम्भव नहीं हो सका। यहां अयस का जितना उत्पादन मूल्य बैठता है उससे कहीं कम विदेशों (ब्राजिल, स्वीडन वैनी ज्वला) से आयात किए हुए लोह का मूल्य पड़ता है।

अलौह धातुएं :

अलौह धातुओं में सं. रा. अमेरिका में तांबा, सीसा, जस्ता, सोना, चांदी तथा यूरेनियम उपलब्ध हैं। देशज उत्पादन औद्योगिक आवश्यकता की पूर्ति करने में असमर्थ है अतः करोड़ों डालर की कीमत की खनिज धातु आयात करनी पड़ती है। दो विश्व युद्ध एवं पिछले दशकों में औद्योगिक उत्पादन में भारी वृद्धि ने मिलकर इन धातुओं के उत्पादन सर्वेक्षण तथा आयात की गति तीव्र कर दी है। वर्तमान में स्थिति यह है कि सं. रा. अमेरिका का औद्योगिक-हीरा, क्वार्ट्ज, टिन, क्रोमाइट, अभ्रक, अस्बेस्टस तथा निकिल के लिए लगभग पूरी तरह आयातित मात्रा पर निर्भर है जबकि टैंटेलम, प्लैटीनम, मैगनीज, पारा, कैडमियम, टंगस्टन, कोबाल्ट, ग्रेफाइट, एन्टीमनी, बॉक्साइट, सीसा, जस्ता, जिप्सम, बिस्मथ तथा ..बे की पूर्ति के लिए आंशिक मात्रा में आयात करता है। निस्संदेह, इनमें से कई धातुएं ऐसी है जिनके उत्पादन में यह देश प्रथम है परन्तु यहां के विकसित तथा जटिल औद्योगिक ढांचे की मांग इतनी विशाल है कि आयात आवश्यक है।

अणुशक्ति का प्रधान स्रोत एवं 20 वी शताब्दी की सबसे कीमती तथा महत्वपूर्ण धातु यूरेनियम की दृष्टि से यू. एस. ए. भाग्यवान हैं। यूरेनियम के विस्तृत भंडार देश के पश्चिमी राज्यों में दबे पड़े हैं। भूमि से कच्ची खनिज खोद-

कर शोधक कारखानों को भेज दी जाती है जहाँ इसे साफ करके शुद्ध यूरेनियम प्राप्त किया जाता है। सैनिक महत्व की होने के कारण इस धातु की खुदाई का उत्तरदायित्व संघीय सरकार का है जिसने अनेक शोधक कारखाने मांटीसेलो, स्लिक-रॉक, साल्ट लेक सिटी तथा टूबा सिटी आदि नगरों में स्थापित किए हैं। यूरेनियम की प्रधान खानें कोलोरैडो, ऊटा, न्यू मैक्सिको, व्योमिंग, एरीजोना, वाशिंगटन, आदि राज्यों में हैं। सर्वेक्षणों से पता चला है कि कोलोरैडो तथा न्यू मैक्सिको राज्यों में एक श्रृंखला-बद्ध पेटी के रूप में यूरेनियम के विस्तृत भंडार हैं। दुर्गम एवं ऊँचे भागों में होने के कारण इस धातु का खुदाई-मूल्य बहुत ज्यादा बैठता है। उत्पादन-मात्रा एवं सुरक्षित भंडारों की दृष्टि से न्यू मैक्सिको राज्य महत्वपूर्ण है जहाँ देश की कुल सुरक्षित राशि का लगभग दो-तिहाई (65%) भाग विद्यमान है। 1982 में इस राज्य में 12.4 मिलियन पौंड यूरेनियम उत्पादित किया। इसी वर्ष व्योमिंग तथा कोलोरैडो का उत्पादन क्रमशः 4.5 मि. पौंड तथा देश का कुल उत्पादन लगभग 2.7 मिलियन पौंड था।

विश्व का लगभग एक-चौथाई ताँबा अमेरिका की खानों से प्राप्त होता है। मौंटाना राज्य की बुट्टे तथा ऊटा राज्य की बिंघम खानें प्रति खान उत्पादन में सबसे आगे हैं। कुल उत्पादन की दृष्टि से एरीजोन राज्य महत्वपूर्ण है जो देश का लगभग आधा ताँबा प्रस्तुत करता है। 1982 में इस राज्य की खानों ने 848,750 शार्ट टन ताँबा उत्पादित किया इस वर्ष मौंटाना ने 62,485 टन, नेवादा ने 39,795 टन, न्यू मैक्सिको ने 59,693 टन, ऊटा ने 156,450 टन तथा कोलोरैडो ने 4.1 मि. पौंड ताँबा प्रस्तुत किया। विद्युत उपकरणों के अतिरिक्त औद्योगिक क्षेत्रों में भी इस धातु की आवश्यकता पड़ती है अतः अमेरिका भारी मात्रा में चिली, बेल्जियम तथा रोडेशिया आदि देशों से ताँबा आयात करता है।

सं. रा. अमेरिका–कुछ महत्वपूर्ण अलौह धातुएँ

		1981		1982	
		उत्पादन मात्रा	उत्पादन मूल्य (1000 डा. में)	उत्पादन मात्रा	उत्पादन मूल्य (1000 डा. में)
बॉक्साइट	(टन)	1,510	26,489	732	12,334
ताँबा	(टन)	1,538,160	2,886,440	1,139,563	1,866,895
सीसा	(टन)	445,535	358,821	512,425	288,528
जस्ता	(टन)	312,418	306,879	300,274	254,668

मॉल विडोनिम

(हजार पौंड)	118,916	945,540	77,789	514,834
सोना (औंस)	1,379,161	633,918	1,446,905	843,908
चांदी(हजार औंस)	40,683	427,921	40,239	319,903

सीसा एक ऐसी धातु है जिस पर पानी, गर्मी, हवा, धूप आदि बाह्य तत्वों का बहुत कम असर होता है। विद्युत का कुचालक होने के कारण उद्योगों में भी इसका पर्याप्त प्रयोग होता है। यू. एस. ए. में यह महत्वपूर्ण धातु मिसीसीपी, मिसूरी, ऊटा, ओकलाहामा, कन्सास, कोलोरैडो तथा एरीजोना राज्यों में उपलब्ध है जिनका सम्मिलित उत्पादन विश्व का लगभग 13% होता है। उत्पादन मात्रा की दृष्टि से राज्यों में मिसीसीपी (1982 में 123,440 टन) प्रथम है। द्वितीय स्थान इडाहो (38,397 टन) का है। जंगरहित होने तथा ऊँचे तापक्रम पर भी ठोस बने रहने के गुणों के कारण जस्ता भारी औद्योगिक महत्व की धातु है। बैटरी के बाहर के खोल प्रायः जस्ता के ही बनाए जाते हैं। तांबे के साथ मिलाकर इससे पीतल बनायी जाती है। यू. एस ए. विश्व का लगभग 14% जस्ता प्रस्तुत करता है जिसका अधिकांश भाग ओकलाहामा, कन्सास, नेवादा, न्यू मैक्सिको, एरीजोना, कोलोरैडो, तथा इडाहो आदि राज्यों से उपलब्ध होता है। 1982 के कुल उत्पादन 312,418 शॉर्ट टन में से इडाहो राज्य ने 27,722 शॉर्ट टन, न्यू मैक्सिको ने 25,320 शॉर्ट टन तथा एरीजोना राज्य ने 138 शार्ट टन जस्ता पैदा किया।

सोना तथा चांदी के प्रधान उत्पादन क्षेत्र भी पश्चिम के शुष्क राज्यों में विद्यमान हैं। अपवाद रूप में केवल अलास्का राज्य है जो सोना उत्पादन के लिए उल्लेखनीय है। सोने का अधिकांश भाग नेवादा, एलास्का, कोलोरैडो, एरीजोना तथा ऊटा आदि राज्यों से आता है। इडाहो राज्य सर्वाधिक चांदी उत्पादित करने वाला राज्य है जहाँ से देश की लगभग आधी (45%) चांदी उपलब्ध होती है। 1982 में इस अकेले राज्य ने 14.8 मिलियन औंस चांदी प्रस्तुत की। अन्य चांदी उत्पादक राज्यों में ऊटा (6.1 मि. औंस) मौंटाना (3·4 मि. औंस) तथा कोलोरैडो (3.4 मि. औंस) उल्लेखनीय है। एरीजोना, नेवादा तथा न्यूमैक्सिको आदि राज्य भी कुछ मात्रा में चांदी प्रस्तुत करते हैं।

चांदी एवं जस्ता का उत्पादन पिछले वर्षों में घटा है। इसका प्रमुख कारण धातु का क्रमशः गहराई पर जाने के फलस्वरूप उत्पादन-मूल्य का अधिक होना है। उत्पादन किस गति से घट रहा है इसका अनुमान पिछले कुछ वर्षों के उत्पादन आंकड़ों को देखने से ज्ञात हो जाता है। 1965 में जस्ते का उत्पादन 611,153 शॉर्ट टन था जो 1966 में 573000 टन; 1967 में 549,000 टन; 1969 में 533,124 टन तथा 1970 में 534,136 टन हुआ। इसी प्रकार चांदी का

1465, 66, तथा 67 का उत्पादन क्रमशः 39.8 मि. औंस, 43.6 मि. औंस तथा 32.3 मि. औंस था। आगे के वर्षों में अवश्य थोड़ी-सी वृद्धि हुई।

एस्बेस्टस, एन्टीमनी तथा अभ्रक का उत्पादन नगण्य है जबकि टिन तथा औद्योगिक हीरा इस महादेश की धरती से बिल्कुल गायब हैं। कुछ अधातु खनिजों में भी यू. एस. ए. धनी है। यहाँ विश्व की 50% गंधक 40% फौस्फेटस तथा 50% मैग्नेशियस उपलब्ध है। नमक, जिप्सम तथा पोटाश के भी भंडार हैं जो रसायन उद्योग की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। हेलियम के उत्पादन पर इस देश का एकाधिकार है। पहले इसका प्रयोग वायुयानों में होता था आजकल अंतरिक्ष गुब्बारों के काम में आती है। खाड़ी के तटवर्ती राज्य गंधक, नमक एवं हेलियम के भंडार युक्त हैं। नमक न्यूयार्क, मिशीगन, ओहियो तथा ऊटा राज्य में भी पैदा होता है। पोटाश का अधिकांश भाग न्यू मैक्सिको तथा कैलीफोर्निया से जबकि फौस्फेटस, टैनेसी एवं फ्लोरिडा राज्यों से उपलब्ध होता है।

□□□

सं० रा० अमेरिका : औद्योगिक विकास

यद्यपि सं. रा. अमेरिका, जैसाकि हमने पिछले अध्यायों में अध्ययन किया है, विशाल कृषि योग्य भूमि, अपार वन सम्पदा, अमूल्य खनिज सम्पदा और समृद्ध मत्स्य क्षेत्रों का स्वामी है परन्तु विश्व में उसके जिस पहलू ने सर्वाधिक प्रभाव डाला है वह है उद्योग। औद्योगिक क्षेत्रों में इस महादेश की विश्व में अनुपम स्थिति है। यहाँ विश्व की 40% से अधिक औद्योगिक वस्तुएँ उत्पादित की जाती हैं। आज विश्व में जो एक नयी सांस्कृतिक लहर फैली है जिसे कभी-कभी अमेरिकन संस्कृति के नाम से पुकारते हैं, उसकी जड़ें वस्तुतः इस भारी औद्योगिक विकास में ही विराजमान हैं। इस देश में कार्यरत लोगों की संख्या लगभग 77 मिलियन है जिनमें से दो-तिहाई लोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस औद्योगिक ढाँचे से सम्बन्धित हैं। इस विकास को केवल प्राकृतिक संसाधनों की कृपा मानकर चलना उस क्रियाशील मानव तत्व की उपेक्षा होगी जिसने इन संसाधनों का बड़ी कुशलता से उपयोग किया, वैज्ञानिक आधार पर व्यवस्थित इस औद्योगिक ढाँचे को वर्तमान स्थिति तक लाकर पहुँचा दिया। मशीनीकरण में उच्चता, बहुल-उत्पादन विधियों एवं एक विकसित संचार-तंत्र के फलस्वरूप यह देश अपने उद्योगों से भारी मुनाफा कमाने में सफल हुआ है। स्वाभाविक है कि वह विविध प्रकार के शोधों में भारी पैसा खर्च करके अपने औद्योगिक उत्पादनों में क्रमिक-वृद्धि की ओर अग्रसर है। कितना विशालाकार है यहाँ का औद्योगिक तंत्र इसका थोड़ा-सा अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि दुनियाँ में उत्पादित एक-तिहाई इस्पात एवं लगभग आधी अलोह-धातुएँ यहाँ के उद्योगों में खप जाती हैं।

वे तत्व, जिन्होंने इस देश को औद्योगिक विकास की इस सीमा तक पहुँचाने में आधार-भूत सहयोग दिया है, शीर्षक-समूह रूप में निम्न है—

(अ) कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस तथा जलशक्ति के पर्याप्त सुरक्षित भंडार जिनका शोषण भी बहुत आसान है।

(ब) लौह एवं अन्य धातुओं के विस्तृत भंडार।

(स) विस्तृत कृषि योग्य भूमि एवं विशाल वन सम्पदा।

उद्योगों में विश्व में सर्वाधिक उत्पादन कर रहा था। मोटर, एअर क्राफ्ट आदि में यह विशेष रूप से आगे था। प्रथम विश्व युद्ध में और भी प्रोत्साहन मिला। तीसरी शताब्दी की विश्व-व्यापी मंदी के समय भी विस्तार निरंतर था क्योंकि यहाँ के उत्पादनों के लिए लैटिन अमेरिकन बाजार सदा सुरक्षित थे।

द्वितीय विश्व युद्ध अमेरिकन उद्योगों के लिए एक प्रकार से वरदान सिद्ध हुआ जबकि इनका अभूतपूर्व स्तर पर विकास हुआ। 1939–47 के 8 वर्षों में उद्योगों में रत लोगों में 52% की वृद्धि हुई। औद्योगिक उत्पादन के मूल्य में 200% की वृद्धि हुई। निस्संदेह यह वृद्धि सभी औद्योगिक क्षेत्रों में समान नहीं थी। उत्तर-पूर्व की तुलना में पश्चिमी तथा दक्षिणी-पश्चिमी क्षेत्रों के अपेक्षाकृत नए औद्योगिक संस्थानों में विकास तथा विस्तार दर कहीं ज्यादा थी। इसी प्रकार, यह वृद्धि किसी विशिष्ट उद्योग में न होकर सभी उद्योगों में थी परन्तु इस्पात तथा मशीनों के क्षेत्र में कहीं अधिक थी। अधिक विस्तार वाले उद्योग-धंधे वे थे जो किसी न किसी प्रकार से यौद्धिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित थे। उदाहरणार्थ धातु उद्योगों में संलग्न व्यक्तियों की संख्या में 93% रबर उद्योग में 77% तथा रासायनिक उद्योगों में 69% की वृद्धि हुई। इनकी तुलना में वस्त्र तथा चमड़ा व्यवसाय में क्रमशः 15% तथा 6% की वृद्धि हुई।

युद्धोत्तर समय में, युद्ध के समय में हुए औद्योगिक विस्तार को शान्ति की अवस्थाओं में व्यवस्थित करने की समस्या आयी। वैसे युद्ध के समय में भी 1940 में ही यह महसूस किया जा रहा था कि उद्योगों के केन्द्रीयकरण, प्रकार एवं उत्पादन सम्बन्धी नीतियों में कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है। इसके फलस्वरूप युद्धोत्तर दिनों में कुछ परिवर्तन भी नजर आए हैं। यथा, सुरक्षा की दृष्टि से एवं परम्परागत औद्योगिक क्षेत्रों की अत्यधिक सघनता से बचने के लिए नए औद्योगिक क्षेत्रों का विकास हुआ है। ऐसे क्षेत्रों में कैलीफोर्निया की घाटी, खाड़ी के तटवर्ती क्षेत्र तथा पीडमांट प्रदेश में विकसित औद्योगिक क्षेत्र प्रधान हैं। इनके विकास में स्थानीय रूप से प्राप्त कोयला, तेल, जलविद्युत यातायात व अन्य आधारभूत तत्वों का सहयोग रहा है। सरकार की भी यही नीति है कि आज के आणविक युग में महत्वपूर्ण उद्योगों को एक ही प्रदेश में केन्द्रित नहीं होना चाहिए।

युद्धोत्तर दशकों में कुछ नए प्रकार के उद्योग भी अस्तित्व में आए हैं इनमें नायलोन, प्लास्टिक पेट्रोकेमीकल्स तथा विद्युत इंजीनियरिंग मुख्य हैं। तकनीकी में भी भारी विकास हुआ है। मशीनें दिन प्रतिदिन श्रमिकों का स्थान लेती जा रही हैं, स्वचालीकरण बढ़ रहा है। औद्योगिक श्रमिकों के स्वरूप में भी अन्तर आया है। आजकल कारखानों में दिमागी कार्य करने वालों की संख्या में अपेक्षाकृत वृद्धि तथा शारीरिक कार्य करने वाले लोगों की संख्या में ह्रास होता जा रहा है।

उद्योगों की स्थिति को प्रभावित करने वाले तत्व :

उद्योग एवं नगर—ये दोनों ऐसे तत्व हैं जिन्हें पृथक नहीं किया जा सकता। दुनिया के अन्य भागों की तरह अमेरिका में भी अधिकांश औद्योगिक संस्थान बड़े नगरों में विद्यमान हैं। नगरों में उद्योगों की स्थापना केवल अवसर की बात नहीं, उसके कई सकारण आधार हैं। किसी भी उद्योग की स्थिति कच्चे माल, बाजार, शक्ति, यातायात, श्रम आदि अनेक तत्वों से प्रभावित होती है। कृषि की तरह उद्योगों के लिए भी अनुकूल एवं प्रतिकूल वातावरण होता है। अनुकूलता वस्तुतः कई तत्वों का समूहबद्ध रूप है। ये हो सकते हैं—

(1) खपत क्षेत्रों की निकटता—उद्योगों की स्थिति निर्धारण में यह बहुत महत्वपूर्ण तत्व है। ऐसे उद्योग जो कच्चे मालों की तुलना में उत्पादन भारी प्रस्तुत करते हैं जैसे कृषियंत्र उन्हें खपत केन्द्रों की निकटता वांछनीय है। इसी प्रकार से ऐसे उद्योग जिनके उत्पादन जल्दी खराब होने वाले होते हैं (आइसक्रीम, मक्खन, पनीर, मछली या यातायात में टूटने वाले जैसे कांच आदि) या बदलती हुई फैशनोन्मुख तकनीकों का जिन पर सीधा प्रभाव पड़ता है (जैसे वस्त्र) उनके विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बाजार के पास ज्यादा होती हैं।

(2) कच्चे मालों से निकटता – दो प्रकार के उद्योगों को कच्चे माल उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों से निकटता बहुत आवश्यक है। एक वे जिनके कच्चे माल जल्दी खराब हो सकते हैं जैसे शक्कर, मक्खन, पनीर, मांस, आदि उद्योग तथा दूसरे वे जिनके कच्चे माल बहुत भारी होते हैं एवं उत्पादन क्षेत्रों से औद्योगिक संस्थान अगर बहुत दूरी पर स्थित हैं तो वहाँ तक कच्चे मालों को ले जाने में यातायात का खर्चा इतना बैठ जाता है कि उत्पादन-मूल्य पर असर पड़ता है। सीमेंट या धातु शोधन इस श्रेणी के उद्योग हैं।

(3) शक्ति से निकटता—विद्युत उत्पादन तथा इसके परिवहन के पूर्व अधिकांश उद्योग शक्ति के स्थायी स्रोतों के निकट स्थापित किए जाते थे। लोह गलाने की पहली भट्टियाँ जंगलों के भीतर चारकोल केन्द्रों के निकट स्थापित की गयी थीं। न्यू इंगलैंड प्रदेश में कपड़े की मिलें भी प्रपातों के निकट बनायी गयीं। विद्युत प्रवाह चूँकि दूर तक जा सकता है अतः यह बन्धन कुछ कम अवश्य हुआ है परन्तु यह भी सत्य है कि उत्पादन स्थान से जैसे-जैसे दूर चलते जाते हैं विद्युत प्रवाह कमजोर हो जाता है। कुछ उद्योगों की प्रकृति उन्हें शक्ति केन्द्रों के निकट स्थित करती है। उदाहरण के लिए अल्यूमिनियम उद्योग, जो विद्युत से ही संचालित होता है। अन्य धातु शोधन उद्योगों (जैसे लोह-इस्पात) की तुलना में इसे प्रति टन लगभग 20 गुनी विद्युत की आवश्यकता पड़ती है अतः खपत केन्द्रों से दूरी सहन करके भी यह उद्योग विद्युत शक्ति-गृहों के निकट स्थापित किया जाता है। कोयला के भारी होने का ही परिणाम है कि लोह-इस्पात उद्योग अमेरिका में उत्तरी अप्लेचियन प्रदेश में केन्द्रित हैं।

सं० रा० अमेरिका : औद्योगिक पेटी

देश के उत्तर-पूर्व में स्थित यह औद्योगिक पेटी वस्तुतः एक विशालाकार चक्रशाप के रूप में है। इस चक्रशाप में कुछ क्षेत्र अत्यधिक सघन हैं; उनका उत्पादन एवं औद्योगिक क्रियाएँ विश्व में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। अगर अनुमानित सीमांकन किया जाय तो कहा जा सकता है कि पश्चिम में मिसीसीपी नदी, उत्तर में महान् झीलें, दक्षिण में टैनेसी क्रम तथा पूर्व में अटलांटिक तट को जोड़ने वाली रेखा विश्व के इस महान् औद्योगिक प्रदेश को घेरती है। प्रदेश के उत्तर-पूर्व में न्यूयार्क राज्य की उत्तरी सीमा को सीमा माना जा सकता है। यह मानना भूल होगी कि इस प्रदेश में सम्पूर्ण भूमि उद्योगों में संलग्न है। एक तरह से विशाल कृषि एवं दुग्ध व्यवसाय के सागर के बीच-बीच में सघन औद्योगिक केन्द्र द्वीपीय स्थिति लिए नजर आते हैं। खेत, चारागाह, जंगल तथा पर्वतीय प्रदेश इन नागरीय-औद्योगिक इकाइयों को पृथक् करते है। औद्योगिक मेखला की इन इकाइयों को जिन 'प्रधान औद्योगिक क्षेत्रों' में संगठित किया जा सकता है वे हैं—

1. पूर्वी न्यू इंगलैण्ड।
2. दक्षिणी-पश्चिमी न्यू इंगलैण्ड।
3. मैट्रोपॉलिटन न्यूयार्क।
4. दक्षिणी-पूर्वी पैंसिलवेनिया।
5. मोहाक घाटी तथा ऑंटेरियो का मैदान।
6. न्यागरा सीमांत क्षेत्र।
7. पिटसबर्ग—क्लीवलैण्ड क्षेत्र।
8. विशाल कान्हावा घाटी।
9. ओहियो-इंडियाना के औद्योगिक क्षेत्र।
10. दक्षिणी मिशीगन ऑटोमोबाइल क्षेत्र।
11. शिकागो-मिलवाकी क्षेत्र।
12. सेंट लुइस क्षेत्र।

पूर्वी न्यू इंगलैण्ड :

सं. रा. अमेरिका का यह वह सम्भाग है जहाँ औद्योगिक श्रीगणेश हुआ, यद्यपि प्रमुखता में यह गृह-युद्ध से पहले नहीं आ सका। आज भी कुशल श्रमिकों की सबसे बड़ी संख्या इस प्रदेश में पाई जाती है। इस क्षेत्र में मेन, न्यू हैम्पशायर, रोड द्वीप, मैसाचुसेटस तथा कनेक्टीकट आदि राज्यों के औद्योगिक केन्द्र शामिल है। बोस्टन इस क्षेत्र की औद्योगिक राजधानी है यद्यपि महत्व की दृष्टि से प्रॉविडैन्स, फॉलरिवर एवं न्यू बैडफोर्ड आदि नगर भी कम नहीं। इस क्षेत्र में विविध हल्के उद्योग विकसित हैं जिनमें सूती-ऊनी वस्त्रोद्योग, चमड़ा, मशीनरी आदि उल्लेखनीय हैं।

सूती वस्त्रोद्योग : न्यू इंगलैण्ड प्रदेश लम्बे समय तक देश के सूती वस्त्रोद्योग का केन्द्र रहा है। यद्यपि आज यह उद्योग दक्षिणी राज्यों तथा मध्य अटलांटिक तटवर्ती नगरों में स्थानांतरित हो गया है फिर भी अच्छी किस्म के कपड़ों के लिए न्यू इंगलैण्ड प्रदेश की मिलें अपना स्थान रखती हैं। वरमोंट को छोड़ कर लगभग सभी राज्यों में सूती मिलें हैं परन्तु व्यवसाय की सघनता की दृष्टि से रोड द्वीप एवं मैसाचुसेटस राज्य महत्वपूर्ण है जहाँ सम्पूर्ण प्रदेश की 90% मिलें एवं 75% श्रमिक विद्यमान हैं। ब्रिस्टल काउंटी, मैसाचुसेटस, प्राविडैन्स काउंटी तथा रोड द्वीप में कार्यरत तकुओं में से आधे से ज्यादा हैं। इन्हीं जिलों में प्रसिद्ध सूती वस्त्रोद्योग केन्द्र फॉलरविर, न्यू बैडफोर्ड, पॉवटकेट तथा वुन्सोकेट आदि स्थित है। वस्तुतः न्यू इंगलैण्ड प्रदेश को कुछ ऐसी सुविधाएं प्राप्त हैं जिन्होंने इस उद्योग के विकास में सहयोग दिया। ये हैं—1. आर्द्र हवा, 2. जल शक्ति, 3. शुद्ध, हल्का पानी, 4. कुशल श्रम, 5. घने बसे क्षेत्रों से निकटता। 1920 के बाद से यहाँ के वस्त्रोद्योग में ह्रास प्रारम्भ हुआ जिसके प्रधान दो कारण थे—1. यहाँ के प्लांटस आधुनिकता में दक्षिणी प्रदेशों में स्थित प्लांटस के समकक्ष न रहे। 2. इस सम्भाग में दक्षिण की अपेक्षा श्रमिक ज्यादा मँहगा तथा कार्यावधि कम थी।

ऊनी वस्त्रोद्योग : न्यू इंगलैण्ड प्रदेश देश के ऊनी वस्त्रोद्योग का हृदय प्रदेश कहलाता है। प्रारम्भिक दिनों में स्थानीय रूप से उपलब्ध कच्चो ऊन, जल शक्ति, शुद्ध-मुलायम जल, कुशल श्रम एवं निकटवर्ती बाजारी केन्द्र आदि तत्वों से यह उद्योग जो प्रोत्साहित हुआ तो आज तक अपनी उसी महत्वपूर्ण स्थिति में है। बढ़ती हुई मांग के साथ विदेशों से आयात कर प्राप्त ऊन की मात्रा दिनों-दिन बढ़ती गयी। बोस्टन विदेशों से ऊन आयात करने वाला सबसे बड़ा केन्द्र है। देश की ऊनी मिलों में जितनी ऊन प्रयोग होती है उसका लगभग 60% भाग इस बन्दरगाह द्वारा आयातित होता है। न्यू इंगलैण्ड प्रदेश की लगभग आधी ऊनी मिलें पूर्वी मैसाचुसेटस एवं शेष आधी मेन राज्य तथा रोड द्वीप में स्थित हैं। लारेन्स,

प्राविडेंन्स, वुन्सो केट, होलियोके तथा लॉवैल आदि प्रधान ऊनी केन्द्र हैं। पिछले दो दशकों के इस प्रदेश के ऊनी वस्त्रोद्योग में ह्रासोन्मुख प्रवृत्ति दिखाई दी हैं। 1951 में 32 मिलें बन्द कर दी गयीं। 1952 में 'अमेरिकन वूलर कम्पनी' जिसकी 24 मिलों में से 21 न्यू इंगलैण्ड में स्थित हैं, ने घोषणा की कि अगर दक्षिणी राज्यों तथा यहां की मजदूरी-दरों का भारी अन्तर समाप्त नहीं होगा तो वह अपनी मिलें बन्द कर देगी।

जूता चमड़ा उद्योग : जूता निर्माण उद्योग में न्यू इंगलैण्ड प्रदेश देश में नेतृत्व की स्थिति में है। पूर्वी मैसाचुसेटस राज्य में बड़े-बड़े प्लांटस स्थित हैं। न्यू हैम्पशायर तथा मेन राज्य के निकटवर्ती भाग भी महत्वपूर्ण हैं। इस उद्योग के यहाँ विकास का मुख्य आधार कुशल श्रम है यद्यपि चमड़ा व अन्य आवश्यक सामानों की आसान पहुँच भी महत्वपूर्ण सुविधा है। ब्रोकटन, हैवर हिल तथा लिन प्रधान केन्द्र है। प्रथम दो पुरुषों तथा अन्तिम महिलाओं के जूताओं के लिए उल्लेखनीय है। अन्य उद्योगों की तरह इसमें भी ह्रास की प्रवृत्ति दिखाई देने लगी है। वस्तुतः जिन प्रदेशों को कच्चे माल तथा बाजार दोनों की सुविधा प्राप्त है उनकी प्रतियोगिता में टिक पाना कठिन है। 1950 में राष्ट्रीय उत्पादन में न्यू इंगलैण्ड का हिस्सा प्रतिशत केवल 32 था। असल में जब तक यह उद्योग पूरी तरह श्रमिकों की कार्य-कुशलता पर निर्भर था, न्यू इंगलैण्ड प्रदेश आगे था। ज्यों-ज्यों यन्त्रों का हिस्सा बढ़ता जा रहा है त्यों-त्यों यहाँ का महत्व घटता जा रहा है।

धातु उद्योग : कच्चे मालों के अभाव में यहाँ भारी धातु उद्योग नहीं है, हल्के सम्बन्धित उद्योग हैं। जिनमें मशीन-टूल्स हार्डवेयर, एयर क्राफ्ट, ऑटोमोबाइल्स, वस्त्रोद्योग की मशीनों का निर्माण आदि उल्लेखनीय है। इन्हीं में कुल श्रमिकों का लगभग 40% भाग संलग्न है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि देश का प्रथम लौह इस्पात का कारखाना 1965 में लिन के पास सांगस नदी के तट पर इसी सभाग में खोला गया था। पिछले दो-तीन दशकों से न्यू इंगलैण्ड निवासी इस बात के लिए प्रयत्नशील हैं कि यहाँ कोई बड़ा कारखाना इस्पात का खुले। 'बैथेल हैम इस्पात निगम' का एक बार विचार भी बना था पर कार्यरूप में परिणत न हो सका। न्यू इंगलैण्ड के उद्योगपतियों का विचार है कि दो कारणों से बदली हुई परिस्थितियों में, इस भाग में लौह इस्पात का कारखाना भी सफल हो सकता है। एक, लैब्रोडोर तथा क्विबेक में लौह-अयस की उपलब्धि, जहाँ से आसानी से सस्ता अयस उपलब्ध किया जा सकता है। दो, लौह इस्पात उद्योग में मूल्य-निर्धारण में 'बेसिंग-प्वाइन्ट-सिस्टम' की समाप्ति। इन लोगों का विश्वास है कि अगर न्यू इंगलैण्ड के तट भाग में इस्पात का कारखाना खोला जाए तो उसमें उत्पादित इस्पात मध्य अटलांटिक तट के किसी केन्द्र में उत्पादित इस्पात से सस्ता पड़ेगा।

दक्षिणी-पश्चिमी न्यू इंगलैण्ड :

इन क्षेत्र में मैसाचुसेटस तथा कनैक्टीकट राज्य के वे भाग आते हैं जो कनैक्टीकट घाटी के पश्चिम में स्थित हैं। औद्योगिक केन्द्र कनैक्टीकट नदी के सहारे-सहारे श्रृंखलाबद्ध रूप में विद्यमान हैं। कुछ केन्द्र बर्कशायर हिल्स की घाटियों में केन्द्रित हैं। इन औद्योगिक संस्थानों में विशेष रूप से वे हल्के उद्योग विकसित हैं जिनमें धातु की कम श्रमिक-कुशलता की ज्यादा आवश्यकता होती है। मशीनरी, टूल्स, हार्डवेयर, प्लास्टिक्स, विद्युत उपकरण, सूक्ष्म यन्त्र, घड़ियाँ तथा कैमरे आदि प्रमुख उत्पादन हैं। ब्रिजपोर्ट-क्षेत्र अत्यधिक सघन औद्योगिक क्षेत्र है जहाँ के कारखाने विविध औद्योगिक उत्पादनों में रत हैं जैसे टाइप राइटर, सिलाई की मशीनें, रबर के सामान, दवाइयाँ, मशीनें, विद्युत एवं यातायात उपकरण आदि।

मैट्रोपॉलिटन न्यूयार्क :

न्यूयार्क मैट्रोपॉलिटन क्षेत्र जिसके अन्तर्गत न्यूयार्क शहर और उसके औद्योगिक उपनगर आते हैं यद्यपि विस्तार में छोटा है परन्तु औद्योगिक विकास एवं सघनता की दृष्टि से न केवल अमेरिका वरन् विश्व के चोटी के औद्योगिक क्षेत्रों में से, एक है। न्यूयार्क का पोताश्रय उत्तम एवं बन्दरगाह अति विशाल है जिसने इस नगर को उत्तरी अमेरिका महाद्वीप का व्यापार, उद्योग एवं वित्तीय क्रियाओं का सबसे बड़ा केन्द्र बनने में सहयोग दिया है। यह क्षेत्र हडसन नामक नाव्य नदी के मुहाने पर स्थित है। यह सुरक्षित, गहरा पोताश्रय है और प्रमुख जलीय एवं थलीय मार्गों का केन्द्र है। देश का लगभग 50% व्यापार इस बन्दरगाह से होता है। न्यूयार्क के पोताश्रय का विस्तार 7 खाड़ियों, 4 नदियों, 4 एस्चुरीज तथा 42 अन्य जलधाराओं में है। दूसरे शब्दों में, हडसन नदी, ऊपरी तथा निचली खाड़ी, नैवार्क खाड़ी, किल वान, कुल, आर्थर किल, ईस्ट रिवर, फ्लशिंग खाड़ी, हार्लेम नदी, बटरमिल्क चैनल, बे-रिज चैनल, ग्रावैसेंड-बे, शीपशैड की खाड़ी, सैंडी हुक खाड़ी तथा रैरिटन की खाड़ी आदि जलधाराएँ मिलकर इस विशाल पोता-श्रय का निर्माण करते हैं।

ये सभी जलधाराएँ गहरी हैं जिनसे होकर आधुनिकतम बड़े से बड़े जलयान गुजर सकते है। ज्वार- भाटे की तरंगें यहाँ इतनी नगण्य हैं कि जलयान किसी भी समय आ-जा सकते हैं। स्टेटन द्वीप एवं सैंडी-हुक अवरोधक मेंडेर द्वारा समुद्री तूफानों से पोताश्रय सुरक्षित है। हिम-खंड पोताश्रय के मुहानों में कभी अवरोध प्रस्तुत नहीं करते। निस्सन्देह कभी-कभी कुहरा इतना ज्यादा हो जाता है कि जलयान कई दिन तक गतिशील नहीं हो पाते, परन्तु ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं। न्यूयार्क एक मात्र ऐसा बंदरगाह है जो अप्लेशियन क्रम को काटकर निकले मार्गों द्वारा देश

के भीतरी भागों से जुड़ा है। हडसन-मोहाक धँसाव, या इरी नहर, (वर्तमान में न्यूयार्क स्टेट बारगे नहर) इसे सीधा उस भीतरी भाग से जोड़ता है, जो महान् झील तथा ओहियो नदी एवं मिसीसीपी तथा अटलांटिक तट के मध्य स्थित हैं। यही संभाग सं० रा० अमेरिका का हृदय प्रदेश है। रेल तथा सड़कों द्वारा भी यह भीतरी भागों से जुड़ा है।

न्यूयार्क विश्व का सबसे बड़ा एवं सर्वाधिक व्यस्त बंदरगाह है जहाँ प्रति 10 मिनट के अन्दर (दिन के समय) कम से कम एक जलयान प्रवेश करता है और एक बाहर निकलता है। सम्भवतया रोजाना इसके डॉक्स में 400 जलयान खड़े रहते हैं। हडसन नदी (न्यूजर्सी साइड को शामिल करते हुए) बंदरगाह के समस्त व्यपार के लगभग आधे भाग के लिए उत्तरदायी है यद्यपि इसकी लम्बाई (बंदरगाह में) केवल 10 मील है जबकि कुल बंदरगाह का विस्तार लगभग 771 मील में है। न्यूयार्क से होने वाले निर्यातों में इस्पात की छीलन, शोधा हुआ तेल व सम्बन्धित पशुओं का दाना अधिकांश भाग बनाते हैं। जबकि आयातों में ईंधन-तेल, गैस, क्रूड-ऑयल, शक्कर, फल, कॉफी, कच्ची रबर, कच्ची रेशम, जिप्सम तथा कागज का बाहुल्य होता है। सारांश में न्यूयार्क आज विश्व का सबसे महत्वपूर्ण व्यापारिक एवं वित्तीय केन्द्र है। प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व यह स्थिति लंदन की थी।

न्यूयार्क की महत्ता उद्योगों की अपेक्षा व्यापार में निहित है। इसके बावजूद भी यह निर्विवाद सत्य है कि देश का एक बड़ा भारी औद्योगिक क्षेत्र है। शिकागो, पिटसबर्ग, क्लीवलैंड की तरह यहाँ भारी उद्योग नहीं हैं। कारण, भूमि का अभाव है। यहाँ के अधिकांश उद्योग आधारभूत न होकर गौण या मध्यम किस्म के हैं परन्तु विविध हैं तथा नागरीय आवश्यकताओं को देखते हुए व्यावहारिक है। यहाँ के उद्योगों में वस्त्र, पैट्रोल शोधन एवं सम्बन्धित वस्तुएँ, रसायन, तम्बाकू, मशीन, उर्वरक, साबुन, शक्कर, मांस, यंत्र तथा यातायात उपकरण आदि महत्वपूर्ण हैं।

रसायन उद्योग—न्यूयार्क क्षेत्र महाद्वीप का सबसे बड़ा रसायन उद्योग केन्द्र है जहाँ 15 से 20 प्रतिशत उद्योग विद्यमान है। ज्यादातर प्लांटस बहुत बड़े आकार के हैं। रसायन उद्योग संस्थान मुख्यतः दक्षिणी, दक्षिणी-पश्चिमी, प्रशांत तट, ईरी झील के दक्षिणी तट तथा कानावा घाटी में विद्यमान हैं। न्यूयार्क क्षेत्र के कारखानों में अधिकांशतः भारी रसायन जैसे एसिड्स, एमोनिया सोडा तथा पोटास आदि तैयार किये जाते हैं। बंदरगाह द्वारा कच्चे माल दूर-दूर से भी आसानी से आ जाते हैं। तैयार मालों के लिए पास में ही विशाल बाजार है। न्यूजर्सी में जगह ज्यादा होने के कारण भारी रसायन उद्योग फैले हैं। ब्रुकलिन अपने दवाइयों के निर्माण के लिए उल्लेखनीय है।

वस्त्रोद्योग—उत्पादन-मूल्य की दृष्टि से सिलेसिलाए वस्त्र तैयार करने का उद्योग अमेरिका में चौथे स्थान पर है। सात को छोड़कर सभी राज्यों में यह प्रचलित है। न्यूयार्क इस उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है जहाँ यह उद्योग नगर के मध्य में, पूर्व में फिफ्थ एवैन्यू, पश्चिम में एथं एवैन्यू, दक्षिण में टवेन्टी फिफ्थ स्ट्रीट तथा उत्तर में फोर्टी-सैकिंड स्ट्रीट के मध्य स्थित भू-भाग में फैला है। उद्योग की सघनता का अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि मैनहैट्टन द्वीप में इस उद्योग मे संलग्न 2,00,000 व्यक्ति केवल 200 एकड़ के भू-भाग में कार्य करते हैं। इस्पात या ऑटोमोबाइल उद्योग की तरह इसे बड़े कारखानों की जरूरत नहीं है। दूसरे इस उद्योग में प्रयोगित भवनों का विस्तार सम्भवत हुआ है। छोटी-छोटी दुकानें हैं। लगभग 7000 दूकानें औसत आकार की है जिनमें से प्रत्येक में औसतन 30 व्यक्ति कार्य करते हैं। शायद पिटसबर्ग के लौह उद्योग या डैट्रायट के ऑटोमोबाइल उद्योग में इतने श्रमिक संलग्न नहीं होंगे जितने न्यूयार्क के इस रैडीमैड वस्त्रोद्योग में। न्यूयार्क नगर में कोई हिस्सा या उपनगर इतना खिच-पिच नहीं है जितना इस उद्योग वाला भाग। स्वाभाविक है कि न्यूयार्क में जो वस्त्र तैयार होते हैं उनका उत्पादन-मूल्य अन्य भागों में तैयार वस्त्रों की तुलना में कहीं ज्यादा होता है। मूल्य में 15 से 25% तक का अन्तर रहता है। इसके बावजूद भी, यह सच है कि देश कि तीन-चौथाई महिलाओं और एक-तिहाई पुरुषों के वस्त्र अकेले इस नगर में तैयार किए जाते हैं।

तेल शोधन उद्योग—मैट्रोपॉलिटन एक बड़ा तेलशोधन केन्द्र भी है। ज्यादातर बड़े एवं नए तेलशोधक कारखाने या तो यातायात मार्गों या बाजारी केन्द्रों के निकट स्थित हैं। भीतरी क्षेत्रों से पाइप लाइनों एवं कैलीफोर्निया, खाड़ी तट तथा कैरीबियन देशों से टैंकर्स द्वारा भारी मात्रा में क्रूड ऑयल लाया जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से तेलवाहक जलयानों की अपेक्षा पाइप लाइनों को ज्यादा सुरक्षित समझा जाने लगा है (जर्मन पन-डुब्बियों ने अनेक टैंकर्स को नष्ट किया, पथ-भ्रष्ट किया) अतः सरकार ने टैक्सास तेल क्षेत्रों से पूर्वी तटों की ओर तेल लाने के लिए 'बिग इंच' तथा 'लिटिल बिग इंच' पाइप लाइनों का निर्माण किया है। न्यूयार्क के ज्यादातर तेल-शोधक कारखाने हडसन नदी पर न्यूजर्सी-साईड में स्थित हैं क्योंकि वहाँ बड़े भंडार बनाने के लिए पर्याप्त जगह है। बेयोन,यहाँ का प्रधान तेल-शोधन केन्द्र है।

मांस उद्योग—अत्यधिक जन बसाव, विशेषकर यहूदी जनसंख्या की मात्रा ने यहाँ इस उद्योग को प्रोत्साहित किया है। इन्हीं के प्रतिनिधियों की देख-रेख में बट्टीयर चलाये जाते हैं 'कोशर मांस' उद्योग को यहूदियों ने धार्मिक आडम्बर से जोड़ा हुआ है। उनकी भाषा में 'कोशर' शब्द से तात्पर्य है 'शुद्ध' या 'साफ'। जानवर को काटने के बाद उसका पेट व अंग देखे जाते हैं। पूर्ण स्वस्थ जानवरों

का मांस ही खाने के काम में लिया जाता है। कटने के 72 घंटे के भीतर मांस का बेचा जाना आवश्यक है। न्यूयार्क के इन कट्टीघरों में प्रयोगित ज्यादातर पशु वर्जीनिया तथा पेंसिलवेनिया राज्यों से आते है।

दक्षिणी-पूर्वी पेंसिलवेनिया :

दक्षिणी-पूर्वी पेंसिलवेनिया के औद्योगिक क्षेत्र के अन्तर्गत फिलाडेलफिया से लेकर विलमिंगटन तक का हिस्सा आता है। साथ में ही बाल्टीमोर एवं न्यूजर्सी, डेलावेयर तथा मेरीलैंड आदि राज्यों के भी कुछ भाग शामिल किये जाते हैं। भारी तथा हल्के उद्योग का जैसा संगम इस क्षेत्र में है वैसा कहीं भी देखने को नहीं मिलता। रेशमी धागे से लेकर इस्पात तक यहाँ तैयार होता है। यद्यपि फ्लाडेलफिया औद्योगिक केन्द्र है लेकिन ज्यादातर व्यापार, विशेषकर लेहाई घाटी क्षेत्र का, न्यूयार्क द्वारा होता है। क्षेत्र के दक्षिण-पूर्व में स्थित बाल्टीमोर न केवल इस क्षेत्र वरन् समस्त अमेरिका के प्रधान व्यापारिक औद्योगिक नगरों में से एक है। यहाँ का औद्योगिक-इतिहास भी उतना ही पुराना है जितना कि न्यू इंगलैंड प्रदेश का।

लौह-इस्पात उद्योग—यह क्षेत्र बहुत पहले से ही लौह-इस्पात उद्योग की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। स्पैरोप्वाइंट पर स्थित बैथेल हैम इस्पात कार्पोरेशन का लौह-इस्पात का कारखाना तो खैर पुराना है परन्तु कई नए इस्पात संस्थान भी स्थापित किए गए हैं जिनमें मौरिसविले (पेंसिलवेनिया) में स्थित 'सं. रा. अमेरिका इस्पात निगम' द्वारा तथा फ्लाडेलफिया के दक्षिण में स्थित डेलावेयर नदी पर पॉलसबोरो के निकट 'राष्ट्रीय इस्पात निगम' द्वारा स्थापित कारखानें महत्वपूर्ण हैं। फ्लाडेलफिया तथा ट्रेंटन के मध्य दो अन्य निगमों द्वारा भी बड़े इस्पात के कारखाने खड़े किये जा रहे हैं। पिछले दशकों में उद्योगपतियों में तट भाग में कारखाने स्थापित करने की जो प्रवृत्ति दीख पड़ी है उसके कई ठोस कारण हैं यथा, सुपीरियर झील के उच्च श्रेणी के लौह-अयस में ह्रास हो रहा है। दिनों दिन चिली, ब्राजील, वैनीज्वला तथा लाइबेरिया से आयातित अयस का महत्व बढ़ता जा रहा है। तटवर्ती पट्टी में भारी बाजार है। विदेशी बाजारों में तैयार माल पहुँचाने के लिए तटवर्ती स्थिति ही सबसे अच्छी है।

मौरिसविले में, जहाँ डेलावेयर नदी एक बड़ा मोड़ लेती है 3800 एकड़ भूमि पर सं. रा. अमेरिका इस्पात निगम का विशाल 'फेयरलेस वर्क्स' खड़ा है 1,800,000 टन इस्पात-पिंडों की क्षमता वाले कारखाने में लगभग 6000 व्यक्ति कार्य करते हैं। इस कारखाने के लिए लौहा वैनीज्वला के कैरो-बोलीवर क्षेत्र कोयला पेंसिलवेनिया तथा पश्चिमी वर्जीनिया तथा चूने का पत्थर पेंसिलवेनिया से आता है। मैरीलैंड राज्य में स्पैरोप्वाइंट पर स्थित बैथेलहैम निगम का इस्पात

कारखाना तट पर स्थित विश्व का सबसे बड़ा कारखाना है। इसे लौह प्रयस चिली, कोयला पश्चिमी वर्जीनिया तथा चूने का पत्थर पेंसिलवेनिया से उपलब्ध होता है। बर्मिघम को छोड़ यहाँ सबसे सस्ता इस्पात तैयार होता है।

जलयान निर्माण उद्योग—युद्ध के दिनों, जबकि प्रशांत तट और खाड़ी तट भी महत्वपूर्ण हो उठे थे, को छोड़कर यह क्षेत्र जलयान निर्माण उद्योग की दृष्टि से देश में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण रहा है। देश में तैयार कुल टन-भार का लगभग 3/5 यहाँ से सम्बन्धित रहा है। डेलावेयर नदी, जिस पर फ्लाडेलफिया, कामडैन, चैस्टर, तथा विलमिगटन के विशाल शिपयार्ड खड़े हैं, को 'अमेरिकन क्लाइड' कहा जा सकता है। वैसे विशेषज्ञों का कहना है कि क्लाइड की अपेक्षा डेलावेयर में जलयान निर्माण उद्योग के लिए परिस्थितियाँ ज्यादा अच्छी हैं। अगर अमेरिका का यह भाग निर्माण-मात्रा में स्कॉटलैंड की बराबरी तक नहीं पहुँच पाया तो इसके आर्थिक कारण हैं न कि भौगोलिक। स्पेरोप्वाइंट पर भी विशालाकार यार्ड विकसित हो गए हैं।

मशीन-टूल्स-लोको-मशीनरी उद्योग—लोकोमोटिव्स के निर्माण में फ्लाडेलफिया विश्व में कई दशकों से अग्रणी रहा है। इसका प्रसिद्ध बाल्डविन लोकोमोटिव वर्क्स जो पहले नगर के एक खिच-पिच भाग में था अब डेलावेयर पर स्थित एडीस्टोन उपनगर में स्थानांतरित कर दिया गया है। बाजार की निकटता, कच्चे मालों की उपलब्धि, कुशल श्रम इस्पात की प्राप्ति, उत्तम यातायात व्यवस्था एवं जल्दी की शुरूआत आदि तत्वों ने इस क्षेत्र को विविध प्रकार की औद्योगिक मशीनों एवं यांत्रिक-उपकरणों के उत्पादन में अग्रणी कर दिया है।

एयर क्राफ्ट उद्योग—यह क्षेत्र विशेषकर बाल्टीमोर नगर के पास का भाग वायुयानों के निर्माण में भी पर्याप्त उन्नत है। द्वितीय विश्व युद्ध के समय यहाँ का 'मार्टिन एयर-क्राफ्ट निगम' राष्ट्र के अग्रणी संस्थानों में से था। प्रेंस्टन, वैस्ट ट्रेंटन, लॉक हावेन तथा फ्लाडेलफिया में भी वायुयान के एंजिन तैयार किये जाते हैं।

तेल-शोधन—टैक्सास तथा कैलीफोर्निया के बाद पेंसिलवेनिया राज्य तेल-शोधन में सबसे आगे है। इसे पाइप लाइनों द्वारा क्रूड ऑयल प्राप्त करने की सुविधा है, भारी बाजार निकट स्थित हैं। प्लांटस टैक्सास की तुलना में छोटे हैं परन्तु श्रम कुशल है।

उपर्युक्त के अतिरिक्त दक्षिणी-पूर्वी पेंसिलवेनिया में रसायन, चमड़ा, तांबा शोधन तथा शक्कर उद्योग विकसित हैं।

मोहॉक-घाटी तथा ओन्टेरियो-मैदान :

मोहॉक घाटी तथा ओन्टेरियो के मैदान का औद्योगिक विकास प्रधानतः इनके यातायात के महत्व के कारण हुआ है। ये दोनों ही पर्याप्त नीचे, समुद्री तल

के समतल हैं। इनमें होकर ईरी नहर, न्यूयार्क मध्यवर्ती रेल-मार्ग तथा सं. रा. हाइवे नं. 20 गुजरते हैं। आज यह पूरी पट्टी शहरी अधिवासों द्वारा घेरी हुई है जो 1825 में ईरी नहर के बन जाने के बाद, नहर के सहारे-सहारे और भी तीव्र गति से बढ़े। कई छोटे-छोटे नगर हैं जो किन्ही विशिष्ट उत्पादनों में सलग्न हैं। रौचेस्टर में कैमरा, चश्मे तथा पुरुषों के कपड़े तैयार किए जाते हैं। रोम में तांबे तथा पीतल तो सायराक्यूजे में सोडा, जूता एवं टाईपराईटर्स में विशिष्टता प्राप्त की गई हैं। शैनेक्टैडी में रेल के इंजन तथा डिब्बे बनाए जाते हैं। दक्षिणी-पश्चिमी न्यू इंगलैंड की तरह यहां के उद्योग भी ऐसे हैं जिन्हें कच्चे-माल व धातु की अपेक्षा श्रमिक कुशलता तथा शक्ति की ज्यादा आवश्यकता है।

न्यागरा सीमांत क्षेत्र :

यह औद्योगिक क्षेत्र ओन्टेरियो तथा ईरी झील के मध्य पश्चिमी न्यूयार्क एवं ओन्टेरियो (कनाड़ा) की सीमाओं में फैला है। औद्योगिक विकास का प्रधान आधार न्यागरा प्रपात से उपलब्ध होने वाली शक्ति है जिसने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर स्थित इस संभाग में रसायन, धातु-शोधन व अन्य भारी उद्योगों को प्रोत्साहित किया है। अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर स्थित होने के कारण इस क्षेत्र की दो औद्योगिक राजधानियां (केंद्र) हैं; अमेरिका की तरफ बफेलो तथा कनाडियन सीमा में टोरंटो। बफेलो नगर के एक उपनगर लेकावन्ना में स्थित इस्पात संस्थान अमेरिका के बड़े लौह इस्पात कारखानों में से एक है। अन्य झील के तटवर्ती नगरों की तरह बफेलो भी कोयला लौह अयस तथा लाइम स्टोन के यातायात का संगम स्थल है। इसी से यहां भारी उद्योगों का विकास हुआ है। न्यागरा प्रपात से उत्पन्न जल विद्युत शक्ति के आधार पर यहां विद्युत-रसायन तथा कई प्रकार के धातु शोधन सम्बन्धी कारखाने विकसित हो गए हैं। आटे पीसने की विशाल चक्कियां हैं। बफेलो से न्यूयार्क-न्यूजर्सी घने बसे, औद्योगिक प्रदेश को इस्पात, आटा व अन्य अनेक वस्तुएँ भेजी जाती हैं।

पिटसबर्ग-क्लीवलैंड क्षेत्र :

पिटसबर्ग-क्लीवलैंड क्षेत्र सं. रा. अमेरिका का प्रधान लौह-इस्पात उत्पादक क्षेत्र है। इस्पात उद्योग के अतिरिक्त यहां अन्य कई उद्योग विकसित है जिनमें रबर, विद्युत, मशीनरी, मोटर, मशीन-टूल्स, पेंटस, रसायन, वस्त्र तथा कांच उल्लेखनीय हैं। क्लीवलैण्ड तथा पिटसबर्ग के अलावा यंगसटाउन, एक्रोन, व्हीलिंग आदि बड़े औद्योगिक केन्द्र भी राष्ट्रीय महत्व के हैं। इसी क्षेत्र से दक्षिणी-पश्चिमी मिशीगन, ओहियो तथा पूर्वी इंडियाना आदि राज्यों के औद्योगिक संस्थानों को कच्चा एवं तैयार इस्पात सप्लाई किया जाता है। वस्तुतः यह क्षेत्र ऐसी स्थिति में है कि यहां भारी उद्योगों का विकास बहुत स्वाभाविक था। यह उत्तर से झील

मार्ग से आने वाले लौह-अयस एवं लाइम स्टोन तथा दक्षिण से उत्तर की ओर जाने वाले कोयला के सगम स्थल पर विद्यमान है।

लौह-इस्पात उद्योग—उत्तरी अमेरिका के धातु उद्योग का एक बड़ा भाग पिटसबर्ग-क्लीवलैंड क्षेत्र में है। इस्पात उद्योग की आदर्श स्थिति वह है जहाँ कच्चे माल तथा बाजार दोनों उपलब्ध हों। सं. रा. अमेरिका में ऐसी आदर्श स्थिति किसी भी इस्पात केन्द्र की नहीं है। कुछ सीमा तक शिकागो एवं डैट्रायट में शर्तें पूरी करते हैं। जहाँ तक पिटसबर्ग क्षेत्र का सम्बन्ध है उसके विकास का मुख्य आधार यहाँ स्थानीय रूप से पाये जाने वाला बिटूमिनस कोयला है जिससे 'कोक' तैयार किया जाता है। कोनेल्सविले कोक बनाने का प्रसिद्ध केन्द्र है जिसे एक तरह से पिटसबर्ग का ही उप-भाग कहा जा सकता है। अब तक इस उद्योग में 'बी-हाइव' भट्टियों में तैयार किया हुआ कोक प्रयोग किया जाता था। पिछले 2-3 दशकों से 'बाई-प्रोडक्ट कोक' का प्रचलन चल पड़ा है। यह विधि ज्यादा आर्थिक है।

पिटसबर्ग न केवल अमेरिका वरन् दुनियाँ का सबसे बड़ा इस्पात केन्द्र है। यहाँ कारखाने ओहियो, अलघैनी, तथा मोनन-गहेला आदि नदियों की घाटियों में स्थापित किए गए हैं। पिटसबर्ग के लगभग 35 मील उत्तर में दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र यंगस-टाउन है। ये दोनों मिलकर देश का लगभग 40% इस्पात तैयार करते हैं। क्षेत्र के अन्य इस्पात केन्द्रों में मैसीलन, शैरोन, मँडांक-कार्नेगी, जोन्सटाउन तथा मैरिजपोर्ट आदि उल्लेखनीय हैं। इस्पात के अतिरिक्त सम्बन्धित उत्पादन जैसे रेल के डिब्बे, चद्दरें, प्लेटस, यंत्र, तथा विविध मशीनें तैयार की जाती हैं।

रबर उद्योग—रबर उद्योग एवं एक्रोन बहुत लम्बे समय तक एक-दूसरे के पर्यायवाची रहे हैं। कहा जाता है एक्रोन को वर्तमान स्थिति तक पहुँचाने वाला एक अकेला तत्व रबर उद्योग ही है। यहाँ रबर उद्योग 1870 में बी. एफ. गुडरिच द्वारा प्रारम्भ किया गया। शीघ्र ही यह इतना विकास कर गया कि प्रथम विश्व युद्ध के समय में इसमें 70,000 श्रमिक संलग्न थे और यह नगर दुनियाँ के अग्रणी उद्योग केन्द्रों में हो गया। एक्रोन में सबसे बड़ा आकर्षण कुशल श्रम रहा है। पिछले दशकों में इस उद्योग में भी विकेन्द्रीकरण हुआ तथा कई रबर के कारखाने अलाबामा, कैलीफोर्निया, मेरीलैंड, मिसीसीपी, न्यू इंगलैंड तथा न्यूयार्क आदि राज्यों में खुल गए हैं। विकेन्द्रीकरण के अन्य कारणों के साथ यह भी महत्वपूर्ण रहा है कि एक्रोन में मजदूरों की हड़ताल बहुत होती है जिससे तंग आकर पूंजी-पतियों ने अपने कारखानों को स्थानांतरित करना शुरू किया। संभवतः इसी लिए एक्रोन के कारखानों में ज्यादा से ज्यादा स्वचालित मशीनें काम में लाने की व्यवस्था पर जोर दिया जा रहा है।

कांच-उद्योग—शताब्दियों तक कांच उद्योग कुटीर उद्योग के रूप में रहा। 1908 में पहली बार मशीन का प्रयोग किया गया। कांच बनाने के लिए सोडियम

सल्फेट, कैल्शियम कार्बोनेट (शुद्ध चूना) तथा क्वार्टज-रेता की आवश्यकता होती है जो इस क्षेत्र को इलीनॉय पैंसिलवेनिया तथा पश्चिमी वर्जीनिया आदि राज्यों से प्राप्त हो जाती है। ईंधन के रूप में सर्वप्रथम चारकोल फिर कोयला तथा आजकल गैस काम में लायी जाती है। प्रारम्भ में कांच उद्योग अप्लेचियन के पूर्व में था। जब ईंधन के नए साधन (कोयला, गैस) प्रयोग में लिए जाने लगे तो पश्चिमी पैंसिलवेनिया, दक्षिणी-पूर्वी ओहियो तथा उत्तरी-पश्चिमी वर्जीनिया में स्थानांतरित हो गया।

मशीन-टूल्स—लौह इस्पात उद्योग से पृथक रूप में मशीन-टूल्स उद्योग 1870 में अस्तित्व में आया। प्रारम्भ में यह न्यू इंगलैंड में था पर चूंकि इसे कच्चे माल के रूप में इस्पात की आवश्यकता होती है अतः बाद के दिनों में पश्चिम की ओर स्थानांतरित हुआ। पहला प्लांट सिनसिनाटी में खोला गया। क्लीवलैंड में जो कि दूसरे नम्बर का मशीन-टूल्स केन्द्र माना जाता है, यह उद्योग 1880 में प्रारम्भ हुआ। कुशल श्रम, बाजार की निकटता तथा कच्चे माल के रूप में लौह-इस्पात की उपलब्धि वे तत्व हैं जिनके आधार पर मशीन-टूल्स उद्योग का निर्धारण होता है। यही कारण है कि मशीन-टूल्स के लगभग सभी कारखाने अमेरिका की औद्योगिक पेटी में हैं और यहां भी सर्वाधिक केन्द्रीयकरण क्लीवलैंड पिट्सबर्ग क्षेत्र में।

विद्युत-उपकरण—पिटसबर्ग स्वयं विद्युत उपकरणों का भारी उत्पादक केन्द्र है। पिटसबर्ग का वैस्टिंगहाउस, क्लीवलैण्ड का लिंकन इलैक्ट्रिकल्स तथा नेलापार्क का जनरल इलैक्ट्रिक प्लांट दुनियां के बड़े विद्युत-उपकरण निर्माण करने वाले केन्द्रों में से है।

रसायन उद्योग—रसायन उद्योग इस क्षेत्र में अपेक्षाकृत नया ही है जिसका विकास मुख्यतः 1945 के बाद हुआ है। इसके विकास के लिए कोरिया-युद्ध को श्रेय दिया जाता है। अधिकांश रसायन के कारखाने ओहियो राज्य की उत्तरी सीमा बनाते, इरी झील के तट के सहारे-सहारे 75 मील लम्बी एक पेटी में फैले हैं जिनका विस्तार पश्चिम में लोरेन से लेकर पूर्व में आश्तावुला तक है। इन दोनों के अतिरिक्त अन्य रसायन-केन्द्रों में एक्रन, क्लीवलैंड, बार्बर्टन, फेयर पोर्ट, पेन्सविले तथा पैरी उल्लेखनीय हैं। आधारभूत रासायनिक उत्पादनों के अतिरिक्त यहाँ कृत्रिम रेशा वस्त्र प्लास्टिक्स व उर्वरक तैयार किए जाते हैं।

विशाल कान्हावा घाटी :

पश्चिमी वर्जीनिया में, पूर्व में गॉली ब्रिज तथा पश्चिम में नीट्रो के मध्य लगभग 60 मील की लम्बाई में फैली इस घाटी को 'रसायन-घाटी' के नाम से पुकारा जाता है। ऊपरी एवं मध्य घाटी में विशालाकार रासायनिक कारखाने खड़े हैं। घाटी के रसायन उद्योग का वास्तविक विकास प्रथम विश्व युद्ध के दौरान

जब संकटकालीन आवश्यकता की पूर्ति के लिए विस्तार और अधिकाधिक उत्पादन की नीति अपनायी गई। तभी से यह निरन्तर बढ़ रहा है। कोयला, गैस, पैट्रोलियम, नमक, कई प्रकार की मिट्टियाँ, यातायात, जल तथा जल-शक्ति आदि के प्रमुख आकर्षण थे जिन्होंने इस उद्योग को कान्हावा की घाटी की तरफ आकर्षित किया। सल्फरिक-एसिड, कॉस्टिक सोडा, एमोनिया, क्लोरीन, एथीलीन, क्लोरोफार्म, ईथर, कांच, कृत्रिम रबर तथा कृत्रिम वस्त्र यहाँ के प्रमुख उत्पादन हैं। चार्ल्सटन तथा नीट्रो सबसे बड़े केन्द्र हैं। बेले तथा ग्लेन फेरिस में भी विशाल प्लांट्स हैं। उद्योग के केन्द्रीयकरण का अनुमान इस तथ्य से होता है कि पश्चिमी-वर्जीनिया की 1/8 जनसंख्या कानावा घाटी में रहती है और इस घाटी की एक-तिहाई जनसंख्या अकेले चार्ल्सटन नगर में केन्द्रित है। नायलोन का आविष्कार कान्हावा घाटी में ही हुआ।

ओहियो-इंडियाना औद्योगिक क्षेत्र :

यह क्षेत्र ओहियो नदी के सहारे पूर्व में कोयला प्रदेश तथा पश्चिम में कृषि प्रदेश के मध्य बड़ी अच्छी स्थिति में स्थित है। यहाँ के उद्योगों में विविधता है। मशीन-टूल्स, विद्युत रैफ्रीजिरेटर्स, साबुन, मांस, तम्बाकू, लौह-इस्पात, बीयर, जूता, रेडियो तथा वस्त्रोद्योग का विकास इस बात का संकेतक है कि यहाँ के उद्योगों का स्वरूप कच्चे माल की बजाय बाजारी मांग पर आधारित है। ज्यादातर औद्योगिक संस्थान मियामी घाटी में स्थित हैं जो स्प्रिंग फिल्ड से सिनसिनाटी तक फैली है। उद्योगों की प्रकृति के आधार पर मियामी घाटी के उद्योग केन्द्रों को दो भागों में रखा जा सकता है। एक पूर्वी भाग जिसका केन्द्र सिनसिनाटी है तथा दूसरा पश्चिमी भाग जिसका प्रधान केन्द्र इंडियाना पोलिस है।

पूर्वी भाग—ओहियो-इंडियाना औद्योगिक क्षेत्र का यह भाग आज भी कृषि प्रधान है। कृषि उपजों का मूल्य यहाँ इतना सस्ता होता है कि अनाज जानवरों को खिलाया जाता है। उन्हीं के आधार पर पिछली शताब्दी के मध्य तक सिनसिनाटी बहुत बड़ा मांस केन्द्र हो गया था। इस संभाग में उद्योगों की शुरूआत मियामी ईरी नहर बनने के साथ हुई। नहर के सहारे-सहारे कई कस्बे पनपे जो बाद में जाकर औद्योगिक केन्द्रों के रूप में प्रतिष्ठित हुए। मियामी घाटी के उद्योगों का विकास तीन चरणों में हुआ। प्रथम—प्रारम्भिक दिनों में जबकि ओहियो नदी में होकर दक्षिण की तरफ कृषि क्षेत्रों से सम्बन्धित अर्द्ध औद्योगिक उत्पादन जैसे आटा, मांस, ऊन तथा चमड़ा आदि जाने लगे। द्वितीय—रेल के विकास के साथ-साथ कृषि यंत्र, तम्बाकू, कागज, साबुन तथा मशीनरी उद्योग विकसित हुए, तृतीय—वर्तमान युग जबकि विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति बढ़ी, फलतः लौह-इस्पात, मशीन-टूल्स, रेडियो, मशीनें, एअर क्राफ्ट तथा स्वचालित मशीनें बनने लगीं।

पश्चिमी भाग—पूर्वी भाग की तरह कृषि यहाँ भी विकसित है परन्तु उद्योग धंधे ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। प्रमुख उत्पादन कृषि यंत्र, काँच, विविध रसायन, ऑटोमोबाइल-पार्टस, एंजिन्स, फर्नीचर, विद्युत-मशीनें, दवाइयाँ, वायुयान के पार्टस तथा होजरी आदि हैं। आटा-पिसाई, माँस तथा सब्जी-फलों का पैकिंग भी पर्याप्त विकसित है। यह भाग टमाटर के लिए विख्यात है जिसे विभिन्न स्वरूपों में तैयार करके देश के अन्य भागों को भेजा जाता है। इंडियाना पोलिस इस संभाग की औद्योगिक नगरी है।

दक्षिणी मिशीगन ऑटोमोबाइल क्षेत्र :

ऑटोमोबाइल्स के उत्पादन के लिए विश्वविख्यात इस क्षेत्र में दो प्रधान केन्द्रों डेट्रायट (अमेरिका) तथा विंडसर (कनाडा) के अतिरिक्त भीतरी और बाह्य वृत्त के वे अनेक कस्बे शामिल किए जाते हैं जो ऑटोमोबाइल उद्योग में सहायक केन्द्रों की भूमिका निभा रहे हैं। भीतरी वृत्त में माउंटक्लैमोस, पौंटियाक, एन आर्बर, सिलांटी तथा मोनरो एवं बाह्य वृत्त में फ्लिंट, लैन्सिंग, ओवोसो, जैकसन, एड्रियान, पोर्ट ह्यूरोन टोलैडो तथा साउथ बैंड आदि आठ नगर शामिल किए जाते हैं। इन आठों नगरों के उद्योग परोक्ष रूप में डेट्रायट के ऑटोमोबाइल उद्योग के सहकर्मी हैं।

प्रायः यह कहा जाता है कि कोयला, लोहा क्षेत्रों से दूर, झील के तट पर स्थित इस नगर (डेट्रायट) को औद्योगिक दुनियाँ में सुर्खियों की स्थिति तक पहुँचाने वाला ऑटोमोबाइल उद्योग ही है। यह एक ऐसा नगर है जिसमें एक ही उद्योग है। इस नगर की सीमाओं के भीतर देश की 17 मोटर गाडियों में से 7 तथा 50 मोटर ट्रकों में से 4 के कारखाने विद्यमान है। वस्तुतः ऑटोमोबाइल उद्योग एक कारखाने से सम्बन्धित नहीं होता। विभिन्न पार्टस विभिन्न कारखानों में तैयार होते हैं जो मुख्य कारखाने में जोड़े जाते हैं। जोड़ने वाले कारखाने डेट्रायट में हैं जबकि विविध पार्टस बनाने का काम उपनगरों तथा निकट स्थित नगरों में होता है। इस प्रकार कारखानों मे पूर्णतया विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति पाई जाती है।

डेट्रायट के ऑटोमोबाइल उद्योग के इतिहास में झाँकने से ज्ञात होता है कि यहाँ चूँकि इस उद्योग के प्रारम्भकर्त्ता विद्यमान थे अतः यह स्थल उद्योग केन्द्र बना। फोर्ड ने 'एसेम्बली' प्रणाली की शुरुआत की जिससे आस-पास के नगरों में इस उद्योग का भारी विस्तार हुआ। भारी पैमाने पर उत्पादन का श्रेय एली व्हिटनी को दिया जाता है जिसने वित्त की व्यवस्था कर उद्योग की आज की स्थिति में पहुँचने में सहयोग दिया। डेट्रायट का ऑटोमोबाइल उद्योग, व्यावहारिक रूप में, तीन निगमों के आधिपत्य में है जो अपने आकार तथा उत्पादन मात्रा की दृष्टि से

तो विश्व के अग्रणी निगमों में हैं ही साथ में अमेरिका की 9/10 मोटर गाड़ियों के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। इन तीनों में सबसे बड़ा संगठन जनरल मोटर्स कार्पोरेशन का है जो अपनी शाखाओं और सहायकों सहित लगभग 2/5 उत्पादन के लिए जिम्मेदार है। इसके बाद फोर्ड मोटर कम्पनी तथा क्राइसलर कार्पोरेशन का नम्बर आता है।

भौगोलिक एवं आर्थिक दृष्टियों से भी डेट्रायट क्षेत्र ऑटोमोबाइल उद्योग के लिए उपयुक्त सिद्ध हुआ है। अमेरिका की औद्योगिक पेटी में 92.5 प्रतिशत इस्पात तथा 88 प्रतिशत ऑटोमोबाइल्स की उत्पादन-क्षमता विद्यमान हैं। डेट्रायट की स्थिति ऐसी है कि वह शिकागो, गारी, क्लीवलैंड, लोरेन, तथा बफैलो से आसानी से सस्ता इस्पात उपलब्ध कर सकता है। झील मार्ग से यातायात की सुविधा है। रेल तथा सड़कों द्वारा डेट्रायट देश के हृदय-प्रदेश से जुड़ा है।

डेट्रायट क्षेत्र में ऑटोमोबाइल उद्योग इस तरह छाया हुआ है कि अन्य उद्योगों के अस्तित्व के बारे में सहज ही ध्यान नहीं आता। जबकि असलियत यह है कि यहाँ रसायन, कृषि यंत्र व मशीन उद्योग भी विकसित हैं। अधिकांश रासायनिक कारखाने नगर के उत्तर में डेट्रायट नदी के सहारे-सहारे स्थित हैं। यहाँ इस उद्योग के विकास का प्रधान आधार स्थानीय रूप से प्राप्त नमक रहा है। परिस्थितियों को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में डेट्रायट में लोह-इस्पात उद्योग भी विकसित होगा। बढ़ती हुई माँग को पूरा करने के लिए भारी मात्रा में सस्ते इस्पात की आवश्यकता होगी और डेट्रायट की झील मार्ग में स्थिति इस दृष्टि से बड़ी भाग्यवान है कि वह लोह-अयस (सुपीरियर झील क्षेत्र से) तथा कोयला (उत्तरी अप्लेचियन क्षेत्र से) दोनों ही उपलब्ध कर सकती है।

शिकागो—मिलवॉकी क्षेत्र :

यह औद्योगिक क्षेत्र मिशीगन झील के दक्षिणी-पश्चिमी एवं पश्चिमी किनारे के सहारे-सहारे गॉरी से मैनीटोवोक तक फैला है जिसमें शिकागो, मिलवॉकी तथा अनेक निकटवर्ती औद्योगिक नगर शामिल किए जाते हैं। यहाँ उद्योगों की प्रधानता है। शिकागो एवं गारी अमेरिका के अत्यन्त संतुलित धातु उद्योग केन्द्रों में से है। इनका उत्पादन बड़ी तेजी से बढ़ता जा रहा है और एक दिन आ सकता है जबकि ये पिट्सबर्ग के प्रतिद्वंद्वी बन जाएँ। लोह इस्पात उद्योग के ये सबसे पश्चिमी केन्द्र हैं जहाँ मुख्य एवं गौण दोनों प्रकार के धातु उद्योग विकसित हैं। इस्पात उद्योग के अतिरिक्त इस क्षेत्र में तेलशोधन, मांस पैकिंग, मशीनी निर्माण, विद्युत-उपकरण, वायुयान के इंजन, घड़ियाँ, कृषि यंत्र, रेलवे कार, ऑटोमोबाइल्स, वस्त्र, जूता तथा सीमेंट उद्योग भी विकसित हैं। शिकागो न केवल इस क्षेत्र की वरन् समस्त मध्य-पश्चिमी अमेरिका की आर्थिक राजधानी है।

लौह-इस्पात उद्योग—गॅरी-शिकागो दुनिया के प्रमुख इस्पात उत्पादन केन्द्रों में से है। उद्योगों के विकास के लिए भौगोलिक स्थिति बड़ी अनुकूल है। लौह-अयस एवं लाइमस्टोन जलयानों द्वारा सीधे प्रवात भट्टियों तक लाए जा सकते हैं। कोयला मध्य तथा दक्षिणी इलीनॉय से रेलवे द्वारा एवं पश्चिमी वर्जीनिया तथा केन्टुकी की खानों से झील मार्ग द्वारा लाया जाता है। सं. रा. अमेरिका में यह औद्योगिक क्षेत्र ऐसा है जहाँ इस्पात को उत्पादन एवं खपत मात्रा दोनों में उचित समन्वय है। उत्पादन की मात्रा तेजी से बढ़ रही है। आजकल यह क्षेत्र पिटसबर्ग के बराबर इस्पात उत्पादन करने में लगा है। गॅरी की स्थिति बड़ी सुनियोजित और वैज्ञानिक है। यहाँ कोयला, लौह-अयस तथा चूना तीनों ही प्राप्तिक रूप में उपलब्ध होते हैं। पास में इस्पात का बड़ा भारी बाजार है। पिछले 65-70 वर्षों में यहाँ के धातु उद्योग का विस्तार क्रमशः किया गया है। 1905 में सं० रा० इस्पात निगम को यह महसूस हुआ कि इस क्षेत्र की इस्पात सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति के लिए उत्पादक संस्थान हो। आज जिस जगह गॅरी के कारखाने खड़े हैं, वहाँ उस समय दलदल तथा रेत के टीले थे पर चूँकि कच्चे मालों की आवक के लिए यह स्थान आदर्श था अतः यह चुना गया। बाजारी माँग की दृष्टि से गॅरी की स्थिति अद्वितीय है। लौह-अयस सुपीरियर झील क्षेत्र के भंडारों तथा चूना इंडियाना एवं मिशीगन राज्यों की खानों से आ जाता है।

कृषि यंत्र—अप्लेशियन को पार करके जैसे-जैसे अमेरिकी लोग भीतरी भागों में घुसते गए, कृषि का विस्तार विशाल भू-भागों में होता गया, और नए-नए यन्त्रों का आविष्कार हुआ। कृषि यंत्रों के निर्माण-केन्द्र भी वस्तुतः कृषि के साथ-साथ पश्चिमोत्तर होते गए। इलीनॉय राज्य, अन्त में जाकर इन कृषि यंत्रों का सबसे बड़ा उत्पादक बना और आज यहाँ समस्त देश में उत्पादित कृषि यंत्रों के आधे यंत्र तैयार किए जाते हैं। शिकागो भी कृषि यंत्रों का भारी उत्पादक केन्द्र है। चूँकि कृषि यंत्र भारी होते हैं। अतः इनके कारखाने जहाँ तक सम्भव हो कृषि क्षेत्रों के पास ही स्थापित किए जाते हैं।

पेट्रोल शोधन—शिकागो मैट्रोपॉलिटन क्षेत्र का दक्षिणी भाग, जो व्हिटिंग के नाम से जाना जाता है, अमेरिका की औद्योगिक मेखला के तीन बड़े तेल-शोधन एवं संचयन केन्द्रों में से एक है। यहाँ इस व्यवसाय की कोई भौगोलिक व्यवस्था नहीं। विकास का प्रधान आधार बाजारी माँग है। क्रूड ऑयल टेक्सास तथा इलीनॉय के तेल क्षेत्रों से पाइप लाइनों द्वारा आ जाता है। तेल शोधन के दौरान कई प्रकार के उप-उत्पादन भी तैयार किये जाते हैं। यथा, देश का 50% पैट्रोलियम कोक व्हिटिंग में ही तैयार किया जाता है। पैट्रो-कैमीकल उद्योग भी क्रमशः विकसित हो रहा है।

मांस उद्योग—बड़े नगरों एवं विशाल औद्योगिक स्तर के कट्टीघरों की स्थापना के पूर्व मांस व्यवसाय स्थानीय स्तर पर प्रचलित था सबसे पहले सिनसिनाटी मांस-केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। कालांतर में जैसे-जैसे पशुपालन पश्चिम की ओर खिसकता गया, वैसे-वैसे मांस उद्योग भी पश्चिमोत्तर होता गया। मांस उद्योग के बारे में एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि देश के दो-तिहाई पशु मिसीसीपी नदी के पश्चिम में पाले जाते हैं जबकि जनसंख्या का दो-तिहाई भाग इसके पूर्व में निवास करता है। उत्पादन तथा खपत क्षेत्रों की पृथकता का मतलब यह हुआ कि या तो पशु या फिर मांस का स्थानांतरण हो। जिन्दा पशुओं की तुलना में मांस का परिवहन सस्ता पड़ता है। शीतालयों के निर्माण से और भी सुविधा हो गयी है। अतः वर्तमान में मांस उद्योग के बड़े केन्द्र पश्चिम में ही हैं। स्विफ्ट, आर्मर, विल्सन तथा कुड़ाही चार सबसे बड़े मांस केन्द्र हैं जो मांस का अधिकांश भाग तैयार करके अमेरिकन बाजारों को भेजते हैं। शिकागो भी अमेरिका के महत्वपूर्ण मांस केन्द्रों में से है। यद्यपि इस उद्योग पर से उसका आधिपत्य समाप्त हो गया है। इस नगर में विशालतम कट्टीघर हैं जिनमें एक घंटे में 1000 जानवर तक काटे जा सकते हैं।

मक्का के उत्पादन—सं० रा० अमेरिका में जितनी मक्का पैदा होती है उसका लगभग 85% भाग जानवरों को खिला दिया जाता है। शेष जो बचता है (वह भी लगभग 80–100 मिलियन बुशल होता है) उससे कार्न फ्लेक्स, कार्न सिरप, कार्न-आयल, कार्न मील, स्टार्च, शक्कर, अल्कोहल, कागज, रैयान, फायबर-बोर्ड व जानवर एवं मुर्गियों को खिलाने के लिए दाना बनाया जाता है। शिकागो इस उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है। शिकागो से 150 मील के अर्द्धव्यास में उत्तरी इलीनॉय राज्य के जितने मक्का के फार्म्स हैं वे अपनी सारी उपज शिकागो को भेज देते हैं। नगर के दक्षिण-पश्चिम में विश्व का सबसे बड़ा मक्का-शोधन कारखाना 'आर्गो' स्थित है। शिकागो के अतिरिक्त ओमाहा, बैटिल क्रीक, कन्सास-सिटी तथा सेंट जोसेफ में भी यह उद्योग विकसित होता जा रहा है।

रोक-घाटी के उद्योग—दक्षिणी विस्कांसिन एवं उत्तरी इलीनॉय में फैली रोक घाटी में कुछ उद्योग विकसित हो गए हैं जिन्हें सुविधा के लिए शिकागो-मिलवॉकी औद्योगिक क्षेत्र के साथ ही रख लिया गया है। अमेरिकन औद्योगिक मेखला का यह धुर पश्चिमी केन्द्र कहा जा सकता है। यहाँ धातु, मशीनरी, हार्डवेयर, मशीन-टूल्स, वस्त्र, फर्नीचर तथा खाद्य पदार्थों सम्बन्धी उद्योग विकसित हैं। अधिकतर उत्पादन रोक फोर्ड, बेलोइट, मैडिसन, जेन्सविले, स्टर्लिंग तथा फ्री-पोर्ट आदि नगरों से सम्बन्धित होता है।

सेंट लुई औद्योगिक क्षेत्र :

सेंट लुई औद्योगिक क्षेत्र के अधिकांश संस्थान मिसूरी राज्य में हैं, थोड़े से इलीनॉय राज्य में हैं। शिकागो, अटलांटिक तट तथा खाड़ी तट के बीच सेंट लुइ

सबसे बड़ा नगर है। राष्ट्रीय महत्व का होने के साथ-साथ यह एक महत्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्र भी है। निस्संदेह उद्योगों के विकास की पृष्ठभूमि में, इसकी स्थिति ही मुख्य तत्व रही है। मिसीसीपी-मिसूरी के संगम के निकट स्थित होने के साथ-साथ यह नगर रेलों का भारी केन्द्र है। अतः न केवल एक औद्योगिक वरन् महत्व-पूर्ण व्यापारिक नगर भी है। मेट्रोपॉलिटन सेंट लुई, जिसमें एल्टन, बेलेविले तथा ग्रेनाइट सिटी आदि शामिल हैं, जूता, बीयर, माँस, विद्युत-उपकरण, वायुयान के एंजिन, रसायन, दवाइयों, काँच, एलमूनिया, शोधा हुआ तेल तथा इस्पात के उत्पादन में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। लगभग 75% प्लांटस तथा फैक्ट्रीज नगर की सीमाओं के भीतर तथा मिसूरी उप-नगर में हैं। शेष 25% नदी के उस पार इलीनाय राज्य में हैं। विद्युत उपकरणों का उत्पादन सबसे बड़ा उद्योग है। लिन, एक्रोन, डेट्रायट या पिटसबर्ग की तरह यहाँ विशिष्टता के दर्शन नहीं होते। विविधता यहाँ के उद्योगों का खास लक्षण है।

औद्योगिक मेखला के बाहर के औद्योगिक क्षेत्र :

औद्योगिक मेखला से बाहर केवल तीन उल्लेखनीय औद्योगिक क्षेत्र हैं। ये हैं—

1. दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश।
2. टैक्सास एवं खाड़ी के तटवर्ती भाग।
3 कैलीफोर्निया।

इनमें अन्तिम दो अपेक्षाकृत नए हैं, जिनका विकास पिछले 5–6 दशकों में ही हुआ है।

दक्षिणी-पूर्वी भाग में औद्योगिक विकास के प्रधान आधार कपास, सस्ता श्रम (निग्रो) लौह-अयस, कोयला, तेल आदि रहे हैं। बर्मिंघम को छोड़कर अन्य सभी केन्द्रों में हल्के उद्योग हैं। जिनमें तम्बाकू, सूती वस्त्र, सिगरेट, रसायन, लोको व प्लास्टिक आदि उल्लेखनीय हैं। अलाबामा राज्य का बर्मिंघम नगर इस प्रदेश का सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ लौह-इस्पात के अतिरिक्त सूती वस्त्र तथा रसायन उद्योगों का भारी विकास हुआ है। यहाँ देश में सबसे सस्ता इस्पात तैयार होता है क्योंकि लोह तथा कोयला पास में ही स्थित है। सूती वस्त्र भी सस्ते बैठते हैं क्योंकि मिलें कपास की पेटी में ही स्थित हैं। कई मिलें तो सीधे खेतों से रूई प्राप्त करती हैं। अन्य केन्द्रों में मौंट गूमरी, कोलम्बस, अटलांटा, अगस्ता तथा चार्लोट महत्वपूर्ण हैं। ये सभी नगर सूती वस्त्रोद्योग में देश में अग्रणी हैं जहाँ पिछले 5 दशकों में यह उद्योग बड़ी तेजी से बढ़ा है। इन नगरों में विश्व की आधुनिकतम मिलें विद्यमान हैं।

टैक्सास तथा खाड़ी के तटवर्ती भागों में हुए औद्योगिक विकास का प्रधान आधार इस सम्भाग में प्राप्त तेल है। द्वितीय विश्व युद्ध में यहाँ कई नए उद्योग स्थापित हुए। अधिकांशतः उद्योग तेल से सम्बन्धित हैं जिनमें तेलशोधन पैट्रो-कैमीकल एवं एमोनिया खाद निर्माण आदि प्रधान हैं। यहाँ देश के सबसे ज्यादा तेलशोधक कारखाने हैं जो मैक्सिको की खाड़ी के तट के सहारे-सहारे फैले हैं। टैक्सास में सूती वस्त्रोद्योग भी विकसित हैं जिसे स्थानीय कपास ने प्रोत्साहित किया है। हाउस्टन, डलास, ऑस्टिन, फोर्ट-वर्थ, न्यू आर्लीन्स तथा गॉल वेस्टन प्रमुख औद्योगिक केन्द्र हैं।

प्रशांत तटवर्ती भाग में औद्योगिक विकास का केन्द्रीयकरण चार-पांच क्षेत्रों-वैंकुवर, पुगेट साउंड के निचले प्रदेश, निचली कोलम्बिया घाटी, सैनफ्रांसिस्को खाड़ी क्षेत्र तथा लॉस एंजिल्स-सानडिएगो निचले प्रदेशों में हुआ है। इनमें सबसे ज्यादा विकास कैलीफोर्निया की घाटी में स्थित औद्योगिक केन्द्रों में हुआ है। आज एयर क्राफ्ट, धातु शोधन, तेल शोधन, पैट्रो कैमीकल्स, सूती वस्त्र, रेशमी वस्त्र तथा फलों से सम्बन्धित व्यवसाय में कैलीफोर्निया का कोई भी केन्द्र राष्ट्रीय महत्व से कम का नहीं है। यहां के धातु उद्योग के लिए, जो अभी शैशवस्था में ही है धातु-अयस चिली, वेनेज्वाला आदि देशों से उपलब्ध हो जाते हैं। कैलीफोर्निया के एयर क्राफ्ट उद्योग का वास्तविक विकास द्वितीय विश्व युद्ध के समय हुआ जबकि सैनिक महत्व के वायुयानों की बहुत ज्यादा मांग थी। 1937 में कैली-फोर्निया में वायुयान बनाने के 24 कारखाने थे जबकि न्यूयार्क में केवल 17 कारखाने। सम्भवतया विश्व में कहीं भी एक स्थान पर वायुयान के इतने कारखानों का केन्द्रीयकरण नहीं है। लोह-इस्पात का एक बड़ा कारखाना लॉस एंजिल्स से 50 मील की दूरी पर स्थित फौंटाना में है। यह भी द्वितीय विश्व युद्ध में ही विकसित हुआ। लॉस एंजिल्स में भी कुछ इस्पात संस्थानों के बनने की बात है। इसमें कोई संदेह नहीं कि निकट भविष्य में प्रशांत तटीय भागों में लोह-इस्पात उद्योग एक आवश्यकता बन जाएगा।

□□□

सं० रा० अमेरिका : प्रमुख उद्योग

वस्त्र व्यवसाय :

संयुक्त राज्य अमेरिका दुनियाँ के अन्य सभी देशों से सूती, रैयन व नायलोन वस्त्रों के निर्माण में आगे है। वस्त्र व्यवसाय के दो बड़े एवं महत्वपूर्ण प्रदेश हैं—प्रथम, पूर्वी न्यू इंगलैण्ड प्रदेश जहाँ वस्त्र-व्यवसाय अपने पीछे एक गौरवमय ऐतिहासिक परम्परा लिए है और जहाँ आज भी देश के अधिकांश ऊनी वस्त्र तैयार किए जाते हैं। कपास उत्पादक मेखला से दूर होने के कारण यहाँ सूती वस्त्रोद्योग अवश्य ह्रासोन्मुख है। दूसरा महत्वपूर्ण वस्त्रोद्योग क्षेत्र दक्षिणी राज्यों में स्थित है जहाँ दुनियाँ में सर्वाधिक सूती वस्त्र तैयार करने वाले इस देश के लगभग दो-तिहाई सूती वस्त्र तैयार किए जाते हैं। रैयन एवं नायलान वस्त्रों का भी एक बड़ा भाग यहाँ तैयार किया जाता है। रेशमी वस्त्र चूँकि आयातित कच्ची रेशम से तैयार किये जाते हैं अतः उनका केन्द्रीयकरण खपत केन्द्रों के पास ही हुआ है। कृत्रिम रेशों से सम्बन्धित वस्त्रोद्योग मुख्यतः औद्योगिक केन्द्रों के निकट हैं। सिले-सिलाए वस्त्र तैयार करने का व्यवसाय प्रधानतः बड़े नगरों से सम्बद्ध है। न्यूयार्क एवं लॉस एंजिल्स बड़े केन्द्र हैं जो दुनियाँ के सबसे बड़े फैशन केन्द्रों के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

सूती वस्त्रोद्योग :

आधुनिक सूती वस्त्रोद्योग का श्रीगणेश इस देश में 1790 में हुआ जबकि सैमुअल स्लेटर नामक अंग्रेज ने प्रथम सूती मिल न्यू इंगलैण्ड प्रदेश के रोड द्वीप में स्थापित की। यह शुरूआत भी वस्तुतः एक वाद-विवाद का परिणाम थी। सूती वस्त्रों के प्रश्न पर अमेरिका और ब्रिटेन में परस्पर तनातनी थी। इंगलैण्ड ने अमेरिका को तैयार सूती वस्त्र भेजना बन्द कर दिया था यद्यपि अब तक इंगलैंड की मिलें अमेरिका से उपलब्ध की गयी कपास से ही वस्त्र तैयार करती थी। इन परिस्थितियों में अमेरिका निवासियों ने स्वदेशी कपास का उपयोग करने तथा वस्त्रों की दिशा में आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ने का लक्ष्य लेकर यह मिल खोली।

प्रथम मिल न्यू इंगलैण्ड में ही खोलने का कारण इस प्रदेश की आकर्षक भौगोलिक परिस्थितियां थीं। इस प्रदेश में पूंजी, जल, यातायात, श्रम तथा खपत की सभी सुविधाएं थीं। कपास दक्षिणी राज्यों से आ जाती थी। फलतः यह व्यवसाय शीघ्र ही चमक गया और अगले 100 वर्षों तक इस प्रदेश का सूती वस्त्रोद्योग पर एकाधिपत्य रहा। पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इस व्यवसाय का स्थानांतरण क्रमशः दक्षिणी राज्यों की ओर होने लगा तथा मध्य-अटलांटिक-तटीय एवं कपास उत्पादक दक्षिणी राज्यों ने इस दिशा में विशेष प्रगति की। पिछले 4–5 दशकों में पश्चिम के कुछ राज्यों में भी सूती वस्त्र तैयार करने वाली मिलें खोली गयी हैं। कुल मिलाकर देश में, इस समय एक हजार से ज्यादा सूती मिलें हैं जो प्रधानतः निम्न तीन क्षेत्रों में समूहबद्ध की जा सकती हैं।

1. दक्षिणी न्यू इंगलैण्ड प्रदेश—पिछली शताब्दी के अन्त तक सं. रा. अमेरिका का अधिकांश सूती वस्त्र दक्षिणी न्यू इंगलैण्ड प्रदेश के राज्यों में स्थित मिलों द्वारा तैयार किया जाता था। यह प्रदेश दक्षिणी राज्यों से कपास मंगा कर बदले में तैयार वस्त्र भेजता था, ठीक उसी प्रकार जैसे—इंगलैण्ड, भारत आदि उपनिवेशों से कपास मंगाकर वहीं के बाजारों में तैयार कपड़ा भेजता था। इस प्रदेश में सूती वस्त्रोद्योग के प्रधान आधार ठण्डी आर्द्र-जलवायु झरनों से जल एवं शक्ति, पूंजी, यातायात एवं बन्दरगाहों की सुविधा रहे है। कपड़ों को धोने के लिए उनमें विविध रंग भरने के लिए झीलों तथा नदियों से स्वच्छ जल मिल जाता है। परन्तु मध्य अटलांटिक तथा दक्षिणी राज्यों में अनेक मिलें खुल जाने से दिनों-दिन यहां का यह व्यवसाय अवनत हो रहा है। ह्रासोन्मुख गति का अनुमान इन तथ्यों से लगाया जा सकता है कि पिछली शताब्दी के अन्तिम दिनों में देश का लगभग 80% सूती वस्त्र यहीं तैयार होता था जबकि 1924 में इस प्रदेश की मिलों ने सूती वस्त्र व्यवसाय में प्रयुक्त रूई का केवल 40% भाग ही प्रयोग किया और 1954 में यहां देश के केवल 14% तकुएं रह गए। इस वर्ष यहां की मिलों ने केवल 6% रूई का प्रयोग किया। अनेक मिलें बन्द हो गयी हैं। जो भी कार्यरत हैं वे केवल उत्तम कोटि का वस्त्र (प्रायः 40 काउन्ट से ऊपर) तैयार करती हैं। अतः रूई की खपत भी कम होती है। प्रदेश में सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र 'फ्लोवर सिटी' है। अन्य सूती वस्त्र केन्द्रों में प्राविडेंस तथा न्यू बेडफोर्ड आदि उल्लेनीय हैं।

2. दक्षिणी राज्य—दक्षिणी राज्यों में सूती वस्त्रोद्योग का श्रीगणेश आधुनिक उद्योग स्तर पर 1880 में प्रारम्भ हुआ। विकास की गति इतनी तीव्र रही कि अगले 40 वर्षों में ही कार्यरत तकुओं तथा मजदूरों की दृष्टि से वह न्यू इंगलैण्ड प्रदेश के बराबर हो गया। 1958 में न्यू इंगलैण्ड को कहीं पीछे छोड़ दक्षिण के 12 राज्य (अलाबामा, उत्तरी-दक्षिणी कैरोलिना, टैनेसी, जॉर्जिया,

फ्लोरिडा आदि) संयुक्त राज्य अमेरिका के अधिकांश उत्पादन के लिए उत्तरदायी थे। इस वर्ष इन राज्यों में लगभग 5,70,000 श्रमिक कार्य कर रहे थे जबकि न्यू इंगलैण्ड प्रदेश में स्थित मिलों में यह संख्या केवल 1,20,000 थी।

दोनों प्रदेशों में वस्त्रोद्योग सम्बन्धी उतार-चढ़ाव का स्पष्ट स्वरूप उनमें लगे तकुओं की संख्या से ज्ञात हो जाता है। दक्षिणी राज्यों में 1880 में देश के कुल 4.6% तकुएँ लगे थे जो बढ़कर 1900 में 22.4% 1910 में 42.9% तथा 1947 में 78% हो गए। इस वृद्धि के विपरीत न्यू इंगलैण्ड प्रदेश में उतनी ही तीव्रता से ह्रास हुआ। यहाँ की मिलों में 1880 में देश के 81% तकुएँ कार्यरत थे जो घट कर 1900 में 67% 1910 में 51.6% तथा 1947 में केवल 19.8 प्रतिशत रह गए।

दक्षिणी राज्यों में सूती वस्त्र व्यवसाय के इतनी तीव्र गति से विकास होने के पीछे कई कारण हैं जिनमें निम्न मुख्य हैं:—

1. श्रम सस्ता है जो नीग्रोज के रूप में पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है।
2. इस प्रदेश में आधुनिक मशीनों पर आधारित होने के कारण श्रमिक क्षमता ज्यादा है।
3. जलवायु आर्द्र है।
4. शक्ति के लिए खाड़ी प्रदेश से तेल तथा बर्मिंघम क्षेत्र से कोयला उपलब्ध है।
5. पहले स्वच्छ पानी की दिक्कत थी जिसे अब ट्यूब वैल्स द्वारा पूरा कर लिया गया है।
6. कपास एवं पैट्रोल से कमाए हुए धन के बलबूते पर यहाँ मिल-मालिकों ने मिलों को आधुनिकतम बनाया है।
7. व्यवसाय को विकसित करने की दृष्टि से इन राज्यों की सरकारों ने टैक्सेशन के नियम उदार बनाए हैं जिनसे व्यवसाय को प्रोत्साहन मिला है।
8. ये मिलें ज्यादातर मोटा कपड़ा तैयार करती हैं जिनकी माँग दक्षिण के राज्यों में ही निरन्तर बनी रहती है क्योंकि अमेरिका के दक्षिणी भागों में लोग अपेक्षाकृत साधारण स्थिति में हैं।
9. लैटिन अमेरिका के देश नजदीक हैं जो इन मिलों में तैयार मोटे कपड़े के ग्राहक इन देशों में अधिकांशतः 20 काउन्ट सूत से तैयार कपड़ा ही खपता है।

10. दक्षिणी राज्यों की अधिकांश मिलें कपास-मेखला के अन्दर स्थित हैं। अतः यातायात का खर्चा बच जाता है और उत्पादन-मूल्य कम पड़ता है। बहुत सी मिलें तो सीधे खेतों से ही कपास ले आती हैं जिससे गांठ बनाने का खर्चा भी बचता है। उत्पादन-मूल्य कम होने से यहां के कपड़े बाजारी प्रतिद्वंद्वता में लाभकारी स्थिति में होते हैं।

अधिकांश मिलें अलाबामा तथा पीडमांट प्रदेश में स्थित हैं। प्रधान केन्द्र बर्मिंघम, कोलम्बस, अटलांटा, चार्लोट, ग्रीनविले तथा आगस्टा हैं जिनमें प्रदेश की 3/4 मिलें विद्यमान हैं।

3. मध्य अटलांटिक तटीय प्रदेश—अटलांटिक महासागरीय तटवर्ती पट्टी में स्थित नगरों में आयात की हुई कपास, प्रपात-पंक्ति से प्राप्त विद्युत एवं अनेक विकसित बन्दरगाहों द्वारा विदेशी व्यापार की सुविधा के आधार पर सूती वस्त्र व्यवसाय ने विकास किया है। अधिक बसे होने के कारण खपत केन्द्र निकट ही है। प्रधान केन्द्र बोस्टन, फिलाडेलफिया तथा न्यूयार्क आदि नगर हैं। फिलाडेलफिया अपने होजरी व्यवसाय के लिए विख्यात है। अधिकांश सूती मिलें न्यूयार्क-न्यूजर्सी क्षेत्र में हैं जहां लगभग एक-तिहाई मजदूर लगे हैं। न्यू इंगलैण्ड प्रदेश की तुलना में इन प्रदेशों के व्यवसाय में स्थायित्व है यद्यपि दक्षिणी राज्यों के कारण विकास में अवरोध जरूर हुआ है।

4. पश्चिमी सूती केन्द्र—पिछले दशकों में मांग बढ़ने के साथ-साथ पश्चिम के राज्यों विशेषकर कैलीफोर्निया में सूती वस्त्रोद्योग का विकास हुआ है। घाटी के कई नगरों—लॉस ऐंजिल्स, सैन फ्रांसिस्को आदि में सूती मिलें खुली हैं। इन मिलों को कपास पश्चिम के शुष्क पठारी भागों में सिंचित कृषि-क्षेत्रों से उपलब्ध हो जाती है। उत्पादन स्थानीय उपयोग के लिए है। जिसकी मात्रा की दृष्टि से राष्ट्रीय स्तर पर कोई खास महत्व नहीं है।

ऊनी वस्त्रोद्योग :

सूती वस्त्रोद्योग की तरह ऊनी वस्त्रोद्योग का प्रारम्भिक विकास भी न्यू इंगलैण्ड प्रदेशों से ही सम्बन्धित है। आज भी देश के लगभग 60% ऊनी वस्त्र इस प्रदेश में तैयार होते हैं। अप्लेचियन भेड़ क्षेत्रों से प्राप्त ऊन, स्वच्छ-मुलायम जल, निकटवर्ती घने बसे खपत केन्द्र आदि वे तत्व थे जिन्होंने प्रारम्भ में इस व्यवसाय को प्रोत्साहित किया। कालांतर में जैसे-जैसे मांग बढ़ती गयी वैसे-वैसे आयातित ऊन की मात्रा बढ़ती गयी। बोस्टन नगर विदेशों से आयात होने वाली कच्ची ऊन को आयात करने वाला प्रमुख बन्दरगाह है। मध्य अटलांटिक तट के मैसाचुसेटस, पैंसिलवानिया, न्यूजर्सी तथा मैरीलैण्ड राज्य ऊनी वस्त्रोद्योग में

अग्रणी हैं जो देश के लगभग एक-चौथाई ऊनी वस्त्रों के उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। लारेंस, प्राविडेन्स, लॉवेल तथा वर्सेस्टर मुख्य केन्द्र हैं। फिलाडेलफिया ऊनी वस्त्रों, गलीचों तथा कालीनों के लिए प्रसिद्ध है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दक्षिणी राज्यों एवं पश्चिम के बड़े-बड़े नगरों में भी ऊनी मिलें खोली गयी हैं।

रेशम तथा 'रेयान' वस्त्रोद्योग :

सं. रा. अमेरिका की प्रथम रेशम मिल पैटरसन नगर में 1870 में खोली गयी। इस मिल को मिली सफलता ने व्यवसाय के विस्तार को प्रोत्साहित किया। वर्तमान में देश में लगभग 600 रेशमी मिलें हैं जिनमें 400 से अधिक रेशमी वस्त्र तथा शेष रेशमी धागों के साथ अन्य धागों को मिलाकर वस्त्र तैयार करने में संलग्न हैं। रेशमी वस्त्रों के उत्पादन में पैंसिलवेनिया राज्य सबसे आगे है जहाँ अनेक मिलें स्क्रान्टन, विलम्सबेरे, पार्म तथा एलेन टाउन आदि नगरों में विद्यमान हैं। अन्य रेशमी वस्त्र उत्पादक राज्यों में न्यूजर्सी, न्यूयार्क, कनैक्टीकट, उत्तरी कैरोलिना तथा मैसाचुसेटस आदि राज्य उल्लेखनीय हैं। पैटरसन अभी भी सबसे बड़ा रेशमी वस्त्र उत्पादक केन्द्र है जो अमेरिका का 'रेशम नगर' कहलाता है। मिलों में प्रयोगित कच्ची रेशम का शत-प्रतिशत भाग जापान, इटली, फ्रांस तथा फिलीपाइन आदि देशों से आयात किया जाता है।

अमेरिका विश्व का लगभग एक-तिहाई रैयान तैयार करता है। यहाँ लुग्दी से विस्कोस-रैयान तैयार किया जाता है। रैयान के कारखाने टैनेसी, वर्जीनिया, मेरीलैंड, पैंसिलवेनिया, दक्षिणी राज्यों तथा न्यू इंगलैंड प्रदेश में स्थित हैं। ईरी झील के तट पर विद्यमान एक्रन नगर सबसे बड़ा रैयान केन्द्र है। अन्य प्रधान केन्द्रों में रानोक (मेरीलैंड) नॉशविले तथा फ्लाडेलफिया उल्लेखनीय हैं।

□□□

सं० रा० अमेरिका : लौह एवं इस्पात उद्योग

सं. रा. अमेरिका का आधुनिक लौह इस्पात उद्योग केवल 300 वर्ष पुराना है। इसका श्रीगणेश 1644 में स्थापित किए गए उस प्रथम लौह कारखाने से हुआ जो मैसाचुसेट्स राज्य में सांगस नदी के तट पर 'सांगस आयरन वर्क्स' के नाम से खोला गया। यद्यपि इससे पूर्व भी न्यू-इंगलैंड प्रदेश में यत्र-तत्र लकड़ियों से लौह-अयस्क को गलाने की विधि प्रचलित थी। 1769 में भाप के इंजन एवं 1846 में इस्पात बनाने की बेसीमोर विधि के आविष्कार एवं सुपीरियर झील क्षेत्र में लौह के विशाल भंडारों की खोज ने इस उद्योग में क्रांतिकारी विस्तार किया। इसी समय एन्ड्रू कार्नेगी ने पिट्सबर्ग में इस्पात का कारखाना स्थापित किया जो आज विश्व की सबसे बड़ी इस्पात-उत्पादक इकाई के रूप में जानी जाती है। पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में जैसे-जैसे आधुनिक यातायात, कृषि यंत्र, मशीन, औज़ार, यौद्धिक अस्त्र-शस्त्र एवं आटोमोबाइल्स की आवश्यकता बढ़ती गयी उसी अनुपात में इस्पात उद्योग का भी तेजी से विस्तार होता गया।

पिछले दशकों में अमेरिका में इस्पात उद्योग का विस्तार जिस तीव्र गति से हुआ है उसका अनुमान प्रवात भट्टियों की संख्या, खपत किए गए लौह-अयस व कुल उत्पादन मात्रा के आँकड़ों से होता है। 1932 में यहाँ के कारखानों में केवल 44 प्रवात भट्टियाँ कार्यरत थीं जो बढ़कर 1939 में 95, 1944 में 218, 1950 में 234, 1960 में 114, 1968 में 154, 1969 में 169, तथा 1970 में 152 हो गयी। पिछले वर्षों में विद्युत भट्टियों एवं बेसिक आक्सीजन विधि द्वारा इस्पात तैयार करने की प्रवृत्ति भी तेजी से बढ़ी है। सम्भवतः इसीलिए प्रवात भट्टियों की संख्या में कमी आ गयी है। 1970 में लगभग 138 मिलियन टन लौह-अयस की खपत हुई जिसमें से 100 मि० टन प्रवात भट्टियों, 34 मि० टन 'एग्लोमरेटिंग प्लांटस' तथा 3 मि० टन अन्य प्रकार की भट्टियों में खपत हुई।

निम्न सारणी से विभिन्न विधियों द्वारा तैयार किए गए इस्पात की मात्रा सुस्पष्ट है।

सातवें दशक तक सं. रा. अमेरिका का विश्व में प्रथम स्थान था। आठवें दशक के पूर्वार्द्ध में भी उसकी नेतृत्व की यह स्थिति बनी रही परन्तु उत्तरार्द्ध में सोवियत संघ उससे कहीं आगे निकल गया। वस्तुतः एक ओर रूस का उत्पादन तेजी से बढ़ा और अमेरिका का घटता गया। 1970 में अमेरिका ने 131.5 मि० टन इस्पात तैयार किया जबकि इस वर्ष सोवियत संघ का उत्पादन केवल 115 मि० टन था। इसके विपरीत 1980 में रूस ने 147.9 तथा अमेरिका ने 111 मि० टन इस्पात उत्पादित किया। 1981 तथा 1982 में अमेरिका का उत्पादन क्रमशः 120 तथा 74 मि० टन था जबकि रूस ने 1983 में 153 मि० टन इस्पात तैयार किया। इस प्रकार इस्पात उत्पादन में सं. रा. अमेरिका अपने गौरवमय स्थान से पिछड़ गया है अन्यथा 1968 में जब विश्व ने प्रथम बार 500 मि० टन इस्पात उत्पादित किया था, तब उसका लगभग 25% भाग अकेले इस देश से उत्पादित था। उस वर्ष यहाँ का प्रति एकड़ उत्पादन 650 कि. ग्राम था जबकि प. जर्मनी तथा सोवियत संघ में यह मात्रा क्रमशः 550 एवं 400 कि. ग्रा. थी।

सं० रा० अमेरिका में इस्पात उत्पादन

(000, टनों में)

वर्ष	पिग आयरन	इस्पात	विभिन्न विधियों से उत्पादित इस्पात की मात्रा			
			ओपिनहर्थ	बेसीमीर	विद्युत	बेसिक ऑक्सीजन
1932	9,835	15,322	13,336	1,715	0,272	—
1939	35,677	52,798	48,409	3,358	1,029	—
1944	62,866	89,641	80,363	5,039	4,237	—
1950	66,400	96,336	86,262	4,534	6,060	—
1960	68,566	99,281	86,367	1,189	8,378	3,346
1965	90,914	131,461	94,193	585	13,803	22,878
1967	85,472	127,213	—	—*	15,089	14,434
1969	97,563	141,262	60,894	—*	30,132	60,236
1970	91,435	131,514	48,022	—*	20,162	63,330
1980	70,329	111,835	13,054	—*	31,166	67,617
1981	75,096	120,828	13,452	—*	34,145	73,231
1982	43,309	74,577	6,110	—*	23,158	45,309

अमेरिका के राज्यों में इस्पात उत्पादन की दृष्टि से पेंसिलवेनिया प्रथम है जहां 1982 में उत्पादन 10.9 मिलियन टन था। इस वर्ष समस्त देश में इस उद्योग में 403,115 वेतनभोगी मजदूर संलग्न थे। यह संख्या क्रमशः कम होती जा रही है जो उद्योग के स्वचालीकरण की द्योतक है।

इस्पात जैसे भारी उद्योग के लिए आधारभूत कच्चे माल जैसे लौह-अयस व कोयला की पूर्ति ज्यादा महत्व रखती है। यातायात के साधनों का समुचित विकास भी वांछनीय है। इस दृष्टि से महान् झीलों द्वारा प्रदत्त सस्ता जलमार्ग उल्लेखनीय है जिससे होकर सुपीरियर झील क्षेत्र से लोहा एवं अप्लेशियन क्षेत्र से कोयला का परस्पर विनिमय सम्भव हो सका। दक्षिणी अप्लेशियन (अलाबामा राज्य) में लोहा और कोयला पास-पास उपलब्ध है अतः वहां यह उद्योग आसानी से पनप सका। अटलांटिक तटों पर सबसे बड़ी सुविधा विदेशों से कच्चे लौह के आयात एवं प्रपात पंक्ति से प्राप्त विद्युत रही है। संक्षेप में यहां के इस्पात क्षेत्रों को निम्न समूहों में समूहबद्ध किया जा सकता है।

1. पिट्सबर्ग–क्लीवलैंड क्षेत्र—पेंसिलवेनिया राज्य के दक्षिण-पश्चिम तथा ओहियो के पूर्वी सीमांत क्षेत्र में विकसित इन इस्पात-केन्द्रों के विकास का आधारभूत तत्व इस प्रदेश की खानों से प्राप्त उत्तम कोटि का बिटूमिनस कोयला रहा है। लौह-अयस झील मार्ग द्वारा सुपीरियर झील क्षेत्र की मेसाबी श्रेणी से मिल जाता है। चूना स्थानीय रूप से प्रचुर मात्रा में प्राप्त है तथा स्वच्छ जल महोनिंग, ओहियो, शेननगो, आदि नदियों से प्राप्त हो जाता है। यातायात, खपत-केन्द्र व प्रचुर श्रम की सुविधाएं इस प्रदेश को घने बसे होने के कारण स्वाभाविक रूप से प्राप्त हैं। सबसे बड़ी असुविधा इस्पात मिश्रण की धातुओं—मैंगनीज, क्रोमियम, वैनेडियम, कोबाल्ट, मॉलिबिडीनम तथा टंगस्टन आदि की हैं जो पश्चिमी राज्यों से मंगाने पड़ते हैं। चूंकि जाड़ों के दिनों में तीन-चार महीनों के लिए झील मार्ग बंद हो जाता है अतः इन दिनों के लिए अयस की अतिरिक्त मात्रा मंगाकर रखनी पड़ती है।

प्रदेश के अधिकांश इस्पात-संस्थान दो समूहों में केन्द्रित हैं। प्रथम पिट्सबर्ग दूसरा यंगस्टाउन जो पिट्सबर्ग से लगभग 40 मील दूर उत्तर-पश्चिम में स्थित है। पिट्सबर्ग, न केवल इस प्रदेश वरन् दुनियां का सबसे बड़ा इस्पात केन्द्र है। यह अकेला केन्द्र दुनियां का लगभग 13-15 प्रतिशत इस्पात तैयार करता है। पिट्सबर्ग के अतिरिक्त इस समूह के अन्य इस्पात-संस्थान केन्द्रों में जोन्स टाउन, मैरिज पोर्ट तथा ब्रैडाक कार्नेगी आदि उल्लेखनीय है जो ओहियो, अलघेनी तथा मोनन-घहेला आदि नदियों की घाटियों में जल, समतल भूमि एवं कोयले की खानों की निकटता को दृष्टि में रखते हुए स्थापित किए गए हैं। पिट्सबर्ग के चारों ओर

लगभग 50 मील के अर्द्ध व्यास में सम्पूर्ण प्रदेश इस्पात उत्पादन में लगा है। चारों ओर काला और धुंआयुक्त वातावरण है।

यंगसटाउन महोनिंग की घाटी में स्थित है जिसके चारों ओर इस्पात संस्थान शैननगो तथा महोनिंग की घाटियों में फैले हैं। इनमें मैसीलन तथा शैरोन प्रमुख हैं। पिट्सबर्ग तथा यंगसटाउन दोनों मिलकर सं. रा. अमेरिका का लगभग 45% इस्पात प्रस्तुत करते हैं। इस्पात के अतिरिक्त पिट्सबर्ग-यंगसटाउन प्रदेश में रेल के डिब्बे, इंजन, वायुयान, रबर के टायर, गर्डर, चद्दरें, विविध मशीनें, जलयानों के लिए विशेष प्रकार के औजार तैयार किए जाते हैं। प्रदेश के अन्य इस्पात-केन्द्रों में वीवस्टन, ह्वीलिंग, आयरनटन, एशलैंड तथा मिडिलटाउन प्रमुख हैं।

2. दक्षिणी अप्लेचियन क्षेत्र—अप्लेचियन क्रम के दक्षिणी संभाग में लौह-इस्पात उद्योग अलाबामा राज्य के बर्मिंघम नगर में विकसित है जहाँ नगर के चारों ओर 10 मील के अर्द्ध व्यास में ही लोहा एवं कोयला दोनों उपलब्ध हैं। उत्तम कोटि का बिटूमिनस कोयला अलघनी तथा कम्बरलैंड से आ जाता है। चूना भी सौभाग्य से स्थानीय रूप से प्राप्त है। इन सब परिस्थितियों के संयोग ने बर्मिंघम को दक्षिणी सं. रा. अमेरिका का सबसे महत्वपूर्ण इस्पात केन्द्र बना दिया है। यहाँ इस्पात सस्ता बैठता है। यहाँ का उत्पादन देश के कुल उत्पादन का लगभग 8% भाग बनाता है। इस्पात के अतिरिक्त विभिन्न कृषि यंत्र (ट्रैक्टर, कम्बाइन हारवेस्टर्स) वस्त्रोद्योग की मशीनें, रेल के इंजन तथा डिब्बे बनाने के कारखाने भी सम्बन्धित उद्योग के रूप में यहाँ विकसित हैं।

3. झीलों का तटवर्ती प्रदेश—ईरी, मिशीगन, ह्यूरन तथा सुपीरियर आदि झीलों के तटवर्ती नगरों में लौह-इस्पात एवं सम्बन्धित उद्योगों का भारी विकास हुआ है। भौगोलिक सहयोग में सबसे महत्वपूर्ण तत्व इन केन्द्रों की स्थिति है। जो जलयान सुपीरियर झील क्षेत्र से पिट्सबर्ग-यंगसटाउन को लौह-अयस ले जाते हैं वे ही लौटते समय कोयला भर लाते हैं। इस प्रकार इन्हें उत्तरी अप्लेचियन प्रदेश से बिटूमिनस कोयला तथा सुपीरियर झील क्षेत्र से अच्छी किस्म का लौह-अयस आसानी से उपलब्ध हो जाता है। झीलों के आधार पर इस प्रदेश के भारी उद्योग-केन्द्रों को तीन समूहों में रखा जा सकता है।

ईरी झील के तटवर्ती केन्द्रों को शक्ति न्यागरा प्रपात की जल-विद्युत से प्राप्त है। बफैलो, लैकवन्ना तथा लॉरेन में इस्पात के विशाल कारखाने हैं। टोलैडो तथा ईरी में प्रवात-भट्टियाँ क्रियाशील हैं। यह समूह देश का लगभग 15% इस्पात तैयार करता है। सम्बन्धित उद्योगों में डेट्रोइट तथा फ्लिंट का आटोमोबाइल उद्योग महत्वपूर्ण है। मिशीगन झील के दक्षिणी सिरे के सहारे-सहारे शिकागो-गारी-मिलवाकी क्षेत्र बड़ी तेजी से लौह-इस्पात उद्योग में प्रगति कर रहा है जहाँ

लगभग 25% इस्पात तैयार होता है। इस्पात के अतिरिक्त इस संभाग में कृषि यंत्र, लोकोमोटिव तथा अन्य प्रकार के भारी उद्योग भी विकसित हैं। सुपीरियर झील के तट पर स्थित डुलुथ तथा सुपीरियर नगरों में भी इस्पात उद्योग विकसित हुआ है।

4. मध्य अटलांटिक तट प्रदेश—अटलांटिक की तटवर्ती पट्टी में लौह-इस्पात के साथ-साथ इस्पात निर्मित वस्तुओं को बनाने के अनेक कारखाने स्थापित हैं। इस सम्भाग में न कोयला मिलता है और न लौह-अयस्क उपलब्ध है। यहाँ इस्पात उद्योग के विकास के प्रमुख आधार बाजारी माँग तथा बंदरगाह की सुविधा है। लौह-अयस यहाँ वेनेजुएला, स्पेन, ब्राजील तथा स्वीडन आदि देशों से आ जाता है। प्रपात पंक्ति से शक्ति प्राप्त है। मुख्य केन्द्र न्यूयार्क, बाल्टीमोर, बोस्टन, फिलाडेलफिया तथा वाशिंगटन आदि हैं। स्पैरो प्वाइंट पर स्थित 'बैथल हैम इस्पात निगम', मोरिसविले में 'सं. रा. अमेरिका इस्पात निगम' एवं पोलस बोरो में स्थित 'राष्ट्रीय इस्पात निगम' द्वारा स्थापित इकाइयाँ देश के इस्पात उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

5. अन्य इस्पात केन्द्र—अन्य इस्पात-केन्द्रों में से पश्चिमी राज्यों में नव-स्थापित केन्द्र रखे जा सकते हैं जहाँ आधुनिक स्तर पर यह उद्योग द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान कूटनीतिक दृष्टि से स्थापित किया गया। सैन फ्रांसिस्को, लॉस एंजिल्स तथा प्यूवलो आदि नगरों में स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इस्पात तैयार किया जाता है।

इंजीनियरिंग उद्योग :

विशाल परिमाण में औद्योगिक उत्पादन या तीव्रगति युक्त यातायात वस्तुतः मशीनों एवं इंजनों के निर्माण के फलस्वरूप ही सम्भव हो सके। जैसे-जैसे आवश्यकता बढ़ती गयी मशीनों और इंजनों की किस्में भी बढ़ती गयी फलतः इंजीनियरिंग उद्योग का आकार बढ़ता गया और आज यह औद्योगिक-समूह सम्भवतः सर्वाधिक विस्तार वाला कार्यक्रम है जिसके अन्तर्गत ऑटोमोबाइल्स, मशीन टूल्स, जलयान निर्माण, वायुयान निर्माण, लोकोमोटिव, कृषि यंत्र, वस्त्रोद्योग की मशीनें विद्युत-मोटर तथा भाप-डीजल के इंजनों के निर्माण से सम्बन्धित व अनेक अन्य उद्योग शामिल किए जाते हैं। सं. रा. अमेरिका में ये सभी शाखाएँ अत्यन्त उन्नत अवस्था में हैं। उत्पादन की दृष्टि से यह देश विश्व में प्रथम है। उत्पादन-मूल्य की दृष्टि से इंजीनियरिंग-समूह के उद्योग देश में प्रथम हैं।

सं. रा. अमेरिका मोटर कारों के उत्पादन व निर्यात में विश्व में प्रथम है। यहाँ विश्व की लगभग 47% मोटरें बनती हैं। 1968 में समस्त विश्व में

20,500,000 तैयार हुई जिनमें 9,001,000 मोटरें अमेरिकन कारखानों की मुहर युक्त थीं। आॅटोमोबाइल उद्योग के संदर्भ में दो बातें उल्लेखनीय हैं। प्रथम, यहां का मोटर उद्योग केवल 65–70 वर्ष पुराना है। दूसरे, देश की 98.5 कारें केवल तीन कारखानों—जनरल मोटर्स, फोर्ड तथा क्राइसलर में बनती हैं। जनरल मोटर्स विश्व की सबसे बड़ी मोटर बनाने वाली संस्था है। सं. रा. अमेरिका का 50% आॅटोमोबाइल उद्योग अकेले मिशीगन राज्य में स्थित है और इस राज्य का 30% अकेले डेट्रोइट नगर में। इस केन्द्रीयकरण की व्याख्या भौगोलिक संदर्भ में करना बड़ा कठिन है क्योंकि यहां न तो धातु और न शक्ति का ही कोई साधन उपलब्ध है। झील मार्ग पर स्थित होने से यह अवश्य है कि इस्पात वांछनीय मात्रा में पिट्सबर्ग-यंगसटाउन प्रदेश से उपलब्ध हो जाता है।

वस्तुतः मिशीगन राज्य में आॅटोमोबाइल उद्योग के विकास को समझने के लिए थोड़ी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि देखना वांछनीय है। प्रारम्भ में यहां आॅटोमोबाइल उद्योग से सम्बन्धित अनेक छोटी-छोटी इकाइयां थीं। 1908 और 1914 के बीच इस उद्योग के स्वरूप में काफी परिवर्तन आए। डेट्रोइट नगर के हेनरी फोर्ड ने अलग-अलग पुर्जों के निर्माण की परम्परा डाली और उन्हें 'एसेम्बिल' करने का अलग प्लांट बनाया। धीरे-धीरे यह उद्योग संगठित होता गया और आज सारा उद्योग तीन बड़े समूहों में संगठित है। तीनों समूहों का स्वरूप कुछ इस प्रकार है कि केन्द्र में बड़ा 'एसेम्बली प्लांट' है जिसके चारों ओर अनेक छोटे-छोटे कारखाने बिखरे हैं जो पार्टस तैयार करते हैं। सभी पार्ट्स का एक निश्चित 'स्टैंडर्ड' बना दिया गया है। समूचे दक्षिणी-मिशीगन राज्य में इसी प्रकार के कारखाने बिखरे हैं। उद्योग की इस प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ है कि पार्टस को एसेम्बिल करने का कार्य अब केवल मिशीगन राज्य तक ही सीमित नहीं है वरन् देश के लगभग आधे राज्यों में इस प्रकार के प्लांट्स खुल गए हैं। डेट्रोइट में फोर्ड तथा फ्लिंट में शैवरलेट तथा ब्यूक गाड़ियां बनती हैं।

सं. रा. अमेरिका में पहला रेलवे-इंजन 1830 में बाल्टीमोर नगर में बनाया गया। इसका भार केवल 1 टन था। वर्तमान में इस देश में 500 टन भार तक के इंजन तैयार किए जाते हैं जिनकी गति भी 130 मील प्रति घंटा तक है। पिछली दशाब्दियों में डीजल व विद्युत चालित इंजनों का प्रचलन ज्यादा हुआ है अतः उत्पादन में अब इनका बाहुल्य होता है। देश के धरातलीय विस्तार ने रेलवे उद्योग के विकास को अधिकाधिक प्रोत्साहित किया है। आज इस देश में विश्व के सबसे अधिक लम्बे रेल मार्ग हैं। कच्चे माल के रूप में कोयला, लोहा की सुविधा, इंजन व डिब्बों की निरंतर मांग का परिणाम यह हुआ कि लोको उद्योग का विस्तार देश के लगभग सभी भागों में हो गया है। आज लोको के केन्द्र सारे देश में बिखरे हैं इनमे पिट्सबर्ग, यंग्सटाउन, स्क्रांटन, लीमा, शिकागो, व्हीलिंग, बर्मिंघम, आयरनटन, मिडिलटाउन, मेरिसपोर्ट, ब्रैडाक कार्नेगी, जोन्सटाउन फिलाडेलफिया तथ

लॉस एंजिल्स प्रमुख हैं। नि संदेह, इस्पात की सुविधा होने से बड़े बड़े और अधिकांश लोको एंजिन उत्पादन के लिए उत्तरदायी केन्द्र ओहियो तथा पेंसिलवेनिया आदि राज्यों में स्थित हैं।

वायुयान निर्माण उद्योग के क्षेत्र में सं. रा. अमेरिका न केवल 'जनक' कहा जाता है वरन् उत्पादन तथा निर्यात की दृष्टि से भी विश्व में प्रथम स्थान पर है। देश के धरातलीय विस्तार एवं आर्थिक समृद्धि ने वायु यातायात को स्वदेश में विकसित होने में प्रोत्साहक सहयोग दिया है। प्रथम विश्व युद्ध में वायुयानों का प्रयोग यातायात के लिए किया गया था। बाद में इनका प्रयोग असैनिक क्षेत्रों में बड़ी तेजी से हुआ और आज अमेरिका में यह स्थिति है कि यहाँ का किसान भी वायु सेवा का प्रयोग पसन्द करता है। वायुयान निर्माण के क्षेत्र में कैलीफोर्निया राज्य सर्वप्रथम है। गर्म, शुष्क जलवायु, खुला स्वच्छ आकाश, धूपिया मौसम, राज्य सरकार की नीति, उत्पादन-बिक्री करों में कमी आदि ये महत्वपूर्ण सुविधाएं हैं जिन्होंने कैलीफोर्निया राज्य में इस उद्योग के विकास में सहयोग किया है। इस राज्य के महत्वपूर्ण वायुयान निर्माण केन्द्रों में लॉग बीच, सानडियगो, बरबैंक, कलवर सिटी, लॉस एंजिल्स, हॉथोर्न, सैनफ्रांसिस्को, इंगिलवुड, सान्तामोनिका तथा एलसेगंडो आदि उल्लेखनीय हैं। देश के अन्य केन्द्रों में टैक्सास राज्य के डलास व फोर्ट वर्थ, मैरीलैंड का बाल्टीमोर, वाशिंगटन का सिएटिल, कसांस का विचिता तथा न्यूयार्क का बैथपेज महत्वपूर्ण है।

आधुनिक जलयान निर्माण उद्योग का श्रीगणेश सं. रा. अमेरिका में 17वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में हुआ। औद्योगिक विकास की अन्य शाखाओं की भांति इस उद्योग का विकास भी न्यू इंगलैंड प्रदेश में ही हुआ और यह उन कुछ उद्योगों में से एक है जो आज भी यहाँ उन्नत अवस्था में हैं। तटवर्ती स्थिति, अच्छे बंदरगाह, पर्याप्त में लकड़ी, सुरक्षित पोताश्रय, औद्योगिक-पृष्ठभूमि आदि वे तत्व थे जिन्होंने प्रारम्भ में न्यू इंगलैंड प्रदेश में इस व्यवसाय को प्रोत्साहित किया। बाद में यह व्यवसाय क्रमशः मध्य अटलांटिक तटवर्ती क्षेत्रों, खाड़ी के बंदरगाहों व पश्चिम में कैलीफोर्निया की घाटी के बंदरगाह नगरों—सैन फ्रांसिस्को तथा लॉस एंजिल्स की तरफ विस्तृत होता गया।

देश का प्रथम जलयान मेन राज्य में 1607 में तैयार हुआ। इसका वास्तविक विकास एवं प्रसार 18-19वीं शताब्दियों में हुआ। इस विकास की पृष्ठभूमि मे जहाँ भाप के इंजन का आविष्कार एक तथ्य के रूप में है वहाँ यह तथ्य भी कम महत्वपूर्ण नही कि स० रा० अमेरिका में आर्थिक विकास बड़ी तेजी से हुआ, औद्योगिक एवं व्यापारिक क्षेत्र में यह देश उत्तरोत्तर प्रगति करता गया। फिर भी इस क्षेत्र में यह यूरोपियन देशों की बराबरी कर अग्रगण्य न हो सका। इसके विस्तार में सबसे बड़ी बाधा मँहगे श्रम की थी। यद्यपि दोनों विश्व युद्धों में इस उद्योग की उल्लेखनीय प्रगति हुई। अमेरिका के प्रधान शिपयार्ड शिकागो, बफैलो, डेट्रोइट, क्लीवलैंड, टॉलैडो, लारेन

(झीलों के तटवर्ती) न्यूयार्क ब्रूकलिन, न्यूपोर्ट, फिलाडेलफिया, चैस्टर, विलमिंगटन, बोस्टन, स्पैरोप्वाइन्ट, बाल्टीमोर (अटलांटिक तटवर्ती) टैम्पा, ब्यूमाउंट, मोबाइल, पैसाकोला (खाड़ी के तटवर्ती) सिएटिल, पोर्टलैंड तथा सैनफ्रांसिस्को (प्रशांत तट) आदि बंदरगाहों में स्थित हैं।

अप्लेशियन और रॉकी क्रम के मध्य स्थित विशाल आंतरिक मैदान में बड़े पैमाने पर 'विस्तृत' कृषि' की जाती है। मानव श्रम के अभाव में यहां कृषि को पूर्णतया 'यांत्रिक कृषि' के रूप में विकसित किया गया है। जोतना, बोना, काटना, भूसा से अनाज अलग करना, निराना, अनाज को ट्रकों में भरना, खेतों में दवा व खाद डालना आदि सभी कार्य यंत्रों से किए जाते हैं। पशुपालन व दुग्ध व्यवसाय भी पूर्णतया यांत्रिक हैं। ऐसी परिस्थितियों में भारी मात्रा में विविध कृषि यंत्रों की आवश्यकता होती है। अतः कृषि यंत्र निर्माण उद्योग का औद्योगिक क्षेत्र में महत्व-पूर्ण स्थान है। उद्योगों की इस शाखा का वास्तविक विकास 19 वीं शताब्दी में हुआ। इस शताब्दी के मध्य में जैसे-जैसे भीतरी भागों को खेतों में परिवर्तित कर उनका उपयोग किया जाने लगा वैसे-वैसे विविध प्रकार के कृषि यंत्रों का आविष्कार होता गया। सन् 1831 में मैकार्मिक महोदय ने फसल काटने की मशीन का आविष्कार किया। 1855 में जान डियरी ने इलीनॉय राज्य में मोलाइन नामक स्थान पर एक विशेष प्रकार के हल बनाने का कारखाना खोला। इन्हीं जॉन रस्ट ने कपास चुनने की मशीन का आविष्कार किया। विविध प्रकार के ट्रैक्टर्स, कम्बाइन हॉरवैस्टर्स प्रकाश में आए। अधिकांश कृषि यंत्र निर्माण केन्द्र, खपत केन्द्रों के निकट यानि कृषि मेखलाओं के भीतर स्थित बाजारी-नगरों में ही स्थित हैं। ऐसे केन्द्रों में शिकागो, कोलम्बस, मिलवाकी, रेसाइन, मोलाइन, रिचमांड, सेंटलुई, लूजविले, ईवांसविले, डेवेनपोर्ट, ओमाहा, मिनियापोलिस, प्यूरिया, सियाक्स सिटी तथा कंसास सिटी आदि उल्लेखनीय हैं।

मशीन टूल्स उद्योग सभी प्रकार के औद्योगिक विकास का आधार प्रस्तुत करता है क्योंकि सभी अन्य उद्योगों में प्रयुक्त होने वाली मशीनें तथा औजार यहीं से उपलब्ध होते हैं। सं० रा० अमेरिका में इस उद्योग का श्रीगणेश न्यू इंगलैंड प्रदेश के प्राविडेन्स तथा हार्टफोर्ड नगरों में हुआ। सन् 1818 में ह्विटनी ने मशीन टूल्स बनाने के लिए 'मिलिंग मशीन' का आविष्कार किया। इससे इस उद्योग का विस्तार हुआ एवं वरसेस्टर, ब्रिजपोर्ट एवं फॉलरिवर आदि नगरों में भी यह उद्योग विकसित किया गया। वर्तमान में रोड द्वीप, ओहियो, इलीनॉय, मैसाचुसेट्स तथा कनेक्टीकट आदि राज्यों में मशीन टूल्स के आने के केन्द्र स्थित हैं। ओहियो नगर का सिनसिनाटी नगर इसका सबसे बड़ा केन्द्र है जहां सं० रा० अमेरिका की 25% क्षमता विद्यमान है। अन्य उल्लेखनीय केन्द्रों में डेट्रोइट, क्लीवलैंड, सिडनी, बोस्टन तथा मैडिसन आदि नगर हैं। चूंकि यू० एस० ए० स्वयं एक भारी

औद्योगिक देश है अतः ज्यादातर उत्पादन यहीं खप जाता है। केवल नगण्य भाग ही ब्रिटेन, फ्रांस, ब्राजील, अर्जेन्टाइना तथा मैक्सिको आदि देशों को निर्यात किया जाता है।

सूती तथा कृत्रिम रेशा वस्त्रोद्योग में सं० रा० अमेरिका विश्व में प्रथम है। अन्य प्रकार के वस्त्रोद्योग भी यहाँ विशाल पैमाने पर प्रचलित हैं जिनके लिए विविध प्रकार की मशीनों की आवश्यकता पड़ती है। और चूँकि वस्त्र व्यवसाय दुनियाँ के लगभग प्रत्येक देश में विकसित हो रहा है, यहाँ इस व्यवसाय सम्बन्धी मशीनों की माँग निरन्तर बनी रहती है, अतः यह उद्योग दिनों-दिन विस्तार की ओर अग्रसर है। वस्त्रोद्योग सम्बन्धी मशीनों का निर्यात यहाँ जर्मनी, बेल्जियम, फ्रांस, इटली, मिश्र, ब्राजिल, अर्जेन्टाइना तथा भारत आदि देशों को होता है। इन मशीनों को बनाने के कारखाने मुख्यतः न्यू इंगलैंड प्रदेश व मध्य अटलांटिक तटवर्ती उन नगरों में है जहाँ वस्त्र व्यवसाय भी उन्नत है। इनमें वरसेस्टर, लॉबिल, लारेंस, प्राविडेंस, हाइडपार्क, विटिंसविले, फलाडेलफिया तथा फॉलरिवर सिटी आदि प्रमुख हैं।

कृषि तथा खनिज क्षेत्रों में आजकल छोटे-छोटे इंजनों तथा मोटर-पम्पों की माँग बड़ी तेजी से बढ़ रही है। इनका प्रयोग पानी को उलीचने तथा कृषि-यन्त्रों को संचालित करने के लिए होता है। इनका निर्माण 'सहयोगी उद्योगों के रूप में मुख्यतः उन क्षेत्रों में हुआ है जहाँ पहले से ही उद्योग विकसित हैं। मिलवॉकी, न्यूयार्क, पिट्सबर्ग, आयरनटन, ब्रिजपोर्ट, अल्बानी, शैनेकटाडी तथा फिलाडेलफिया आदि नगर इस प्रकार के इंजनों के प्रमुख निर्माण केन्द्र हैं यहाँ की 'जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी' विश्वविख्यात है।

रासायनिक उद्योगः

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् रसायनिक उद्योगों में विश्वव्यापी विस्तार हुआ है। आज जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में रसायनों से बने उत्पादन इतने व्यापक हो गए हैं कि उनका वर्गीकरण करना कठिन लगता है। रसायन उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होने वाले अनेक पदार्थ प्रकृति से प्राप्त होते हैं। इनमें चट्टानी नमक, चूना, पत्थर, डोलोमाइट, गंधक, जिप्सम, पोटेशियम नाइट्रेट आदि थल से, सोडियम नमक, आयोडिन, ब्रोमीन आदि जल से तथा नाइट्रोजन वायु से उपलब्ध होती है। सेल्यूलोज, हाइड्रोजनकार्बन तथा कार्बोहाइड्रेट आदि वृक्षों से प्राप्य हैं। हड्डियों से फास्फोरस मिलता है। रासायनिक उद्योगों के इन 'कच्चे मालों' के संयोग से हजारों, लाखों प्रकार के औद्योगिक उत्पादन तैयार किए जाते हैं। रसायन उत्पादन भी दो प्रकार के होते हैं। कुछ तैयार अवस्था में दूसरे अर्द्ध निर्मित अवस्था में जो अन्य उद्योगों में कच्चे मालों के रूप में प्रयोग होते हैं। उदाहरण के लिए गंधक का तेजाब या शोरे का तेजाब अनेक उद्योगों में प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार से

कॉस्टिक सोडा या सोडियम-कार्बोनेट क्षार आदि भी बहुत उपयोगी हैं। उर्वरक, दवाएँ, प्लास्टिक्स, साबुन, रंग, शृंगार प्रसाधन व कृत्रिम वस्त्र सभी रासायनिक उत्पादन हैं। इनके इतने वर्ग हैं कि प्रत्येक का अलग से अध्ययन करें तो एक विशाल ग्रंथ तैयार हो जाए। अतः केवल कुछ प्रमुख रासायनिक उत्पादनों का ही अध्ययन करना ही वांछनीय है।

अमेरिका में गंधक का तेजाब उस ब्रिमस्टोन' से तैयार किया जाता है जो लूजियाना तथा टैक्सास राज्य में खाड़ी के क्षेत्र से प्राप्त है। जस्ता शोधन के समय भी तेजाब उप-उत्पादन के रूप में प्राप्त होता है। ताँबा तथा पैट्रोल शोधन प्रक्रिया में भी यह तेजाब उप-उत्पादन के रूप में उपलब्ध होता है। स्वाभाविक रूप से यह खाड़ी के तटवर्ती एवं लूजियाना, टैक्सास आदि राज्यों में स्थित तेल-शोधन कारखानों में तैयार किया जाता है। टैनेसी के डक टाउन तथा मोंटाना में अना कौंडा नामक स्थान पर ताँबा शोधक कारखानों में भी उत्पादन क्रियारत है। रूस को छोड़कर अमेरिका गंधक के तेजाब के उत्पादन में विश्व में प्रथम है।

सोडा-एश का प्रयोग मुख्यतः काँच, साबुन, कागज, कपड़ा, पैट्रोल-शोधन एवं धातु-शोधन उद्योगों में होता है। यह सोडियम क्लोराइड तथा कैलशियम कार्बोनेट के योग से 'साल्वे विधि' द्वारा तैयार किया जाता है। अमेरिका में इसका श्रीगणेश तो प्रथम युद्ध में हो गया था परन्तु वास्तविक विकास द्वितीय विश्व युद्ध के समय हो गया था युद्ध में तो इतना विस्तार हुआ कि यहाँ का उत्पादन ब्रिटेन, जर्मनी तथा रूस तीनों के सम्मिलित उत्पादन के बराबर था। सोडा-एश तैयार करने के मुख्य केन्द्र डैट्रोइट, सायरा क्रूजे, लेक चार्ल्स, बारबर्टन, साल्टविले, पैंसविले तथा बेटन रूज आदि हैं। कैलीफोर्निया राज्य में खारी झीलों के पानी से सोडा-एश तैयार किया जाता है।

प्लास्टिक का उपयोग जीवन में इतना बढ़ा है कि आज प्रश्न यह है कि प्लास्टिक से क्या बनाना सम्भव नहीं है? प्लास्टिक सैल्यूलोज, कृत्रिम-रैजीन, कोयला तथा चूना आदि से तैयार किया जाता है। प्रोटीन प्रधान वस्तुओं जैसे सोयाबीन, दूध आदि से मुलायम प्लास्टिक तैयार किया जाता है। ये सभी वस्तुएं (सोयाबीन को छोड़कर) सं. रा. अमेरिका में भारी मात्रा में प्राप्त हैं। शिकागो प्लास्टिक उद्योग का सबसे बड़ा केन्द्र है, अन्य में सिएटिल (वाशिंगटन) तथा सैन फ्रांसिस्को (कैली.) उल्लेखनीय हैं। राज्यों के स्तर पर, पैंसिलवेनिया, न्यूयार्क, न्यूजर्सी तथा इलीनॉय इस दिशा में विशेष प्रगति कर गए हैं।

मिट्टी की उत्पादक शक्ति को बनाये रखने या बढ़ाने के लिए तरह-तरह के रासायनिक तत्व रासायनिक उर्वरकों के रूप में मिट्टी में पहुँचाए जाते हैं। ये

दो प्रकार के होते हैं। कुछ नाइट्रोजन प्रधान जिनमें अमोनिया सल्फेट, अमोनिया नाइट्रेट तथा यूरिया प्रमुख हैं तथा दूसरे पोटैशियम प्रधान उर्वरक जिनमें पोटैशियम क्लोराइड तथा पोटेशियम सल्फेट आदि आते हैं। सुपर फास्फेट से फास्फोरस मिलता है। दानेदार अमोनिया में 25% तक नाइट्रोजन होती है। यह जमीन में जाते ही पानी में घुल जाता है। इसके प्रयोग के साथ पानी की ज्यादा आवश्यकता होती है। पोटेशियम क्लोराइड में 50–60 प्रतिशत तक पोटाश मिलता है। उर्वरक के कच्चे मालों में फास्फोरस, पोटाश तथा नाइट्रेट प्रमुख हैं। कैलशियम, मैग्नीशियम तथा गंधक का भी प्रयोग किया जाता है। सभी कच्चे माल देश में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। अधिकांश कारखाने जार्जिया, टैक्सास, उत्तरी कैरोलिना, आलाबामा, लूजियाना तथा फ्लोरिडा आदि तटवर्ती राज्यों में हैं परन्तु कृषि क्षेत्रों के निकट है। उर्वरक के उत्पादन में सं० रा० अमेरिका विश्व में प्रथम है।

रासायनिक उद्योगों का कितनी तीव्र गति से विस्तार हुआ है इसका अनुमान इस तथ्य से लग सकता है कि 1958 में कुल रासायनिक उत्पादन-मूल्य 12,273 मिलियन डॉलर था जो बढ़कर 1967 में 23,550 मिलियन डॉलर हो गया। दूसरे शब्दों में केवल 10 वर्षों में उत्पादन-मूल्य लगभग दूना हो गया।

कागज तथा लुग्दी उद्योग :

कागज तथा लुग्दी उद्योग के लिए कच्चे माल के रूप में लकड़ी, भूसा, छाल आदि तथा सहयोगी पदार्थों के रूप में कुछ रासायनिक पदार्थ जैसे कैलशियम-बाई-सल्फाइड तथा कॉस्टिक सोडा आदि की जरूरत पड़ती है। सं. रा. अमेरिका में रासायनिक पदार्थ तो पर्याप्त मात्रा में हैं परन्तु मुलायम लकड़ी का अभाव है जिसकी पूर्ति यह देश कनाड़ा से करता है। भारी मात्रा में वहाँ से लुग्दी मंगाली जाती है। इस आयातित कच्चे माल के आधार पर सं. रा. अमेरिका दुनियाँ में सर्वाधिक अखबारी कागज तैयार करने वाला देश है। संसार का लगभग 12% अखबारी कागज, 50% अच्छी श्रेणी का कागज एवं 30 प्रतिशत लुग्दी यहाँ के कारखानों में तैयार किए जाते हैं। देश में लगभग 250 लुग्दी तथा 750 कागज के कारखाने हैं। इन कारखानों को चार समूहों में रखा जा सकता है।

प्रथम समूह न्यू इंगलैंड प्रदेश जिसके मेन, न्यूयार्क तथा मैसाचुसेटस आदि राज्यों में यह व्यवसाय पर्याप्त उन्नत है। अकेला मेन राज्य देश का लगभग आधा सा अखबारी कागज तैयार करता है। जंगल कट जाने से लुग्दी कनाड़ा से मंगायी जाती है।

खाड़ी तट प्रदेश में फ्लोरिडा तथा लूजियाना राज्य इस व्यवसाय में संलग्न हैं। ये दोनों राज्य मिलकर देश में उत्पादित कुल लुग्दी का लगभग आधा-सा

भाग प्रस्तुत करते हैं। अलाबामा तथा टैक्सास राज्यों में भी कागज उद्योग प्रचलित है। इस सम्भाग में लुग्दी की लगभग 60 मिलें हैं।

झीलों के तटवर्ती राज्यों—मिशीगन, मिनेसोटा तथा विस्कांसिन में लुग्दी बनाने के लगभग 135 कारखाने है जिनमें देश के एक-चौथाई से अधिक कागज-लुग्दी तैयार किए जाते हैं। घास का प्रयोग भी कागज बनाने में किया जाता है। उत्पादन प्रायः बढ़िया कागज का होता है।

सं०रा० अमेरिका का उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्र देश के उन भागों में से एक है जहां यह व्यवसाय प्रारम्भ में ही शुरू किया गया था। 1868 में ओरेगन सिटी में प्रथम लुग्दी का कारखाना खोला गया। लकड़ी यहाँ स्थानीय पठारी पर्वतीय क्षेत्रों से प्राप्त हो जाती है। कोलम्बिया तथा विलामेट आदि नदियों की घाटियों में कई कारखाने हैं। प्रधान केन्द्र स्पोकेन, पोर्टलैण्ड, टैकोमा तथा सिएटिल आदि हैं।

लुग्दी-कागज व्यवसाय भी तीव्रगति से विकासशील उद्योगों में से एक है। 1958 में यहाँ 5,707 मिलियन डॉलर की कीमत का कागज-लुग्दी व सम्बन्धित वस्तुएँ तैयार की गयी थी जबकि 1967 में यह उत्पादन-मूल्य 9,756 मिलियन डॉलर था।

अन्य उद्योग :

अन्य उद्योगों में सीमेंट कांच व बर्तन उद्योग उल्लेखनीय है। कांच बनाने के लिए सिलीका, सोडा-एश, पोटाश तथा क्वार्टजाइट आदि की आवश्यकता होती है। ऊँचे तापमान पर इन्हें गलाने के लिए अच्छा बिटूमिनस कोयला चाहिए। सिलीका को छोड़ अन्य वस्तुएँ सं० रा० अमेरिका में पर्याप्त मात्रा में हैं। सिलीका आयात कर लिया जाता है। फलतः कांच उद्योग इतना विकास कर गया है कि आज यह देश दुनियाँ में सर्वाधिक कांच का सामान तैयार करता है। कांच के अधिकांश कारखाने न्यूजर्सी, इलीनॉय, ओहियो, पश्चिमी वर्जीनिया तथा पैंसिल-वेनिया आदि राज्यों में विद्यमान हैं। फिलाडेलफिया, ब्रिजटन, सालेम, शिकागो, ग्लासबैरो तथा टोलैडो प्रधान कांच उद्योग-केन्द्र हैं। सीमेंट उद्योग में कच्चे माल जैसे चूने का पत्थर, जिप्सम, चीका व रासायनिक पदार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं। पैंसिलवेनिया, टैक्सास, मिशीगन, न्यूयार्क तथा कैलीफोर्निया आदि राज्य देश के आधे से अधिक सीमेंट उत्पादन के लिए उत्तरदायी हैं। यंगस्टाउन, एक्रन, सिनसिनाटी तथा जोन्सविले आदि नगर चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने के सबसे बड़े केन्द्र हैं।

□□□

सं. रा. अमेरिका : परिवहन एवं विदेश व्यापार

संयुक्त राज्य अमेरिका के बसाव एवं आर्थिक विकास में यातायात के साधनों का आधार-भूत महत्व रहा है। वैसे तो परिवहन किसी भी भू-खण्ड के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है परन्तु अमेरिका की विशेष परिस्थितियों में इनका विशेष महत्व रहा है। प्रारम्भ में यूरोपियन लोग पूर्वी अंटलांटिक तटीय भागों में आकर बसे। वहाँ से अप्लेचियन क्रम को पार कर विशाल भीतरी भागों में घुसे और आगे उच्च रॉकी क्रम को पार कर पश्चिम के अर्द्ध-शुष्क भागों को आबाद किया। इस प्रकार प्रारम्भिक बसाव या भू-खण्डों को आबाद करने की प्रक्रिया तथा यातायात के साधनों का क्रमशः पश्चिम की ओर विस्तार—ये दोनों साथ चले। भीतरी भागों में सर्वप्रथम बसाव यातायात मार्गों के सहारे-सहारे हुआ। बहुत दिनों तक यातायात का विकास एवं आबाद करने की प्रक्रिया एक-दूसरे के पर्याय रहे। इस प्रकार इस महान् राष्ट्र के निर्माण में यातायात के साधनों ने आधारभूत सहयोग प्रदान किया।

पश्चिमोत्तर प्रयाण के लिए प्रारम्भ में महान् झीलें, सेंटलॉरेंस तथा मिसीसीपी आदि नदियाँ तथा उनकी सहायक ही यातायात के मुख्य साधन थे। इन्हीं के सहारे-सहारे 1763 से पहले फ्रेंच लोग पश्चिमी भागों की ओर गये थे। अंग्रेज प्रवासियों ने भी अप्लेचियन शृंखला को घाटियों द्वारा पार करके ओहियो नदी को पश्चिमी प्रयाण का साधन बनाया। अप्लेचियन क्रम को पार करने हेतु केवल कुछ ही थल मार्ग थे जैसे कम्बरलैंड-गैप में होकर केंटुकी तक या फिर ओहियो घाटी में होकर। ये रास्ते अत्यन्त कठिन ऊबड़-खाबड़ तथा असुरक्षित थे। 1825 में इरी नहर के बनने से यह बाधा दूर हुई। बाद में उसी गैप (हडसन-मोहाक) में होकर रेल लाइन भी बिछायी गयी। मिसीसीपी के पश्चिम में नदियाँ नाव्य नहीं हैं, ऊँचाई क्रमशः बढ़ती जाती है। अतः उन दिनों थल मार्गों को अपनाया गया जो पहाड़ी शृंखलाओं की घाटियों में होकर गुजरते थे। ऐसे मार्गों में सांता-फे (मैदानों को न्यू मैक्सिको से जोड़ने वाला) गीला (कैलीफोर्निया से जोड़ने

घाला) तथा ओरेगन (उत्तर-पश्चिम की ओर) आदि प्रमुख थे। कालांतर में जब पश्चिमी यू० एस० ए० में रेल लाइनें बिछायी गयीं तो इन्हीं मार्गों को अपनाया गया।

रेल मार्ग—देश के पश्चिमी भाग को जोड़ने तथा आबाद करने में जल मार्गों से ज्यादा महत्वपूर्ण हाथ रेल मार्गों का रहा है। पिछली शताब्दी के मध्य तक मिसीसीपी प्रवाह पूर्णतः नाव्य बनाया जा चुका था। अटलांटिक तट से भीतरी भागों तक पहुँचने के लिए जल मार्ग उपयोगी थे। यहाँ से आगे बड़ी तेजी से रेल मार्ग बनाए गए और इन रेल लाइनों के सहारे-सहारे ही मानवता क्रमशः पश्चिम की ओर स्थानांतरित हुई। सं. रा. अमेरिका के रेल यातायात का श्रीगणेश पिछली शताब्दी के तीसरे दशक में हुआ जब 24 मई 1830 को बाल्टीमोर से एलीकोट तक की 13 मील की दूरी में प्रथम रेल चलायी गयी। बाद में बड़ी तेजी से लाइनें डाली गयीं। 1840 में अटलांटिक तट प्रदेश को मिसीसीपी से जोड़ा गया। 1869 में यूनियन पैसफिक रेलवे सेवा प्रारम्भ हुई जिसने देश के पूर्व भाग को प्रशांत तट से जोड़ा। इस प्रकार पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध में रेलवे मार्गों के विस्तार का कार्यक्रम बड़ी तेजी से चला। 1916 तक 266,000 मील लम्बे रेल मार्ग बनाए जा चुके थे। बाद में कुछ मार्गों को बन्द भी किया गया। 1940 में यहाँ के कुल रेल मार्गों की लम्बाई 246,739 मील ही थी। इस ह्रास का प्रधान कारण वह भारी प्रतिद्वंद्विता है जो यहाँ के रेलवे यातायात, सड़क, जल एवं वायु यातायात से महसूस करता है। यह प्रतिद्वंद्विता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। छोटी दूरियों के लिए बस-ट्रक, लम्बी दूरियों पर यात्री-परिवहन के लिए वायुयान तथा माल परिवहन के लिए जल मार्गों को ज्यादा उपयोगी समझा जाने लगा है। वर्तमान में यहाँ के कुल रेल मार्गों की लम्बाई (1980 में) 2,22,164 मील है। यह लम्बाई विश्व के समस्त रेल-मार्गों का 29% भाग बनाती है। देश के 99.6% रेल मार्ग साधारण चौड़ाई (4 फीट 8½ इंच) के हैं।

साधारणतया अमेरिका के रेल मार्ग अन्तर्महाद्वीपीय विस्तार के हैं, पूर्व से पश्चिमी तट तक रेल द्वारा पहुँचा जा सकता है परन्तु कोई भी एक कम्पनी ऐसी नहीं है जिसकी रेल पूर्वी तट से लगातार प्रशांत तट तक जाती हो। फलतः यात्रियों को ट्रेन या स्टेशन्स बदलने पड़ते हैं। अटलांटिक तट से भीतर की ओर आने वाली अधिकतर लाइनें शिकागो या सेंटलुई पर समाप्त हो जाती हैं तथा यहाँ से पश्चिम की तरफ जाने वाली लाइनें प्रारम्भ होती हैं। यूनियन पैसफिक रेलवे के अतिरिक्त राकी क्रम को पार कर पश्चिम की तरफ जाने वाले मार्गों में 'ग्रेट नार्दर्न-सांता-फे', नार्थ पैसिफिक तथा 'साउथ पेसिफिक' रेलवे क्रम महत्वपूर्ण हैं। प्रमुख रेल मार्ग अटलांटिक तट पर न्यूयार्क, बोस्टन, फिलाडेलफिया तथा बाल्टीमोर आदि नगरों से प्रारम्भ होते हैं तथा भीतरी मैदानों में, उत्तर में शिकागो,

मध्य में सेंटलुई एवं दक्षिण में न्यू आर्लीन्स को जोड़ते हुए, पश्चिम में डेनवर, एलापासो तथा साल्टलेक सिटी आदि नगरों से गुजरते हुए लॉस एंजिल्स, सैन-फ्रांसिस्को, पोर्टलैंड तथा सिएटिल आदि प्रशांत तटीय नगरों तक जाते हैं। शिकागो रेल मार्गों का भारी जंकशन है।

दोहरे रेल मार्ग केवल उत्तर-पूर्व के व्यस्त क्षेत्र यानी औद्योगिक-मेखला में ही हैं। तीन-चार मुख्य मार्ग दोहरे हैं। इंजन तथा डिब्बे यूरोप की तुलना में भारी होते हैं। दोहरे मार्गों पर तो और भी ज्यादा भारी है। न्यूयार्क-सेंट्रल रेल मार्ग, जो हडसन-मोहाक घाटी में होकर गुजरता है, यात्री परिवहन तथा पेंसिलवानिया रेल मार्ग, जो पिटसबर्ग को फिलाडेलफिया तथा न्यूयार्क से जोड़ता है, माल परिवहन की दृष्टि से देश में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं व्यस्त माने जाते हैं। पश्चिमी रेलों में यूनियन पैसफिक पर ज्यादा व्यस्तता रहती है।

भीतरी जल मार्ग—सं. रा. अमेरिका के समस्त भीतरी जल यातायात को दो समूहों में रखा जा सकता है; उत्तर में महान् झील—सेंट लारेंस क्रम तथा दक्षिण में मिसीसीपी क्रम जिसमें इस विशाल नदी की अनेक सहायक भी शामिल हैं। ये दोनों क्रम देश के 85% भीतरी जल यातायात के लिए उत्तरदायी हैं। महान् झीलों वाले जल मार्ग को इरी बारगे नहर (1825) द्वारा हडसन नदी से तथा ईरी-ओहियो नहर (1832) द्वारा मिसीसीपी नदी से जोड़ा गया। दूसरे शब्दों में दुनियाँ के सबसे बड़े भीतरी जलाशयों को उपर्युक्त नहरों द्वारा क्रमशः अटलांटिक महासागर तथा मैक्सिको की खाड़ी से जोड़ा गया। इस प्रकार पिछली शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही भीतरी जल यातायात को प्रभावशाली एवं ज्यादा उपयोगी बनाने के लिए कदम उठा लिए गए थे।

शताब्दियों से मिसीसीपी क्रम भीतरी मार्गों के यातायात की महत्वपूर्ण कड़ी रहा है। मध्यवर्ती राज्यों को समुद्र से जोड़ने वाला एक यही प्रमुख मार्ग है। इस क्रम की नदियों की प्रवाह सम्बन्धी अनियमितताओं से बचने के लिए नदियों के सहारे-सहारे 9 फीट गहरी नहर बनायी गयी है। मिसीसीपी के सहारे-सहारे यह नगर न्यू आर्लीन्स से लेकर मिनियापोलिस तक, ओहियो तथा मोनोन गहेला के सहारे-सहारे पिट्सबर्ग तक एवं टेनेसी के सहारे-सहारे नॉक्सविले तक बनायी गयी है। इस प्रकार की एक नहर मिसीसीपी की एक अन्य महत्वपूर्ण सहायक मिसूरी नदी के सहारे-सहारे सियॉक्स सिटी तक बनायी गयी है। 'मिसूरी घाटी योजना' के पूरे होने पर यह नहर और आगे तक बढ़ायी जा सकेगी। पश्चिम में अर्कन्सास नदी के सहारे-सहारे भी इसी गहराई को एक नहर 1970 में बन कर तैयार हुई है। इस प्रकार समस्त मिसीसीपी क्रम को नियमित जल यातायात के लायक बनाने की समुचित व्यवस्था की गयी है।

ह्यूरन तथा मिशीगन झीलें जो वस्तुतः एक ही विशाल जलाशय के दो हिस्से हैं, एक छोटी नदी द्वारा झील ईरी से जुड़ी हैं। इस नदी के प्रवाह में

केवल 9 फीट का गिराव है जो यातायात में कोई बड़ी बाधा प्रस्तुत नहीं करता। वास्तविक बाधा ईरी और ओंटेरियो झीलों के बीच न्यागरा प्रपात (326 फीट का गिराव) के रूप में थी जिसे 1829 में वेलांड नहर द्वारा दूर किया गया। 1855 में 'सू' नहर बनकर तैयार हुई जिससे सुपीरियर तथा ह्यूरन झीलों के मध्य यातायात सम्भव हो सका। इन नहरों के बनने से डुलुथ, शिकागो तथा किंगसटन के बीच सम्पूर्ण झील प्रदेश में यातायात सम्भव हो गया परन्तु किंगसटन- मोंट्रीयल टुकड़े में उथली सेंट लारेंस के कारण समुद्री जलयानों का झीलों तक आना सम्भव नहीं था। यह बाधा 1959 में दूर हुई जब अमेरिका तथा कनाडा के सहयोग से बना 27 फीट गहरा 'सेंटलारेंस समुद्री मार्ग' बन कर तैयार हुआ। इसके बनने से डुलुथ या शिकागो भी अब उसी प्रकार के बंदरगाह बन गए हैं जैसे बोस्टन या न्यूयार्क। अब आधुनिक जलयान अटलांटिक तट से भीतरी भागों में लगभग 2300 मील तक भीतर जा सकते हैं।

झील मार्ग से होने वाले जल यातायात में मुख्यतः पश्चिम से पूर्व को लोहा, गेहूँ, माँस तथा पूर्व से पश्चिम को जाने वाले माल में कोयला, कपड़ा, दुग्ध व्यवसाय सम्बन्धी उत्पादन तथा मशीनों का बाहुल्य होता है। 1961 के बाद से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से सम्बन्धित जलयान भी सेंट लॉरेंस–झील मार्ग पर खूब आने लगे हैं।

सड़कें—रेलवे यातायात के विपरीत, देश की ज्यादातर महत्वपूर्ण सड़कों की जिम्मेदारी सरकार की है, संघीय तथा राज्य दोनों सरकारों का उत्तरदायित्व है। अगर मोटर कारों की संख्या में यह देश विश्व में प्रथम है तो अच्छी सड़कों की लम्बाई भी यहाँ विश्व में सर्वाधिक है। वर्तमान (1982) में अमेरिका में 3,866,296 मील लम्बी सड़कें हैं जिनमें से 3,398,810 मील लम्बी सड़कें अच्छी किस्म की हैं। पिछले दशकों में सड़क यातायात का अधिक प्रचार एवं प्रसार हुआ है अतः यहाँ सड़कों की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। 1961 में 'अन्तर्राज्यीय तथा सुरक्षा सड़क योजना' बनायी गयी जिसमें 12 साल के अन्दर लगभग 41,000 मील लम्बी चौड़ी पक्की सड़कें बनाने का लक्ष्य रखा गया। इस योजना में 50,000 से ज्यादा आबादी वाले लगभग प्रत्येक नगर को सड़कों से जोड़ दिया गया है। देश में अनेक ऐसी सड़कें हैं जिन पर आसानी से 80 मील प्रति घंटा की रफ्तार से चला जा सकता है। आज देश के किसी भी हिस्से, नगर यहाँ तक एक तट से दूसरे तट को सुन्दर सड़कों द्वारा पहुँचा जा सकता है। अन्तर्राज्यीय सड़कें बहुत चौड़ी है जिन पर होकर एक साथ कई गाड़ियाँ गुजर सकती हैं। महत्व के अनुसार सड़कों के विभिन्न नाम हैं जैसे—'सुपर हाइवेज', एक्सप्रेस 'वेज' या 'फ्री वेज' आदि।

स्थानीय सड़कों की दशा उतनी अच्छी नहीं है। इनमें से अधिकांश नगरपालिकाओं या अन्य स्वायत्तशासी संस्थाओं के अधिकार में हैं। देश की सड़कों

पर लगभग 90 मिलियन लायसेंस शुदा गाड़ियाँ चल रही हैं। सड़क यातायात बहुत सघन है, प्रतिवर्ष लगभग 50,000 व्यक्ति सड़क दुर्घटनाओं में मर जाते हैं। नगरों में गाड़ियाँ पार्क करने को स्थान नहीं है।

वायु यातायात—सं. रा. अमेरिका में 2,58,971 वायुयान असैनिक सेवाओं में रत हैं। यह संख्या विश्व में सर्वाधिक तो है ही, साथ ही वहाँ के आम नागरिक की प्रवृति की भी संकेतक है। समय की बचत के लिए लोग वायु सेवा पसन्द करते हैं। यह स्वाभाविक भी है क्योंकि यू. एस. ए. जैसे विशाल देश में एक सिरे से दूसरे सिरे तक रेल या सड़क से पहुँचने में कई दिन लग सकते हैं। प्रायः सभी नगरों में हवाई अड्डे हैं। केप कैनेडी तथा शिकागो के हवाई अड्डे तो अपवाद रूप में बहुत बड़े हैं। बड़े नगरों में डाक वितरण का कार्य वायुयान-हैलीकोप्टर्स करते हैं। निजी तौर पर भी वायुयानों का प्रचलन बहुत ज्यादा है।

विदेश व्यापार :

मात्रा एवं मूल्य दोनों दृष्टियों से सं. रा. अमेरिका के व्यापार-आँकड़े विश्व में सबसे ऊँचे बैठते हैं। यह दुनियाँ के उन कुछ भाग्यशाली देशों में से है। जिनका निर्यात-आयात-मूल्य सदा संतुलित रहता है। 1982 में इस महादेश का निर्यात-मूल्य 212,275 मिलियन डालर तथा आयात-मूल्य 260,982 मि० डालर था। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि निर्यात-आयात मूल्य का यह अन्तर क्रमशः कम होता जा रहा है। 1941–45 की अवधि में निर्यात-आयात मूल्य क्रमशः 10,051 तथा 3,514; 1951-55 में 15,333 तथा 10,832; 1961-65 में 24,006 तथा 17659; 1967 में 31,534 तथा 28,816 मि० डॉलर था।

स्वाभाविक रूप से, सं. रा. अमेरिका से निर्यात होने वाले पदार्थों में मशीनों, यातायात-परिवहन उपकरणों, कृषि-उपजों, तेल इस्पात-निर्मित वस्तुओं, वस्त्र तथा रासायनिक उत्पादनों का बाहुल्य होता है जबकि आयात में शक्कर, शराब, फल, लुगदी, कॉफी, खाद, ऊन, मछली, फर, ऊनी वस्त्रों तथा कच्चे खनिज पदार्थों की प्रधानता रहती है। इसे दूसरे शब्दों में यूँ कहा जा सकता है कि आयातों में ऊष्ण कटिबन्धीय उपजों तथा उद्योगों सम्बन्धी कच्चे मालों का प्राधान्य रहता है। इसके विपरीत निर्यात में ज्यादातर भाग उन वस्तुओं का होता है जो यहाँ की कृषि तथा औद्योगिक मेखला से प्राप्त होती हैं। पिछले 100 वर्षों के आयात-निर्यात स्वरूप पर निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट प्रकाश पड़ता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका : विदेश व्यापार 1851–1960

	कच्चे माल	खाद्य (कच्चे)	खाद्य (तैयार)	अर्द्ध-निर्मित औद्योगिक उत्पादन	औद्योगिक उत्पादन
			निर्यात (प्रतिशत मात्रा)		
1851–60	61.7	6.6	15.4	4 0	12 3
1881–90	36.0	18.0	25.3	5.1	15.6
1921–25	27.5	9.7	13.9	12.5	36.4
1946–50	14.0	8.3	10.3	11.1	56 3
1956–60	12.9	7.4	6.0	15.0	56.7
			आयात (प्रतिशत मात्रा)		
1851–60	9.6	11.8	15.4	12.5	50 7
1881–90	21.4	15.3	17.8	14.8	30 7
1921–25	37.4	11.1	13.0	17.6	20.9
1946–50	30.3	18.8	10.7	22.3	19.9
1956–60	22.3	44.0	10.5	22.1	31.1

संयुक्त राज्य अमेरिका–प्रधान आयात 1982

नाम वस्तु (समूह)	आयात-मूल्य (मि. डा. में)	नाम वस्तु (समूह)	आयात-मूल्य (मि. डा. में)
पैट्रोल तथा संबंधित उत्पादन	59,396	अल्कोहल-पेय	2,513
अलोह धातु	1,552	तांबा	988
कागज, लुग्दी व उत्पादन	5,333	ऊन तथा बाल	152
कपड़ा एव तैयार वस्त्र	10,972	हीरे (अनौद्योगिक)	1,917
मशीनरी (सभी प्रकार)	38,664	रबर	735
कॉफी	2,730	तेल-तिलहन	406
रसायन	9,493	कोकोआ	323
शक्कर	863	कांच एवं बर्तन	1,351

लोह-इस्पात उत्पादन	19,184	जूता	3,437
माँस	2,364	खिलौने-खेल सामान	2,698
ऑटोमाबाइल एवं पार्टस	29,218	फर	127
मछली	3,143	वैज्ञानिक उपकरण	9,051
उर्वरक	963	कला एवं पुरातत्वीय वस्तुएं	2,024
फल तथा सब्जियाँ	2,816	टिन	378

संयुक्त राज्य अमेरिका-प्रधान निर्यात 1982

नाम वस्तु (समूह)	निर्यात-मूल्य (मि. डा. में)	नाम वस्तु (समूह)	निर्यात-मूल्य (मि. डा. में)
मशीनरी (सभी प्रकार)	87,148	लोह इस्पात	2,101
,, औद्योगिक	9,461	अलोह धातुएं	1,768
,, कृषि	2,887	कागज, लुग्दी	4,068
,, विद्युत सम्बन्धी	3,624	कोयला	5,087
विद्युत उपकरण	11,471	फल सब्जियाँ	2,715
अनाज एवं संवर्धित वस्तुएं	6,420	पैट्रोल व उप-उत्पादन	5,947
रसायन	19,890	यौद्धिक सामग्री	3,261
प्लास्टिक्स	3,650		
ऑटोमोबाइल्स	15,611		
एयर क्राफ्ट	11,775		
सोयाबीन	6,240		
कपास	1,955		
कपड़ा, वस्त्र	3,715		
तम्बाकू-सिगरेट	2,845		

(उपरोक्त आँकड़ों में लगभग 85% निर्यात तथा आयात 78% आयात समायोजित है)

उपरोक्त तीनों सारणियों से आयात-निर्यात पदार्थों के स्वरूप में परिवर्तन की प्रवृत्ति पर प्रकाश पड़ता है। जैसे-जैसे सं. रा. अमेरिका में औद्योगिक विकास होता गया विदेशों से औद्योगिक उत्पादनों के स्थान पर कच्चे मालों की आयात-मात्रा बढ़ती गयी। इसी तरह यहाँ से जो पहले कच्चे माल बाहर, विशेषकर यूरोपियन देशों को जाते थे अब उनके स्थान पर मशीनों ऑटोमोबाइल्स व अन्य

औद्योगिक वस्तुएं जाने लगी। खेती के विकास के साथ-साथ अनाज व अन्य खाद्य पदार्थों की ऐसी अतिरिक्त मात्रा बचने लगी जिसे निर्यात किया जा सकता था।

वस्तुतः व्यापार या आयात-निर्यात का स्वरूप कई अन्य तत्वों पर निर्भर करता है जिनमें देश की आर्थिक नीति, प्राकृतिक संसाधनों की खोज व उपयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक सम्बन्ध महत्वपूर्ण हैं। पिछली शताब्दी तक सं. रा. अमेरिका का अधिकांश व्यापार यूरोपियन देशों (विशेषकर ब्रिटेन) से होता था जहां यह कच्चे माल (कपास, धातु, कोयला आदि) भेजता और वहां से तैयार औद्योगिक माल मंगाता था। 1865–1914 के बीच इस स्थिति में परिवर्तन होना प्रारम्भ हुआ और 1918 तक स्थिति बदल चुकी थी। अब यहां उद्योग विकसित हो चुके थे, निर्यात के लिए कच्चे मालों के स्थान पर औद्योगिक उत्पादन थे। चूंकि यूरोपियन देश स्वयं इसी स्थिति में थे अतः बाजार बदले और अमेरिका का तैयार माल लैटिन अमेरिका, अफ्रीका तथा एशिया के देशों को जाने लगा। इधर यूरोपियन देशों के पास अमेरिका को निर्यात करने को बहुत कम रह गया। फल यह हुआ कि इन देशों को अमेरिका से होने वाला निर्यात, इन देशों से यहां आने वाले आयात की तुलना में बहुत ज्यादा हो गया। व्यापार-दिशा में परिवर्तन का यह स्वरूप निम्न सारणी से सुस्पष्ट है।

स्पष्ट है कि पिछले 100–125 वर्षों में एशिया, दक्षिणी अमेरिका तथा उत्तरी अमेरिका के अन्य देशों, विशेषकर कनाडा, से अमेरिका के व्यापारिक संबंध बढ़े हैं; आयात और निर्यात दोनों बढ़े हैं। यह बढ़ोतरी यूरोप वाले हिस्से की कीमत पर हुई है जो पिछले 100 वर्षों में एक तिहाई रह गया है। पिछली शताब्दी के मध्य में तीन चौथाई आयात-निर्यात यूरोप से सम्बन्धित थे जो आज एक चौथाई से भी कम हैं। वर्तमान व्यापार प्रतिशत की दृष्टि से, देशों में, कनाडा सबसे आगे है जो कि सं. रा. अमेरिका के लगभग 1/5 विदेश व्यापार से जुड़ा है। उल्लेखनीय है कि इन दोनों देशों का परस्पर व्यापार विश्व में सर्वाधिक है। कनाडा कच्चे मालों में धनी है, दूसरे सबसे नजदीक स्थित होने के कारण परिवहन-खर्चा भी अपेक्षाकृत कम पड़ता है। बाहर के देशों में जापान तथा ब्रिटेन सबसे आगे हैं जिनका अमेरिका से भारी व्यापारिक सम्बन्ध है। ब्राजील (कॉफी) वेनेज्वला (पैट्रोल तथा लौह-अयस) पश्चिमी जर्मनी (औद्योगिक उत्पादन) आदि देशों को अमेरिका के मुख्य सप्लायर्स की श्रेणी में रखा जा सकता है। 1960 से पहले क्यूबा (शक्कर) भी इसी श्रेणी में था। खरीददारों में कनाडा, ब्रिटेन, जापान, मैक्सिको, पश्चिमी जर्मनी, नीदरलैंड, भारत तथा वेनेज्वला प्रमुख है।

है। न्यू आर्लियंस भी पर्याप्त व्यस्त बंदरगाह है जिसे अपनी स्थिति (मिसीसीपी के मुहाने पर) का लाभ है। भीतरी मार्गों से होने वाला जलीय व्यापार इस बंदरगाह के द्वारा ही होता है।

प्रशांत तट पर सेन-फ्रांसिस्को, लॉस एंजिल्स, सिएटिल तथा पोर्टलैंड ज्यादातर विदेशी व्यापार के लिए उत्तरदायी हैं। इनकी व्यस्तता एवं क्षमता बड़ी तेजी से, पश्चिमी राज्यों में जनसंख्या तथा आर्थिक क्रियाओं की वृद्धि के साथ-साथ बढ़ रही है। पनामा नहर खुल जाने से इन बंदरगाहों को बड़ा लाभ हुआ है। देश के पूर्वी तट से पश्चिमी तट तक माल भेजने के लिए आजकल समुद्री मार्ग ही अपनाया जाता है क्योंकि यह भीतरी थल मार्ग से सस्ता पड़ता है।

यहाँ उल्लेखनीय है कि सं. रा. अमेरिका का, कनाडा की तरह, एक चौथा तट भी है और वह है महान झील-सेंट लॉरेंस जलीय मार्ग। इस मार्ग पर अनेक भीतरी बंदरगाह महत्वपूर्ण स्थिति लिए हैं। इनमें डुलुथ, शिकागो, डेट्रायट, क्लीवलैंड, टोलेडो तथा बफेलो आदि अग्रणी हैं। यह सच है कि अब तक झील मार्ग का प्रयोग कोयला, लोह-अयस, गेहूँ, आदि के भीतरी व्यापार के लिए होता रहा है परन्तु सेंट लॉरेंस समुद्री मार्ग के खुल जाने से इन बंदरगाहों का न केवल कनाडियन वरन् समुद्र पार अन्य देशों के बंदरगाहों से भी सम्बन्ध बढ़ता जा रहा है।

अमेरिका का व्यापारिक जहाजी बेड़ा विश्व में सबसे बड़ा है जो विश्व के समस्त बेड़े के लगभग 1/3 टन भार में समायोजित है।

विदेश व्यापार–बदलते हुए सम्बन्ध 1850–1960

(प्रत्येक भू-भाग से होने वाले व्यापार की प्रतिशत-मात्रा)

	उ० अमेरिका (उ० भाग)	उ० अमेरिका (द० भाग)	द० अमेरिका	यूरोप	एशिया
		निर्यात			
1850	6.6	9.9	5.4	75.7	2.1
1891–1900	6.3	6.2	3.4	77.9	3.2
1921–25	14.3	10.2	6 8	52.7	11.3
1947	14.7	11.9	16.4	35.9	13.3
1956	20.9	10.4	10.1	27.1	14.1
		आयात			
1850	3.0	9.3	9.2	71.0	7.2
1891–1900	4.8	13.4	14.1	51.5	12.7
1921–25	11.5	14.9	12.2	30.4	27.3
1947	19.6	17.6	21.8	14.2	18.3
1956	23.0	11.4	19.9	23.5	15.9

प्रशांत, अटलांटिक तथा मैक्सिको की खाड़ी—इन तीनों के तट प्रदेश सं. रा. अमेरिका के अनेक प्राकृतिक बंदरगाह प्रस्तुत करते हैं जो व्यापार में रत है। फिर भी यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि देश के कुल विदेश व्यापार का लगभग 35% भाग अकेले एक बंदरगाह से सम्बन्धित है और वह बंदरगाह है न्यूयार्क। इसका कारण है, न्यूयार्क की स्थिति। जैसा कि 'औद्योगिक विकास' अध्याय में स्पष्ट है यह उस मार्ग के सिरे पर स्थित है जो अप्लेशियन को पार करके भीतरी झील प्रदेश को जोड़ता है। यह जलमार्ग (हडसन-मोहाक धंसाव, ईरी नहर) अमेरिका की औद्योगिक मेखला में होकर स्थित है। यह भी कम महत्वपूर्ण नहीं कि न्यूयार्क के विशाल प्राकृतिक पोताश्रय में भारी क्षमता विद्यमान है।

अटलांटिक तट के अन्य व्यस्त बंदरगाहों में फिलाडेलफिया, बाल्टीमोर, बोस्टन तथा हैम्पटन रोडस आदि महत्वपूर्ण हैं। खाड़ी प्रदेश में गॉलवेस्टन तथा हाउस्टन बंदरगाह आते हैं। इनका वास्तविक विकास पिछले दशकों में ही हुआ है जिसमें इस प्रदेश में तेल की खोज, सूती वस्त्र व्यवसाय का विकास तथा औद्योगीकरण की नयी प्रवृत्ति आदि तत्वों का भारी सहयोग रहा है। टेक्सास का सारा व्यापार भी इन्हीं बंदरगाहों से होता है अतः इनकी क्षमता क्रमशः बढ़ायी जा रही

है। न्यू आर्लियंस भी पर्याप्त व्यस्त बंदरगाह है जिसे अपनी स्थिति (मिसीसीपी के मुहाने पर) का लाभ है। भीतरी भागों से होने वाला जलीय व्यापार इस बंदरगाह के द्वारा ही होता है।

प्रशांत तट पर सेन-फ्रांसिस्को, लॉस एंजिल्स, सिएटिल तथा पोर्टलैंड ज्यादा-तर विदेशी व्यापार के लिए उत्तरदायी हैं। इनकी व्यस्तता एवं क्षमता बड़ी तेजी से, पश्चिमी राज्यों में जनसंख्या तथा आर्थिक क्रियाओं की वृद्धि के साथ-साथ बढ़ रही है। पनामा नहर खुल जाने से इन बंदरगाहों को बड़ा लाभ हुआ है। देश के पूर्वी तट से पश्चिमी तट तक माल भेजने के लिए आजकल समुद्री मार्ग ही अपनाया जाता है क्योंकि यह भीतरी थल मार्ग से सस्ता पड़ता है।

यहाँ उल्लेखनीय है कि सं. रा. अमेरिका का, कनाडा की तरह, एक चौथा तट भी है और वह है महान झील-सेंट लॉरेंस जलीय मार्ग। इस मार्ग पर अनेक भीतरी बंदरगाह महत्वपूर्ण स्थिति लिए हैं। इनमें डुलुथ, शिकागो, डेट्रायट, क्लीवलैंड, टोलेडो तथा बफैलो आदि अग्रणी हैं। यह सच है कि अब तक झील मार्ग का प्रयोग कोयला, लोह-अयस, गेहूँ, आदि के भीतरी व्यापार के लिए होता रहा है परन्तु सेंट लॉरेंस समुद्री मार्ग के खुल जाने से इन बंदरगाहों का न केवल कनाडियन वरन् समुद्र पार अन्य देशों के बंदरगाहों से भी सम्बन्ध बढ़ता जा रहा है।

अमेरिका का व्यापारिक जहाजी बेड़ा विश्व में सबसे बड़ा है जो विश्व के समस्त बेड़े के लगभग 1/3 टन भार में समायोजित है।

□□□

ब्रिटिश द्वीप समूह

ब्रिटिश द्वीप समूह के अन्तर्गत दो बड़े द्वीप समूह—ग्रेट ब्रिटेन तथा आयरलैंड एवं अनेक छोटे-मोटे द्वीप शामिल किये जाते हैं। ये सभी द्वीप समूह महाद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी तट के निकट महत्वपूर्ण स्थिति लिए हुए हैं। ये यूरोप के मुख्य भूभाग से केवल 33 कि० मी० चौड़े डोवर जलडमरू मध्य द्वारा पृथक् हैं। यहाँ दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड एवं फ्रांस इतने निकट हैं कि वे किसी समुद्र द्वारा पृथक् लगते ही नहीं हैं। वह दिन भी दूर नहीं जबकि इंगलैंड यूरोप महाद्वीप के मुख्य भूभाग से थल द्वारा सम्बन्ध स्थापित कर लेगा क्योंकि इस बात के प्रयत्न किए जा रहे हैं कि उससे इंगलिश चैनल के नीचे अधोसमुद्रीय सुरंग बनाई जाए और उससे होकर ब्रिटेन तथा फ्रांस को रेल द्वारा जोड़ा जाए। इस दिशा में ब्रिटेन तथा फ्रांस के मध्य समझौता भी हो गया है और अधो-समुद्रीय सुरंग का कार्य भी आरम्भ कर दिया गया है।

राजनैतिक दृष्टि से ग्रेट ब्रिटेन के अन्तर्गत तीन राज्य सम्मिलित किए जाते हैं: उत्तर में स्कॉटलैण्ड, पश्चिम में वेल्स तथा शेष में इंगलैंड। ये तीनों राज्य सन् 1603 से राजा के अधीन संगठित हैं। 1920 में आयरलैंड को दो भागों में विभाजित किया गया। प्रथम, उत्तरी आयरलैंड एवं दूसरा आयरिश स्वतंत्र गणराज्य। उत्तरी आयरलैंड की अपनी पृथक् संसद है परन्तु रक्षा, विदेश नीति व अन्य मामलों में यह ब्रिटेन से जुड़ा है। आजकल उत्तरी आयरलैंड को पृथक्, पूर्ण सत्ता युक्त स्वतंत्र गणराज्य बनाने के लिए योजनाबद्ध आन्दोलन चल रहा है। 'यूनाइटेड किंगडम' शब्द से तात्पर्य है ग्रेट ब्रिटेन एवं आयरिश गणराज्य का संगठन। ग्रेट ब्रिटेन के विभिन्न भागीदार राज्यों का क्षेत्रफल निम्न प्रकार है—

इंगलैंड	50,331 वर्ग मील[1]
वेल्स	8,016 ,,
स्कॉटलैंड	30,405 ,,

1. The Statesman,s Year Book 197 '-73 p. 08, 126.

मैन द्वीप 221 "
चैनल द्वीप समूह .75 "
उत्तरी आयरलैंड 5,462 "

ब्रिटेन के चारों ही भागीदार राज्य अपनी संस्कृति, ऐतिहासिकता, जातीय लक्षण एवं भाषा की दृष्टि से भिन्नता युक्त हैं परन्तु सदियों से साथ रहने एवं राज्यनैतिक दृष्टि से एक सूत्र में गुँथे होने के कारण इनका इतना अधिक मिश्रण हो गया है कि कहीं भी एक ऐसी विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती जिसके दोनों ओर पृथक संस्कृतियां स्पष्टतः नजर आएँ। इस प्रकार इस छोटे से भूखण्ड में चार जातीय एवं सांस्कृतिक तत्त्व (वेल्स, स्कॉटिश, इंगलिश, आयरिश) तीन सरकारें (इंगलैंड, स्कॉटलैंड एवं आयरलैंड) तथा दो राज्य (ग्रेट ब्रिटेन एवं आयरलैंड) स्थित हैं। ब्रिटेन के इन छोटे-छोटे भागीदारों के पारस्परिक सम्बन्ध इतने गहन एवं जटिल हैं कि उन्हें पूर्व-इतिहास तथा सूक्ष्म ज्ञान के बगैर समझना बड़ा मुश्किल है।

ब्रिटिश द्वीप समूह का अक्षांशीय-देशांतरीय विस्तार कुछ इस प्रकार का है कि लगभग एक वर्गाकार आकृति बन जाती है। ये द्वीप समूह पूर्व में 1° पूर्वी देशांतर से लेकर पश्चिम में 10° पश्चिमी देशांतर एवं 50° उत्तरी अक्षांस से लेकर 60° उत्तरी अक्षांश तक फैले है। यूनानी समय तक ब्रिटेन के ये भू-भाग दुनियां के पश्चिमी सिरे पर माने जाते थे। यह सच है कि यूनानी दार्शनिक इस मत से सहमत थे कि पृथ्वी गोलाकार है परन्तु उस समय तक जितना भू-भाग ज्ञात था उसमें ब्रिटिश द्वीप एक सिरे पर स्थित थे। टॉलमी ने दुनियां का जो मानचित्र बनाया उसमें इन द्वीपों को धुर उत्तर-पश्चिम में अंकित किया गया है। 1492 ई० में जब अमेरिका की खोज हुई तो ब्रिटेन की स्थिति एक दम बदल गयी। अब यह नवीन तथा प्राचीन दुनियां के लगभग मध्य में हो गया। यह एक सार्वभौम सत्य है कि ब्रिटेन की स्थिती थलीय-गोलार्द्ध के ठीक मध्य में है। अमेरिका के भौतिक विकास एवं अटलांटिक महासागर की व्यस्तता ने इसका महत्व और भी अधिक बढ़ा दिया।

ब्रिटेन का अध्ययन चाहे किसी दृष्टि से किया जाए; एक विचार मस्तिष्क में सदा रहता है कि कुछ दशक पूर्व तक यह दुनियां के सबसे बड़े साम्राज्य का सिरमौर था, एक ऐसा साम्राज्य जिसमें दुनियां का एक तिहाई शामिल था। आज के बड़े-बड़े देश—सं० रा० अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूलैंड, भारत, लंका, दक्षिणी अफ्रीका, पाकिस्तान तथा अफ्रीका एवं एशिया के अनेक देश इस ताज के अधीन थे। ब्रिटिश साम्राज्य में कभी सूरज नहीं छिपता था। न केवल राजनैतिक वरन् सैनिक, शैक्षणिक, वैज्ञानिक तथा सामाजिक सभी दृष्टियों से ब्रिटेन ने दो शताब्दियों की

अवधि तक विश्व का नेतृत्व किया। औद्योगिक क्रान्ति का श्रीगणेश यहीं हुआ। दुनिया की अनेक वैज्ञानिक खोजें इसी भूमि पर हुईं। अतः जब ब्रिटेन का भौगोलिक अध्ययन करते हैं तो वस्तुतः उन तत्वों, उन कारणों या परिस्थितियों में झांकने का प्रयास करते हैं जिनके आधार पर छोटा सा भू-खंड, जरा सी मानवता एवं नगण्य प्राकृतिक साधन लेकर यह देश विश्व की एक महान् शक्ति बन सका।

क्या भौगोलिक परिस्थितियां ही इस सारे विकास की पृष्ठभूमि में आधार-भूत स्थिति लिए हैं? नहीं। उनसे अधिक महत्व मानवता को दिया जाना चाहिए, उन परिश्रमी और चतुर नागरिकों को दिया जाना चाहिए जिन्होंने अपने अथक परिश्रम से न केवल अपने देश को संवारा वरन् दुनिया के कोने-कोने में बिखर कर अपनी संस्कृति का सन्देश पहुँचाया। दुनिया के हर भाग में व्यापार की सम्भावनाओं को उन्होंने दूरदर्शिता से देखा, शोषण किया और आखिरकार वहीं के शासक बन बैठे। यही कारण है कि अंग्रेजी आज विश्व की सम्पर्क भाषा है। ब्रिटेन निवासियों का राष्ट्रीय चरित्र और परम्पराएं विश्व के लिए अनुकरण की वस्तु हैं। ब्रिटेन में आम तौर पर अंग्रेजी बोली जाती है पर स्थानीय रूप से तीनों प्राचीन भाषाएं भी प्रयोग में आती हैं। यथा, वेल्स में वेल्स, स्कॉटलैंड में गैलिक तथा आयरलैंड में आयरिश-गैलिक बोली जाती है। मैन द्वीप में गैलाक्ट मॉक्स प्रयोग में आती है।

करते हुए भी यह तथ्य अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि अंग्रेजों से उनके उपनिवेशों के नागरिकों ने बहुत कुछ सीखा।

इससे पूर्व ब्रिटेन के विविध भौगोलिक पहलुओं का अध्ययन किया जाए यह वांछनीय होगा कि उन तत्वों पर एक सरसरी नजर डाली जाए जो यहाँ के विकास में आधार रूप में रहे हैं।

1. द्वीपीय स्थिति—ब्रिटिश द्वीप समूह यूरोप महाद्वीप के उत्तर-पश्चिम में द्वीपीय स्थिति लिए हुए है जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में यहाँ के विकास पर भारी प्रभाव पड़ा है। द्वीपीय स्थिति के लाभों को निम्न पंक्तियों में समझा जा सकता है।

(क) यह द्वीपीय स्थिति का ही परिणाम था कि ब्रिटेन निवासी कुशल नाविक बने। यहाँ की नौसेना एवं व्यापारिक जहाजी बेड़ा दुनियाँ के अच्छे बेड़ों में से माना जाता है।

(ख) इस स्थिति के फलस्वरूप समुद्र ब्रिटेन निवासियों का क्रीड़ांगण बना, मानवीय और समुद्री संस्कृतियों का यह सुखद परिणाम हुआ कि ब्रिटेन निवासी दुनियाँ भर के देशों में व्यापार करने गए और अन्त में उन्होंने भारी साम्राज्य स्थापित किया।

(ग) इंगलैण्ड चैनल द्वारा पृथक् होने के कारण अन्य यूरोपियन देशों की तरह सीमा विवादों में न पड़कर ब्रिटेन अपनी निजी विशेषताओं को प्रोत्साहित कर अपने विकास में रत रहा।

(घ) अपनी स्थिति, विस्तार एवं आकृति के कारण ही ब्रिटेन को फ्रांस व जर्मनी की तरह एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की जरूरत न हुई। फलतः यहाँ प्रजातन्त्रीय प्रणाली एवं प्रतिनिधि सरकार का विकास सम्भव हुआ।

(ङ) ब्रिटिश द्वीप समूह दुनियाँ के मध्य में स्थित है। अमेरिका की खोज व अटलांटिक महासागर की व्यापारिक व्यस्तता का सबसे ज्यादा लाभ ब्रिटेन को ही मिला। अटलांटिक महासागर की ओर से एक तरह से यह यूरोप महाद्वीप का द्वार हो गया। यह पुरानी एवं नई दुनियाँ के बीच एक कड़ी का रूप लिए है। अमेरिका, लैटन अमेरिका व आस्ट्रेलिया आदि देशों से व्यापारिक सम्बन्धों की दृष्टि से यूरोप में ब्रिटेन ही सर्वाधिक अच्छी भौगोलिक स्थिति में है।

2. मिश्रित संस्कृति—ब्रिटेन एक तरह से रोमन एवं जर्मन संस्कृतियों के मिलान स्थल पर विद्यमान है जिसका उसे अप्रत्यक्ष रूप में भारी लाभ मिला है।

अवधि तक विश्व का नेतृत्व किया। औद्योगिक क्रान्ति का श्रीगणेश यहीं हुआ। दुनियां की अनेक वैज्ञानिक खोजें इसी भूमि पर हुई। अतः जब ब्रिटेन का भौगोलिक अध्ययन करते हैं तो वस्तुतः उन तत्वों, उन कारणों या परिस्थितियों में झांकने का प्रयास करते हैं जिनके आधार पर छोटा सा भू-खंड, जरा सी मानवता एवं नगण्य प्राकृतिक साधन लेकर यह देश विश्व की एक महान् शक्ति बन सका।

क्या भौगोलिक परिस्थितियां ही इस सारे विकास की पृष्ठभूमि में आधारभूत स्थिति लिए हैं? नहीं। उनसे अधिक महत्व मानवता को दिया जाना चाहिए, उन परिश्रमी और चतुर नागरिकों को दिया जाना चाहिए जिन्होंने अपने अथक परिश्रम से न केवल अपने देश को संवारा वरन् दुनियां के कोने-कोने में बिखर कर अपनी संस्कृति का सन्देश पहुंचाया। दुनियां के हर भाग में व्यापार की सम्भावनाओं को उन्होंने दूरदर्शिता से देखा, शोषण किया और आखिरकार वहाँ के शासक बन बैठे। यही कारण है कि अंग्रेजी आज विश्व की सम्पर्क भाषा है। ब्रिटेन निवासियों का राष्ट्रीय चरित्र और परम्पराएं विश्व के लिए अनुकरण की वस्तु हैं। ब्रिटेन में आम तौर पर अंग्रेजी बोली जाती है पर स्थानीय रूप से तीनों प्राचीन भाषाएँ भी प्रयोग में आती हैं। यथा, वेल्स में वेल्स, स्कॉटलैंड में गैलिक तथा आयरलैंड में आयरिश-गैलिक बोली जाती है। मैन द्वीप में गैलाक्ट मॉक्स प्रयोग में आती है।

ब्रिटेन में राज्यतंत्र एवं प्रजातंत्र का अद्वितीय एवं अनुपम समन्वय है। ऐसा सुन्दर समन्वय सम्भवतः दुनियां के किसी भी भाग में नहीं है। जब हम यहाँ का बहु प्रचलित नारा "राजा मर गया, राजा चिरायु हो" सुनते हैं तो आश्चर्य होता है। यह क्या कम आश्चर्यजनक है कि दुनियां सबसे प्राचीन प्रजातंत्रीय व्यवस्था में राजा का पद आज भी गौरवशाली है। निस्संदेह राजा का पद नाम मात्र का है फिर भी एक ब्रिटिश नागरिक को उसमें इतना आकर्षण होता है कि वह राजा के दर्शन के लिए सदा लालायित रहता है। कार्यपालिका दोनों के लिए संसद उत्तरदायी है। थेम्स नदी के किनारे वैस्ट मिनिस्टर में स्थित यह संसद इंगलैण्ड तथा वेल्स पर तो सीधे शासन करती है। स्कॉटलैंड एवं उत्तरी आयरलैंड अपने भीतरी मामलों के लिए स्वतंत्र हैं।

आज ब्रिटेन की स्थिति एक बूढ़े शेर जैसी है जिसकी शक्ति का ह्रास हो चुका है। आर्थिक, सैनिक, राजनैतिक सभी दृष्टियों से ब्रिटेन भीतर से खोखला हो गया है। प्रधान कारण, स्वाभाविक रूप से, उपनिवेशों का हाथ से निकल जाना है। एशिया तथा अफ्रीका के ज्यादातर देश स्वतंत्र हो चुके हैं और ब्रिटेन के साथ अपने अतीत के सम्बन्धों को मधुर बनाए रखने की दृष्टि से राष्ट्र मंडल के सदस्य हैं। निस्संदेह उपनिवेशवाद की भारी बुराइयां होती हैं लेकिन इन सबको स्वीकार

करते हुए भी यह तथ्य अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि अंग्रेजों से उनके उपनिवेशों के नागरिकों ने बहुत कुछ सीखा।

इससे पूर्व ब्रिटेन के विविध भौगोलिक पहलुओं का अध्ययन किया जाए यह वांछनीय होगा कि उन तत्वों पर एक सरसरी नज़र डाली जाए जो यहाँ के विकास में आधार रूप में रहे हैं।

1. द्वीपीय स्थिति—ब्रिटिश द्वीप समूह यूरोप महाद्वीप के उत्तर-पश्चिम में द्वीपीय स्थिति लिए हुए है जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में यहाँ के विकास पर भारी प्रभाव पड़ा है। द्वीपीय स्थिति के लाभों को निम्न पंक्तियों में समझा जा सकता है।

(क) यह द्वीपीय स्थिति का ही परिणाम था कि ब्रिटेन निवासी कुशल नाविक बने। यहाँ की नौसेना एवं व्यापारिक जहाजी बेड़ा दुनियाँ के अच्छे बेड़ों में से माना जाता है।

(ख) इस स्थिति के फलस्वरूप समुद्र ब्रिटेन निवासियों का क्रीड़ांगण बना, मानवीय और समुद्री संस्कृतियों का यह सुखद परिणाम हुआ कि ब्रिटेन निवासी दुनियाँ भर के देशों में व्यापार करने गए और अन्त में उन्होंने भारी साम्राज्य स्थापित किया।

(ग) इंगलैण्ड चैनल द्वारा पृथक् होने के कारण अन्य यूरोपियन देशों की तरह सीमा विवादों में न पड़कर ब्रिटेन अपनी निजी विशेषताओं को प्रोत्साहित कर अपने विकास में रत रहा।

(घ) अपनी स्थिति, विस्तार एवं आकृति के कारण ही ब्रिटेन को फ्रांस व जर्मनी की तरह एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार की जरूरत न हुई। फलतः यहाँ प्रजातन्त्रीय प्रणाली एवं प्रतिनिधि सरकार का विकास सम्भव हुआ।

(ङ) ब्रिटिश द्वीप समूह दुनियाँ के मध्य में स्थित है। अमेरिका की खोज व अटलांटिक महासागर की व्यापारिक व्यस्तता का सबसे ज्यादा लाभ ब्रिटेन को ही मिला। अटलांटिक महासागर की ओर से एक तरह से यह यूरोप महाद्वीप का द्वार हो गया। यह पुरानी एवं नई दुनियाँ के बीच एक कड़ी का रूप लिए है। अमेरिका, लैटन अमेरिका व आस्ट्रेलिया आदि देशों से व्यापारिक सम्बन्धों की दृष्टि से यूरोप में ब्रिटेन ही सर्वाधिक अच्छी भौगोलिक स्थिति में है।

2. मिश्रित संस्कृति—ब्रिटेन एक तरह से रोमन एवं जर्मन संस्कृतियों के मिलान स्थल पर विद्यमान है जिसका उसे अप्रत्यक्ष रूप में भारी लाभ मिला है।

यहाँ की संस्कृति दोनों के मिश्रण का परिणाम है जिसमें दोनों के अच्छे-अच्छे गुणों का समावेश है। इस मिश्रण का सर्वोत्तम उदाहरण यहाँ की भाषा में मिलता है। अंग्रेजी भाषा जर्मनी की ट्यूटानिक एवं लैटिन दोनों के मिश्रण से बनी है और दोनों ही मूल भाषाओं का आशय अंग्रेजी से समझा जा सकता है। भाषा ही नहीं रीति-रिवाज, साहित्य, कानून, संस्कृति सभी में यहाँ संशोधित मिश्रित रूप मिलता है।

इस स्थिति का ही परिणाम था कि यहाँ विभिन्न संस्कृतियों के लोग आए वे साथ अपने मूल देशों की संस्कृति व गुण लाए और इस मिश्रण के कारण जिस मिली जुली संस्कृति का विकास हुआ उसके फलस्वरूप ब्रिटेन इस उन्नत स्थिति तक पहुँच सका। 1000 ईसा पूर्व तक ये द्वीप प्रायः निर्जन थे। ठंड, नमी, जंगल, पीट, बॉग्स आदि मानव बसाव में बड़ी बाधा प्रस्तुत करते थे। वर्तमान जनसंख्या उन लोगों की वंशज है जो अपनी महत्वाकांक्षा, साहस, परिश्रम तथा प्रतिकूल वातावरण को अनुकूल बनाने की क्षमता लेकर यहाँ आए थे। निस्संदेह, वे लोग मानसिक तथा शारीरिक दृष्टि से अपने-अपने जातीय समूह के श्रेष्ठ लोगों में से थे। यथा केल्टस, सैक्सोन, एंजिल्स, डेन्स तथा नोर्मन्स आदि लोगों को यहाँ बसने में पर्याप्त परिश्रम करना पड़ा।[2] फलतः उनकी सन्तानों को ये सब गुण पैत्रिक अधिकार में मिले और उनका बौद्धिक तथा श्रमस्तर अपेक्षाकृत ऊँचा रहा।

यही नहीं 18वीं शताब्दी एवं 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भी विभिन्न देशों के अनेक गुणी व्यक्ति जैसे वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ आदि जिन्हें किन्हीं कारणों से अपना देश छोड़ना पड़ा यहाँ आए। इस प्रकार ब्रिटेन में सदा से श्रेष्ठ मानवता का आयात होता रहा। यह लिखना भी अप्रासंगिक न होगा कि महान् विचारक तथा आधुनिक साम्यवाद के जनक कार्ल मार्क्स ने अपनी बहु चर्चित पुस्तक कैपीटल का पर्याप्त भाग इंगलैण्ड में रहकर ही पूरा किया था।

3. कटी फटी तट रेखा—ब्रिटिश द्वीप समूह महाद्वीपीय जल-मग्न चबूतरे पर स्थित उसके आस-पास कहीं भी समुद्र की गहराई 100 फैदम से ज्यादा नहीं है। वस्तुतः वर्तमान के ब्रिटिश द्वीप समूह कभी यूरोप महाद्वीप के थलीय विस्तार भाग ही थे। कालांतर में हिमयुग में धँसाव के फलस्वरूप नीचे भागों के दबने एवं समुद्र तल ऊँचा उठने के कारण नीचे भाग इंगलिश चैनल के रूप में दब गए और इन द्वीपों का आविर्भाव हुआ। यही कारण है कि ब्रिटेन की तट रेखा अत्यधिक कटी-फटी है। समुद्र के उथले होने तथा कटी फटी तट रेखा के निम्न परिणाम है—

---

2. Gottmann. J—A Geography of Europe. Fourth edition—p. 206

(क) प्राकृतिक बन्दरगाह पर्याप्त हैं। अनेक पोताश्रय हैं। इनसे एक ओर जहां जलयान निर्माण उद्योग को प्रोत्साहन मिला दूसरी ओर कुशल नाविकों का अभाव न रहा। बचपन से ही समुद्री अभियान क्रीड़ा रूप में लिए जाते हैं। यही कारण है कि ब्रिटेन का जहाजी बेड़ा सदा से मजबूत रहा।

(ख) निकटवर्ती समुद्र के उथले होने से ज्वार-तरंग पर्याप्त शक्तिशाली हैं। फलतः नदियाँ एस्चुरीज बनाती हुई हैं जो जल यातायात के लिए एक लाभदायक स्थिति हैं। डेलटाओं का विकास नहीं हो पाया है। रेत को निरन्तर हटाने की समस्या कभी नहीं आती।

4. उत्साहवर्द्धक जलवायु—एक कहावत चल पड़ी है कि कोई भी व्यक्ति लन्दन में केवल 24 घन्टे में सब प्रकार के मौसम महसूस कर सकता है। तात्पर्य यह है कि वहां मौसम इतने जल्दी-जल्दी परिवर्तित होते हैं कि ऊबा देने वाली एकरूपता नहीं रहती। यहां की जलवायु शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के विकास के लिए श्रेष्ठ मानी जाती है। कम सर्द जाड़े, हल्की गर्मियां, साल भर समान वितरित वर्षा एवं मौसम की एक रूपता को भंग करके स्फूर्ति का संचार, करने वाले चक्रावत यहां की जलवायु के प्रधान लक्षण हैं। भूगोल वेत्ता एलसवर्थ हटिंगटन ने पश्चिमी यूरोप की जलवायु को मानव विकास के लिए श्रेष्ठ बतलाया है। यहां की जलवायु के बारे में कहा जाता है कि वनस्पति से भी ज्यादा इस प्रदेश की जलवायु मानवीय कुशलता पर अनुकूल प्रभाव डालती है। सर्दियों में 40° फं० एवं गर्मियों में 60° फं० तापक्रम रहते हैं। ब्रिटेन की जलवायु भी इसी प्रकार की है। यही वजह है कि यहां का औसत व्यक्ति भी परिश्रमी और साहसी है।

जलवायु का मानवीय दृष्टि से विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि ब्रिटेन की गर्मियां शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक कार्यों के लिए उत्तम हैं। प्रायः सभी मौसमों में रहने वाली आर्द्रता चमड़ी के लिए उपयुक्त है। साथ ही गर्मी की भीषणता को भी कम करती है। ब्रिटेन के जाड़े मानसिक कार्यों के लिए श्रेष्ठ हैं। निरन्तर चलने वाले चक्रवात लोगों को आलस्य से मुक्त रखते हैं।

ब्रिटेन की तुलना इस दृष्टि से जापान से की जा सकती है। वहां की सामुद्रिक जलवायु में भी ठीक इसी प्रकार के लक्षण हैं। यही कारण है कि जापान निवासी भी अत्यन्त परिश्रमी होते हैं।

5. गर्म जल धारा—ब्रिटेन 50–60 उत्तरी अक्षांसों में स्थित है। इस अक्षांसीय स्थिति में स्वाभाविक रूप से भीषण ठंड होनी चाहिए सर्दियों में बन्दरगाह जम जाने चाहिए परन्तु उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट गर्म धारा के कारण न केवल बन्दरगाह ही खुले रहते हैं बल्कि मौसम भी उतना कठोर नहीं होता।

यहाँ की संस्कृति दोनों के मिश्रण का परिणाम है जिस गुणों का समावेश है। इस मिश्रण का सर्वोत्तम उदाहरण यह है। अंग्रेजी भाषा जर्मनी की ट्यूटानिक एवं लैटिन दोनों और दोनों ही मूल भाषाओं का आशय अंग्रेजी से समझा जा स नहीं रीति-रिवाज, साहित्य, कानून, संस्कृति सभी में यहाँ मिलता है।

इस स्थिति का ही परिणाम था कि यहाँ विभिन्न संस्कृति के साथ अपने मूल देशों की संस्कृति व गुण लाए और इस मिश्र मिली जुली संस्कृति का विकास हुआ उसके फलस्वरूप ब्रिटेन तक पहुँच सका। 1000 ईसा पूर्व तक ये द्वीप प्रायः निर्जन थे। ट पीट, बॉग्स आदि मानव बसाव में बड़ी बाधा प्रस्तुत करते थे। व उन लोगों की वंशज है जो अपनी महत्वाकांक्षा, साहस, परिश्रम तथ वरण को अनुकूल बनाने की क्षमता लेकर यहाँ आए थे। निस्संदेह सिक तथा शारीरिक दृष्टि से अपने-अपने जातीय समूह के श्रेष्ठ यथा केल्टस, सैक्सोन, एंजिल्स, डेन्स तथा नोर्मन्स आदि लोग में पर्याप्त परिश्रम करना पड़ा।[2] फलतः उनकी सन्तानों को ये स अधिकार में मिले और उनका बौद्धिक तथा श्रमस्तर अपेक्षाकृत ऊँच

यही नहीं 18वीं शताब्दी एवं 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध देशों के अनेक गुणी व्यक्ति जैसे वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ आदि जिन्हें से अपना देश छोड़ना पड़ा यहाँ आए। इस प्रकार ब्रिटेन में सदा से का आयात होता रहा। यह लिखना भी अप्रसांगिक न होगा कि म तथा आधुनिक साम्यवाद के जनक कार्ल मार्क्स ने अपनी बहु चर्चित पु का पर्याप्त भाग इंगलैण्ड में रहकर ही पूरा किया था।

3. कटी फटी तट रेखा—ब्रिटिश द्वीप समूह महाद्वीपीय जल पर स्थित उसके आस-पास कहीं भी समुद्र की गहराई 100 फैदम नहीं है। वस्तुतः वर्तमान के ब्रिटिश द्वीप समूह कभी यूरोप महाद्वी विस्तार भाग ही थे। कालांतर में हिमयुग में धँसाव के फलस्वरूप नीचे दबने एवं समुद्र तल ऊँचा उठने के कारण नीचे भाग इंगलिश चैन दब गए और इन द्वीपों का आविर्भाव हुआ। यही कारण है कि ब्रिटे रेखा अत्यधिक कटी-फटी है। समुद्र के उथले होने तथा कटी फटी निम्न परिणाम हैं—

---

2. Gottmann. J—A Geography of Europe. Fourth edition—p. 206

(क) प्राकृतिक बन्दरगाह पर्याप्त हैं। अनेक पोताश्रय हैं। इनसे एक ओर जहाँ जलयान निर्माण उद्योग को प्रोत्साहन मिला दूसरी ओर कुशल नाविकों का अभाव न रहा। बचपन से ही समुद्री अभियान क्रीड़ा रूप में लिए जाते हैं। यही कारण है कि ब्रिटेन का जहाजी बेड़ा सदा से मजबूत रहा।

(ख) निकटवर्ती समुद्र के उथले होने से ज्वार-तरंग पर्याप्त शक्तिशाली हैं। फलतः नदियाँ एस्चुरीज बनाती हुई हैं जो जल यातायात के लिए एक लाभदायक स्थिति है। डेलटाओं का विकास नहीं हो पाया है। रेत को निरन्तर हटाने की समस्या कभी नहीं आती।

4. उत्साहवर्द्धक जलवायु—एक कहावत चल पड़ी है कि कोई भी व्यक्ति लन्दन में केवल 24 घन्टे में सब प्रकार के मौसम महसूस कर सकता है। तात्पर्य यह है कि वहाँ मौसम इतने जल्दी-जल्दी परिवर्तित होते हैं कि ऊबा देने वाली एकरूपता नहीं रहती। यहाँ की जलवायु शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के विकास के लिए श्रेष्ठ मानी जाती है। कम सर्द जाड़े, हल्की गर्मियाँ, साल भर समान वितरित वर्षा एवं मौसम की एक रूपता को भंग करके स्फूर्ति का संचार, करने वाले चक्रावत यहाँ की जलवायु के प्रधान लक्षण हैं। भूगोल वेत्ता एल्सवर्थ हंटिंगटन ने पश्चिमी यूरोप की जलवायु को मानव विकास के लिए श्रेष्ठ बतलाया है। यहाँ की जलवायु के बारे में कहा जाता है कि वनस्पति से भी ज्यादा इस प्रदेश को जलवायु मानवीय कुशलता पर अनुकूल प्रभाव डालती है। सर्दियों मे 40° फ़ै० एवं गर्मियों में 60° फ़ै० तापक्रम रहते हैं। ब्रिटेन की जलवायु भी इसी प्रकार की है। यही वजह है कि यहाँ का औसत व्यक्ति भी परिश्रमी और साहसी है।

जलवायु का मानवीय दृष्टि से विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि ब्रिटेन की गर्मियाँ शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक कार्यों के लिए उत्तम है। प्रायः सभी मौसमों में रहने वाली आर्द्रता चमड़ी के लिए उपयुक्त है। साथ ही गर्मी की भीषणता को भी कम करती है। ब्रिटेन के जाड़े मानसिक कार्यों के लिए श्रेष्ठ हैं। निरन्तर चलने वाले चक्रवात लोगों को आलस्य से मुक्त रखते हैं।

ब्रिटेन की तुलना इस दृष्टि से जापान से की जा सकती है। वहाँ की सामुद्रिक जलवायु में भी ठीक इसी प्रकार के लक्षण हैं। यही कारण है कि जापान निवासी भी अत्यन्त परिश्रमी होते हैं।

5. गर्म जल धारा—ब्रिटेन 50–60 उत्तरी अक्षांशों में स्थित है। इस अक्षांशीय स्थिति में स्वाभाविक रूप से भीषण ठंड होनी चाहिए सर्दियों में बन्दरगाह जम जाने चाहिए परन्तु उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट गर्म धारा के कारण न केवल बन्दरगाह ही खुले रहते हैं बल्कि मौसम भी उतना कठोर नहीं होता।

यहाँ की संस्कृति दोनों के मिश्रण का परिणाम है जिसमें दोनों के अच्छे-अच्छे गुणों का समावेश है। इस मिश्रण का सर्वोत्तम उदाहरण यहाँ की भाषा में मिलता है। अंग्रेजी भाषा जर्मनी की ट्यूटानिक एवं लैटिन दोनों के मिश्रण से बनी है और दोनों ही मूल भाषाओं का आशय अंग्रेजी से समझा जा सकता है। भाषा ही नहीं रीति-रिवाज, साहित्य, कानून, संस्कृति सभी में यहाँ संशोधित मिश्रित रूप मिलता है।

इस स्थिति का ही परिणाम था कि यहाँ विभिन्न संस्कृतियों के लोग आए वे साथ अपने मूल देशों की संस्कृति व गुण लाए और इस मिश्रण के कारण जिस मिली जुली संस्कृति का विकास हुआ उसके फलस्वरूप ब्रिटेन इस उन्नत स्थिति तक पहुँच सका। 1000 ईसा पूर्व तक ये द्वीप प्रायः निर्जन थे। ठंड, नमी, जंगल, पीट, बॉग्स आदि मानव बसाव में बड़ी बाधा प्रस्तुत करते थे। वर्तमान जनसख्या उन लोगों की वंशज है जो अपनी महत्वाकांक्षा, साहस, परिश्रम तथा प्रतिकूल वातावरण को अनुकूल बनाने की क्षमता लेकर यहाँ आए थे। निस्संदेह, वे लोग मानसिक तथा शारीरिक दृष्टि से अपने-अपने जातीय समूह के श्रेष्ठ लोगों में से थे। यथा केल्टस, सैक्सोन, एंजिल्स, डैन्स तथा नोर्मन्स आदि लोगों को यहाँ बसने में पर्याप्त परिश्रम करना पड़ा।[2] फलतः उनकी सन्तानों को ये सब गुण पैत्रिक अधिकार में मिले और उनका बौद्धिक तथा श्रमस्तर अपेक्षाकृत ऊँचा रहा।

यही नहीं 18वीं शताब्दी एवं 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भी विभिन्न देशों के अनेक गुणी व्यक्ति जैसे वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ आदि जिन्हें किन्हीं कारणों से अपना देश छोड़ना पड़ा यहाँ आए। इस प्रकार ब्रिटेन में सदा से श्रेष्ठ मानवता का आयात होता रहा। यह लिखना भी अप्रसांगिक न होगा कि महान् विचारक तथा आधुनिक साम्यवाद के जनक कार्ल मार्क्स ने अपनी बहु चर्चित पुस्तक 'कैपीटल' का पर्याप्त भाग इंगलैण्ड में रहकर ही पूरा किया था।

3. कटी फटी तट रेखा—ब्रिटिश द्वीप समूह महाद्वीपीय जल-मग्न चबूतरे पर स्थित उसके आस-पास कहीं भी समुद्र की गहराई 100 फैदम से ज्यादा नहीं है। वस्तुतः वर्तमान के ब्रिटिश द्वीप समूह कभी यूरोप महाद्वीप के थलीय विस्तार भाग ही थे। कालांतर में हिमयुग में धँसाव के फलस्वरूप नीचे भागों के दबने एवं समुद्र तल ऊँचा उठने के कारण नीचे भाग इंगलिश चैनल के रूप में दब गए और इन द्वीपों का आविर्भाव हुआ। यही कारण है कि ब्रिटेन की तट रेखा अत्यधिक कटी-फटी है। समुद्र के उथले होने तथा कटी फटी तट रेखा के निम्न परिणाम है—

---

2. Gottmann. J—A Geography of Europe. Fourth edition—p. 206

(क) प्राकृतिक-बन्दरगाह पर्याप्त हैं। अनेक पोताश्रय हैं। इनसे एक ओर जहाँ जलयान निर्माण उद्योग को प्रोत्साहन मिला दूसरी ओर कुशल नाविकों का अभाव न रहा। बचपन से ही समुद्री अभियान क्रीड़ा रूप में लिए जाते हैं। यही कारण है कि ब्रिटेन का जहाजी बेड़ा सदा से मजबूत रहा।

(ख) निकटवर्ती समुद्र के उथले होने से ज्वार-तरंग पर्याप्त शक्तिशाली हैं। फलतः नदियाँ एस्चुरीज बनाती हुई हैं जो जल यातायात के लिए एक लाभदायक स्थिति है। डेलटाओं का विकास नहीं हो पाया है। रेत को निरन्तर हटाने की समस्या कभी नहीं आती।

4. उत्साहवर्द्धक जलवायु—एक कहावत चल पड़ी है कि कोई भी व्यक्ति लन्दन में केवल 24 घन्टे में सब प्रकार के मौसम महसूस कर सकता है। तात्पर्य यह है कि वहाँ मौसम इतने जल्दी-जल्दी परिवर्तित होते हैं कि ऊबा देने वाली एकरूपता नहीं रहती। यहाँ की जलवायु शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के विकास के लिए श्रेष्ठ मानी जाती है। कम सर्द जाड़े, हल्की गर्मियाँ, साल भर समान वितरित वर्षा एवं मौसम की एक रूपता को भंग करके स्फूर्ति का संचार, करने वाले चक्रवात यहाँ की जलवायु के प्रधान लक्षण हैं। भूगोल वेत्ता एल्सवर्थ हंटिंगटन ने पश्चिमी यूरोप की जलवायु को मानव विकास के लिए श्रेष्ठ बतलाया है। यहाँ की जलवायु के बारे में कहा जाता है कि वनस्पति से भी ज्यादा इस प्रदेश की जलवायु मानवीय कुशलता पर अनुकूल प्रभाव डालती है। सर्दियों मे 40° फ़ै० एवं गर्मियों में 60° फ़ै० तापक्रम रहते हैं। ब्रिटेन की जलवायु भी इसी प्रकार की है। यही वजह है कि यहाँ का औसत व्यक्ति भी परिश्रमी और साहसी है।

जलवायु का मानवीय दृष्टि से विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि ब्रिटेन की गर्मियाँ शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक कार्यों के लिए उत्तम है। प्रायः सभी मौसमों में रहने वाली आर्द्रता चमड़ी के लिए उपयुक्त है। साथ ही गर्मी की भीषणता को भी कम करती है। ब्रिटेन के जाड़े मानसिक कार्यों के लिए श्रेष्ठ हैं। निरन्तर चलने वाले चक्रवात लोगों को आलस्य से मुक्त रखते हैं।

ब्रिटेन की तुलना इस दृष्टि से जापान से की जा सकती है। वहाँ की सामुद्रिक जलवायु में भी ठीक इसी प्रकार के लक्षण हैं। यही कारण है कि जापान निवासी भी अत्यन्त परिश्रमी होते हैं।

5. गर्म जल धारा—ब्रिटेन 50–60 उत्तरी अक्षांशों में स्थित है। इस अक्षांशीय स्थिति में स्वाभाविक रूप से भीषण ठंड होनी चाहिए सर्दियों में बन्दरगाह जम जाने चाहिए परन्तु उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट गर्म धारा के कारण न केवल बन्दरगाह ही खुले रहते हैं बल्कि मौसम भी उतना कठोर नहीं होता।

6. प्राकृतिक संसाधन ब्रिटेन के आकार-विस्तार को देखते हुए अगर यहाँ के प्राकृतिक साधनों पर दृष्टि डाली जाए तो इसे निर्धन नहीं कहा जाएगा। लोहा कोयला, एवं चूना तीनों आधारभूत वस्तुओं के पास-पास स्थित होने के कारण यहाँ औद्योगिक विकास सम्भव हो सका। सच्चाई तो यह है कि भाप का आविष्कार और उसके साथ औद्योगिक विकास—यही ब्रिटेन के उन्नत होने का मूल आधार रहे हैं। कच्चे मालों को दुनियाँ के विभिन्न भागों से मगाने के लिए-व्यापारिक मिशन गए, इसीलिए उपनिवेश स्थापित किए गए और उन्हीं की सुरक्षा और निरन्तर आयात के लिए जगह-जगह सैनिक अड्डे बनाए गए।

अन्य प्राकृतिक साधनों में यहाँ पानी, मुरधास व जंगल आदि को ही माना जा सकता है। जंगलों ने यहाँ के जलयान निर्माण उद्योग में पर्याप्त सहायता दी है। प्राकृतिक साधनों की दृष्टि से अगर ब्रिटेन की तुलना सोवियत संघ या सं० रा० अमेरिका या भारत से की जाए तो निसंदेह इसे गरीब ही कहा जाएगा। यह एक सर्वविदित सत्य है कि प्राकृतिक साधनों की कमी किसी भी देश के लिए बुरी बात हो सकती है। पर सौभाग्य से, अप्रत्यक्ष रूप में, ब्रिटेन के मामले में यह एक सहायक तत्व के रूप में सिद्ध हुई है। स्पष्ट है कि अगर यह बड़ा देश होता, स्वावलम्बी जीवन के सभी साधन यहाँ उपलब्ध होते तो सम्भव है ब्रिटेन निवासी सात समुद्र पार करके दुनियाँ के अन्य भू-खण्डों में व्यापार एवं बसाव के अवसर की खोज में न रहते, और ब्रिटेन का इतना बड़ा साम्राज्य विकसित होता है।

7. परिश्रमी मानव—किसी भी देश के भौतिक विकास में वहाँ के मानव का भी उतना ही महत्वपूर्ण हाथ होता है जितना प्राकृतिक साधनों का। सच तो यह है कि वातावरण केवल सम्भावनाएँ प्रस्तुत करता है। उन सम्भावनाओं का उचित दृष्टि से उपयोग एवं भौतिक परिणामों का समान-वितरण मानव के ऊपर ही निर्भर होता है। जापान एवं ब्रिटेन छोटे से देश होते हुए भी इतना विकास कर सके उसकी पृष्ठभूमि में वहाँ के नागरिकों का राष्ट्रीय चरित्र, साहस, जिज्ञासा तथा मानसिक स्तर आदि तत्व ही हैं। ब्रिटिश लोगों का राष्ट्रीय चरित्र विश्व में अनुकरणीय है।

प्रोत्साहक तत्वों के साथ-साथ कुछ ऐसे भी पहलू हैं जिनका हतोत्साहक स्वरूप, ब्रिटेन के विकास के सम्बन्ध में, उपेक्षित नहीं किया जा सकता। ये हैं—

(1) कृषि योग्य भूमि का अभाव। सभी प्रकार के कृषि कार्यों के लिए एक-तिहाई से भी कम भूमि सर्वथा अपर्याप्त है।

(2) द्वीपीय स्थिति होने से विस्तार की सम्भावनाएँ भी नहीं हैं।

(3) खनिज व कच्चे मालों की पर्याप्त मात्रा देश में प्राप्त नहीं है।

पहले कोयला था पर अब खानें इतनी गहरी हो गई हैं कि खुदाई आर्थिक नहीं बैठती। लोहे का आयात करना पड़ता है। कृषि सम्बन्धी कच्चे माल जैसे कपास, शक्कर, रबर, आदि सभी आयात करने पड़ते हैं।

(4) दोनों महायुद्धों का भी ब्रिटेन पर भारी प्रभाव पड़ा। प्रथम विश्व युद्ध कई वर्ष चला। परिणाम जब निकला तो स्थिति यह थी कि ब्रिटेन के कई बाजार उसके हाथ से निकल गए। अन्य देशों में औद्योगिक विकास तेजी से हुआ। जापान ने एशिया और अफ्रीका के बाजारों में पैर जमा लिए। विश्व का आर्थिक एवं शक्ति केन्द्र यूरोप से हटकर अमेरिका में हो गया। द्वितीय विश्व युद्ध ने तो ब्रिटेन की हालत इतनी खस्ता कर दी कि वह अपने उपनिवेशों को बनाए रखने में ही अक्षम हो गया। उपनिवेश हाथ से निकल गए। जर्मन बमबारी ने देश के आर्थिक संस्थानों कारखानों, बन्दरगाहों, बड़े-बड़े नगरों को नष्ट कर दिया। युद्धोत्तर दिनों में ब्रिटेन की दशा शोचनीय थी जिसे अमेरिकन सहायता से ही सुधारा जा सका।

ब्रिटेन एवं जापान :

प्रथम विश्व युद्ध के बाद आर्थिक क्षेत्र में जापान बड़ी तेजी से उभर कर आया। चूँकि इन दोनों द्वीपीय देशों की स्थिति प्रायः एक जैसी है। अतः दोनों की तुलना करने लोभ संवरण नहीं हो पाता। इसका एक कारण और भी है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद भले ही ब्रिटेन विजेता और जापान हारे हुए देश के रूप में था। परन्तु आर्थिक दशा दोनों की एक जैसी थी। युद्धोत्तर दिनों में दोनों देशों ने सुधार के लिए घोर परिश्रम किया। ब्रिटेन अपनी युद्ध पूर्व स्थिति पर 1955 तक आ गया। लेकिन जितनी तीव्र गति से जापान ने विकास किया उसके सामने ब्रिटेन का आर्थिक विकास बौना सा ही लगता है। ब्रिटेन के जिन उपनिवेशों से कच्चा माल आता था वे स्वयं अपने औद्योगिक विकास में लग गए अतः ब्रिटेन को अपनी आर्थिक नीतियों में भारी परिवर्तन करना पड़ा और आज भी कर रहा है। यथा, लंकाशायर क्षेत्र में वस्त्रोद्योग का स्थान अब मशीनरी निर्माण कार्यक्रम लेते जा रहे हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व जापान को 'पूर्व का ब्रिटेन' कहा जाता था। वास्तव में आज की स्थिति में यह कहावत उपयुक्त नहीं है। आर्थिक क्षेत्र में जापान ब्रिटेन से कहीं आगे निकल गया है। यह कहावत युद्ध पूर्व के दिनों में तो ठीक थी जबकि दोनों देशों के विशाल साम्राज्य थे। आज ब्रिटेन की स्थिति एक

बूढ़े शेर जैसी है और वह भी उनके अतीत की महानताओं के आधार पर है, जबकि जापान आज अपने इतिहास मे सर्वाधिक समृद्ध है। वे दिन लद गए जबकि जापान की तुलना ब्रिटेन से की जाती थी आज स्थिति तो यह है कि ब्रिटेन को अपने को 'पश्चिम का जापान' बनाने का प्रयत्न करना पड़ेगा, और ये प्रयत्न उन समान भौगोलिक परिस्थितियों के कारण सम्भव हैं जो दोनों देशों में विद्यमान हैं। ये निम्न हैं—

(1) दोनों ही शीतोष्ण कटिबन्ध में द्वीपीय स्थिति लिए हुए हैं।

(2) दोनों के ही प्राकृतिक साधन सीमित हैं।

(3) द्वीपीय स्थिति होने के कारण भू-विस्तार की समस्या दोनों के सामने है। वस्तुतः इसी कारण ही दोनों की ही रुचि सदा से बाह्य दुनियाँ में रही है और दोनों को अपना व्यापार एक व्यापारिक जहाजी बेड़ा मजबूत करना पड़ा है।

(4) दोनों देशों में कृषि योग्य समतल भूमि का अभाव है। अतः खाद्यान्न के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है और इसीलिए दोनों ने उद्योगों को अपने आर्थिक ढाँचे का प्रमुख आधार बनाया है।

(5) दोनों को ही अपने उद्योगों के लिए अधिकतर कच्चे माल विदेशों से आयात करने पड़ते है।

(6) दोनों ही अपने उत्पादनों की खपत के लिए विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में 'बाजार' ढूँढ़ने के मामले में निरन्तर जागरूक रहते हैं। अगर यह कहा जाय की यह विचार धारा उनकी विदेश नीति के आधार बनाती है तो अतिशयोक्ति न होगी। पाक-बंगला विवाद में ब्रिटेन का भारत व बंगला देश का पक्ष लेना या जापान का चीन से राजनैतिक-सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ाने का प्रयत्न करना अकारण नहीं है।

(7) ब्रिटेन एवं जापान दोनों के तट पर्याप्त कटे-फटे हैं, प्राकृतिक बन्दरगाह एवं पोताश्रयों की प्रचुरता है। इन परिस्थितियों ने दोनों देशों के निवासियों को सामूहिक-संस्कृति से प्रगाढ़-परिचय करने को प्रोत्साहित किया है। फलतः वे कुशल नाविक बने तथा दुनियाँ के प्रत्येक भाग में व्यापारिक अवसर देखने गए। जिसका न केवल आर्थिक वरन् राजनैतिक एवं कूटनैतिक लाभ भी मिला।

(8) दोनों ही देशों के पास होकर गर्म जलधाराएँ बहती हैं जो न केवल सम-अक्षांसीय भू-भागो की तुलना में इनकी सर्दियों को सुहावना बनाती है वरन् बन्दरगाहों को साल भर तक खुला रखती हैं।

बूढ़े शेर जैसी है और वह भी उनके अतीत की महानताओं के आधार पर है, जबकि जापान आज अपने इतिहास मे सर्वाधिक समृद्ध है। वे दिन लद गए जबकि जापान की तुलना ब्रिटेन से की जाती थी आज स्थिति तो यह है कि ब्रिटेन को अपने को 'पश्चिम का जापान' बनाने का प्रयत्न करना पड़ेगा, और ये प्रयत्न उन समान भौगोलिक परिस्थितियों के कारण सम्भव हैं जो दोनों देशों में विद्यमान है। ये निम्न हैं—

(1) दोनों ही शीतोष्ण कटिबन्ध में द्वीपीय स्थिति लिए हुए हैं।

(2) दोनों के ही प्राकृतिक साधन सीमित हैं।

(3) द्वीपीय स्थिति होने के कारण भू-विस्तार की समस्या दोनों के सामने है। वस्तुतः इसी कारण ही दोनों की ही रुचि सदा से बाह्य दुनियाँ में रही है और दोनों को अपना व्यापार एवं व्यापारिक जहाजी बेड़ा मजबूत करना पड़ा है।

(4) दोनों देशों में कृषि योग्य समतल भूमि का अभाव है। अतः ख के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है और इसीलिए द उद्योगों को अपने आर्थिक ढाँचे का प्रमुख आधार बनाया है

(5) दोनों को ही अपने उद्योगों के लिए अधिकतर कच्चे म से आयात करने पड़ते हैं।

(6) दोनों ही अपने उत्पादनों की खपत के लिए विश्व में 'बाजार' ढूंढने के मामले में निरन्तर जागरूक यह कहा जाय की यह विचार रा उनकी वि बनाती है तो अतिशयोक्ति न होगी। पाक-बंग का भारत व बंगला देश का पक्ष लेना राजनैतिक-सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ाने का नहीं है।

(7) ब्रिटेन एवं जापान दोनों के तट पर्याप्त गाह एवं पोताश्रयों की प्रचुरता है। के निवासियों को सामूहिक-संस्कृ प्रोत्साहित किया है। फलतः के प्रत्येक भाग में व्यापारिक प्रव आर्थिक वरन् राजनैतिक एवं

(8) दोनों ही देशों के पास होक सम-अक्षांसीय भू-भागो बनाती है वरन्

बूढ़े शेर जैसी है और वह भी उनके अतीत की महानताओं के आधार पर है, जबकि जापान आज अपने इतिहास मे सर्वाधिक समृद्ध है। वे दिन लद गए जबकि जापान की तुलना ब्रिटेन से की जाती थी आज स्थिति तो यह है कि ब्रिटेन को अपने को 'पश्चिम का जापान' बनाने का प्रयत्न करना पड़ेगा, और ये प्रयत्न उन समान भौगोलिक परिस्थितियों के कारण सम्भव है जो दोनों देशों में विद्यमान हैं। ये निम्न हैं—

(1) दोनों ही शीतोष्ण कटिबन्ध में द्वीपीय स्थिति लिए हुए हैं।

(2) दोनों के ही प्राकृतिक साधन सीमित हैं।

(3) द्वीपीय स्थिति होने के कारण भू-विस्तार की समस्या दोनों के सामने है। वस्तुतः इसी कारण ही दोनों की ही रुचि सदा से बाह्य दुनियाँ में रही है और दोनों को अपना व्यापार एक व्यापारिक जहाजी बेड़ा मजबूत करना पड़ा है।

(4) दोनों देशों में कृषि योग्य समतल भूमि का अभाव है। अतः खाद्यान्न के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है और इसीलिए दोनों ने उद्योगों को अपने आर्थिक ढांचे का प्रमुख आधार बनाया है।

(5) दोनों को ही अपने उद्योगों के लिए अधिकतर कच्चे माल विदेशों से आयात करने पड़ते है।

(6) दोनों ही अपने उत्पादनों की खपत के लिए विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में 'बाजार' ढूंढ़ने के मामले में निरन्तर जागरूक रहते हैं। अगर यह कहा जाय की यह विचार ारा उनकी विदेश नीति के आधार बनाती है तो अतिशयोक्ति न होगी। पाक-बंगला विवाद में ब्रिटेन का भारत व बंगला देश का पक्ष लेना या जापान का चीन से राजनैतिक-सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ाने का प्रयत्न करना अकारण नहीं है।

(7) ब्रिटेन एवं जापान दोनों के तट पर्याप्त कटे-फटे हैं, प्राकृतिक बन्दरगाह एवं पोताश्रयों की प्रचुरता है। इन परिस्थितियों ने दोनों देशों के निवासियों को सामूहिक-संस्कृति से प्रगाढ़-परिचय करने को प्रोत्साहित किया है। फलतः वे कुशल नाविक बने तथा दुनियाँ के प्रत्येक भाग में व्यापारिक अवसर देखने गए। जिसका न केवल आर्थिक वरन् राजनैतिक एवं कूटनैतिक लाभ भी मिला।

(8) दोनों ही देशों के पास होकर गर्म जलधाराएँ बहती हैं जो न केवल सम-अक्षांसीय भू-भागो की तुलना में इनकी सर्दियों को सुहावना बनाती है वरन् बन्दरगाहों को साल भर तक खुला रखती हैं।

(2) प्री-कैम्ब्रियन युगीन महाद्वीप निर्माणकारी क्रियाओं के बाद एक लम्बा समय भूगर्भिक शान्ति का था। इस समय में ब्रिटेन बहुत से नीचे भाग समुद्र द्वारा हस्तगत कर लिए गए। इन उथले जलाशयों में थलीय उच्च प्रदेशों से आया हुआ मलवा भी जमा हुआ। इस प्रकार भू-संनति का स्वरूप विकसित हुआ। इस समय स्लेट, शेल्स, बलुआ, पत्थर तथा क्वार्टजाइट आदि चट्टानें दबाव के फलस्वरूप बनी।

ब्रिटेन में जो उच्च प्रदेश प्री-कैम्ब्रियन युगीन रचनाओं से सम्बन्धित थे, वे अनावृतिकरण के साधनों द्वारा इतने घिस दिए गए हैं कि ऊंचाइयों के रूप में उनका कोई अस्तित्व नहीं है वर्तमान के उच्च प्रदेश वस्तुतः तीन पर्वत निर्माणकारी घटनाओं के परिणाम हैं। ये तीनों घटनाएं हैं—1. कैलीडोनियन, 2. हरसीनियन एवं 3. अल्पाइन। इन तीनों के बीच-बीच में भूगर्भिक शान्ति के ऐसे लम्बे समय रहे हैं जिनमें क्रमशः अगली घटनाओं के लिए मलवा जमा हुआ और भू-संनतियों का विकास हुआ। अतः इन तीनों घटनाओं और उनसे सम्बन्धित रचनाओं का अध्ययन विशेष रूप से आवश्यक है।

(3) प्रथम पर्वत निर्माणकारी घटना, जिसे कैलीडोनियन के नाम से जाना जाता है, के फलस्वरूप ब्रिटेन के उत्तर-पश्चिम में स्थित आयरलैण्ड एवं स्कॉटलैण्ड के पर्वतों का जन्म हुआ। इनके कुछ प्रतिनिधि वेल्स तथा कम्बरलैंड में भी हैं। यह संकरी पर्वतीय शृंखलाएं जिनकी आम दिशा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व है वस्तुतः स्कैण्डीनेवियन पर्वत के ही विस्तार भाग मानी जाती है। दक्षिणी उच्च-प्रदेश, लेक डिस्ट्रिक्ट, मैन द्वीप, मोर्न पर्वत, वेल्स का अधिकतर भाग तथा विकलो पर्वत आदि इस क्रम को जन्म देने वाली भूसंनति के मध्य भाग माने जाते हैं।[5] कैलीडोनियन रचनाओं में सिलूरियन युग से लेकर पूर्व कैम्ब्रियन तक के भागों से काटे गए मलबे के अंश मिलते हैं। साधारणतया नीस एवं ग्रेनाइट चट्टानों का बाहुल्य है। कालांतर में अपक्षय की शक्तियों ने कैलीडोनियन उच्च प्रदेशों को भी घिस-घिस कर निकटवर्ती समुद्रों में जमा करना प्रारम्भ किया। इन्हीं से आज इंगलैंड का पर्याप्त भाग बना है। ये जमाव ही आर्मोरिकन या हरसीनियन घटना के फलस्वरूप कार्बोनीफेरस युग में ऊपर उठ कर मोड़दार पर्वतों (हरसीनियन) के रूप में प्रस्तुत हुए।

(4) कैलीडोनियन एवं हरसीनियन घटनाओं के मध्य एक लम्बा समय ऐसा था जिसमें जलवायु सम्बन्धी भारी परिवर्तन हुए। यह समय ऐसा था जिसमें कभी रेगिस्तानी जैसी दशाएं थीं तो कभी भारी आर्द्रता। परिणाम यह हुआ कि

5. Dury, G. H. — The British isles A Systematic and Regional Geography p. 12.

रिकन एवं हरसीनियन रचनाएँ इतनी कठोर थीं कि उनमें किसी तरह की हलचल या मोड़ सम्भव नहीं थे। दरारें अवश्य पड़ गई। स्कॉटलैंड की निचली पट्टी इसी प्रकार की दरार है। कहीं-कहीं दबाव के फलस्वरूप अवरोधी पर्वत भी बन गए जैसाकि कई स्थानों पर पीनाइन श्रेणी में मिलते हैं। जुरैसिक तथा क्रेटेशियस युगीन जमावों में अल्पाइन दबाव के फलस्वरूप कटाव एवं मोड़ क्रिया हुई और वे दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम दिशा में फैले एस्कार्पमेंटस के रूप में प्रतिष्ठित हुए। पीनाइन शृंखला में अवरोधी पर्वतों के आविर्भाव से कई दर्रों का उदय हुआ ये दर्रे आज यातायात की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

(8) अन्तिम पर्वत निर्माणकारी घटना के बाद ब्रिटिश द्वीप समूह का अधिकतर भाग हिम आवरण के नीचे आ गया। स्कॉटिश उच्च प्रदेश, दक्षिणी उच्च प्रदेश, लेक डिस्ट्रिक्ट, इंगलैंड, वेल्स आदि सभी भारी हिमनदों से प्रभावित हुए। हिमनदों ने पहाड़ियों की चोटियों को घिस-घिस कर गोल बना दिया। वस्तुतः इस समय सम्पूर्ण मध्य एवं उत्तरी यूरोप हिम आवरण के नीचे था (सम्भवतः प्लीस्टोसीन हिम युग में) और एक भारी हिम-पर्त स्कैन्डोनेविया से वर्तमान उत्तरी सागर के स्थान से होकर इंगलैंड की ओर आयी। इस हिम आवरण का परिणाम ऊँचे भागों के घिसाव के रूप में तो हुआ ही, साथ ही अनेक प्रकार के मोरेनिक जमाव यत्र-तत्र हो गए।

भूगर्भविदों का ऐसा अनुमान है कि मैसोजोइक युग से पहले इंगलिश चैनल तथा उत्तरी सागर का अस्तित्व नहीं था एवं ब्रिटेन यूरोप के मुख्य भाग का ही एक थलीय अंग था। हिम-युग के बाद जब बर्फ पिघल कर समुद्र में मिली और समुद्र का तल ऊँचा उठा तो वर्तमान फ्रांस एवं ब्रिटेन के मध्य स्थित निचले भाग समुद्रगत हो गए। फलस्वरूप इंगलिश चैनल का जन्म हुआ। ब्रिटेन वस्तुतः महाद्वीपीय चबूतरे पर विद्यमान है। अगर आज भी समुद्र का तल 100 फैदम नीचा उतर जाए तो ब्रिटिश द्वीप यूरोप महाद्वीप से जुड़ जाएँगे। कई ऐसे तथ्य हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि ब्रिटिश भूखण्ड कभी यूरोप महाद्वीप के ही भाग थे। उदाहरणार्थ स्कॉटलैंड की चट्टानें स्कैन्डीनेवियन उच्च प्रदेशों की चट्टानों से बहुत साम्य रखती है। खड़िया, चूने एवं चिकनी मिट्टी की क्रमबद्ध पर्तें दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड एवं उत्तरी फ्रांस में समान रूप से विद्यमान हैं। दक्षिण-पूर्व इंगलैंड के निचले प्रदेशों का स्वरूप ठीक उत्तरी जर्मनी या हॉलैंड के निचले तटीय भागों जैसा है। इंगलैंड का कार्नवाल प्रदेश फ्रांस के ब्रिटेनी प्रदेश जैसा लगता है।

ब्रिटेन के पश्चिमी तट प्रदेशों एवं आयरलैंड की चट्टानों में पर्याप्त समानता है जिससे प्रकट होता है कि ये भाग कभी एक ही भूखण्ड के अंग थे। उदाहरणार्थ वेल्स के पर्वतीय भाग आयरलैंड के विकलो पर्वतों के समान संरचना है। दक्षिणी

उच्च प्रदेशों की चट्टानें आयरिश मोर्न पर्वत से मिलती है। दक्षिणी-पश्चिमी आयरलैंड तथा डेवोनियन पेनिनसुला संरचना की दृष्टि से समान हैं। स्कॉटलैंड के उत्तरी-पश्चिमी उच्च प्रदेश तथा आयरलैंड के डोनेगल भागों तथा कौनमेरा पर्वतों में समान च ामें मिलती है। सभी पर्वत श्रेणियों की दिशा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व है।

धरातलीय विभाग :
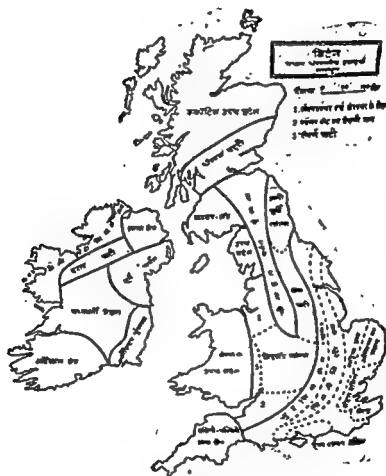
चित्र—2

डब्लू० जे० किंग ने ग्रेट ब्रिटेन को उच्चावच की दृष्टि से तीन मुख्य भागों एवं उनको पुनः कई उप-विभागों में विभाजित किया है। उनके अनुसार विभाजन निम्न प्रकार है।[6]

6. King. W. j.--the British isles. Macdonald & Evans. p 10.

(अ) उच्च प्रदेश—

1. स्कॉटिश उच्च प्रदेश, 2. दक्षिणी उच्च प्रदेश, स्कॉटिश मिडलैंडस सहित, 3. लेक डिस्ट्रिक्ट, 4. वेल्स उच्च प्रदेश, 5. डेवोनियनपेनिन शृंखला, 6. पीनाइन शृंखला।

(ब) इंगलैंड के मैदानी भाग—

1. मिडलैंड प्लेन, 2. लंकाशायर एवं चेशायर के मैदानी भाग, 3. ट्रैंट की घाटी 4. यौर्क शायर, 5. डरहम एवं नोर्थम्बरलैंड के मैदानी भाग, 6. मध्य सैवर्न घाटी, 7. सामर सैट।

(स) स्कार्पलैंडस—

1. जुरैसिक पट्टी, 2. चिकनी मिट्टी की घाटियाँ, 3. खड़िया की पट्टी, 4. वैल्ड प्रदेश, 5. पूर्वी आंगलिया प्रदेश, 6. हैम्प शायर बेसिन, 7. लन्दन बेसिन।

उपरोक्त विभाजन का ही सरलीकरण करके प्रस्तुत पुस्तक में ब्रिटेन के उच्चावचन का अध्ययन किया गया है। उपरोक्त तीन के अतिरिक्त एक चौथा मुख्य विभाग और रखा गया है जिसे तटवर्ती पट्टी नाम दिया गया है। इस प्रकार ब्रिटेन के धरातलीय स्वरूप का निम्न मुख्य व उप-विभागों में अध्ययन किया गया है।

1. उच्च प्रदेश :

ब्रिटेन के उच्चावचन मान चित्र पर प्रथम दृष्टि डालते ही स्पष्ट हो जाता है कि देश का उत्तरी-पश्चिमी भाग पर्वत एवं पठारों ने घेरा हुआ है। संकरी-संकरी पर्वत शृंखलाएँ हैं जिनकी ग्राम-दिशा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व है। अधिकतर उच्च प्रदेश कैलीडोनियन घटना से सम्बन्धित हैं। आदि रूप में ये भाग भी बहुत ऊँचे थे परन्तु कालांतर में अनावृतीकरण की शक्तियों द्वारा क्रमशः अपरदित होते जाने के कारण आज बहुत नीचे हो गए हैं। औसत ऊँचाई वर्तमान में 350 से लेकर 1000 मीटर तक है। आज इनका स्वरूप वस्तुतः पैनी प्लेन्ड पठारों जैसा है। अनावृतीकरण के साधनों ने मलवा को काट-काट कर दक्षिण में विकसित हो रही भूसंनति में जमा किया। जिसमें से कार्बोनीफेरस युग में आर्मोरिकन घटना के फल-स्वरूप नए मोड़दार पर्वतों का उत्थान हुआ जिन्हें हरसीनियन पर्वतों के नाम से जानते हैं। परन्तु ये नए पर्वत भी पर्याप्त घिस गए हैं और दूसरे कैलीडोनियन पर्वतों से एक तरह सटे हुए हैं अतः इनका अलग अस्तित्व नहीं दिखता। साधारण एक ही इकाई जैसा लगता है जिसका विस्तार स्कॉटलैंड

के उत्तरी-पश्चिमी भाग, दक्षिणी स्कॉटलैंड, लेक डिस्ट्रिक्ट, कम्बरलैंड, वेल्स, डैवोनियन, पेनिनसुला तथा इंगलैंड के मध्य भाग में पीनाइन श्रेणी के रूप में है। सर्वाधिक ऊँचाई बेन नेविस चोटी के रूप में 4406 फीट है।

(स) स्कॉटिश उच्च प्रदेश :

स्कॉटिश उच्च प्रदेश वस्तुतः उस प्राचीन भू-खंड के अवशिष्ट भाग हैं जिसका विस्तार कभी स्कैन्डीनेवियन से लेकर वर्तमान ब्रिटिश प्रदेशों तक था। स्कॉटलैंड का यह पठारी भाग ग्लेन मोर दरार द्वारा दो उप-विभागों में विभक्त है। ये हैं—उत्तर-पश्चिमी उच्च प्रदेश एवं ग्रेम्पियन, उच्च प्रदेश। अत्यन्त कटे फटे एवं ऊबड़ खाबड़ इस पठारी प्रदेश में श्रृंखलाओं की आम-दिशा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व है। पश्चिमी तट पर ये दीवाल की तरह स्वरूप लिए हुए हैं। चट्टानें या तो परिवर्तित हैं या रवेदार। कुछ चट्टानें तो इतनी प्राचीन हैं कि उन्हें कैम्ब्रियन युग से जोड़ा जाता है। मुख्यतः नीस, ग्रेनाइट, शीस्ट, स्लेट, क्वार्टजाइट आदि कठोर चट्टानों का बाहुल्य है। शीस्ट चट्टानों में अभ्रक के भी अंश हैं। ग्रेनाइट चट्टानें मुख्यतः केर्न गोर्म तथा बैन-नेविस क्षेत्र में हैं।[7] आम ढाल पूर्व की ओर है। प्रधान चोटियों में बैन नेविस (4406 फीट) बैन डीअर्ग (3547 फीट) बैन मकडुई (4296 फीट) कैर्नगोर्म (4084 फीट) बेन आल्डर (3757 फीट) तथा बैन लोअर्स आदि हैं।

इन प्रदेशों में हिम क्रियाओं के फलस्वरूप भारी अपक्षय हुआ है। वस्तुतः यह सम्पूर्ण प्रदेश प्लीस्टोसीन हिम युग में हिम की विशाल पर्त के नीचे दबा हुआ था। हिमानियों ने यहाँ के धरातल में पर्याप्त परिवर्तन किए। ज्यादातर चोटियाँ घिस-घिस करके गोल हो गई हैं। यत्र-तत्र अनेक हिम-निर्मित आकृतियाँ जैसे लटकती घाटियाँ अर्द्ध वृत्ताकार गर्त कंधानुमा टीला, दैत्यसोपान व तल पात्र झीलें मिलती है। तटवर्ती भागों में फयोडर्स का बाहुल्य है। हिम तथा जल धाराओं ने मिलकर इस प्रदेश की घाटियों को पर्याप्त चौड़ा एवं गहरा कर दिया है। इन घाटियों का स्वरूप 'यू' आकार जैसा है। ग्लेनमोर दरार घाटी वर्तमान में झीलों के रूप में अपना अस्तित्व लिए है ये झीलें हैं—लोच लिनहे, लोच नस तथा लारबैंड नैस आदि। कुछ ऐसी झीलों के चिन्ह मिलते हैं जो अतीत हिम-बंध के फलस्वरूप बनी होंगी परन्तु बाद में बांध बह गया। वर्तमान में इन झीलों में प्राचीन चिन्ह स्वरूप झील सोपान है।

उच्च प्रदेशों के आस पास कई द्वीप हैं जिनमें शैटलैंडस तथा ओर्किनी सबसे बड़े हैं। टरशरी समय में जबकि अल्पाइन पर्वतों का उदय हुआ, स्कॉटिश प्रदेशों में

7. simmons, W. M.—The British Isles. Macdonald & Evans Ltd, 1965 p. 4.

भारी ज्वालामुखी क्रिया के फलस्वरूप कुछ ज्वालामुखी-द्वीपों का भी प्राविर्भाव हुआ। इनमें रम ऐग डाइक्स समूह आदि उल्लेखनीय हैं। कई प्राचीन दरारों में लावा भरने से कठोर भूमि का स्वरूप बना। स्कॉटलैंड के इन उच्च प्रदेशों में समतल भूमि का नितांत अभाव है। खेती केवल सीमित क्षेत्र में है। मूर घास से सारा पठारी प्रदेश ढ़का हुआ है फलस्वरूप यत्र-तत्र ग्वाले नजर आते हैं। जन घनत्व बहुत कम है। जो कुछ भी मानवता है वह तटीय पट्टियों में आश्रय लिए हुए है।

(ब) स्कॉटलैंड के दक्षिणी उच्च प्रदेश :

दक्षिणी उच्च प्रदेश लगातार एवं शृंखलाबद्ध पहाड़ियों का प्रदेश है जिसका विस्तार स्कॉटलैंड के दक्षिण में है। इनकी उत्तरी सीमा के रूप में वह दरार-क्षेत्र माना जा सकता है जिसका विस्तार गिरवान से लेकर डंबर तक है। परन्तु दक्षिण में कोई ऐसी सुस्पष्ट सीमा नहीं है। इस ओर ये उच्च प्रदेश उत्तरी पीनाइन्स में जाकर क्रमशः मिलते जाते हैं। इस उच्च प्रदेश की पहाड़ियाँ भी कैलीडोनियन क्रम की हैं। चट्टानों में मुख्यतः कठोर बलुआ पत्थर व ग्रिट का बाहुल्य है। भूगर्भविदों का अनुमान है कि इस क्षेत्र की परतदार चट्टानें ओर्डोविसियन एवं सिलुरियन युग की हैं। दक्षिण-पश्चिम में तीन स्थानों पर ग्रेनाइट के नमूने भी सुस्पष्ट हैं। ये हैं—लोच-डी-मॉस, केर्नसमोर एवं क्रिफेल। इन तीनों में ग्रेनाइट चट्टान केन्द्र में विद्यमान है। गुम्बदाकार आकृति लिए हुए ये भाग 2500 फीट तक ऊपर उठ गए हैं। ऊपरी निथ घाटी में कुछ कोयले की पर्तें हैं जो संकुआहार नामक स्थान पर खोदा जाता है। दक्षिणी प्रदेशों में घाटियाँ अपेक्षाकृत चौड़ी एवं गहरी हैं, ऊबड़-खाबड़ पन भी कम है अतः कुछ कृषि कार्य सम्भव हो सके हैं। प्रदेश की औसत ऊँचाई 2000 फीट है। प्रधान चोटियों में मैरिक (2764 फीट), हर्ट फैल (2651 फीट) व्हाइट कोम्ब (2695) ब्रॉडलॉ (2754), पैटलैंड, लोथर मूरफुट तथा लामेरमूइर आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रदेश के उत्तरी भाग में क्लाइड तथा ट्वीड अपनी सहायक नदियों सहित प्रवाहित हैं। वस्तुतः ये नदी घाटियाँ इस प्रदेश में अपना आधारभूत महत्व रखती हैं। न केवल कृषि वरन् यातायात की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं। प्रदेश के अधिकतर रेल मार्ग इन्हीं घाटियों में होकर निकाले गये हैं। इन रेलों को जब घाटियों के बाद पठारी प्रदेश में ढ़ाल पर चढ़ना होता है तो दो एंजिन लगाने पड़ते हैं।[8] ठंड एवं नमी के कारण इन पठारी भागों में मूर घास का आधिक्य है। अतः भेड़ चारण सर्वत्र प्रचलित है। भेड़ों के लिए यह क्षेत्र आदर्श माना जाता है।

---

8. McIntosh, I.G. & Marshall, C. B.— The face of Scotland, p. 9.

उल्लेखनीय है कि यहाँ भेड़ों का प्रति मील घनत्व संसार में सर्वाधिक है। जल प्रवाह के दो स्वरूप स्पष्ट है, पूर्व में एस्क, टे, अर्न, फोर्थ तथा टेंथ आदि नदियों का क्रम जो पर्वतीय गैपों में होकर बहती हैं। पश्चिम की तरफ पूरा प्रदेश, लैनार्क से लेकर क्लाइड के मुहाने तक क्लाइड द्वारा प्रवाहित है। आयर शायर प्रदेश में आयर मुख्य नदी है।

(स) लेक डिस्ट्रिक्ट के कम्ब्रियन पर्वत :

इंगलैण्ड के उत्तर-पश्चिम में विद्यमान यह पर्वतीय क्षेत्र एक प्रकार से पुरानी चट्टानों का विशालाकार गुम्बद का स्वरूप लिए है जिसके चारों ओर निचले प्रदेश हैं। निचले भागों का यह क्रम केवल वहीं अवरुद्ध होता है जहाँ शैप तथा हांगिल शृंखलाएँ कम्बरलैण्ड को पीनाइन श्रेणी से जोड़ती हैं। इस गुम्बदाकार भाग का केन्द्रीय भाग प्राचीन ऑर्डोविसियन एवं सिलूरियन चट्टानों का बना है। चारों तरफ कार्बोनीफैरस एवं ट्रियसिक युगीन चट्टानों का बाहुल्य है। इन चट्टानों में लाल-बलुए पत्थर का बाहुल्य है। जल प्रवाह केन्द्र त्यागी प्रकार का है। कहीं-कहीं अध्यारोपित जल प्रवाह भी है। घाटियों की आकृति हिम क्रिया द्वारा प्रभावित है। कहीं-कहीं घाटियाँ इतनी गहरी एवं चौड़ी हो गई हैं कि उन्होंने विविध झीलों का आकार ले लिया है। झीलों को अधिकतर तेज ढाल वाली पहाड़ियों ने घेरा हुआ है। धरातल पर हिमानियों की खरोंच के कारण भी अनेक झीलों का निर्माण हो गया है। यहाँ की झीलों की सुन्दरता और प्राकृतिक मनोहारी दृश्यों के कारण ही लेक डिस्ट्रिक्ट को छोटे स्विटजरलैण्ड की संज्ञा दी जाती है। झीलों की प्राकृतिक सुन्दरता ने ही वर्डसवर्थ आदि कवियों को आकृष्ट किया। यहीं वह अलस्टर झील है जिसकी प्रशंसा वर्डसवर्थ ने कई स्थानों पर अपने साहित्य में की है। विंडर मीयर इस प्रदेश की सबसे बड़ी झील है। हिम चर्वण के अनेक अवशेष चिन्ह विशिष्ट भू-आकृतियों जैसे 'यू' आकार की घाटी, दैत्य सोपान, अर्द्ध वृत्ताकार गर्त तथा लटकती घाटियों के रूप में विद्यमान हैं।

भूगर्भविदों का अनुमान है कि आदि रूप में यहाँ भी पर्वतों का अभ्युदय कैलीडोनियन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप हुआ था। यह तथ्य उनकी आम-दिशा (दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व) से भी प्रकट होता है। बाद में नीचे के भागों के उठ जाने के फलस्वरूप गुम्बदाकार आकृति हो गई। स्कॉटलैंड की तरह यहाँ के चोटियों के ऊपरी भाग घिसे-घिसे हैं। मूर घास से लदी हुई ये पहाड़ियाँ पास में ही स्थित निचले कृषि प्रदेशों में तेज ढाल लिए दीवाल के समान ऊपर उठ गई हैं। सबसे ऊँची चोटी स्कैफेल (3210 फीट) है। अन्य में हैलवेलिन (3118 फीट) तथा स्किडा (3054 फीट) उल्लेखनीय हैं। प्रथम दोनों ज्वाला-

मुखी चोटियाँ हैं। अन्य ज्वालामुखी चोटियों में ग्रेट-गेबिल तथा लॉंगडेल-पाइक्स महत्वपूर्ण हैं। ज्वालामुखी क्षेत्र के दक्षिण में बलुवा-पत्थर का बाहुल्य है।

जल प्रवाह के केन्द्र त्यागी होने का मुख्य कारण प्रदेश के ऊँचे भागों का गुम्बदाकार होना है। नवीन लाल बलुआ पत्थर के अपक्षय होने से पहले ही, सम्भवतः जल प्रवाह का स्वरूप निर्धारित हो चुका था। यही कारण है कि नदियों के ऊपरी भाग पुरानी चट्टानों में हैं जबकि निचली घाटियाँ चारों ओर स्थित अपेक्षाकृत नवीन चट्टानों में है। निस्संदेह जल प्रवाह के रूप समस्त हिम-क्रियाओं में कुछ बाधा पड़ी होगी परन्तु हिम युग के बाद, ऐसा लगता है कि, जल-धाराएं पुनः अपनी पुरानी घाटियों में ही आ गई।[9]

(द) वेल्स के उच्च प्रदेश :

दक्षिणी स्कॉटलैंड एवं कम्बरलैंड की तरह वेल्स प्रदेश में भी विविध भू-गर्भिक युगों की प्रतिनिधि चट्टानें एवं विविध भू-आकृतियों का समूहबद्ध स्वरूप मिलता है। वेल्स का 3/5 भू-भाग 500 फीट से ऊँचा है। प्रदेश के मध्य में स्थित दो जिलों—राडनोर तथा ब्रैकनोक, के धरातल की ऊँचाई समुद्रतल से 100 फीट से ज्यादा नहीं है। इस प्रकार प्रदेश का आधारभूत हृदय प्रदेश उच्च भू-खण्ड को ही मानना उचित होगा।[10] इस उच्च भूखण्ड के अन्तर्गत उत्तरी एवं पश्चिमी वेल्स के पर्वत शामिल किए जा सकते हैं जो कि क्रमशः मध्यवर्ती वेल्स के पर्वतीय भागों में जाकर मिल गए हैं। दक्षिणी वेल्स अपेक्षाकृत नीचा है जहाँ कि कम ऊँचाइयाँ ब्रैकन बीकन्स ब्लैक पर्वत तथा कारमार थेनशायर की ऊँचाइयों के रूप में स्पष्ट हैं। तटवर्ती पट्टी की चौड़ाई अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग है।

स्कॉटलैंड के उच्च प्रदेशों की तरह यहाँ भी प्री-कैम्ब्रियन युगीन चट्टानें केन्द्रीय स्थिति लिए हुए हैं। एंगिलसे तथा लेइन में ये धरातल के काफी निकट आ गई हैं। प्री-कैम्ब्रियन युगीन इन केन्द्रीय चट्टानों के चारों ओर भूगर्भिक युगों के क्रमानुसार यानि क्रमशः कैलीडोनियन, सिलूरियन तथा हरसनीय युगों में पड़े हुए मोड़ मिलते हैं। यत्र-तत्र ओर्डोविसियन युग में निसृत लावा से बनी हुई पहाड़ियाँ भी मिलती हैं। स्नोडाउन, केडर इडरिस तथा बयरन रेंज आदि पहाड़ी शिखरों में ओर्डोविसियन युगीन लावा कृत चट्टानें पाई जाती हैं।[11]

---

9. King W. J.—The British isles, Macdonald & Evans p. 17-18.
10. ibid--p 19.
11. Unstead, j. F. —The British Isles, systematic Regional Geography p. 176.

चित्र-3
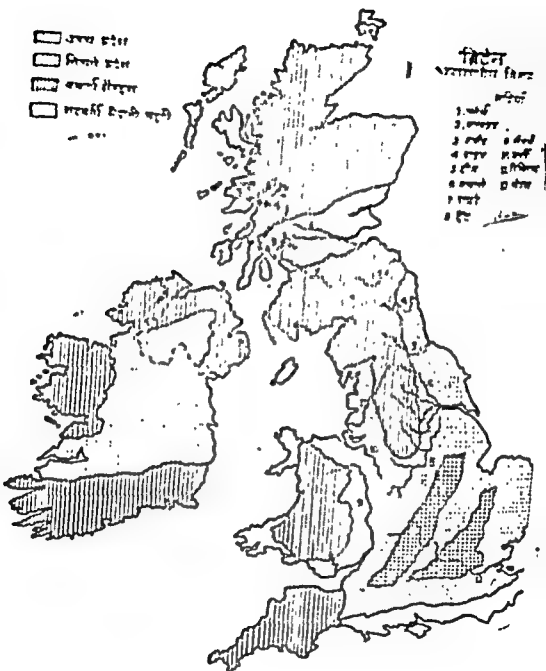
दक्षिण में दो भूगर्भिक आकृतियां हैं। प्रथम, ब्रैकनोक तथा कारमारथेनशायर की निर्जन ऊंचाइयों को निर्मित करने वाली पुरानी लाल बलुआ-पत्थर की चट्टानें तथा द्वितीय, पोण्टीपूल से पेम्ब्रोकशायर तक फैली कार्बोनीफेरस युगीन पर्तें। उपरोक्त उल्लेखित प्रदेशों की तरह यहां भी स्थानीय उठाव और धसाव के उदाहरण मिलते हैं। अनावृतिकरण की क्रियाएँ निरन्तर होती ही रहीं। इन सबने मिलकर धरातलीय स्वरूप को विविध स्वरूपों एवं आकृतियों वाला बना दिया है। ऐसा अनुमान है कि इस प्रदेश को अनावृतिकरण की शक्तियों ने हिम युग से पूर्व ही घिस-घिस कर काफी नीचा कर दिया था। हिमानियों ने तो केवल स्वरूप में थोड़ा सा संशोधन ही किया। फिर भी यहां अनेक हिमानीकृत आकृतियां मिलती हैं। विशेषकर उत्तरी वेल्स में ऐसी आकृतियों का बाहुल्य है। लानबेरिस दर्रा एक 'यू' आकार की घाटी से ही बना है। अनेक लटकती घाटियां, दैत्य सोपान व अर्द्धवृत्ताकार पर्तें भी मिलते हैं। सर्वाधिक ऊंचाई प्रदेश के उत्तरी भाग में है जहां बरयन श्रृंखला का विस्तार है। यहीं सर्वाधिक ऊंची चोटियां केडर इडरिस (2927 फीट) तथा स्नोडाउन (3560) विद्यमान है। दक्षिणी वेल्स में सर्वाधिक ऊंचाई प्लाइन लिमोन (2468 फीट) तथा ब्रैकन बीकन्स (1906 फीट) चोटियों के रूप में है।

वेल्स प्रदेश की नदियां अर्द्ध केन्द्र त्यागी स्वरूप में बहती हैं। उत्तर की तरफ दी तथा कोनवे पश्चिम की तरफ दोवे तथा तेफी, दक्षिण-पूर्व की तरफ सैवेर्न उस्क तथा व्ये एवं दक्षिण की तरफ तोवी, नीथ तथा ताफ आदि नदियां बहती हैं। तटवर्ती पट्टी उत्तर एवं पश्चिम में संकरी है परन्तु अनेक गढ़ियों एवं पर्यटन केन्द्रों से युक्त है।

(ई) डेवोनियन पेनिनशुला :

इंगलैंड के दक्षिण-पश्चिम में थल भाग प्रायः द्वीपीय रूप लिए हुए समुद्र की तरफ आगे बढ़ता चला गया है। इसे कॉर्निश या डेवोनियन पेनिनशुला के नाम से जानते हैं। अगर इस प्रायद्वीपीय भाग का सीमांकन किया जाए तो पूर्व में क्वांटोक्स से लेकर एक्स घाटी के सहारे-सहारे चैनल तक माना जा सकता है। इंगलैंड की यह तीसरी पेनिनशुला प्रथम दो यानि कम्बरलैंड एवं वेल्स से न केवल धरातलीय स्वरूप वरन् संरचना की दृष्टि से भी भिन्न है। यह ऐसा भू-खण्ड है जहां न तो कैलीडोनियन संरचना मिलती है और न हिमानी-क्रिया का कोई चिह्न। केवल दक्षिण में, लिजार्ड एवं स्टार्ट पाइंट के सिरों पर, डेवोनियन युग से पुरानी चट्टानें हैं। निःसन्देह, आग्नेय चट्टानों तथा अनावृतीकरण के विविध स्वरूप यहां मिलते हैं। हैलफोर्ड नदी के दक्षिण में स्थानीय रूप से कुछ प्राचीन चट्टानें विद्यमान हैं। इन्हीं में प्रसिद्ध एडीस्टोन लाइट हाउस बना हुआ है।

डेवोनियन एवं कार्बोनीफैरस चट्टानों का निर्माण हरसीनियन घटना के फलस्वरूप हुआ था। दबाव के कारण जो पूर्व-पश्चिम दिशा में मोड़ पड़े, उनके स्वरूप निर्धारण में वेल्स के प्राचीन स्थिर भूखण्ड का भी सहयोग था। क्योंकि वेल्स के उच्च प्रदेशों ने ही अग्रदेश का कार्य किया।[12] मोड़ क्रिया के फलस्वरूप जो भाग संनति की स्थिति में रहे उनमें कार्बोनीफैरस चट्टानें मुख्यतः शेल व सैंडस्टोन मिलती हैं। उत्तर में एक्समूर तथा क्वांटोक्स जो वस्तुतः प्रतिनति भाग थे। पहाड़ी श्रृंखला का स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। इनमें डेवोनियन स्लेट एवं सैंडस्टोन चट्टानें मिलती हैं। जबकि दक्षिण की तरफ यद्यपि उसी काल की चट्टानें हैं परन्तु उनमें चूने की चट्टानों का बाहुल्य है। चूने की चट्टानों का सर्वाधिक एकीकरण कार्नवाल तथा डेवोन क्षेत्रों में हुआ है। चूने की चट्टानों में 'कार्स्ट दृश्यावली' भी विकसित हो गई है क्योंकि वर्षा इस क्षेत्र में पर्याप्त होती है। कई गुफाएँ चूने के घुलन तथा अदृश्य नदियों के फलस्वरूप बन गई हैं। केंट तथा होके की गुफाएँ इसी प्रकार से बनी हैं। इन गुफाओं में होकर अदृश्य एवं भूमिगत जल प्रवाहित होता रहता है। यत्र तत्र गुफाओं में कार्स्ट दृश्यावली के अनेक दृश्य जैसे स्टैलेक्टाइट एवं स्टैलेग्माइट दिखाई पड़ते हैं।[13]

हरसीनियन घटना के समय हुई हलचल में यहाँ की ग्रेनाइट चट्टानों में दबाव पड़ने से मोड़ पड़े। उनके शिखरों का ध्वंस तो नहीं हुआ किन्तु उनकी आकृति गुम्बदाकार हो गई। डार्टमूर, बोडमीनमूर, हैन्सबैरी, कार्न मैनेलिस, सेंट जस्ट एव सिली द्वीप इसी प्रकार के गुम्बदाकार है। ऊँची चोटियों में यसटोर (2028) विलहेज (2030 फीट) आदि उल्लेखनीय हैं। निचले भागों में पर्मियन एवं ट्रिएसिक युगीन सैंडस्टोन, मार्ल तथा पैबिल्स आदि चट्टानें मिलती हैं।

भूगर्भविदों का अनुमान है कि पहले यह समस्त भूखण्ड प्रायः एक ही इकाई के रूप में था। मध्य टरशरी युग में आन्तरिक दबावों के फलस्वरूप तल में अन्तर आ गया है। बाद में अनावृत्तिकरण के साधनों ने तटवर्ती क्षेत्रों में कटाव करके चबूतरों एवं तीव्र ढालों को जन्म दिया। वैसे आम-ढाल उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पूर्व को है परन्तु दक्षिण में ढाल का यह क्रम ग्रेनाइट निर्मित गुम्बदों से अवरोधित हो जाता है। कार्नवाल क्षेत्र में टिन की खानें हैं। काओलिन व चीनी मिट्टी की पर्तें भी बहुमूल्य सिद्ध हुई हैं। नदियाँ इस प्रदेश में खुली घाटियों में होकर बहती

12. सुएस के अनुसार पर्वत निर्माणकारी घटनाओं में जिधर से दबाव पड़ता है वह 'पृष्ठ प्रदेश' कहलाता है, और जो भूखण्ड स्थिर रहता है उसे 'अग्र प्रदेश' कहते हैं।

13. Simmons, W. M.—The British Isles, Macdonald and Evans Ltd. p. 11.

हैं। निचली घाटियों में प्रवाह नदियों के नवोन्मेष के फलस्वरूप ढाल एवं गहराई तीव्र हो गये हैं। अधिकतर नदियों का जल-प्रवाह स्वरूप अध्यारोपित प्रकार का है। नदियों ताव एवं तोरिज जो कि ब्रिस्टल चैनल में गिरती हैं एवं एक्स, डार्ट, तामार, फोवी जो कि इंगलिश चैनल में गिरती हैं, उल्लेखनीय है।

(फ) पीनाइन श्रृंखला :

इंगलैण्ड के मध्य में स्थित उत्तर-दक्षिण में फैला यह पर्वतीय क्रम ब्रिटेन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं श्रृंखलाबद्ध पर्वतीय क्रम है। लगभग 160 मील तक यह सिलसिला बिना किसी अवरोध के चलता गया है। पीनाइन श्रेणी ऐयरे गैप द्वारा दो भागों में विभक्त है। उत्तरी भाग जिसमें (अ) चैवियट हिल्स, (ब) एलसटन, (स) क्रावैन ब्लाक, (द) एस्करिग आदि शामिल हैं। ये पहाड़ियाँ भी साधारण दरारों द्वारा एक-दूसरे से पृथक् है। दक्षिणी पीनाइन क्रमबद्ध हैं जो उत्तर में तो लम्बाकार हैं लेकिन दक्षिण में गुम्बदाकार होते गये हैं। ऐयरे गैप के अतिरिक्त टाइने तथा स्टेनमोर गैप भी उल्लेखनीय हैं। इनमें होकर पीनाइन श्रृंखला को रेल व सड़कों ने पार किया है ऐयरे गैप में होकर लीडस-लिवरपूल कैनाल भी निकाली गई है।

पीनाइन श्रृंखला का निर्माण कार्बोनीफैरस युग के पश्चात हुई हरसीनियन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप हुआ। ब्रिटेन में हरसीनियम युगीन यह सबसे बड़ा सिलसिला है। एक तरह से ब्रिटेन की यह रीढ़ की स्थिति में है। चट्टानों में कार्बोनी-फैरस पर्तों का आधिक्य है। बीच-बीच में ज्वालामुखी क्रिया के अवशेष चिह्न स्वरूप आग्नेय चट्टानी क्रम भी मिलते हैं यथा, दक्षिणी गुम्बदाकार पीनाइन्स में बैसाल्ट या चैवियट पर्वत श्रेणी में एलसटन ब्लॉक में पाई जाने वाली ग्रेट ह्विन धरातलीय लावा पर्तें ज्वालामुखी क्रिया के ही परिणाम हैं।[14] कार्बोनी-फैरस लाइमस्टोन एवं मिलटोन ग्रिट प्रायः सभी भागों में क्षैतिज पर्तों में मिलती हैं। दक्षिणी पीनाइन्स में कार्बोनीफैरस युगीन चूने की चट्टानें मिलस्टोन ग्रिट एवं कोयला की पर्तें अलग-अलग क्रमों में स्पष्ट हैं परन्तु उत्तरी पीनाइन्स में चूने की चट्टानों की पर्तें, बलुआ-पत्थर एवं शेल्स एक दूसरे से अत्यधिक गुंथे हुऐ हैं, उनकी आवृत्ति भी कई बार हुई है। भूगर्भविदों का अनुमान है कि इनका जमाव उथले सागरों एवं डेल्टा के प्रदेशों में हुआ था। पीनाइन श्रेणी लेक डिस्ट्रिक्ट के पर्वतों से लाल रंग की ग्रेनाइट चट्टान की कूटिका, शैप फैल द्वारा जुड़ी हुई है।[15]

चूंकि कार्बोनीफैरस लाइम स्टोन का बाहुल्य है अतः पीनाइन्स के मध्य भाग में भूमिगत जल द्वारा कार्स्ट दृश्यावली का निर्माण किया गया है। अन्य

14. King, W. J—The British isles P.25-26.

15. Demangeon, A—The British isles, translated by Laborde, E. D. P. 181.

पर्वत क्रमों की तरह पीनाइन श्रेणी भी हिम युग में हिम आवरण के नीचे थी, यहाँ भी हिमानियाँ क्रियाशील थीं परन्तु यहाँ हिमानीकृत आकृतियाँ जैसे गिरिशृंग, अर्द्धवृत्ताकार गर्त या दैत्य सोपान नहीं मिलते । हाँ, नदियों की घाटियों को अवश्य हिमानियों ने चौड़ा कर दिया है। स्टैनमोर दर्रे पर भी हिमानी का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। पीनाइन से निकलकर पश्चिम की ओर बहने वाली नदियाँ तीव्रगामी हैं इनमें ल्यूने, कैंट, रिबिल तथा मर्सी महत्वपूर्ण हैं। पूर्वी ढालों पर प्रवाहित जलधाराओं में टाइने, वीयर, टीज आदि उल्लेखनीय हैं।

आर्थिक दृष्टि से पीनाइन्स का भारी महत्व है। इसके पूर्व तथा पश्चिम दोनों तरफ कार्बोनीफेरस युगीन कोयले की पर्तें मिलती हैं। लोहे की खानें भी पीनाइन्स के पर्वत-पदीय प्रदेशों में हैं। चूने का पत्थर, शुद्ध जल, जलविद्युत की सम्भावनाओं के अतिरिक्त मूर घास के रूप में उस प्राकृतिक साधन को भी उपेक्षित नहीं किया जा सकता जिसके फलस्वरूप ब्रिटेन की दो तिहाई ऊन प्राप्त होती है। ब्रिटेन की ज्यादातर भेड़ें यहीं पाली जाती हैं। इन परिस्थितियों का ही परिणाम है कि ब्रिटेन के सभी महत्वपूर्ण उद्योग-क्षेत्र पीनाइन के चारों ओर ही स्थित हैं। यथा, लंकाशायर, नोर्थम्बरलैंड, डरहम, योर्कशायर या डर्बी का औद्योगिक विकास कोयले की प्राप्ति के कारण ही सम्भव हो सका है।

(2) निचले प्रदेश :

स्कॉटलैंड के मध्य में दरारी घाटी में जो मैदानी भाग विकसित हो गया है उसे छोड़कर ब्रिटेन के सारे निचले प्रदेश इंगलैंड के दक्षिण-पूर्व में विद्यमान हैं। ये मैदानी भाग निचले अवश्य हैं परन्तु पूर्णतः समतल नहीं हैं।

इंगलैंड के निचले प्रदेश शृंखलाबद्ध हैं। अगर मिडलैंड गैप द्वारा जोड़ दिया जाए तो इनका विस्तार पूर्व में लंदन बेसिन, सामरसैट, योर्कशायर से लेकर पश्चिम में लंकाशायर तथा चेशायर तक है। इन निचले प्रदेशों का जन्म उस मलबे के उत्थान के फलस्वरूप हुआ जो हरसीनियन व कैलीडोनियन क्रम में से कट-कट कर दक्षिण में स्थित समुद्र में जमा होता रहा। कालांतर में अल्पाइन घटना क्रम में मुख्यतः ट्रिएसिक युग में ये थल भाग के रूप आए। अधिकतर भागों में पर्तदार चट्टानें, जिनमें चूने के अंश व चिकनी मिट्टी के अंश का बाहुल्य है, मिलती हैं। मैदान इन्हें केवल इस भाव से कह लिया जाता है कि ये नीचे प्रदेश हैं वरना इनका स्वरूप मैदानी नहीं है। यत्र-तत्र उच्च प्रदेश, नीची पहाड़ियाँ तथा स्कार्पलैंड इनके धरातल को असमान बनाते हैं। वस्तुतः ये निचले प्रदेश ही ब्रिटेन की कृषि के आधार हैं। यही कारण है कि जनसंख्या एवं यातायात का सर्वाधिक घनत्व भी यहीं मिलता है।

मिडलैंड प्लेन्स बर्मिंघम के चारों ओर विस्तृत हैं। यहाँ अधिकतर चट्टानें टरशरी युगीन हैं जो क्षैतिज पर्तों में बिछी हैं। ऊपरी ट्रियैसिक मार्ल एवं बलुआ पत्थरों के चूर्ण से बनी लाल रंग की मिट्टियां निचले भागों में मिलती हैं। टरशरी पर्तों के बीच-बीच में कार्बोनीफैरस युगीन कोयले की पर्तें भी विद्यमान हैं जो स्टैफोर्डशायर, वारविकशायर तथा लीसैस्टरशायर के कोयला क्षेत्र प्रस्तुत करती हैं। मिडलैंड प्लेन्स का केन्द्रीय क्षेत्र 400 फीट ऊँचा वह पठारी भाग है जो बर्मिंघम के पास फैला है। बाल्टन हिल्स में इसकी ऊँचाई 1036 फीट तक हो जाती है। प्रदेश के उत्तरी भाग का जल वैंक एवं टैन नदी में प्रवाहित होकर ट्रैंट में मिल जाता है जबकि दक्षिणी भाग की जल प्रवाह आलने एवं एरो नदियों के माध्यम से एवन एवं सैवेर्न आदि नदियों को जाता है। अनुमान है कि यह केन्द्र त्यागी जल प्रवाह हिम युग से पूर्व ही स्थापित हो चुका था।

मिडलैंड प्लेन्स के उत्तर-पश्चिम में चेशायर एवं लंकाशायर के निचले प्रदेश विद्यमान हैं। साधारणतः ये दोनों भाग मिले हुए लगते हैं परन्तु वस्तुतः बलुआ पत्थर की चेशायर कूटिका द्वारा पृथक् हैं। दोनों ही मैदानों में हिम युगीन मलवा जमा है जिसने यहाँ की मिट्टी को प्रभावित किया है। पश्चिमी मैदान का विस्तार ईनविथ एवं पिलंट आदि काउंटीज में है तथा पूर्वी भाग जो अपेक्षाकृत बड़ा भी है, बीवर बेसिन से सम्बन्धित है। यहाँ भी अपर-ट्रिएसिक युगीन सैंडस्टोन की पर्तों का विस्तार है परन्तु उनके ऊपर हिम-मलवा निर्मित रेता की पर्तें जमी हैं। ट्रिएसिक युगीन सैंडस्टोन के साथ-साथ नमक की पर्तों का जमाव भी है। चेशायर-लंकाशायर निचले प्रदेशों को ल्यूने, रिबिल, मर्सी तथा बीवर आदि नदियाँ जल आप्लावित करती हैं। पीनाइन श्रेणी के पर्वतपदीय प्रदेशों में कोयले की खानें हैं।

मिडलैंड प्रदेश का उत्तरी-पूर्वी भाग, जहाँ कि ट्रैंट एवं सोर नदियों की घाटियाँ विद्यमान हैं, एक तिकोना स्वरूप लिए हुए है। सीमांकन के लिए इसे डर्बी, नौटिंघम तथा लौफ बोरो से घिरा मान सकते हैं।[16] इसे ट्रैंट की घाटी के नाम से जाना जाता है। इस प्रदेश में ट्रैंट एवं सोर नदियों ने कांप के मैदान के रूप में पर्याप्त भाग अत्यन्त उपजाऊ बना दिया है। 'वेल ऑफ ट्रैंट की तरह वेल ऑफ यौर्क' भी एक छोटा सा नदीकृत मैदानी भाग है। इस घाटी की औसत चौड़ाई 30 मील के लगभग है। घाटी प्रदेश का विस्तार ऐग्रे की निचली घाटी से नौर्थलरटन तक माना जा सकता है। ऊर्जे नदी इस घाटी को जल आप्लावित करती है। कांप की मिट्टी भी जमा हुई है परन्तु ज्यादातर भाग में हिमानी या मोरेनिक जमाव मिलते हैं जिनमें रेतीले कणों का बाहुल्य है।

---

16. King, w. J.—The British Isles p.30.

मिडलैंड प्रदेश का दक्षिण में सेवेर्न घाटी तथा सोमर सेट के मैदानी भाग विद्यमान हैं। दोनों में ही नवीन लाल बलुआ पत्थर आधारभूत चट्टान का स्थान लिए है। सेवेर्न नदी (215 मील) पहले उत्तर की ओर प्रवाहित थी परन्तु हिम युग में हिम-बंध द्वारा इसका मार्ग अवरोधित कर दिया गया। अब यह गहरी घाटी मे होकर दक्षिण की ओर बहती हैं। सेवेर्न नदी, जो कि वेल्स के उच्च प्रदेशों में से लगभग 2000 फीट की ऊँचाई से निकलती है, अपनी मध्य घाटी में अनेक मीएडर्स बनाती हुई चलती है। एक मीएडंस तो इतना बड़ा है कि उसने श्रूसबरी कस्बे को पूरी तरह से घेर लिया है।[17] समस्त घाटी में काँप की मिट्टी का जमाव है। सेवेर्न घाटी प्रदेश के दक्षिण में सोमरसेट का मैदान है जहाँ नवीन बलुआ पत्थर की अधःस्तर चट्टानों पर लाल मिट्टी का विस्तार है। पैरेट, ब्रू तथा एक्स आदि नदियों ने कांप भी जमा की है।

इंगलैंड के दक्षिण-पूर्व में हैम्पशायर बेसिन, लंदन बेसिन तथा आंग्लिया के तटवर्ती निचले भाग हैं। ये ब्रिटेन के सर्वाधिक नवीन भागों में से माने जाते हैं जिनका निर्माण टरशरी युग की अवधि में ही हुआ है। दूसरे शब्दों में ये निचले प्रदेश इओसीन, ओलिगोसी एवं प्लीओसीन युगो की देन हैं। लंदन एवं हैम्पशायर बेसिनों के बारे में सोचा जाता है कि कभी ये शृंखलाबद्ध थे परन्तु अल्पाइन घटनाओं में हुई भूगर्भिक हलचलों के फलस्वरूप अलग हो गए। इन निचले भागों में इओसीन चट्टानों अर्थात् ग्रावेल, लंदन क्ले, बगशोत सैंड का विस्तार है। लंदन एवं हैम्पशायर बेसिन दोनों ही वस्तुतः खड़िया के प्रदेश में धसाव ग्रस्त भाग हैं जिन्हें बाद में नदीकृत मलवे के द्वारा भरा गया। हैम्पशायर बेसिन में फ्रोम, स्टूर, एवन, टैस्ट एवं इचिन आदि नदियाँ बहती हैं। लंदन बेसिन का जलप्रवाह मुख्यतः थेम्स से सम्बन्धित है। पूर्वी आंग्लिया के चौड़े तटवर्ती भाग, जो दक्षिण में थेम्स तक फैले हैं, भी टरशरी चट्टानों द्वारा निर्मित हैं। सर्वाधिक नवीन चट्टानें, जो प्लिओसीन युग से सम्बन्धित हैं, हारविच एवं शेरिंघम के मध्य में स्थित हैं। ये चट्टानें, जिन्हें क्रैग्ज के नाम से जानते हैं, वस्तुतः शैल एवं सैंड का मिश्रित स्वरूप है।[18] तटवर्ती पट्टी में अन्तिम मोरेन के जमावों से बनी कूटिका क्रोमर भी उल्लेखनीय है जिसकी ऊँचाई कहीं-कहीं 300 फीट तक हो गई है। कौटस वोल्ड के उच्च प्रदेश थेम्स तथा सेवेर्न बेसिनों के मध्य जल विभाजक का कार्य करते हैं।

ट्रिएसिक युगीन चट्टानें इंगलैंड के उत्तर-पूर्व में टीज नदी के मुहानेवर्ती प्रदेश में भी मिलती हैं। यह भी एक छोटा सा निचला प्रदेश है जिसका विस्तार नोर्थम्बरलैंड, डरहम के आस-पास है। अक्षांसीय स्थिति को देखते हुए स्वाभाविक

---

17. Simmons, w. m.--The British isles p. 34.
18. Ibid p. 37.

है कि इस प्रदेश की आधारभूत ट्रिएसिक चट्टानों के ऊपर हिम-मलबे से बने रेता का विस्तार है। यत्र-तत्र चिकनी मिट्टी भी मिलती है। यहाँ कार्बोनीफेरस युगीन कोयले की पर्तें धरातल के पर्याप्त निकट आ गई हैं। क्षैतिज रूप में ये चट्टानें आगे बढ़कर समुद्र तक चली गई हैं। तटवर्ती पट्टी में यत्र-तत्र रेतीले टीले भी मिलते हैं। टीज एस्चुरी की रेता साफ कर दी गई है एवं जलधारा के बदलने से थल भाग पर जिन दलदलीय भागों का आविर्भाव हुआ, उन्हें सुखाकर कृषि क्षेत्रों में परिवर्तित कर लिया गया है।

स्कॉटलैंड के मध्यवर्ती निचले भाग वस्तुतः एक दरार घाटी में विकसित हुए हैं जिसका आविर्भाव कैलीडोनियन घटना के समय भूगर्भिक हलचलों के फलस्वरूप हुआ था। पूर्व में इस मैदानी पट्टी की चौड़ाई 40–50 मील है। फोर्थ, टे तथा क्लाइड नदियाँ न केवल इसे जल आप्लावित करती हैं वरन् निरन्तर काँप की मिट्टियों से पाटती रहती हैं। अधःस्तरीय चट्टानों में प्राचीन सैंडस्टोन तथा कुछ स्थानों पर कोयलायुक्त कार्बोनीफेरस युगीन चट्टानें पाई जाती हैं। हरसीनियन युग से पहले यह घाटी पूर्व से पश्चिम तक लगातार थी परन्तु उस समय की हुई भूगर्भिक हलचलों के फलस्वरूप बीच में कुछ भागों के ऊँचे उठ जाने से कई बेसिनों के रूप में विभक्त हो गई।

(3) स्कार्पलैंड्स :

इंगलैंड के दक्षिण-पूर्व में जुरैसिक तथा क्रीटेशियस चट्टानों से सम्बन्धित, चूने एवं खड़िया की पर्तों की बाहुल्य वाली क्रमबद्ध नीची कूटिकाओं का विस्तार है जिन्हें 'स्कार्पलैंड्स' के नाम से जानते हैं। चूने तथा खड़िया के अतिरिक्त इनमें बलुआ पत्थर भी मिलता है। साधारणतया स्कार्पलैंड्स के दो क्रम हैं—

प्रथम, यौर्कशायर से दक्षिण-पश्चिम की ओर जिसका विस्तार पूर्वी डेवोन तथा डोरसैट तक है।

द्वितीय, यौर्कशायर से दक्षिण-पूर्व की ओर जिसका विस्तार कैंट एवं सुएक्स के तटवर्ती प्रदेशों तक है।

इन क्रमों में लाइम स्टोन, सैंडस्टोन तथा खड़िया की पर्तें स्पष्ट हैं जिन्हें बीच-बीच में चिकनी मिट्टी (क्ले) की पर्तों द्वारा पृथक किया गया। कठोरता की दृष्टि से ये सभी चट्टानें भिन्न-भिन्न हैं अतः अनावृतिकरण की गति अलग-अलग रही है। मुलायम चट्टानों के क्षयित हो जाने से बीच-बीच में घाटियों का आविर्भाव हुआ है।

संरचना की दृष्टि से स्कार्पलैंड्स को दो समूहों में रखा जा सकता है—

प्रथम, जुरैसिक पट्टी।

द्वितीय, क्रीटेशियस पट्टी।

जुरैसिक पट्टी उत्तर-पूर्व में योर्कशायर तट से प्रारम्भ होती है जहाँ कि रावेंस्कार के निकट यह सर्वाधिक ऊँची है। जुरैसिक क्रम का नाम वस्तुतः यूरोप के जूरा पर्वत के पीछे पड़ा है। इस क्रम में मुख्यतः चूने, बलुआ पत्थर एवं चिकनी मिट्टी की पर्ते हैं। इस क्रम के चूने को कभी-कभी ऊलिटिक चूने का पत्थर भी कहते हैं। ह्विटबी के निकट जुरैसिक क्रम खड़ी चट्टानों का स्वरूप लिए हैं। यहाँ चूने तथा शेल चट्टानों की पर्ते हैं। ऊँचे भागों पर, प्रायः 1000 फीट से ऊपर, इन कूटिकाओं में मूर एवं हीथर घास मिलती है जबकि निचले भागों में पर्याप्त जंगल थे जिन्हें साफ करके खेतों में परिवर्तित कर लिया गया है। क्लिवलैंड पहाड़ियों में शेल एवं बलुआ पत्थर की पर्तें धरातल के काफी निकट आ गई हैं। इसी क्रम की चट्टानों में क्लीवलैंड पहाड़ियों के क्षेत्र में इंगलैंड की महत्वपूर्ण लोहे की खानें हैं।

दक्षिण की तरफ जुरैसिक क्रम लिंकन एज के रूप में आगे बढ़ गया है। यह पहाड़ी अपने आस-पास के क्षेत्रों से एक दम दीवाली स्वरूप लिए ऊपर उठ गई है और भी दक्षिण में इनका विस्तार नोर्थम्पटन उच्च प्रदेशों (800 फीट) तथा कोटसवॉल्ड तक है। कोटसवॉल्ड के आस-पास बले मिट्टी की पर्तें हैं। जुरैसिक क्रम चूने की चट्टानों से निर्मित कूटिका का सर्वाधिक चौड़ा भाग प्रस्तुत करता है। कोटसवॉल्ड के दक्षिण में जुरैसिक क्रम क्रमशः समाप्त होता जाता है। फिर इसके दर्शन यत्र-तत्र रूप में होते हैं। यथा लिम्रास क्लिफ, लाइमे कूटिका तथा पोर्टलैंड क्षेत्र में इसी क्रम की चट्टानें हैं। पोर्टलैंड से चूने की चट्टानों की खुदाई सीमेंट बनाने के लिए भी होती है।

यद्यपि क्रैटेशियस शब्द लैटिन भाषा के शब्द क्रेटा से बना है जिसका अर्थ होता है खड़िया, परन्तु यहाँ जो क्रैटेशियस युगीन एस्कार्पमेंटस हैं उनमें खड़िया की पर्तों के अलावा बलुआ पत्थर तथा चिकनी मिट्टी भी मिलती है।[19] क्रैटेशियस पट्टी का विस्तार दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड में काफी क्षेत्र में है। योर्कशायर में फ्लैमबर्ग हैड से प्रारम्भ होकर यह उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम दिशा में थेम्स की ओर जाती है। थेम्स के दक्षिण में क्रम की दिशा में परिवर्तन हो जाता है। अब यह क्रम-दिशा पश्चिम से पूर्व हो जाती है। चट्टानों की गहराई भी क्रमशः बढ़ती जाती है।

क्रैटेशियस क्रम उत्तर में योर्कशायर तथा लिंकनशायर वोल्डस से प्रारम्भ होता है। यहाँ खड़िया का रंग श्वेत है तथा उसमें कैलशियम कार्बोनेट तत्व की प्रधानता है। जीवाशेष भी हैं। योर्कशायर वोल्डस की ऊँचाई 800 फीट तक है। लिंकनशायर में इनकी ऊँचाई 500 फीट तक है। कूटिकाएँ यहाँ घास से लदी

19. Simmons, W. M.—The British isles p. 23.

हुई हैं जो भेड़ चारण के उपयुक्त है। डाउन्स प्रदेश में चूंकि हिमानी क्रिया का प्रभाव कम पड़ा है अतः खड़िया की चट्टानें अपने शुद्ध स्वरूप में हैं। अतः गोल-गोल चोटियों वाली पहाड़ियाँ यत्र-तत्र बिखरी हुई हैं। बसंत ऋतु में ये नीचे उच्च प्रदेश अच्छी घनी घास से ढक जाते हैं। चट्टानें भेद्य हैं अतः भूमिगत जल क्रियाशील रहता है व अनेक आकृतियों को जन्म देता है। ऊपरी घाटियाँ शुष्क ही

चित्र—4

लगती है क्योंकि पानी नीचे चला जाता है। वोल्डन के दक्षिण में विल्टशंस के उच्च भाग हैं जिनका विस्तार सैलिसबरी तक है। सैलिसबरी से क्रेटेशियस क्रम दो शाखाओं में विभाजित हो जाता है। एक शाखा हैम्पशायर डाउन्स तथा उत्तरी डाउन्स के साथ पूर्व की ओर चली जाती है तथा क्लिफ ऑफ डोवर तक पहुँचती है। दूसरी शाखा दक्षिणी डाउन्स का स्वरूप लेकर बीचो हैड तक चली जाती है। इस प्रदेश की अधिकतर नदियाँ (वे, मोल, मेडवे) उत्तर की ओर बहकर थेम्स में मिल जाती हैं जबकि कुछ जैसे आडर, अरुन, तथा ऊजे आदि इंगलिश चैनल में जा मिलती हैं। इन सभी नदियों के जल प्रवाह को देखने से भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है कि इस प्रदेश में पूर्व-आरोपित जल प्रवाह प्रणाली है।

(4) तटवर्ती पट्टी :

प्रायः तट रेखा को दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है अटलांटिक प्रकार की या प्रशांत प्रकार की। ब्रिटेन की तट रेखा में स्थानीय रूप से दोनों के लक्षण विद्यमान हैं। अतः इसे किसी एक विशिष्ट प्रकार में नहीं रखा जा सकता। धुर उत्तर में डुनैट हैड से लेकर धुर दक्षिण में लिजार्ड तक ब्रिटिश तट रेखा के विविध नजारे दिखाई पड़ते हैं। लेकिन तट अगर बिल्कुल सपाट और समतल है तो स्लीवेलीग क्षेत्र में 2000 फीट ऊँची दीवाली स्वरूप लिए है। पश्चिमी स्कॉटलैंड में तट रेखा अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ है, फयोर्डस का बाहुल्य है। हस्टैंटन में श्वेत-लाल खड़िया की चट्टानों से दृश्य बड़ा चित्ता-कर्षक हो गया है। कहीं तट भाग की शुरुआत ही गुफाओं से होती है तो कहीं अवरोधी मुंडेरों का बाहुल्य है। वस्तुतः तटरेखा की इस भारी विविधता के लिए न केवल भूगर्भिक घटनाएँ वरन् कटाव की शक्तियाँ विशेषकर लहरें भी बहुत किसी सीमा तक उत्तरदायी हैं। शक्तिशाली लहरें, ज्वारभाटा, तीव्र हवाएँ निरंतर तट को काटने-छाँटने में लगे रहते हैं। निरंतर एक ही दिशा से हवा चलते रहने के कारण लहरें शक्तिशाली भी बहुत हैं। जाड़ों के दिनों में जब चक्रवात और पछुआ हवाएँ सम्मिलित रूप में होती हैं तो लहरों की कटाव की शक्ति पाँच गुनी हो जाती है। कटाव के साथ जमाव भी होना स्वाभाविक है विशेषकर ब्रिटेन के आस-पास के उथले जलाशयों में तो और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। तरंग-घर्षित एवं निर्मित दोनों ही प्रकार के चबूतरे मिलते हैं।

ब्रिटिश तट प्रदेश में धसाव एवं उठाव दोनों के ही चिह्न मिलते हैं। गोवर एवं पेम्ब्रोक पेनिनशुलाओं में सैकड़ों फीट ऊँचे चौरस धरातल वाले तट मिलते हैं। इसी प्रकार इंगलिश चैनल एवं स्कॉटलैंड के पश्चिमी तट भाग में उठाव से बनी रेतीली पट्टी मिलती है। इनकी ऊँचाई 25 फीट से लेकर 100 फीट तक मिलती है। धसावकृत तट प्रायः ऊबड़-खाबड़ होते हैं। स्कॉटलैंड के मध्यवर्ती निचले भाग या सफोक तथा एक्सेस नदियों की लम्बी-लम्बी एस्चुरीज धसाव का ही परिणाम हैं। कई नदी-घाटियों के समुद्रगत होने के फलस्वरूप ही रिया-तट का विकास हुआ है। उत्तरी एवं उत्तरी-पश्चिमी भागों में धसाव के फलस्वरूप अनेक द्वीपों का आविर्भाव हुआ है।

□□□

ब्रिटेन : जलवायु दशाएँ

ब्रिटिश द्वीप समूह पश्चिमी-यूरोपियन तुल्य जलवायु का प्रतिनिधि है जिसमें वर्ष भर पछुआ हवाओं का प्रभाव रहता है। इधर दक्षिण-पश्चिम से आने वाले चक्रवात भी मौसम में निरंतर परिवर्तन करते रहते हैं। मौसम का यह परिवर्तन मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के लिए अति उत्तम है। यही कारण है कि यहाँ की जलवायु दशाएँ मानवीय विकास के लिए आदर्श कही जाती हैं। चूँकि मौसम बड़ी तेजी से परिवर्तित होता रहता है इसलिए सम्भवतः अंग्रेज लोग मौसम जैसे विषय पर घटों बातें कर लेते हैं।

ब्रिटेन की जलवायु दशाओं के अध्ययन से पूर्व उन परिस्थियों को देखना वांछनीय है जिनमें यहाँ की जलवायु का यह विशिष्ट रूप निर्धारित हुआ है। संक्षेप में ये निम्न हैं—

(1) स्थिति—ब्रिटेन शीतोष्ण कटिबंध में (50-60° उत्तरी अक्षांस) यूरोप महाद्वीप भूखण्ड के पश्चिम में विद्यमान है और पश्चिम में भी द्वीपीय स्थिति लिए है। इस प्रकार एक ओर थल-खण्ड दूसरी ओर विशाल जलाशय के बीच की स्थिति ने स्वाभाविक रूप से यहाँ के तापक्रम व आर्द्रता-दशाओं को प्रभावित किया है। समुद्र का समकारी प्रभाव कभी भी यहाँ के मौसमों को भीषण नहीं होने देता।

(2) धरातल एवं पर्वतों की दिशा—इंगलैंड एवं स्कॉटलैंड में पर्वतीय शृंखलाएँ प्रायः उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली है। इधर अटलांटिक महासागर की ओर से जो आर्द्रता युक्त हवाएँ आती हैं उनकी दिशा प्रायः दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व को होती है अतः पर्वतों से टकराकर वर्षा करती है। स्वाभाविक रूप से पश्चिम ढालों पर ज्यादा वर्षा होती है।

(3) पछुआ हवाएँ—ब्रिटिश द्वीप समूह की अक्षांसीय एवं यूरोप महाद्वीप में धुर उत्तरी-पश्चिमी स्थिति का यह परिणाम हुआ कि पछुआ हवाओं से सर्वाधिक लाभ इन्हीं को पहुँचता है। ब्रिटेन वर्ष भर पछुआ हवाओं के मार्ग में पड़ता है। अतः वर्ष भर सम-वितरित रूप में वर्षा होती है।

(4) उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट (गर्म धारा)—गल्फस्ट्रीम के उत्तरी-पूर्वी विस्तार के रूप में यह गर्म जल धारा निरंतर उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के तटवर्ती प्रदेशों विशेषकर ग्रेट ब्रिटेन को प्रभावित करती है। इसी धारा का प्रभाव है कि जाड़ों के दिनों में ब्रिटेन के तापक्रम अपने सम अक्षांशीय भू-भागों की तुलना में पर्याप्त ऊँचे रहते हैं। पछुआ हवाओं के संयोग से इस जलधारा का प्रभाव और भी अधिक बढ़ जाता है।

(5) यूरेशिया के विशाल भू-खण्ड की तुलना में स्थिति—हवाओं की दिशा, गति और मात्रा वस्तुतः वायु दबाव केन्द्रों की पारस्परिक स्थितियों का परिणाम होती है। यूरेशिया का मध्य भाग जहाँ घोर महाद्वीपी दशाएँ रहती हैं गर्मियों के दिनों में निम्न दबाव केन्द्र तथा जाड़ों के दिनों में उच्च दबाव केन्द्र प्रस्तुत करता है। इधर मोरक्को के पास एजोरे उच्च दबाव केन्द्र रहता है और आइसलैंड के पास स्थायी निम्न दबाव केन्द्र। इन दबाव केन्द्रों की पारस्परिक स्थितियों के फलस्वरूप चक्रवात, हवाएँ चला करती हैं जिनका आवागमन प्रायः ब्रिटिश द्वीप समूहों के ऊपर होकर होता है।

(6) चक्रवात एवं प्रति चक्रवात—नार्वे के वायु विज्ञान केन्द्र में हुई नई खोजों के अनुसार ठंडी ध्रुवीय वायुराशियों एवं उष्ण कटिबन्धीय वायुराशियों में तापमान का भारी अन्तर होता है। ध्रुवीय ठंडी वायुराशियों के सीमांत मौसम के अनुसार अपनी स्थिति बदलते हैं।[20] साधारणतः इनकी स्थिति उत्तरी यूरोप में आइसलैंड के आस-पास रहती है। इधर दक्षिण-पश्चिम से उष्ण कटिबन्धीय गर्म वायुराशियाँ (पछुआ हवाएँ) पहुँचती हैं। ये हवाएँ शेष यूरोप पर अपना प्रभाव डालती हैं। इन दोनों विपरीत प्रकृति वाली वायुराशियों के संगम के फलस्वरूप ही चक्रवात उत्पन्न होते हैं जिनकी दिशा प्रायः उत्तर-पूर्व या पूर्व की ओर होती है। ब्रिटिश द्वीप समूह इनसे सर्वाधिक प्रभावित होते हैं।

इसे सरल रूप में इस प्रकार समझा जा सकता है कि ब्रिटिश द्वीपों की तरफ अधिकतर हवाएँ चाहे वे गर्तचक्र के रूप में हों या किसी अन्य रूप में, उत्तरी अटलांटिक महासागर से आती हैं। और चूँकि अटलांटिक महासागर में ये काफी लम्बी दूरियों को पार करके आती हैं अतः स्वाभाविक रूप से गर्म तथा आर्द्र होती हैं। अटलांटिक ड्रिफ्ट इनका तापक्रम और भी ज्यादा बढ़ा देती है। उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों से आने वाली ये गर्म-तर हवाएँ जब ध्रुवों की ओर से आने वाली ठंडी एवं शुष्क हवाओं से मिलती हैं तो चक्रवातों का आविर्भाव होता है। इस संगम में गर्म वायुराशियों का सीमांत हमेशा पूर्व की ओर तथा ठण्डा सीमांत पश्चिम की ओर होता है। ठंडी वायुराशि भारी होने से नीचे आती है तथा गर्म वायु

20. Stamp, L. D.—A Regional Geography Pt. v, p. 17.

राशि को ऊपर उछाल देती है। ऊपर चढ़कर यही गर्म हवा घनीभूत होकर बादलों एवं वर्षा के लिए उत्तरदायी होती है।

चक्रवातों के साथ मौसमों का प्रायः एक निश्चित क्रम आता है। सर्व प्रथम ऊँचे, नीचे कुंतल मेघ दिखाई पड़ते हैं। हवा का रुख पश्चिम की ओर होने से ये बादल और ऊपर उठना शुरू करते हैं। इनका स्वरूप क्रमशः मुकुटधारी मेघों जैसा होने लगता है। थोड़ी ही देर में सारा आकाश बदली आवरण युक्त हो जाता है और वर्षा प्रारम्भ हो जाती है। परन्तु जैसे ही ठंढे सीमांत का प्रारम्भ होता है मौसम बदलने लगता है। आकाश स्वच्छ होने लगता है, तापक्रम नीचे होते जाते हैं एवं हवाओं का रुख उत्तर से होता जाता है।[21] बादलों का स्वरूप पर्तदार होने लगता है।

ये चक्रवात ब्रिटेन को साधारणतया 2–3 दिन में पार कर लेते हैं। वैसे तो चक्रवात प्रायः साल भर चलते हैं परन्तु सर्दियों के दिनों में इनकी संख्या अधिक होती है। इन दिनों इनकी गति भी 70–75 मील प्रति घंटा तक हो जाती है। कई बार ये बिल्कुल तूफानी स्वरूप लिए हुए आते हैं। 1952 में कार्नवाल में 112 मील प्रति घंटा की रफ्तार वाले चक्रवात का रिकार्ड किया गया। जिन दिनों ब्रिटेन के ऊपर प्रति चक्रवातीय दशाएं होती हैं तो मौसम स्वच्छ होता है। खूब खुली धूप होती है। आकाश साफ होता है

उपरोक्त विवरण से सुस्पष्ट है कि ब्रिटेन की जलवायु के स्वरूप निर्धारण में वायुराशियों एवं चक्रवातों का बहुत बड़ा हाथ है। वस्तुतः ब्रिटेन तीन दबाव केन्द्रों के बीच में विद्यमान है और यहाँ के मौसम इन दबाव केन्द्रों के पारस्परिक सम्बन्ध एवं शक्तियों के ही परिणाम होते हैं। ये दबाव केन्द्र हैं—

(अ) जाड़ों में—

1. आइसलैंड का निम्न दबाव केन्द्र।
2. एजोरे उच्च दबाव केन्द्र।
3. पूर्वी यूरोप का उच्च दबाव केन्द्र।

(ब) गर्मियों में—

1. आइसलैंड का निम्न दबाव केन्द्र (सर्दियों की तुलना में उत्तर में)
2. एजोरे उच्च दबाव केन्द्र (अपेक्षाकृत उत्तर में)
3. रूसी निम्न दबाव केन्द्र (सर्दियों के उच्च के स्थान पर)[22]

21. Simmons, W, M,--The British Isles p, 57-60,
22. Stamp, L, D,--A Regional Geography Pt, V, p 68-69,

जाड़ों की दशाएँ—गर्म जल धारा एवं पछुआ हवाओं के प्रभाव से न केवल ब्रिटेन वरन् सम्पूर्ण यूरोप महाद्वीप में मौसम सुहावने होते हैं। पछुआ हवाएँ अपने साथ गर्मी एवं आर्द्रता लाती हैं- अतः सर्दी की भीषणता नहीं रहती। जैसे-जैसे पश्चिम की ओर चलते हैं मौसम तुलनात्मक रूप में ज्यादा सुहावना होता है। इन दिनों उपोष्णीय उच्च दबाव केन्द्र सहारा के पास होता है। अतः ब्रिटेन उससे भी प्रभावित रहता है।
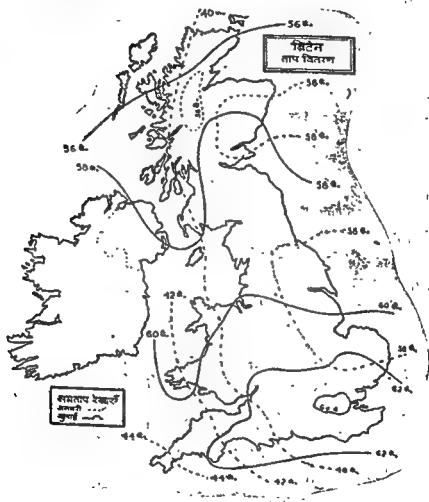
चित्र–5

जाड़ों के दिनों में तापक्रम अपेक्षाकृत ऊँचे ही रहते हैं। तात्पर्य यह है कि अक्षांसीय स्थिति के अनुसार जितने तापक्रम होने चाहिए उससे कुछ ज्यादा ही ऊँचे होते हैं क्योंकि अटलांटिक महासागर, गर्म धारा व पछुआ हवाओं का सम-

कारी प्रभाव पड़ता रहता है। यहाँ तक कि ब्रिटेन के पूर्वी एवं पश्चिमी तटों के तापक्रम में ही लगभग 4° फ० तक अंतर रहता है – यानी पूर्वी तट की अपेक्षा पश्चिमी तट पर तापक्रम अधिक होता है। समुद्री प्रभाव का स्पष्ट दर्शन इन दिनों की सम ताप रेखाओं को देख कर किया जा सकता है जिनका विस्तार इन दिनों उत्तर-दक्षिण होता है। यह गर्म समुद्री हवाओं का ही प्रभाव है कि स्कॉटलैण्ड एवं आर्कनी द्वीप, जो पेरिस बेसिन से कहीं अधिक उत्तर में स्थित है, में तापक्रम हिमांक से ऊपर (लगभग 40° फ०) होता है। इतना ही पेरिस बेसिन में होता है।

सर्वाधिक तापक्रम द० वेल्स एवं द० पूर्वी पैनिनसुला में होते हैं जहाँ कि 45° फ० की समताप रेखा गुजरती है। लन्दन में तापक्रम 40° फ० होता है। स्कॉटलैंड के पश्चिमी भागों में 38°–40° फ० रहता है। इन दिनों सर्वाधिक ठंडे स्थान स्कॉटलैंड के पूर्वी तट क्षेत्र एवं पूर्वी-आंगलिया आदि होते हैं जहाँ तापक्रम 36° फ० तक आ जाते हैं। रात्रि में प्रायः हिमांक से नीचे रहते हैं।

जाड़ों के दिनों में सारा ब्रिटेन चक्रवातों से प्रभावित होता है। पछुआ हवाएँ बेरोक-टोक चलती हैं। अतः मौसम तूफानी, बदली आवरणयुक्त रहता है। वर्षा खूब होती है। सर्वाधिक वर्षा उच्च पर्वतीय भागों में होती है। पश्चिमी तटों मे कुछ वर्षा का ज्यादातर भाग इन दिनों में ही होता है। हिम वर्षा प्रायः नहीं होती है।

गर्मियों की दशाएँ—गर्मियों के दिनों में तापक्रम वितरण पर अक्षांतीय प्रभाव सुस्पष्ट दिखता है। यही कारण है कि इन दिनों सम ताप रेखाओं का विस्तार पूर्व-पश्चिम होता है। सर्वाधिक ऊँचे तापक्रम लंदन बेसिन में होते हैं जहाँ दिन के समय 70° फ० तक होना साधारण बात है। इन दिनों इंगलैंड, वेल्स, आयरलैंड के अधिकतर भागों में तापक्रम 60° फ० से ऊपर ही होते हैं। केवल स्कॉटलंड में 55° फ० से नीचे रहते हैं। इन दिनों पूर्वी तथा पश्चिमी तटों के तापक्रम में 2° फ० का अन्तर रहता है। यानी पूर्वी तटों का तापक्रम 2° फ० अधिक होता है। वस्तुतः इन दिनों अक्षांसीय स्थिति एवं महाद्वीपीय खण्ड की निकटता आदि तत्व ज्यादा प्रभावकारी होते हैं। सम्पूर्ण देश का तापक्रम इतना होता है जिसमें गेहूँ, जौ, जई आदि की खेती आसानी से की जा सकती है। पूर्वी भागों में इन दिनों वर्षा भी होती है। कुछ वर्षा संवाहनिक होती है।

वर्षा—उपरोक्त विवरण के आधार पर ब्रिटेन की वर्षा की मात्रा तथा समय के बारे में भली भाँति अनुमान किया जा सकता है। चूँकि यहाँ की ज्यादातर वर्षा पछुआ हवाओं और उन चक्रवातों से होती है जो पश्चिम से पूर्व एवं उत्तर-पूर्व की ओर यात्रा कर रहे होते हैं। अतः स्वाभाविक है कि पश्चिमी तटों पर पूर्वी तटीय प्रदेशों की अपेक्षाकृत ज्यादा वर्षा होती है। पूर्वी भागों की ओर

जाते-जाते हवाओं की आर्द्रता का पर्याप्त अंश समाप्त हो चुका होता है। एक ओर भी कारण है। चूँकि पीनाइन शृंखला का विस्तार उत्तर-दक्षिण है। अतः जो हवाएँ पश्चिम से पूर्व को जा रही होती हैं अपनी पर्याप्त नमी पश्चिमी ढालों पर ही खर्च कर देती हैं। जैसे ही इस शृंखला को वे हवाएँ पार करती हैं उन्हें नीचा उतरना पड़ता है। स्वाभाविक रूप से इससे तापक्रम एवं वाष्प रखने की क्षमता दोनों बढ़ जाते हैं। सापेक्षित आर्द्रता के घटने के साथ-साथ वर्षा के अवसर भी कम हो जाते हैं। एक तरह ये पूर्वी भाग वृष्टि-छाया प्रदेश बन जाते हैं। पूर्वी भागों में गर्मियों में ज्यादा वर्षा होती है।
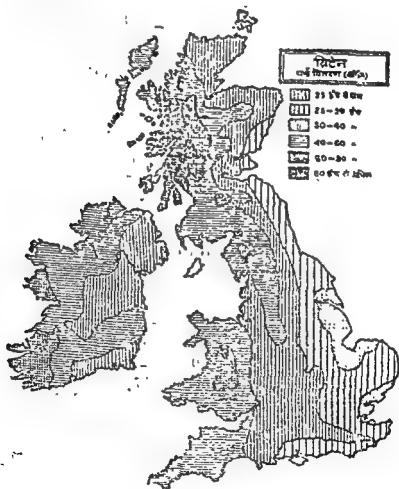
चित्र-6

सर्वाधिक वर्षा उत्तरी तथा उत्तरी-पश्चिमी प्रदेशों के ऊँचे भागों में होती है। यथा, स्कॉटलैंड के पश्चिमी उच्च प्रदेश, बेन नेविस के आस-पास के क्षेत्र, स्नाडोनिया, दक्षिणी वेल्स में ब्रेकनोक तथा वेकन्स क्षेत्र, दक्षिणी-पश्चिमी ग्रामर-

लैंड में केरी पर्वत क्षेत्र तथा पश्चिमी आयरलैंड के कोनेमेरा पर्वतीय प्रदेश ऐसे हैं जो औसतन 100 इंच से ज्यादा वर्षा प्राप्त करते हैं। अब तक सर्वाधिक वर्षा स्नोडोनिया में (200 इंच) रिकार्ड की गई है। वैसे इन प्रदेशों में वर्षा प्रायः साल भर छिट-पुट रूप में चलती रहती है परन्तु चक्रवातों के कारण जाड़ों में मात्रा एक दम बढ़ जाती है। उत्तरी पर्वतीय क्षेत्रों में कहीं-कहीं हिम वर्षा भी होती है।

दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड, स्कॉटलैंड का पूर्वी तट, सोमरसेट, वैल्ड' यौर्क-शायर आदि प्रदेशों में वर्षा 35 इंच से कम होती है।

वर्षा साल भर सम वितरित रूप में होती है। निस्संदेह, पतझड़ एवं जाड़ों में मात्रा कुछ ज्यादा रहती है परन्तु विभिन्न मौसमों की वर्षा मात्रा में इतना अंतर नहीं आ पाता जितना कि उष्ण कटिबंधीय प्रदेशों में हो जाता है। चूंकि अधिकतर वर्षा अटलांटिक की ओर से आने वाली हवाओं से होती है अतः वास्तविकता यह है, वर्ष का कोई माह ऐसा नहीं होता जबकि वर्षा न होती हो। मात्रा में अवश्य कुछ अन्तर आ सकता है पर वह भी नगण्य। उदाहरणार्थ डबलिन में कुल वर्षा का 26% जाड़ों में, 24% बसन्त में, 24% गर्मियों में तथा 26% पतझड़ में प्राप्त होता है। यही स्थिति ब्रिटेन के अन्य भागों की है। निम्न सारिणी से यह भली भांति सुस्पष्ट है।

वर्षा का मौसमी वितरण[23]

प्रदेश	स्थान	बसन्त %	गर्मी %	पतझड़ %	सर्दी %
स्कॉटलैंड	ब्रेमार	19	25	31	25
आयरलैंड	आर्माघ	20	26	29	25
इंगलैंड	लन्दन	21	27	29	23

□□□

23, Demangeon, A,--The British isles, translated by Laborde, E, D, p. 78.

ब्रिटेन : प्राकृतिक वनस्पति एवं मिट्टियाँ

अगर प्राकृतिक वनस्पति शब्द का अर्थ सही रूप में लिया जाए तो सचाई यह है कि ब्रिटेन के धरातल से वह गायब हो चुकी है। खेतों, चरागाहों के लिए भू-प्राप्ति, दलदलों को सुखाकर नवीन भूमि की प्राप्ति आदि कार्यक्रमों में वनस्पति का प्राकृतिक स्वरूप समाप्त हो गया है। आज अगर कहीं जंगल या वनस्पति मिलती है तो बहुत सम्भव है वह पुनः रोपण के फलस्वरूप हो। सर्वथा अगम्य क्षेत्रों में अवश्य कुछ वनस्पति प्राकृतिक स्वरूप में मिलती है लेकिन ऐसा भू-क्षेत्र नगण्य (5–6%) है। ब्रिटेन में धरातलीय स्वरूप, जलवायु, मिट्टियाँ आदि भिन्नता लिए हुए हैं। फलतः वनस्पति के स्वरूप में भी भारी वैभिन्य है। मूल रूप में यहाँ निचले आर्द्र प्रदेशों में घने जंगल, दलदल, फैन, आदि उच्च प्रदेशों में जहाँ मिट्टी की पर्त पतली थी मूर, हीथ, झाड़ियाँ आदि थीं। वनस्पति का विध्वंस, वस्तुतः पाषाण युग के उत्तरार्द्ध से ही प्रारम्भ हो गया था। जब जट तथा सैक्सोन लोग यहाँ आए उस समय तक भी कुछ प्राकृतिक जंगल थे लेकिन अगली कुछ ही शताब्दियों में वे नष्ट कर दिए गए।[24]

वनस्पति विशेषज्ञों का अनुमान है कि वनस्पति का स्वरूप व वृक्षों की किस्में यहाँ विभिन्न युगों में बदलते रहे हैं। सम्भवतया जलवायु इसका मुख्य कारण हो। उनका विचार है कि हिम युग के तुरन्त पश्चात् जब यहाँ के अनेक भाग हिम से मुक्त हुए तो यहाँ अल्पाइन या टुण्ड्रा प्रकार की वनस्पति जैसे लिचिन काई, मौंस, विलो, सिल्वा, बर्च आदि किस्मों का आविर्भाव हुआ। तत्पश्चात् कोणधारी वृक्षों जैसे—स्प्रूस, फर, स्कॉट पाइन एवं उनके बाद पतझड़ वाले वृक्षों जैसे—ओक, एम, एश, बीच आदि का विकास हुआ। वैसे जहाँ तक जलवायु का सम्बन्ध है यहाँ की ठंडी-तर जलवायु पतझड़ वाले वृक्षों के लिए अति उत्तम है। सम्भवतः यही कारण है कि वनों के नाम पर यहाँ ज्यादातर वृक्ष पतझड़ वाले ही हैं।

---

24. Simmona, W. M.—The British Isles p. 67.

निचले प्रदेशों में ओक प्राकृतिक वनों के रूप में विस्तृत क्षेत्रों में विद्यमान था जिसे सन् 1700 तक कृषि योग्य भूमि प्राप्त करने के चक्कर में साफ कर दिया गया। इसका प्रयोग जलयान निर्माण, चारकोल बनाने तथा लोहा गलाने के लिए भी होता था। अतः कटाई की गति काफी तीव्र रही। एश, मैपिल, एम, हैजेल आदि वृक्ष भी पर्याप्त औद्योगिक महत्व के रहे है. औद्योगीकरण एवं यातायात के विकास के साथ लकड़ी की माँग बढ़ती गई जिसे पूरा करने में यहाँ के जंगल असमर्थ हैं। प्रथम विश्व युद्ध में भी भारी मात्रा में जंगल काटे गये। युद्ध पश्चात् 1919 में जब वन आयोग की स्थापना की गई तो पाया गया कि केवल मात्र 7% आवश्यकता ही देश के जंगलों से पूरी हो सकती है। शेष आवश्यकता की पूर्ति के लिए ब्रिटेन, कनाड़ा, स्वीडन, नार्वे आदि देशों से टिम्बर आयात करता है। कटाई पर भी नियन्त्रण करके उसे वैज्ञानिक बनाने का प्रयास किया गया। क्षति पूर्ति के लिए नवीन उपयुक्त भागों में नये वन लगाए गए। चूँकि यहाँ कोणधारी वृक्षों से सम्बन्धित मुलायम लकड़ी का आयात ज्यादा होता है। अतः वेल्स एवं डैवोनियन पैनिनशुला के उपयुक्त (निचले, आर्द्र) भागों में स्प्रूस, नार्वे, पाइन, स्कॉट पाइन, लार्च आदि का वृक्षारोपण किया गया है। अन्य प्रदेशों में, जहाँ इस प्रकार का वृक्षारोपण किया गया है, स्कॉटिश उच्च प्रदेश, उत्तरी यौर्क मूर क्षेत्र, पीनाइन तथा कम्बरलैण्ड मुख्य हैं। वील्ड, बैकलैंड तथा कलबिन क्षेत्रों में रेतीली मिट्टियों में भी इन वृक्षों को लगाया गया है। प्रथम विश्व युद्ध के तुरन्त बाद ही लगभग 1 मिलियन एकड़ भूमि पर वन आयोग द्वारा नए वृक्ष लगाए गए।

उच्च प्रदेशों में मिट्टी एवं जल प्रवाह की भिन्नता ने वनस्पति के स्वरूप में भारी भिन्नता ला दी है। स्कार्पलैंडस की हीथियों की पहाड़ियों, जहाँ दोमठ एवं चिकनी मिट्टी के अंश हैं, पर बीच के जंगल मिलते हैं। इनके बीच-बीच में एश के वृक्ष एवं झाड़ियाँ भी मिल जाती हैं। उत्तर में, अधिकतर स्कॉटिश उच्च प्रदेश सम्भवतः स्कॉट पाइन से ढके थे। 2000 फीट की ऊँचाई तक इन्हीं वृक्षों का आधिक्य था परन्तु अब उनके स्थान पर बर्च के जंगल ज्यादा मिलते हैं। स्कॉर्पलैण्ड्स, लेक डिस्ट्रिक्ट, कम्बरलैण्ड, वेल्स के उच्च प्रदेश, पीनाइन्स, स्कॉटिश उच्च प्रदेश तथा दक्षिणी स्कॉटिश उच्च प्रदेश—सभी में मूर घास समान रूप से पाई जाती है। यह एक ऐसी वनस्पति है जो समस्त ब्रिटेन में मिलती है। अन्तर केवल ऊँचाई एवं स्थिति का है। यथा, दक्षिण के उच्च प्रदेशों में 1500 फीट से ऊपर एवं उत्तर के उच्च प्रदेशों में 1000 फीट से ऊपर मूर पर्याप्त मात्रा में मिलती है। स्वरूप में कुछ स्थानीय भिन्नता है, कहीं एक्समूर का बाहुल्य है तो कहीं डार्टमूर का। पीनाइन शृंखला में ग्रिट मूर का आधिक्य है। मूर के बीच-बीच में कुछ वृक्ष जैसे सिल्वर, बर्च, होर्नबीम आदि भी छितरे रूप में मिलते है। इस प्रकार दृश्य बड़ा मनोरम

होता है। मूर प्रदेशों की सुन्दरता के आधार पर ही कई राष्ट्रीय पार्क विकसित हो गए हैं जिनमें हजारों यात्री प्रतिवर्ष आते हैं। स्कॉर्पलैण्ड्स में चूने तथा खड़िया की चट्टानों पर हल्की पर्त वाली मिट्टी है जिसमें छोटी-छोटी घास आती है। इस स्वरूप को 'डाउन्स' के नाम से जाना जाता है। घास के बीच में यत्र-तत्र बीच (जहाँ काली मिट्टी है) जूनिपर हॉथोर्न या डागवुड के वृक्ष छितरे रूप में मिलते हैं। डाउन्स पर भेड़ चराई जाती हैं।

तटीय प्रदेशों में जहाँ दलदलीय स्वरूप ज्यादा होता है कई प्रकार की प्रा० वनस्पति जैसे रीडस, सेजेज, बकथोर्न तथा मैनग्रोव आदि विकसित हो जाती हैं।[25] ब्रिटेन में इस प्रकार की वनस्पति पहले पूर्वी-आंगलिया के तट प्रदेशों में थी। अब चूंकि इन दलदलों को सुखा दिया गया है यह वनस्पति भी समाप्त हो गई है। नमूने के तौर पर 1 वर्ग मील भूभाग में अवश्य छोड़ दी गई है।

मिट्टियाँ :

मिट्टी का रंग, स्वरूप एवं उपजाऊ शक्ति वस्तुतः उन तत्वों पर निर्भर करती है जो मिट्टी के निर्माण में महत्वपूर्ण पार्ट अदा करते हैं। ब्रिटेन की मिट्टियों को जलवायु की आर्द्रता एवं हिमानी क्रिया इन दो तत्वों ने बहुत प्रभावित किया है। चूंकि पश्चिमी भागों में वर्षा बहुत ज्यादा होती है, प्रायः पठारी प्रदेश हैं अतः मिट्टी के कटाव एवं लीचिंग क्रिया का भारी प्रभाव रहा है। यही कारण है कि पश्चिमी भागों की मिट्टियों की उपजाऊ शक्ति नगण्य है। वस्तुतः मिट्टियों में उपजाऊ शक्ति की दृष्टि से स्थानीय भिन्नताएं हैं। उच्च भागों से जैसे वेल्स या स्कॉटलैण्ड में अत्यन्त साधारण किस्म की मिट्टियाँ हैं जिनकी उपजाऊ शक्ति बहुत कम है। इन भागों में साधारणतः लाल रंग की लैटराइट मिट्टियाँ मिलती हैं।

उच्च भागों में स्थित नदियों की घाटियों में दोमट मिट्टी का बाहुल्य है जो कृषि-उपयोगी है। भीतरी भागों में कहीं-कहीं चिकनी मिट्टी (क्ले) भी मिलती है। इंगलैण्ड के दक्षिणी-पूर्वी भाग में हल्की रेतीली दोमट मिट्टी है जिसमें चूने के अंश भी पाए जाते हैं। दोमट मिट्टी में, सामान्यतः मोटे एवं रेतीले कणों का प्रतिशत कम होता है तथा चिकनी मिट्टी का अंश ज्यादा। कृषि यन्त्रों का उपयोग इस मिट्टी में अच्छी प्रकार से होता है। पौधों की जड़ों की पकड़ यह मिट्टी मजबूती से करती है। यह आर्द्रता एवं उर्वरकों को अपने में समाए रखने वाली होती है। पानी के ठहराव की समस्या प्रायः इन मिट्टियों में नहीं होती।

---

25. Stamp, L. D.—The Land of Britain, its use and misuse. p. 159.

यही कारण है कि दोमट मिट्टियाँ अधिकांश फसलों के लिए उपयुक्त होती हैं।[26]

दोमट मिट्टी का क्षेत्र ब्रिटेन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृषि प्रदेश है। यहाँ गेहूँ तथा जई पैदा किए जाते हैं। मिट्टी में चूने का अंश उस मलवे से सम्बन्धित होता है जो स्कॉर्पलैण्ड्स से कट कर आता है। यह मिट्टी न केवल खाद्यान्न वरन बागाती कृषि, सब्जी उत्पादन एवं चारे की फसलों के लिए भी उपयोगी है। वाश के चारों ओर के क्षेत्र को सुखाकर उपजाऊ मिट्टी प्राप्त की गई है जिसमें आलू, चुकन्दर तथा विविध सब्जियाँ पैदा की जाती हैं।

संक्षेप में ब्रिटेन की मिट्टियों को निम्न समूहों में रखा जा सकता है।[27]

(अ) जलवायु एवं वनस्पति के प्रभाव में विकसित मिट्टियाँ—

1. उत्तरी कोनीफेरस जंगलों की पोडजोल मिट्टी जो ब्रिटेन में वेल्ड प्रदेश के ग्रीन सैंड क्षेत्र, लन्दन बेसिन के दक्षिणी-पश्चिम तथा मध्य हैम्पशायर में पाई जाती हैं।
2. पतझड़ वनों वाली भूरी मिट्टी जो मुख्यतः सोमर सैट में पाई जाती है। साधारण उपजाऊ होती है।
3. उच्च माद्र प्रदेशों की बॉग्ज एवं पीट।

(ब) जल प्रवाह एवं पैतृक चट्टानों के प्रभाव में विकसित मिट्टियाँ—

1. चूने के अंश एवं उपजाऊ तत्वों (ह्यूमस) युक्त मैडो मिट्टियाँ, जो प्रायः बाढ़ कृत मैदानों में पाई जाती हैं।
2. चूने के पत्थरों से विकसित रैण्ड जीना जो स्कार्पलैंड में मिलती है। यह उपजाऊ तत्वों से युक्त है।
3. फैन पीट जुरैसिक स्कार्पलैंड प्रदेश में मिलती है। यह साधारण उपजाऊ होती है।

□□□

26. Stamp, L. D.—The Land of Britain, its use and misuse, Third edition, Longman p. 287.
27. King W. J.—The British Isles, Macdonald & Evans, p. 55-56.

ब्रिटेन : आर्थिक ढाँचा

ब्रिटेन की भौगोलिक परिस्थितियों विशेषकर सीमित प्राकृतिक साधन, सीमित भू-क्षेत्र, द्वीपीय स्थिति आदि तत्वों से प्रभावित यहाँ का आर्थिक ढाँचा इस प्रकार खड़ा हुआ है जिसमें उद्योग एवं व्यापार—दो प्रमुख स्तम्भ हैं। कृषि योग्य भूमि से आवश्यकता का केवल 50% खाद्यान्न प्राप्त होता है। शेष के लिए उसे विदेशों पर निर्भर करना पड़ता है। स्वाभाविक है कि वह विदेशों को अपने यहाँ के तैयार औद्योगिक माल भेजकर खाद्यान्न व अन्य आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करे। लेकिन उद्योगों के विकास हेतु जिन आधारभूत वस्तुओं की आवश्यकता होती है उनमें भी कोयला के अतिरिक्त यहाँ अन्य वस्तुएँ नगण्य हैं। कोयला के अतिरिक्त थोड़ी सी मात्रा में टिम्बर, ऊन, खालें, घटिया किस्म का लोहा आदि मिल जाते हैं। इस प्रकार कच्चे मालों के लिए भी उसे विदेशों का ही मुँह ताकना पड़ता है। द्वितीय विश्व युद्ध से पहले तक जबकि ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत अनेक अफ्रेशियाई देश थे, कच्चे मालों की समस्या इतनी भीषण नहीं थी। परन्तु युद्धोत्तर दिनों में विश्व का राजनैतिक ढाँचा बदला, उपनिवेश समाप्त हुए तो ब्रिटेन जैसे देश के सामने न केवल कच्चे माल वरन् उपयुक्त बाजारों की समस्या भी भीषण रूप से सामने आई। अफ्रेशियाई देशों में भी उद्योगों के प्रति रुचि जाग्रत हुई। इधर अमेरिका, रूस तथा जापान विश्व बाजारों में बड़ी तेजी से बढ़े। इन सबका परिणाम यह हुआ कि ब्रिटेन का आर्थिक ढाँचा चरमराता चला गया। दोनों विश्व युद्धों ने आर्थिक पतन में और भी सहयोग दिया। खैर, जैसे तैसे अमेरिका की मदद से युद्धोत्तर दिनों में आर्थिक हालत में कुछ सुधार हुआ। पर बदली हुई परिस्थितियों में यह महसूस किया गया कि आर्थिक नीतियों पर पुनर्विचार किया जाए। अतः 1962 में 'राष्ट्रीय आर्थिक विकास समिति' का गठन किया गया। 1964 में वित्त मंत्रालय से राष्ट्रीय आर्थिक योजना पर कदम उठाने को कहा गया। सितम्बर 1965 में योजना आयोग की तरफ से 'राष्ट्रीय योजना पत्र' प्रकाशित हुआ जिसमें बदली हुई परिस्थितियों को ध्यान में रखकर अनेक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। 1970 तक राष्ट्रीय आय व उत्पादन में 25% की वृद्धि का लक्ष्य रखा गया एवं सोचा गया कि योजना के मार्ग से ब्रिटेन अपनी आर्थिक हालत में सुधार कर लेगा।

इधर ब्रिटेन को यूरोपियन साझा बाजार का भी सदस्य बना लिया गया है। निस्संदेह इससे ब्रिटेन को लाभ होगा।

कृषि :

जलवायु की दृष्टि से समस्त ग्रेट ब्रिटेन किसी न किसी प्रकार के कृषि कार्य के लिए उपयुक्त है परन्तु कृषि योग्य भूमि का अभाव होने से ब्रिटेन को खाद्यान्नों के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। उत्तरी-पश्चिमी उच्च प्रदेश, पीनाइन श्रृंखला, वेल्स के उच्च प्रदेश आदि सब मिलकर देश की दो तिहाई से अधिक भूमि को फसली कृषि के अयोग्य बनाए हुए हैं। हाँ, चूँकि ये मूर घास से ढके हुए हैं अतः पशुचारण सम्भव है। 18वीं शताब्दी तक यानी औद्योगिक क्रांति से पूर्व ब्रिटेन एक कृषि प्रधान देश था, जनसंख्या कम थी अतः जितनी भूमि कृषि योग्य थी उससे पूर्ति हो जाती थी। औद्योगिक विकास के बाद कृषि का महत्व घटा परन्तु दोनों विश्व युद्धों ने कृषि का महत्व उजागर किया। क्योंकि शान्ति के समय में तो यह सम्भव है कि विदेशों से खाद्यान्न आयात कर लिए जाएँ परन्तु युद्ध के दिनों में यह सम्भव नहीं होता। अतः भूगोल वेत्ता श्री डडले स्टैम्प के नेतृत्व में सारे देश का भू-सर्वेक्षण करके कृषि-भूमि के विकास एवं भूमि के प्रत्येक टुकड़े के सदुपयोग के हर सम्भव प्रयत्न किए गए। भू-उपयोग सर्वेक्षण से मालूम पड़ा कि देश में लगभग 3 मिलियन एकड़ भूमि अधिवासों, उद्योग-संस्थानों व यातायात में संलग्न है। यह भूमि देश के कुल भू-भाग का केवल 6% होती है लेकिन राष्ट्रीय आय के 90% से अधिक भाग के लिए उत्तरदायी है।

वर्तमान में प्रत्येक 100 व्यक्तियों में से केवल एक व्यक्ति कृषि कार्य में लगा है। यह अनुपात बहुत कम है परन्तु इसका कारण कृषि के प्रति रुचि का अभाव नहीं वरन् कृषि का यांत्रिक होना एवं आधारभूत कारण के रूप में कृषि योग्य भूमि का सीमित होना है। निम्न सारणी द्वारा ब्रिटेन का भू-उपयोग स्पष्ट होता है—

ब्रिटेन में भू-उपयोग
(एकड़ों में)

	कुल भू-क्षेत्र	ऊबड़ खाबड़ भूमि (चारण संभव)	स्थायी चारागाह	कृषि योग्य
इंगलैण्ड	32,030,000	3,169,000	8,111,000	13,250,000
वेल्स तथा मनमाउथ	5,100,000	1,595,000	1,809,000	768,000
स्कॉटलैण्ड	19,071,000	12,162,000	1,095,000	3,203,000
मैन द्वीप	141,000	45,000	22,000	56,000

सारणी से स्पष्ट है कि कृषि योग्य भूमि का अधिकांश भाग इंगलैंड एवं स्कॉटलैंड में है। अगर ब्रिटेन के धरातलीय स्वरूप का स्मरण किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि इन कृषि योग्य प्रदेशों का विस्तार इंगलैण्ड के दक्षिण-पूर्व में स्थित निचले प्रदेशों एवं स्कॉटलैण्ड के मध्य में स्थित उस निचली मैदानी पट्टी में है जिसे क्लाइड, हे तथा फोर्थ आदि नदियाँ जल आप्लावित करती हैं। इन मैदानी भागों में अधिकांशतः चूने युक्त दोमट मिट्टी पाई जाती है। जलवायु यहाँ की टंडी-तर है ही। ये सभी परिस्थितियाँ मिलकर ब्रिटेन के कृषि योग्य भागों को गेहूँ, राई, जौ, जई, चुकंदर, आलू की कृषि के लिए उपयुक्त घोषित करती हैं। वस्तुतः यही फसलें यहाँ मुख्य रूप से पैदा की जाती हैं। भूमि की सीमितता के कारण यहाँ कनाडा, रूस या अमेरिका की तरह कृषि की विशिष्ट मेखलाओं का होना तो सम्भव नहीं है फिर भी जलवायु के आधार पर कुछ प्रदेश कुछ विशिष्ट फसलों के क्षेत्र बन गए हैं। उदाहरणार्थ गेहूँ इंगलैंड के दक्षिणी-पूर्वी निचले भागों में जाता है जहाँ चूना व रेता युक्त दोमट मिट्टी है। आर्द्रता भी इन प्रदेशों में पश्चिमी भागों की तुलना में कम (परन्तु गेहूँ के लिए उपयुक्त) है। इसके विपरीत आलू को ज्यादा ठंड एवं अधिक नमी की आवश्यकता होती है। अतः यह उत्तरी एवं पश्चिमी भागों में बोया जाता है।

औद्योगिक क्रांति से पूर्व ब्रिटेन के कृषि प्रदेशों के रूप भी भारत के कृषि प्रदेशों जैसे ही थे। बैल के स्थान पर घोड़ा था। मानव श्रम का उपयोग होता था। निचले भागों में 'ओपिन फील्ड सिस्टम' से खेती होती थी। छोटे छोटे गाँव थे। गाँव स्वावलम्बी थे। कई खेतों के बीच में एक सार्वजनिक चरागाह हुआ करता था जिसमें सारे गाँव के जानवर चरते थे। जमींदार वहाँ भी थे जो अपनी जमीन को अनाज या लगान के बदले किराए पर देते थे। साल में प्रायः एक ही फसल हुआ करती थी। बहुत से लोग पशु चराने का धंधा करते थे। पशुओं में भेड़ मुख्य थी। यही कारण है कि मध्य युगों से ही ब्रिटेन अपने ऊन-उत्पादन के लिए प्रसिद्ध रहा है। 19 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब जमींदारों के प्रति असंतोष उठा तो भूमि-बंदोबस्त किया गया। 1845 में एक नियम बनाया गया जिसे "जनरल एनक्लोजर एक्ट ऑफ 1845" के नाम से जाना जाता है। इस नियम के अनुसार कृषिगत जनसंख्या को निम्न चार श्रेणियों में विभक्त किया गया[29]—

(1) जमींदार–जिनके पास भूमि ज्यादा थी, किराए पर उठाकर लगान वसूलते थे।

(2) स्वयं-भू-किसान–जिनके पास उपयुक्त मात्रा में अपनी जमीन थी और उसे जोत-बो कर अपना गुजारा करते थे।

29. Hoffman, G. w.—A Geography of Europe, methuen p. 185-6.

(3) किराए की भूमि लेकर खेती करने वाले किसान–ये जमींदारों से जमीन किराए पर लेकर खेती करते थे। कृषि प्रदेशों में ऐसे ही किसानों का बाहुल्य था।

(4) कृषि-श्रमिक–दैनिक मजदूरी पर कार्य करने वाला मजदूर।

उपरोक्त में से तीसरी श्रेणी के किसान ही ब्रिटेन के कृषि क्षेत्रों का वास्तविक किसान या वास्तविक ग्रामीण हैं। वह जमीन का मालिक अवश्य नहीं है परन्तु उसे कानूनन हटाया नहीं जा सकता। 1950 में राष्ट्रसंघ के खाद्य एवं कृषि संगठन ने एक सर्वेक्षण किया जिससे पता चला कि इंग्लैण्ड एवं वेल्स की कुल कृषि योग्य भूमि का 49% भाग किराए पर उठा था, 36% स्वयं-भू किसानों के पास था तथा 15% भाग ऐसा था जो कुछ किराए पर उठा तथा कुछ खुद मालिकों द्वारा बोया जाता था स्कॉटलैण्ड के लिए ये आंकड़े क्रमश: 60,36 व 4 प्रतिशत थे।[30]

वर्तमान में ब्रिटेन के कृषि क्षेत्रों में (जून 1982 के आंकड़ों के अनुसार) 605,000 व्यक्ति लगे हैं। इनमें से 520,000 पुरुष एवं 85,000 स्त्रियां हैं। पूर्व वर्षों में यह संख्या अधिक थी। इस प्रकार कृषि विकास की नीति के बावजूद भी कृषि संलग्न जनसंख्या कम होती जा रही है जिसका प्रमुख कारण यंत्रीकरण का बढ़ना है। औद्योगीकरण के बाद कृषि का यंत्रीकरण बड़ी तेजी से प्रारम्भ हुआ और आज स्थिति यह है कि यहां खेतों में लगे ट्रैक्टर्स की संख्या यहां के फार्म्स की संख्या से ज्यादा है। 5 लाख से अधिक ट्रैक्टर्स इस समय खेतों में कार्यरत हैं। यह संख्या 1939 की संख्या से लगभग 8 गुनी है। इसी गति से पशुचारण व दुग्ध व्यवसाय में विद्युत यंत्रों का उपयोग बढ़ा है।

ब्रिटेन में कृषि-संलग्न भूमि का वितरण–1982

(हजार हैक्टेयर में)

	1981	1982
1. अनाज वाली फसलें (गेहूं, जौ, जई, मक्का आदि)	3,979	4,030
2. हरी फसलें (मटर, आलू, चुकंदर, सब्जियां)	1,014	976

30. The Statesman's year Book 1984--85-

3. परती भूमि	76	55
4. फल	66	61
5. ल्यूसर्न एवं अन्तर्गत घासें	1,911	1,859
6. स्थायी चारागाह	5,103	5,097

ब्रिटेन का कुल भू-क्षेत्र 24 मिलियन हैक्टेयर है जिसमें से लगभग तीन चौथाई (18.72 मि० हैक्टे०) भाग कृषि में संलग्न है। विविध फसलों में इसका वितरण उक्त सारिणी के अनुसार है। शेष एक चौथाई भू-भाग में पर्वतों, जंगलों तथा अधिवासों का विस्तार है। सदा उत्पादन रत फार्मों का औसत आकार 118 है० (292 एकड़ है। ब्रिटेन में कुल फार्म्स 2,42,300 हैं जिनमें आधे से अधिक सदा उत्पादन रत हैं। देश के कुल कृषि उत्पादन का 90% भाग इन्हीं फार्मों से प्राप्त होता है। चारागाहों का आनुपातिक औसत फसली कृषि से ज्यादा है जिसका कारण सम्भवतः यही है कि यहां की ठंडी-तर जलवायु खाद्यान्नों की कृषि की अपेक्षा पशुपालन एवं दुग्ध व्यवसाय के लिए ज्यादा उपयुक्त है। देश में प्रजातंत्री व्यवस्था है। व्यापार नीति स्वतन्त्र है। उद्योग प्रधान देश है अतः यहां का पढ़ा-लिखा किसान सदा उन फसलों को ज्यादा महत्व देता है जो कम भूमि, कम समय में तैयार होकर आर्थिक दृष्टि से ज्यादा लाभकारी हों। खाद्यान्नों की ओर रुचि कम होने के कारण यह भी है कि अर्जेन्टाइना, अमेरिका, कनाडा आदि देशों से यहां खाद्यान्न आसानी से पर्याप्त मात्रा में आयात हो जाते हैं। यह तथ्य कृषि की विभिन्न शाखाओं में लगी भूमि से स्पष्ट है।

प्रमुख कृषि फसलें :

जैसा कि पूर्वोल्लेख है कि ब्रिटेन की ठंडी-तर जलवायु में गेहूं, जौ, जई, मक्का, राई, चुकन्दर, आलू आदि कृषि के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। इन्हीं फसलों ने फसली कृषि में संलग्न भूमि का ज्यादातर भाग घेरा हुआ है। इनमें संलग्न भूमि व उत्पादन मात्रा निम्न प्रकार है—

प्रमुख फसलों में संलग्न भूमि व उत्पादन-1982

कुल संलग्न भूमि (हजार हैक्टे० में)[31]

	गेहूं	जौ	जई	बीन्स	आलू	चारे की फसलें	चुकंदर
भूमि —	1,663	2,222	129	52	192	166	204
उत्पादन—	10,310	10,960	575	229	6,875	7,565	10,005

कुल उत्पादन (हजार टनों में)

31. The Statesman's Yeer Book 1984--85.

गेहूँ—गेहूँ के लिए ब्रिटेन में सर्वोत्तम भौगोलिक परिस्थितियाँ दक्षिणी-पूर्वी इंग्लैण्ड में हैं। यहाँ जाड़ों में तापक्रम 45–50° फ० तथा गर्मियों के तीन महीनों में 60–65° फ० रहता है। वर्षा 25 इंच के लगभग होती है। मिट्टी दोमट है जिसमें यत्र-तत्र चिकनी मिट्टी के अंश भी मिलते हैं। गेहूँ जैसी शीतोष्ण कटिबंधीय फसल के लिए ये परिस्थितियाँ आदर्श हैं। थेम्स के उत्तर में स्थित कांउटीज—लिंकन, सफोक, एसेक्स, हटिंगटन, कैम्ब्रिज तथा इली द्वीप आदि गेहूँ उत्पादन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। यहाँ तीन महीने कड़कदार धूप पड़ती है जो गेहूँ को पकाने के लिए उपयोगी है। प्रायः पतझड़ के अंत में जमीन की तैयारी प्रारम्भ हो जाती है। जनवरी-फरवरी में बीज का रोपण कर दिया जाता है। गर्मियों के उत्तरार्द्ध तक फसल पककर तैयार हो जाती है। यांत्रिक कृषि होने से प्रत्येक कार्य मशीनों द्वारा होता है। गेहूँ के अन्य क्षेत्रों में पूर्वी मिडलैण्ड प्रदेश, होल्डरनेस के मैदान, योर्कशायर वॉल्ड से पदीय क्षेत्र तथा थेम्स के दक्षिण में स्थित कुछ कांउटीज उल्लेखनीय हैं। स्कॉटलैण्ड अपनी अत्यधिक ठंड के कारण गेहूँ के लिए उपयुक्त नहीं है। यहाँ गेहूँ के पकने लायक तापक्रमों की अवधि बड़ी छोटी होती है। केवल पूर्वी तटीय निचले भागों में कुछ उपयुक्त परिस्थितियाँ हैं जहाँ पूर्वी लोथियन, फाइफशायर तथा एन्गुज में गेहूँ की खेती की जाती है।

यद्यपि कुल उत्पादन मात्रा (लगभग 35 लाख टन) अन्य बहुत से देशों से कम है और इसीलिए गेहूँ का भारी मात्रा में आयात किया जाता है परन्तु प्रति एकड़ उत्पादन अच्छा लगभग 50 बुशल है। यह मात्रा कनाडा एवं आस्ट्रेलिया से ज्यादा है। ब्रिटेन में गेहूँ के बजाए आटे की सप्लाई का रिवाज ज्यादा है। अतः देश में उत्पादित व आयातित समस्त गेहूँ को विशाल चक्कियों में पीस कर पैकेटस में बंद कर बाजारों को भेजा जाता है। लन्दन, ब्रिस्टल, लिवरपूल, मर्सी साइड, चैम्स फोर्ड, कोल चेस्टर तथा इप्सविच इसके बड़े केन्द्र हैं। आटा पिसाई उद्योग का सबसे बड़ा संगठन 'रैंक्स' है (चित्र 7 देखें)।

जई—जई एक ऐसी फसल है जिस पर तापक्रम, पानी, मिट्टी आदि की परिस्थितियों के बन्धन ज्यादा लागू नहीं होते। यही कारण है कि उत्तर के उन क्षेत्रों में जहाँ ठंड के कारण गेहूँ की खेती सम्भव नहीं है, जई पैदा की जाती है। स्कॉटलैण्ड की यह प्रधान फसल है। यहाँ यह एबरडीन के चारों ओर, फाइफशायर, एन्गुज, बैंक, आर्कनीज आदि काउन्टीज में पैदा की जाती है। इंग्लैण्ड के उत्तरी आर्द्र भागों में विशेषकर कम्बरलैण्ड में यह गेहूँ तथा जौ के साथ परस्पर क्रम से बोई जाती है। पूर्वी आंगलिया प्रदेश में भी इसकी खेती की जाती है। आयरलैण्ड का यह सर्व प्रमुख फसली उत्पादन है जिसका विस्तार कोर्क,

सभी परिस्थितियाँ स्कॉटलैंड में ज्यादा उपयुक्त मात्रा में मिलती है अतः आलू की अधिकतर खेती उत्तरी भागों एव स्कॉटलैंड में ही की जाती है। स्कॉटलैंड के एन्गुज एवं फाइफ क्षेत्र मुख्य फसल के लिए विख्यात हैं। जबकि आयरशायर के निकट गिरवान तथा एन्गुज में बीज वाला आलू बोया जाता है। इंगलैंड में दक्षिणी लंकाशायर, दक्षिणी योर्कशायर, नोरफोक, लिंकनशायर तथा ऐसेक्स महत्वपूर्ण आलू उत्पादक जिले हैं।

चुकंदर-चुकदर के प्रधान क्षेत्र फेन प्रदेश, नोरफोक, लिंकनशायर, ऐसेक्स (इंगलैंड) तथा फाइफशायर (स्कॉटलैंड) हैं। इंगलैंड की अधिकतर शक्कर चुकंदर से ही बनाई जाती है। शक्कर बनाने की मिलें इप्सविच, इली, किंग्सलिन, पीटरबर्ग (इंगलैंड) तथा कूपर (स्कॉटलैंड) आदि नगरों में केन्द्रित हैं। आलू की तरह चुकदर भी एक जड़ वाली फसल है जिसके लिए ठंडी-तर जलवायु, दोमट मिट्टी एव फसल कटाई के दिनों में मीठे के अंश में वृद्धि करने के लिए धूप की आवश्यकता होती है। चूँकि गन्ना ब्रिटेन जैसे उत्तरी देश में पैदा हो नहीं सकता अतः शक्कर के उद्देश्य से चुकदर की खेती इसी शताब्दी के प्रारम्भ में यहाँ शुरू की गई थी। चूँकि परिस्थितियाँ उपयुक्त थी अतः खेती पनप गई। वर्तमान में प्रतिवर्ष 7 मिलियन टन से अधिक चुकंदर पैदा होती है। आलू में संलग्न भूमि में कमी करके चुकंदर का भू-क्षेत्र बढ़ाया जा रहा है। इस समय लगभग $4\frac{1}{2}$ लाख एकड़ भूमि में चुकंदर की खेती की जाती है।

पशुपालन एवं दुग्ध व्यवसाय :

ठंडी एवं तर समुद्री जलवायु, प्राकृतिक घास क्षेत्र, चूने युक्त मिट्टी एवं कृषि योग्य भूमि का अभाव आदि प्राकृतिक परिस्थितियों ने ब्रिटेन में पशुपालन व्यवसाय को सदा से प्रोत्साहित किया है। यहाँ 14वीं शताब्दी से ही भेड़ पालन व्यवसाय चला आ रहा है तथा ऊन यहाँ के प्रमुख उत्पादनों में रही है। औद्योगिक विकास के साथ-साथ जैसे-जैसे बड़े-बड़े नगरों में मनुष्यों का केन्द्रीकरण हुआ उनकी पशु उत्पादनों सम्बन्धी मांग (दूध, मक्खन, पनीर आदि) भी बढ़ी। अतः पशुपालन एवं दुग्ध व्यवसाय को कृषि के एक प्रमुख अंग के रूप में वैज्ञानिक स्तर पर किया जाने लगा। प्राकृतिक घास क्षेत्रों का ही विस्तार काफी था, साथ ही अच्छी घास वाले स्थाई चरागाह भी विकसित किए गए। वर्तमान में सभी प्रकार के घास क्षेत्रों का विस्तार इंगलैंड तथा वेल्स में लगभग $10\frac{1}{3}$ मिलियन एकड़, आयरलैंड में $7\frac{1}{2}$ मिलियन एकड़ तथा स्कॉटलैंड में 13 मिलियन एकड़ भूमि पर है।

चूँकि दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड धरातलीय दृष्टि से नीचा है, घना बसा है, बड़े-बड़े नगर वहीं स्थित हैं अतः दुग्ध उत्पादन से सम्बन्धित पशु मुख्यतः इस प्रदेश में पाले जाते है। चिकनी मिट्टी के क्षेत्र गाय एवं भैंसों के पालन के लिए सर्वथा

उपयुक्त सिद्ध हुए हैं। स्कार्पलैंडस एवं डाउन्स में भेड़ें भी पाली जाती हैं। वस्तुतः दुग्ध उत्पादनों का बहुत जल्दी खराब होने का डर रहता है अतः अधिकतर डेरी क्षेत्र प्रायः बड़े नगरों के निकट हैं। इस व्यवसाय का पूर्णतः यंत्रीकरण कर दिया गया है। अच्छी नस्ल की गायों जैसे हरफोर्ड या डेवोन के एकत्रीकरण पर जोर दिया गया है। परिणाम यह हुआ है कि यहाँ की अधिकतर गाएँ इन नस्लों से सम्बन्धित हैं। ये नस्लें अपने दूध के लिए विश्व विख्यात हैं।

उत्तर एवं पश्चिम के उच्च प्रदेशों में जहाँ मूर की अधिकता है ऊन के लिए भेड़ें पाली जाती हैं। ठंड की मात्रा बढ़ने के साथ-साथ भेड़ों पर ऊन की मात्रा एवं किस्म भी अच्छी होती जाती है। वैसे यहाँ की अधिकतर भेड़ अच्छी नस्लों से सम्बन्धित हैं। भेड़ पालन के मुख्य क्षेत्र पीनाइन श्रृंखला, कम्बरलैंड, वेल्स, स्कॉटलैंड के उच्च प्रदेश, स्कार्पलैंडस तथा कार्नवाल हैं। ब्रिटेन में 30 से अधिक नस्लों की भेड़ पाली जाती हैं जिनमें कुछ केवल ऊन के लिए, कुछ केवल माँस के लिए तथा कुछ दोनों उद्देश्यों के लिए पाली जाती हैं। अच्छी, चमकदार एवं लम्बे रेशे वाली ऊन के लिए कुछ विशेष नस्लें जैसे लिंकन, डेवोन, रोमनी, वेन्सली डेल, मार्श तथा लीसेस्टर आदि उल्लेखनीय हैं। इनमें भी लीसेस्टर काफी प्रचलित है। कई प्रदेशों में छोटे रेशे वाली भेड़ पाली जाती हैं। इन नस्लों में श्रोपशायर, साउथ डाउन, सफोक, विल्टशायर आदि उल्लेखनीय हैं। छोटी ऊन की आवश्यकता होजरी के साधारण वस्त्रों के लिए होती है अतः इन भेड़ों का भी कम महत्व नहीं है। कई नस्लें इस प्रकार की विकसित की गई हैं जो उत्तर के ऊँचे एवं ठंडे प्रदेशों की कठोर जलवायु में आसानी से रह सकें। इन नस्लों में वेल्स, चेवियट, स्वाले डेल, ब्लैकफेस, शैटलैंड एवं हार्डविक आदि महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

इनके अतिरिक्त अनेक अच्छी नस्लें आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अर्जेन्टाइना व दक्षिणी अफ्रीका से लाकर विकसित की गई हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध से आई नस्लों एवं ब्रिटिश नस्लों के मिश्रण के फलस्वरूप कई अच्छी नस्लों का आविर्भाव हुआ है।

भेड़ों के फार्म्स प्रायः बड़े होते हैं। विशेषकर स्कॉटिश दक्षिणी उच्च प्रदेशों में तो इनका आकार बहुत बड़ा है। असल में फार्म्स का आकार एवं भेड़ों की संख्या अमुक क्षेत्र में मूर घास की सघनता पर निर्भर करती है। दूसरे, घास क्षेत्रों के ये भू-भाग ऐसे होने चाहिए जिनमें पानी न भरा रहे। वेल्स व स्कॉटलैंड के मूर क्षेत्रों में पर्याप्त वर्षा होती है परन्तु ढाल के कारण पानी शीघ्र बह जाता है। अगर जल प्रवाह का यह स्वरूप न हो तो भेड़ों के खुर रोग होने का डर रहता है। स्कॉटलैंड के फार्म्स में मिश्रित नस्लों का प्रचलन ज्यादा है। शैटलैंडस की लम्बी ऊन वाली भेड़ों ने शैटलैंडस-ऊन एवं शैटलैंडस-शॉल को बाजारों में आकर्षण की वस्तु बना

दिया है। स्कॉटलैंड के मध्यवर्ती निचले भागों में भी कई नस्लों की भेड़ें पाली जाती है। यह क्षेत्र सदा से ब्रिटेन के महत्वपूर्ण ऊन-भेड़ क्षेत्रों में से रहा है। विशेषकर रॉक्सबर्ग कांउटी तो मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं जहाँ हॉविक ऊन व्यवसाय का एक बड़ा केन्द्र है। यहाँ कई हॉजरी की मिल हैं।

आयरिश गणराज्य में विकलो तथा डोनेगल पर्वतीय क्षेत्र, उत्तर में स्थित मीथ कांउटी एवं दक्षिण में स्थित वेक्सफोर्ड तथा कारलो कांउटीज भेड़-पालन के लिए उल्लेखनीय है उत्तरी आयरलैंड में मूर्ने, स्पैरिन आदि पर्वतों तथा एन्टरिम के पठारों पर भेड़ चरती हुई नजर पड़ती हैं। वेल्स में भी भेड़ पालन प्रायः उच्च प्रदेशों में प्रचलित है। मोंटगुमरीशायर का वेलसपूल नगर कभी ऊन एवं भेड़ों का बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। इंगलैंड में वैसे तो प्रायः सभी प्रदेशों में भेड़ पालन प्रचलित है परन्तु सघनता की दृष्टि से पीनाइन श्रृंखला के ढाल प्रदेश, कम्बरलैंड, वैस्टमोरलैंडस, नोर्थम्पटन उच्च प्रदेश, कॉटस-वॉल्ड, योर्कशायर तथा लिकनशायर के खड़िया के उच्च प्रदेश, कैंट एवं ससैक्स के डाउन्स प्रदेश उल्लेखनीय हैं। 1000 फीट की ऊँचाई पर बसा कम्बरलैण्ड का एलसटन नगर इंगलैण्ड का सबसे बड़ा भेड़-ऊन केन्द्र है। पीनाइन्स में स्थित नगर स्किपटन का नाम सम्भवतः 'शीप टाउन' का ही अपभ्रंश है। कैण्डल नगर का ऊन-उद्योग लेकडिस्ट्रिक्ट में प्रचलित भेड़ पालन के ही फलस्वरूप है।

भेड़ों के फार्म्स पर तीन-चार समय बहुत अधिक व्यस्तता रहती है। बसंत ऋतु के प्रारम्भ में जो मेंमनों का माँस बाजार के लिए तैयार किया जाता है। फार्म्स में ही पैक-करने की छोटी-छोटी फैक्ट्रियाँ होती हैं। इन दिनों ठंड होने के कारण खराब होने का वैसे भी इतना डर नहीं रहता। गर्मियाँ प्रारम्भ होते ही ऊन की कटाई और धुलाई बड़े जोर शोर से प्रारम्भ हो जाती है। पतझड़ का मौसम भेड़ खरीदने और बेचने का समय होता है। ट्रांस ह्यूमेंस की प्रथा यहाँ भी है। यथा, जाड़ों के दिनों में ठंड से बचाने के लिए भेड़ों को निचली घाटियों में उतार लिया जाता है। ऊन के उत्पादन में ब्रिटेन दुनियाँ के महत्वपूर्ण देशों में से एक है। प्रतिवर्ष यहाँ लगभग 325 मिलियन पौंड ऊन का रेशा तैयार होता है। भेड़ों की संख्या लगभग 33 मिलियन है। इनमें वे भेड़ भी शामिल हैं जो केवल माँस के लिए पाली जाती हैं। पर इनकी संख्या अनुपातिक रूप में बहुत कम है।

माँस के लिए भेड़ों की तुलना में बड़े ढ़ोरों का व्यवसाय ज्यादा आर्थिक होता है। ब्रिटेन में लगभग 13.2 मिलियन ढ़ोर (1982) पाले जाते हैं जिनमें से कुछ तो मुख्यतः माँस एवं खाल के लिए ही हैं। अधिकांश दुग्ध व्यवसाय के लिए तथा शेष का उपयोग मिश्रित रूप में होता है। माँस वाले जानवर पूर्व में स्थित

शुष्क प्रदेशों में पाले जाते हैं। यथा, स्कॉटलैण्ड में चीकेनी द्वीप, बैंफ, बूचन, एन्गुज, फाइफशायर तथा ट्वीड निचले प्रदेश, इंग्लैण्ड में मिडलैण्ड प्रदेश विशेषकर श्रोपशायर, हर्टफोर्ड की नोर्थम्बरलैण्ड एवं लेकडिस्ट्रिक्ट के निचले प्रदेश, कैण्ट, दक्षिणी-पश्चिमी पैनिनशुला तथा वेल्स में मोंटगुमरी, ब्रैकन तथा राडनोर क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ प्रमुखतः माँस के लिए पाले गए ढोर ही चराए जाते हैं। इस उद्देश्य के लिए पाली गई नस्लों में एबरडीन-एन्गुज, हरफोर्ड, डेवोन, ससैक्स, वेल्स ब्लैक, शोर्थोन तथा गैलोवे आदि उल्लेखनीय हैं। चमड़े एवं जूते से सम्बन्धित मुख्य केन्द्र द० इंग्लैण्ड में ही स्थित हैं। नोर्थम्पटन, लीसैस्टर, स्टैफोर्ड, लिवरपूल आदि मुख्य चर्म-उद्योग केन्द्र हैं। देश के आधे से अधिक जूते मिडलैण्ड की चार जूता कम्पनियाँ—बैरट, लोटस, रैण्डल तथा सैक्सोन तैयार करती हैं।

दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित पशुओं के लिए रसदार घास वाले क्षेत्र सर्वोत्तम रहते हैं क्योंकि दूध की मात्रा बढ़ने के लिए इस प्रकार की घास उपयुक्त रहती है। ऐसी घास 30 इंच से ज्यादा वर्षा वाले उन क्षेत्रों में सम्भव है जहाँ गर्मियाँ ठंडी तथा तर हों। यथा, उत्तरी आयरलैण्ड में लागान घाटी तथा लॉफनीघ क्षेत्र, वेल्स में वेल-ऑफ-क्लाइड, पैम्ब्रोक तथा ग्वैन्ट का मैदान स्कॉटलैण्ड में लैनार्कशायर, आयरशायर डंडी तथा एडिनबरा क्षेत्र एवं इगलैण्ड में श्रोपशायर (मिडलैण्ड दक्षिणी लंकाशायर चेशायर आदि आदर्श दुग्ध व्यवसायी क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में गर्मियाँ ठंडी (60° फै०) तथा जाडे सुहावने (44° फै०) होते हैं। यहाँ से निकटवर्ती औद्योगिक नगरों को दूध, मक्खन, पनीर तथा अन्य उत्पादन भेजे जाते हैं। ब्रिटेन में लगभग 6 मिलियन दूध देने वाले जानवर हैं इनमें गायों की ही अधिकता है। अधिकांश गाएँ शोर्थोन, आयरशायर तथा फ्रिजियन, नस्ल की हैं। इन विकसित नस्लों के अतिरिक्त कुछ स्थानीय नस्लें जैसे जर्सी, एल्डरनीज तथा गुअरनीज भी प्रचलित हैं। काले-सफेद रंग की फ्रिजियन गाय सर्वाधिक दूध देती है। इगलैण्ड एवं वेल्स के अधिकांश भागों में यही पाली जाती है।

ब्रिटेन में ताजा दूध का प्रचलन ज्यादा है। यहाँ के निवासी दुग्ध-उत्पादनों की अपेक्षा शुद्ध दूध को ज्यादा पसंद करते हैं। अतः देश में उत्पादित कुल दूध का लगभग 5/6 भाग दूध के रूप में ही खप जाता है। शेष 1/6 के मक्खन, पनीर, केक आदि बनाए जाते हैं। इंगलैण्ड का छेदार एवं सेंट आइवेल पनीर प्रसिद्ध है जो क्रमशः छेदार तथा योविल (सोमर सैट) में तैयार किए जाते हैं। दूध के उचित वितरण के लिए 'मिल्क मार्केटिंग बोर्ड' की स्थापना की गई है जो प्रति वर्ष लगभग 2000 मिलियन गैलन दूध ब्रिटेन निवासियों की आवश्यकता की पूर्ति हेतु प्रस्तुत करता है।

सूअर, मुर्गी एवं घोड़ा पालन भी ब्रिटेन में प्रचलित है। मुर्गियाँ मुख्यतः दुग्ध व्यवसायी क्षेत्रों में ही पाली जाती हैं। आधुनिकतम मुर्गी पालन केन्द्रों में बैटरी

सिस्टम से अण्डे पैदा किए जाते हैं और इस दिशा में अभूतपूर्व सफलता मिली है। उत्तरी इंगलैंड के फाइलडे तथा कावेन जिले एवं पूर्व में एसेक्स, नौरफोक एवं सफोक जिले मुर्गी पालन के लिए महत्वपूर्ण हैं। देश में मुर्गियों की संख्या लगभग 135 मिलियन हैं। अंडों की दृष्टि से ब्रिटेन पूर्ण स्वावलम्बी है। ब्रिटेन के 8 मिलियन सूअरों में अधिकांश 'लार्ज व्हाइट' नस्ल के हैं। सूअर पालन भी दुग्ध व्यवसायी क्षेत्रों में प्रचलित है। जैसे आयरशायर, लैंनाकशायर, लोथियन (स्कॉटलैंड) रिबिल घाटी, चेशायर, कैंट, तथा पूर्वी आंगलिया (इंगलैंड) आदि क्षेत्र इस दिशा में अग्रणी हैं। घोड़ों का उपयोग अब केवल आयरलैंड के कृषि क्षेत्रों तक ही सीमित रह गया है।

ब्रिटिश कृषि : उत्पादन एवं मांग पूर्ति
(प्रतिशत में)

खाद्य पदार्थ	1971–73 औसत	1982
मांस	75	85
अंडे	98	100
दूध (केवल मानवीय उपयोग हेतु)	100	100
पनीर	55	71
मक्खन	20	64
शक्कर	36	54
गेहूं	53	106
आलू (मानव उपयोग हेतु)	95	85

उपरोक्त आंकड़ों से सुस्पष्ट है कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ब्रिटेन ने खाद्य पदार्थों में स्वावलम्बन की दिशा में जो प्रयास किए उनमें उसे भारी सफलता मिली है। मांग-पूर्ति के प्रतिशत पर विचार करने के साथ-साथ हम यह भी ध्यान में रखें कि वहां के भौगोलिक वातावरण सम्बन्धी कठिनाइयों एवं भूमि की कमी के बावजूद इतनी प्रगति की गयी है, तो ब्रिटिश वासियों के परिश्रम का और भी सही स्वरूप उजागर होता है।

कृषि का प्रदेशीकरण (ब्रिटेन के कृषि प्रदेश)

ब्रिटेन जैसे सीमित भू-क्षेत्र एवं द्वीपीय स्थिति वाले देश में अमेरिका की तरह शृंखला बद्ध कृषि प्रदेशों की सम्भावना कल्पनातीत है। इंगलैंड के दक्षिणी-

पूर्वी हिस्से को छोड़कर अधिकांश भाग पर्वतीय पठारी है अतः समतल कृषि-उपयोगी क्षेत्र बहुत कम है । ब्रिटेन को अपने खाद्यान्नों व अन्य कृषि उपजों के लिए विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है । द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में खाद्यान्नों की कमी के कटु अनुभवों से प्रेरित हो ब्रिटिश सरकार ने कृषि विकास की ओर विशेष ध्यान दिया । घास क्षेत्रों को खेतों में परिवर्तित किया गया, किसानों के लिए वित्तीय सहायता दी गयी । दुग्ध व्यवसाय को विस्तृत किया गया । युद्धोत्तर दिनों में मिश्रित कृषि पर जोर दिया गया जिसका परिणाम यह है कि दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड के अधिकांश भागों में आज मिश्रित कृषि ही की जाती है 1939 के बाद से ही फसली-कृषि-संलग्न भूमि के विस्तार के जो प्रयत्न किए जा रहे हैं उनके फलस्वरूप लगभग 30% की वृद्धि हुई है । वृद्धि की गति क्षेत्रीय दृष्टि से असमान है । पूर्वी मिडलैंडस में वृद्धि-प्रतिशत सर्वाधिक है । नवीन कृषि-भूमि में जो पैदा की जाने लगी है । मिडलैंड के विपरीत पश्चिमी वेल्स तथा स्कॉटलैंड में फसली कृषि की भूमि में कमी आयी है । क्योंकि यहाँ पशुपालन व दुग्ध व्यवसाय को प्रोत्साहित किया गया है । भेड़ों के झुण्डों के आकारों में वृद्धि हुई है । इन प्रयत्नों का सुपरिणाम यह हुआ कि आज यह देश यूरोप में सर्वाधिक भेड़ पालने व ऊन पैदा करने वाला देश है । कृषि के प्रत्येक क्षेत्र में सघनता लाने के प्रयास किए जा रहे हैं । कृषि विकास के लिए प्रयत्न करते समय उसके क्षेत्रीय आधार बनाने के भी प्रयत्न किए गए हैं जिनके निर्धारण में भौगोलिक वातावरण की आवश्यकता तथा देश की आर्थिक नीति आदि तत्वों का ध्यान रखा गया है । इस सबके बाद कृषि क्षेत्रों का स्वरूप सामने आया है उसके आधार पर उन्हें मोटे तौर पर पांच समूहों में रखा जा सकता है ।

(1) फसली कृषि प्रदेश ।
(2) मिश्रित कृषि प्रदेश ।
(3) पशु चारण प्रदेश ।
(4) दुग्ध व्यवसाय प्रदेश ।
(5) पर्वतीय भेड़ पालन एवं "क्रोफ्टिंग" प्रदेश ।

उक्त कृषि प्रदेशों का पृथक्-पृथक् अध्ययन करने से पूर्व कुछ बातें जानना वांछनीय है । कृषि का यह प्रादेशीकरण क्षेत्रीय आधार पर न होकर कृषि-क्रियाओं के आधार पर है अतः विविध कृषि प्रदेश एक इकाई के रूप में न होकर बिखरे रूप में हैं । अमेरिका की तरह ब्रिटेन के कृषि क्षेत्रों में एकरूपता नहीं है । एक ही क्षेत्र में कृषि के विविध स्वरूप प्रचलित हैं । प्रदेशों का नामांकन प्रमुख क्षेत्र में बहुतायत से होने वाली कृषि क्रिया के आधार पर किया गया है । तीसरे जहाँ कृषि क्रिया-कलापों का सम्बन्ध है पूर्ववर्ती पृष्ठों में विस्तार से अध्ययन किया गया

है। उनका यहाँ संदर्भ दोहराव मात्र होगा। अतः इस उप-शीर्षक में विशेष ध्यान क्षेत्रीय विभाजन पर दिया गया है।

फसली कृषि प्रदेश—ब्रिटेन के धरातल के मानचित्र को देखने से स्पष्ट होता है कि इंगलैंड का पूर्वी भाग तथा स्कॉटलैंड के उत्तर-पूर्व में तटवर्ती पट्टी ही पूरे हरे रंग से दिखाई गयी है। दूसरे शब्दों में ये भाग ही वस्तुतः समतल और निचले भाग हैं। पूर्वी दिशा में स्थित होने के कारण वर्षा एवं बदली आवरण की अनावश्यक अधिक मात्रा से ये भाग मुक्त रहते हैं। धूपीला मौसम तथा वृद्धि अवधि ज्यादा है। महाद्वीप की ओर उन्मुख होने से ऐतिहासिक समय से ही ये भाग प्रवासी लोगों के आकर्षण तथा बसाव क्षेत्र रहे हैं। इन सारी परिस्थितियों ने मिलकर पूर्वी आंग्लिया प्रदेश को ब्रिटेन का खाद्य भंडार बना दिया है। हर्टफोर्ड, बैडफोर्ड, सफोक, नौरफोक, एसैक्स तथा लिंकन आदि कांउटीज पूर्णतया फसली कृषि में संलग्न हैं। पूर्वी योर्क में भी कृषि का यही स्वरूप है। उत्तरी-पूर्वी स्कॉटलैंड की एबरडीन, एन्गुज तथा मोरेय आदि कांउटीज की संकरी तटवर्ती पट्टियों में जई, आलू तथा चारे की फसलें बोयी जाती हैं।

पूर्वी आंग्लिया प्रदेश ब्रिटेन की अधिकांश गेहूँ तथा चुकंदर उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। थेम्स के उत्तर में स्थित कांउटीज जैसे लिंकन, सफोक, एसैक्स, कैम्ब्रिज तथा हटिंगटन एवं इली द्वीप गेहूँ के उत्पादन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। आंग्लिया प्रदेश में चिकनी तथा दोमट मिट्टी है। जाड़ों में तापक्रम 45° फै. से नीचे नही जाता। गर्मियों में कम से कम तीन चार माह की अवधि ऐसी होती है जब तापक्रम 65° फै. से ऊपर रहता है। आंग्लिया प्रदेश के फेन क्षेत्र ब्रिटेन को अधिकांश चुकंदर प्रस्तुत करते हैं। इनके अतिरिक्त आंग्लिया प्रदेश में आलू, राई, जौ, जई, चारे की फसलें आदि पैदा की जाती है। स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति के लिए दुग्ध व्यवसाय भी प्रचलित है। चुकंदर से शक्कर बनाने की मिलें इस प्रदेश में विद्यमान है। चरागाहों के अन्तर्गत भूमि बहुत सीमित है। वेल्स तथा स्कॉटलैंड मे धरातल के असमान होने के कारण फसली कृषि सम्भव नहीं है। स्कॉटलैंड की फाइफशायर, लोथियन, एन्गुज, आदि कांउटीज में ऐसी फसलें जो नीचे तापक्रम में पनप सकती हैं पैदा की जाती हैं। इनमे आलू, जई, जौ महत्वपूर्ण हैं। ब्रिटेन का अधिकांश आलू स्कॉटलैंड से ही उपलब्ध होता है।

मिश्रित कृषि प्रदेश—मिश्रित कृषि के अन्तर्गत किसान एक साथ कई प्रकार के क्रिया-कलापो में संलग्न रहता है। वैज्ञानिक शोधों से निष्कर्ष निकला है कि कुछ फसलें मिट्टी में अमुक तत्व लेती हैं और अमुक तत्व छोड़ती है। अतः अगर एक ही प्रकार की फसलें जमीन में बोयी जाएं या जमीन को निरन्तर

फसलों के काम में ही लिया जाए तो जमीन की उपजाऊ शक्ति घटती है। इसी आधार पर दुनिया के विकसित देशों में मिश्रित कृषि का प्रचार बढ़ा है। इस विधि में एक ही खेत में फसली कृषि (क्रम से) चारे की फसलें, फलोत्पादन, दुग्ध व्यवसाय, पशुपालन, मुर्गीपालन आदि सब योजनाबद्ध ढंग से चलते रहते हैं। आवश्यकतानुसार सब्जियाँ भी बोई जाती हैं। कृषि का यह स्वरूप दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड के ढाल मैदानों में प्रचलित है। पीनाइन्स के दक्षिण में स्थित मिडलैंड्स, थेम्स का ऊपरी बेसिन एवं दक्षिण-पूर्व में स्थित वील्ड तथा डाउन्स में मिश्रित कृषि

चित्र–8

की जाती है। दक्षिणी-पूर्वी इंगलैण्ड की बेडफोर्ड, डरबी, नौटिंघम, लीस्टर, वारविक, नोर्थेम्पटन, विल्स, बक्स, हेम्पशायर, ससेक्स तथा केन्ट आदि कांउटीज के कृषि क्षेत्र मुख्यतः मिश्रित कृषि में ही संलग्न हैं। उत्तरी-पूर्वी इंगलैंड की

डरहम, नौर्थम्बरलैंड, नौर्थ, रारडिंग व यौर्क आदि क्षेत्रों में भी कृषि का मिश्रित स्वरूप ही प्रचलित है।

पशु चारण प्रदेश—साधारणतः वेल्स तथा इंगलैण्ड के समस्त उच्च प्रदेशों में पशुचारण प्रचलित है। वेल्स की पैम्ब्रोक, कार्मारथैन, ब्रैकनॉक, कार्डीगन, रैडनर, मौंटगूमरी, मैरियोनैथ, कैर्नारवॉन, डैनबिघ आदि कांउटीज, डेवोन तथा कार्नवाल पैनिनशुला, दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड की व्हाइट होर्स तथा चिल्टर्न हिल्स एव पीनाइन श्रम तथा लेक डिस्ट्रिक्ट के उच्च प्रदेश प्रधान पशु-चारण क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त ग्लूसैस्टर, ऑक्सफोर्ड एवं नोर्थम्पटन आदि काउन्टीज के उच्च भागों में भी छोटे स्तर पर पशुचारण व्यवसाय प्रचलित है। ठंडी तर जलवायु, फसली कृषि के लिए अनुपयोगी उच्च प्रदेश, विस्तृत प्राकृतिक घास क्षेत्र तथा चूने युक्त मिट्टी आदि प्राकृतिक परिस्थितियो ने ब्रिटेन में पशुपालन को सदा से प्रोत्साहित किया है। 14वीं शताब्दी से ही भेड़ पालन व्यवसाय होता आ रहा है। मूर से ढके पीनाइन्स के ढ़ाल प्रदेश वेल्स तथा कम्बरलैंड की पहाड़ियाँ चारे की अक्षय स्रोत हैं। पिछले दशकों में अच्छी घास वाले स्थायी चरागाह भी विकसित किए गए हैं। पशुपालन को अब वैज्ञानिक स्तर पर लिया जाता है। पीनाइन्स मुख्यतः भेड़ क्षेत्र हैं जबकि बड़े ढ़ोर पूर्व में स्थित अपेक्षाकृत कम आर्द्र तथा धूपेले भागों में पाले जाते हैं। स्कॉटलैंड में बैफ, एन्गुज तथा टवीड क्षेत्र, इंगलैंड में मिडलैंड प्रदेश विशेषकर श्रोपशायर, हर्टफोर्ड की घाटी तथा नोर्थम्बरलैंड; वेल्स में मौंटगूमरी, ब्रैकन तथा राडनोर क्षेत्र में प्रमुखतः मांस तथा चमड़ा के लिए गाय, बैल, बछड़े पाले जाते हैं। शोर्थोन, ससैक्स, हर्टफोर्ड तथा डेवोन आदि इसी प्रकार की नस्लें हैं। लेकडिस्ट्रिक्ट के उच्च प्रदेशों में ऊँचे ढालों पर भेड़ पालन तथा नीची घाटियों में ढ़ोर पाले जाते हैं।

दुग्ध व्यवसाय प्रदेश—अगर स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति हेतु पाली गयी गायों को थोड़ी देर के लिए ध्यान में न रखा जाय तो ब्रिटेन में दो क्षेत्र दुग्ध व्यवसाय की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं जहाँ व्यापारिक स्तर पर यह व्यवसाय प्रचलित है। प्रथम स्कॉटलैंड के मध्यवर्ती निचले प्रदेश के पश्चिमी भाग में तथा दूसरा दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड में बेसिन क्षेत्र। दोनों क्षेत्रों में एक समानता है। जो दुग्ध व्यवसाय के लिए अति आवश्यक भी है, कि दोनों ही देश के अत्यधिक घने बसे एवं औद्योगिक क्षेत्रों के पास स्थित हैं। स्कॉटलैंड के दक्षिण-पश्चिम में आर्गिल स्टर्लिंग, [illegible]नार्क, बूटे, विगटाउन, आयरशायर तथा किर्ककुड ब्राइट आदि कांउटीज मुख्यतः दुग्ध व्यवसाय में संलग्न हैं जहाँ से दुग्ध उत्पादन क्लाइड बेसिन (ग्लासगो क्षेत्र) को जाते हैं। थेम्स बेसिन में अपनी दूध की अधिक मात्रा के लिए विख्यात हर्टफोर्ड तथा डेवोन गाएँ पाली जाती हैं। जहाँ से लन्दन क्षेत्र की दुग्ध-पूर्ति होती है।

पर्वतीय भेड़ पालन एवं क्रोफ्टिंग प्रदेश—उत्तरी-पश्चिमी स्कॉटलैंड में किसान अपनी एक विशिष्ट जिन्दगी जीता है। यहाँ के उच्च प्रदेशों एवं द्वीपों में किसानों के छोटे-छोटे खेत (क्रोफ्टस) है जिनके बीच में पत्थर का एक मंजिला मकान बने है। पीट जलाकर इन घरों में गर्मी प्राप्त की जाती है। प्रत्येक क्रोफ्ट पर दूध-मक्खन के लिए एक दो गाएँ होती हैं। खेतों में प्रायः कठोर फसलें जैसे—आलू तथा जई आदि पैदा की जाती है। कभी-कभी ये किसान मत्स्य व्यवसाय करते हैं। इस प्रकार इन 'क्रोफ्टर्स' की जिन्दगी लगभग स्वावलम्बी है। इनकी संख्या क्रमशः घटती जा रही है। वर्तमान में केवल 20,000 क्रोफ्टर्स हैं। संक्षेप में यह एक अविकसित कृषि का प्रदेश है। पहाड़ियों पर भेड़ें पाली जाती है।

□□□

ब्रिटेन : मत्स्य व्यवसाय

प्राकृतिक परिस्थितियाँ जिन्होंने मत्स्य उद्योग के विकास में सहयोग किया है, निम्न हैं—

(1) ब्रिटेन के तट अत्यधिक कटे-फटे हैं जिन्होंने न केवल यहाँ के नाविकों को कुशलता प्राप्त करने में सहयोग किया वरन् आदर्श पोताश्रय भी प्रस्तुत किए हैं।

(2) द्वीपीय स्थिति ने यहाँ के नागरिकों को बचपन से ही समुद्र की ओर आकर्षित किया है। एक तरह से यहाँ की मानव संस्कृति एवं सामुद्रिक-संस्कृति में गहरा समन्वय हो गया है।

(3) निरन्तर चलने वाले चक्रवातों एवं समुद्री तूफानों ने यहाँ के नाविकों को कठिन से कठिन परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम बना दिया है।

(4) सीमित साधन, द्वीपीय स्थिति के कारण भू-विस्तार की सम्भावनाओं की समाप्ति ने यहाँ के नागरिकों को विदेशी व्यापार के लिए प्रेरित किया। इसमें सफलता के लिए एक मजबूत जहाजी बेड़े की आवश्यकता सदा से रही। यहाँ की नौ-सेना भी सदा से शक्तिशाली रही। इन सबने अप्रत्यक्ष रूप से मत्स्य व्यवसाय के विकास में सहयोग दिया। व्यापारिक जहाजों की तरह यहाँ के मत्स्य-व्यवसायी जलयान भी दूरस्थ समुद्रों में कार्यरत देखे जा सकते हैं। यहाँ तक कि ह्वेल के शिकार के लिए ग्रीनलैंड, आइसलैंड तथा अण्टार्कटिक प्रदेश तक जाते हैं।

(5) ब्रिटेन की स्थिति एक ऐसे जलाशय (उत्तरी सागर) पर है जो सदा से मछलियों का भण्डार रहा है।

(6) ब्रिटिश द्वीप महाद्वीपीय चबूतरे पर स्थित है जिसकी गहराई 100 फैदम से ज्यादा नहीं है। इधर 'उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट' एवं पछुआ

हवाएं निरन्तर उष्ण कटिबन्धीय गर्म जल लाती रहती हैं। ये परिस्थितियां मिलकर प्लैंकटन जीवों एवं वनस्पति के विकास के लिए आदर्श दशाएं उपस्थित करती हैं। स्वाभाविक है कि यहां प्लैंकटन का जितना आधिक्य होगा मछलियां उतनी ही [illegible] में वहां होंगी।

(7) ब्रिटेन के समीप उत्तरी सागर में अनेक 'बैंक्स' हैं। [illegible] बैंक, गुडविन बैंक, धरमाउथ बैंक, वेलबैंक आदि उल्लेखनीय हैं। [illegible] बैंक का विस्तार लगभग 7000 वर्ग मील है। ये बैंक्स [illegible] ब्रिटेन वरन् अन्य यूरोपियन पश्चिमी देशों के लिए [illegible] स्थायी मत्स्य क्षेत्र प्रस्तुत करते हैं। [illegible]

चित्र-9

वे पठारी भाग हैं जो समुद्रगत होने के कारण उथला सागर प्रस्तुत करते हैं। उथले होने के कारण प्लैंकटन का विकास आसानी से हो जाता है। डागर बैंक कहीं भी 35 फैदम से ज्यादा गहरा नहीं है।

(8) उत्तरी अटलांटिक ड्रिफ्ट सर्दियों के दिनों में न केवल ब्रिटिश तटों को वरन् पर्याप्त उत्तरी अक्षांशों तक समुद्र को खुला रखती है जिससे यहाँ के नाविक सर्दियों में भी अपना व्यवसाय चालू रख सकते हैं।

(9) खाद्यान्नों की कमी, देश का उद्योग प्रधान स्वरूप तथा खाद एवं रासायनिक उद्योग आदि तत्वों ने भी इस व्यवसाय को प्रोत्साहित किया है।

(10) ब्रिटिश निवासी अधिकांशतः प्रोटेस्टेंट धर्म के अनुयायी हैं जिसमें मछली खाना निषेध नहीं है। ब्रिटिश खाने में मछली महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यहाँ की प्रति व्यक्ति खपत (वार्षिक) 68 पौंड से ज्यादा है।

(11) निकट ही पश्चिमी यूरोप के घने बसे औद्योगिक प्रदेश हैं जिनमें मछली की माँग निरन्तर बनी रहती है। ब्रिटेन जैसे व्यवसायी प्रवृत्ति के राष्ट्र को यह प्रोत्साहन भी कम प्रेरक तत्व नहीं है।

(12) ब्रिटेन के यार्डों में मत्स्य व्यवसाय से सम्बन्धित आधुनिकतम जलयान-फ्लोटिंग-फैक्ट्रीज, ट्राउलर्स, ड्रिफ्टर्स आदि तैयार किए जाते हैं।

(13) जब से मत्स्य व्यवसाय में शीतालयों एवं फ्लोटिंग फैक्ट्रीज का प्रयोग प्रारम्भ हुआ है तब से इसके खराब होने के अवसर नगण्य हो गए हैं। अब मछलियाँ महीनों तक यातायात में रह सकती हैं। इससे मत्स्य व्यवसाइयों को बड़ा प्रोत्साहन मिला है।

ब्रिटेन : मत्स्य पकड़ एवं मूल्य[33]

पकड़ मात्रा (000 टनों में)	1979	1980	1981	1982
'वैट' फिश	764.1	679.0	664.6	689.4
शैल फिश	62.5	68.6	62.9	60.0
योग—	826.6	747.6	727.5	749.4

33, The Statesman's Year Book, Macmillan, 1984-85

मत्स्य पकड़ मूल्य (000 पौंड में)	1979	1980	1981	1982
'वेट' फिश	211,892	184,847	188,152	213,108
शैल फिश	355,45	32,245	34,405	38,685
योग—	247,437	217,092	222,557	251,793

(उक्त में सॉमन एवं सी-ग्राउट की पकड़ शामिल नहीं है)

ब्रिटेन के मत्स्य बेड़े में वर्तमान (1982) में 6461 जलयान कार्यरत हैं इनमें 2501 ट्राउलर्स तथा 1346 लाइन तथा फील यान भी सम्मिलित हैं।

उपरोक्त सभी परिस्थियों ने मिलकर ब्रिटेन के मत्स्य उद्योग को प्रोत्साहित किया है। आज ब्रिटेन दुनियां के महत्वपूर्ण मत्स्य व्यवसायी देशों में से एक है। बहुत दिनों तक यह मत्स्य-पकड़ की मात्रा की दृष्टि से जापान के बाद दुनियां में दूसरे स्थान पर रहा। परन्तु पिछली शताब्दी में रूस, सं० रा० अमेरिका भी इससे आगे बढ़ गए हैं। फिर भी, प्रति व्यक्ति पकड़ की दृष्टि से ब्रिटेन विश्व में दूसरे स्थान पर है। वर्तमान में लगभग 25000 व्यक्ति इस व्यवसाय में संलग्न हैं। इनमें से 14,000 इंगलैण्ड तथा वेल्स, 9,000 स्कॉटलैंड तथा शेष आयरलैंड से सम्बन्धित हैं। निस्सदेह इनमें वे व्यक्ति शामिल नहीं हैं जो व्यक्तिगत स्तर पर छोटे पैमाने पर इसे सहायक कार्य के रूप में करते हैं। इतने से व्यक्तियों को लेकर इस व्यवसाय का इतना विकास कर जाना अपने आप में एक आश्चर्यजनक तथ्य है जो एक ओर तो यहां के लोगों की कार्यकुशलता को प्रकट करता है तथा दूसरी ओर इस तथ्य को कितने व्यवस्थित एवं यान्त्रिक ढंग से इस व्यवसाय को यहां चलाया जा रहा है। निम्न आंकड़े यहां के मत्स्य व्यवसाय पर कुछ प्रकाश डालते हैं।

हैरिंग, कॉड, प्लेइस, फ्लैटफिश, टरबोन, पिलकार्ड, हैग, व्हाईटिंग, हैलीबट, मैकरेल, ट्यूना आदि मछलियां ब्रिटेन की मत्स्य-पकड़ का महत्वपूर्ण भाग बनाती हैं। हैरिंग, कॉड, प्लेइस तथा हैडक का भाग सर्वाधिक रहता है। कुल पकड़ में 40% कॉड, 20% हैडक तथा 10% प्लेइस का भाग होता है। हैरिंग का प्रतिशत बदलता रहता है क्योंकि हैरिंग के पकड़ स्थल मौसमों के अनुसार बदलते रहते हैं। मई में हैरिंग मछुआरे हीब्राइडस के निकट, जून में आर्कनी तथा शेटलैण्डस, जुलाई-अगस्त में योर्कशायर व लिकनशायर या पूर्वी आंगलिया, अक्टूबर में डैवोन तथा दिसम्बर में कार्नवाल के निकट दिखाई पड़ते है। मछलियों की अपनी अलग-

अलग आदतें हैं उन्हीं के अनुसार उनको पकड़ने की विधियाँ भी अपनानी पड़ती हैं। यथा, हैमरशल मछली को पकड़ने के लिए प्रायः खिसकने वाले जाल (ड्रिफ्ट-नैट) का उपयोग किया जाता है क्योंकि यह मछली अधिकतर तल में रहती है। भीतरी मत्स्य क्षेत्रों में रेखात्मक विधि का उपयोग होता है। एक रस्से में सैकड़ों हुक लगे रहते हैं उनमें अनेकों मछलियाँ एक साथ फँसकर निकलती हैं। लौबस्टर तथा कार्ब मछलियों को टोकरी जैसे बर्तनों में पकड़ा जाता है। प्राउन तथा श्रिप मछलियों को 'ट्राउलिंग' विधि से पकड़ा जाता है।[34]

जापान की तरह ब्रिटेन में भी तटवर्ती एवं सुदूर गहरे समुद्रों में—दोनों प्रकार का व्यवसाय प्रचलित है। लगभग 40% मछलियाँ तटवर्ती एवं निकटवर्ती सागरों जैसे इंगलिश चैनल, उत्तरी सागर, आयरिश सागर आदि से प्राप्त होती हैं। लगभग 10% भतरी जलाशयों—झीलों तथा नदियों की एस्चुरीज से प्राप्त होती हैं। इस प्रकार कुल पकड़ का आधा भाग दूरस्थ मत्स्य क्षेत्रों जैसे न्यूफाउण्डलैण्ड (2500 मील) पश्चिमी ग्रीनलैण्ड (2450 मील), पश्चिमी आइसलैण्ड (1000

चित्र—10

मील), बैरेंट सागर (1700 मील), बीयर द्वीप (1500 मील), लोफोटैन द्वीप समूह (1000 मील), स्पिटसबर्जेन (1650 मील) आदि से प्राप्त होता है। इन भागों में अधिकतर फ्लोटिंस फैक्ट्रीज का पूरा का पूरा फ्लीट जाता है और जलयानों में संलग्न फैक्ट्रीज में मछलियों को निर्यात लायक बना कर सीधा बाजारों

34. Simmons, W, M. -- The British isles p. 117-23.

में भेज दिया जाता है। निकटवर्ती सागरों में अधिकतर ट्राउलर्स प्रयोग में आते हैं जिनकी पकड़ तट पर स्थित मत्स्य केन्द्रों को भेज दी जाती है।

तट पर स्थित मत्स्य केन्द्रों में हल, ग्रिम्सबी, फ्लीटवुड (इंगलैण्ड) लरविक स्कॉटलैण्ड) ग्रांटन (शैटलैण्डस) फ्रेजरबर्ग तथा पीटर हैड महत्वपूर्ण है। ग्रिम्सबी में संसार की बड़ी बर्फ की फैक्ट्री स्थित है। यहीं से रेल में भरकर लन्दन को मछलियाँ पहुँचाई जाती हैं। इस काम के लिए शीतालयों युक्त विशेष रेल गाड़ियाँ होती हैं। शीघ्र जमाने वाली प्रणाली के विकसित होने से बाजारों तक पहुँचाना और भी आसान हो गया है। इस प्रणाली में मछलियों को 40 सैन्टीग्रेड तापक्रम में रख कर जमा दिया जाता है। इससे वे खराब नहीं होती। ब्रिटेन में बिकने वाली कुल मछलियों का 20% भाग इसी प्रकार की मछलियों का होता है। फ्रेजर बर्ग तथा पीटर हैड 'केन्ड फिश' के बड़े केन्द्र हैं।

ब्रिटेन : खनिज पदार्थ एवं शक्ति के साधन

कोयला :

अगर ब्रिटेन के औद्योगीकरण की पृष्ठभूमि में उन तत्वों की खोज की जाए जो विकास में सहयोगी रहे हैं तो सम्भवतः कोयले का नाम सबसे ऊपर एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थिति में होगा। अगर यह कहा जाय कि कोयला औद्योगिक क्रांति का आधार रहा है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी क्योंकि इस क्रांति का श्रीगणेश भाप के उस एंजिन के आविष्कार के साथ हुआ था जो प्रथम बार इंगलैण्ड में बनाया गया। ब्रिटेन का अधिकतर कोयला कार्बोनीफेरस युगीन पर्तों मे मिलता है। केवल नगण्य मात्रा में ही दूसरे क्रमों की पर्तों में यहां कोयले की खानें हैं जैसे सदरलैण्ड तट पर ब्रोरा की खानें जहां जुरैसिक क्रम की पर्तों में से कोयला प्राप्त है पर थोड़ा सा यौर्कशायर में लियास पर्तों से। ब्रिटेन में कोयले की खुदाई 700 वर्षों से हो रही है। पिछले 300 वर्षों से तो इसकी खुदाई बाकायदा एक उद्योग के रूप में हो रही है। यह अवधि यूरोप के अन्य किसी भी देश के कोयला-इतिहास की अवधि से दुगुनी से अधिक है। साथ ही यह भी उल्लेखनीय है कि यहां की पर्तें धरातल के जितने नजदीक हैं और जितनी आसानी से खदाई हो सकती है उतनी शायद ही दुनियां के किसी हिस्से में हो। सुरक्षित भण्डार भी पर्याप्त हैं। इन्ही सुविधाओं के फलस्वरूप यहां का कोयला उद्योग विश्व में सर्वाधिक समुन्नत एवं यान्त्रिक उद्योगों में से एक बन सका।

सन् 1919 में डडले महोदय ने कोयले का प्रयोग कारखाने में किया। 18वीं शताब्दी मे भाप के इंजन का आविष्कार हुआ और कोयले का उपयोग कारखानों एवं जलयानों में किया जाने लगा। जब वैसोमीर विधि से लोहा गलाया जाने लगा तथा इस्पात उद्योग के लिए कोक बनाया जाने लगा तो ब्रिटिश कोयले का महत्व और भी बढ़ गया क्योंकि यहां का अधिकतर कोयला बिटूमिनस प्रकार का ही है। यद्यपि कोयले की अन्य किस्में भी यहां खोदी जाती है। दक्षिणी वेल्स में एन्थ्रासाइट या हार्ड कोक तथा स्टीम कोक, दक्षिणी लंकाशायर, डरहम नौटिंघमशायर, स्कॉटिश कोयला प्रदेश तथा वेल्स में आधुनिक उद्योगों में प्रयुक्त

होने वाला कोकिंग निकाला जाता है। पिछली शताब्दी के अन्त तक ब्रिटेन कोयला के उत्पादन एवं निर्यात में प्रथम था। वर्तमान में सोवियत संघ तथा सं० रा० अमेरिका के पश्चात् विश्व में तीसरा स्थान है। विश्व के कुल उत्पादन का लगभग 15% इस देश की खानों से निकलता है। इस व्यवसाय में यहाँ लगभग 4 लाख व्यक्ति संलग्न हैं। जिनमें से लगभग $2\frac{1}{2}$ लाख तो वस्तुतः खानों के अन्दर कार्य करने वाले हैं।

सुरक्षित राशि की दृष्टि से भी ब्रिटेन भाग्यवान है। भूगर्भविदों के अनुसार यहाँ के भू-गर्भ में लगभग 200,000 मिलियन टन की राशि दबी पड़ी है।[35] पिछली दशाब्दी में अनेक नए भण्डारों का भी पता चला है। 1955-58 की अवधि में फर्थ ऑफ फोर्थ में परीक्षण हेतु 'बोरिंग' किए गए। परिणाम उत्साहजनक थे। इसी से प्रोत्साहित होकर राष्ट्रीय कोयला मण्डल ने उत्तरी सागर के अन्दर कोयले की सम्भावनाओं की खोज में 2000 फीट गहरे 18 छेद किए। इन परीक्षणों से मालूम पड़ा कि समुद्रतल के नीचे लगभग 500 मिलियन टन की राशि सुरक्षित है।[36] इसी प्रकार फाइफशायर के निकट भी समुद्री खानें प्राप्त हुई हैं। इनमें खुदाई भी प्रारम्भ हो गई है। उल्लेखनीय है कि अगर वर्तमान गति से भी खुदाई होती रही तो अगले 500 वर्षों तक ब्रिटेन का कोयला भण्डार समाप्त नहीं होगा।

ब्रिटेन के कोयला क्षेत्रों में खुली तथा गहरी दोनों प्रकार की खुदाई प्रचलित है। प्रायः क्षैतिज पर्तों की खुदाई खुली विधि से की जाती है। इस खुदाई में यह कमी है कि जहाँ पर्तों की मोटाई बहुत कम है वहाँ यह प्रार्थिक सिद्ध नहीं होती। चूँकि खुली विधि बहुत आसान होती है और सदियों से इसी विधि द्वारा खुदाई होने के कारण धरातल के निकट की क्षैतिज पर्तें प्रायः समाप्त हो गई हैं, या 1 या 2 फीट मोटाई की पर्तें हैं, अतः आजकल ज्यादातर कोयला गहरी खुदाई से ही प्राप्त होता है। इस विधि में लम्बवत पर्तों की खुदाई करते जाते हैं और खानों की गहराई बढ़ती जाती है। ब्रैडफोर्ड कोलरी (मैनचेस्टर) में खानों की गहराई 3605 फीट तक जा पहुँची है। इतनी गहरी खानों में सुरक्षापूर्वक कार्य करने के लिए खानों में प्रायः दो शिफ्ट रखी जाती हैं एक शुद्ध हवा तथा दूसरी संकटकाल में बाहर निकलने के लिए। ब्रिटेन के कोयला उद्योग की भव्यता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि यहाँ खानों में सुरंगों के अन्दर होकर जाने वाली सड़कों की लम्बाई ही 14,000 मील है।

---

35. Dury, G, H,--The British Isles, A Systematic and Regional Geography, p. 107.

36. King' W, J, The British Isles p. 57-58.

कोयला उद्योग की सुव्यवस्था एवं संगठन हेतु 1947 में राष्ट्रीय कोयला बोर्ड की स्थापना की गई। बोर्ड ने कोयला उद्योग के उन सभी अंगों को छांटना शुरू किया जो आर्थिक सिद्ध नहीं हो रहे थे एवं जिनकी वजह से उद्योग को नुकसान हो रहा था। बहुत सी ऐसी खानें जो अनार्थिक या कम आर्थिक थीं उनको बन्द कर दिया गया। फलतः 1947 एवं 1966 के बीच में खानों की संख्या 978 से घटकर 483 हो गई। घटाव का यह क्रम जारी ही है। मार्च 1983 में खानों की संख्या केवल 190 रह गई। इनके अतिरिक्त कुछ खानें लायसेंस शुदा है। दक्षिणी वेल्स में पांच वर्ष में पांच खानें बन्द की गई। निस्संदेह, खानों के बन्द करने से कुछ सामाजिक और बेकारी सम्बन्धी समस्याएँ सामने आ रही हैं क्योंकि एक खान बन्द करने से हजारों लोग बेकार हो जाते हैं।

कोयला बोर्ड ने खुदाई की विधियों एवं संलग्न व्यक्तियों के स्वास्थ्य तथा सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया है। यहां खुदाई की आधुनिकतम विधियों को अपनाया गया है। आजकल यहां विद्युत खुदाई प्रचलित है। कोयला को खान से बाहर ले जाने का कार्य 'न्यूमैटिक पिक्स' के द्वारा सम्पादित किया जाता है। पहले पर्तों को विस्फोटक पदार्थों से तोड़ा जाता था अजकल उसकी जगह दबायी हुई हवा की विधि काम में ली जाती है। इन विधियों से आग एवं विस्फोट का खतरा बहुत कम हो गया है। कोयले को खानों से बाहर लाने का कार्य डीजल गाड़ियों द्वारा किया जाता है। औसतन प्रति मिनट 350 टन कोयला ब्रिटेन की खानों से बाहर आता है। कई नई मशीनें आविष्कार की गई हैं। यथा, पर्तों को उचालने के लिए एन्थुवुड स्लाइसर और उन्हें लादने के लिए मैको-मूर मशीन काम में लाई जाने लगी है। एक मैकोमूर मशीन प्रति सप्ताह लगभग ढाई हजार टन कोयला काटती एवं लादती है।

वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों से ही कोयले की उत्पादन मात्रा एवं निर्यात में क्रमशः ह्रास होना शुरू हुआ जो अभी तक होता ही जा रहा है। प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व उत्पादन मात्रा लगभग 300 मिलियन टन थी जो वर्तमान में लगभग आधी रह गई है। इस ह्रास के कई कारण हैं—

(1) तेल; विद्युत, अणु शक्ति के ज्यादा प्रचलन से कोयले की मांग कम हो गई है।

(2) राष्ट्रीय कोयला बोर्ड द्वारा बहुत सी खानों को बन्द कर दिया गया है।

(3) खुली विधि प्रायः समाप्त ही है। 1942 में युद्ध की आवश्यकताओं को देखते हुए बड़ी तेजी से इस विधि से कोयला खोदा गया था।

वर्तमान में खुली-विधि की खानें ही समाप्त प्रायः हैं। कुल उत्पादन का केवल 4% ही खुली विधि से प्राप्त होता है ।

(4) खानें क्रमशः गहरी होती जा रही हैं अतः उत्पादन मूल्य अपेक्षाकृत ज्यादा बैठता है। इस मूल्य को लेकर ब्रिटिश कोयला रूस या अमेरिका की अपेक्षाकृत नई खानों से प्राप्त सस्ते कोयले से प्रतियोगिता नहीं कर सकता।

(5) ताप शक्ति-गृहों के अतिरिक्त विद्युत अब जल-शक्ति गृहों से भी उत्पादित की जाने लगी है अतः कोयले की माँग घटी है।

निम्न सारणी से उत्पादन एवं निर्यात-मात्रा का पतन स्पष्ट है—

ब्रिटिश कोयला उत्पादन एवं निर्यात

वर्ष	उत्पादन (मिलियन टनों में)	निर्यात (मिलियन टनों में)
1913	287.4	73.4
1923	276.0	79.5
1933	207.1	39.1
1943	198.9	3.6 (युद्ध के
1953	223.5	16.0 फलस्वरूप)
1957	210.0	9.0
1961	192.0	5.5
1965	190.0	4.5
1982	124.0	7.1

ब्रिटेन : कोयला उद्योग सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तथ्य[37]

इकाई	1980–81	1981–82	1982–83
1. उत्पादन मि० टन	128.4	126.6	124.3
2. खुली खुदाई से मि० टन	15.7	14.8	15.2
3. गहरी खुदाई से मि० टन	111.4	110.0	106.2

37. प्रस्तुत आंकड़े केवल उन खानों के हैं जो 'राष्ट्रीय कोयला बोर्ड' से सम्ब-

कोयला उद्योग की सुव्यवस्था एवं संगठन हेतु 1947 में राष्ट्रीय कोयला बोर्ड की स्थापना की गई। बोर्ड ने कोयला-उद्योग के उन सभी अंगों को छाँटना शुरू किया जो आर्थिक सिद्ध नहीं हो रहे थे, एवं जिनकी वजह से उद्योग को नुकसान हो रहा था। बहुत सी ऐसी खानें जो अनार्थिक या कम आर्थिक थीं उनको बन्द कर दिया गया। फलतः 1947 एवं 1966 के बीच में खानों की संख्या 978 से घटकर 483 हो गई। घटाव का यह क्रम जारी ही है। मार्च 1983 में खानों की संख्या केवल 190 रह गई। इनके अतिरिक्त कुछ खानें लायसेंस धुदा हैं। दक्षिणी वेल्स में पाँच वर्ष में पाँच खानें बन्द की गई। निस्संदेह, खानों के बन्द करने से कुछ सामाजिक और बेकारी सम्बन्धी समस्याएँ सामने आ रही है क्योंकि एक खान बन्द करने से हजारों लोग बेकार हो जाते हैं।

कोयला बोर्ड ने खुदाई की विधियों एवं संलग्न व्यक्तियों के स्वास्थ्य तथा सुरक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया है। यहाँ खुदाई की आधुनिकतम विधियों को अपनाया गया है। आजकल यहाँ विद्युत खुदाई प्रचलित है। कोयला को खान से बाहर ले जाने का कार्य 'न्यूमैटिक पिक्स' के द्वारा सम्पादित किया जाता है। पहले पर्तों को विस्फोटक पदार्थों से तोड़ा जाता था अजकल उसकी जगह दबायी हुई हवा की विधि काम में ली जाती है। इन विधियों से आग एवं विस्फोट का खतरा बहुत कम हो गया है। कोयले को खानों से बाहर लाने का कार्य डीजल गाड़ियों द्वारा किया जाता है। औसतन प्रति मिनट 350 टन कोयला ब्रिटेन की खानों से बाहर आता है। कई नई मशीनें आविष्कार की गई हैं। यथा, पर्तों को उचालने के लिए ह्यू वुड स्लाइसर और उन्हें लादने के लिए मैको-मूर मशीन काम में लाई जाने लगी है। एक मैकोमूर मशीन प्रति सप्ताह लगभग ढाई हजार टन कोयला काटती एवं लादती है।

वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों से ही कोयले की उत्पादन मात्रा एवं निर्यात में क्रमशः ह्रास होना शुरू हुआ जो अभी तक होता ही जा रहा है। प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व उत्पादन मात्रा लगभग 300 मिलियन टन थी जो वर्तमान में लगभग आधी रह गई है। इस ह्रास के कई कारण हैं—

(1) तेल; विद्युत, अणु शक्ति के ज्यादा प्रचलन से कोयले की माँग कम हो गई है।

(2) राष्ट्रीय कोयला बोर्ड द्वारा बहुत सी खानों को बन्द कर दिया गया है।

(3) खुली विधि प्रायः समाप्त ही है। 1942 में युद्ध की आवश्यकताओं को देखते हुए बड़ी तेजी से इस विधि से कोयला खोदा गया था।

वर्तमान में खुली-विधि की खानें ही समाप्त प्रायः हैं। कुल उत्पादन का केवल 4% ही खुली विधि से प्राप्त होता है।

(4) खानें क्रमशः गहरी होती जा रही हैं अतः उत्पादन मूल्य अपेक्षाकृत ज्यादा बैठता है। इस मूल्य को लेकर ब्रिटिश कोयला रूस या अमेरिका की अपेक्षाकृत नई खानों से प्राप्त सस्ते कोयले से प्रतियोगिता नहीं कर सकता।

(5) ताप शक्ति-गृहों के अतिरिक्त विद्युत अब जल-शक्ति गृहों से भी उत्पादित की जाने लगी है अतः कोयले की माँग घटी है।

निम्न सारणी से उत्पादन एवं निर्यात-मात्रा का पतन स्पष्ट है—

ब्रिटिश कोयला उत्पादन एवं निर्यात

वर्ष	उत्पादन (मिलियन टनों में)	निर्यात (मिलियन टनों में)
1913	287.4	73.4
1923	276.0	79.5
1933	207.1	39.1
1943	198.9	3.6 (युद्ध के
1953	223.5	16.0 फलस्वरूप)
1957	210.0	9.0
1961	192.0	5.5
1965	190.0	4.5
1982	124.0	7.1

ब्रिटेन : कोयला उद्योग सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तथ्य[37]

इकाई	1980–81	1981–82	1982–83
1. उत्पादन मि० टन	128.4	126.6	124.3
2. खुली खुदाई से मि० टन	15.7	14.8	15.2
3. गहरी खुदाई से मि० टन	111.4	110.0	106.2

37. प्रस्तुत आँकड़े केवल उन खानों के हैं जो 'राष्ट्रीय कोयला बोर्ड' से सम्बन्धित है।

4. कुल संलग्न मजदूर (प्रति सप्ताह औसत)	229.808	218 519	207.640
5. गहरी खदानों में कार्यरत मजदूर (प्रति सप्ताह औसत)	183 631	176.036	167.876
6. कोयला निर्यात मि० टन	4.84	9.37	7.13
7. स्वदेशी खपत	120.3	117.0	110.5
8. कार्यरत खदानें	211	198	190

ब्रिटिश कोयला की सर्वाधिक खपत ताप शक्तिगृहों, उद्योगों, कोक-गैस निर्माण, गृह कार्य व वेलरे में होती है 1982–83 के वित्तीय वर्ष में यहाँ कोयले की खपत लगभग 110 मिलियन टन थी जिसका वितरण इस प्रकार था विद्युत—80.8 मि. टन, गृह कार्य—8.1 मि. टन, कोक भट्टियाँ—10.2 मि. टन, गैस उत्पादन—2.5 मि. टन, रसायन उद्योग—2.1 मि. टन, अन्य उद्योग (मुख्यतः लोहा, रेल, वस्त्र, कांच, बर्तन आदि) 7.03 मि. टन। आँकड़ों से स्पष्ट है कि रेल व लोहा-इस्पात उद्योग जो कभी पूर्णतः कोयला से ही चलते थे अब दूसरे साधनों से संचालित होने लगे हैं। इस्पात उद्योग में प्रायः विद्युत-भट्टियों का प्रचलन चल पड़ा है।

ब्रिटेन में कोयले का वितरण—ब्रिटेन का दो-तिहाई कोयला पीनाइन श्रेणी के आस-पास स्थित कार्बोनीफेरस युगीन पर्तों से प्राप्त होता है। इन पर्तों का विस्तार मिडलैण्ड, लंकाशायर, यौर्कशायर, नोर्थम्बरलैण्ड आदि प्रदेशों में हैं। ये प्रदेश ब्रिटेन के कुल उत्पादन के लगभग 60% भाग के लिए उत्तरदायी है। कुछ खानें वेल्स तथा स्कॉटलैण्ड में भी हैं जिनका उत्पादन भाग क्रमशः लगभग 22% एवं 10 प्रतिशत है। समस्त कोयला क्षेत्र लगभग 7000 वर्ग मील भूमि में फैले हैं अध्ययन की सरलता के लिए कोयला प्रदेशों को निम्न समूहों में रखा जा सकता है—

(अ) पीनाइन क्रम (इंगलैण्ड) के कोयला प्रदेश :

(1) मिडलैण्ड प्रदेश—पीनाइन श्रेणी के दक्षिण में स्थित इन कोयला क्षेत्रों का विस्तार श्रोपशायर, स्टैफोर्डशायर तथा कैनोक जिले में है। बर्मिंघम के आस-पास के उद्योगों में इन कोयला क्षेत्रों से प्राप्त कोयले का प्रयोग होता है। यहाँ की खानें ब्रिटेन की आधुनिकतम यांत्रिक खानों में से हैं। पूर्वी मिडलैण्ड में स्थित न्यूस्टेड, औलेन्डे तथा बीवरकोटस आदि खान क्षेत्रों में अधिकतर कार्य विद्युत शक्ति से सम्पादित किए जाते हैं। स्टैफोर्डशायर की ली हाल खान उत्पादन

की दृष्टि से ब्रिटेन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण खान है जहाँ प्रतिवर्ष लगभग $1\frac{1}{2}$ मिलियन टन कोयला खोदा जाता है। पूर्वी मिडलैण्ड रूफोर्ड खान का उत्पादन भी लगभग इतना ही है। इस खान में खुदाई 2650 फीट की गहराई तक पहुँच चुकी है। इसी प्रदेश में स्थित थोरेस की खान भी महत्वपूर्ण है जो प्रति सप्ताह लगभग 30,000 टन कोयला प्रस्तुत करती है। कैनोक जिले के भारी सुरक्षित भण्डार बर्मिंघम के इस्पात व स्टैफोर्डशायर के बर्तन उद्योग की भविष्य की आशा है। मिडलैण्ड प्रदेश ब्रिटेन में उत्पादित कुल कोयले का लगभग 10% भाग प्रस्तुत करता है।

(2) दक्षिणी लंकाशायर प्रदेश—इस प्रदेश की खानें पीनाइन श्रेणी के पश्चिमी ढाल तथा मरण प्रदेश में रिविल्स एवं मर्सी नदी की घाटियों में विद्यमान हैं। यहाँ के कोयले का उपयोग लंकाशायर के वस्त्र, इंजीनियरिंग तथा काँच उद्योग में होता रहा है। उत्पादन आवश्यकता से कम है। विगान सेंट हैलेंस तथा ले प्रमुख खनिक केन्द्र हैं।

(3) कम्बरलैण्ड प्रदेश—सुरक्षित राशि (लगभग 250 मिलियन टन) अवश्य आकर्षक है परन्तु भौगोलिक वातावरण की प्रतिकूलता (ठण्डी जलवायु, ऊबड़-खाबड़ पठारी प्रदेश, यातायात का अभाव) के कारण खुदाई खर्चीली पड़ती है। नौर्थम्बरलैण्ड, डरहम प्रदेश की तरह यहाँ भी कोयला की पर्तें समुद्र में काफी अन्दर तक चली गई हैं। समुद्र के भीतर 5 मील तक खुदाई हो चुकी है। कोयले के स्थानीय उपयोग की दृष्टि से वर्किंगटन, व्हाइटहैविन तथा मेरीपोर्ट के निकट कई प्रकार के उद्योग विकसित किए गए हैं।

(4) डर्बीशायर-नौटिंघम प्रदेश—न केवल उत्पादन वरन् सुरक्षित मात्रा की दृष्टि से भी यह ब्रिटेन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र है। अनुमानतः यहाँ लगभग 400 मिलियन टन की राशि भू-गर्भ में दबी पड़ी है। यहाँ ऊपरी पर्तों का कोयला समाप्त हो गया है अतः अधःस्तरीय मैसोजोइक युगीन चट्टानों को तोड़कर (2000 फीट से ज्यादा) तक 'शॉफ्ट' बनाई गई है। यह प्रदेश वर्तमान ब्रिटेन के कुल उत्पादन का लगभग 40% भाग (48 मिलियन टन) प्रस्तुत करता है। यहाँ की खानों में बिटुमिनस के अतिरिक्त हार्ड एवं स्टीम कोक भी निकलता है। प्रधान खनिज केन्द्रों में उत्तर में स्थित वार्सल तथा दक्षिण में स्थित मैन्स-फील्ड एवं वर्कसोप आदि उल्लेखनीय हैं। पीनाइन श्रेणी के दक्षिण-पूर्व में स्थित इन कोयला प्रदेशों का विस्तार लगभग 1500 वर्ग मील है। यहाँ के कोयले का प्रयोग रेलों, शैफील्ड के इस्पात तथा कटलरी उद्योग, वेस्ट राइडिंग के इंजीनियरिंग तथा यौर्कशायर के ऊनी वस्त्रोद्योग में होता है।

(5) नौर्थम्बरलैंड-डरहम प्रदेश—देश के कुल उत्पादन की लगभग एक चौथाई राशि (40 मिलियन टन) प्रस्तुत करने वाले इस कोयला प्रदेश

सर्वाधिक महत्वपूर्ण खानें टाइन एवं कनक्वेट आदि नदियों की घाटियों में स्थित हैं। यह ब्रिटेन के सबसे प्राचीन कोयला क्षेत्रों में से है। विशप-ऑकलैंड के पास की खानें समाप्त हो चुकी हैं। आजकल खुदाई नौर्थम्बरलैण्ड में वान्सबैक नदी के उत्तरी तथा डरहम के पूर्वी क्षेत्रों में चल रही है। डरहम की हॉर्डोन खान ब्रिटेन की सबसे बड़ी खान है जिसमें 4840 व्यक्ति लगे हैं। कम्बरलैंड की तरह यहाँ भी कोयले की पर्तें समुद्र के अन्दर तक चली गई हैं। अतः समुद्र में कई मील आगे

चित्र–11

तक खुदाई चालू है। कोयले की क्वालिटी की दृष्टि से यहाँ की खान महत्वपूर्ण हैं। यहाँ ब्रिटेन का सर्वोत्तम कोकिंग-कोल निकलता है। टाइने-साइड के जलयान

निर्माण एवं टीज के सहारे-सहारे फैले रसायन उद्योगों में इस कोयले का उपयोग होता है।

(6) वारविकशायर कोयला क्षेत्र—न्यूनीटन तथा टैवर्क के मध्य स्थित इस प्रदेश की खानों में अधिकतर कोयला बिटूमिनस प्रकार का निकलता है। लगभग सारा उत्पादन कावेन्ट्री प्रदेश के औद्योगिक संस्थानों में खप जाता है। लीसैस्टरशायर में पर्तें धरातल के काफी निकट आ गई हैं अतः खुदाई सस्ती पड़ती है।

(ब) वेल्स के कोयला प्रदेश :

(1) दक्षिणी वेल्स : उत्पादन की दृष्टि से यह ब्रिटेन के तीसरे नम्बर का कोयला प्रदेश है। यहाँ दक्षिण एवं पूर्व में कोकिंग-कोल, पश्चिम में एन्थ्रासाइट, मध्य एवं पूर्व विशेषकर रौंडा घाटी में स्टीम कोक खोदा जाता है। दक्षिणी वेल्स में गहरी खुदाई की आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि वेल्स की नदियों ने धरातलीय पर्तों को काट कर कोयले की पर्तों को आसान पहुँच के अन्दर ला दिया है। प्रमुख खनिज-केन्द्रों में मर्थर, टाइड्फिल, एबरडेअर, ट्रेडेगर आदि उल्लेखनीय हैं। कार्डिफ के निकट नांटगार्व में कोक बनाने का विशाल कारखाना स्थापित किया गया है जो स्थानीय खानों से प्राप्त कोयले से कोक बनाकर न्यूपोर्ट के रासायनिक तथा इंजीनियरिंग, स्वांसी तथा नीथ के इस्पात उद्योगों को सप्लाई करता है। दक्षिणी वेल्स का वार्षिक उत्पादन लगभग 26 मिलियन टन है। सुरक्षित राशि की दृष्टि से यह प्रदेश बड़ा धनी है। यहाँ के भू-गर्भ में लगभग 350 मिलियन टन की राशि आंकी जाती है। सुरक्षित राशि में एन्थ्रासाइट का प्रतिशत 22, स्टीम कोक 14, बिटूमिनस 30 तथा घटिया किस्म के कोयले का प्रतिशत 34 आंका जाता है। कोयला क्षेत्रों का विस्तार लगभग 1000 वर्ग मील में है।

(2) उत्तरी वेल्स—उत्तरी वेल्स में कोयले की खानें रैक्सहैम तथा रूआबोन के आस पास फैली हैं। आगे ये पर्तें डी नदी तक बढ़ गई हैं। वार्षिक उत्पादन लगभग 3 मिलियन टन है।

(स) स्कॉटिश कोयला प्रदेश :

स्कॉटलैंड में कोयला की पर्तें मध्यवर्ती निचले भागों में हैं जिनकी खुदाई आयरशायर, फाइफशायर, लेनार्कशायर, तथा लोथियन आदि क्षेत्रों में होती है। स्कॉटिश कोयला प्रदेश ब्रिटेन के कुल उत्पादन का लगभग 13% भाग प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार महत्व की दृष्टि से चौथे स्थान पर है। यहाँ की पर्तों की मोटाई भिन्न-भिन्न है। खुदाई भी इंगलैंड के प्रदेशों की तुलना में खर्चीली पड़ती है।

(1) फाइफशायर—सुरक्षित राशि की मात्रा एवं पर्तों की मोटाई की दृष्टि से इस क्षेत्र का भविष्य उज्ज्वल समझा जाता है। फर्थ ऑफ फोर्थ के पास ड्रिलिंग

करने से उस नयी कोयला पट्टी का पता चला है जिसका विस्तार लोथियन क्षेत्र (एडिनबर्ग के निकट) तक है। उत्पादन के कुछ भाग का उपयोग स्थानीय उद्योगों जैसे रेशम (फर्थ ऑफ फोर्थ) जूट (डन्डी) छपाई तथा कागज (एडिनबर्ग) उद्योग में हो जाता है। शेष मात्रा लेथ, ग्रेंज माउथ, मेथिल बर्नटिसलैंड आदि बदरगाहों से निर्यात कर दिया जाता है।

(2) आयरशायर—यह छोटा सा कोयला क्षेत्र है जिसका विस्तार 10-12 वर्ग मील में है। स्कॉटिशग्र देश में उत्पादित कोयले का 17% भाग आयरशायर की खानों से प्राप्त होता है। कोयले का उपयोग स्थानीय उद्योगों में हो जाता है। उल्लेखनीय है कि विश्व विख्यात ट्रैक्टर की कम्पनी मैसीफरग्यूसन यहीं विद्यमान है।

(3) लैनार्कशायर—सम्पूर्ण स्कॉटिश कोयले का लगभग आधा भाग प्रस्तुत करने वाले इस क्षेत्र में स्टीम कोल का आधिक्य है। पूर्व से पश्चिम की ओर पर्तें क्रमशः पतली होती जाती हैं। अलोग्रा तथा ग्लासगो के औद्योगिक संस्थानों को यहीं से कोयले की सप्लाई होती है।

(4) लोथियन क्षेत्र—एडिनबर्ग के निकट इस क्षेत्र में कोयले का उत्पादन नगण्य है।

लौह-अयस एवं अन्य खनिज :

ब्रिटेन की भट्टियों में प्रयोगित लौह-अयस का लगभग आधा भाग स्थानीय खानों से प्राप्त होता है। लोहे की खानें मुख्यतः लिंकनशायर, नौर्थम्पटनशायर व लीसेस्टरशायर में स्थित हैं।[38] इनके अतिरिक्त स्कॉटलैंड में एडिनबर्ग, मिडलैंड का स्टैफोर्डशायर, योर्कशायर की क्लीवलैंड पहाड़ियाँ भी लोह-अयस के स्रोत हैं। थोड़ी सी मात्रा में नौर्थम्बरलैंड डरहम क्षेत्र में भी निकलता है। सबसे महत्वपूर्ण खानें जुरैसिक एस्कार्पमेंटस में स्कन्थ्रोप से बैनबरी तक फैली हुई हैं। जुरैसिक लौह अयस में धातु प्रतिशत केवल 26 है लेकिन धरातल के निकट स्थित होने से खुदाई बड़ी आसान है। प्रायः खुली विधि से ही खुदाई होती है। अपनी आवश्यकता के शेष भाग विदेशों मुख्यकर स्वीडन, स्पेन, फ्रांस तथा सं० रा० अमेरिका से आयात करता है। पिछले वर्षों में अफ्रीकन देशों मुख्यतः अल्जेरिया सियरालोने तथा लाइबेरिया से लोहे का आयात होने लगा है। लौह अयस बहुत कम होने के बावजूद भी ब्रिटेन दुनियां के 10 अग्रेजी स्पात उत्पादक देशों में से एक है। पिछले कुछ वर्षों का उत्पादन स्वरूप अग्र लिखित प्रकार रहा है।

---

38. Demangeon. A.--The British Isles, translated by Laborde, E. D. P. 357.

ब्रिटेन में लोह-स्पात उत्पादन
(हजार टनों में)

	पिग आयरन	क्रूड स्टील	स्वदेशी खनन मात्रा
1978	11,434	20,311	20,530
1679	12,898	12,464	20,160
1980	6,316	11,277	15,990
1981	9,554	15,573	15,650
1982	8,389	13,704	15,120

कम्बरलैंड, उत्तरी-पश्चिमी लंकाशायर तथा ग्लैमोर्गन में चूने की चट्टानों में हैमेटाइट लोह-अयस्क मिलता है लेकिन इसका उत्पादन दिन प्रति दिन घटता जा रहा है। 1939 से पहले उत्पादन 1 मिलियन टन से अधिक था, 1956 में केवल 400,000 टन रह गया और उसके दस वर्ष बाद उसका भी आधा। इसी प्रकार क्लीवलैंड की पहाड़ियाँ जहाँ कि जुरैसिक लाइमस्टोन से लोहा खोदा जाता है, 1920 से पहले ब्रिटेन की प्रमुख लोहा उत्पादक इकाई थी। यहाँ का उत्पादन 2 मिलियन टन से अधिक था लेकिन 1957 में केवल 60,000 टन ही रह गया तथा 1964 में एक दिन ऐसा भी आया जबकि उत्तरी क्लीवलैंड में स्थित आखिरी खानों में खुदाई ही बंद कर देनी पड़ी। इस प्रकार क्लीवलैंड क्षेत्र का लोह-अयस्क व्यवसाय समाप्त हुआ।

कुछ अन्य धातु भी हैं लेकिन खुदाई वहाँ तक नहीं होती। टिन, जो कभी ब्रिटिश द्वीप समूह का प्रमुख धातु-उत्पाद था वर्तमान में कार्नवाल की केवल दो खानों में खोदी जाती है। इसी प्रकार कभी तांबे का भी महत्त्व था परन्तु अब उसकी खुदाई भी बंद है। कभी सैनिक आवश्यकता के दबाव से खोद ली जाए तो दूसरी बात है। डर्बीशायर तथा नॉर्थम्बरलैंड की कार्बोनीफेरस युगीन चूने की पर्तों में सीसा, जस्ता, बैराइटस, फ्लूरस्पार आदि भी मिलते हैं परन्तु उनकी खुदाई आर्थिक नहीं बैठती। नमक चैशायर, वर्सेस्टरशायर, उत्तरी लंकाशायर, स्टैफोर्डशायर तथा मैन द्वीप में ट्रियासिक चट्टानों में मिलता है। इन्हीं पर्तों में थोड़ा सा जिप्सम भी मिलता है।

गैस तथा पैट्रोलियम :

ब्रिटेन में प्रयोगित तेल का अधिकतर भाग विदेशी आयात से प्राप्त होता है। केवल 1% भाग ही देशी साधनों से मिल पाता है। इसके

करने से उस नयी कोयला पट्टी का पता चला है जिसका विस्तार लोथियन क्षेत्र (एडिनबर्ग के निकट) तक है। उत्पादन के कुछ भाग का उपयोग स्थानीय उद्योगों जैसे रेशम (फर्थ ऑफ फोर्थ) जूट (डन्डी) छपाई तथा कागज (एडिनबर्ग) उद्योग में हो जाता है। शेष मात्रा लेथ, ग्रेंज माउथ, मैथिल बर्नटिसलैंड आदि बदरगाहों से निर्यात कर दिया जाता है।

(2) आयरशायर—यह छोटा सा कोयला क्षेत्र है जिसका विस्तार 10-12 वर्ग मील में है। स्कॉटिश देश में उत्पादित कोयले का 17% भाग आयरशायर की खानों से प्राप्त होता है। कोयले का उपयोग स्थानीय उद्योगों में हो जाता है। उल्लेखनीय है कि विश्व विख्यात ट्रैक्टर की कम्पनी मैसीफरग्यूसन यहीं विद्यमान है।

(3) लैनार्कशायर—सम्पूर्ण स्कॉटिश कोयले का लगभग आधा भाग प्रस्तुत करने वाले इस क्षेत्र में स्टीम कोल का आधिक्य है। पूर्व से पश्चिम की ओर पर्तें क्रमशः पतली होती जाती हैं। ग्लोग्रा तथा ग्लासगो के औद्योगिक संस्थानों को यहीं से कोयले की सप्लाई होती है।

(4) लोथियन क्षेत्र—एडिनबर्ग के निकट इस क्षेत्र में कोयले का उत्पादन नगण्य है।

लौह-अयस एवं अन्य खनिज :

ब्रिटेन की भट्टियों में प्रयोगित लौह-अयस का लगभग आधा भाग स्थानीय खानों से प्राप्त होता है। लोहे की खानें मुख्यतः लिंकनशायर, नौर्थम्पटनशायर व लीसेस्टरशायर में स्थित हैं।[38] इनके अतिरिक्त स्कॉटलैंड में एडिनबर्ग, मिडलैंड का स्टैफोर्डशायर, योर्कशायर की क्लीवलैंड पहाड़ियाँ भी लौह-अयस के स्रोत हैं। थोड़ी सी मात्रा में नौर्थम्बरलैंड डरहम क्षेत्र में भी निकलता है। सबसे महत्वपूर्ण खानें जुरैसिक एस्कार्पमेंटस में स्कन्थ्रोप से बैनबरी तक फैली हुई हैं। जुरैसिक लौह अयस में धातु प्रतिशत केवल 26 है लेकिन धरातल के निकट स्थित होने से खुदाई बड़ी आसान है। प्रायः खुली विधि से ही खुदाई होती है। अपनी आवश्यकता के शेष भाग विदेशों मुख्यकर स्वीडन, स्पेन, फ्रांस तथा सं० रा० अमेरिका से आयात करता है। पिछले वर्षों में अफ्रीकन देशों मुख्यतः अल्जेरिया सियरालोने तथा लाइबेरिया से लोहे का आयात होने लगा है। लौह अयस बहुत कम होने के बावजूद भी ब्रिटेन दुनियां के 10 अग्रेंजी स्पात उत्पादक देशों में से एक है। पिछले कुछ वर्षों का उत्पादन स्वरूप अग्र लिखित प्रकार रहा है।

38. Demangeon. A.--The British isles, translated by Laborde. E. D. P. 357.

ब्रिटेन में लौह-स्पात उत्पादन
(हजार टनों में)

	पिग आयरन	क्रूड स्टील	स्वदेशी खपत मात्रा
1978	11,434	20,311	20,530
1679	12,898	12,464	20,160
1980	6,316	11,277	15,990
1981	9,554	15,573	15,650
1982	8,389	13,704	15,120

कम्बरलैंड, उत्तरी-पश्चिमी लंकाशायर तथा ग्लैमोरगन में चूने की चट्टानों में हैमेटाइट लोह-प्रयस मिलता है लेकिन उसका उत्पादन दिन प्रति दिन घटता जा रहा है। 1939 से पहले उत्पादन 1 मिलियन टन से अधिक था, 1956 में केवल 400,000 टन रह गया और उसके दस वर्ष बाद उसका भी आया। इसी प्रकार क्लीवलैंड की पहाड़ियां जहां कि जुरैसिक लाइमस्टोन से लोहा खोदा जाता है, 1920 से पहले ब्रिटेन की प्रमुख लोहा उत्पादन इकाई थी। यहाँ का उत्पादन 2 मिलियन टन से अधिक था लेकिन 1957 में केवल 60,000 टन ही रह गया तथा 1964 में एक दिन ऐसा भी आया जबकि उत्तरी स्कैलटन में स्थित लोहे की खानों में खुदाई ही बंद कर देनी पड़ी। इस प्रकार क्लीवलैंड क्षेत्र का लौह-प्रयस व्यवसाय समाप्त हुआ।

कुछ अन्य धातु भी हैं लेकिन खुदाई बड़े पैमाने पर नहीं होती। टिन, जो कभी ब्रिटिश द्वीप समूह का प्रमुख धातु-उत्पादन था वर्तमान में कार्नवाल की केवल दो खानों में खोदी जाती है। इसी प्रकार कभी तांबे का भी महत्व था परन्तु अब उसकी खुदाई भी बंद है। कभी यौद्धिक- आवश्यकता के दबाव से खोद ली जाए तो दूसरी बात है। डर्बीशायर तथा बीयरसाइड की कार्बोनीफेरस युगीन चूने की पर्तों में सीसा, जस्ता, बेराइटस, फ्लूसंपार आदि भी मिलते हैं परन्तु उनकी खुदाई आर्थिक नहीं बैठती। नमक चेशायर, वरसेस्टरशायर, उत्तरी लंकाशायर, स्टैफोर्ड-शायर तथा मैन द्वीप में ट्रियैसिक चट्टानों से मिलता है। इन्हीं पर्तों में थोड़ा सा जिप्सम भी मिलता है।

गैस तथा पैट्रोलियम :

ब्रिटेन में प्रयोगित तेल का अधिकतर भाग विदेशी आयात से प्राप्त होता है। केवल 1% भाग ही देशी साधनों से मिल पाता है। इसका अधिकतर भाग

नोटिंघम के पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व में स्थित यार्करिग, प्लंगार तथा बोथम साल आदि केन्द्रों से प्राप्त होता है। यह तेल मिलस्टोन ग्रिट चट्टानों की प्रतिनतियों में पाया जाता है। थोरेसबी कोयले की खानों में भी तेल निकलता है। जिसे मैनचेस्टर के निकट स्थित एक छोटे से तेल शोधक कारखाने में साफ कर लिया जाता है। पहले स्कॉटिश-शेल चट्टानों से भी कुछ तेल निकलता था लेकिन 1962 में उत्पादन बंद हो गया। पिछले दिनों फोर्मबी (लंकाशायर) किमरिज (डोरसैट) गेन्सबरो (लिंकनशायर) आदि क्षेत्रों में तेल प्राप्ति की कुछ संभावनाएँ बनी हैं। इधर नीदरलैंड्स के तटवर्ती समुद्रों में तेल की प्राप्ति से प्रोत्साहित होकर उत्तरी सागर में लगभग 30,000 वर्ग मील भू-क्षेत्र में सर्वेक्षण चल रहा है। हो सकता है कि इस पट्टी में कुछ तेल निकले।

उत्तरी सागर में सर्वेक्षण के दौरान अप्रत्याशित रूप से प्राकृतिक गैस मिली है और यह एक शुभ लक्षण माना जा रहा है। अकेले गैस के इस भण्डार से ही देश की 14% शक्ति सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति सम्भव हो सकेगी, ऐसा अनुमान है। तटवर्ती पट्टी में गैस 10,000 फीट की गहराई पर मिली है। नोरफोक के तटवर्ती समुद्र में भी खोज चल रही है। यहाँ 5000 फीट की गहराई तक ड्रिलिंग कर लिया गया है। ऐसी योजना बनाई जा रही है कि उत्तरी सागरीय क्षेत्र की गैस को पाइप लाइनों द्वारा तट पर स्थित केन्द्रों—यासिंगटन (पूर्वी योर्कशायर) हम्बर, बैक्टन (नोरफोक) तथा हर्टलेपूल तक पहुँचाया जाए और वहाँ से देश के अन्य भागों को वितरित की जाए। वितरण की समुचित व्यवस्था के लिए लीड्स तथा रगबी में 'राष्ट्रीय ग्रिड' बनाए जाएँगे। इनमें से प्रथम केन्द्र पूर्वी इंगलैंड तथा रगबी मिडलैंड प्रदेश को गैस सप्लाई करेगा। हिचिन में एक तीसरा ग्रिड स्टेशन बनाया जाएगा। जहाँ से दक्षिणी-पूर्वी प्रदेशों को गैस सप्लाई की जाएगी। गैस का भण्डार कितना समृद्ध है उत्तरी सागरीय क्षेत्र में, इसका अनुमान इससे लग सकता है कि जितने कुएँ 'ड्रिल' किए गए उनके आधों में गैस निकली है। उत्तरी योर्कशायर मूर प्रदेश में स्थित लोकटन नामक स्थान पर भी प्राकृतिक गैस निकली है।

प्राकृतिक गैस के उपरोक्त स्रोत ब्रिटेन को पिछली दशाब्दी के उत्तरार्द्ध में ही मिले है। अभी तक ढंग से खुदाई भी प्रारम्भ नहीं हो पाई। अभी गैस सम्बन्धी अधिकतर आवश्यकता कृत्रिम गैस केन्द्रों व आयात की हुई गैस से ही पूरी की जाती है। यथा, सहारा से मैथेन गैस को तरल रूप में आयात किया जाता है। 1964 में यह तय किया गया कि प्रति सप्ताह दो विशेष टैंकर जलयान 12,000 टन गैस तरल रूप में यहाँ से ले जाकर थेम्स की एस्चुरी में पहुँचायेंगे। वहाँ से देश के भीतरी भागों को वितरित की जाएगी। इस आयात से ब्रिटेन की लगभग 10%

आवश्यकता पूरी हो जाती है। यह गैस वस्तुतः अल्जीरिया के हसीर-मैल क्षेत्र से आती है। देश में इसके वितरण के लिए लंकाशायर, मिडलैंड, यौर्कशायर के बड़े-बड़े नगरों तथा लंदन को जोड़ती हुई एक 18 इंच मोटी पाइप लाइन बिछाई गई है। इसके अतिरिक्त गैस-पूर्ति कोयला द्वारा निर्मित गैस से होती है जो रोथरहम तथा शैफील्ड में स्थित विशाल कारखानों में तैयार की जाती है।

कोयला से गैस तैयार करने के लिए कोयला को एक वायुरहित विशालाकार लम्बवत नलिका में भरकर 1000 सेंटीग्रेड तापक्रम तक गर्म किया जाता है। इस अत्यधिक गर्मी से 8–12 घंटे में गैस तथा तारकोल अलग हो जाते हैं। तली में कोक रह जाता है जिसे नलिका के नीचे होकर निकाल दिया जाता है। फिर उस गर्म गैस व तारकोल को बाहर निकाला जाता है तारकोल तो इसी उद्देश्य के लिए बने गड्ढे में चला जाता है तथा गर्म गैस को पानी एवं हवा से ठंडा करने के लिए 'कन्डेंसर्स' में रखा जाता है। चूंकि गैस में अभी अमोनिया होता है इसे पानी के द्वारा अलग कर दिया जाता है। इसी अमोनिया से अमोनिया सल्फेट उर्वरक बनाया जाता है। तत्पश्चात् गैस को आयरन आक्साइड के बक्सों के ऊपर होकर निकाला जाता है इससे गैस का हाइड्रोजन सल्फाइड अलग हो जाता है। इसी से सल्फरिक एसिड बनता है। अन्त में बैन्जिन को अलग करके गैस संचयकों में एकत्र कर ली जाती है। 1969 में कृत्रिम गैस बनाने के लिए 9.2 मिलियन टन कोयला खर्च किया गया जिससे लगभग 655 मिलियन थर्म्स गैस तैयार हुई।

पैट्रोल द्वारा तैयार की गई गैस कोल-गैस से सस्ती पड़ती है। ग्रेन द्वीप पर स्थित विशाल बी० पी० तेल शोधन कारखाना पैट्रोल से कृत्रिम-गैस तैयार करता है। 1969 में 2135 मिलियन थर्म्स तेल-गैस तैयार की गई जिसमें 5·9 मिलियन टन तेल खर्च हुआ। आजकल ब्रिटेन में गैस की लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। प्रतिवर्ष लगभग 3700 मिलियन थर्म्स गैस की खपत हो जाती है। गैस अन्ततः सस्ती भी पड़ जाती है क्योंकि कृत्रिम गैस बनाते समय कई प्रकार के उप-उत्पादन मिल जाते हैं। यथा 1969 में 6,82,000 टन तारकोल, 88 मिलियन क्रूड तथा 2·9 मिलियन गैलन शोधी हुई बैन्जोल प्राप्त हुई। 1 मई 1949 को गैस उद्योग को सार्वजनिक क्षेत्र में ले लिया गया। गैस कांउसिल की स्थापना की गई। कांउसिल ने सुवितरण की दृष्टि से समस्त देश को 12 क्षेत्रों (इंगलैंड –10, वेल्स–1, स्कॉटलैंड–1) में बांटकर राष्ट्रीय ग्रिड के भीतर ही क्षेत्रीय बोर्ड बनाए हैं।

जैसा कि पूर्वोल्लेख है, ब्रिटेन अपनी आवश्यकता का अधिकांश तेल विदेशों से आयात करता है। इसके प्रधान सप्लायर कुवैत (कुल का 40%) ईराक, वैनी-

ज्वला, लीबिया तथा ईरान हैं। 1939 तक यह सोचा गया था कि समुद्र पार देशों से तेल का आयात शोधे हुए तेल के रूप में ही किया जाए। युद्धोत्तर दिनों में यह महसूस किया गया कि क्रूड-ऑयल मंगाकर उसे देश में ही शोधा जाए। अतः 1945 से ही यहाँ तेल शोधन कारखाने स्थापित होने लगे। इनमें से अधिकतर जलाशयों के तट पर परन्तु औद्योगिक केन्द्रों के निकट हैं। वर्तमान में 70 मिलियन टन वार्षिक क्षमता युक्त लगभग 20 कारखाने हैं। साउथेम्पटन के निकट फॉली में स्थित कारखाना सबसे बड़ा है जिसकी वार्षिक क्षमता 12 मि० टन है। अन्य में ग्रेन द्वीप (9.5) शैलहैविन (8) स्टैन लो (5) मिलफोर्ड हैविन (4.5) लांडार्सी (3.3) तथा ग्रेंज माउथ (3.25) में स्थित तेल शोधन कारखाने उल्लेखनीय हैं।[39]

तेल शोधक कारखाने कहीं खाली न पड़े रहें इस दृष्टि से तेल वाहक यानों (टैंकर्स) की क्षमता भी बढ़ाई गई है। अब तक प्रायः 26,000 टन की भार क्षमता वाले टैंकर्स थे अब भार-क्षमता को बढ़ाकर औसत रूप में 2,50,000 टन कर दिया गया है। इसी प्रकार तेल शोधक कारखानों एवं पाइप लाइनों की क्षमता में वृद्धि करने की योजना बनाई जा रही है। अभी तक इनकी क्षमता माँग के ऊपर निर्धारित की गई थी परन्तु अब उत्तरी सागरीय क्षेत्र में होने वाले तेल-उत्पादन को ध्यान में रख कर की जाएँगी।

ब्रिटिश गैस उद्योग, जिसका राष्ट्रीयकरण 1949 में ही कर दिया गया था, का 1 जनवरी 1973 को पुनर्गठन किया गया। अब इसका नाम 'ब्रिटिश गैस निगम' रखा गया। गैस अधिनियम 1972 के अन्तर्गत गठित यह निगम गैस के विकास, वितरण, संचालन व सहयोग आदि सभी के लिए पूर्णतः उत्तरदायी है। निगम के अध्यक्ष तथा सदस्यों का मनोनयन शक्ति मंत्रालय द्वारा किया जाता है। गैस कांउसिल (एक्स प्लोरेशन) लि० तथा हाइड्रोकार्बन ग्रेट ब्रिटेन लि. नामक दो कम्पनियाँ, जो कि गैस निगम की ही सहायक हैं, निरन्तर पैट्रोल एवं गैस की खोज में संलग्न रहती है। इन कम्पनियों ने आइरिश सागर, इंगलिश चैनल, कैल्टिक सागर, उत्तरी सागर व अन्य कई क्षेत्रों में खोज कार्य सम्पादित किये है।

1982–83 में ब्रिटिश गैस निगम ने 16,463 मि० थर्म गैस का विक्रय किया। प्रमुख उपभोक्ता निम्न प्रकार हैं—

---

39. Simmons. W. M.--The British Isles, p. 140.

ब्रिटेन : गैस खपत

उपभोक्ता	संख्या	मात्रा
गृह कार्य उपभोक्ता	15.34 मि.	8,616 मि. थर्म
उद्योग क्षेत्र उपभोक्ता	83,000	5,605 मि. थर्म
व्यापारिक उपभोक्ता	499,000	2,242 मि. थर्म

शक्ति :

1927 से पहले ब्रिटेन के विभिन्न भागों और उप-भागों में स्थानीय रूप से, छोटे-छोटे स्तर पर विद्युत का उत्पादन होता था। 1927 में सारे देश के शक्ति उत्पादक केन्द्रों को जोड़कर राष्ट्रीय ग्रिड बनाया गया। पिछले दशकों में शक्ति-उत्पादन के साधनों के स्वरूप में भी अन्तर आया है। 1948 से पहले कोयला ही एक मात्र एवं सर्वत्र प्रयोग किये जाने वाला साधन था जिससे ताप शक्ति-गृह चलाकर विद्युत पैदा की जाती थी। बाद में पैट्रोल, जलशक्ति, अणुशक्ति का प्रयोग भी होने लगा और अब बड़ी तेजी से कोयला का प्रतिशत घटता जा रहा है। 1962 तक मार्नहैम में स्थित ताप शक्ति गृह, शक्ति उत्पादन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्थान था लेकिन अब उसके स्थान पर अनेक अणु शक्ति गृह बन गए हैं जिनकी क्षमता उससे कहीं अधिक है।

प्रायः ऐसा हुआ है कि पैट्रोल तथा अणुशक्ति का प्रयोग कोयला क्षेत्रों से दूर किया गया है। इससे शक्ति उत्पादन भी अपेक्षाकृत सस्ता पड़ता है। कोयला क्षेत्रों में अभी भी कोयले का ही उपयोग होता है। जल शक्ति का उपयोग उत्तर-पश्चिम के भागों में प्रमुखतः स्कॉटलैंड एवं आयरलैंड में होता है। उत्तरी स्कॉटलैंड के 85% शक्ति गृह जल से ही संचालित हैं। प्रधान शक्ति गृह लोच रैनोच के निकट तुमैल घाटी में, लोच लोमोण्ड के उत्तर-पश्चिम में स्लोय, लोच टे के आस-पास तथा ओरिन, ग्रान, तथा फरार नदियों पर स्थित हैं। दक्षिणी स्कॉटलैंड में चूंकि जलशक्ति सम्भावनाएं कम हैं एवं कोयला की विद्यमानता है अतः अधिकतर जगह ताप शक्ति गृह हैं। दक्षिणी स्कॉटलैंड की केवल 6% शक्ति जल द्वारा संचालित है। गैलोन तथा ऊपरी क्लाइड पर प्रधान जल शक्ति-गृह स्थित हैं। वेल्स में जल शक्ति गृह फैस्टीनियोग तथा डोलगेरोग नामक स्थानों पर विद्यमान हैं। इंगलैंड में जल शक्ति गृहों को राष्ट्रीय ग्रिड से जोड़ दिया गया है। इंगलैंड में अधिकतर शक्ति गृह कोयला से ही चलाए जाते हैं। जो स्थान कोयला प्रदेशों से दूर हैं जैसे दक्षिणी इंगलैंड वहाँ पैट्रोल या अणु का सहारा लिया गया है क्योंकि यहाँ जल शक्ति की सम्भावनाएं नहीं हैं।

आणुविक शक्ति गृह प्रायः कोयला क्षेत्रों से दूर ऐसे स्थानों पर स्थापित किए जा रहे है जहाँ पानी की सुविधा हो क्योंकि इनको ताप शक्ति गृहों की अपेक्षा पानी की ज्यादा जरूरत पड़ती है। दूसरे, इस तथ्य को सामने रखा गया है, आणुविक शक्ति गृहों का जो बचा हुआ पदार्थ है उसका उपयोग सम्भव हो सके। प्रथम, अणु शक्ति गृह 1956 में स्थापित किए गए जबकि अणु केन्द्रों की दो इकाइयाँ क्रमशः काल्डंल हाल (कम्बरलैंड) तथा चापेल क्रॉस (डंफ्रीशायर) में स्थापित की गई। कुछ दिनों बाद बर्कले एवं ब्राडवैल में अणु शक्ति गृह बनाए गए। पिछले वर्षों में 19 आणुविक शक्ति-संचालन शक्ति-गृह बनाने का कार्यक्रम बनाया गया। इनको 1970 के अन्त तक चालू करके राष्ट्रीय ग्रिड में जोड़ देने का लक्ष्य रखा गया। विशेषज्ञों का मत है कि देश की आवश्यकता को देखते हुए प्रति तीन वर्ष में एक अणु-केन्द्र नया स्थापित किया जाना चाहिए। क्योंकि उत्तर-पश्चिम के कोयला प्रदेश क्रमशः समाप्ति की ओर है। इसी क्रम में वाशिंगटन के निकट फिडलर्स-फैरी में एक शक्ति गृह बनाया जा रहा है जिसकी क्षमता 2½ मिलियन किलोवाट होगी। यह विश्व का सबसे विशाल अणु शक्ति गृह होगा। अणु शक्ति गृहों को भी राष्ट्रीय ग्रिड से जोड़ दिया गया है। ग्रिड से यह लाभ है कि करेंट में इच्छित परिवर्तन हो जाता है। दूसरे, एक शक्ति गृह में अगर कुछ खराबी हो जाए तो उसके क्षेत्र में प्रवाह ग्रिड से आता है।

1960 में कोयले का उत्पादन 200 मिलियन टन था। इसमें से 49 मि० टन ताप शक्ति गृहों में खर्च हुआ। इसी वर्ष सम-बराबरी में तेल 9 मि० टन खर्च हुआ। ऐसा अनुमान है कि दिन-प्रतिदिन कोयले की मात्रा घटती जाएगी और उसका स्थान पैट्रोल, अणु तथा प्राकृतिक गैस लेती जाएंगी। वैसे भी योजनानुसार तथा 1967 के ईंधन नीति के श्वेत-पत्र के अनुसार कोयले का उत्पादन क्रमशः कम होगा। योजनानुसार 1975 तक अणुशक्ति एवं प्राकृतिक गैस ब्रिटेन की एक चौथाई शक्ति के लिए उत्तरदायी होनी थी। तेल का शेयर शक्ति उत्पादन में बहुत ज्यादा नहीं हो सकेगा क्योंकि इसका उपयोग यातायात में है। दूसरे, इसका अधिकांश भाग आयात होता है।

निम्न सारिणी से स्पष्ट है कि पिछले 10 वर्षों में ही शक्ति के विविध स्रोतों की आनुपातिक स्थिति में बहुत अंतर हुआ है। तेल एवं कोयला की मात्रा घटी है जबकि प्राकृतिक गैस, अणुशक्ति एवं जलशक्ति की मात्रा योजनानुसार बढ़ी है।

शक्ति उपभोग (प्राथमिक स्रोतों के संदर्भ में) [40]

(मिलियन टन कोयला के बराबर)

	1972	1977	1980	1981	1982
तेल	162.2	136.6	121.4	110.9	111.1
कोयला	122.4	122.7	120.8	118.2	110.7
प्राकृतिक गैस	40.9	62.8	71.8	72.1	71.7
अणुशक्ति	10.6	14.3	13.4	13.7	16.0
जलशक्ति	1.8	2.0	2.0	2.3	2.4

□□□

40. Britain—Official Hand book 1984.

ब्रिटेन : उद्योग धन्धे

ब्रिटेन को दुनियाँ में सर्वप्रथम औद्योगिक देश होने का गौरव प्राप्त है। 19 वीं शताब्दी के दौरान यहाँ के विभिन्न प्रदेशों में भारी औद्योगिक विकास हुआ। इस विकास की पृष्ठभूमि में स्वदेशी खनिज एवं शक्ति के साधन जैसे कोयला, लोहा या नमक, उपनिवेशों के रूप में कच्चे मालों के स्रोत उपयुक्त बाजार तथा अच्छे बंदरगाहों ने आधारभूत पार्ट अदा किया है। यह भी एक महत्वपूर्ण तत्व है कि यहाँ के अधिकतर औद्योगिक प्रदेश एक ओर कोयला प्रदेशों के निकट हैं तो दूसरी ओर समुद्र तट या बंदरगाह के निकट। अतः शीघ्र विकास कर गए। 20 वीं शताब्दी में यूरोप के अन्य देशों, अमेरिका व जापान में भी औद्योगिक विकास हुआ और विश्व बाजारों में ब्रिटेन के अनेक प्रतिद्वंद्वी हो गए। दोनों महायुद्धों तथा उपनिवेशों की समाप्ति ने भी पिछले दशकों में उद्योगों के स्वरूप पर भारी प्रभाव डाला है। इधर दोनों विश्व युद्धों की अन्तराल-अवधि में दक्षिण के अनेकों प्रदेशों में जहाँ बाजार तथा श्रम की दृष्टि से उपयुक्त अवस्थाएँ थीं कई नये व आधुनिक उद्योग विकसित हो गये। इन सारी परिस्थितियों ने मिलकर पश्चिम मध्य एवं उत्तर के परम्परागत औद्योगिक क्षेत्रों को यह सोचने के लिए मजबूर होना पड़ा है कि अपनी स्थिति बनाए रखने के लिए उन्हें क्या करना चाहिए। सरकार भी इस ओर ध्यान दे रही है इसीलिए आजकल ब्रिटेन में नए कारखानों की स्थापना को हतोत्साहित किया जाता है। लंदन या बर्मिंघम जैसे सघन क्षेत्रों में बिना सरकारी आज्ञा के छोटे से छोटा उद्योग भी स्थापित नहीं किया जा सकता। इसी तरह नव-स्थापित उद्योगों को प्रायः ऐसे जिलों के लिए प्रस्तावित किया जाता है जहाँ बेकारी ज्यादा है या जो कम विकसित हैं। परम्परागत औद्योगिक प्रदेशों का अनुस्थापन बाजार की मांग एवं बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार क्रमशः कई नए उद्योगों की तरफ भी किया जा रहा है। उदाहरणार्थ लंकाशायर प्रदेश जो सदियों से वस्त्र व्यवसाय में रत रहा है परन्तु अब बड़ी तेजी से रसायन व मशीनरी उद्योग भी वहाँ विकसित किए जा रहे हैं क्योंकि विश्व बाजारों में ब्रिटिश-वस्त्रों की अब उतनी माँग नहीं रही।

लोह-इस्पात उद्योग :

सं० रा० अमेरिका, सोवियत संघ, जापान तथा पश्चिमी जर्मनी के बाद ब्रिटेन का इस्पात-उत्पादन की दृष्टि से विश्व में पांचवां स्थान है। देश में इस समय लगभग 125 प्रवात भट्टियाँ कार्यरत हैं। इनमें से अधिकांश चार प्रदेशों में केन्द्रित हैं। ये प्रदेश हैं—

(1) उत्तर-पूर्व में टाइन एवं टीज नदियों की घाटियों के मध्य में।
(2) पूर्वी मिडलैंड प्रदेश की जुरैसिक पट्टी।
(3) शैफील्ड एवं रोथरहैम प्रदेश।
(4) दक्षिणी वेल्स।

इनके अतिरिक्त क्लाइड की निचली घाटी में ग्लासगो के आस-पास कम्बरलैंड, दक्षिणी-पूर्वी लंकाशायर, फ्लिंट तथा पश्चिमी मिडलैंड प्रदेशों में भी इस्पात उद्योग के कारखाने हैं। पिछले दशकों में कुछ स्थानों पर आधुनिकतम उपकरणों से युक्त इस्पात के विशाल कारखाने स्थापित किए गए हैं। ऐसे केन्द्रों में न्यूपोर्ट के निकट लानवर्न, शोटोन तथा आइम्बो तथा मदरवैल आदि इस्पात केन्द्र प्रमुख हैं। शोटोन तथा आइम्बो की इस्पात उद्योग की ये इकाइयां उत्तरी-पूर्वी वेल्स प्रदेश के विकास की दृष्टि से स्थापित की गई हैं। कोरबी के कारखाने को बड़ा करके उसकी क्षमता बढ़ा दी गई है। इसे आधुनिक मशीनों एवं उपकरणों से सज्जित किया है।

लोह इस्पात उद्योग के इन केन्द्रों के विकास की पृष्ठभूमि में झांकने से स्पष्ट होता है कि कुछ प्राकृतिक व कुछ मानवीय तत्व ऐसे रहे हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इनके विकास में सहयोग किया है। कोयले की निकटता, स्थानीय खानों या आयात से प्राप्त लोह-अयस की सुविधा, पानी की पर्याप्तता, चूने की सप्लाई, समुद्र तट व किसी न किसी बड़े बंदरगाह से सम्बन्ध, ब्रिटेन के आर्थिक ढांचे का मुख्य आधार उद्योगों का होना जिसके लिए अधिकाधिक मशीनों व यातायात के साधनों की आवश्यकता आदि कुछ वे तत्व हैं जिन्होंने उक्त क्षेत्रों में इस्पात उद्योग के विकास में सहयोग किया। निस्संदेह इनमें से कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जहाँ हजारों वर्षों से लोहे को गलाया जाता था और उसके हथियार बनाए जाते थे लोहे की परतें धरातल के निकट थी। कोयला, लकड़ी या चारकोल से उसे बड़े-बड़े गड्ढों में गलाकर मध्य युगों तक अस्त्र शस्त्र बनाए जाते रहे हैं। इनके अवशेष आज भी कई स्थानों पर देखे जा सकते हैं। इस प्रकार परम्परागत कुशलता भी एक महत्वपूर्ण तत्व रहा है।

1949 से पहले उद्योगों की अन्य शाखाओं की तरह यह उद्योग भी निजी क्षेत्र में द्वितीय विश्व युद्ध में यौद्धिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कार-

खानों के अनुस्थापन के प्रयत्न जब किए तो महसूस किया गया कि कुछ आधारभूत उद्योगों का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए। फलतः 1949 में 'लोह एवं इस्पात कानून' पास किया गया। इस अधिनियम के अनुसार 1951 में यह उद्योग राजकीय नियंत्रण में चला गया। इसके संचालन के लिए एक निगम की स्थापना की गई। परन्तु 1951 में जब कंजरवेटिव दल की सरकार बनी तो उसने इसे पुनः निजी क्षेत्र में दे दिया। लेकिन यह प्रश्न फिर भी चलता ही रहा और अंत में 1953 में लोह इस्पात अधिनियम के सुचारु संचालन के लिए लोह एवं इस्पात मंडल की स्थापना की गई। इसके सदस्यों की नियुक्ति के लिए शक्ति मंत्रालय को उत्तरदायी बनाया गया। लेकिन ब्रिटेन जैसे प्रजातंत्री देश में राष्ट्रीयकरण या राजकीय नियन्त्रण लगाना इतना आसान नहीं होता।

22 मार्च 1967 को लोह इस्पात अधिनियम 1967 के तहत ब्रिटिश इस्पात निगम की स्थापना की गई। निगम के गठन के फलस्वरूप ब्रिटेन के प्रमुख 14 इस्पात उत्पादक कम्पनियों का नियंत्रण एक जगह से होने लगा है। इन कम्पनियों की 'सीक्योरिटीज' इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र में आ गई हैं। ये 14 कम्पनियाँ ब्रिटेन में कुल उत्पादित क्रूड इस्पात के 90% भाग के लिए उत्तरदायी हैं। इन कम्पनियों (इनकी लगभग 200 शाखाओं सहित जिनमें 50 विदेशों में स्थित हैं) की 'सीक्योरिटीज' निगम के अन्तर्गत 28 जुलाई 1967 को आई।[41] निगम के गठन एवं इस्पात उत्पादकों के संगठन का परिणाम यह हुआ है कि यह विश्व की सबसे बड़ी औद्योगिक संस्था है जो एक इकाई के रूप में किसी सरकार द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र में संचालित है। इसमें लगभग 250,000 व्यक्ति संलग्न हैं। इसका वार्षिक उत्पादन एवं विक्रय मूल्य 1000 मिलियन पौंड से अधिक है।

अधिनियम के अनुसार निगम का यह भी कार्य है कि वह उचित दरों पर विविध प्रकार के इस्पात एवं इस्पात के विविध उत्पादनों की व्यवस्था करे, साथ ही निर्यात बढ़ाने का प्रयास करे। देश के भीतर विक्रय की दशाएं एवं कीमत प्रकाशित करने का नियम बनाया गया। इससे कारखानेदारों द्वारा वसूल किए जाने वाले अनुचित मूल्यों पर रोक लगाने का प्रयास किया गया है। उपरोक्त उल्लेखित 14 कम्पनियों के अतिरिक्त जो लोह-इस्पात संस्थान रह गए उन्होंने निजी क्षेत्र में एक स्वतन्त्र संगठन का गठन किया है जिसे 'बिस्पा' यानि 'ब्रिटिश इंडिपेन्डेन्ट स्टील प्रोड्यूसर्स एसोसियेशन' के नाम से जाना जाता है। इसका गठन निजी क्षेत्र के अधिकारों की सुरक्षा के लिए किया गया है।

---

41. The Statesman's Year Book 1970-71

पिछले कुछ वर्षों में लौह-इस्पात उत्पादन के आँकड़े इस प्रकार हैं—

	पिग-आयरन	क्रूड-इस्पात	स्वदेशी-खपत
1966	15,710	24,315	22,297
1967	15,153	23,895	21,292
1968	15,435	25,862	22,744
1982	8,389	13,704	15,120

(उत्पादन 1000 टनों में)

पिछले दो दशकों में उत्पादन कितनी तेजी से बढ़ा है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि *1950* में उत्पादन केवल 8 मिलियन टन था। वर्तमान स्वदेशी खानों से प्राप्त होने वाले लौह-अयस की मात्रा खपत की तुलना में बहुत कम है अतः पर्याप्त भाग स्पेन, स्वीडन आदि देशों से आयात करना पड़ता है। 1969 में 18 मिलियन अयस आयात किया गया। ब्रिटेन का लगभग 80% इस्पात 'ओपन हर्थ-विधि' से तैयार किया जाता है। आजकल प्रवात भट्टियों के साथ-साथ विद्युत भट्टियाँ कारखानों में लाई जाने लगी हैं।

अध्ययन की सुगमता के लिए महत्त्वपूर्ण लौह-इस्पात क्षेत्रों का विवरण अलग से देना उपयोगी होगा।

(1) उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र—इस क्षेत्र के लौह-इस्पात संस्थान मुख्यतः टाइन एवं टीज नदियों के मध्य में स्थित हैं। ब्रिटेन का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण इस्पात-प्रदेश है जहाँ देश का लगभग एक-तिहाई इस्पात तैयार होता है। यहाँ के कारखाने आधुनिकतम मशीनों व विधियों द्वारा संचालित हैं। इस्पात के अतिरिक्त सम्बन्धित उत्पादन जैसे एंजिन, यातायात के उपकरण, गर्डर्स आदि भी तैयार किए जाते हैं। मिडिल्सवर्ग, न्यूकैसिल, संडरलैण्ड तथा डार्लिंगटन प्रधान केन्द्र हैं। डार्लिंगटन में इस्पात के कारखानों के अतिरिक्त विविध एंजिनों तथा यातायात के उपकरणों का भी निर्माण होता है। संडरलैंड में जलयान निर्माण के लिए बड़े-बड़े यार्डस हैं। मिडिल्सवर्ग तथा न्यूकैसिल प्रमुखतः इस्पात उत्पादन में रत हैं। उल्लेखनीय है कि टीज नदी क्षेत्र में लगभग 30 प्रवात भट्टियाँ हैं जिनमें से अधिकांश मिडिल्सवर्ग एवं न्यूकैसिल नगरों में हैं।

मिडिल्सवर्ग के विकास का आधार ही इस्पात-उद्योग रहा है। इसकी वृद्धि का अनुमान जनसंख्या के आँकड़ों से लगाया जा सकता है। 1801 में यहाँ की जनसंख्या 25 थी जो बढ़ते-बढ़ते आज लगभग 2 लाख हो गई है। 1842

में इसे बन्दरगाह बनाया गया था तथा 1850 में यहाँ प्रथम भट्टी बनाकर इस्पात उद्योग का श्रीगणेश किया गया था। यहाँ इसकी स्थापना में ईस्टनंमूर एवं क्लीवलैण्ड की पहाड़ियों से प्राप्त होने वाले लोहे ने प्रेरणात्मक सहयोग दिया। टाइन-टीज प्रदेश को कोयला नोर्थम्बरलैण्ड-डरहम की खानों से, लोहा क्लीवलैण्ड तथा स्वीडन से आयात द्वारा, चूने का पत्थर पीनाइन श्रृंखला में स्थित खानों से प्राप्त हो जाता है। यहाँ के अन्य केन्द्रों में स्टोकटन, थोर्नबी, नोर्थ ग्राम्सबी आदि उल्लेखनीय हैं।

चित्र–12

(2) मिडलैंड प्रदेश—यह प्रदेश परम्परागत रूप से लोह इस्पात में रत रहा है। स्वयं बर्मिंघम का विकास ही लुहारों के गाँव से हुआ है। आज यह

प्रदेश इतना सघन औद्योगिक है हर तरफ फैक्ट्री धुंआ, मजदूरों के घरों की कतारें, फैला हुआ कोयला नजर आता है। यहाँ का दृश्य साधारणतः वैसा ही लगता है जैसा कि सं० रा० अमेरिका के यग्स-टाउन पिटसबर्ग क्षेत्र का। यहाँ लोहा प्रदेश के पूर्व में विद्यमान जुरैसिक पट्टी की खानों से प्राप्त हो जाता है। कोयला स्टैफोर्ड-शायर की खानों से आ जाता है। इस्पात के कारखानों का बर्मिंघम में इतना भारी केन्द्रीकरण हो गया है कि आगे के लिए यह नीति अपनानी पड़ी है कि यहाँ कारखाने और न बढ़ाए जाएं। इस्पात के अतिरिक्त ऑटो-मोबाइल्स, रेल के डिब्बे, मोटर साइकिल, कृषि यंत्र आदि भी तैयार किए जाते हैं। अन्य केन्द्रों में डडले, कावेंट्री, एलसैस्टर, वरसैस्टर, ड्राइटविच, सेजले तथा रॉलीरेगिस आदि उल्लेखनीय हैं।

(3) शैफील्ड एवं रौथर हैम प्रदेश—यह प्रदेश ब्रिटेन के लगभग तीन चौथाई एलीय इस्पात के लिए उत्तरदायी है। सदियों से कभी जंग न लगने वाले इस्पात के उत्पादन में यहाँ विशिष्टता प्राप्त की गई। आज भी शैफील्ड अपने कटलरी उद्योग के लिए विश्व - विख्यात है। यहाँ के चाकू, उस्तरे, ब्लेड्स, कांटे, छुरी औजार अपना सानी नहीं रखते। यहां के सामान की माँग के स्वरूप को यहाँ के कुछ विशिष्ट उत्पादनों की मात्रा जैसे हैवर्गा ब्लेडस (75 मिलियन), चाकू (25 मिलियन) कैंची (7 मिलियन) आदि से समझा जा सकता है। रौथरहैम में इस्पात तैयार किया जाता है। सारा प्रदेश यातायात के द्रुत-साधनों द्वारा हर बंदरगाह से जुड़ा हुआ है। अन्य केन्द्रों में चैस्टरफील्ड तथा डॉन कास्टर प्रमुख हैं। डॉन-कास्टर में रेल के एंजिन तैयार किये जाते हैं। मिडलैंड की तरह शैफील्ड प्रदेश में भी लोहा व्यवसाय कई सदियों से परम्परागत रूप में चला आया है। पहले लोहे को लकड़ी या चारकोल से गलाया जाता था। कोयला की प्राप्ति ने इसे आधुनिक रूप दे दिया। वर्तमान में यहाँ कोयला डरबी-नौटिंघमशायर तथा लोहा हल बंदरगाह द्वारा आयात से प्राप्त होता है। क्लीवलैंड के लोहे की खानों के बंद होने का सर्वाधिक असर इस क्षेत्र पर हुआ है।

(4) दक्षिणी वेल्स—इस प्रदेश के उद्योग विकास की पृष्ठभूमि में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पार्ट उस कोयला ने किया है जो यहाँ धरातलीय पर्तों के रूप में आसान खुदाई के लिए प्राप्त है। यह अच्छी कोकिंग-कोल किस्म का कोयला है। लोह-अयस न्यूपोर्ट बंदरगाह द्वारा स्पेन व अल्जीरिया से आयात कर लिया जाता है। स्थानीय रूप से कुछ मात्रा में जस्ता, सीसा भी प्राप्त है। इन सारी परिस्थितियों ने मिलकर दक्षिणी वेल्स को अपने टिन-प्लेट उद्योग में न केवल ब्रिटेन वरन् दुनियां में प्रसिद्ध कर दिया है। टिन-प्लेट के अतिरिक्त मशीन - निर्माण, जलयान मरम्मत, छोटी मशीनों का निर्माण भी प्रचलित है। स्वांसी, न्यूपोर्ट,

कारडिफ आदि प्रधान औद्योगिक केन्द्र है। स्वांसी एवं कारडिफ में भारी इस्पात के कारखाने हैं जो देश का लगभग 1/5 इस्पात प्रस्तुत करते हैं।

छोटे इस्पात क्षेत्रों में क्लाइड की घाटी लैनार्कशायर एवं द० लंकाशायर उल्लेखनीय हैं। क्लाइड घाटी के इस्पात केन्द्र ग्लासगो के आस-पास हैं। एक दो कारखाने लैनार्कशायर के कोयले की निकटता को ध्यान में रखते हुए स्थापित किए गए हैं। क्लाइड की घाटी ब्रिटेन का दशमांश इस्पात प्रस्तुत करती है। यहाँ का इस्पात स्थानीय सम्बन्धित धातु उद्योगों में, जैसे इंजीनियरिंग, जलपोत निर्माण में खर्च हो जाता है। इस्पात के कारखानों कोयला लैनार्कशायर तथा फाइफशायर से एवं लौह-अयस स्वीडन से प्राप्त हो जाता है। प्रदेश को समुद्री यातायात की सुविधा है।

इंगलैंड के उत्तर-पश्चिम में स्थित कम्बरलैंड में प्राप्त स्थानीय कोयला एवं लोहे के आधार पर बैरो के निकट पिग-आयरन बनाने के कारखाने विकसित हो गए हैं। यहाँ से पिग-आयरन देश के विकसित औद्योगिक क्षेत्रों को भेज दिया जाता है।

इस्पात के साथ आयरन कास्टिंग्स का उत्पादन भी ब्रिटिश इस्पात केन्द्रों में होता है। वार्षिक उत्पादन लगभग 1.5 मिलियन टन है।

वस्त्रोद्योग :

वस्त्र व्यवसाय विशेषकर ऊनी वस्त्र व्यवसाय ब्रिटिश द्वीपों में परम्परागत रूप से सदियों से चला आ रहा है। देशज कच्चे माल के रूप में भूर क्षेत्रों से प्राप्त की गई ऊन के आधार पर यहाँ का वस्त्र व्यवसाय मध्य शताब्दियों में ही अपना स्थान बना चुका था। सचाई तो यह है कि आधुनिक औद्योगिक क्रांति वस्त्र व्यवसाय के विकास के लिए किए गए प्रयत्नों का ही फल है। ऊनी वस्त्रोद्योग तो यहाँ पहले से विकसित था ही। 16–17 वीं शताब्दी में फ्लैंडर्स तथा फ्लेमिंग्स जुलाहों ने यहाँ आकर लिनेन वस्त्रों का निर्माण भी प्रारम्भ किया। फ्लेमिंग्स लोग लंकाशायर में आकर बसे। इस प्रकार इस प्रदेश में उस व्यवसाय की अप्रत्यक्ष रूप में नींव जमी जो 19-20 शताब्दी में जाकर विश्व विख्यात हुआ। 18-19 वीं शताब्दी में यहाँ सूती वस्त्रोद्योग का विकास हुआ। इधर योर्कशायर में ऊनी वस्त्रोद्योग चल ही रहा था अतः सूती वस्त्रों की मिलें प्रमुखतः लंकाशायर में स्थापित की गई।

इस प्रकार सूती तथा ऊनी वस्त्र दोनों क्षेत्रों में ब्रिटेन ने विश्व में अपनी एक महत्वपूर्ण स्थिति बना ली और यह स्थिति द्वितीय विश्व युद्ध तक किसी न किसी रूप में चली। उपनिवेशवाद की समाप्ति का सबसे बड़ा झटका सम्भवतः

ब्रिटेन के वस्त्रोद्योग को ही लगा। ब्रिटेन अपनी मिलों में प्रयोगित समस्त कपास एव अधिकांश ऊन अपने उपनिवेशों–भारत, न्यूजीलैंड, अफ्रीकी देशों से प्राप्त करता था। स्वतंत्र होने पर इन देशों से न केवल कच्चा माल आना सीमित हो गया वरन् सुरक्षित बाजार भी समाप्त प्रायः हो गए क्योंकि एक तो इन देशों ने स्वयं अपने वस्त्रोद्योग स्थापित किए, दूसरे जापान, अमेरिका एवं भारत प्रबल प्रतिद्वंद्वी के रूप में बाजार में आए। इन परिस्थितियों में ब्रिटेन को अपनी वस्त्रोद्योग नीति में संशोधन करना पड़ा और आज वह अपने सूती वस्त्रोद्योग का धीरे-धीरे अन्य उद्योगों की ओर अनुस्थापन कर रहा है। आज स्थिति यह है कि लंकाशायर मे जितने लोग वस्त्र व्यवसाय में संलग्न हैं उनके दूने से अधिक रसायन, इंजीनियरिंग तथा हल्की-धातु सम्बन्धी उद्योगों में लगे हैं। निस्संदेह, ब्रिटेन का 90% सूती वस्त्र अभी भी लंकाशायर से ही आता है।[42]

(क) ऊनी वस्त्रोद्योग—ऊनी वस्त्रोद्योग के विकास में यहाँ का भौगोलिक वातावरण में आधारभूत सहयोग दिया है। अगर इसे यहाँ का मूल वस्त्र-व्यवसाय भी कहा जाए तो गलत न होगा। ठंडी, आर्द्र जलवायु, पीनाइन शृंखला के ढाल प्रदेश, देश के उत्तरी-पश्चिमी भागों में अधिकतर भूभाग ऊबड़-खाबड़ हो र कृषि-पयोगी न होना, सभी उच्च प्रदेशों को भूर घास से ढका होना तथा धोने के लिए निरंतर बहने वाली जलधाराओं से पर्याप्त जल मिल जाना-ये सब ऐसी परिस्थितियाँ थी जिनमें वस्त्रोद्योग स्वाभाविक रूप से विकसित हुआ। आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व भी ऊनी वस्त्र बनाए जाते थे, ऐसे प्रमाण मिलते हैं। लेकिन ये वस्त्र अत्यन्त साधारण किस्म के होते थे। ऊनी वस्त्र व्यवसाय के विकास में दो समय अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

प्रथम, जब 13-14 वीं शताब्दी में यहाँ के शासकों ने इसके विकास और विस्तार के लिए प्रयत्न किए।

द्वितीय, जब वस्त्र व्यवसाय में कोयले का शक्ति के रूप में उपयोग होने लगा।

14 वीं शताब्दी की प्रारम्भिक दशाब्दियों में एडवर्ड ने फ्लैंडर्स बुनकरों को इंगलैंड में लाकर बसाया। अपने देशवासियों को इस शासक ने अपने देश में बने हुए वस्त्र पहनने की सलाह दी। इसी शताब्दी में इतिहास प्रसिद्ध वे वस्त्र प्रदर्शनियाँ आयोजित की गई जिन्हें देखकर इंगलैंड के निवासियों के मन में इन वस्त्रों के प्रति आकर्षण पैदा हुआ। 15 वीं शताब्दी में हेनरी सप्तम ने फ्लैमिश जुलाहों को यौर्कशायर, हैलीफैक्स तथा लीड्स आदि नगरों में लाकर बसाया। इन प्रयत्नों से कुछ कस्बे ऊनी वस्त्रोद्योग में विशेष उन्नति कर गए जिनमें सौमर-

42. King, W.J.—The British Isles. Macdonald & Evans p.76.

सेट, डोरसेट, ब्रिस्टल आदि उल्लेखनीय हैं। यह परम्परागत व्यवसाय काफी फैलाव में था और देश के अनेक भागों में प्रचलित था। यथा, दक्षिणी पीनाइन घाटियाँ, पूर्वी आंग्लिया, कॉट्स वोल्डस, द० पूर्वी इंगलैंड, योर्कशायर आदि प्रदेशों में इस दिशा में काफी उन्नति हो गई थी।

18 वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कोयले का उपयोग जब इस व्यवसाय में होने लगा तो यह एकदम बढ़ गया उत्पादन की दृष्टि से भी तथा क्वालिटी की दृष्टि से भी। हाँ, एक प्रभाव जरूर हुआ कि जो प्रदेश कोयले से दूर थे उनमें यह व्यवसाय समाप्त हो गया। चूँकि 19 वीं शताब्दी में लंकाशायर प्रदेश में सूती वस्त्र व्यवसाय विकसित किया जा रहा था अतः ऊनी वस्त्रोद्योग का केन्द्रीकरण योर्कशायर के वेस्ट राइडिंग क्षेत्र में हो गया। आज ऊनी वस्त्रोद्योग के सबसे बड़े केन्द्र जैसे लीड्स, ब्रेडफोर्ड, हडर्सफील्ड, हैलीफैक्स, ड्यूसबरी, वेकफील्ड इसी प्रदेश में विद्यमान हैं। योर्कशायर देश का तीन-चौथाई से अधिक ऊनी वस्त्र तैयार करता है। इन केन्द्रों को कोयला डर्बीशायर-नौटिंघम प्रदेश से और स्वच्छ जल पीनाइन के पूर्वी ढालों पर प्रवाहित जलधाराओं से मिल जाता है। निकट ही पीनाइन के ढाल प्रदेशों में स्थित ब्रिटेन के सर्वाधिक समृद्ध भेड़ क्षेत्र हैं जहाँ के ऊन मिल जाती है। बंदरगाहों से जुड़े होने के कारण विदेशों—आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अर्जेन्टाइना से आयातित ऊन भी मिल जाती है। यह बहुत महत्वपूर्ण सुविधा है क्योंकि ब्रिटेन अपनी कुल की 85% ऊन विदेशों से आयात करता है। देश में केवल 15% ऊन ही मिल पाती है।

प्रतिवर्ष ब्रिटेन करोड़ों पौंड कीमत के ऊनी वस्त्र निर्यात करता है। चूँकि विश्व बाजारों में उसे अनेक प्रतिद्वंद्वियों का सामना करना पड़ता है अतः उत्पादन की श्रेष्ठता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इसके लिए यहाँ विशिष्टीकरण की प्रवृति पर जोर दिया गया है। विभिन्न प्रकार की ट्वीड तथा वर्सटेड तैयार की जाती है। वेकफील्ड अपनी वर्सटेड के लिए विख्यात हैं तो ड्यूसबरी एवं बाटले पूर्णतः हल्के एवं मुलायम वस्त्रों के निर्माण में रत हैं। हेलीफैक्स तथा हडर्सफील्ड में भी वर्सटेड तैयार की जाती है। लीड्स में रेडीमेड वस्त्रों का निर्माण कार्यक्रम पर्याप्त सघन एवं उन्नत है। यहाँ ब्रिटेन के एक तिहाई 'तैयार वस्त्र' बनाए जाते हैं। यहीं विश्व की सबसे बड़ी रेडीमेड वस्त्र तैयार करने वाली फर्म 'मोंटेग्यू बर्टन' स्थित है। योर्कशायर प्रदेश की प्रतियोगिता में पश्चिम के ऊनी केन्द्र प्रायः समाप्त होते जा रहे हैं परन्तु कुछ केन्द्र, जिनमें स्ट्राउड (ऊनी वस्त्र) विटनी (कम्बल) तथा किडरमिंस्टर (चटाइयाँ एवं दरी) उल्लेखनीय हैं, अपनी परम्परा बनाए हुए हैं।

ब्रिटेन का ऊनी वस्त्रोद्योग विश्व में सबसे बड़ा माना जाता है। ऊनी वस्त्रों के निर्यात से प्रतिवर्ष लगभग 225 मिलियन पौंड की विदेशी मुद्रा अर्जित होत

है। 1982 में यहाँ की मिलों में 53,000 टन ऊनी धागा तैयार किया गया। वस्त्रोत्पादन 100 मिलियन वर्ग गज था।

(ख) सूतीवस्त्रोद्योग—पिछले 200 वर्षों में ब्रिटेन के इस व्यवसाय ने जन्म, विकास, चरमोत्कर्ष एवं पतनोन्मुख सभी स्थितियाँ देखी हैं। ब्रिटेन में कपास नाम मात्र को भी नहीं होती इसके बावजूद इस शताब्दी के दूसरे दशक तक यह देश सूती वस्त्रों के निर्माण एवं निर्यात में प्रथम था। यहाँ सूती वस्त्रोद्योग के विकास में दो आधारभूत तत्त्व रहे हैं। प्रथम, एशिया, अफ्रीका व अमेरिका के देशों से होने वाला व्यापार एवं द्वितीय, अफ्रेशिया के अनेक देशों का ब्रिटेन का उपनिवेश बनाना। इन उपनिवेशों ने कच्चा माल एवं बाजार दोनों प्रस्तुत किए। 17–18 वीं शताब्दी में ब्रिटिश जलयान अफ्रीकन, एशियन व अमेरिकन देशों से लौटते हुए अपने साथ उन देशों से कपास भर कर लाते। कपास से भरे ये जलयान प्रायः पश्चिमी तट पर स्थित बंदरगाहों पर आकर लगते। इस प्रकार ब्रिस्टल, लिवरपूल, ग्लासगो आदि क्षेत्रों में सूती वस्त्रोद्योग का श्रीगणेश हुआ। भारत, मिश्र, सं० रा० अमेरिका कपास के अटूट स्रोत थे। भारत में यह व्यवसाय पहले से ही विकसित भी था अतः भारतीय सम्पर्क से ब्रिटिश जुलाहों ने इस कार्य में और भी कुशलता प्राप्त करली। इधर 1733 में कॉटन-जिन वाली मशीनों का आविष्कार हुआ तथा 1793 में कॉटन-जिन खोजी गई। इन दोनों के साथ ब्रिटिश सूती वस्त्र व्यवसाय बड़ी तेजी से चमक गया।

पहले पहल जल को ही इस व्यवसाय में शक्ति के रूप में प्रयुक्त किया गया। 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कोयले का प्रयोग प्रारम्भ हुआ। फलतः ब्रिस्टल क्षेत्र का व्यवसाय उजड़ गया क्योंकि वहाँ कोयला स्थानीय रूप से प्राप्त नहीं था। क्लाइड की घाटी में आयरशायर, लैनार्कशायर से कोयले की सुविधा प्राप्त थी। क्लाइड से जल की तथा ग्लासगो से बंदरगाह की सुविधा थी। इसी प्रकार दक्षिणी लंकाशायर क्षेत्र में स्थानीय कोयला, मर्सी नदी व पीनाइन के पश्चिमी ढाल से प्रवाहित अनेक जलधाराओं से जल एवं लिवरपूल से बंदरगाह की सुविधा प्राप्त थी। फलतः क्लाइड बेसिन व दक्षिणी लंकाशायर क्षेत्र इस व्यवसाय में चमक गए। कालांतर में लंकाशायर ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्र हो गया। मैनचैस्टर-शिप कैनाल बनने से कपास से लदे जलयान मिलों के दरवाजे तक आ सकते थे। दूसरे रंगाई-धुलाई के लिए यहाँ हल्का पानी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त था कुछ परम्परा का भी लाभ मिला। इधर ग्लासगो में इस्पात एवं जलयान निर्माण उद्योग पर केन्द्रीकरण होता गया। इस प्रकार क्रमशः लंकाशायर ब्रिटेन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्त्रोद्योग क्षेत्र हो गया। न केवल ब्रिटेन वरन् दुनियाँ में यह उत्पादन मात्रा एवं उत्पादन की विशिष्टता की दृष्टि से प्रथम हो गया। आज यद्यपि भारत, जापान एवं अमेरिका के वस्त्रोद्योग के विकास के फलस्वरूप लंका-

शायर की पहले जैसी स्थिति नहीं रही परन्तु अब भी निस्संदेह यह दुनियां के सर्वाधिक विकसित सूती वस्त्र केन्द्रों में से एक है। उत्पादन निस्संदेह घटता जा रहा है। 1982 में ब्रिटेनी सूती मिलों ने 42,000 टन सूती धागा तथा 261 मि० मीटर सूती वस्त्र तैयार किया।

योर्कशायर के ऊनी वस्त्रोद्योग की तरह लंकाशायर के सूती केन्द्रों में भी विशिष्टता की नीति अपनाई गई। विशिष्टीकरण की यह प्रवृति वस्तुतः पिछली शताब्दी के मध्य प्रारम्भ हो गई थी। यहां के सूती केन्द्रों को तीन श्रेणियों में रखा जा सकता है।

प्रथम—कताई केन्द्र जो प्रायः मैनचेस्टर नगर के आस-पास फैले हुए हैं। मैनचैस्टर के अतिरिक्त इनमें बोल्टन महत्वपूर्ण है।

द्वितीय—बुनाई केन्द्र जो प्रायः रिबिल एवं कोलोन नदियों की घाटियों में फैले है। इनमें बर्नले, ब्लैक बर्न, नेल्सन, प्रेसटन तथा कोल्ने महत्वपूर्ण हैं।

तृतीय—वे केन्द्र जहाँ वस्त्रों को अन्तिम रूप दिया जाता है। अन्तिम कार्यों में छपाई, धुलाई, कपड़ों की सिकुड़ाई व उन पर चमक देने का कार्य आदि शामिल किए जाते हैं। इसके केन्द्र बिखरे हुए हैं। फिर भी रोजेनडेल क्षेत्र में इस कार्य का केन्द्रीयकरण माना जा सकता है।

मैनचैस्टर में वस्त्र सम्बन्धी लगभग सभी कार्य होते हैं। कताई के अतिरिक्त यहां बुनाई एवं कपड़ों को अन्तिम रूप देने वाली फैक्ट्रीज भी हैं। एक तरह से यह नगर इस प्रदेश की व्यावसायिक राजधानी है। निस्संदेह, आज भी मैनचैस्टर विश्व का सर्वाधिक महत्वपूर्ण सूती वस्त्रोद्योग केन्द्र माना जाता है। आज भी ब्रिटेन प्रतिवर्ष लगभग 50 मिलियन पौंड की कीमत के सूती वस्त्र निर्यात करता है।

वर्तमान शताब्दी के दूसरे-तीसरे दशक से ही ब्रिटिश सूती वस्त्रोद्योग के सामने कठिनाइयाँ आने लगी और उसका पतनोन्मुख स्वरूप स्पष्ट होने लगा। इसके लिए विश्व की बदलती हुई राजनैतिक व आर्थिक तस्वीर उत्तरदायी थी। कई ऐसे तत्व थे जिनके कारण ब्रिटेन के इस उद्योग को भारी धक्का लगा। उपनिवेश हाथ से निकले जा रहे थे। फलतः कच्चे माल के स्रोत सूखने लगे। इधर अफ्रीका व एशिया के देशों ने कपास ब्रिटेन को भेजना बंद करके अपने यहाँ यह व्यवसाय प्रारम्भ किया इधर अमेरिकी सूती वस्त्रोद्योग न्यू इंगलैंड से खिसककर कपास मेखला में केन्द्रित हो गया। अतः वहाँ से भी कपास का आना बंद हो गया। आज अगर ब्रिटेन कपास आयात करके वस्त्र बनाता भी है तो उसका उत्पादन मूल्य काफी अधिक बैठता है। अतः ब्रिटिश वस्त्र प्रतियोगिता में नहीं ठहर सकते। पिछले दशकों में भारत व जापान प्रबल प्रतिद्वंद्वी के रूप में सामने आ गए। कई अफ्रीकन देशों—युगांडा, कीनिया, टांजनिया, मिश्र आदि ने भी

वस्त्रोद्योग प्रारम्भ कर दिए हैं। वस्तुतः वस्त्र व्यवसाय प्राथमिक उद्योग माना जाता है जो आज. प्रायः हरेक देश में स्थापित किया जा रहा है। उपनिवेशों के रूप में ब्रिटेन के निश्चित बाजार थे जहाँ ब्रिटेन के अतिरिक्त और किसी का माल नही बिकता था। जबकि आज हालत यह है कि कपास उत्पादक देश जैसे भारत, मिश्र व सं० रा० अमेरिका कपास के बदले- तैयार कपड़े तो खैर लेते ही नहीं, साथ में ही जहाँ ब्रिटेन का कपड़ा बाजारों में आता है अपना सस्ता कपड़ा प्रस्तुत करते हैं। एक बात और भी है, द्वितीय विश्व युद्ध में अत्यधिक कार्यरत रहने व आक्रमण सहने से अनेक कारखाने क्षतिग्रस्त हो गए उनकी मरम्मत में पैसा लगाने से उत्पादन-मूल्य और भी ज्यादा बढ़ गया।

इन परिस्थितियों में ब्रिटेन को अपने सूती वस्त्रोद्योग के बारे में मजबूर होकर गम्भीरता से सोचना पड़ा वरना एक दिन ऐसा भी आ सकता है जबकि लंकाशायर क्षेत्र का यह व्यवसाय बिल्कुल पिछड़ जाए और संलग्न व्यक्तियों के सामने बेकारी की समस्या आ जाए। अतः इसके लिए कुछ समाधान सोचे गए हैं और वे क्रमशः क्रियान्वित किए जा रहे हैं। इनमें निम्न मुख्य हैं—

प्रथम—सूती वस्त्रोद्योग केन्द्रों का अनुस्थापन धीरे-धीरे दूसरे उद्योगों की ओर किया जाए। इसी नीति का परिणाम है कि आज लंकाशायर प्रदेशों में जितने लोग सूती वस्त्रोद्योग में लगे उनसे दुगुने से अधिक इंजीनियरिंग, रसायन व मशीनरी उद्योग में रत हैं। औद्योगिक केन्द्रों का स्वरूप भी बदलता जा रहा है। बोल्टन में कताई के साथ-साथ मशीनरी, रेल के डिब्बे, वायुयान के पुर्जे तथा लिफ्ट भी बनाए जाने लगे हैं। स्टोकपोर्ट में, जहाँ पहले कपड़ों को ब्लीचिंग से साफ करना तथा उन पर छपाई करना ही मुख्य कार्य था, आज इंजीनियरिंग उद्योग भी चालू है। स्वय मैनचेस्टर में विविध उद्योग-रसायन, इंजीनियरिंग, मशीन निर्माण आदि चालू हो गये हैं। प्रैस्टन जो बुनाई केन्द्र था अब बन्दरगाह के रूप में विकसित हो रहा है। ब्लैकबर्न एवं बकले में विद्युत यन्त्र एवं इंजीनियरिंग सम्बन्धी कारखाने स्थापित किए गये हैं। एकरिंगटन में सूती वस्त्रों में प्रयुक्त होने वाली मशीनों के निर्माण पर ज्यादा जोर है। प्रैस्टन में काँच, रैयान एवं रबर उद्योग विकसित हो रहे हैं। तात्पर्य यह है कि प्रत्येक सूती वस्त्र केन्द्र में दूसरे उद्योग पनपाए जा रहे हैं। नीति यह है कि सूती वस्त्रोद्योग कम होता जाए एवं अन्य उद्योग बढ़ते जाएं।

द्वितीय—लंकाशायर की मिलों में केवल सुपर फाइन (प्रायः 50 कांउट के) ऊपर का) कपड़ा ही तैयार किया जाए ताकि भारत-अमेरिका आदि की प्रतिद्वंद्वता का डर न रहे।

तृतीय—सूती वस्त्रोद्योग में प्रयुक्त होने वाली मशीनें मैनचैस्टर व एकरिंगटन में बनाई जाती रही हैं। इनके निर्माण पर ज्यादा जोर दिया जाए क्योंकि अफ्रेशियाई नव-विकसित देशों में इनकी माँग बहुत है।

(ग) कृत्रिम रेशा उद्योग—इसके अन्तर्गत रासायनिक विधियों से तैयार किए हुए कृत्रिम-रेशा आते हैं जिनमें टैरीलीन, नायलोन, रैयान आदि प्रमुख हैं। इनका प्रकार एवं प्रसार बड़ी तेजी से हो रहा है। उसी गति से इनका निर्माण भी बढ़ रहा है। वर्तमान में अमेरिका, प० जर्मनी, रूस, फ्रांस तथा जापान के साथ ब्रिटेन भी इनका महत्वपूर्ण उत्पादक देश है। इन वस्त्रों के कारखानों की स्थापना करते समय रासायनिक पदार्थ, पानी, शक्ति, यातायात आदि की सुविधाओं का विशेष ध्यान रखा जाता है। अतः ज्यादातर कारखाने औद्योगिक प्रदेशों में ही स्थापित किए जाते हैं। ब्रिटेन के कृत्रिम रेशा से सम्बन्धित औद्योगिक संस्थान मुख्यतः मिडलैंड, दक्षिणी वेल्स, उत्तरी इंगलैंड व उत्तरी आयरलैंड में विद्यमान हैं। निम्न सारणी द्वारा इनके वितरण को सुस्पष्ट किया गया है—

ब्रिटेन के प्रमुख कृत्रिम रेशा उत्पादन केन्द्र[43]

केन्द्र (कस्बा)	क्षेत्र	उत्पादन
1. कावेन्ट्री	मिडलैंड	रैयान (विस्कोस) एक्रीलिन, कोर्टेल
2. वोल्वर हैम्पटन	,,	रैयान (विस्कोस)
3. ग्रीक वर्थ	,,	नायलन
4. फ्लिंट	उ० तथा द० वेल्स	रैयान (विस्कोस)
5. ग्रीन फील्ड	,,	रैयान (विस्कोस)
6. रैवस हैम	,,	रैयान (विस्कोस)
7. पोंटीपूल	,,	नायलोन
8. प्रेस्टन	उत्तरी इंगलैण्ड	रैयान (विस्कोस)
9. एन्ट्री	,,	रैयान (विस्कोस)
10. बरी	,,	रैयान (विस्कोस)
11. लंकास्टर	,,	रैयान (ऐवटेट)
12. डॉनकास्टर	,,	नायलोन
13. बिल्टन (यौर्क०)	,,	टैरीलीन
14. स्पोन्डन (डरबी)	,,	रैयान (ऐवटेट)
15. ग्रिम्सबी	,,	रैयान (विस्कोस) एक्रीलीन
16. एन्टरिम	उत्तरी आयरलैण्ड	नायलोन
17. किलरूट	,,	टैरीलिन
18. कोलरेन	,,	एक्रीलिन
19. कैरिकफर्गस	,,	रैयान (विस्कोस)

43. Simmons, W.M.—The British p. 194.

सारणी से स्पष्ट है कि रेयान कृत्रिम वस्त्रों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। ब्रिटेन में जितने भी कृत्रिम वस्त्र बनते हैं उनका 70% रेयान से सम्बन्धित होता है। रेयान सेल्यूलोज से बनाया जाता है जिसे ब्रिटेन, अफ्रीकन वृक्ष यूकेलिप्टस या कनाडियन-स्कैन्डीनेवियन स्प्रूस से तैयार करता है। कास्टिक सोडा तथा सल्फरिक एसिड से मिश्रित करके इसका विस्कोस रेयान तैयार कर लिया जाता है। नायलौन का आविष्कार अमेरिका में 1938 में हुआ। ब्रिटेन में इसकी शुरुआत 1946 में हुई। प्रथम फैक्ट्री पोन्टोपूल में स्थापित की गई। इस सिन्थैटिक रेशे को कोयला से तैयार किया जाता है अतः इसके अधिकतर कारखाने ब्रिटेन के कोयला क्षेत्रों में विद्यमान हैं। टैरीलिन, जो एक ब्रिटिश आविष्कार है, पैट्रोल से तैयार किया जाता है। इसके कारखाने में प्रायः तेल शोधक कारखानों के पास स्थापित किए गए हैं। ब्रिटेन इन वस्त्रों के उत्पादन में बड़ी तेजी से प्रगति कर रहा है। प्रतिवर्ष 15% की वृद्धि हो जाती है। वृद्धि का कारण है अफ्रेशियाई देशों में इसकी मांग, जो कि निरन्तर बढ़ती जा रही है। 1982 में ब्रिटेन ने कृत्रिम वस्त्रों (रेयान, नायलौन) का 3,34,000 टन धागा तथा 205 मि० मीटर कपड़ा तैयार किया।

चित्र–13

(घ) लिनेन वस्त्रोद्योग—स्कॉटलैंड एवं आयरलैंड के उन भागों में, जहाँ सूती एवं ऊनी वस्त्रोद्योग कम प्रचलित रहे हैं और जहाँ की जलवायु एवं मिट्टी फ्लैक्स के उत्पादन के लिए उपयुक्त मानी जाती है, लिनेन वस्त्रोद्योग प्रचलित रहा है। स्कॉटलैंड के पेसले, पर्थ तथा फर्टो इस व्यवसाय के लिए उल्लेखनीय रहे हैं। पिछले दशकों में स्थिति में कुछ परिवर्तन आया है। स्कॉटलैंड के इन केन्द्रों में यह उद्योग क्रमशः सिमटता जा रहा है तथा इसका केन्द्रीकरण अब उत्तरी आयरलैंड में होता जा रहा है। जहाँ बेल्जियम एवं बाल्टिक देशों से आयातित फ्लैक्स से लिनेन वस्त्र बनाये जाते हैं। स्थानीय रूप से भी कुछ क्षेत्रों (लफनीघ के आस-पास तथा लागान नदी की घाटी में) फ्लैक्स बोई जाती है। उत्तरी आयरलैंड में लिनेन वस्त्रोद्योग सबसे बड़ा उद्योग है जिससे प्रतिवर्ष लगभग 10 मिलियन पौंड की विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है। यहाँ के लिनेन केन्द्रों में बैलफास्ट, लुर्गान, रिस्बर्न, लार्न, एन्ट्रिम, बैलीमनी, कोलरेन, स्ट्रैबेन तथा लन्दन डैरी महत्वपूर्ण हैं। लन्दनडेरी अपनी लिनेन की कमीजों के लिए विश्व विख्यात है। इस नगर में कमीज बनाने की 30 से ज्यादा फैक्ट्री है। आयरिश गणराज्य में डबलिन, डडाल्क, ड्रोगेडा आदि नगरों में लिनेन उद्योग स्थित है। पूर्वी स्कॉटलैंड के कई नगरों एवं ग्लासगो में हालैंड, बेल्जियम तथा रूस से आयात किए हुए फ्लैक्स से लिनेन वस्त्र तैयार किए जाते हैं।

जूट उद्योग के प्रधान केन्द्र स्कॉटलैंड के डण्डी तथा एबरडीन आदि नगर हैं। गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा प्रदेश से आयात की गई जूट के आधार पर यहाँ यह उद्योग विकसित हुआ है। इससे बोरी, रस्सियाँ, कालीन आदि बनाई जाती हैं। ब्रिटेन का शुद्ध रेशम वस्त्रोद्योग चीन, जापान, इटली आदि देशों से आयात किए रेशमी धागे पर आधारित है। मैकलिसफील्ड प्रमुख केन्द्र है। अन्य केन्द्रों में डर्कशाइन, गालाशील (स्कॉटलैण्ड) नोटिंघम, नोरविच, टॉटन तथा बैन्ट्री उल्लेखनीय हैं।

मशीन निर्माण उद्योग :

आधुनिक उद्योगों की एक विकासोन्मुख शाखा के रूप में मशीन निर्माण उद्योग ब्रिटेन के आर्थिक ढाँचे में महत्वपूर्ण स्थान लिए हुए है। इसके अन्तर्गत ऑटोमोबाइल्स, लोकोमोटिव, वायुयान, घरेलू मशीनें, कृषि-यन्त्र, वस्त्र व्यवसाय सम्बन्धी मशीनें व अन्य अनेकों प्रकार की मशीनें तथा एन्जिन आते हैं। इनमें कच्चे माल यानी धातु की आवश्यकता कम तथा कुशलता की आवश्यकता ज्यादा होती है। भारी उत्पादनों की तुलना में इनका मूल्य भी ज्यादा होता है। यही कारण आज ब्रिटेन के पूरे निर्यात-मूल्य का लगभग एक-तिहाई भाग इस उद्योग के उत्पादनों से सम्बन्धित होता है। प्रतिवर्ष लगभग 2,000 मिलियन पौंड की कीमत की विदेशी-मुद्रा विविध प्रकार की मशीनों एवं एंजिनों से प्राप्त होती है।

रेलवे इंजीनियरिंग से सम्बन्धित कारखाने प्रायः तीन तरह के कस्बों में स्थित हैं।

प्रथम—जो प्रारम्भ से ही रेलवे लाइन तथा लोकोमोटिव सम्बन्धी कार्यों में संलग्न थे जैसे डार्लिंगटन।

द्वितीय—जो महत्वपूर्ण लोह-इस्पात उद्योग केन्द्र हैं या किसी इस्पात केन्द्र के निकट हैं। ऐसे केन्द्रों में सम्बन्धित उद्योग के रूप में रेलवे इंजीनियरिंग उद्योग का विकास हुआ। चूंकि रेल के इंजन या डिब्बे बनाने के लिए भारी मात्रा में इस्पात की आवश्यकता होती है अतः इस्पात केन्द्रों की निकटता लाभप्रद थी। बर्मिंघम व कार्डिफ इसी श्रेणी में आते हैं।

तृतीय—जो अपनी स्वयं की स्थिति के कारण महत्वपूर्ण रेलवे जंकशन बन गए और बाद में वहाँ विशाल लोकोमोटिव शेड बने। विकसित होते-होते ये केन्द्र रेल के इंजन भी बनाने लगे। ऐसे केन्द्रों में डॉनकास्टर, डर्बी, रगबी तथा स्विनडौन आदि उल्लेखनीय हैं।

डर्बी में ब्रिटेन के सबसे ताकतवर एन्जिन (माल गाड़ियों के) बनते हैं। यह मिडलैंड रेलवे का मुख्य कार्यालय है इसे इस्पात मिडलैंड व कोयला डर्बीशायर से प्राप्त होता है। लन्दन ग्लासगो मार्ग पर स्थित होने से इसकी स्थिति भी बहुत महत्वपूर्ण है। यहाँ से मैनचेस्टर व होलीहैड (उत्तरी वेल्स) को भी शाखाएँ जाती हैं। इस प्रकार यह उत्तरी मिडलैंड से लिवरपूल व हल की तरफ जितना भी 'ट्रैफिक' है उसे नियन्त्रित करता है। रेलवे इंजिनियरिंग के अतिरिक्त यहाँ कार एवं एअर क्राफ्ट एन्जिन भी तैयार किए जाते हैं। स्विनडौन 1841 तक एक साधारण बाजारी केन्द्र था बाद में जब यहाँ से रेलवे लाइन की शाखाएँ दक्षिणी वेल्स, ग्लूस्टर, मिडलैंड आदि की ओर निकाली गई तो स्वाभाविक रूप से इसका महत्व बढ़ गया तथा यहाँ रेल एन्जिनों की मरम्मत होने लगी। आगे जाकर एन्जिनों का निर्माण भी होने लगा। डॉन कास्टर लन्दन, एडिनबर्ग, लिवरपूल तथा हल को जाने वाले रेल मार्गों का महत्वपूर्ण जंकशन है। कोयला की निकटता (योर्कशायर कोयला क्षेत्र) लोहे की सुविधा (स्कनथ्रोप) तथा समतल भूमि आदि तत्वों ने मिलकर डोन नदी के सहारे-सहारे रेलवे इंजीनियरिंग उद्योग को विकसित होने में सहयोग दिया है।

ऑटोमोबाइल उद्योगों की स्थापना में भी इस्पात की उपलब्धि एक महत्वपूर्ण तत्व है। ब्रिटेन में इस उद्योग की ये विशेषता है कि पूरी गाड़ी कोई भी फर्म तैयार नहीं करती। अनेक छोटी-छोटी फर्में हैं जो इस्पात क्षेत्रों में स्थित है। ये

अन्य केन्द्रों में किंग्सटन, कावेंट्री, हर्टलेपार्क तथा बेलफास्ट उल्लेखनीय हैं। ब्रिटेन अपने नये-नये विमानों के लिए काफी प्रसिद्ध रहा है। यहां के विस्कॉउंट, टरबाइन, कामेट आदि यानों ने काफी ख्याति पाई और विश्व की विमान सेवाओं में काम में लाए गए। पश्चिम के अधिकांश गैस-टरबाइन वायुयानों में ब्रिटिश एन्जिन डार्ट लगे हुए हैं। ब्रिटेन के वायुयान उद्योग के महत्वपूर्ण उत्पादनों में रोटोडाइन वायुयान, सी-कैट गाइडेड मिजाइल तथा ब्लैकटाइन रॉकेट भी शामिल किए जाते हैं। यहां के वायुयान गर्मी को सहन करने वाली चमकदार अल्युमिनियम या टिटैनियम इस्पात से बनाये जाते हैं वार्षिक उत्पादन 300 (1967-312, 1968-278) है।

विद्युत-इन्जिनियरिंग के उत्पादन छोटे परन्तु कीमती होते हैं। उपभोग की वस्तुओं में इनका आवश्यक तथा महत्वपूर्ण स्थान है। जहां तक इनके कारखानों का सम्बन्ध है उन्हें धातु की बहुत कम आवश्यकता होती है। शक्ति तथा श्रम दो महत्वपूर्ण तत्व हैं जो इनकी स्थापना को प्रभावित करते हैं। ब्रिटेन में विद्युत-उपकरणों के कारखाने मशीन निर्माण के दूसरी शाखाओं से सम्बन्धित कारखानों के निकट स्थित हैं। मिडलैंडस (मुख्यतः रगबी एवं कावेंट्री) दक्षिण लंकाशायर एवं लन्दन क्षेत्र इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। वृहत्तर लन्दन के कई उप नगरों जैसे एसेक्स या हर्टफोर्डशायर में विद्युत इंजीनियरिंग सम्बन्धी कई कारखाने है जिनमें स्त्रियां कार्य करती हैं। लार्न, स्टेफोर्ड तथा टाइनेसाइड में कुछ विद्युत यन्त्र-निर्माण रत कारखाने स्थित हैं। कुछ स्थानों में विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति भी देखी गई है। इनमें मैनचेस्टर, ब्रैडफोर्ड तथा रगबी उल्लेखनीय हैं।

प्रति वर्ष लगभग 25 मिलियन पौंड की कीमत के विद्युत यंत्र एवं उपकरण निर्यात किए जाते हैं जिनमें घरेलू कामों की मशीनें, ट्रांसफोर्मर, जैनरेटर, बैटरीज, कम्प्यूटर, राडार, टैलीविजन, वायरलैस सैट, रेडियो सैट प्रमुख हैं। ब्रिटेन अपने राडार तथा टरबोडायनमो के लिए गौरव महसूस कर सकता है क्योंकि इन महत्वपूर्ण वस्तुओं का आविष्कार यहीं हुआ। यहां के बने केबिल्स न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, भारत, यू० एस० ए० व दुनिया के अन्य अनेक देशों को निर्यात किये जाते हैं। इनके बदले में ब्रिटेन इन देशों से इस उद्योग से सम्बन्धित कच्चे माल जैसे सूत, रेशम, रबर, तांबे के तार, एस्बैस्टस आदि आयात करता है। इस उद्योग की शाखा इलैक्ट्रोनिक्स का बड़ी तेजी से विकास हो रहा है। इसमें काम करने वालों की संख्या 3 लाख तक पहुँच गई है। इसका उत्पादन प्रति वर्ष 10% की गति से बढ़ रहा है। इलैक्ट्रोनिक्स के अधिकांश कारखाने लन्दन के उपनगरों में विद्यमान हैं। ब्रिटेन की विद्युत इंजीनियरिंग में संलग्न लोगों की संख्या 1 मि. तक पहुँच गई है जो इसके महत्व और विस्तार की तीव्र गति का सूचक है। यहां 500 मैगावाट की क्षमता वाले बड़े जैनरेटर का निर्माण किया गया है। यह

दुनिया का सबसे बड़ा जैनरेटर है। 1982 में ब्रिटेन में विद्युत इंजीनियरिंग सम्बन्धी उत्पादन मूल्य निम्न प्रकार था।[44]

विद्युत उपकरण उत्पादन–1982

(उत्पादन मूल्य मि० पौंड में)

रेडियो, इलेक्ट्रोनिक्स	1,939
बेसिक विद्युत उपकरण	2,177
'डाटा' प्रोसेसिंग उपकरण	1,094
टेलीफोन, टेलीग्राफ, उपकरण	1,264
घरेलू उपयोग की मशीनें	903

भारत या जापान सूती वस्त्रों में अवश्य ब्रिटेन के प्रतिद्वन्द्वी हो गए हैं परन्तु वस्त्र व्यवसाय सम्बन्धी मशीनों में आज भी ब्रिटेन उत्पादन व निर्यात की दृष्टि से प्रथम है। विश्व बाजारों में इन मशीनों की मांग आज भी वैसी की वैसी बनी हुई है। इनकी मांग का ज्यादा होने का एक कारण यह भी है कि अफ्रीका और एशिया के अधिकतर देश सूती वस्त्रोद्योग को अपने-अपने देश में विकसित करने के प्रयास में रत हैं। प्रायः सूती वस्त्र सम्बन्धी मशीनें लंकाशायर एवं ऊनी वस्त्रोद्योग सम्बन्धी यौर्कशायर में तैयार की जाती हैं। लीसैस्टरशायर, नौटिंघम, डण्डी तथा उत्तरी आयरलैंड भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। लंकाशायर में वस्त्रोद्योग की कई मशीनें ईजाद भी की गई हैं इनमें 'के फ्लाइंग शटिल' 1733, 'हारग्रीवेज स्पिनिंग जैनी' 1765, 'मार्क राइटस वाटर फ्रेम' 1769 तथा 'क्रौम्पटन म्यूल' 1775 विशेष उल्लेखनीय हैं। लंकाशायर प्रदेश में मशीन निर्माण में बोल्टन, ओल्डहम तथा ब्लैक बर्न आदि कस्बे लगे हैं। इनको कोयला द० लंकाशायर, इस्पात उत्तरी वेल्स, मिडलैण्ड तथा जल पूर्ति पीनाइन प्रदेश से हो जाती है। लिवरपूल बन्दरगाह होने से तैयार माल को भेजने व कच्चा माल मंगाने की सुविधा है।

जलयान निर्माण उद्योग :

यद्यपि आज ब्रिटेन जलयान निर्माण में जापान और पश्चिमी जर्मनी के बाद तीसरे स्थान पर है और 1965 में तो उसका उत्पादन टन भार स्वीडन और नीदरलैंड से भी कम था परन्तु कुछ दशक पूर्व तक जलयानों के निर्माण में वह विश्व में प्रथम था। जनवरी 1970 में सम्पूर्ण विश्व के यार्डों में लगभग 17·5 मिलियन

44. Statesman's Year Book, 1984-85.

टन भार के जलयान निर्माणाधीन थे जिसका 10·3 प्रतिशत भाग ब्रिटेन के यार्डों से 1969 में लगभग 1 मिलियन टन भार के जलयान जलावतरित किए गए। यह विश्व का 5·3% था। इस प्रकार ब्रिटेन का स्थान जापान (48·2%), पश्चिमी जर्मनी (8·4%) तथा स्वीडन (6·4%) के बाद चौथा था।[45] यह व्यवसाय यहाँ प्रारम्भ से ही विकसित रहा है और पिछले 200 वर्षों में इस दृष्टि से ब्रिटेन की स्थिति विश्व में महत्वपूर्ण रही है। वस्तुतः कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिन्होंने यहाँ के इस व्यवसाय को प्रोत्साहित किया है। इनमें कुछ प्राकृतियां व कुछ मानवीय तत्व हैं।

(1) ब्रिटेन जैसे देश को जिसका आर्थिक ढाँचा ही उद्योग और व्यापार पर निर्भर है एक शक्तिशाली जहाजी बेड़े की आवश्यकता सदा से रही है।

(2) वस्तृत साम्राज्य एवं अनेक उपनिवेशों को समुचित नियन्त्रण में रखने के लिए एक शक्तिशाली नौ-सेना की आवश्यकता रही है। इस प्रकार सैनिक एवं व्यापारिक जलयान बनाना ब्रिटेन के लिए आवश्यक था।

(3) द्वीपीय स्थिति एवं कटे-फटे तटों ने न केवल प्राकृतिक बन्दरगाह प्रदान किए हैं वरन् नाविकों को भी कुशल बनाया है।

(4) आवश्यक सामान जैसे इस्पात, कोयला, यार्ड बनाने के लिए गहरी नदी-एस्चुरीज देश में पर्याप्त मात्रा में है।

इन सब परिस्थितियों ने यहाँ जलयान निर्माण उद्योग को प्रोत्साहित किया परन्तु आधुनिक जलपोत निर्माण उद्योग का वास्तविक विकास भाप के इंजन के आविष्कार के बाद ही हुआ। कोयला देश में पर्याप्त था ही। इस्पात उद्योग विकसित हो ही रहा था इधर पूँजीपतियों के पास अमेरिकन कपास से कमायी हुई पूँजी थी। इन सबका सहयोग लेकर क्लाइड तथा टाइन नदी की घाटियों बैरो तथा बेलफास्ट में यह उद्योग स्थापित किया गया। साउथेम्पटन, फर्थ ऑफ फोर्थ, फर्थ ऑफ टे, बर्केन हैड तथा हल आदि बंदरगाह भी इस दिशा में प्रगतिशील हैं। छोटे जलयान तो कई जगह बनाए जाते हैं। आधुनिक जलयान जंग न लगने वाली इस्पात की प्लेटस से बनाए जाते है। ये प्लेटस वेल्स तथा बैरो के टिन-प्लेट उद्योग से पर्याप्त मात्रा में मिल जाती हैं।

प्रथम विश्व युद्ध से पूर्व क्लाइड की घाटी विश्व में नव निर्मित जलयानों के 25% भाग के लिए उत्तरदायी थी। आज यह प्रतिशत 5 से भी कम है।

45. Ibid p. 111.

इसका कारण यहाँ के उद्योग का पतन नहीं वरन् अन्य देशों का इस क्षेत्र में विकास है। क्लाइड नदी पर लगभग 30 शिपयार्डस हैं। ये यार्ड टिनी कार्ट एवं क्लाइड के संगम पर यहाँ स्थित हैं जहाँ क्लाइड की चौड़ाई कुछ ज्यादा है। ग्लासगो तो सबसे बड़ा केन्द्र है ही इसके अतिरिक्त डम्बरटन, ग्रीनोक, तथा क्लाइड बैंक भी उल्लेखनीय हैं। यहाँ विविध प्रकार के जलयान जैसे बर्फ तोड़कर चलने वाले जलयान, टैंकर्स, ड्रेजर्स, फेरीबोट, व्यापारिक जलयान, यौद्धिक जलपोत जैसे फ्रिगेट, एयर क्राफ्ट कैरियर्स, यात्री जलयान तथा मत्स्य व्यवसाय में उपयोग में आने वाले ट्राउलर्स, ड्रिफ्टर्स फ्लोटिंग फैक्ट्रीज आदि तैयार किए जाते हैं। ग्लासगो एवं निकटवर्ती अन्य जलयान निर्माण केन्द्रों में देश के 40% जलयान बनते हैं। औसतन प्रतिवर्ष 9 लाख ग्रोस टन भार के जलयान जलावतरित कर दिए जाते है। इन यार्डों को कोयला लैनार्कशायर तथा इस्पात-प्लेटस स्थानीय इस्पात के कारखानों या वैरो से प्राप्त हो जाती है। क्लाइड यहाँ काफी गहरी है अतः यार्ड बनाने की सुविधा है। विश्व प्रसिद्ध जलयान विक्टोरिया, किंगजार्ज तथा एलिज़ाबेथ आदि यहीं के यार्डों में बनकर तैयार हुए हैं।

इंगलैंड के उत्तर-पूर्व में स्थित टाइन, टीज तथा वीयर नदियों की एस्चुरीज में ब्रिटेन का दूसरा महत्वपूर्ण जलयान निर्माण प्रदेश विद्यमान है। लगभग 35 कम्पनियाँ इस व्यवसाय में रत है। यहाँ के यार्डों को कोयला नोर्थम्बरलैंड तथा डरहम तथा इस्पात-प्लेटस स्थानीय कारखानों से प्राप्त हो जाती हैं। मिडिल्सबर्ग, न्यूकैसिल, सडरलैंड, वालसेंड तथा स्टॉकटन आदि प्रधान केन्द्र हैं। ये प्रधान पृष्ठ प्रदेश के बदरगाह भी हैं। ब्रिटेन के कुल उत्पादन का लगभग 35% भाग इस प्रदेश से सम्बन्धित है। यहाँ अधिकांशतः छोटे जलयान, सैनिक जलयान एवं स्टीमर्स बनाए जाते हैं।

उपरोक्त दो प्रदेशों के अतिरिक्त बिखरे रूप में यह उद्योग कई बंदरगाहों में प्रचलित है। एबरडीन तथा डंडी मत्स्य व्यवसाय सम्बन्धी जलयान तैयार किए जाते है। साउथैम्पटन अपने मोटर बोटों के लिए उल्लेखनीय है। बैलफास्ट, बर्केनहेड तथा बैरोइन-फरनेस में भी हल्के किस्म के जलयान बनाए जाते है।

टिन प्लेट उद्योग :

टिन प्लेट उद्योग दक्षिणी वेल्स में स्थित हैं। दक्षिणी वेल्स इस्पात के लिए देश में महत्वपूर्ण है ही (देश का 20% इस्पात) टिन-प्लेट उद्योग के कारण इसका महत्व बहुत बढ़ गया है। टिन-प्लेट का उपयोग जलयान निर्माण उद्योग में किया जाता है। ये प्लेटस बनाई तो वस्तुतः इस्पात की जाती है परन्तु इन्हें टिन के घोल में होकर निकाला जाता है इसलिए टिन-प्लेट कहते हैं। 1/50 से 1/100

इंच मोटाई की इस्पात की चद्दरों को एसिड में साफ करके टिन के घोल में होकर तेजी से निकाला जाता है। इस पर टिन की पर्त चढ़ जाती है। ताड़ के तेल से टिन की पर्त को समान मोटाई की कर लिया जाता है। टिन यहाँ कार्नवाल क्षेत्र में निकलता ही है, कमी पड़ने पर मलाया, फ्रांस, स्वीडन आदि देशों से आयात कर लिया जाता है। इस्पात स्थानीय इस्पात के कारखानों से मिल जाता है। वैसे तो कई इस्पात के कारखाने यहाँ पहले से ही चल रहे हैं परन्तु 1962 में न्यूपोर्ट बंदरगाह के पूर्व में लानवेर्न नामक स्थान पर एक विशाल इस्पात का कारखाना स्थापित किया गया है जिसे रिचार्ड थोमस एवं बाल्डविन्स के नाम से जानते हैं। इसकी क्षमता 15 लाख टन प्रतिवर्ष है। स्वान्सी के निकट वैलिन्द्रे नामक स्थान पर मार्गाम क्षेत्र में विशाल इस्पात के कारखाने हैं। इसी प्रदेश में $4\frac{1}{2}$ मील की लम्बाई में फैला ऐबे वर्क्स है जो प्रति सप्ताह 60,000 टन इस्पात तैयार करता है। इसमें लगभग 17,000 व्यक्ति काम करते हैं।

रासायनिक उद्योग :

ब्रिटेन का 'इम्पीरियल कैमीकल वर्क्स' विश्व विख्यात रासायनिक-उद्योग संस्था है। दुनिया के हर देश में इसके विविध उत्पादन मंगाए जाते हैं। इस संस्था के अन्तर्गत लगभग 100 कारखाने कार्यरत हैं जिनमें 12,000 से अधिक प्रकार के उत्पादन होते हैं। रासायनिक कारखानों का सर्वाधिक केन्द्रीकरण मर्सी नदी की घाटी (लंकाशायर) में पाया जाता है। नदी के सहारे-सहारे इम्पीरियल वर्क्स के अनेक कारखाने फैले हैं। यहाँ रूम्रावान, विडनैस, रनकोर्न तथा नौर्थ विच रसायन उद्योग के लिए उल्लेखनीय केन्द्र हैं जहाँ अनेक प्रकार के कारखाने केन्द्रित हो गए हैं। इम्पीरियल कैमीकल वर्क्स के कारखाने न केवल मर्सीसाइड वरन् देश में अनेक स्थानों पर फैले है। इनमें भी विशिष्टीकरण की प्रवृत्ति पाई जाती है। विम्सलो (चेशायर) का रसायन कारखाना औषधि निर्माण में रत है तो वेल्विन गार्डेन सिटी (लंदन के उत्तर में); प्लास्टिक की विभिन्न रंगों में विविध घरेलू उपयोग की वस्तुएँ बनती हैं। स्लॉफ (लंदन के पश्चिम में) पेंटस में विशिष्टता प्राप्त की गई है जबकि स्कॉटलैंड की आर्डीर फैक्ट्री में केवल विस्फोटक पदार्थ बनाए जाते हैं। बर्मिंघम में जहाँ भारी धातु उद्योग स्थित हैं रासायनिक कारखाने रासायनिक संयोग से नयी उपयोगी धातुओं के निर्माण के लिए प्रयत्नशील है। टिटैनियम जिसका उपयोग वायुयानों में होता है, इसी प्रकार की एक खोज है।

दक्षिणी लंकाशायर में सूती वस्त्रोद्योग का भी केन्द्रीकरण है अतः स्वाभाविक रूप से, मैनचेस्टर के कई रासायनिक कारखाने केवल वे रंग तैयार करते हैं जिनका उपयोग वस्त्र व्यवसाय में होता है। विनिंगटन (चेशायर) में विविध

प्रकार के सोडा-वाई कार्बोनेट सोडा, कॉस्टिक सोडा के रवे तैयार किए जाते हैं। उत्तर-पूर्व में टीज के मुहाने पर स्थित क्रमशः विलिघम एवं विल्टन के रासायनिक कारखाने सबसे बड़े हैं। विलिघम प्लांट की स्थिति बड़ी आदर्श है। इसे कोयला दक्षिणी डरहम से प्राप्त हो जाता है। पास में ही कैल्शियम सल्फेट (एन्हीड्राइट) के समृद्ध भंडार हैं। एस्चुरी पर स्थित होने के कारण आयात-निर्यात की भी सुविधा है। इन सब परिस्थितियों ने मिलकर विलिघम प्लांट को दुनिया के सबसे बड़े रासायनिक कारखानों में से एक बना दिया है। इसके उत्पादन विविध हैं। जिनका उपयोग उद्योगों में होता है। इन उत्पादनों में नाइट्रिक एसिड, एमोनिया, तथा सल्फरिक एसिड उल्लेखनीय हैं। विल्टन प्लांट में पेट्रोलियम एथलीन तैयार की जाती है जिसका उपयोग कृत्रिम रबर, टेरीलीन तथा पोलीथिन आदि में किया जाता है।

नमक का रासायनिक उद्योग में आधारभूत महत्व है। क्लोरीन, हाइड्रोजन, कास्टिक सोडा व अन्य बहुत रासायनिक उत्पादन एवं उनके उप-उत्पादनों में नमक का प्रयोग आवश्यकीय रूप से होता है। ब्रिटेन इस दृष्टि से धनी है। यहाँ चट्टानी नमक पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है। इसके अलावा नमक के अक्षय स्रोत के रूप में समुद्र चारों ओर ही है। प्रति वर्ष लगभग 3 लाख टन नमक भूगर्भ से एवं 50 लाख टन समुद्र से प्राप्त किया जाता है। नमक क्षेत्रों में टीज की घाटी (दक्षिणी डरहम) नौर्य विच, मिडिल विच, चेशायर, वीवर घाटी क्षेत्र आदि उल्लेखनीय है। यहाँ नमक की पर्तें हैं। भूगर्भविदों के मतानुसार ट्रियेसिक युगों में जब पश्चिमी यूरोप में रेगिस्तानी दशाएँ थी तो उस समय झीलों के पानी के वाष्पीकरण के फलस्वरूप नमक की पर्तें उन क्षेत्रों में जमी रह गई, वे ही वर्तमान में नमक के क्षेत्र हैं।[46]

ब्रिटेन के आर्थिक ढांचे में रसायन उद्योग का महत्वपूर्ण स्थान है। विस्तार की गति देखी जाए तो सम्भवतः यह सबसे तीव्र गति से विकास करने वाला उद्योग है। प्रति वर्ष रसायन उद्योग लगभग 1000 पौंड का शुद्ध लाभ अर्जित करता है। इसमें से आधे से अधिक कीमत के उत्पादन विदेशों को निर्यात कर दिए जाते हैं। 1982 में यहाँ 6,061 मि० पौंड की कीमत के रसायन-पदार्थ निर्यात किए गए। इस उद्योग में उत्पादन, लाभ एवं निर्यात सभी की गति बड़ी तीव्र होती है। इसका अनुमान पिछले कुछ वर्षों के निर्यात आँकड़ों से हो सकता है। यथा 1961 में निर्यात-मूल्य लगभग 300 मि० पौंड था जो 20 वर्षों में 20 गुने से अधिक हो गया।

---

46. Simmons, W. M.--The British Isles p. 182.

अन्य उद्योग :

अन्य उद्योगों में रबर, सीमेंट, कागज तथा लुग्दी, चमड़ा-जूता तथा कुछ छोटे स्तर के धातु उद्योग जैसे अल्युमिनियम उद्योग उल्लेखनीय हैं। ब्रिटेन में बॉक्साइट नहीं निकलता, फ्रांस आदि देशों से आयात किया जाता है। दूसरे अल्युमिनियम उद्योग में विद्युत शक्ति की ज्यादा आवश्यकता होती है। थोड़ी सी मात्रा में तारकोल, कोयला एवं क्रायोलाइट (ग्रीनलैंड से आयातित) चाहिए। इन परिस्थितियों में बॉक्साइट को गलाकर अल्युमिनियम के कारखाने मुख्यतः उत्तर के उन स्थानों पर स्थापित किए गए हैं जहाँ विद्युत शक्ति पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है। लोचाबेर तथा किनलोचेलवेन के ब्रिटेन के महत्वपूर्ण अल्युमिनियम के कारखाने विद्यमान हैं। फोयर्स में एक शोधक कारखाना है। इन केन्द्रों से अल्युमिनियम दक्षिणी वेल्स के ब्रिटेन फेरी तथा रिसौलवेन, मिडलैंडस के बानबरी एवं बर्मिंघम एवं दक्षिणी लंकाशायर के प्रेस्टन तथा वारिंगटन आदि औद्योगिक नगरों को भेज दिया जाता है जहाँ इसकी विभिन्न मोटाई की चद्दरें व तार तैयार किए जाते हैं।

एल्युमिनियम के अतिरिक्त ब्रिटेन में, सीसा, जस्ता, निकिल, चाँदी आदि को शोधने के भी कारखाने हैं। इनमें से अधिकतर अयस के रूप में आयात की जाती है तथा उन्हें ब्रिटिश कारखानों में शोधा जाता है। शोधने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है। अतः इस श्रेणी के सभी कारखाने बंदरगाहों के निकट कोयला क्षेत्र में विकसित किए गए हैं। अधिकतर धातु शोधक कारखाने टाइने सांइड, दक्षिणी वेल्स तथा मिडलैंड में विद्यमान हैं। स्वांसी के निकट स्थित क्लाइडैक में विशाल निकिल शोधक मिल है। क्षमता की दृष्टि से यह यूरोप में सबसे बड़ी मानी जाती है।

ब्रिटेन में एक पौंड भी रबर पैदा नहीं होती फिर भी यहाँ का रबर उद्योग दुनिया के पुराने रबर उद्योगों में से है। कारण है उपनिवेशवाद जिसके फलस्वरूप यहाँ मलाया, सिंगापुर व लैटिन अमेरिकन देशों से कच्ची रबर आती रही और उसके आधार पर ही यहाँ विश्व प्रसिद्ध डनलप जैसी टायर निर्माता कम्पनी विकसित हो सकी। यह मिडलैंड में स्थित है। पोर्टलैंड सीमेंट सर्व प्रथम ब्रिटेन मे ही बनाया गया। यहाँ इस उद्योग के लिए कच्चे माल के रूप में चूने का पत्थर दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड में स्थित स्कार्पलैंडस से पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है। अतः अधिकतर कारखाने पूर्वी इंगलैंड में ही विकसित हुए हैं।

कागज एवं लुग्दी के लिए उपयुक्त नरम लकड़ी, जो मुख्यतः कोणधारी वनों से प्राप्त होती है, का ब्रिटेन में अभाव नहीं तो कमी अवश्य है। अतः प्रतिवर्ष कनाड़ा, नार्वे, स्वीडन आदि देशों से लकड़ी एवं लुग्दी मंगाकर यह कमी

पूरी की जाती है। निस्संदेह, आवश्यकता का कुछ प्रतिशत भाग देशी वनों से प्राप्त ओक से भी मिल जाता है। इस उद्योग में लगभग एक लाख व्यक्ति लगे

ब्रिटिश उद्योग : कुछ महत्वपूर्ण तथ्य[47]

	संलग्न व्यक्तियों की संख्या	कारखानों की संख्या	कुल कारखानों का प्रतिशत	कुल संलग्न व्यक्तियों का प्रतिशत
1.	20 से कम	78,171	71·8	8·2
2.	20 से 599	28,485	26·2	35·8
3.	500 से 1,499	1,651	1·5	20·6
4.	1,500 or more	518	0·5	31·4

	संलग्न मजदूर (हजारों में)	विक्रय (मि० पौंड में)	निर्यात (मि० पौंड में)	आयात (मि० पौंड में)
1. लौह-स्पात उद्योग	182	6,788	1,399	1,314
2. अलौह धातु उद्योग	76	2,368	1,496	1,917
3. कांच उद्योग	57	1,046	220	267
4. रसायन उद्योग	359	15,142	6,061	4,447
5. कृत्रिम रेशा उद्योग	17	437	300	284
6. कृषि यन्त्र ट्रैक्टर्स	42	1,444	763	464
7. मशीन टूल्स	103	1,161	528	431
8. टैक्सटाइल मशीनरी	15	232	212	103
9. बेसिक विद्युत यन्त्र	118	2,177	1,155	495
10. टैली कम्यूनिकेशन यन्त्र	61	1,264	144	125
11. गृह उपयोग के विद्युत यन्त्र	45	901	152	467
12. मोटर उद्योग	120	4,478	1,537	3,340
13. जलयान निर्माण	123	1,068	139	46
14. रेल्वे उपकरण	44	344	129	21
15. खाद्य पदार्थ निर्माण	500	21,655	1,628	4,809
16. वस्त्र उद्योग	268	4,375	1,319	2,028
17. टिम्बर एवं फर्नीचर	209	4,036	300	1,489
18. कागज एवं लुग्दी	160	5,168	523	2,044

47. Britain : Official Had Book 1984.

हुए हैं। सन् 1982 में यहां 86,000 टन अखबारी कागज उत्पादित किया गया। दो क्षेत्र कागज उद्योग में अग्रणी हैं। प्रथम, दक्षिणी लंकाशायर तथा दूसरा लंदन के आस-पास। दोनों ही क्षेत्रों के कारखाने आयातित लकड़ी प्रयोग करते हैं। लंकाशायर में कागज-लुग्दी की मिलें प्रमुखतः बोल्टन, बरी, ब्लैकबर्न, डारवेन, प्रैस्टन तथा मैनचैस्टर एवं लंदन क्षेत्र में वाइकोम्बे, मेडस्टोन, डार्टफोर्ट, कैम्सले, नौर्थफ्लीट, तथा गिलिंघम आदि कस्बों में विद्यमान हैं। कैम्सले में स्थित मिल ब्रिटेन की सबसे बड़ी पेपर मिल है। स्कॉटलैंड में कुछ कागज की मिल हैं जिनमें एडिनबर्ग, पैनीकुइक, डैनी, एग्ररड्राई, मार्किंच तथा ग्लासगो में स्थित मिल महत्वपूर्ण हैं।

पिछले दशकों में उद्योगों के सापेक्षिक महत्व में परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन कुछ प्रमुख उद्योगों के उत्पादन के ह्रास एवं वृद्धि से जाना जा सकता है। पिछले दशक में सम्पूर्ण औद्योगिक क्षेत्र की वृद्धि का प्रतिशत 33 था। इसमें रसायन, इंजीनियरिंग, कांच, बर्तन आदि उद्योगों में वृद्धि का प्रतिशत औसत से कुछ ज्यादा था, खाद्य-पदार्थ, जूता एवं वस्त्रोद्योग में लगभग 2% की वृद्धि रही लेकिन जलयान-निर्माण एवं खुदाई सम्बन्धी उद्योगों में भारी कमी हुई है।

□□□

ब्रिटेन : औद्योगिक प्रदेश

ब्रिटेन के विविध उद्योगों की विषद विवेचना के बाद यहाँ के औद्योगिक प्रदेशों का अध्ययन करते समय अगर प्रधान औद्योगिक केन्द्रों एवं उनके उत्पादनों के नाम गिनने तक ही सीमित रहा जाए तो यह पुनरावृति मात्र होगी। औद्योगिक प्रदेशों के अध्ययन करते समय वस्तुतः उन परिस्थितियों की खोज करना ज्यादा उपयुक्त होगा जिसके सहयोग से अमुक प्रकार के उद्योग विकसित हो सके। साथ ही उनके विकास का स्वरूप भी देखना श्रेयस्कर होगा। ब्रिटेन के औद्योगिक मानचित्र पर एक साधारण दृष्टि डालते ही स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ के अधिकतर उद्योग पीनाइन शृंखला के चारों तरफ फैले हुए हैं। भूगर्भिक दृष्टिकोण से विचार किया जाए तो स्पष्ट होता है कि यह क्षेत्र पैलियोजोइक युगीन, प्राचीन चट्टानों युक्त उत्तर-पश्चिम के उच्च प्रदेशों एवं टरशरी युगीन, नवीन चट्टानों युक्त दक्षिण-पूर्व के निम्न प्रदेशों के मध्य में स्थित है। मध्य में स्थित यह प्रदेश हरसीनियन क्रम से सम्बन्धित है जहाँ कार्बोनीफैरस युगीन कोयले की पर्तों का विस्तार है। बड़े पैमाने पर देखा जाए तो कोयला पर्तों का यह क्रम वस्तुतः मध्य यूरोप में स्थित कोयला पट्टी का ही विस्तार भाग प्रतीत होता है।

ब्रिटेन द्वीपीय स्थिति में है। सीमित भू-विस्तार एवं प्राकृतिक संसाधनों के कारण उसे व्यापार का सहारा लेना पड़ा। व्यापार के लिए आवश्यक है कि ब्रिटेन के पास ऐसी वस्तुएँ हों जिनके बदले में यह विदेशों से अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ ले सकें। इसीलिए उद्योगों को आर्थिक ढाँचे का मुख्य स्तम्भ बनाया गया। उद्योगों के विकास के लिए शक्ति चाहिए। पैट्रोल एवं जलविद्युत सम्भावनाओं का ब्रिटेन में अभाव है। दूसरे यह भी सत्य है कि जब औद्योगिक क्रांति हुई तब जल शक्ति व पैट्रोल शक्ति के साधन के रूप में अस्तित्व नहीं रखते थे। इन परिस्थितियों में यह स्वाभाविक था कि कैसा भी उद्योग हो उसकी स्थापना में पहली शर्त तो यह जरूर रही होगी कि या तो वह कोयला प्रदेश में या उसके नजदीक स्थापित किया जाए। पीनाइन के पास होने से जलधाराओं तथा चरागाह की भी सुविधा थी। इधर एक दो जगह कोयला प्रदेशों के निकट लोहे

की धातु भी मिल गई। एक बात और, ब्रिटेन के कोयला क्षेत्र अधिकांशतः समुद्री तटों के पास स्थित हैं। बल्कि कुछ क्षेत्रों में तो कोयले की पर्तें बढ़ते-बढ़ते समुद्र में चली गई हैं। ब्रिटेन का तट कटा-फटा ही है, अतः इन क्षेत्रों (कोयला क्षेत्रों) को अच्छे बंदरगाहों के रूप में आयात-निर्यात के भी उपयुक्त अवसर थे। इन सब प्राकृतिक और मानवीय परिस्थितियों में ब्रिटेन के अधिकांश उद्योग पीनाइन क्रम के चारों ओर विकसित हुए। सम्भवतः ब्रिटेन का 85% से अधिक औद्योगिक उत्पादन पीनाइन क्रम के औद्योगिक केन्द्रों से सम्बन्धित होता है। इस क्रम से बाहर केवल कुछ प्रदेशों में ही औद्योगिक विकास हुआ है, जिनमें दक्षिणी वेल्स, स्कॉटिश निचले प्रदेश, कम्बरलैंड या लदन के चारों ओर विकसित औद्योगिक प्रदेश महत्वपूर्ण हैं।

अगर ब्रिटिश उद्योगों का इतिहास निर्धारित किया जाए तो मानना पड़ेगा कि मध्य युगों में भी यहाँ उद्योग किसी न किसी स्वरूप में थे। यहाँ के ऊनी वस्त्र स्वदेशी खपत के अतिरिक्त निकटवर्ती यूरोपियन देशों को निर्यात किए जाते थे। औद्योगिक क्रांति का श्रीगणेश ब्रिटेन में हुआ। कोयला तथा यांत्रिक-कुशलता इन दोनों तत्वों के आधार पर शीघ्र ही ब्रिटेन उद्योगों में विकास करके दुनिया का प्रथम औद्योगिक देश बन गया। 19 वीं शताब्दी के मध्य में यह "दुनिया का वर्कशाप" था[48] लोकोमोटिव, जलयान निर्माण, वस्त्र व्यवसाय, इस्पात की 'बेसीमीर' तथा 'ओपिन हर्थ' विधियों में इसने दुनिया का मार्गदर्शन किया। तात्पर्य यह है कि एक शताब्दी से भी कम अवधि में ब्रिटेन एक शांतिमय कृषि प्रधान देश से एक शक्तिशाली उद्योग प्रधान देश के रूप में बदल गया। एक ऐसा देश हो गया जिसके जलयानों में दुनियाँ का व्यापार होता था, जिसके औद्योगिक उत्पादन दुनिया के प्रत्येक बाजार में जाते थे, जिसकी राजधानी (लंदन) दुनिया का सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक-केन्द्र था और जो एक विशाल साम्राज्य का स्वामी होने के कारण राजनैतिक दृष्टि से दुनिया का सिरमौर था। प्रथम विश्व युद्ध तक ऐसी ही स्थिति रही। बाद में सं० रा० अमेरिका, सोवियत संघ, जापान, पश्चिमी जर्मनी आदि देश आगे निकल गए लेकिन यह निर्विवाद सत्य है कि आज भी ब्रिटेन एक बड़ा एवं महत्वपूर्ण औद्योगिक देश है। यहाँ के औद्योगिक प्रदेशों को निम्न समूहों में रखा जा सकता है—

पीनाइन क्रम के औद्योगिक प्रदेश :

पीनाइन शृंखला के चारों ओर उद्योग-केन्द्र बिखरे हुए हैं। ब्रिटेन का 4/5 औद्योगिक उत्पादन इनसे सम्बन्धित होता है। इनके विकास में प्रारम्भ में ऊन

---

48. Hoffman, G. W.—A Geography of Europe p. 176.

पूर्ण उद्योग स्थापित हुए। इन्हीं दिनों स्टैफोर्डशायर से कोयला भी प्राप्त होने लगा। 1762 में मैथ्यू बोल्टन तथा जेम्स वॉट ने प्रसिद्ध सोहो वर्क्स स्थापित किया।

आज बर्मिंघम अपनी औद्योगिक विविधता के लिए न केवल ब्रिटेन वरन् विश्व में विख्यात है। इसके उपनगरों में अनेक प्रकार के उद्योग पनप गये हैं जिनमें

चित्र–14

इस्पात, रसायन, लोको, ऑटोमोबाइल्स, मशीनरी, धातु शोधन, यंत्र निर्माण, कृषि-यंत्र व उपकरण निर्माण. विद्युत यंत्र, वस्त्रोद्योग प्रमुख हैं। यहाँ की औद्योगिक भव्यता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि एक फैक्ट्री एक दिन में 80

लाख पिन, बौर्नविले फैक्ट्री एक दिन में 30 लाख चोकलेट के ब्लॉक्स तथा ऑस्टिन वर्क्स एक सप्ताह में हजारों कार निर्मित करती है। डनलप कम्पनी प्रति दिन हजारों टायर बनाती है।

प्रदेश के अन्य औद्योगिक केन्द्रों में कार्वेंट्री (बाइसिकिल, कार) वाल साल (जंजीरे, चर्म उद्योग) वालहैरम्पटन (ताला, बियरिंग, नट-बोल्ट, लॉक, सेफ) डडले (वाशिंग मशीन, जंजीर, कार) ऑक्सफोर्ड, काउली (कार) लीसैस्टर (जूते, रस्सियां, फीते) नौटिंघम (वस्त्र, साइकिल) डर्बी (कार) स्टॉक-आन-ट्रैंट (बर्तन उद्योग) महत्वपूर्ण हैं। बर्तन उद्योग में संलग्न 6 कस्बों को 1907 में स्टॉक-आन-ट्रैंट के रूप में एक इकाई में संगठित किया गया लंकाशायर व मिडलैंड के बीच स्थित अच्छी मिट्टी, उपयुक्त जल निकास व्यवस्था, स्टैफोर्ड की कोयला खानें तथा यातायात आदि तत्वों ने बर्तन उद्योग में सहयोग दिया।

(3) **यौर्कशायर प्रदेश**—पीनाइन श्रेणी के पूर्व में यौर्कशायर प्रदेश में कोयले की पर्तें धरातल के निकट ही हैं जिन्होंने यहाँ के निवासियों को प्रारम्भ से ही उद्योगों के लिए प्रोत्साहित किया है। मूर क्षेत्रों से प्राप्त ऊन एवं पीनाइन के पूर्वी ढालों पर प्रवाहित जलधाराओं ने प्राकृतिक स्रोतों के रूप में सहयोग किया है। इन दोनों से प्रवाहित यहाँ दो प्रकार के उद्योग पाए जाते हैं। उत्तरी तथा पश्चिमी भाग में ऊनी वस्त्र उद्योग जिसका सर्वाधिक केन्द्रीकरण वैस्ट-राइडिंग क्षेत्र में हुआ है। लीड्स इसका केन्द्र है। दक्षिण भाग में इस्पात एवं धातु सम्बन्धी छोटे उद्योग हैं जिसका सबसे बड़ा केन्द्र शैफील्ड है। हल बंदरगाह की सुविधा इन दोनों को है।

यौर्कशायर में ऊनी वस्त्रोद्योग मध्य युगों से ही है। 14–15वीं शताब्दी फ्लैमिश जुलाहों ने आकर इसमें और भी कुशलता ला दी। आज वैस्ट राइडिंग क्षेत्र ब्रिटेन के तीन चौथाई ऊनी वस्त्र तैयार करता है। ऊन व्यवसाय में लगभग 2 लाख व्यक्ति संलग्न हैं। लीडस यहाँ की 'प्रादेशिक राजधानी' है और 'सैकड़ों व्यवसायों का नगर'[49] कहा जाता है। पीनाइन्स से प्राप्त ऊन के आधार पर लीडस 1207 में ही ऊन के व्यापार केन्द्र के रूप में ख्याति पा चुका था। 14वीं शताब्दी में वस्त्र बनाए जाने लगे थे। 1850 से पहले तक यहाँ फ्लैक्स से लिनेन-वस्त्र भी बनाए जाते थे। 18 वीं शताब्दी से स्थानीय कोयला और लोहे के आधार पर लोह-इस्पात व्यवसाय का प्रारम्भ हुआ। ऐअरे-काल्डेर नदियों को जोड़ने वाली नहर (1760) तथा लीड्स-लीवरपूल नहर (1816) बनने से इसकी स्थिति और महत्वपूर्ण हो गई। वैस्ट राइडिंग प्रदेश के ऊन संचय केन्द्र के रूप में विकसित होते-होते यह ऊनी वस्त्रों के निर्माण एवं रैडीमेड वस्त्रों के केन्द्र के रूप

49. Simmons, W. M.—The British Isles, p. 189.

में इतना प्रसिद्ध हो गया कि आज यह विश्व का सबसे बड़ा रेडीमेड वस्त्रों का केन्द्र है। यहाँ की मौंटेग्यू-बर्तन फैक्ट्री विश्व की सबसे बड़ी रेडीमेड वस्त्र बनाने वाली इकाई मानी जाती है।

उत्तरी यौर्कशायर के अन्य केन्द्रों में हैलीफैक्स (वस्त्र, मशीन टूल्स) हडर्सफील्ड (ऊनी वस्त्र, मशीनरी, रसायन) ब्रैडफोर्ड (ऊनी वस्त्र) तथा वेक फील्ड (ऊनी वस्त्र, वर्सटेड, रेल के डिब्बे, मोटर कार) आदि हैं।

यौर्कशायर के दक्षिण में स्थित शैफील्ड (5000,000) ब्रिटेन का सबसे बड़ा एलौय इस्पात का उत्पादक (70%) है। 1167 में यहाँ किम्बरवर्थ के साधुओं को इस्पात बनाने की आज्ञा प्रदान की गई थी। उन्होंने स्थानीय जंगलों से चारकोल प्रयोग में लिया। उनका यह उद्योग 16वीं शताब्दी तक चला। इस प्रकार शैफील्ड के धातु-उद्योग की नींव पड़ी। डौन तथा शीफ जलधाराओं से पानी स्थानीय मिल स्टोन ग्रिट, यौर्कशायर से कोयला तथा स्वीडन से प्राप्त लौह-अयस से प्रोत्साहित होकर 18–19वीं शताब्दी में यहाँ समृद्ध धातु उद्योग स्थापित किया गया। शैफील्ड विश्व में अपनी कटलरी के लिए यहाँ की बनी चाकू, छुरी, ब्लेडस, कैंची, विश्व के कोने-कोने में मिल जाएँगी। एक वर्ष में 750 लाख ब्लेड, 250 लाख चाकू, 70 लाख जोड़ी कैंची अकेले शैफील्ड नगर में तैयार होती हैं। इनके अतिरिक्त यहाँ बायसिकिल, पेंट तथा वार्निश उद्योग भी स्थित हैं। निकटवर्ती रौथरहैम में भारी उद्योग स्थित हैं।

(4) लंकाशायर प्रदेश—लंकाशायर प्रदेश के विकास में निम्न तत्व सहायक सिद्ध हुए।

(क) दक्षिणी लंकाशायर से कोयला।
(ख) उत्तरी वेल्स, मिडलैंड्स स्कार्पलैंड्स से इस्पात।
(ग) लिवरपूल के कारण आयातित कच्चे माल से निकटता।
(घ) यातायात की सुविधा—रेल, सड़क एवं मैनचेस्टर तथा ट्रैंट-मर्सी नहर द्वारा
(ङ) पीनाइन्स से पानी की सुविधा।
(च) तर जलवायु।

लंकाशायर पिछली शताब्दी के अन्त तक विश्व का सबसे अधिक महत्वपूर्ण सूती वस्त्रोद्योग केन्द्र रहा है। मैनचैस्टर तथा सूती वस्त्र व्यवसाय एक दूसरे के पर्याय से लगते हैं। मैनचैस्टर (700,000) 16वीं शताब्दी से सूती वस्त्रोद्योग केन्द्र रहा है जबकि यहाँ सायप्रस तथा सीरिया से लाई हुई कपास कातीबुनी जाती है। अगले 300 वर्षों में उपनिवेशों की वृद्धि, अमेरिका, भारत से कपास का आयात, उपनिवेशों के निश्चित बाजार आदि तत्वों ने ऐसी स्थिति बना

थी कि सम्पूर्ण लंकाशायर प्रदेश सूती वस्त्र व्यवसाय में रंग गया। मैनचेस्टर के अतिरिक्त अन्य कई नगर (1 लाख से अधिक जनसंख्या वाले) भी इस उद्योग में प्रसिद्ध हो गए। इनमें ओल्डहम बर्नले, ब्लैकबर्न, प्रेस्टन, एकरिंग्टन आदि उल्लेखनीय है। व्यवसाय की सघनता का अनुमान इससे लग सकता है कि विश्व के किसी भी भाग में क्षेत्रफल की दृष्टि से, इतने अधिक तकुए तथा करघे केन्द्रित नहीं हैं। 30 मील लम्बे क्षेत्र में केवल मजदूरों की संख्या 6 लाख है। व्यवसाय में विशिष्टता पाई जाती है। लिवरपूल बंदरगाह से तो सारी सुविधा है ही, मैनचेस्टर शिप कैनाल के बनने से भी भारी सुविधा है। जलयानों से कपास मिलों में और मिलों से कपड़ों की गाठें जलयानों में बिना किसी माध्यम के सीधे रख दिए जाते हैं। सूती वस्त्र व्यवसाय के अतिरिक्त यहाँ परम्परागत रूप से मशीन, तेल, शक्कर, कृत्रिम रेशा, रसायन तथा तम्बाकू उद्योग भी प्रचलित रहे हैं। चेशायर में नमक की पर्तों की विद्यमानता ने क्लोरीन, नमक व रसायन उद्योगों को प्रोत्साहित किया है।

आज लंकाशायर प्रदेश के सामने व्यवसाय सम्बन्धी भीषण समस्या है। सूती वस्त्र व्यवसाय बदलती हुई परिस्थितियों में पतनोन्मुख है क्योंकि उपनिवेशवाद की समाप्ति के साथ कच्चे माल तथा बाजारों के स्रोत हाथ से निकल गए। इधर भारत तथा अमेरिका सस्ता कपड़ा लेकर प्रतियोगिता में हैं। ब्रिटिश कपड़े का उत्पादन मूल्य स्वाभाविक रूप से अधिक होता है। आधुनिक प्रगति के अनुसार विदेशों के व्यापारिक जलयान अत्यधिक क्रियाशील केन्द्रों पर ही जाते हैं। अतः बहुत से 'लाइनर्स' जो पहले लीवरपूल जाते थे अब साउथम्पटन या लंदन जाते हैं। कोयले की भी कमी आने लगी है। इन सब परिस्थितियों में यह सोचा जा रहा है कि यहाँ केवल उच्च कोटि के वस्त्र तैयार किए जाएँ जिनकी भारत या अमेरिका प्रतियोगिता न कर सकें। वस्त्र व्यवसाय सम्बन्धी मशीनों के निर्माण को प्रोत्साहन दिया जाए तथा सूती वस्त्रोद्योग केन्द्रों में क्रमशः अन्य उद्योग जैसे रसायन, मशीन निर्माण, आॅटोमोबाइल्स, कृत्रिम वस्त्र, काँच, रबर, लोकोमोटिव, एयर क्राफ्ट, इंजीनियरिंग एवं विद्युत-यंत्र उद्योग आदि विकसित किए जाएँ। इस नीति पर बड़ी तेजी से अमल किया जा रहा है।

(नोट—विशेष के लिए सूती वस्त्रोद्योग देखिए)

स्कॉटिश निचले प्रदेश :

स्कॉटलैंड के मध्य में दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व दिशा में फैले हुए निचले प्रदेश वस्तुतः एक दरारी घाटी हैं जिसे बाद में अनावृतिकरण के साधनों ने भरा। इस निचली पट्टी का क्षेत्रफल स्कॉटलैंड के कुल भाग का केवल 7% है परन्तु लगभग

चित्र-15
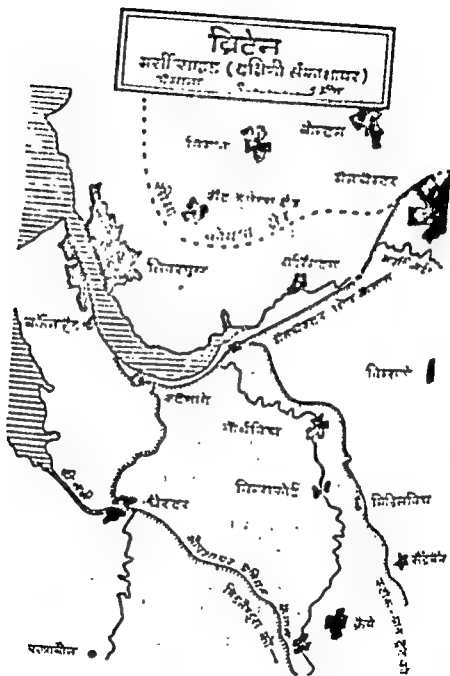
75% जनसंख्या यहाँ आश्रय लिए है।[50] इसी में स्कॉटलैंड का कृषि, औद्योगिक एवं व्यापारिक विकास हुआ है। इसका प्रधान कारण निचली भूमि, उपजाऊ मिट्टी एव क्लाइड से लेकर फर्थ ऑफ फोर्थ तक फैली हुई कोयला की पर्तें हैं। इस निचली पट्टी में उद्योग केन्द्रों के दो समूह है। पश्चिम में ग्लासगो के आस पास तथा पूर्व में एडिनबरा, डंडी एवं लोथियन क्षेत्र में। उद्योगों के विकास का मूल आधार लैनार्कशायर, आयरशायर तथा लोथियन में पाया जाने वाला कोयला है जिसने यहाँ लौह इस्पात, जलयान निर्माण, इंजीनियरिंग व अन्य उद्योगों को प्रोत्साहित किया। यहाँ ब्रिटेन का 14 प्रतिशत इस्पात तैयार किया जाता है।

पश्चिम में स्थित ग्लासगो न केवल स्कॉटलैंड वरन ब्रिटेन के महत्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्रों में से एक है। एक मिलियन से अधिक जनसंख्या वाला यह नगर क्लाइड के मुहाने से 20 मील भीतर कुछ ऊँचे भाग पर बसा है। ग्लासगो की स्थिति बड़ी महत्वपूर्ण है यहाँ से उच्च प्रदेश, एडिनबरा, आयरशायर व इंगलैंड को रास्ते जाते हैं। औद्योगिक क्रांति से पूर्व यह साधारण गाँव था। अमेरिका की खोज से इसे भारी लाभ हुआ। यहाँ के व्यापारियों ने अमेरिकन कपास एवं तम्बाकू से भारी धन कमाया था। जब कोयले का उपयोग शक्ति के साधन के रूप में होने लगा तो स्थानीय कोयले का उपयोग कर यहाँ विविध उद्योग स्थापित किए गए। आज ग्लासगो विश्व के चोटी के जलयान निर्माण केन्द्रों में से एक है। यहाँ लगभग 30 यार्ड हैं जो क्लाइड के सहारे-सहारे फैले हैं। विश्व प्रसिद्ध जलयान किंगजार्ज, एलिजाबेथ, तथा विक्टोरिया यहीं के उत्पादन है। 19 वीं शताब्दी में यह सूती वस्त्रोद्योग का भी बड़ा केन्द्र था। यद्यपि आज यह उद्योग यहाँ कम हो गया है फिर भी अनेक सूती मिल कार्यरत हैं। निकट स्थित पेसले की जे० पी० कोटस लिमिटेड कम्पनी दुनिया की प्रसिद्ध सिलाई का धागा बनाने वाली कम्पनी है।

ग्लासगो क्षेत्र के अन्य उद्योगों में इस्पात लोकोमोटिव, ऑटोमोबाइल्स, इंजीनियरिंग, एअर क्राफ्ट, बॉयलर, शक्कर, सिगरेट (विल्स) सिलाई की मशीन, क्लॉक, टाइपराइटर, रसायन, कांच व रबर उल्लेखनीय हैं।

निचले प्रदेश के पूर्व में एडिनबरा-डंडी औद्योगिक समूह है। प्राकृतिक साधन के नाम पर केवल कोयला (लोथियन) है फिर भी अपनी बुद्धि के आधार पर यहाँ विविध उद्योग विकसित किए गए हैं। 17वीं शताब्दी में यहाँ फ्लैंडर्स जुलाहे आकर बसे जिन्होंने ऊनी वस्त्र व्यवसाय को तथा 18वीं शताब्दी में होजरी व्यवसाय चमकाया परन्तु बाद में ठप्प हो गए। एडिनबरा इस प्रदेश का सबसे बड़ा नगर एवं औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ के व्यवसाय कागज, छपाई एवं प्रकाशन है। स्वच्छ

---

50. McIntosh, I. G, and Marahall, C.B.—The Face of Scotland p, 41-42.

जल व आयात की हुई एस्पार्टोघास ने यहाँ के कागज उद्योग को चमकाया। आज यहाँ ब्रिटेन का 20% कागज तैयार किया जाता है।[51] यहाँ के अन्य उद्योगों में जूता, रसायन, फर्नीचर तथा कांच उद्योग उल्लेखनीय हैं।

पूर्वी भाग में अन्य औद्योगिक केन्द्रों में लेथ (खाद, उर्वरक, कागज, इंजीनियरिंग) ग्रांटन (तेल) लोथियन (कागज) तथा डंडी (जूट उद्योग-भारत से आयातित जूट के आधार पर) महत्वपूर्ण हैं।

दक्षिणी वेल्स :

तटवर्ती प्रदेश में विविध प्रकार के कोयला-स्टीम कोक, बिटूमिनस, एन्थ्रासाइट, गैस-कोल की उपस्थिति स्थानीय रूप से टिन, तांबा तथा लोह-अयस की प्राप्ति, न्यूपोर्ट बंदरगाह की सुविधा, बाजार के लिए वेल्स की लगभग दो-तिहाई जनसंख्या जो दक्षिणी-वेल्स में आश्रय लिए है, ऊबड़-खाबड़ चट्टानी धरातल जिसके फलस्वरूप कृषि विकास सम्भव नहीं है एवं नीथ, ताफ एवं एब आदि नदियों द्वारा जलपूर्ति उन तत्वों में से कुछ हैं जिनके फल-स्वरूप दक्षिणी-वेल्स में औद्योगिक विकास सम्भव हुआ है।

प्राचीन धातु-उद्योग केन्द्रों में पॉटीपूल, स्वांसी एवं नीथ क्षेत्रों को रखा जा सकता है। पॉटीपूल में स्थानीय लौह-अयस एवं टिन को गलाकर टिन-प्लेट बनाई जाती थीं। स्वांसी-नीथ क्षेत्र में कार्नवाल तथा डेवोन प्रदेश से आयात किए हुए तांबे के शोधने का कार्य जारी था। कुछ मात्रा में सीसा तथा जस्ता भी गलाया जाता था। तांबे-शोधन उद्योग के उप-उत्पादन के रूप में सल्फरिक एसिड मिलता था जिसका उपयोग प्रारम्भिक टिन-प्लेट उद्योग में कर लिया जाता था। लौह-इस्पात उद्योग का श्रीगणेश यहाँ 1750 में हुआ जबकि स्थानीय कोयले से उत्तरी एवं पूर्वी वेल्स में प्राप्त लौह-अयस को गलाया जाने लगा। उस समय के लौह उद्योग केन्द्रों में डोलेस, मर्थिर टाइन फिल एवं हरवॉन उल्लेखनीय हैं।[52] बाद में जब बैसीमौर विधि का उदय हुआ, प्रवात भट्टियों का चलन प्रारम्भ हुआ तो विदेशों से प्राप्त अच्छी धातु प्रतिशत वाले लौह-अयस को आयात किया जाने लगा। स्वाभाविक रूप से यातायात खर्च से बचने के लिए अब इस्पात केन्द्र स्वान्सी न्यूपोर्ट एवं तलबट आदि बंदरगाहों में स्थापित किए गए। चूँकि टिन-प्लेट उद्योग में इस्पात चद्दरों की आवश्यकता होती है अतः यह उद्योग भी बंदरगाहों में स्थित इस्पात केन्द्रों के पास ही खिसक गया। इस प्रकार कोयले के आधार पर प्रारम्भ में एन्थ्रासाइट कोयला क्षेत्र में जिस लौह उद्योग का जन्म हुआ था वह समाप्त हुआ। प्राचीन केन्द्रों में

51. McIntosh, I. G. And Marshall, C. B—The Face of Scotland, p. 74.
52. King, W. J.—The British Isles p. 186.

अलौह-धातु उद्योग केन्द्र अवश्य वहीं जमे रहे क्योंकि ये पहले से ही बंदरगाहों के निकट थे और आयात पर निर्भर थे। अलौह धातु उद्योग केवल कुछ बड़ी इकाइयों में केन्द्रित है जैसे रैंसोलवैन (नीथ घाटी) में अल्युमिनियम उद्योग, बानरलोइड (स्वांसी के निकट) में टिटैनियम उद्योग तथा रोजर स्टोन (न्यूपोर्ट के निकट) में अल्युमिनियम उद्योग। लोह उद्योग के पुरानेचारों केन्द्रों (मर्थिर टाइडफिल, डौलेस, एबवेल, ब्लेनावोन) में उत्पादन 1935 में बंद हो गया।

वर्तमान इस्पात केन्द्रों में तलबोट (निकट स्थित ऐबे वर्क्स तथा मार्गान स्टील वर्क्स) न्यूपोर्ट (लानवैर्न में स्पेंसर वर्क्स) स्वांसी एवं कार्डिफ महत्वपूर्ण हैं। यहाँ इस्पात के अतिरिक्त टिन-प्लेट, धातु शोधन, लोकोमोटिव, इंजीनियरिंग आदि उद्योग विकसित हैं। यहाँ के उत्पादनों में इस्पात, तार, छड़ें, अर्द्ध निर्मित इस्पात आदि उल्लेखनीय हैं। लोडार्सी एवं मिलफोर्डहैविन में तेल शोधन उद्योग भी हैं। यहाँ आधुनिकतम 'रिफाइनरीज' हैं।

कम्बरलैंड प्रदेश :

ब्रिटेन के उत्तर-पश्चिम में स्थित इस छोटे से प्रदेश में कोयला एवं लोहा दोनों निकलते हैं। पठारी प्रदेश है अतः केवल तटवर्ती पट्टी में ही विकास सम्भव हो सका है। इन प्राकृतिक वरदानों का उपयोग करने के लिए इस्पात उद्योग की स्थापना की गई है। अच्छी किस्म का लोहा-अयस व्हाइट हैविन बंदरगाह द्वारा स्पेन से आयात कर लिया जाता है। बैरो-इन-फरनेस-प्रधान औद्योगिक केन्द्र है जहाँ विशाल 'वाइकर्स वर्क्स' विद्यमान है। बैरो-इन-फरनेस में निर्मित अधिकांश इस्पात लंकाशायर के औद्योगिक प्रदेशों, ग्लास्गो के जलयान निर्माण उद्योग एवं उत्तरी आयरलैंड के छोटे औद्योगिक केन्द्रों को निर्यात कर दिया जाता है।

लन्दन :

ब्रिटेन की सम्पूर्ण जनसंख्या के लगभग 20% भाग को आश्रय दिए हुए इस नगर को कभी 'विश्व राजधानी' होने का गौरव प्राप्त था। राजनैतिक, प्रशासनिक, सांस्कृतिक केन्द्र के अतिरिक्त लंदन एक भारी औद्योगिक केन्द्र भी है। औद्योगिक विकास के लिए उत्तरदायी जो प्राकृतिक परिस्थितियाँ होती हैं उनका यहाँ प्रायः अभाव है। न कोयला, न लोहा, न अन्य कोई धातु यहाँ खोदी जाती है। यहाँ के औद्योगिक विकास में मानवीय तत्व ही आधारभूत रहा है। भारी स्थानीय बाजारी मांग, लंदन का बड़ी मंडी एवं बंदरगाह होना। औपनिवेशिक उत्पादनों का संचय केन्द्र होना आदि तत्व ही यहाँ के औद्योगिक विकास की पृष्ठभूमि में है। यहाँ औद्योगिक विविधता है। सूई से लेकर रेल के इंजन और वायुयान तक बनाए जाते हैं परन्तु एक प्रवृत्ति स्पष्ट है कि यहाँ उपभोक्ता-महत्व के उत्पादनों पर ज्यादा ध्यान

दिया गया है। भारी उद्योगों विशेषकर इस्पात या धातु-शोधन का अभाव है। यहाँ के प्रचलित उद्योगों में शक्कर, साबुन, बोटल-कार्क्स, इंजीनियरिंग, विद्युत-यंत्र, वस्त्र, रबर, टायर तथा रसायन आदि उल्लेखनीय हैं। इनकी स्थिति प्रायः टेम्स के सहारे-सहारे है। स्थिति आयात के स्वरूप द्वारा निर्धारित है। यथा, इंजीनियरिंग उद्योग बाटरसी तथा ईस्ट फोर्ड, विद्युत-इंजीनियरिंग बूलविच, हायेज तथा एनफील्ड, ऑटोमोबाइल्स उद्योग एक्टन तथा डागेन हैम, शक्कर, साबुन, केबल तथा जलयान की मरम्मत टेम्स के उत्तरी किनारे पर-बसे सिल्वर टाउन, खाद्य-पदार्थ उद्योग बर्मोन्डसी तथा हैमरस्मिथ, फर्नीचर उद्योग टोटेन हैम, हैक्नी, बेथल ग्रीन तथा फिन्सबरी तथा रेडीमेड वस्त्र निर्माण उद्योग वेस्टमिंस्टर तथा मार्लीबोन में स्थित हैं।

□□□

ब्रिटेन : यातायात

ब्रिटेन जैसे उद्योग-व्यापार प्रधान देश के लिए समुचित विकसित यातायात व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक है। यहाँ सड़क, रेल, नहरी एवं समुद्री सभी प्रकार के यातायात स्वरूप पर्याप्त विकसित है। 1969 में देश के कुल श्रमिकों का 7·1 प्रतिशत भाग यातायात एवं संदेशवाहन में लगा हुआ था और अभी तक इन आकड़ों में कोई खास परिवर्तन भी नहीं हुआ है। यातायात-संदेश वाहन में संलग्न कुल व्यक्तियों में से 29.3 प्रतिशत सड़क, 25.1 प्रतिशत रेल, 20.1 प्रतिशत पोस्ट आफिस एवं टैलीफोन व्यवस्था 8.9% समुद्री 2·8% वायु यातायात में लगे थे। इस प्रकार सर्वाधिक भाग रेल-सड़क यातायात में लगा था परन्तु समुद्री एवं नहरी दोनों प्रकार के जल यातायात में भी कम से कम 20% श्रमिक लगे थे।

ब्रिटेन में भाप का एंजिन बना और उसके साथ ही आधुनिक रेलवे तथा समुद्री यातायात का श्रीगणेश हुआ। कोयला यहां भारी मात्रा में था अतः देश के विभिन्न भागों को रेल मार्गों से जोड़ा गया। निस्संदेह घनत्व, इसके बावजूद भी, बहुत नहीं हो पाया क्योंकि उत्तर, पश्चिम एवं मध्य के उच्च प्रदेश रेल के विकास में बाधा थे। अतः ज्यादातर रेल मार्ग इंगलैंड के औद्योगिक प्रदेशों को जोड़ते हुए बनाए गए। भार के आधिक्य के फलस्वरूप औद्योगिक प्रदेशो में दोहरी लाइनें डाली गई। पिछली दो शताब्दियों में ब्रिटिश साम्राज्य एवं व्यापार दोनों ही अपनी चरम सीमा पर थे और दोनों को ही एक विकसित जल यातायात की व्यवस्था थी। कोयले के प्रयोग ने इस समस्या का समाधान प्रस्तुत कर दिया।

1919 तक ब्रिटेन के भीतरी 'ट्रैफिक' का अधिकांश भाग रेलों द्वारा वहन किया गया। बाद में जैसे ही पैट्रोल-डीजल एंजिन का अविष्कार हुआ रेल-सड़क यातायात में भारी प्रतियोगिता हुई। परिणामस्वरूप सड़क यातायात ने रेलों का 'ट्रैफिक' छीन कर उनका महत्व कम कर दिया। सड़क यातायात में कुछ विशिष्ट गुण हैं। यह छोटी-छोटी दूरी, सुविधाजनक समय एवं खर्चे की दृष्टि से बड़ी तेजी से पनपा। रेल देश के प्रत्येक गांव को नहीं जोड़ सकती, सड़क द्वारा यह सम्भव है। रेल अधिक से अधिक 2 डिग्री के ढ़ाल पर चढ़ सकती है जबकि सड़क यातायात में

39–40 डिग्री के ढाल भी मामूली बात है। परन्तु इन सबका तात्पर्य यह नहीं कि रेल-यातायात में पतन निरंतर रहा। वस्तुतः पतन शब्द अनुपयुक्त है, 'एकाधिपत्य की समाप्ति' शब्द ज्यादा उपयुक्त है। उद्योगों के लिए रेल यातायात का आज भी आधारभूत महत्व है। वस्तुतः उद्योग एवं यात्रीगणों की सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए यातायात के इन दोनों स्वरूपों के बीच एक सुन्दर व्यवस्था होनी चाहिए। ये दोनों एक दूसरे के पूरक होने चाहिए न कि प्रतियोगी। परन्तु वास्तविकता कुछ और ही होती है। यहां तक कि ब्रिटेन के 'मोटर वेज प्लान' (1046) तथा रेल के आधुनिकीकरण की योजना (1955) द्वारा भी दोनों की प्रतियोगिता बढ़ेगी ही।

सड़क यातायात :

ब्रिटेन की सड़कों में निम्न महत्वपूर्ण हैं—

1. एम 1, लंदन से लीड्स (304 कि० मी०)
2. एम 2, मेडवो मोटर वे लंदन से डोवर।
3. एम 4, लंदन से दक्षिण वेल्स (216 कि० मी०)।
4. एम 5, बर्मिंघम से ब्रिस्टल (32कि० मी०) जो कि आगे पूर्वी ग्रंट की ओर चली जाती है। ब्रिस्टल से आगे इसकी लम्बाई 187 कि० मी० है।
5. एम 6, बर्मिंघम (डनस्टौन) कार्लिसले (275 कि० मी० यह मार्ग एम 1 तथा एम 5 से भी जुड़ा है।
6. ए 2, लंदन से एडिनबरा।
7. ए 74, ग्लासगो से कार्लिसले।
8. ए 4, लंदन से कार्डिफ।
9. ए 30, लंदन में प्वाईमाउथ।

सड़क-मार्गों में निरंतर सुधार एवं विकास होता रहता है। देश के पश्चिमी एवं उत्तरी भागों में तो यह बहुत ही आवश्यक है क्योंकि यहाँ वर्षा ज्यादा है अतः जल द्वारा निरंतर अनावृतिकरण की समस्या बनी रहती है। इसके लिए जगह-जगह पुल तथा सुरंगों की योजनाधीन हैं। यथा, सड़क ए 1 तथा ए 40 के विकास के लिए मेडवे, फोर्थ एवं सेवेर्न नदियों पर पुल तथा थेम्स, टाइन एवं क्लाइड के नीचे होकर सुरंग बनाए जा रहे हैं। सड़क एम 6 के यातायात के भार को कम करने के लिए 'प्रेसटन बाई पास' हाल में ही बन कर तैयार हुआ है। उच्च प्रदेशों में सड़कों को दर्रों में होकर निकाला गया है। यथा लेक डिस्ट्रिक्ट में

किर्कस्टोन, पीनाइन में स्टेन मोर तथा स्नेक एवं स्कॉटलैंड में किलीक्रैन्की दर्रे का उपयोग श्रेणियों को पार करने के लिए किया गया है। जाड़ों के दिनों में ये दर्रे बर्फ से रुक जाते हैं अतः इन दिनों सड़कों को निरन्तर साफ करते रहना पड़ता है।

ब्रिटेन में लगभग 343,320 मील लम्बी सड़कें हैं इस प्रकार एक वर्ग मील भू-भाग के लिए 3 मील लम्बी सड़कों का औसत पड़ता है। ब्रिटेन की सड़कों के बारे में कहा जाता है कि आंतरिक भाग में रेल या सड़क पकड़ने के लिए चाहे 10 मील चलना पड़े पर लंदन से हर समय देश के हरेक भाग को मोटर या रेल मिलती है। लंदन सड़क यातायात का सबसे बड़ा केन्द्र है जहाँ से देश के किसी भी भाग को सड़क द्वारा पहुँचा जा सकता है। सड़क यातायात का सर्वाधिक घनत्व इंगलैंड के दक्षिणी-पूर्वी भाग में है जिसके लिए समतल भूमि, अधिक जनसंख्या, कृषि विकास, लंदन की स्थिति तथा कई औद्योगिक प्रदेशों की निकटता आदि तत्व उत्तरदायी हैं। ब्रिटेन की सड़कों का विभाजन ट्रैफिक की मात्रा के आधार पर किया गया है । मुख्य सड़कों को 'ट्रंक रोड्स, माना जाता है । इनकी लम्बाई लगभग 12,325 मील है।

ब्रिटिश यातायात मंत्रालय आजकल ऐसी ट्रंक-रोडस पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रहा है जिनके द्वारा बड़े-बड़े नगरों के बीच बिना रुके हुए सीधा 'ट्रैफिक' हो सके। क्योंकि सड़कों पर से प्रतिवर्ष लगभग 30 मिलियन टन कोयले का यातायात होता है। अतः ऐसी व्यवस्था बहुत आवश्यक है कि उद्योगों से सम्बन्धित वस्तुएँ बिना रुके हुए जल्दी से जल्दी अपने लक्ष्य पर पहुँच सके । फिलहाल ऐसी 1000 मील लम्बी सड़कों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया है । इसमें से जनवरी 1970 तक 649 मील लम्बी सड़क बन चुकी थी शेष बन रही थी। 1967-68 में यातायात मंत्रालय ने 'काउण्टी काउंसिल एसोसियेशन' से सम्पर्क कर छः सड़क निर्माण इकाइयों की स्थापना की जिनका कार्य अपने-अपने क्षेत्र में मुख्य सड़कों की योजना बनाना तथा काम की देख भाल करना होगा। ये निम्न हैं—[53]

इकाइयाँ	सम्बन्धितकॉउण्टीज
उत्तरी-पश्चिमी	लंकाशायर, चेशायर
उत्तरी-पूर्वी	डरहम, योर्कशायर (वेस्ट राइडिंग)
मिडलैंड	डर्बीशायर, स्टैफोर्डशायर, वारविकशायर
दक्षिणी-पश्चिमी	डेवोन, ग्लूसेस्टरशायर, सोमरसेट

53. Statesman,s Year Book, 1970-71 Macmillan, p. 114.

दक्षिणी-पूर्वी	हैम्पशायर, कैंट, सुरे
पूर्वी	बैडफोर्डशायर, बकिंघमशायर, एसैक्स हर्टफोर्डशायर

रेल यातायात :

ब्रिटेन में रेल यातायात अत्यन्त विकसित दशा में है। समस्त बसे हुए भागों में रेलवे लाइनों का जाल है। औद्योगिक प्रदेशों में तो इनका घनत्व बहुत ज्या है। कोयला खनन केन्द्रों से औद्योगिक केन्द्रों तक प्रायः दोहरी लाइनें हैं। बड़े-बड़े नगरों एवं प्रादेशिक-आर्थिक केन्द्रों जैसे लंदन, ग्लासगो, बर्मिघम, मैनचैस्टर, एडिनबरा आदि को भी दोहरी लाइनों से जोड़ा गया है। बसे हुए भागों में शायद ही कोई ऐसा स्थान हो जो रेलवे लाइन से 5 मील से ज्यादा दूर हो। ब्रिटेन क्षे की दृष्टि से भारत के किसी एक राज्य से कम है परन्तु रेलवे मार्गों की लम्बाई दोनों देशों की लगभग बराबर है। उत्तर एवं पश्चिम के उच्च प्रदेशों को छोड़कर ज्यादातर भागों में 'स्टैण्डर्ड गेज' (5 फीट $8\frac{1}{2}$ इंच) है।

ब्रिटेन में सड़क तथा रेल यातायात में भारी प्रतियोगिता रही है जिसमें रेल को नुकसान भी उठाना पड़ा। इस प्रतियोगिता को ध्यान में रखते हुए कुछ ऐसे कदम रेलवे विभाग उठा रहा है जिससे स्थिति में सुधार होगा। बड़े-बड़े औद्योगिक नगरों या खनिज केन्द्रों तथा औद्योगिक नगरों के बीच ऐसी रेलवे लाइनें बिछाई जाएँगी जिन पर नियमित रूप से केवल माल का यातायात होगा। कोयला रेलवे द्वारा ले जाया जाने वाला मुख्य सामान रहा है। रेलों द्वारा ढोए जाने वाले कुल माल का 60% एवं तटवर्ती जलयान यातायात का 80% भाग कोयला द्वारा प्रस्तुत किया जाता रहा है। पिछले दिनों कोयला की लदान-मात्रा में ह्रास हुआ है। काफी भाग सड़कों ने भी छीन लिया क्योंकि सड़क द्वारा कोयले का यातायात अपेक्षाकृत सस्ता पड़ता है। अतः रेल-विभाग ने निश्चय किया कि रेल द्वारा कोयला-यातायात की दर इस प्रकार की निश्चित की जाएगी कि सड़क यातायात उसकी प्रतियोगिता ही न कर सके। वैसे सचाई यह है कि इस सबके बावजूद भी कोयले के यातायात में कमी तो होगी ही क्योंकि जैसे-जैसे तेल, गैस, अणु शक्ति का प्रचार हो रहा है विभिन्न क्षेत्रों में कोयले की उपयोग-मात्रा कम होती जा रही है।

स्वयं रेलवे-विभाग में ही कोयले का उपयोग कम हो गया है पर्याप्त रेलवे लाइनों का विद्युतीकरण कर दिया गया है। बड़े नगरों के बीच लगभग समस्त मार्गों का विद्युतीकरण कार्य पूरा हो चुका है। लंदन-यातायात-व्यवस्था के अन्तर्गत जितनी रेलवे लाइनें आती हैं वे सब विद्युत द्वारा संचालित हैं। माल वाहक रेलों में कोयले के एंजिनों का स्थान क्रमशः डीजल-एंजिन लेते जा रहे हैं। समस्त रेलवे मार्गों का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया है जो अब ब्रिटिश रेल संगठन

द्वारा चलाई जाती है। प्रशासन की दृष्टि से समस्त रेलवे लाइनों को छः क्षेत्रों में बांटा गया है—

क्षेत्र	प्रधान कार्यालय
1. पूर्वी क्षेत्र	लिवरपूल स्ट्रीट स्टेशन
2. लंदन-मिडलैंड क्षेत्र	यू–स्टोन स्टेशन
3. उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र	योर्क
4. स्कॉटिश क्षेत्र	ग्लॉसगो
5. दक्षिणी क्षेत्र	वाटरलू स्टेशन
6. पश्चिमी क्षेत्र	पैडिंगटन स्टेशन

समुद्री यातायात :

ब्रिटेन का समुद्री यातायात केवल इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि यहाँ का आयात और निर्यात भारी मात्रा में होता है वरन् इसलिए भी कि मालवाहक तथा यात्री वाहक जलयानों में प्रतिवर्ष 700 मिलियन पौंड की आय होती है जो अदृश्य निर्यात के लगभग एक चौथाई के बराबर है। पिछले दशकों में जापान, पश्चिमी जर्मनी, सं० रा० अमेरिका आदि देशों के व्यापारिक जहाजी बेड़े की वृद्धि से उत्पन्न प्रतियोगिता के कारण ब्रिटिश समुद्री यातायात को भारी नुकसान पहुँचा है। अन्यथा ब्रिटेन का जहाजी बेड़ा दुनिया में सबसे बड़ा था। आय का भी यह एक बड़ा स्रोत रहा है। 1953–68 की अवधि में ब्रिटिश जहाजी बेड़ा में केवल 19 % की वृद्धि हुई जबकि इसके प्रतियोगी देशों के बेड़े लगभग दूने हो गए हैं। ढोए जाने वाले माल की मात्रा प्रतिवर्ष कम होती जा रही है।

ब्रिटेन का जहाजी बेड़ा 22.5 मि० ग्रोस टन भार (1982) का है जो कुल भार की दृष्टि से विश्व में छठे स्थान पर है। इसमें से 10.4 मि० ग्रोस टन भार के तेल वाहक जहाज हैं। निस्संदेह, पिछले वर्षों में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता के कारण इसमें ह्रास हुआ है। ब्रिटिश जहाजी बेड़ा 1975 में उत्कृष्ट विकास की अवस्था में था जबकि इसका भार 33.2 मि० ग्रोस टन था। वर्तमान में इस बेड़े में यानों (5000 ग्रोस टन से अधिक) की संख्या 1260 है।

इन आंकड़ों से विश्व के समुद्री-यातायात ढांचे में ब्रिटेन की महत्वपूर्ण स्थिति स्पष्ट है। ब्रिटिश साम्राज्य एवं देश के आर्थिक ढांचे में उद्योगों की प्रधानता–ये दो सम्भवतः सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व हैं जिनके कारण ब्रिटेन का जहाजी बेड़ा विस्तृत एवं संगठित हुआ। कटा-फटा तट, कोयले की प्राप्ति किसी भी स्थान का समुद्र से 100 मील से अधिक दूर न होना, द्वीपीय स्थिति के फलस्वरूप बाह्य दुनिया से सम्पर्क स्थापित करने की वांछनीयता आदि अन्य सहयोगी तत्व हैं।

वैसे तो ब्रिटिश जहाजी बेड़ा सभी तरह के मालों का यातायात करता है परन्तु तेल उनमे सबसे बड़ा एवं महत्वपूर्ण भाग बनाता है। कुल ढोए जाने वाले माल का 56% भाग तेल एवं सम्बन्धित उत्पादनो द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। यहाँ के टैंकर्स अधिकांशतः तेल मध्य-पूर्व व लैटिन-अमेरिका से लाते हैं। मध्य-पूर्व के देशों से पहले ये स्वेज नहर से होकर आया करते थे। राष्ट्रीयकरण के पश्चात् अफ्रीका का चक्कर लगाकर आना पड़ता है। इधर तेल शोधक कारखानों की क्षमता क्रमशः बढ़ती जा रही है। अतः पूर्ति के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये टैंकर्स की क्षमता बढ़ाई गई है। पहले औसत ब्रिटिश तेल वाहक 26,010 औसत टन भार के होते थे जिन्हें बढ़ाकर 2½ लाख टन तक का कर दिया गया है। अणु-चालित विशाल तेल वाहक भी प्रयोग में आ चुके हैं।

9 वीं शताब्दी के अन्त तक विश्व के सभी समुद्री मार्गों पर ब्रिटिश जलयानों का आधिक्य रहता था, स्वेज मार्ग को तो ब्रिटिश जीवन रेखा कहा जाता रहा है। इस प्रकार अटलांटिक महासागरीय मार्गों पर सर्वाधिक यान ब्रिटिश जहाजी बेड़े के ही होते थे। अब यद्यपि वह स्थिति नहीं रही है फिर भी ब्रिटेन के यात्री, माल और तेल वाहक दुनिया के सभी जल मार्गों पर नियमित रूप से चलते हैं। इस बेड़े का यहाँ के आर्थिक ढांचे में महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि आयात-निर्यात मूल्य में जो भारी अन्तर रहता है उसे पूरा करने का यह एक महत्वपूर्ण साधन है।

लंदन, लिवरपूल, मिलफोर्ड हैविन, साउथैम्पटन, डोवर, ग्लासगो, हल तथा मैनचेस्टर आदि यहाँ के प्रमुख बंदरगाह हैं जो 75% से अधिक व्यापार के लिए उत्तरदायी हैं। अकेला लंदन ही एक तिहाई विदेशी व्यापार के लिए उत्तरदायी है। बंदरगाहों के कार्य में भी कुछ विशिष्टता आ गई है जैसे कि लंदन, लिवरपूल तथा मिलफोर्ड-हैविन तेल के लिए प्रमुख बन्दरगाह माने जाते हैं जबकि डोवर सर्वाधिक व्यस्त यात्री-बंदरगाह है। सुदूर देशों के लिए जाने वाले यात्री-जलयानों का सबसे बड़ा बंदरगाह साउथैम्पटन है। हल एवं न्यूकैसिल बंदरगाह अपने औद्योगिक उत्पादनों के निर्यात एवं कच्चे मालों (विशेषकर लोह-अयस) के आयात के लिए उल्लेखनीय हैं। मैनचेस्टर परम्परागत रूप से कपास के आयात तथा सूती वस्त्रों के निर्यात में रत है। आने वाले यानों का टन-भार जाने वालों की अपेक्षाकृत लगभग दूना रहता है। 1981 में ब्रिटिश बंदरगाहों से सम्बन्धित माल भार 243 मि० टन था।

नहरी यातायात :

नहरों का ब्रिटेन की यातायात-व्यवस्था में आज भी अपना स्थान है। निस्संदेह प्रतिवर्ष उसका महत्व घटता जा रहा है। घटते हुये महत्व को उनके

द्वारा किए गए यातायात (मिलियन्स ऑफ टन-माइल्ज) के आँकड़ों द्वारा महसूस किया जा सकता है जो 1955 में 184 था, और 1960 में घटकर 169 तथा 1963 में 148 हो गया। इस वर्ष नहरों में होकर कुल 9.1 मिलियन टन भार ढोया गया जिसमें से 3.9 मिलियन टन कोयला, 3 मिलियन टन विविध सामान तथा 2.2 मिलियन तरल पदार्थ (औसत) थे।

ब्रिटेन के नहरी यातायात का श्रीगणेश 1761 में ब्रिज वाटर नहर के निर्माण के साथ हुआ। बाद के वर्षों में ज्यों-ज्यों ब्रिटेन के औद्योगिक एवं व्यापारिक क्षेत्र में विकास होता गया नहरों का निर्माण व उपयोग भी बढ़ता गया। आज यहाँ लगभग 2500 मील, लम्बी नाव्य नहरें है। इनमें से कुछ नहरें तो इतनी चौड़ी हैं कि उनमें होकर बड़े-बड़े स्टीमर्स छोटे-छोटे जलयान आसानी से गुजर सकते हैं। 120 फीट चौड़ी मैनचेस्टर शिप कैनाल इसी प्रकार की है जिसमें होकर 28 फीट गहराई के पेंदे वाले जलयान आसानी से गुजर सकते हैं। 1894 में यह नहर वस्तुतः सूती वस्त्रोद्योग की सुविधा के लिए बनाई गई थी। $35\frac{1}{3}$ मील लम्बी इस नहर द्वारा मैनचेस्टर नगरी की मिलों के द्वार तक जाना सम्भव हो गया है।

प्रारम्भ में जब नहरें कम थीं तो उनका नियंत्रण व देखभाल स्थानीय अधिकार में था। जब नहरें बढ़ी और उनके द्वारा पर्याप्त मात्रा में यातायात होने लगा तो प्रतियोगिता से बचने के लिए इनको रेलवे विभाग के नियंत्रण में दे दिया गया। 1914-18 की प्रथम विश्व युद्ध की अवधि में रेल तथा नहर दोनों को ही सरकार ने अपने नियंत्रण में ले लिया। 1948 के यातायात अधिनियम के अनुसार उसी वर्ष नहरों का दायित्व ब्रिटिश यातायात कमीशन ने लिया, और अन्त में 1963 में जब 'ब्रिटिश जल-मार्ग मंडल' की स्थापना हुई तो नहरी यातायात उसके नियंत्रण में दे दिया गया। आजकल 2500 मील लम्बी नहरों में से लगभग 2000 मील लम्बाई की नहरें इस मंडल के आधीन हैं। शेष स्थानीय अधिकारियों या निजी कम्पनियों के नियंत्रण में हैं। इन नहरों में से लगभग 1000 मील लम्बाई की नहरें संकरी हैं जिनमें से 7 फीट चौड़ाई तथा 25-30 टन भार की नावों द्वारा ही यातायात सम्भव है। शेष नहरों में 400 टन से अधिक भार वाले स्टीमर्स व छोटे जलयान आसानी से चल सकते हैं। लगभग 1380 मील लम्बी नहरों के लिए कमीशन की सिफारिश पर छः मिलियन पौंड राशि की एक सुधार एवं विस्तार योजना बनाई गई जो कायरत है। नहरी यातायात के दो बड़े प्रादेशिक केन्द्र लीड्स एवं ग्लूसेस्टर में स्थापित किए गए हैं। ब्रिटेन की नहरों में से निम्न, यातायात की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

(1) मैनचेस्टर शिप कैनाल—ईस्थम से मैनचेस्टर तक बनाई गई इस नहर की लम्बाई लगभग 36 मील है। 30 फीट गहरी एवं 120 फीट चौड़ी

इस नहर में पाँच लॉक हैं। कपास, सूती वस्त्र एवं मशीनें इस नहर में होकर ढोए जाने वाला प्रमुख सामान है।

(2) लीडस-लिवरपूल नहर—यह ब्रिटेन की एक मात्र नहर है जो पर्वत शृंखला को काटकर (पीनाइन श्रेणी) बनाई गई है। यह नहर लंकाशायर एवं योर्कशायर के औद्योगिक प्रदेशों को जोड़ती है। कोयला, वस्त्रोद्योग संबंधी मशीनें, ऊन इस नहर के प्रधान यातायातित माल हैं।

(3) ट्रेंट नहर—योर्कशायर से हल बंदरगाह, यातायात—कोयला।

(3) शैफील्ड नहर—दक्षिणी योर्कशायर से शैफील्ड, यातायात—कोयला, लोहा।

(5) एयरे-काल्डेर नहर—लीडस से गूले' यातायात—कोयला।

(6) ट्रेंट एवं मर्सी नहर—नोटिंघम से मेनचेस्टर, यातायात—धागा, मशीनें।

(7) ग्रांड यूनियन कैनाल—मिडलैंड से लंदन, यातायात—कच्चे माल।

(8) ग्लूसेस्टर कैनाल—ग्लूसेस्टर से शार्पेन्स, यातायात—विविध।

(9) कैनेट-एवन कैनाल—ब्रिस्टल से टेम्स, यातायात—कोयला, टिन प्लेट।

(10) कैलीडोनियन कैनाल—फोर्टविलियम से इन्वरनेस।

(11) फोर्थ एण्ड क्लाइड कैनाल—फर्थ ऑफ फोर्थ से क्लाइड तक।

उपरोक्त में से अन्तिम तीन नहरें बंद कर दी गयी हैं।

वायु यातायात :

वायु यातायात का कार्य अब तक प्रमुखतः यात्री वहन का ही रहा है। माल के नाम पर केवल कीमती परन्तु हल्का सामान ही वायु सेवाओं द्वारा भेजा जाता है। परन्तु सामान को पैक करने के जो आधुनिक तरीके चले है और जैसे-जैसे बड़े आकार के वायुयान बनते जा रहे है ये सम्भावनाएँ बढ़ चली हैं कि निकट भविष्य में वायु सेवाओं द्वारा माल ढोने का कार्य भी किया जाएगा। लन्दन यात्री वहन का मुख्य हवाई केन्द्र रहा है। माल वहन के लिए सम्भवतः मैनचेस्टर ब्रिटेन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण बंदरगाह होगा। लीडस, लिवरपूल, बर्मिंघम एवं न्यूकैसिल भी इस दिशा में विकास करेंगे। वायुयानों के आकार बढ़ने तथा बीमा की दर घटने के साथ अब माल वहन के लिए वायु यातायात का उपयोग बढ़ चला है। अगले कुछ वर्षों में इसकी वृद्धि 20%-प्रतिवर्ष होने की सम्भावना है।[54]

54. King, W. J —The British isles p. 89.

देश का आकार छोटा होने के कारण ब्रिटेन में वायुसेवा केवल बड़े-बड़े नगरों के बीच ही प्रचलित है। लंदन, ग्लासगो, एडिनबरा, मैनचैस्टर, न्यूकैसिल, बर्मिंघम, ब्रिस्टल, बेलफास्ट आदि नगरों के बीच नियमित वायुसेवा है। इन नगरों में आधुनिकतम हवाई अड्डे हैं। यथा, लंदन के हीथ्रो एवं गैटविक, लिवरपूल का स्पेके, मैनचैस्टर का रिगवे, लीडस का यीडोन, बर्मिंघम का एमडोन, बेलफास्ट का नटस कार्नर, एडिनबर्ग का टर्न हाउस तथा ग्लासगो का रैन फयू हवाई अड्डे आधुनिकतम उपकरणों से युक्त हैं। लंदन में थेम्स के दक्षिणी किनारे पर स्थित वैस्टलैंड हैलीपोर्ट मुख्यतः हैलीकॉप्टर्स के लिए है। अन्तर्राष्ट्रीय वायु सेवाओं के लिए ब्रिटेन ने दो वायु यातायात निगम संगठित किए हैं।

प्रथम, बी० ओ० ए० सी०।

द्वितीय, बी० ई० ए०।

बी० ओ० ए० सी० के वायुयान प्रायः दुनिया के प्रत्येक भाग के लिए उड़ान भरते हैं। इसका प्रमुख मार्ग लंदन, पेरिस, रोम, तेहरान, करांची, बम्बई, दिल्ली, सिंगापुर, हांगकांग, है। बी० ई० ए० के यान मुख्यतः यूरोपियन नगरों के लिए उड़ान भरते हैं। जिन मार्गों पर ब्रिटिश ओवरसीज एयरवेज कार्पोरेशन के वायुयान नहीं जाते वहां वह अन्य देशों की वायु सेवाओं के सहयोग से कार्य करता है।

लंदन नगर क्षेत्र के लगभग $10\frac{1}{2}$ मिलियन लोगों की सुविधा के लिए इस मैट्रोपोलिटन क्षेत्र में यातायात की पृथक् व्यवस्था की गई है जिसे लंदन-यातायात के नाम से जानते हैं। यातायात की व्यवस्था इस प्रकार की गई है कि नगर के प्रत्येक उप-नगर को द्रुतगामी साधनों द्वारा जोड़ा गया है। साधनों की गति एवं मात्रा का समुचित ध्यान रखा गया है। लंदन यातायात द्वारा लगभग 237 मील लम्बे रेल मार्ग पर रेलें चलाई जाती हैं। सम्पूर्ण मार्ग का विद्युतीकरण कर दिया गया है। इन रेल मार्गों का लगभग एक तिहाई भाग तो जमीन के भीतर ही चलता है। नगर के भीतर लगभग 3200 मील लम्बी अच्छी, पक्की सड़क है जिन पर लंदन यातायात की ओर से डीजल बसों की व्यवस्था है। इनके अतिरिक्त लगभग 6000 टैक्सी कारों की सुविधा भी उपलब्ध है। लंदन यातायात अपनी सुन्दर व्यवस्था के लिए विश्व में अनुकरणीय माना जाता है।

□□□

ब्रिटेन : विदेश व्यापार

नैपोलियन ने ब्रिटेन को 'दूकानदारों का राष्ट्र' ठीक ही कहा था।[55] यूरोप महाद्वीप के पश्चिम में स्थित इस द्वीप की प्राकृतिक परिस्थितियाँ ही ऐसी हैं कि शुरू से ही ब्रिटेन वासियों को देश-विदेश में व्यापार करने के लिए अपना घर छोड़ना पड़ा। कृषि योग्य भूमि की कमी, कच्चे मालों का प्रभाव, उद्योग प्रधान आर्थिक ढाँचा, कटे-फटे तट एवं अच्छे बंदरगाह, कुशल नाविक आदि ऐसे तत्व हैं जिन्होंने यहाँ के व्यापार को प्रोत्साहित किया। ब्रिटिश व्यापारिक जलयान दुनिया के कोने-कोने में गए और आर्थिक लाभ उठाते-उठाते इतने शक्तिशाली हो गए कि उन देशों के स्वामी बन बैठे। इस प्रकार विशाल साम्राज्य की स्थापना हुई। अब तो ब्रिटेन का व्यापार और भी चमका क्योंकि उपनिवेशों के कच्चे मालों को बेचने एवं वहाँ के बाजारों में दुनिया के अन्य भागों से सामान पहुँचाने का उत्तरदायित्व इसके ऊपर आ गया। यह कहा जाए तो ज्यादा उपयुक्त है कि आधी सी दुनिया के व्यापार का नियन्त्रण ब्रिटेन के हाथ में आ गया। यहाँ के उत्पादनों ने दुनिया के बाजारों को पाट दिया। लंदन दुनिया का सबसे बड़ा एवं व्यस्त आर्थिक केन्द्र बना। कैसा समय था वह भी कि चाय पैदा हो भारत, लंका या हिंदेशिया में और लन्दन चाय की दुनिया की सबसे बड़ी मंडी बने।

19 वीं शताब्दी के अन्त तक यह दुनिया का सर्वोच्च व्यापारी देश रहा। दुनिया के 40% व्यापार के लिए यह छोटा सा द्वीप उत्तरदायी था। 20 वीं शताब्दी विशेषकर प्रथम विश्व युद्ध के बाद के दशकों में स्थिति में परिवर्तन आया है। ब्रिटेन का व्यापार प्रतिशत अब बहुत घट गया है। सं॰ रा॰ अमेरिका, जापान, पश्चिमी जर्मनी, भारत, ब्राजील, सोवियत संघ के रूप में प्रबल प्रतिद्वंद्वी आ गए है। फिर भी निस्संदेह, ब्रिटेन दुनिया के चोटी के व्यापारी देशों में से एक है। प्रतिशत घटने का तात्पर्य व्यापार घटना नहीं है अपितु अन्य देशों का हिस्सा बढ़ जाना है। आज भी लंदन दुनियाँ की सबसे बड़ी मंडी है और ब्रिटेन दुनिया के लगभग दशमांश व्यापार के लिए उत्तरदायी है। अगर भू-क्षेत्र या जनसंख्या

55 Simmons, W. M.—The British isles. p. 209.

के अनुपात से तुलना की जाए तो यह प्रतिशत भी बहुत है। ब्रिटेन का असल में दोहरा व्यापार चलता है। कुछ निर्यात-मात्रा तो इसके अपने उत्पादनों की होती है तथा कुछ अंश ऐसा होता है जिसका स्वरूप 'इधर से लिया, 'उधर दिया' वाला होता है। सन् 1983 में यहाँ का निर्यात-मूल्य 60,533 मिलियन पौंड था। इसमें से ब्रिटिश-उत्पादित निर्यातों का मूल्य 42,000 मिलियन पौंड एवं अन्य देशों के उत्पादनों का निर्यात-मूल्य 18,533 हजार पौंड था। इस वर्ष आयात-मूल्य 65,993 मिलियन पौंड था।

इन आँकड़ों की तुलना में 1965 के आयात-निर्यात के आँकड़ों से की जा सकती है जिस वर्ष आयात मूल्य 5,751 मिलियन पौंड एवं निर्यात मूल्य 4,900 मिलियन पौंड था। इस प्रकार आयात मूल्य निर्यात-मूल्य से सदा ज्यादा रहता है निर्यात, आयात-मूल्य का यह अन्तर पिछले 100 वर्षों से निरन्तर चल रहा है। इस कमी को ब्रिटेन अपने पर्यटकों, जलयानों आदि से होने वाली आमद से पूरा करता है। आयात-निर्यात मूल्य के इस अन्तर की भविष्य में मिटने की भी कोई उम्मीद नहीं है। क्योंकि अफ्रेशियाई देशों में औद्योगीकरण की लहर है। ब्रिटेन के निर्यातों में अधिकांश भाग औद्योगिक उत्पादनों का होता है। जैसे जैसे ये देश औद्योगिक होते जा रहे हैं ब्रिटेन के निर्यातों में कमी आ रही है। आयातों को यह कम कर नहीं सकता क्योंकि वे खाद्य पदार्थों एवं कच्चे मालों स सम्बन्धित है। दूसरे आयात कम करने से जीवन स्तर गिरेगा, कारखानों में उत्पादन कम होगा। ऐसी स्थिति में ब्रिटेन के अर्थशास्त्रियों और वैज्ञानिकों के सामने निरन्तर यही सवाल है कि नित नए ऐसे उत्पादन खोजे जाए जिनकी माँग दुनिया के बाजारों में हो। तभी उसके बदले में ब्रिटेन को तेल, गेहूँ, कपास, रबर व अन्य आवश्यक वस्तुएँ ले सकेगा।

ब्रिटेन के आयातों में खाद्य पदार्थों एवं कच्चे मालों का बाहुल्य होता है। द्वितीय विश्व युद्ध से पहले आयातों का 45% भाग अकेले खाद्य पदार्थों से सम्बन्धित था। युद्ध के दिनों में इस कमी को महसूस किया गया और युद्धोत्तर काल में भू-सर्वेक्षण करके खाद्य पदार्थों के विकास पर जोर दिया गया। फलतः 1961 में यह प्रतिशत 31 हुआ। इनमें कनाडा, अर्जेन्टाइना से गेहूँ, भारत से चाय, ब्राजील से कॉफी, न्यूजीलैण्ड से मक्खन तथा हिन्द चीन से आने वाले चावल का मुख्य हिस्सा होता है। भूमध्य सागरीय प्रदेशों से फल तथा शराब आती है। खाद्य पदार्थों से भी ज्यादा हिस्सा कच्चे मालों का होता है। ब्रिटेन को अपने उद्योगों के लिए धातु व कृषि सम्बन्धी विविध पदार्थ आयात करने पड़ते है। यथा, मध्य पूर्व से तेल, मलाया से रबर, संयुक्त राज्य अमेरिका से कपास कनाडा से निकिल, स्पेन एवं स्वीडन से लौह-अयस, भारत से जूट, स्कैंडीनेवियन प्रदेशों से कागज तथा लुग्दी यह आयात करता है। पैट्रोल का तो लगभग 97 प्रतिशत भाग आयात

करना पड़ता है। अनेक रासायनिक कच्चे माल भी देश-विदेश से आयात किए जाते हैं।

निर्यात में अधिकांश भाग औद्योगिक उत्पादनों का होता है जिनमें मशीनें एअरक्राफ्ट, लोको-एंजिन, विद्युत यन्त्र, रासायनिक पदार्थ, ऑटोमोबाइल्स, सूती-ऊनी-कृत्रिम रेशा वस्त्र, कृषि यन्त्रों, जलयान आदि का बाहुल्य होता है। निम्न सारणी द्वारा आयात-निर्यात स्वरूप स्पष्ट हैं। इसमें आयात-निर्यातों को 10 समूहों में रखा गया।[66]

ब्रिटेन का आयात-निर्यात स्वरूप 1983

(मूल्य मिलियन पौंड में)

	कुल आयात	कुल निर्यात (ब्रिटिश उत्पादन)
1. खाद्य पदार्थ एवं पशु उत्पादन	6,891	2,748
2. शराब तथा तम्बाकू	962	1,486
3. क्रूड पदार्थ (खालें, तिलहन, लकड़ी, लुग्दी, धातु अयस खनिज पदार्थ आदि)	4,364	1,527
4. वनस्पति एवं चर्बी	358	59
5. खनिज तेल व सम्बन्धित वस्तुएं	7,067	13,126
6. रसायन	5,119	6,929
7. औद्योगिक उत्पादन (रबर, वस्त्र, कागज, धातु, इस्पात, चमड़ा)	11,840	8,862
8. मशीनें एवं यातायात उपकरण	20,230	18,313
9. विविध (फर्नीचर, जूता, यन्त्र आदि)	7,714	5,814
10. जो उपरोक्त श्रेणियों में शामिल नहीं है	1,444	1,666
योग	65,993	60,533

व्यापारिक सम्बन्धों के निर्धारण में मांग-पूर्ति का नियम तो खैर लागू होता ही है परन्तु राजनैतिक स्थिति का प्रभाव भी कम नहीं। विश्व की राजनैतिक स्थिति के स्वरूप में प्रथम विश्व युद्ध के बाद बड़ी तेजी से मोड़ आए हैं। युद्धोत्तर काल में विश्व के शक्ति-क्षितिज में रूस और अमेरिका आगे बढ़े। उपनिवेशों की कड़ियाँ चटकने लगीं। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् घोर शीत युद्ध

66. Statesman's Year Book. 1984-85.

ब्रिटेन : जनसंख्या

पुरातत्व संग्रहालयों में संग्रहीत चिन्ह्नावशेषों से ज्ञात होता है कि ब्रिटिश द्वीप समूह प्रागैतिहासिक काल में भी मानवता युक्त थे। यहाँ का पैलियोलिथिक मानव, अनुमानतः, तटवर्ती प्रदेशों एवं दक्षिणी इंगलैण्ड के उच्च प्रदेशों में रहा होगा। 2500 ईसा पूर्व से लेकर 100 ईसा बाद तक यहाँ मानवता-क्रम की नियोलिथिक, कांसा एवं लौह युगीन स्थितियाँ रहीं। पूर्व रोमन युगों में यहाँ कैल्टिक भाषी लोग बसे थे। इन दिनों पूर्व की ओर से यानी यूरोप के मुख्य भूखण्ड से अनेक संस्कृतियों के लोग यहाँ आकर बसे। कुछ समय पश्चात् ब्रिटेन के ये द्वीप रोमन साम्राज्य के अन्तर्गत आ गए। रोमन लोग मुख्यतः दक्षिण-पूर्व के मैदानी भागों तक सीमित रहे। अतः उच्च प्रदेश में कैल्टिक सभ्यता सुरक्षित रही। ब्रिटेन के कई प्रमुख नगरों —लन्दन, मैनचैस्टर, लीसैस्टर आदि का विकास होना प्रारम्भ हो गया था। ब्रिटेन के अधिकतर नामों में जो 'सैस्टर' शब्द मिलता है वह मूलतः रोमन भाषा के शब्द 'कास्ट्रा' से बना है जिसका अर्थ होता है छावनी।

पाँचवीं शताब्दी के मध्य में ब्रिटिश द्वीपों पर ट्यूटॉनिक लोगों (एंगिल्स, जट, सैक्सोन) ने आक्रमण किया तथा रोमन सभ्यता को ध्वस्त किया। कैल्टिक तथा रोमन लोग उत्तरी-पश्चिमी उच्च प्रदेशों की ओर भाग गए। ब्रिटिश द्वीपों में स्थानीय रूप से कई छोटे-छोटे राज्य बन गये। यह वस्तुतः अन्ध युग था जिसमें हर ओर से असुरक्षा थी। विकास क्रम रुका हुआ था। 8–9वीं शताब्दी में नॉर्डिक लोगों (डेनिश एवं नार्वेजियन्स) ने समुद्री रास्ते से आकर पश्चिमी तट की ओर से आक्रमण करके आयरलैण्ड, मैन द्वीप, दक्षिणी वेल्स, कम्बरलैण्ड आदि क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार वर्तमान ब्रिटिश लोग वस्तुतः उस भारी मिश्रण के परिणाम है जो समय-समय पर बाहर से आने वाली संस्कृतियों में हुआ। धीरे-धीरे करके ये सभी लोग एक दूसरे में घुल गए और मिश्रित भाषा के रूप में अंग्रेजी का अभ्युदय हुआ। यही कारण है कि अंग्रेजी भाषा में लैटिन,

नौडिक, ट्यूटॉनिक, कैल्टिक, रोमन आदि सभी भाषाओं का योगदान खोजा जा सकता है।

ब्रिटेन की वर्तमान जनसंख्या लगभग 54 मिलियन है जिसमें 49 मिलियन इंगलैण्ड तथा वेल्स एवं 5 मिलियन लोग स्कॉटलैण्ड में बसे हुए हैं। जनसंख्या के आंकड़ों से पता चलता है कि यहाँ की जनसंख्या में वास्तविक वृद्धि 19 वीं शताब्दी में ही हुई उससे पूर्व वृद्धि की गति बहुत धीमी थी। जनसंख्या शास्त्रियों का अनुमान है कि रोमन समय में यहाँ की कुल जनसंख्या 1 मिलियन थी। तब से लेकर अगले एक हजार वर्षों में केवल एक मिलियन की वृद्धि और हुई। यथा, 11 वीं शताब्दी में ब्रिटिश द्वीपों की कुल जनसंख्या 2 मिलियन थी। 1338–49 की काली बीमारी के कारण वृद्धि में रोक लगी, परन्तु इस समय तक समुद्री व्यापार एवं नए भागों की खोज का सिलसिला प्रारम्भ हो चला था अतः वृद्धि पहले की अपेक्षा तीव्र गति से होने लगी। 17 वीं शताब्दी के अन्त में इंगलैंड तथा वेल्स की सम्मिलित जनसंख्या 5⅓ मिलियन एवं स्काटलैंड की एक मिलियन आंकी जाती है।

1801 में प्रथम बार जनगणना हुई तब से लेकर प्रत्येक 10 वें वर्ष (1941 को छोड़कर–युद्ध के कारण) नियमित रूप से जनगणना होती रही है। 1981 की अधिकृत जनगणना के अनुसार ब्रिटेन के प्रमुख पाँचों भागों में जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़े निम्न प्रकार थे—

ब्रिटेन का क्षेत्रफल एवं जनसंख्या–1981

प्रदेश	भू-क्षेत्र	पुरुष	स्त्रियाँ	कुल जनसंख्या
इंगलैंड	50,331	22,288,395	23,483,561	45,771,956
वेल्स	8,016	1,336,323	1,413,317	2,749,640
स्कॉटलैंड	30,405	2,428,472	2,606,843	5,035,315
		26,053,190	27,503,721	53,556,911

5 अप्रैल 1981 को ब्रिटेन की अनुमानित जनसंख्या 54 मिलियन थी। इसमें से 49 मिलियन लोग इंगलैंड तथा वेल्स में बसे थे।

अगर वर्तमान जनसंख्या (लगभग 54 मिलियन) की तुलना 1961 की जनसंख्या (लगभग 51½ मिलियन) से की जाए तो प्रकट होता है कि पिछले दशक में लगभग 2½-3 मिलियन की वृद्धि हुई। अगर वार्षिक गति देखी जाए तो 2½-3 लाख होगी। यह बहुत ही कम वृद्धि है। विशेषकर एशियाई देशों की तुलना में तो नगण्य है। वस्तुतः ब्रिटेन वर्तमान में जनसंख्या-चक्र की तीसरी स्टेज में

चल रहा है। अतः वृद्धि धीमी हो गई है। अब यहाँ जन्म और मृत्युदर दोनों नियंत्रित हैं, परस्पर संतुलन की अवस्था में हैं। जन्मदर औद्योगिकरण के फलस्वरूप ऊँचे उठे हुए स्तर के कारण कम है जबकि औषधि विज्ञान ने मृत्यु दर को नगण्य कर दिया है। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशकों में प्रतिवर्ष लगभग 4 लाख व्यक्ति बढ़ जाते थे। 1871 से लेकर 1931 तक वृद्धि का यही क्रम रहा।

द्वीपीय स्थिति के कारण, भूभाग की सीमितता, उपनिवेशों की समाप्ति के कारण बाहर जाने के अवसरों मे कमी तथा औद्योगीकरण में निरन्तर वृद्धि के फलस्वरूप जनसंख्या के घनत्व में पर्याप्त वृद्धि हुई है। यूरोप में नीदरलैंडस को छोड़कर जहाँ जन घनत्व 893 मनुष्य प्रतिवर्ग मील है, ब्रिटेन (इंगलैंड तथा वेल्स) का घनत्व सर्वाधिक है। घनत्व में वृद्धि के स्वरूप को निम्न सारणी द्वारा समझा जा सकता है–

जन घनत्व ब्रिटेन

(मनुष्य प्रति वर्गमील)

	इंगलैंड एवं वेल्स	स्कॉटलैंड
1801	52	55
1851	307	97
1881	445	125
1931	685	163
1961	791	174

पिछले 30–40 वर्षों से इंगलैंड तथा वेल्स में ग्रामीण तथा शहरी जनसंख्या के ढाँचे में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है दोनों का क्रमशः प्रतिशत 20 तथा 80 ही चला आ रहा है। वर्तमान में देश में सात प्रमुख शहरी क्षेत्र हैं जिनमें देश की लगभग 33.8% जनसंख्या निवास करती है। ये है–लन्दन (बृहत्तर लंदन–6.7 मिलियन मैट्रोपोलिटन क्षेत्र–5 मिलियन), टाइने साइड 1,149,000), पश्चिमी योर्क (2,063,100). दक्षिणी-पूर्वी लंकाशायर (2,605,000), मर्सीसाइड (1,511,000), पश्चिमी मिडलैंड (2,667,000), तथा दक्षिणी-पूर्वी वेल्स (2,011,000)।

जनसंख्या के वितरण पर भौगोलिक वातावरण एवं उद्यम के स्वरूप का भारी प्रभाव होता है। प्रारम्भ में जब ब्रिटेन एक कृषि प्रधान देश था तो जनसंख्या का अधिकांश भाग दक्षिण-पूर्व के निचले प्रदेशों में निवास करता था। इस

प्रकार जनसंख्या के घनत्व एवं जमीन की उपजाऊ शक्ति के बीच सीधा-सीधा सम्बन्ध था। 15 वीं शताब्दी में जब समुद्री व्यापार बढ़ता गया लोग तटवर्ती क्षेत्रों की ओर आकर्षित हो गए। इन्हीं दिनों यहाँ ऊनी वस्त्रोद्योग भी पनप रहा था अतः लोगों का ध्यान योर्कशायर, कौस्ट वोल्ड्स आदि क्षेत्रों की तरफ गया। 1801 में पहली जनगणना के समय पाया गया कि लन्दन का जन घनत्व 250, योर्कशायर में 200 तथा सोमरसेट में 150 मनुष्य प्रतिवर्ग मील था। इस समय लगभग तीन-चौथाई जनसंख्या ग्रामों में निवास करती थी।

औद्योगिक क्रान्ति के बाद जैसे-जैसे औद्योगीकरण बढ़ता गया लोग औद्योगिक केन्द्रों, नगरों तथा खनन केन्द्रों की ओर स्थानान्तरित होने लगे। इस प्रकार लंकाशायर, मिडलैण्डस, स्टैफोर्डशायर, योर्कशायर, क्लाइड की घाटी आदि क्षेत्रों में लाखों की संख्या में मजदूर आकर बसने लगे। औद्योगिक विकास के स्तर के अनुरूप सर्वाधिक केन्द्रीकरण लंदन, मिडलैंडस, लंकाशायर, टाइनेसाइड तथा क्लाइड साइड में हुआ। इस समय लंदन का घनत्व 11,000 व्यक्ति, कैंट का 1000 एवं सुएंक्स का 750 व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। इनकी तुलना उत्तर-पश्चिम के भागों से की जा सकती है। यथा, वैस्टमोरलैंड में 79, उत्तरी स्कॉटलैंड के आर्गिक क्षेत्र में 19, वेल्स के रैडनोशायर में 39 तथा पश्चिमी आयरलैंड में केवल 59 व्यक्ति प्रतिवर्ग मील भू-भाग में बसे हैं।

ब्रिटेन में उद्योगों के उत्कर्ष एवं पतन का जनसंख्या की गतियों से स्पष्ट सम्बन्ध रहा है। 1914 से पहले उन कांउटीज में ही तेजी से जनसंख्या बढ़ी जिनमें औद्योगिक विकास या कोयले की खुदाई थी। इन दिनों कृषि क्षेत्रों में स्थित नगरों की जनसंख्या में भी कोई खास वृद्धि नहीं हुई। 1921–31 की अवधि में मैट्रोपोलिटन, लंदन एवं पूर्वी इंगलैंड में ही वास्तविक वृद्धि हुई। यहाँ का वृद्धि प्रतिशत 4.6 था जबकि सम्पूर्ण इंगलैंड के लिए 0 3 प्रतिशत था। सम्पूर्ण ब्रिटेन का वृद्धि प्रतिशत इन 10 वर्षों के लिए 1.5 प्रतिशत था। अगले 20 वर्षों यानी 1951 तक की अवधि में जनसंख्या का स्वरूप देश के कई भागों में होने वाले आर्थिक परिवर्तनों से प्रभावित रहा। इस अवधि में उत्तरी भाग में 3.6 प्रतिशत, वेल्स में 6.7 प्रतिशत, स्कॉटलैंड में 5·8 प्रतिशत तथा उत्तरी आयरलैंड में 5.8 प्रतिशत का ह्रास हुआ। इसके विपरीत दक्षिणी-पश्चिमी इंगलैंड में 10.3 प्रतिशत, दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड में 3.8 प्रतिशत तथा मिडलैंडस में 4.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अगले 10 वर्षों न भी स्वरूप लगभग यही रहा।

पिछले दशक के जनसंख्या आंकड़ों से पता चलता है कि स्कॉटलैंड की जनसंख्या क्रमशः कम होती जा रही है। इसके विपरीत इंगलैंड तथा वेल्स की जनसंख्या बढ़ती जा रही है। इस समय इन दोनों में मिलकर लगभग 48

मिलियन लोग निवास कर रहे हैं। देश का दक्षिणी-पूर्वी भाग लगभग 36 प्रतिशत जनसंख्या को आश्रय दिए हुए है जिसमें वृहत्तर लंदन की 8 मिलियन तथा बाहरी मैट्रोपोलिटन क्षेत्र की 5 मिलियन है। जनसंख्या का 14.7 प्रतिशत भाग उत्तरी-पश्चिमी, 10.4 प्रतिशत भाग मिडलैंडस एवं 9.8 प्रतिशत योर्कशायर में है। जनसंख्या-शास्त्रियों का अनुमान था कि 1981 में ब्रिटेन की जनसंख्या लगभग 61 मिलियन होगी जबकि वस्तुतः यह 54 मिलियन ही हुई।

दक्षिण-पूर्व में, जहाँ जनसंख्या की वृद्धि तेजी से हो रही है, वृद्धि वस्तुतः नगरों के आस-पास के भागों में है, स्वयं नगरों में नहीं। पिछले दो तीन दशकों से ऐसा रिवाज चला है कि लोग अपने आवासीय अधिवास प्रायः शहर से दूर शान्त उपनगरों में बनाना पसंद करते हैं। इनका कार्य क्षेत्र शहर में ही होता है। शहरों से ये उपनगर विविध प्रकार के यातायात के साधनों से जुड़े रहते हैं।

□□□

ब्रिटेन के प्राकृतिक प्रदेश

धरातलीय स्वरूप, सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास आदि तत्वों के आधार पर ब्रिटिश द्वीप समूह को मोटे तौर पर कई प्राकृतिक प्रदेशों में विभाजित किया जा सकता है। ये हैं—

(1) उत्तरी स्कॉटिश उच्च प्रदेश।
(2) मध्यवर्ती स्कॉटिश निचले प्रदेश।
(3) मध्यवर्ती इंगलिश उच्च प्रदेश (पीनाइन क्रम)।
(4) इंगलिश निचले प्रदेश।
  अ. उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र।
  ब. योर्कशायर।
  स. लंकाशायर।
  द. मिडलैंड्स।
  ई. दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड।
(5) वेल्स एवं डेवोनियन पेनिनशुला।
(6) आयरलैंड।

उत्तरी स्कॉटिश उच्च प्रदेश :

स्कॉटलैंड यूरोप के अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ परन्तु प्राकृतिक सुन्दरता की दृष्टि से अति विशिष्ट क्षेत्रों में से एक है। यह सम्भाग इस तथ्य का भी प्रत्यक्ष प्रमाण है कि मानव में प्रतिकूल भौगोलिक वातावरण में भी सफलतापूर्वक अपने कार्य करने और रहने की क्षमता है। स्कॉटलैंड का अधिकतर भाग पश्चिमी नार्वे के फयोर्डलैंड्स से मिलता जुलता है। मध्यवर्ती निचले क्षेत्रों में भारी औद्योगिक विकास हुआ है। मोटे तौर पर स्कॉटलैंड को तीन प्राकृतिक खंडों में विभाजित किया जा सकता है—उत्तर में उच्च प्रदेश, मध्य में निचले क्षेत्र तथा दक्षिणी भाग में पुनः उच्च प्रदेश। दक्षिणी उच्च प्रदेश न केवल भू-दृश्यावलि वरन् कुछ सीमा

तक संरचना की दृष्टि से भी इंगलैंड के पीनाइन क्रम से मिलते हैं अतः प्रस्तुत अध्ययन में इन्हें इंगलैंड के मध्यवर्ती उच्च प्रदेशों के साथ ही रखा गया है।

उत्तरी स्कॉटिश उच्च प्रदेश अत्यधिक कटे-फटे, प्राचीन कठोर, रवेदार चट्टानों के बने पठारी भाग हैं। सर्वत्र हिमक्रिया के चिह्न सुस्पष्ट हैं जिन्हें पयोडंस, तलपात्र झीलें, हिमागार आदि रूपों में देखा जा सकता है। आम ढाल दक्षिण-पूर्व को है। अधिकांश भू-आकृतियाँ पुरानी हैं जो प्रदेश की प्रौढ़ावस्था की द्योतक हैं। सम्पूर्ण उच्च प्रदेश प्राकृतिक घास (मूर) से ढके हैं, बीच-बीच में एकाध वृक्ष नजर आ जाता है। बसाव बहुत कम है। औसतन एक मनुष्य प्रतिवर्ग मील से ज्यादा नहीं बैठता। प्लीस्टोसीन हिमयुग में सम्पूर्ण प्रदेश हिम से ढका था जिसके कारण चोटियाँ घिसी और गोलाकार हैं। औसत ऊँचाई 1500-2000 फीट है। कुछ चोटियाँ ही औसत ऊँचाई को भंग कर फोड़ों की तरह उभरी हुई हैं। पश्चिम में स्थित बैननेविस की ऊँचाई 4406 फीट तक है।

स्कॉटिश उच्च प्रदेश अपने सभी क्षेत्रों में विश्रृंखलित हैं। बीच-बीच में गहरी चौड़ी घाटियाँ हैं। घाटियों की संख्या और बारम्बारता भी इतनी अधिक है कि कहीं-कहीं तो पठार पर्वतीय स्वरूप धारण करते दिखाई देते हैं। भूगर्भविदों का अनुमान है कि उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम दिशा में फैली इन घाटियों में से अधिकांश संरचनात्मक उद्गम की हैं। निस्संदेह हिमानियों ने इन्हें चौड़ा कर दिया है। इन्हें यहाँ 'ग्लैन्स' कहा जाता है। घाटियों के तल में लम्बाकार झीलें हैं जिन्हें 'लोच' कहते हैं। ग्लैनमोर इन घाटियों में सबसे लम्बी घाटी है जो द्वीप को दो भागों में विभाजित करती हुई धुर उत्तर-पूर्व। (मोरे की खाड़ी) में धुर दक्षिणी-पश्चिमी (लोर्न की खाड़ी) तक फैली है। कहीं-कहीं ये घाटियाँ इतनी गहरी और चौड़ी हो गई हैं कि इनका तल समुद्र-तल के बराबर हो गया है। फलतः इनके द्वारा पृथक् किए गए भाग द्वीपों के रूप में दिखाई पड़ते हैं। हीब्राइडस, स्के, मल, उइस्त, हैरिस, लैविस, ओर्कनी द्वीप समूह आदि इसी प्रक्रिया से मुख्य भू-भाग से पृथक् हुए हैं।

प्रशासनिक दृष्टि से उत्तरी स्कॉटिश उच्च प्रदेश कैथनैस, सदरलैंड, रौस-क्रोमार्टी, इन्वरनैस, मोरेय, बैफ, एबरडीन, किन-कार्डाइन, आर्गिल, एंगुज तथा पर्थ आदि कांउटीज में विभाजित हैं।

आर्थिक विकास तथा जन बसाव की दृष्टि से यह सम्भाग ब्रिटेन का सबसे पिछड़ा भाग है। इन उच्च प्रदेशों का विस्तार स्कॉटलैंड के 60% भू-भाग में है परन्तु जनसंख्या 5% से भी कम है। घाटी, झीलें, पीट-बॉग्ज, नंगी चट्टानें यहाँ के वातावरण की प्रमुख प्रतिकूलताएं हैं। प्राकृतिक संसाधन के नाम पर मूर घास हैं जिसके आधार पर भेड़-पालन व्यवसाय प्रचलित है। शैटलैंड द्वीप अपनी भेड़ों की नस्लों के लिए विख्यात है। उच्च प्रदेश का दूसरा प्राकृतिक स्रोत मछली है।

झीलों, फयोर्डस तथा घाटियों में मत्स्य व्यवसाय पर्याप्त मात्रा में विकसित है। तटवर्ती पट्टी, विशेषकर उत्तरी-पूर्वी भाग में, जहाँ संकरे समतल भाग हैं जई, आलू आदि की खेती होती है। निचले हिस्सों में चारे की फसलें भी बोयी जाती हैं। इन्हीं के आधार पर विकसित पूर्वी क्षेत्रों की एबरडीन-एगुंज तथा शोर्थोन नस्लें काफी प्रसिद्ध हो गयी है। एबरडीन क्षेत्र में पशुपालन तथा ढोरों की नस्लों के विकास की दिशा में काफी प्रगति हुई है। एबरडीन (195,000) पशु पालन व्यवसाय केन्द्र होने के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण मत्स्य केन्द्र भी है। अन्य नगर बहुत छोटे-छोटे हैं। इनमें इन्वरनेस (30,000) तथा थर्सो उल्लेखनीय हैं।

प्रतिकूल भौगोलिक वातावरण तथा पृथकत्व की स्थिति में रह रहे स्कॉटिश लोग अपने को अपनी रूढ़ियों, परम्पराएँ अर्द्धविकसित जीवन, आदिम प्रकार के

चित्र–16

उद्यम एवं गैलिक भाषा को लेकर सांस्कृतिक दृष्टि से देश के विभिन्न भागों से पृथक एवं विशिष्ट मानते हैं।

मध्यवर्ती स्कॉटिश निचले प्रदेश :

स्कॉटलैंड का मध्यवर्ती भाग वस्तुतः एक धसाव क्षेत्र है जिसमें खाड़ियों फर्थ ऑफ फोर्थ) एवं नदियों (क्लाइड प्रवाह) ने पर्याप्त भीतर तक समुद्र का प्रवेश करा दिया है। बीच-बीच में कुछ नीची पहाड़ियाँ हैं। प्रदेश का स्वरूप कैसा है इसका सही अनुमान इससे लग सकता है कि अगर इस सम्भाग में थोड़ा धसाव और हो तो सम्पूर्ण भाग एक समुद्री चैनल में परिवर्तित हो जायेगा जिसमें पहाड़ियाँ छोटे-छोटे द्वीपों के रूप में होंगी। मध्यवर्ती धसाव क्षेत्रों का विस्तार बूटे, डंबरटन, स्टर्लिंग, किनरोस, फाइफेल, रैम्फ, पश्चिमी लोथियन, मिडलोथियन, पूर्वी लोथियन आदि काउण्टीज में है।

मध्यवर्ती निचले प्रदेश को स्कॉटलैंड का आर्थिक हृदय प्रदेश कहा जा सकता है जहाँ इसकी 2/3 जनसंख्या एवं 9/10 आर्थिक संसाधन विद्यमान हैं। धसाव क्षेत्र के तल में बिछी पर्तदार चट्टानों पर स्कॉटलैण्ड की सर्वोत्तम कृषि योग्य मिट्टियों का विस्तार है। दलदलों को सुखाकर भी कृषि योग्य भूमि का विस्तार बढ़ाया गया है। कृषि क्षेत्रों से गेहूँ, जई, जौ, आलू तथा अल्फाफा आदि उपलब्ध हैं। यहाँ कुछ फसलों में तो प्रति एकड़ उत्पादन ब्रिटेन भर में सर्वाधिक है। पिछले दशकों में मिश्रित-कृषि, पशुपालन तथा बागाती-कृषि का भी भारी प्रचार हुआ है। खेतों का आकार प्रायः 150 से 200 एकड़ तक का है। समस्त मध्यवर्ती घाटी क्षेत्र में ऐतिहासिक समय से बाजारी एवं स्थानीय केन्द्रों के रूप में विकसित कस्बे फैले हैं। स्टर्लिंग, पर्थ तथा डंडी इसी प्रकार के नगर हैं। प्रदेश के पूर्व में स्थित डंडी 19वीं शताब्दी में बंगाल से आयातित जूट के आधार पर जूट उद्योग का विश्व का सबसे बड़ा केन्द्र था। वर्तमान में यहाँ लिनेन, फ्लैक्स, विद्युत-मशीनरी वस्त्र तथा घड़ी उद्योग विकसित हैं।

क्लाइड नदी का बेसिन ब्रिटेन के महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र में से एक है। यहीं ग्लासगो स्थित है जो विश्व के महत्वपूर्ण जलपोत निर्माण केन्द्रों में से एक है। क्लाइड-साइड औद्योगिक क्षेत्र का विकास ग्लासगो केन्द्र के ही चारों ओर हुआ है। आज 1 मि. से अधिक जनसंख्या वाला यह नगर 1661 में केवल 14,000 प्राणियों को आश्रय दिए हुए था। ग्लासगो एवं क्लाइड-साइड के विकास का श्रीगणेश 18वीं शताब्दी में हुआ। इंगलैण्ड के साथ संगठित होने, अमेरिका से व्यापार बढ़ने तथा क्लाइड की पश्चिम वर्ती स्थिति आदि तत्वों ने ग्लासगो को एक यातायात-व्यापार केन्द्र के रूप में प्रोत्साहित किया। तम्बाकू के व्यापार का यह धीरे-धीरे बहुत बड़ा केन्द्र हो गया। मेरीलैंड तथा वर्जीनिया आदि अमेरिकन राज्यों से तम्बाकू का

ग्लासगो को ही होता था । 1775 में यूरोप में जितनी तम्बाकू आयात की गयी उसकी आधी मात्रा अकेले ग्लासगो बंदरगाह पर उतरी । इस तथ्य से व्यापार मात्रा और स्वरूप का अनुमान किया जा सकता है। बड़े-बड़े भंडार बनाए गए जिनकी सुविधा से प्रोत्साहित होकर अन्य उष्ण कटिबंधीय उपजों की भी मात्रा बढ़ी । बंदरगाह तथा पोताश्रय की क्षमता और सुविधाओं में वृद्धिकरण भी आवश्यक हो गया।

व्यापार से अर्जित धन के आधार पर जलयान निर्माण, वस्त्रोद्योग तथा अन्य प्रकार के उद्योग विकसित हुए। ग्लासगो के आस-पास क्लाइड के सहारे-सहारे अन्य औद्योगिक केन्द्रों व उप-नगरों का विकास हुआ। 18वीं शताब्दी के अन्त में पास में ही कोयला के बड़े भंडार प्राप्त हुए जिन्होने लौह इस्पात उद्योग को प्रोत्साहित किया। जेम्सवाट ने अपने वाष्प एंजिन के कई प्रयोग ग्लासगो में ही किए। इंजीनियरिंग उद्योग भी विकसित हुआ। मोटर, लोकोमोटिव, सिलाई की मशीन, पम्प, विद्युत मोटरों व एयरक्राफ्ट के बडे बड़े प्लांटस लगाए गए। व्यापारिक तथा सैनिक महत्व के जलयानों का ग्लासगो सबसे बड़ा केन्द्र बना। व्यापारिक कार्य दिन प्रति दिन घटते गए, औद्योगिक स्वरूप मुखरित होता गया।

पिछले दशकों में क्लाइड की घाटी व पश्चिम के कोयला क्षेत्रों के निकट अनेक छोटे-छोटे औद्योगिक नगर विकसित हो गए हैं। वस्त्र तथा रासायनिक उद्योगों का भारी विस्तार हुआ है। ग्लासगो के चारों ओर सघन औद्योगिक क्षेत्र है जिसमें हर तरफ कोयला, धुंआ, रैल पटरी, मजदूर बस्ती तथा चिमनियों का साम्राज्य है। मिडलैंडस की तरह यह भी 'कोयला प्रदेश' हो गया है। ग्लासगो बन्दरगाह का मुख्य कार्य इन औद्योगिक क्षेत्रों की आवश्यकता की पूर्ति करना मात्र रह गया है। कोयला आयरशायर तथा फाइफशायर की खानों से उपलब्ध हो रहा है। इसके आधार पर ही ग्लासगो के आस-पास का धातु-क्षेत्र ब्रिटेन का लगभग 15% इस्पात तैयार करता है। बसाव के घनत्व का अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि क्लाइड-साइड क्षेत्र की जनसंख्या 2 मिलियन से अधिक है और अपनी 1 मिलियन से अधिक जनसंख्या युक्त ग्लासगो ब्रिटेन का दूसरे नम्बर का शहर होने के लिए बर्मिंघम का प्रतिद्वंद्वी है।

अगर मध्यवर्ती बसाव क्षेत्र के पश्चिम (क्लाइड-साइड) में स्कॉटलैण्ड का आर्थिक और व्यापारिक हृदय विद्यमान है तो पूर्व में फोर्थ की खाड़ी के सहारे-सहारे सांस्कृतिक हृदय। यहीं स्कॉटलैण्ड की राजधानी, एडिनबर्ग स्थित है। विशाल चर्च, सिंहासन भवन, संसद भवन, गढ़ी तथा अनेक पुरातत्व संग्रहालयों युक्त एडिनबर्ग नगर (500,000) वास्तव में ही एक राजधानी नगर तथा प्रशासनिक केन्द्र लगता है। औद्योगिक विकास भी हुआ है जिसकी पृष्ठभूमि में मिडिलोथियन क्षेत्र से प्राप्त कोयला एवं निकटवर्ती कूपों से उपलब्ध तेल का सहयोग

उल्लेखनीय है। यहाँ कलात्मक उद्योग हैं जिनका बौद्धिक आधार है। एडिनबर्ग अपने प्रकाशन, छपाई तथा कागज निर्माण उद्योग के लिए उल्लेखनीय है।

मध्यवर्ती इंगलिश उच्च प्रदेश :

स्कॉटलैण्ड के मध्यवर्ती निचले धसाव क्षेत्रों की दक्षिणी सीमा से लेकर दक्षिण में इंगलैण्ड के मिडलैण्ड प्रदेश तक उच्च प्रदेशों का विस्तार है जिनसे तीन उप-इकाइयों में रखा जा सकता है। ये हैं : दक्षिणी स्कॉटलैण्ड के उच्च प्रदेश, लेकडिस्ट्रिक्ट तथा पीनाइन क्रम। पीनाइन शृंखला पश्चिम में ऊँची पर्वतीय काठियों द्वारा लेक डिस्ट्रिक्ट के पर्वतों से जुड़ी है। उत्तर में यह क्रम टाइने-घाटी द्वारा चैवियट पहाड़ियों से पृथक् है। चैवियट पहाड़ियाँ अपने पश्चिम से स्थित दक्षिणी स्कॉटिश उच्च प्रदेशों से जुड़ी हैं। उल्लेखनीय है कि सम्पूर्ण उच्च प्रदेश में ज्यादा ऊँचाइयों को फैल्स तथा घाटियों को 'डेल्स' कहा जाता है। लेक डिस्ट्रिक्ट एवं दक्षिणी स्कॉटिश उच्च प्रदेशों के मध्य सोल्वे की खाड़ी तथा निचला प्रदेश विद्यमान है जिसने इस सम्भाग में उच्च प्रदेशों की निरन्तरता को भंग किया है। लेकिन ऊँचाई में भारी अन्तर होते हुए भी यह मध्यवर्ती उच्च प्रदेशों का ही एक भाग है। वस्तुतः सोल्वे निचले भाग को एक विशाल 'डेल' के रूप में मानना ज्यादा उपयुक्त होगा।

पीनाइन क्रम को तीन उप विभागों में रखा जा सकता है—

1. दक्षिणी पीनाइन्स–	धुर दक्षिण से एअरे घाटी तक
2. मध्य पीनाइन्स–	एअरे घाटी से स्टेन मोर दर्रे तक
3. उत्तरी पीनाइन्स–	स्टेन मोर दर्रे से टाइने-घाटी तक

दक्षिणी पीनाइन्स हरसीनियन युगीन प्रतिनति है जिसके नीचे भागों में हिम आवरण के चिन्हावशेष स्पष्ट है। समस्त सम्भाग में चूने की चट्टानों का बाहुल्य है। यत्र तत्र कार्स्ट स्थलावलि भी मिलती है। पीनाइन क्रम के अन्य भागों की तुलना में यहाँ प्राकृतिक घास (मूर) कम सघन है। जहाँ चूने की पर्तों के बीच-बीच मे शेल्स की पर्तें हैं, चौड़ी घाटियाँ हैं वहाँ समृद्ध चरागाह हैं। दुग्ध व्यवसाय तथा पशुपालन होता है। चौड़ी घाटियों में छोटे-छोटे गाँव हैं। पशुचारण, पर्यटन उद्योग, तथा खान खुदाई (सीसा बैराइटस, फ्लोर स्पार) प्रधान आर्थिक आधार हैं। उत्तरी भाग में घाटियों ने यातायात के विकास में सहयोग दिया है। इनमें एअरे-गैप सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

एअरे गैप के उत्तर यानी मध्यवर्ती पीनाइन्स में रचना भिन्न प्रकार की है। यहाँ चूने तथा बलुआ पत्थर की विशाल क्षैतिज पर्तें बिछी है जिसका क्रमिक ढाल पूर्व की ओर है। पश्चिम में व्हेर्नसाइड तथा इंगलेबरा में ऊँचाई 2400

फीट तक है। ऊर्जे, स्वालडेल, व्हेन्सलेडेल, ऊरे, निडिरडेल तथा व्हारफेडेल आदि घाटियों ने मध्य भाग में पीनाइन्स को पर्याप्त सुगम बना दिया है। इन घाटियों में छोटे-छोटे गाँव बसे हैं। मूर अपेक्षाकृत ज्यादा समृद्ध हैं जिसके आधार पर पाली गयी भेड़ों से यौर्कशायर क्षेत्र को ऊन प्राप्त होती रही है। उत्तरी पीनाइन्स में ऊँचाई अपेक्षाकृत ज्यादा (क्रॉसफैल 3000 फीट) है। दक्षिणी पीनाइन्स की तुलना में खनन कार्य कम है अत. मूर घास तथा भेड़ ही प्रधान आर्थिक आधार है। उत्तरी भाग में दरारें ज्यादा हैं। एडेन घाटी के ऊपर, पश्चिम में, पीनाइन्स बिल्कुल दीवाली स्वरूप लिए हुए है। दरार एवं धसाव से बना टाइने-गैप (600 फीट) उत्तरी-पश्चिमी तथा उत्तरी-पूर्वी इंगलैंड के बीच आसान यातायात मार्ग प्रस्तुत करते हैं।

टाइने-कॉरीडर के उत्तर में चैवियट उच्च प्रदेश विद्यमान हैं जिसमें स्थित 2700 फीट ऊँचा ग्रेनाइट भू-खण्ड चेवियट पठार स्वरूप तथा सरचना में पीनाइन क्रम से भिन्न है। इस पठारी उच्च प्रदेश के सहारे-सहारे ज्वालामुखी तथा आग्नेय चट्टानों की पहाड़ी श्रृंखला का विस्तार है जिसे 'चेवियट पहाड़ियों' के नाम से जाना जाता है। अभेद्य चट्टानें एवं अव्यवस्थित जल निकास के फलस्वरूप घास क्षेत्र समुचित तथा सुवितरित नहीं हैं। मूर तथा हीदर दोनों ही का ज्यादा आर्थिक महत्व नहीं है। इस सम्भाग का ज्यादा उत्पादन एवं महत्वपूर्ण हिस्सा वे घाटियाँ हैं जो सैंडस्टोन चट्टानों में कटाव से विकसित हुई हैं। इनमें टाइने, एलन, कोक्वेट तथा टवीड की घाटियाँ उल्लेखनीय हैं।

पीनाइन्स के पश्चिम में स्थित लेकडिस्ट्रिक्ट पूर्णतया पर्वतीय प्रदेश है। संरचना की दृष्टि से यह उच्च प्रदेश प्राचीन आग्नेय तथा परिवर्तित चट्टानों का गुम्बदाकार स्वरूप माना जाता है जिसके ऊपर परतदार चट्टानों की पतली सी पर्त है। मध्य में ऊँचाई होने से जल प्रवाह विकीर्ण प्रकार का है। घाटियाँ गहरी हैं। कई घाटियों में झीलें बन गयी हैं जिनकी सुन्दरता प्रतिवर्ष हजारों पर्यटकों को आकर्षित करती है। अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के कारण ही लेकडिस्ट्रिक्ट प्रदेश वर्डसवर्थ आदि प्रकृति-कवियों का प्रिय स्थल रहा। इस प्रदेश के उच्च भागों में पछुआ हवाओं द्वारा भारी वर्षा (100 इंच) की जाती है। ठण्डी-आर्द्र जलवायु है। स्वाभाविक रूप से प्राकृतिक चरागाह समृद्ध हैं। ढालों पर भेड़ तथा घाटियों में ढोर पाले जाते हैं। खनिज संसाधनों की दृष्टि से भी कम्बरलैंड प्रदेश धनी है। मध्य भाग में स्लेट उपलब्ध है। पश्चिमी भाग में बिटूमिनस कोयले की खुदाई होती है जिसकी पर्तें समुद्र के नीचे तक बढ़ गयी हैं। पास में ही हैमेटाइट लोह-अयस उपलब्ध है। दोनों के संयोग से वर्किंगटन तथा बैरो-इन-फरनेस में धातु उद्योग विकसित हो गए हैं। केंडल, जो स्थानीय यातायात मार्गों पर केन्द्रीय स्थिति में हैं, में

स्थानीय क्षेत्रों से उपलब्ध ऊन के आधार पर ऊनी वस्त्रोद्योग विकसित हो गया है।

दक्षिणी स्कॉटिश उच्च प्रदेश ज्यादा ऊँचे नहीं हैं। औसत ऊँचाई 1500 फीट है। सर्वाधिक ऊँची चोटियाँ 2500 तथा 2800 फीट के बीच में हैं। यह भी एक अत्यन्त विखंडित उच्च प्रदेश है जिसका विस्तार लैनार्क, आयर, विगटाउन, किर्क कुडब्राइट, डम्फ्रीज, सैलकिर्क, पीबिल्स, रोक्सबर्ग, बरविक आदि काउण्टीज में है। अधिकतर भागों में सिलूरियन युगीन शील्ड चट्टान का विस्तार है जिसे अपक्षय के साधनों ने पर्याप्त प्रभावित किया है। प्राचीन रवेदार चट्टानें कम स्पष्ट हैं। मध्य में ऊँचाई ज्यादा है जहाँ से नदियाँ विकीर्ण रूप में चारों ओर को गयी हैं। सम्पूर्ण प्रदेश में मूर का आधिक्य है जिसने भेड़पालन को प्रोत्साहित किया है। यही इस प्रदेश का प्रधान आर्थिक उद्यम है। अच्छी किस्म की ऊन पैदा होती है जिसने इस सम्भाग में ऊनी वस्त्रोद्योग को जन्म दिया है जिसका प्रधान क्षेत्र लम्बी ट्वीड घाटी है। इसमें पीबिल्स, गैलेशील्स तथा सैलकिर्क प्रमुख केन्द्र हैं। नीची घाटियों में कृषि व्यवसाय उन्नत है। पूर्वी धूपीले भागों में फसली कृषि तथा पश्चिम के आर्द्र भागों में पशुपालन तथा दुग्ध व्यवसाय उन्नत है। स्कॉटलैंड तथा इंगलैंड की सीमा पर स्थित होने के कारण ये उच्च प्रदेश कूटनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहे हैं। पहाड़ियों पर पंक्तिबद्ध गढ़ी तथा किले नजर आते हैं। बरविक, डम्बर, पीबिल्स तथा सैलकिर्क नगर मध्य युगों में मूलतः गढ़ियाँ ही थे।

इंगलैण्ड के निचले प्रदेश :

पीनाइन क्रम के पूर्व, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम में निचले प्रदेश स्थित हैं। इन्हीं में इंगलैंड की अधिकांश जनसंख्या तथा आर्थिक क्रियाएँ विद्यमान हैं। इंगलैंड के ये निचले प्रदेश शृंखलाबद्ध हैं। अगर मिडलैंड गैप द्वारा जोड़ दिया जाए तो इनका विस्तार पूर्व में लंदन बेसिन, सामर सैट, यौर्कशायर से लेकर पश्चिम में लंकाशायर तथा चेशायर तक है। इन निचले प्रदेशों का जन्म उस मलवे के उत्थान के फलस्वरूप हुआ जो हरसीनियन व कैलीडोनियन क्रम में से कट-कट कर दक्षिण में स्थित समुद्र में जमा होता रहा। कालांतर में अल्पाइन घटना क्रम में मुख्यतः ट्रियेसिक युग में ये थल भाग के रूप में स्पष्ट हुए। अधिकतर निचले भागों में परतदार चट्टानें, जिनमें चूने के अंश व चिकनी मिट्टी के अंश का बाहुल्य है। मैदान इन्हें इस रूप में कह दिया जाता है कि नीचे प्रदेश हैं वरना इनका स्वरूप मैदानी नहीं है। यत्र-तत्र उच्च प्रदेश, नीची पहाड़ियाँ तथा स्कार्पलैंडस इनके धरातल को असमान बनाते हैं। ये निचले प्रदेश ही ब्रिटेन के कृषि कार्यों के आधार हैं। यहाँ अनेक शहरी एवं औद्योगिक केन्द्र हैं। समस्त निचले प्रदेशों में वनस्पति का प्राकृतिक स्वरूप बदल दिया गया है, वन काट दिए गए हैं। यूरोप के अन्य

भागों की तरह यहाँ भी मूल स्थितियों में भारी परिवर्तन हुआ है। वर्तमान् स्वरूप भारी सांस्कृतिक मिश्रण का परिणाम है।

(अ) उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र—इंगलैंड के उत्तर-पूर्व में स्थित टाइन नदी का बेसिन देश के उन भागों में से एक है जहाँ औद्योगिक क्रांति की लहर पहले पहल आयी। इस क्षेत्र को उस कोयला की सुविधा उपलब्ध थी जो नौर्थम्बरलैंड-डरहम की खानों से पर्याप्त मात्रा में प्राप्त था। खानें नदी के दोनों ओर स्थित थी। लौह अयस भी थोड़ी सी दूरी पर उपलब्ध था। कोयला कोकिंग किस्म का था परिणाम यह हुआ कि टाइन, टीज तथा वीयर आदि नदियों के सहारे-सहारे अनेक धातु उद्योग विकसित हुए। पर्याप्त मात्रा में कोयला निर्यात भी किया जाने लगा। कम्बरलैंड की तरह यहाँ भी कोयले की पर्तें समुद्र में आगे तक बढ़ गयी हैं और समुद्र में खुदाई चालू है। थलीय खानों की खुदाई अब महँगी पड़ती है।

टाइन पर स्थित न्यूकैसिल (300,000) यहाँ की प्रादेशिक राजधानी व उत्तरी-पूर्वी इंगलैंड का प्रधान बन्दरगाह है। इस बंदरगाह से 14वीं शताब्दी में लन्दन को कोयले का लदान प्रारम्भ हुआ जो 19वीं शताब्दी तक आते-आते सारे विश्व को जाने लगा। कोयले का निर्यात और न्यूकैसिल का उद्यम एक तरह से एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द हो गए। कोयले के निर्यात का न्यूकैसिल बन्दरगाह से इतना तादात्म्य हो गया कि किसी विपरीत कार्य के लिए यह कहावत कही जाने लगी "न्यूकैसिल को कोयला ले जाना" (जैसे भारत मे "उल्टे बाँस बरेली को") पिछले 2-3 दशकों में इस क्षेत्र के कोयला उत्पादन की मात्रा घटी है फलतः अच्छी किस्म का कोयला वेल्स से मंगाया जाने लगा है।

न्यूकैसिल से टाइन नदी के मुहाने तक नदी के सहारे-सहारे अनेक औद्योगिक कस्बे फैले है जिनमें धातु, जलयान-निर्माण रसायन तथा मशीनरी उद्योग विकसित है। न्यूकैसिल के दक्षिण में स्थित टीज घाटी में पिछले वर्षों में विविध उद्योग पनपे हैं। स्वयं न्यूकैसिल एक बड़ा औद्योगिक केन्द्र है जहाँ लौह इस्पात के कारखाने हैं। इस प्रकार लगभग 1 मिलियन से अधिक जनसख्या को समेटे न्यूकैसिल क्षेत्र उत्तरी-पूर्वी इंगलैंड का एक सघन एवं प्रमुख-शहरी क्षेत्र है। क्षेत्र के अन्य नगरों मे गेटसहैड, साउथ शील्ड, सडरलैंड व डरहम आदि उल्लेखनीय हैं। डरहम इस क्षेत्र का ऐतिहासिक नगर है जो एक नदी द्वारा घिरे हुए पेनिनसुला स्वरूप भू-भाग पर स्थित है। डरहम क्षेत्र का कोयला वीयर के मुहाने पर स्थित संडरलैंड से निर्यात किया जाता था परन्तु 1930 के कोयला-संकट के बाद यह निर्यात मात्रा बहुत कम हो गयी है। यहाँ जलयान भी निर्मित होते हैं।

टीज के मुहाने पर स्थित मिडिलसबर्ग (200,000) के भारी लौह-इस्पात उद्योग की पृष्ठभूमि में नौर्थम्बरलैंड का कोयला तथा क्लीवलैंड का लोहा रहा है जिनके सयोग से 1900 के लगभग यह ब्रिटेन के प्रमुख इस्पात उत्पादक केन्द्रों में से

स्थानीय क्षेत्रों से उपलब्ध ऊन के आधार पर ऊनी वस्त्रोद्योग विकसित गया है।

दक्षिणी स्कॉटिश उच्च प्रदेश ज्यादा ऊँचे नहीं हैं। औसत ऊँचाई 15! फीट है। सर्वाधिक ऊँची चोटियाँ 2500 तथा 2800 फीट के बीच में हैं। भी एक अत्यन्त विखंडित उच्च प्रदेश है जिसका विस्तार लैनार्क, आयर, विगटा किर्क कुडब्राइट, डम्फ्रीज, सैलकिर्क, पीबिल्स, रोक्सबर्ग, बरविक आदि काउ में है। अधिकतर भागों में सिलुरियन युगीन शेल्स चट्टान का विस्तार है जिसे क्षय के साधनों ने पर्याप्त प्रभावित किया है। प्राचीन रवेदार चट्टानें कम स्पर मध्य में ऊँचाई ज्यादा है जहाँ से नदियाँ विकीर्ण रूप में चारों ओर को ग सम्पूर्ण प्रदेश में भूर का आधिक्य है जिसने भेड़पालन को प्रोत्साहित किया है इस प्रदेश का प्रधान आर्थिक उद्यम है। अच्छी किस्म की ऊन पैदा होती है इस सम्भाग में ऊनी वस्त्रोद्योग को जन्म दिया है जिसका प्रधान क्षेत्र सम घाटी है। इसमें पीबिल्स, गैलेशील्स तथा सैलकिर्क प्रमुख केन्द्र हैं। नीचे में कृषि व्यवसाय उन्नत है। पूर्वी धूपीले भागों में फसली कृषि तथा पश्चिम भागों में पशुपालन तथा दुग्ध व्यवसाय उन्नत हैं। स्कॉटलैंड तथा । सीमा पर स्थित होने के कारण ये उच्च प्रदेश कूटनैतिक दृष्टि से म है। पहाड़ियों पर पंक्तिबद्ध गढ़ी तथा किले नजर आते हैं। बरविक; डम तथा सैलकिर्क नगर मध्य युगों में मूलतः गढ़ियाँ ही थे।

इंगलैण्ड के निचले प्रदेश :

पीनाइन क्रम के पूर्व, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चि प्रदेश स्थित है। इन्हीं में इंगलैंड की अधिकांश जनसंख्या तथा आ विद्यमान हैं। इंगलैंड के ये निचले प्रदेश शृंखलाबद्ध हैं। अगर मिट जोड़ दिया जाए तो इनका विस्तार पूर्व में लंदन बेसिन, सामर सैट, लेकर पश्चिम में लंकाशायर तथा चेशायर तक है। इन निचले प्रदेशों मलवे के उत्थान के फलस्वरूप हुआ जो हरसीनियन व कैलीडोनियन क कट कर दक्षिण में स्थित समुद्र में जमा होता रहा। कालांतर में अल्पा में मुख्यतः ट्रियेसिक युग में ये थल भाग के रूप में स्पष्ट हुए। अधिकतर में पर्तदार चट्टानें, जिनमें चूने के अंश व चिकनी मिट्टी के अंश का मैदान इन्हें इस रूप में कह दिया जाता है कि नीचे प्रदेश हैं वरना इ मैदानी नहीं है। यत्र-तत्र उच्च प्रदेश, नीची पहाड़ियाँ तथा स्कार्पलैंडस तल को असमान बनाते हैं। ये निचले प्रदेश ही ब्रिटेन के कृषि कार्यों है। यहाँ अनेक शहरी एवं औद्योगिक केन्द्र हैं। समस्त निचले प्रदेशों का प्राकृतिक स्वरूप बदल दिया गया है, वन काट दिए गए हैं। यूरो

है। पीनाइन्स के चरण प्रदेशों में खानों के निकट घाटियों में अनेक औद्योगिक केन्द्र विकसित हैं जिनको सम्मिलित रूप से 'वैस्ट राइडिंग' क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। वैस्टराइडिंग क्षेत्र अपने ऊनी वस्त्रोद्योग के लिए विख्यात है। लीड्स (510,000) तथा ब्रैडफोर्ड (296,000) ऊन की सफाई, बुनाई तथा वर्स्टेडे तैयार करने के सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। ये दोनों ब्रिटेन के उन कुछ नगरों में से हैं जिनकी जनसंख्या क्रमशः बढ़ रही है। अन्य केन्द्रों में हैलीफैक्स, हडर्सफील्ड, केघले तथा वैकफील्ड उल्लेखनीय हैं। डॉन कास्टर कोलखुदाई का प्रमुख केन्द्र है। क्षेत्र में कुछ तेल व पोटाश भी मिले हैं। संक्षेप में पश्चिमी योर्कशायर ऊनी वस्त्रोद्योग में संलग्न हैं। यह शहरी केन्द्र लगभग 1 8 मिलियन जनसख्या को आश्रय दिए हुए हैं।

ऊनी वस्त्रोद्योग रत प्रदेश के दक्षिण में लोह-इस्पात पुनः महत्ता में है जहाँ स्थित शैफील्ड (495,000) देश का लगभग 14% इस्पात तैयार करता है। शैफील्ड क्षेत्र में उपलब्ध लोह-अयस, जगलों से चारकोल, नदियों से पानी आदि तत्वों के सहयोग से यह क्षेत्र धातु शोधन में सदियों से सलग्न रहा है। अपनी 'कटलरी' के लिए शैफील्ड विश्व प्रसिद्ध है। 1853 में बैसीमीर विधि से इस्पात तैयार होने के साथ-साथ इस क्षेत्र में इस्पात उद्योग का विस्तार तेजी से हुआ। मिडिल्सबर्ग से पिग आयरन लाकर यहाँ इस्पात व उसकी वस्तुएं बनायी जाने लगीं। शैफील्ड सदियों से अपने चाकू, छुरी, कांटे, कैंची ब्लेडस, बन्दूक, नट-बोल्ट आदि के लिए प्रसिद्ध रहा है। शैफील्ड के आस-पास ही कई छोटे औद्योगिक केन्द्र विकसित हो गए हैं जिनमें डरबी (135,000) तथा नौटिंघम (320,000) उल्लेखनीय हैं। डरबी में वस्त्रोद्योग, होजरी, सौन्दर्य प्रसाधन व कार (रॉल्स रौयस) उद्योग हैं। ट्रैंट नदी पर स्थित नौटिंघम नगर योर्कशायर तथा मिडलैंडस के मध्य द्वार की स्थिति में हैं।

(स) लंकाशायर—चेशायर निचले प्रदेश की पश्चिम में स्थित, ठंडी-आर्द्र जलवायु एवं पर्याप्त वर्षा आदि तत्वों ने इस सम्भाग में घास, चारे की फसलों तथा जई की कृषि के विकास में सहयोग किया है। शहरों के आस-पास सुअर व दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित ढोर पाले जाते हैं। बहुत दिनों तक लंकाशायर क्षेत्र में सूती वस्त्र व्यवसाय के विकास तथा विस्तार का आधार भी इसी आर्द्रता को माना जाता रहा। जबकि सच्चाई यह थी कि लिवरपूल के औपनिवेशिक व्यापार के कारण मर्सी नदी के सहारे-सहारे यह व्यवसाय पनपा। 17वीं शताब्दी से ही लिवरपूल अमेरिका, एशिया, अफ्रीका तथा पश्चिमी द्वीप समूह के साथ व्यापार में रत रहा है। अटलांटिक महासागर में व्यापार रत प्रसिद्ध जल यातायात कम्पनी 'कुनार्ड' का मुख्यालय लिवरपूल में ही है। व्यापार के फलस्वरूप इस बन्दरगाह नगर का कितनी तेजी से विकास हुआ इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1960 में यहाँ 25,000 लोग निवास कर रहे थे जो बढ़कर 1961

एक हुआ। वर्तमान में यहाँ की भट्टियों में प्रयोगित अधिकांश लौह-प्रयस्क आयात किया जाता है। ब्रिटेन के लौह इस्पात उद्योग में उत्तरी-पूर्वी तट पर स्थित औद्योगिक केन्द्रों का भारी महत्व है। ये केन्द्र देश का 24 प्रतिशत पिग आयरन तथा 20 प्रतिशत इस्पात तैयार करते हैं। 1945 से 1960 तक उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र 'विकास क्षेत्र' माना गया। इस अवधि में यहाँ के आर्थिक विकास के लिए सरकार ने भी योजनाबद्ध सहायता की। इस योजना से क्षेत्र को भारी लाभ हुआ। आर्थिक ढांचे के प्रमुख स्तम्भ इस्पात, रसायन तथा भारी उद्योग (जलयान निर्माण एवं मरम्मत) ही रहे। कई हल्के उद्योग भी पनपे। व्यापार को संगठित करने के लिए विशाल व्यापार संघ बनाए गए हैं जिनमें लगभग 60,000 व्यक्ति संलग्न हैं। कुछ नए प्लांटस भी लगाए गए हैं। डार्लिंगटन में विश्व की विशालतम ऊनी मिलों में से एक स्थापित की गयी है। इस पिछले दो दशकों में उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र का योजनाबद्ध आर्थिक विकास हुआ। उत्पादन का स्तर-प्रतिशत बढ़ा है परन्तु जनसंख्या में कोई खास वृद्धि नहीं हुई है। उत्पादन में कमी आने के बावजूद कोयला उद्योग इस क्षेत्र का सबसे बड़ा उद्योग है जिसमें क्षेत्र की 14% जनसंख्या लगी है।

(घ) यौर्कशायर—टीज नदी के दक्षिण में पूर्वी तटवर्ती मैदान क्रमशः चौड़े होते जाते हैं। केवल कुछ ही पठारी-विस्तार अपने मूर घास के आवरण सहित तट तक पहुँच पाते हैं परन्तु सघन कृषि क्षेत्र पश्चिम में पीनाइन्स के चरण प्रदेश तक विस्तृत हैं। यह यौर्कशायर प्रदेश है जिसे यहाँ के लोग 'सबसे बड़ा, सबसे सुन्दर' कहते हैं।[57] एक तरह से यौर्कशायर का विस्तार पश्चिम में लंकाशायर और उसके तट भाग तक है क्योंकि इस सम्भाग में पीनाइन्स बहुत नीचे है। घाटियों एवं दर्रों में होकर यातायात के साधन आसानी से दोनों तरफ के भागों को जोड़ते हैं। एंग्लो-सैक्सोन लोग इन्हीं मार्गों से पश्चिम की ओर बढ़े थे। इंगलिश राष्ट्र एवं संस्कृति के निर्माण में यौर्क का महत्वपूर्ण हाथ रहा है। ऐतिहासिक समय में यह रोमन, डैनिश तथा नौर्मन लोगों का गढ़ रहा। आज यौर्क की उपजाऊ घाटी में विद्यमान यह नगर एक महत्वपूर्ण रेलवे केन्द्र होने के साथ-साथ अपने-अपने कृषि प्रधान समृद्ध पृष्ठप्रदेश का केन्द्र भी है। हम्बर की एस्चुरी पर स्थित ग्रिम्सबी तथा निकटवर्ती हल बन्दरगाह यौर्कशायर के जल यातायात के केन्द्र हैं। ग्रिम्सबी (100,000) उत्तरी सागर का सबसे बड़ा मत्स्यकेन्द्र है यहाँ से मछलियाँ लन्दन तथा मिडलैंड के सघन क्षेत्रों को निर्यात की जाती हैं। हल (305,000) ब्रिटेन के विशालतम बन्दरगाहों में से एक है जहाँ खाद्य पदार्थ, तिलहन, इस्पात, वस्त्रोद्योग सम्बन्धी सामान, मशीनरी, कोयला तथा अन्य विविध वस्तुएँ आयात की जाती हैं।

यौर्कशायर प्रदेश में सर्वाधिक तथा उल्लेखनीय प्रगति कोयला क्षेत्रों में हुई

57. Gottman—A Geography of Europe, Third edition P. 222.

है। पीनाइन्स के चरण प्रदेशों में खानों के निकट घाटियों में अनेक औद्योगिक केन्द्र विकसित हैं जिनको सम्मिलित रूप से 'वैस्ट राइडिंग' क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। वैस्टराइडिंग क्षेत्र अपने ऊनी वस्त्रोद्योग के लिए विख्यात है। लीड्स (510,000) तथा ब्रैडफोर्ड (296,000) ऊन की सफाई, बुनाई तथा वर्स्टेड तैयार करने के सबसे महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। ये दोनों ब्रिटेन के उन कुछ नगरों में से हैं जिनकी जनसंख्या क्रमशः बढ़ रही है। अन्य केन्द्रों में हैलीफैक्स, हडर्सफील्ड, केघले तथा वेकफील्ड उल्लेखनीय हैं। डॉन कास्टर कोलखुदाई का प्रमुख केन्द्र है। क्षेत्र में कुछ तेल व पोटाश भी मिले हैं। सक्षेप में पश्चिमी योर्कशायर ऊनी वस्त्रोद्योग में संलग्न है। यह शहरी केन्द्र लगभग 1 8 मिलियन जनसख्या को आश्रय दिए हुए हैं।

ऊनी वस्त्रोद्योग रत प्रदेश के दक्षिण में लोह-इस्पात पुनः महत्ता में है जहाँ स्थित शैफील्ड (495,000) देश का लगभग 14% इस्पात तैयार करता है। शैफील्ड क्षेत्र में उपलब्ध लोह-अयस, जगलों से चारकोल, नदियों से पानी आदि तत्वों के सहयोग से यह क्षेत्र धातु शोधन में सदियों से सलग्न रहा है। अपनी 'कटलरी' के लिए शैफील्ड विश्व प्रसिद्ध है। 1853 में बैसीमीर विधि से इस्पात तैयार होने के साथ-साथ इस क्षेत्र में इस्पात उद्योग का विस्तार तेजी से हुआ। मिडिलसबर्ग से पिग आयरन लाकर यहाँ इस्पात व उसकी वस्तुएं बनायी जाने लगीं। शैफील्ड सदियों से अपने चाकू, छुरी, कांटे, कैंची ब्लेडस, बन्दूक, नट-बोल्ट आदि के लिए प्रसिद्ध रहा है। शैफील्ड के आस-पास ही कई छोटे औद्योगिक केन्द्र विकसित हो गए हैं जिनमें डरबी (135,000) तथा नौटिंघम (320,000) उल्लेखनीय हैं। डरबी में वस्त्रोद्योग, होजरी, सौन्दर्य प्रसाधन व कार (रॉल्स रौयस) उद्योग हैं। ट्रैंट नदी पर स्थित नौटिंघम नगर योर्कशायर तथा मिडलैंडस के मध्य द्वार की स्थिति में है।

(स) लंकाशायर—चेशायर निचले प्रदेश की पश्चिम में स्थित, ठंडी-आर्द्र जलवायु एवं पर्याप्त वर्षा आदि तत्वों ने इस सम्भाग में घास, चारे की फसलों तथा जई की कृषि के विकास में सहयोग किया है। शहरों के आस-पास सुअर व दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित ढोर पाले जाते हैं। बहुत दिनों तक लंकाशायर क्षेत्र में सूती वस्त्र व्यवसाय के विकास तथा विस्तार का आधार भी इसी आर्द्रता को माना जाता रहा। जबकि सच्चाई यह थी कि लिवरपूल के औपनिवेशिक व्यापार के कारण मर्सी नदी के सहारे-सहारे यह व्यवसाय पनपा। 17वीं शताब्दी से ही लिवरपूल अमेरिका, एशिया, अफ्रीका तथा पश्चिमी द्वीप समूह के साथ व्यापार में रत रहा है। अटलांटिक महासागर में व्यापार रत प्रसिद्ध जल यातायात कम्पनी 'कुनार्ड' का मुख्यालय लिवरपूल में ही है। व्यापार के फलस्वरूप इस बन्दरगाह नगर का कितनी तेजी से विकास हुआ इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1960 में यहाँ 25,000 लोग निवास कर रहे थे जो बढ़कर 1961

में 750,000 हो गए। लिवरपूल शहरी क्षेत्र की जनसंख्या 1·5 मिलियन छू रही है। कई उप-बन्दरगाह नगर विकसित हो गए हैं जिनमें बर्केनहैड (142,000) वैलेसी (103,000), बूटिल (85,000) तथा किर्कवी (52,000) आदि उल्लेखनीय हैं। मर्सी नदी के सहारे-सहारे विविधप्रकार के उद्योग विकसित हैं। परम्परागत सूती वस्त्रोद्योग के अतिरिक्त पिछले 5-6 दशकों में रासायनिक, खाद्य पदार्थ, मशीनरी तथा इंजीनियरिंग उद्योग विकसित हुए हैं।

मैनचैस्टर पिछले 500-600 वर्षों से वस्त्रोद्योग का केन्द्र रहा है। वस्त्रोद्योग की परम्परा यहाँ 14वीं शताब्दी में ऊनी तथा लिनेन वस्त्रों से प्रारम्भ हुई जो कालांतर में यहाँ के विश्व प्रसिद्ध वस्त्रोद्योग की आधार बनी। मैनचैस्टर 'सूती नगर' के नाम से विख्यात हुआ। मैनचैस्टर शिप कैनाल ने मैनचैस्टर क्षेत्र के औद्योगिक विकास में भारी सहयोग दिया है। जैसा कि उद्योगों के अध्ययन में सुस्पष्ट है इस क्षेत्र की औद्योगिक प्रवृत्ति में पिछले 30-40 वर्षों में भारी परिवर्तन हुआ है, हो रहा है। उपनिवेशों की समाप्ति, अफ्रेशियायी देशों में सूती वस्त्रोद्योग का विकास, कच्चे माल की परेशानी, विकट बाजारी प्रतियोगिता आदि कारणों से यहाँ का सूती वस्त्रोद्योग पतनोन्मुख है।

(द) मिडलैंडस—उत्तर में पीनाइन्स, पश्चिम में वेल्स तथा दक्षिण में जुरैसिक युगीन चूने की कूटिकाओं के मध्य एक ऐसा निचला मैदानी प्रदेश विद्यमान है जहाँ की मिट्टियाँ उपजाऊ हैं, कृषि के लिए आदर्श परिस्थितियाँ हैं और कृषि उन्नत भी है परन्तु इस क्षेत्र का नाम लेते ही कारखानों, चिमनियों, मजदूर बस्तियों, रेल पटरियों तथा धुँआयुक्त वातावरण का चित्र सामने आ जाता है। यह है ब्रिटेन का सर्वाधिक सघन औद्योगिक क्षेत्र मिडलैंड। यहाँ लोह-अयस तथा कोयला पास-पास उपलब्ध है जिसने ऐतिहासिक समय से ही यहाँ भारी उद्योगों को प्रोत्साहित किया है। प्रारम्भ में मिडलैंड के पश्चिमी भाग में स्थित कोयला क्षेत्रों से शुरुआत हुई जिसकी अन्तिम परिणति आज बर्मिघम के चारों ओर 'काले प्रदेश' के रूप में है।

17वीं शताब्दी में बर्मिंघम 'संसार' की 'खिलोनों की दूकान' के रूप में जाना जाता था। 19वीं शताब्दी में यहाँ धातु तथा भारी उद्योग क्रियारत थे और आज इसके बारे में यह कहा जाता है कि यहाँ सूई से लेकर रेल और वायुयान तक बनाए जाते है। ब्रिटेन का एक चौथाई से अधिक पिग आयरन तथा लगभग दशमांश इस्पात बर्मिघम क्षेत्र की भट्टियाँ तैयार करती हैं। लोह इस्पात के अतिरिक्त यहाँ लाको, ऑटोमोबाइल्स, मशीनरी, रसायन तथा इंजीनियरिंग उद्योग विकसित है। बर्मिघम की जनसंख्या 1 मिलियन से ऊपर है। कई औद्योगिक उप-नगर विकसित हो गए है जिनमें वोल्वर हैम्पटन (150,000), वालशाल (118,000), डडले (62,000), वैस्ट ब्रोमविच (96,000), बिल्सटन तथा रैडिच आदि उल्लेख-

नीय हैं। समस्त पश्चिमी मिडलैंड श्रौद्योगिक शहरी क्षेत्र की जनसंख्या 2·5 मिलियन के लगभग है जो लन्दन के बाद देश का सबसे सघन शहरी श्राधिवास क्षेत्र है। पूर्व में नॉर्थम्पटन तथा केटरिंग की ओर इस्पात उद्योग का विस्तार हो रहा है। पूर्वी मिडलैंड प्रदेश जो 60-70 वर्ष तक कृषि प्रदेश था आज सघन औद्योगिक क्षेत्र के रूप में प्रतिष्ठित है। उत्तर-पश्चिम में कोयला तथा चीनी मिट्टी के सहयोग से बर्तन उद्योग विकसित हुआ है जिसके प्रधान केन्द्र स्टैफोर्ड तथा स्टॉक-ग्रान-ट्रैंट हैं।

(ई) दक्षिणी-पूर्वी इंगलैंड—वाश तथा थेम्स के मुहाने के मध्य चौरस प्रदेश पूर्वी ग्रांग्लिया का मैदान स्थित है। पूर्व में उत्तरी सागर में उभरा हुआ यह प्रदेश परम्परागत रूप से इंगलैंड का खाद्य भंडार रहा है। धूपीला मौसम, गहरी कांप तथा दोमट मिट्टी, समतल धरातल, दलदल को सुखाकर प्राप्त की गयी नयी भूमि, खादों का भरपूर प्रयोग, बाजार एवं खपत-केन्द्रों की निकटता, यातायात की सुव्यवस्था आदि तत्वों ने मिलकर इस प्रदेश को यूरोप के किसी भी उन्नत कृषि प्रदेश के समकक्ष कर दिया है। 1940 से कृषि क्षेत्रों में योजनानुसार व्यवस्था की गयी है। आजकल यहां पूर्णतः आधुनिक प्रकार की यांत्रिक कृषि होती है। बीच-बीच में ग्रामीण क्षेत्रों की सेवा के लिए बाजारी केन्द्र के रूप में कस्बे हैं। कुछ कस्बों में उद्योग विकसित हो गए हैं। ऐसे कस्बों में नौरविच तथा कैम्ब्रिज उल्लेखनीय हैं। कैम्ब्रिज अपने विश्वविद्यालय के लिए विश्व विख्यात है। तट पर स्थित यरमाउथ तथा लोवेस्टोट बंदरगाह बड़े मत्स्य व्यवसाय केन्द्र भी हैं।

मैदानी भाग आगे दक्षिण तथा पश्चिम में आगे बढ़ गया है यद्यपि वहां यह पूर्णतः मैदानी नहीं है। बीच-बीच में 'एस्कार्पमेंटस' तथा नीची पहाड़ियां हैं। थेम्स का बेसिन इस विस्तृत मैदानी भाग के मध्य में स्थित है। सम्पूर्ण बेसिन में कृषि, चारागाह, पशुपालन तथा दुग्ध व्यवसाय युक्त ऐसे दृश्यों के दर्शन होते हैं जो पश्चिम के मिडलैंड प्रदेश तथा पूर्व में स्थित लंदन-क्षेत्र से बिल्कुल पृथक है। स्थानीय महत्व के बाजारी केन्द्र है। इस सम्भाग के सभी कस्बों के महत्व की व्याख्या उनके लंदन के साथ सम्बन्धों के संदर्भ में ही की जा सकती है। ऑक्सफोर्ड अपने विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय के कारण अवश्य एक विशिष्ट स्थिति लिए है।

थेम्स की निचली घाटी के उत्तर में, जहां आंग्लिया के मैदान तथा विस्तारोन्मुख बृहत्तर लंदन क्षेत्र मिलते हैं, स्थित एसेक्स तथा हर्टफोर्ड काउन्टीज में पिछले दिनों में जनसंख्या बड़ी तीव्र गति से बढ़ी है। लंदन की निकटता से फसली तथा बागाती दोनों प्रकार की कृषि बड़ी आर्थिक सिद्ध हुई है। कई नए कस्बे विकसित हुए हैं। इनके विकास की गति का अनुमान बैसिलडॉन तथा हारलो के उदाहरण से हो सकता है। क्रमशः 1949 तथा 1947 में बसाए गए इन कस्बों की जनसंख्या (प्रत्येक की) 50,000 से अधिक थी। थेम्स के मुहाने

के उत्तरी सिरे पर स्थित साउथेंड (165,000) ब्रिटेन का सबसे बड़ा तटवर्ती स्वास्थ्य-केन्द्र है। इन कस्बों की तीव्र गति से वृद्धि की पृष्ठभूमि में मुख्य कारण लंदन की निकटता है।

थेम्स के दक्षिण में चौड़ी घाटियों और कूटिकाओं युक्त असमान धरातल है जिसे 'डाउन्स' के नाम से जाना जाता है। डाउन्स में साधारण किस्म की समृद्ध प्राकृतिक घास है जो भेड़ों के लिए उत्तम एवं पर्याप्त भोजन प्रस्तुत करती है। लंदन के ठीक दक्षिण में वैल्ड प्रदेश हैं जो कभी सघन जंगलों के रूप में थे परन्तु ज्यादातर जंगल साफ कर दिए गए हैं। जैसा कि 'धरातलीय स्वरूप' अध्याय में उल्लेख है डाउन्स प्रदेश में कूटिकाएँ चूने की चट्टानों युक्त है जिनके बीच-बीच में स्लाड़ियों की पर्तों के फलस्वरूप मिट्टियों के रंग में सफेदी सुस्पष्ट है। चिकनी मिट्टी की भी पर्तें हैं। कूटिकाओं में सर्वत्र भेड़ चराई जाती हैं। नीची घाटियों में फसली-कृषि होती है। पोर्टसमाउथ तथा साउथैम्पटन क्रमशः नौसैनिक एवं व्यापारिक बंदरगाहों के रूप में उन्नत हैं। साउथैम्पटन में 1952 से एक विशाल तेलशोधक कारखाना भी कार्यरत है।

ब्रिटेन के ग्रामीण दक्षिणी-पूर्वी हिस्से में ब्रिटेन की राजधानी तथा विश्व का तीसरे नम्बर का नगर लंदन विद्यमान है। कोयला, लोहा व अन्य औद्योगिक सम्भावनाओं से रहित होते हुए भी लंदन निरंतर बढ़ता जा रहा है, एवं यहाँ विविध प्रकार के उद्योग विकसित हो गए हैं। रोमन युगों और बाद में हानसीटिक सघ के समय भी लंदन एक व्यापारिक नगर था। 18वीं शताब्दी में औपनिवेशिक व्यापार ने लंदन की वृद्धि में सहयोग किया। 1682 में इसकी जनसंख्या 670,000; 1860 में 2,800,000 तथा 1951 में 8.3 मिलियन थी। लंदन बंदरगाह न्यूयार्क के बाद विश्व का सबसे ज्यादा व्यस्त बंदरगाह है। थेम्स के सहारे-सहारे फैले डॉक की लम्बाई 25 मील है। पिछले दशकों में यह प्रवृत्ति देखने में आयी कि स्वयं लंदन नगर की आबादी तो घट रही है परन्तु इसके 'शहरी क्षेत्र' का विस्तार तेजी से बढ़ता जा रहा है। लोग शहर की खिचपिच से ऊब कर दूर उप-नगरों में बसने लगे हैं। फलस्वरूप हर्टफोर्डशायर, एसेक्स, पश्चिमी सुएक्स, बकिंघमशायर, बर्कशायर तथा बैडफोरशायर आदि उप-नगर अस्तित्व में आए हैं। हाल में ही बसे उप-नगरों में वैमिलडोन, हारलो, क्रॉले अ कनेल, हैटफील्ड तथा हैम्पस्टेड आदि हैं। ये सब मिलकर लंदन बेसिन का निर्माण करते हैं जो लंदन काउन्टी की सीमा को पार कर गया है। दुनिया में सर्वाधिक गतिशील यह क्षेत्र औद्योगिक एवं ग्रामीण संस्कृति का अनुपम सम्मिश्रण है।

वेल्स एवं डेवोनियन पेनिनशुला :

ब्रिटिश द्वीप के दक्षिण-पश्चिम में भू-भाग प्रायः द्वीपीय स्वरूप लिए अटलांटिक महासागर में सैकड़ों मील तक घुसे चले गए है। उत्तर का प्रायःद्वीपीय

ाग वेल्स का है जहाँ कि विखंडित पठारी भाग पेम्ब्रोकशायर तथा केर्नारवोनशायर काउण्टीज में आगे बढ़कर कार्डीगन की खाड़ी के दोनों तरफ हुक जैसा स्वरूप लिए हैं । आगे दक्षिण में ब्रिस्टल चैनल द्वारा पृथक् डेवोन (कार्नवाल) पेनिनशुला है जिसके सिरे को यूरोप महाद्वीप का धुर पश्चिमी भाग माना जा सकता है ।

स्कॉटलैण्ड के दक्षिण में बड़े पैमाने पर उच्च प्रदेश के दर्शन इंगलैंड के पश्चिम में स्थित वेल्स में ही होते हैं । ऊँचाई तथा ऊबड़ खाबड़ धरातल ने वेल्स को सदा से पृथकता में रखा है और यही कारण है कि वेल्स संस्कृति आज अपने शुद्ध रूप में यत्र-तत्र देखी जा सकती है । वेल्स के अधिकांश उच्च प्रदेश अत्यन्त प्राचीन चट्टानों के बने हैं जिन्हें अतीत में क्षयकारी शक्तियों ने घिस-घिस कर नीचा कर दिया था । पुनः उत्थान हुआ और कुछ भाग पर्वतों के रूप में आए । बहुत कम भाग ऐसे हैं जहाँ हिम आवरण तथा हिमानियों का धरातलीय के स्वरूप के निर्धारण में इतना सहयोग रहा है । पश्चिम में स्थित होने से वर्षा पर्याप्त है । घास समृद्ध चरागाह प्रस्तुत करती है परन्तु ऊबड़ खाबड़ धरातल में यातायात के अभाव के फलस्वरूप पशुपालन एवं कृषि व्यवसाय ज्यादा विकास नहीं कर पाए हैं ।

वेल्स की अधिकांश जनसंख्या दक्षिणी तटवर्ती पट्टी में निवास करती है जहाँ कोयले की उपलब्धि के फलस्वरूप औद्योगिक विकास हुआ है । दक्षिणी वेल्स ब्रिटेन के प्रधान कोयला उत्पादक क्षेत्रों में से एक है । कार्मार्थ्यनशायर, ग्लैमोरन तथा मनमाउथशायर आदि काउन्टीज में एन्थ्रासाइट, बिटूमिनस, स्टीम तथा हार्डकोक की विस्तृत पर्तें हैं जो घाटियों में धरातलके पर्याप्त निकट आ गयी हैं । पहले यहाँ का अधिकांश कोयला निर्यात किया जाता था परन्तु पिछले दशकों में निर्यात प्रतिशत घटा है । 1913 में कुल उत्पादन का लगभग 61% निर्यात किया गया जबकि 1938 में यह प्रतिशत केवल 49% था । वर्तमान में उत्पादन का केवल एक-तिहाई भाग निर्यात किया जाता है । निर्यात घटने का कारण इसी सम्भाग में धातु उद्योग का विकास है जो मुख्यतः धातुशोधन के क्षेत्रों में हुआ है ।

धातु उद्योग में टिन-प्लेट उद्योग में विशिष्टता प्राप्त की गई है जो वर्तमान में स्थानीय कोयला तथा आयातित टिन एवं लौह-अयस के आधार पर चल रहा है । कुशल श्रम आस-पास क्षेत्रों में उपलब्ध है । यह उद्योग कोयला क्षेत्रों में अनेक कस्बों यथा पोण्टीपूल, पोण्टनीनिड, एबरडयुलेइस, लांट्रिसेंट, वाइस्टालिफेरा (सभी केल्टिक नाम) आदि में विकसित हैं । टिन प्लेट के अतिरिक्त तांबा, जस्ता तथा निकिल शोधन उद्योग भी यहाँ विकसित है । स्वांसी (170,000) प्रधान बंदरगाह तथा धातु उद्योग केन्द्र है जिसके चारों ओर कारखानों की भीड़ ने इसे भी 'काले प्रदेश' जैसा स्वरूप प्रदान किया है ।

कार्डिफ (270,000) दक्षिणी वेल्स का सबसे महत्वपूर्ण बंदरगाह तथा बड़ा नगर है जो स्वांसी के पूर्व में तैफ नदी पर विद्यमान है । कोयला निर्यात मात्रा में

यह योर्कशायर के न्यूर्कसिल बंदरगाह का प्रतिद्वन्द्वी है। कोयला की निर्यात मात्रा के घटने के साथ-साथ यहाँ खाद्य तथा रासायनिक उद्योगों का विकास होता रहा है। कार्डिफ के स्वांसी तक का समस्त क्षेत्र कारखानों और मजदूर बस्तियों से भरा है। अनेक छोटे-छोटे औद्योगिक नगर है जिनम रौंडा (100,000) तथा मर्थर टाइड-फिल (60,000) उल्लेखनीय है । वेल्स का यह औद्योगिक प्रदेश ब्रिटेन का 10% कोयला, 14% पिग आयरन एवं 22% इस्पात प्रस्तुत करता है।

ब्रिस्टल चैनेल के दक्षिण में कार्नवाल-डेवोन पैनिनशुला स्थित है। यह भू-भाग भी प्राचीन चट्टानों का बना असमतल भाग है जिसमें अधिकांश भाग मूर ने घेरा हुआ है। कार्नवाल यूरोप का धुर पश्चिमी भाग है जिसके सिरे पर स्थित सिली द्वीप या केप लिजार्ड यूरोप के अन्तिम बिन्दुओं के रूप में है। कार्नवाल के दोनों तट (दक्षिणी एवं उत्तरी) चट्टानी एवं कटे-फटे हैं पर दोनों में जलवायु सम्बन्धी भारी अन्तर है। उत्तरी तट ठंडा, आर्द्र तथा तीव्र हवाओं युक्त है जबकि दक्षिणी तट धूपीला एव गर्म है। यह यूरोप का सबसे गर्म स्थान माना जाता है। कार्नवाल के आर्थिक आधार कृषि एव पशुचारण रहे हैं। पर्यटक लोग जाड़ों में काफी संख्या में आते है। थोड़ी सी मात्रा में टिन, स्लेट तथा चीनी मिट्टी भी खोदी जाती है। प्लाइमाउथ इस सम्भाग का महत्वपूर्ण नगर, बंदरगाह, नौसेना केन्द्र तथा मत्स्य केन्द्र है।

आयरलैंड :

आयरलैंड द्वीप प्रशासनिक दृष्टि से दो इकाइयों में संगठित है। ये हैं— आयरिश गणराज्य तथा अलस्टर या उत्तरी आयरलैंड। 17 मिलियन एकड़ भू-क्षेत्र तथा लगभग 3 मिलियन जनसंख्या युक्त आयरिश गणराज्य एक संप्रभुता युक्त राज्य है जो 1921 में स्वतंत्र इकाई के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। 3.5 मिलियन एकड़ भू-क्षेत्र तथा 1.4 मिलियन जनसंख्या युक्त अलस्टर 'यूनाइटेड किंगडम' से सम्बद्ध है।

धरातलीय दृष्टि से आयरलैंड एक प्राचीन, नीचा, विखंडित पठार है जिसके धरातल के वर्तमान स्वरूप के निर्धारण में हिम-आवरण का पर्याप्त सहयोग रहा है। द्वीप का मध्यवर्ती भाग कार्बोनीफेरस युगीन चूने की चट्टानों का बना है जिनके सीमान्त प्रदेशों में कोयले की पर्तें धरातल तक आ गयी हैं। मध्यवर्ती भाग प्रायः नीचा है और कहीं भी 500 फीट से ज्यादा ऊँचा नहीं है। द्वीप के उत्तर तथा दक्षिण में ऊँचाई एवं ऊबड़-खाबड़ पन बढ़ते जाते हैं। उत्तरी भाग में चट्टानों की संरचना स्कॉटलैण्ड से मिलती-जुलती है। प्राचीन रवेदार चट्टानों के खण्डों ने डोनेगल पर्वत, एन्ट्रिम पठार तथा मूर्ने पर्वत, का निर्माण किया है। हिमानी ने चोटियों को घिस-घिस करके चौरस बना दिया है। ऊँचाई कहीं भी 2000 फीट

से ज्यादा नहीं है । मध्यवर्ती मैदान के दक्षिण में पहाड़ियां प्राचीन लाल बलुआ पत्थर की प्रतिनतियों के सहारे-सहारे फैली हैं। सर्वाधिक ऊँचाई द्वीप के दक्षिण-पश्चिम में कैरी पर्वत के रूप में है जहाँ कैरेन्टूहिल 3414 फीट ऊँची है। जल प्रवाह सम्पूर्ण द्वीप में बड़ा अनियमित है। ठंडी-आर्द्र जलवायु, अनियमित जल प्रवाह तथा भारी वर्षा आदि तत्वों ने मिलकर दलदल पीट बॉग्ज तथा दलदलीय वनस्पति को जन्म दिया है।

भौगोलिक वातावरण ने इस द्वीप में प्राकृतिक घास को प्रोत्साहित किया। सदियों से आयरलैंड का प्रधान व्यवसाय पशुचारण रहा। बड़े-बड़े 'एस्टेटस' थे। 1903 में 750 भू-स्वामियों के अधिकार में द्वीप का आधा सा भाग था। कृषक गरीब था। पशुपालन के अतिरिक्त आलू, फ्लैक्स तथा ऊन पैदा की जाती रही। लेकिन इन सबका परिणाम यह हुआ कि आयरलैंड यूरोप के अन्य भागों की तुलना में पिछड़ा रह गया। औद्योगिक आधार विकसित नहीं हो पाया। आज भी कृषि यहाँ के आर्थिक ढांचे का प्रधान आधार है। यहाँ से ब्रिटेन को दुग्ध उत्पादन व माँस निर्यात किए जाते हैं। पिछले दशकों में फसली कृषि का भी विस्तार एवं विकास हुआ है। अब यहाँ गेहूँ, चुकन्दर, जई, आलू, जौ तथा चारे की फसलें भी पैदा की जाती हैं। फसली कृषि की दृष्टि से मध्यवर्ती मैदानी भाग का दक्षिणी भाग महत्वपूर्ण है। लाइमेरिक तथा टिपरैरी की घाटियों में उपजाऊ मिट्टी का विस्तार है। खाद्यान्न तथा शक्कर की दृष्टि से आज आयरलैंड स्वावलम्बी है।

बड़े नगरों में औद्योगिक विकास भी हुआ है। राजधानी नगर डबलिन आयरलैंड का प्रधान बंदरगाह तथा औद्योगिक केन्द्र है। इस अकेले नगर में देश की लगभग एक चौथाई मानवता आश्रय लिए हुए है। प्रारम्भ में यहाँ कृषि पर आधारित उद्योग जैसे दुग्ध उत्पादनों सम्बन्धी, बीयर, अल्कोहल आदि ही थे। आज यहाँ काँच, शक्कर, सीमेंट, वस्त्र, चमड़ा, छपाई तथा कागज उद्योग भी हैं। कुछ धातु उद्योग भी स्थापित किए गए हैं। मोटर पार्ट्स को जोड़ने का एक बड़ा प्लांट लगाया गया है। अन्य विकासशील नगरों में कोर्क (85,000) तथा लाइमेरिक (55,000) उल्लेखनीय हैं। दोनों ही नगरों में औद्योगिक विकास हो रहा है यद्यपि स्वरूप आज भी प्रधानतः बाजारी केन्द्रों जैसा है। कोर्क में खाद तथा रबर के कारखाने हैं। लाइमेरिक में विद्युत उपकरणों का कारखाना है। आयरलैंड के औद्योगिक विकास में प्रमुख बाधा कच्चे मालों का अभाव है। कोयला तथा पैट्रोल दोनों ही आयात करने पड़ते हैं। जो कुछ भी औद्योगिक विकास हुआ है उसके लिए अमेरिकन, जापानी, डच तथा जर्मनी पूँजी एवं सहयोग उत्तरदायी है।

अलस्टर में भी आर्थिक ढांचे का प्रधान आधार कृषि ही है। निस्संदेह, ढोर पालन, दुग्ध व्यवसाय, सूअर, भेड़ तथा मुर्गी पालन में विशिष्टता प्राप्त की गयी

है। इस संभाग में लगभग 90,000 फार्म्स हैं जिनमें अधिकांश छोटे हैं। फसली कृषि उत्पादन में आलू तथा जई उल्लेखनीय हैं। उत्तरी आयरलैंड में दो बड़े नगर हैं : बेलफास्ट तथा लंदन डेरी। इन दोनों नगरों में इस सम्भाग को एक तिहाई से अधिक जनसंख्या निवास करती है। अपने दो विकसित उद्योगों (लिनैन तथा जलयान निर्माण) के आधार पर अलस्टर विविध अर्थ-व्यवस्था का दावा भी कर सकता है। स्थानीय फ्लेक्स की उपलब्धि के आधार पर विकसित लिनैन उद्योग लंदन डेरी (60,000) नगर में परम्परागत रूप से विकसित है। बैलफास्ट (500,000) नगर जलयान निर्माण उद्योग का केन्द्र है जहाँ प्रतिवर्ष लगभग 2 लाख टन भार के जलयान बनाए जाते हैं। इसी नगर में उत्तरी आयरलैंड की संसद का कार्यालय है।

□□□

ब्राजिल

संयुक्त-राज्य-ब्राजील (दी यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ ब्राजिल) में सम्पूर्ण दक्षिणी अमेरिका महाद्वीप का लगभग 47% भू-क्षेत्र एवं 47% जनसंख्या शामिल किए जाते हैं 5° उत्तरी अक्षांस से लेकर 34° दक्षिणी अक्षांस तथा 35° पश्चिमी देशांतर से लेकर 75° पश्चिमी देशांतर तक फैले इस विशाल देश का क्षेत्रफल 3,287,195 वर्ग मील है। सोवियत संघ, चीन तथा कनाड़ा के बाद यह दुनिया का सबसे बड़ा चौथे नम्बर का देश है। इसके आकार का और भी सही अनुमान इससे हो सकता है कि यह एलास्का रहित समस्त महाद्वीपी संयुक्त राज्य अमेरिका से बड़ा तथा स्कैंडीनेविया रहित समस्त यूरोप महाद्वीप के क्षेत्रफल के बराबर है। इतने बड़े देश में केवल 119 मिलियन लोग निवास करते हैं[1] जो कि समस्त लैटिन-अमेरिका की जनसंख्या के एक तिहाई भाग के बराबर तथा सं. रा. अमेरिका की जनसंख्या के एक तिहाई भाग से कुछ ज्यादा हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि उक्त जनसंख्या केवल कुछ क्षेत्रों में सीमित है। विशाल भू-भाग जो पर्वत, पठार, दलदल एवं जगलों के कारण प्रतिकूल वातावरण प्रस्तुत करते हैं, अभी भी मानवता के स्पर्श से दूर हैं।

ब्राजिल इक्वेडोर एवं चिली को छोड़कर दक्षिणी अमेरिका के लगभग प्रत्येक देश की सीमाओं से भिड़ा हुआ है। इस विशाल देश का विस्तार तीन कटि-बंधों (उष्ण, उपोष्ण एवं शीतोष्ण) में है। यथा अमेजिन बेसिन उष्ण कटिबंध, उत्तर-पूर्व के राज्य, माटोग्रासो, बाहिया, गोइयास, पियायुइ उपोष्ण कटिबंध एवं साओपोलो, मीनास-गैराइस तथा माटोग्रासो राज्यों के हिस्से एवं दक्षिण के राज्य (पराना, सांता काटारिना एवं रायो-ग्रांडे-डो-सूल) शीतोष्ण कटिबंध में आते हैं। तटरेखा की लम्बाई लगभग 4600 मील है।

ब्राजिल के भौगोलिक अध्ययन की मुख्य समस्या (जो वर्तमान में बहुत व्यावहारिक भी है) यह है कि किसप्रकार इस विशाल भू-भाग के प्राकृतिक संसाधनों

---

1. अन्तिम अधिकृत जनगणना 1 सितम्बर, 1980 के अनुसार।

का मूल्यांकन किया जाये। इस प्रकार का मूल्यांकन एक विस्तृत तथा गहन सर्वेक्षण के आधार पर ही हो सकता है और दुर्भाग्य से इस किस्म का कोई सर्वेक्षण सम्पूर्ण देश का अभी तक नहीं हुआ है। निस्संदेह, अधिकांश भागों की भौगोलिक प्रतिकूलता ऐसे सर्वेक्षण में बड़ी बाधा है। अगर ब्राजिल का मानचित्र देखा जाए तो साधारणतः यह लगता है कि विकसित एवं बसे हुए भाग के पश्चिमी सीमांतों की ओर कृषि, जन बसाव आदि की सम्भावनाएँ हैं। राष्ट्र संघ की संस्था 'खाद्य एवं कृषि संगठन' भी यही सोचता है कि इस विशाल देश के केवल 2 प्रतिशत भू-भाग में ही कृषि कार्य होते हैं शेष बहुत सा भाग अप्रयोगित पड़ा है जिसका विकास किया जा सकता है। इस प्रकार मानवता के लिए अतिरिक्त अवसरों की उम्मीद में ब्राजिल के प्रति आशायुक्त विचारधाराएँ समय-समय पर प्रकट होती रही हैं। परन्तु इसमें भी मतभेद है। ब्राजिल की भूगोल के कई विशेषज्ञों का मत यह है कि जितने भू-भाग में आर्थिक स्तर पर अच्छी कृषि सम्भव हो सकती थी वह अब तक हो चुकी है। उनके विचार में पर्याप्त भू-भाग जो खाली पड़े हैं उनमें ज्यादा सम्भावनाएँ नहीं हैं। सही स्थिति इस महादेश के गहन प्रादेशिक अध्ययन से ही जानी जा सकती है।

यूरोप वासियों को ब्राजिल का पता सन् 1500 में चला जब एक पुर्तगाली नाविक पेंड्रो अल्वारेस कामराल ब्राजिल के तट पर प्रथम यूरोपियन यात्री के रूप

चित्र–1

में आया । स्पेन तथा पुर्तगाल के प्रशासनिक संघ ने ब्राजिल के दक्षिणी एवं पश्चिमी भागों में भी विस्तार के लिए अपने दल भेजे । फलतः इनके अधिकार में समस्त ब्राजिल बिना एक भी युद्ध लड़े आ गया । 1808 में जब पुर्तगाल पर नैपोलियन की सेनाओं ने हमला बोला तो पुर्तगाल का शाही परिवार ब्राजिल लाया गया तथा ब्राजिल की बस्ती पुर्तगाल के साथ प्रशासनिक अंग के रूप में जुड़ गई । बाद में समस्त शाही परिवार पुर्तगाल लौट गया लेकिन पुर्तगाल का युवराज यहीं रह गया जिसने 7 सित. 1822 को ब्राजिल की स्वतंत्रता की घोषणा कर दी । इस कार्य में बस्ती के लोगों का भी सहयोग था । थोड़े दिनों बाद युवराज को ब्राजिल का बादशाह बना दिया गया जो 'पेंड्रो प्रथम' के नाम से गद्दी पर बैठा 1889 तक ब्राजिल में राजाशाही चलती रही । इस वर्ष यह गणराज्य घोषित किया, अध्यक्षीय प्रणाली अपनाई गई। तब से लेकर वर्तमान तक इसी व्यवस्था से यहां शासन होता आया है । बीच में, निस्संदेह दो वर्ष (1961-63)के लिए संसदीय प्रणाली का परीक्षण किया गया था पर वह व्यवस्था के अनुकूल नहीं मानी गई ।

वर्तमान में ब्राजिल एक संघीय गणराज्य है जिसमें 22 राज्य, 4 केन्द्र प्रशासित क्षेत्र तथा एक संघीय क्षेत्र–ब्रासीलिया हैं । राज्य स्वायत्तशासी हैं जिनकी विधानसभाएँ तथा राज्यपाल जनता द्वारा चुने जाते हैं । संघीय सीनेटर्स तथा राष्ट्रपति आठ वर्ष के लिए जनता द्वारा चुने जाते हैं । रोण्डोनिया, रोरायमा, आमापा तथा फरनाण्डो-डी-नोरोन्हा केन्द्र प्रशासित क्षेत्र तथा ब्रासीलिया केन्द्रीय राजधानी है ।

ब्राजिल के राज्य

प्रदेश	राज्य तथा उनकी (राजधानियाँ)	क्षेत्रफल वर्ग कि. मी. में	जनसंख्या 1 सित. 1983 (अनुमानित)
उत्तरी		3,581,180	6,817,000
	1. रौण्डोनिया (पोर्टो वैल्हो)	243,044	645,000
	2. एक्रे (रायो ब्रांको)	152,589	338,000
	3. एमेजन्स (मानौस)	1,564,445	1,621,000
	4. रोरायमा (बोया विस्ता)	230,104	95,000
	5. पारा (बेलेम)	1,250,722	3,918,000
	6. आमापा (माकापा)	140,276	200,000

प्रदेश	राज्य तथा उनकी (राजधानियाँ)	क्षेत्रफल वर्ग कि. मी. में	जनसंख्या 1 सित. 1983 (अनुमानित)
उत्तरी-पूर्वी		1,548,672	37,609,000
	7. माराग्हाओ (साओ लुइस)	328,663	4,411,000
	8. पिग्रोल (टैरेसिना)	250,934	2,326,000
	9. कियारा फोर्टालेजा)	150,630	5,680,000
	10. रारो-ग्रांडे-डो-नोर्टे (नाटाला)	53,015	2,045,000
	11. पारायबा (जोमाग्रो पैसोग्रा)	56,372	2,928,000
	12. परनाम्बुको (रैसीफे)	98,281	6,551,000
	13. अलागोग्रास (मैसेयो)	27,731	2,154,000
	14. फरनैण्डो-डो-नोरोन्हा	26	....
	15. सर्गीपे (अराकाजू)	21,994	1,233,000
	16. बाहिया (साल्वादर)	561,026	10,281,000
दक्षिण-पूर्व		924,934	56,603,000
	17. मीनास गैराइस (बैलो हौरिजौंटे)	587,172	14,166,000
	18. एस्पिरिटो सांतो (विटोरिया)	45,597	2,192,000
	* 19. रायो-डी-जैनेरो (रायो-डी-जैनेरो)	44,268	12,242,000
	20. साओपालो (साओपालो)	2,47,898	28,003,000
दक्षिण		5,77,723	20,077,000
	21. पराना (क्यूरी टीबा)	1,99,554	7,915,000
	22. सांता काटारिना (फ्लोरियानोपोलिस)	95,985	3,929,000
	23. रायो-ग्रांडे-डो सूल (पोर्टो एलेग्रे)	2,82,184	8,233,000
मध्य पश्चिमी		1,879,455	8,554,000

* 15 मार्च 1975 को गुम्रानाबारा राज्य को रायो-डी-जैनेरो से मिला दिया गया। राजधानी रायो-डी-जैनेरो बनायी गयी।

प्रदेश	राज्य तथा उनकी (राजधानियाँ)	क्षेत्रफल वर्ग कि. मी. में	जनसंख्या 1 सित. 1983 (अनुमानित)
	24. माटो ग्रासो (कुआयबा)	881,001	1,358,000
	*[1] 25. मोटा-ग्रासो-डो-सूल (कैम्पो ग्रांडे)	350,548	1,519,000
	26. गोइयास (गोयानिया)	642,092	4,243,000
	27. संघीय क्षेत्र (ब्रासीलिया)	5,814	1,434,000
	योग	8,511,965	129,660,000

□□□

*[1] 1 जनवरी 1979 माटो-ग्रासो राज्य को दो राज्यों में विभाजित कर दिया गया। माटोग्रासो की राजधानी कुयायबा तथा दूसरे राज्य माटो-ग्रासो-डो-सूर की राजधानी कैम्पो ग्रांडे बनायी गयी।

ब्राजिल : सामान्य स्वरूप

धरातलीय स्वरूप :

मोटे तौर पर सम्पूर्ण ब्राजिल दो भू-आकारों में विभक्त है। ये दोनों भू-आकार हैं—उत्तर, उत्तर-पश्चिम तथा अमेजन बेसिन के निचले भाग एवं पूर्व तथा दक्षिण-पूर्व के पठारी एवं उच्च प्रदेश। संरचना, स्वरूप व अन्य दृष्टियों से ये एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं। एक ही बात दोनों में समान है कि दोनों ही विस्तृत भू-क्षेत्र घेरे हुए हैं। उत्तर के मैदानी भागों ने देश का आधे से अधिक भू-क्षेत्र घेरा हुआ है। ब्राजिल के कुल भू-क्षेत्र का लगभग आधा भाग समुद्रतल से 650 फीट से नीचा है। केवल 4% भू-क्षेत्र की ऊँचाई 3000 फीट से ज्यादा है। यह भी उल्लेखनीय है कि ब्राजिल के अधिकांश पठारी भागों का ढ़ास भीतर की तरफ यानी महाद्वीप के मध्यवर्ती भाग की तरफ है। अधिकांश जलधाराएँ भी इसी दिशा में बहती हैं। केवल कुछ नदियाँ पठारी भाग को काटकर पूर्व यानी तट की ओर गई हैं। इन विशाल क्षेत्रों भू-आकारों के अतिरिक्त कुछ भाग पश्चिम में एण्डीज की शृंखलाओं एवं पूर्व में कगारों (एस्कार्पमेंटस) ने घेरा हुआ है।

लगभग 1 मिलियन वर्गमील में फैला ब्राजिल का पठार दुनिया के सर्वाधिक प्राचीन एवं स्थिर भू-खण्डों में से एक है। कई भूगर्भविदों का अनुमान है कि अमेजन बेसिन व उत्तर-पश्चिम में पाई जाने वाली तरशरी युगीन तलछट के नीचे भी वस्तुतः ब्राजिलियन पठार का ही विस्तार दबा हुआ है जो उत्तर में पुनः गायना के पठार के रूप में प्रकट हैं। संरचना की दृष्टि से भी उक्त दोनों पठारी भाग एक-दूसरे से बहुत मिलते-जुलते हैं। दोनों में आधारभूत रूप में प्राचीन रवेदार चट्टानें विद्यमान हैं। अमेजन बेसिन के उत्तर एवं दक्षिण में स्थित दोनों पठारी भागों की संरचना व चट्टानो क्रम बड़ा जटिल है। जहाँ-जहाँ रवेदार चट्टानें उघड़े रूप में हैं, धरातल गोल, सपाट पहाड़ियों के रूप में है। इनमें लाल रंग की चिकनी मिट्टी भी मिलती है। संक्षेप में दोनों पठारी भागों में केन्द्रीय भाग रवेदार कठोर चट्टानों का बना है जिसके ऊपर ज्वालामुखी मिश्रित पदार्थ, तलछट एवं मेसोजोइक युगीन जमावों के अवशेष मिलते हैं। मेसोजोइक युगीन जमावों में बाद की हुई

पर्वत निर्माणकारी घटनाओं के समय पड़े दबावों के फलस्वरूप कहीं-कहीं मोड़ भी पड़े हुए हैं।

ब्राजिलियन पठार के अधिकांश भाग में अधास्तर रूप में महाद्वीप की सबसे प्राचीन, सम्भवतः प्रीकैम्ब्रियन युगीन चट्टानों का विस्तार है। कालांतर में बहुत सा भाग नवीन युगों में जमी पर्तदार चट्टानों द्वारा आवरित कर लिया गया परन्तु अनावृति के कारण और विशेष रूप से नदियों की घाटियों में पुरानी कठोर रवेदार

चित्र–2

चट्टानें सुस्पष्ट हो गई हैं। इन उघड़ी हुई चट्टानों का सर्वाधिक विस्तार पठार के पूर्वी भाग में है। उत्तर-पूर्व में लगभग 400 मील तथा साओपोलो राज्य में 50

मील तक निरंतर इन चट्टानों को नग्न रूप में देखा जा सकता है। सांता काटारिना तथा रायोग्रांडे राज्यों में लावाकृत चट्टानों का विस्तार है। दक्षिणी रायो ग्रांडे में चट्टानें पुनः उघड़े रूप में हैं जो दक्षिण में यूरुग्वे तक उसी रूप में चली गई हैं। आगे चलकर इन पर तटवर्ती तलछट के जमाव मिलते हैं। पश्चिम में नयी परतदार चट्टानों ने इन आधारभूत चट्टानों को ढँका हुआ है।

केवल दक्षिण-पूर्व के तटवर्ती प्रदेशों में, जहाँ कि वलन (फोल्डिंग) एवं भ्रंशन (फॉल्टिंग) क्रियाएँ पर्याप्त हुई हैं, ही पठार एक पर्वतीय प्रदेश जैसा स्वरूप लिए है। परन्तु पर्वतीय स्वरूप का आभास वस्तुतः दरारों के अस्तित्व से है अन्यथा कहीं भी, न ब्राजिलियन पठार में और न गायना के पठार में, ऊँचाई 10,000 फीट से ज्यादा नहीं है। केवल एक दर्जन ही ऐसी चोटियाँ हैं जिनकी ऊँचाई 7000 फीट से ज्यादा है। पांच सर्वाधिक ऊँची चोटी इस प्रकार हैं—

नाम चोटी	ऊँचाई	राज्यों की स्थिति
पीको-डा-मांडेरिया	9462 फीट	मीनास गेरेइस-एस्पिरिटोसांतो
पिको-डो-क्रिस्टल	9383 फीट	मीनास-गेरेइस
पिको-डो-मोंटे-रोरायमा	9219 फीट	अमेजन्स वेनीज्वाला-ब्रिटिश
पिको-डो क्रूजेइरो	9177 फीट	मीनास गेरेइस-एस्पिरिटो सांतो
इटेशियाया	9145 फीट	रायो-डी-जेनेरो-मीनास गेरेइस

ग्रेनाइट एवं नीस जैसी पुरानी कठोर चट्टानों का स्पष्ट स्वरूप राय-डी-जैनीरों तथा एस्पिरिटो सांतो में फैली सुगरलोफ पहाड़ियों के रूप में है।

अपने अधिकांश भागों में ब्राजिलियन पठार अटलांटिक की तरफ तीव्र ढाल लिए हुए हैं। वस्तुतः ये ही शृंखलाबद्ध नीची श्रेणियाँ जैसी प्रतीत होती हैं। देश के धुर उत्तर-पूर्व में,बाहिया राज्य में, साल्वादर नगर के उत्तर में तट से भीतर की तरफ चढ़ाई धीमा है या दूसरे शब्दों में यहाँ पठार का तट प्रदेश की ओर ढाल धीमा है लेकिन साल्वादर से दक्षिण में रायो-ग्रांडे-डो-सूल तक तट के पीछे पठारी भाग दीवाल जैसा स्वरूप लिए हुए हैं। तट से देखने पर यह पर्वतीय शृंखला जैसा प्रतीत होता है। एक जगह पर तो इसे सेरा-डी-मार पर्वत के नाम ही से जाना जाता है। रायो-डी-जैनीरो एवं सांतोस के तट भाग के पीछे 'एस्कार्पमेंटस' की ऊँचाई 2600 फीट तक है। 18° से लेकर 30° दक्षिणी अक्षांश एस्कार्पमेंटस शृंखला केवल दो बड़ी नदियों—रायो डोके तथा रायो पारायबा, द्वारा काटी जाती है जिन्होंने गहरी घाटियाँ बनाई हैं। अपनी सम्पूर्ण लम्बाई के अधिकांश भागों में 'एस्कार्पमेंटस' सीढ़ीदार स्वरूप लिए हुए हैं। दूसरे शब्दों में, ऊँची-नीची कई समानांतर 'एस्कार्पमेंट' शृंखलाएँ स्थित हैं।

ब्राजिलियन पठार से ज्यादातर नदियाँ तीव्र ढ़ाल वाले सीमावर्ती प्रदेशों में प्रपात बनाती हुई उतरती हैं। इनमें से ज्यादातर नदियों का उद्गम पठारी प्रदेश के दक्षिणी एवं दक्षिणी-पूर्वी उच्च प्रदेश में हैं। कुछ नदियाँ 'एस्कापमेंटस' से ही निकलती हैं। दक्षिण-पूर्व की अनेक नदियां पराना-जल प्रवाह में मिलती हैं। साम्रो-पोलो, पराना तथा सांता-काटारिना आदि राज्यो मे कई छोटी-छोटी नदियां पूर्व से आकर पराना में मिलती है। इसी प्रकार रायो-यूरूग्वे अपने उद्गम के स्थान से पहले पश्चिम की ओर बह कर फिर दक्षिण की ओर मुड़ती है। दक्षिण की तरफ यह मोड़ अर्जेन्टाइना की सीमा के निकट है। पराना नदी पठारी भाग के कठोर चट्टानो वाले ऊँचे भाग को परागुए की उत्तरी-पूर्वी सीमा के निकट छोड़ती है और छोड़ते समय विशाल गुआयरा प्रपात (जिन्हे ब्राजिल में साल्टो डॅस-सॅटे-क्वैडॅस) बनाती है। यहाँ से आगे अर्जेन्टाइना के पोसाडास नगर तक पराना नदी पठार में काट कर बनाई गई गहरी-घाटी में होकर बहती है। यूरूग्वे नदी भी साल्टो (मॅरूग्वे) तक कई जल प्रपात बनाती हुई चलती है। इस प्रकार ब्राजिलियन पठार के दक्षिणी भाग में अधिकांश नदियाँ गहरी घाटियाँ, झरने बनाती हुई ला-प्लाटा में जा मिलती हैं।

ठीक यही स्वरूप उत्तर की ओर बहने वाली नदियों का है। साम्रो फ्रांसिस्को नदी जो रायो-डी-जैनीरो के उत्तर से निकलती है, तट के सामानांतर लगभग 1000 मील तक बहने के बाद बाहिया राज्य के उत्तरी हिस्से में पूर्व की तरफ मुड़ कर पीलो एफोन्सो प्रपात में होकर अटलांटिक महासागर में मिलती है। अमेजन की बड़ी-बड़ी सहायक जैसे टोकांटिन्स-अरागुयाया, जिंगू या टापाजोज आदि सभी मध्यवर्ती भाग से निकल कर उत्तर की ओर प्रवाहित होकर झरनों से गुजरती हुई अमेजन में मिलती हैं। यही कारण है कि ये नदियाँ नाव्य नहीं हैं यद्यपि स्वयं अमेजन काफी भीतर तक नाव्य है। माडेरिया नदी जब ब्राजील के पठार के पश्चिमी भाग को पार करती है तो उसे सैकड़ों प्रपातों में होकर गुजरना पड़ता है।

अमेजन बेसिन का विशाल निचला भाग ब्राजिल के पठार के ठीक विपरीत स्वरूप प्रस्तुत करता है। लगभग 1,750,000 वर्ग मील में फैले, घने जंगलों से ढ़के इस भाग को कभी-कभी केवल सेल्वा (उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन) के नाम से भी पुकारा जाता है। अटलांटिक से लेकर एंडीज तक अमेजन बेसिन का विस्तार लगभग 2000 मील तथा उत्तर-दक्षिण विस्तार पश्चिम में 800 मील से लेकर पूर्व में 200 मील तक है। भूगर्भविदों का ऐसा अनुमान है कि यह भाग टरशरी युग तक समुद्रगत था। टरशरी युग से पहले इस निचले भाग का पश्चिमी हिस्सा प्रशांत महासागर का विस्तार भाग था तथा प्रशांत एवं अटलांटिक एक सॅकरे जलाशय द्वारा जुड़े हुए थे। यह जलाशय सम्भवतः गायना एवं ब्राजिल के पठारों

में समस्त देश ऊंचे तापक्रमों युक्त रहता है। स्थानीय अन्तर अवश्य है। भीतरी भागों में कहीं-कहीं 85° फ° ज्यादातर जनवरी का औसत होता है तो धुर दक्षिणी भाग में 80° फ° सेकुछ नीचे तापक्रम होते हैं। इन दिनों यह उल्लेखनीय है कि तापक्रम अमेजन बेसिन में सबसे ऊंचे नहीं वरन् देश के उत्तरी-पूर्वी भाग में होते हैं जहाँ कि कभी-कभी 100° फ° से भी ज्यादा रिकार्ड किए गए हैं।
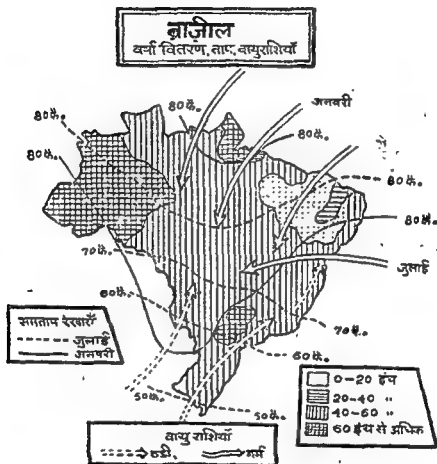
चित्र–3

साधारणतः दैनिक एवं वार्षिक तापांतर जलाशयों सेदूरी के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं। अटलांटिक तट या अमेजन से जैसे-जैसे भीतर की ओर जाते हैं तापांतर ज्यादा होते जाते हैं। यथा देश में सबसे कम तापांतर अमेजन बेसिन एव सर्वाधिक पश्चिम में स्थित पर्वतक्रमों के चरण प्रदेशों में होते है। अमेजन बेसिन में भी अटलांटिक तट के पास जो स्थान हैं उनमें तो वर्ष भर तापक्रम लगभग समान ही

के मध्य स्थित था। अल्पाइन पर्वत निर्माणकारी घटना के फलस्वरूप जब एण्डीज उठे तो यह पश्चिमी खाड़ी एवं जलाशय एक भीतरी समुद्र के रूप में रह गए जिसे बाद में हुए भरावों ने वर्तमान स्वरूप प्रदान किया। इस भराव क्रिया में अमेजन तथा उसकी सहायक नदियो का प्रधान सहयोग रहा जिन्होंने एण्डीज व उत्तर, दक्षिण में स्थित पठारी भागों को काट-काट कर के इस धसाव को भरा।

टरशरी युगीन तलछट, जो सैकड़ों-हजारों फीट की मोटाई में जमा है, को नदियों ने काट-काट कर अपनी जलधारा से इधर-उधर क्रमशः सीढ़ीनुमा घाटियों का निर्माण किया है। फलतः इन नदियों के बाढ़कृत मैदानों का विस्तार बहुत कम सम्पूर्ण अमेजन जल-प्रवाह क्षेत्र के केवल 1% या 2% भाग में हैं। अमेजन जल प्रवाह-क्षेत्र (कैचमेंट एरिया ऑफ अमेजन सिस्टम) का विस्तार लगभग 2,053,000 वर्गमील में है जो वस्तुतः टरशरी युगीन भू-सनति के विस्तार को प्रतिबिम्बित करता है। अमेजन बेसिन में दुनिया के सर्वाधिक घने और पूर्णतः विकसित उष्ण कटिबंधीय सदाबहारीय वन मिलते हैं। यत्र-तत्र सवाना घास भी दिखाई देती है जो इस घने जगलों के समुद्र में द्वीप जैसा स्वरूप लिए प्रतीत होती है।

अगर धरातल सम्बन्धी बाधाएँ नहीं तो यह 2 मिलियन वर्गमील भूमि में विस्तृत विशाल भू-खण्ड ब्राजिल के लिए कृषि विकास की दृष्टि से वरदान स्वरूप है जिसमें सब प्रकार की उष्ण कटिबंधीय फसलें पैदा की जा सकती है। जलधाराओं के साथ-साथ फैले बाढ़कृत दलदलीय भाग (जिन्हें पराना कहते हैं) निस्संदेह एक बड़ी बाधा है जिसे सुखाने के लिए एक अत्यंत सुव्यवस्थित जल निकास व्यवस्था की आवश्यकता है। बाढ़कृत भागों से ऊपर, जहाँ बाढ़ का पानी पहुँच ही नहीं पाता ऊँचे मैदान तथा कटे-फटे उच्च प्रदेशों के रूप में है जिन्हें स्थानीय भाषा में 'टेराफर्मा' कहा जाता है। बाढ़कृत भागों का विस्तार स्वाभाविक रूप से अमेजन और उसकी सहायक नदियों की घाटियों के सहारे-सहारे है। ये उपजाऊ घाटियाँ चौड़ाई में 10 से लेकर 100 मील तक है। इन्होंने अमेजन बेसिन के कुल क्षेत्रफल का लगभग 10% भू-भाग घेरा हुआ है।

जलवायु दशाएँ :

दक्षिण के तीन राज्यों (पराना, सांता काटारिना एवं रायो-ग्रांडे-डो-सूल) के उच्च प्रदेशों को छोड़कर ब्राजिल का समस्त भू-क्षेत्र उष्ण कटिबंध जलवायु दशाओं युक्त है। वार्षिक औसत तापक्रम 68° फै. से ज्यादा तथा वार्षिक तापांतर बहुत कम होता हैं। अमेजन बेसिन में हो कर विषवत रेखा तथा दक्षिणी भागों में हो कर मकर रेखा गुजरती है। अतः साल भर ऊँचे तापक्रम एवं आर्द्रता यहाँ की जलवायु के प्रमुख लक्षण हैं। जनवरी में 80° फै० की समताप रेखा देश की पूर्वी-पश्चिमी तथा उत्तरी सीमाओं के साथ-साथ चलती है। इस प्रकार गर्मियों के दिनों

में समस्त देश ऊँचे तापक्रमों युक्त रहता है। स्थानीय अन्तर अवश्य है। भीतरी भागों में कहीं-कहीं 85° फ़ै० ज्यादातर जनवरी का औसत होता है तो धुर दक्षिणी भाग में 80° फ़ै० सेकुछ नीचे तापक्रम होते हैं। इन दिनों यह उल्लेखनीय है कि तापक्रम अमेजन वेसिन में सबसे ऊँचे नहीं वरन् देश के उत्तरी-पूर्वी भाग में होते हैं जहाँ कि कभी-कभी 100° फ़ै० से भी ज्यादा रिकार्ड किए गए हैं।

चित्र–3

साधारणतः दैनिक एवं वार्षिक तापांतर जलाशयों सेदूरी के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं। अटलांटिक तट या अमेजन से जैसे-जैसे भीतर की ओर जाते हैं तापांतर ज्यादा होते जाते है। यथा देश में सबसे कम तापांतर अमेजन बेसिन एवं सर्वाधिक पश्चिम में स्थित पर्वतक्रमों के चरण प्रदेशों में होते है। अमेजन बेसिन में भी अटलांटिक तट के पास जो स्थान हैं उनमें तो वर्ष भर तापक्रम लगभग समान ही

रहता है। तापांतर नगण्य होता है। मानौस के आस पास वर्ष भर औसत 80° फं. रहता है। इस प्रकार अमेजन बेसिन या ब्राजिल के अधिकांश भागों में तापक्रम नहीं वरन् वर्षा की मात्रा के आधार पर जलवायु के उपविभाग निर्धारित किए जा सकते हैं। जाड़ों के दिनों यानी जुलाई के महीने में भी उत्तरी भागों में लगभग उतना ही तापक्रम (80° फं०) रहता है। केवल दक्षिणी भागों में ही कुछ नीचे यानी 55°-60° फं० तक तापक्रम हो जाते हैं। तटवर्ती भागों में तापक्रम प्रायः सम रहते हैं।

वर्षा अधिकांशतः संवाहनिक प्रकार की होती है। वर्षा की सर्वाधिक मात्रा (80 इंच से ज्यादा) अमेजन बेसिन के पश्चिमी भागों तथा अमेजन के मुहानेवर्ती प्रदेशों में होती है। सबसे कम वर्षा (20 इंच) पठार के पूर्वी भागों परनाम्बुको, सर्गीपे, रायोग्रांडे, कीरा तथा पारायबा आदि राज्यों में होती है। अन्य भागों में औसत 40 इंच से 60 इंच तक रहता है। वर्षा का अधिकांश भाग सितम्बर के माह में आता है।

अमेजन बेसिन के 'सैल्वा' प्रदेश की अपनी विशिष्ट प्रकार की जलवायु दशाएँ हैं जिसका प्रमुख लक्षण वर्ष भर ऊंचे तापक्रम तथा वर्ष भर वर्षा होना है। वर्षा की मात्रा इस सम्भाग में पूर्व से पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है। 68° फं० से कम तथा 85° फं० से ज्यादा तापक्रम कभी-कभी ही होते हैं। बेसिन के पूर्वी भाग में वर्ष के दो समय ज्यादा वर्षा होती है जबकि पारा के आस-पास दिसम्बर से लेकर मई के महीने में ही ज्यादातर वर्षा होती है। विषवुत रैखिक इस सदा-बहार जंगली प्रदेश की जलवायु का प्रमुख लक्षण है कि दोपहर बाद लगभग रोज वर्षा होती है। इस वर्षा का स्वरूप तूफानी होता है। दक्षिण-पूर्व में जहाँ तट के सहारे-सहारे पठारी भाग के 'एस्कार्टमेंटस' एकदम ऊंचे हो गए हैं, वर्षा तेज होती है।

प्राकृतिक वनस्पति :

जलवायु, मिट्टी एवं धरातलीय स्वरूप की भिन्नता ब्राजील की प्राकृतिक वनस्पति में प्रतिबिम्बित है। अमेजन बेसिन साल्वादर के दक्षिण में तटवर्ती भागों में भारी वर्षा के फलस्वरूप उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन (सैल्वा) सघन रूप में पाए जाते हैं। अमेजन बेसिन इस प्रकार के वनों का संसार का सबसे बड़ा भंडार है। 'सैल्वा' वनों में सदाबहार चौड़ी पत्ती वाले व अन्य प्रकार के वृक्ष हैं। प्राकृतिक वनस्पति की विविधता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि कुछ भागों का गहन अध्ययन करने के बाद यह पाया गया कि अमेजन बेसिन में प्रति एक वर्गमील भू-भाग में वृक्षों की 3000 किस्में तक विद्यमान हैं।[2] वृक्ष

2. Preston, E. J.—Latin America third edi., p. 394.

यहाँ इतने सघन हैं कि उनमें सूर्य का प्रकाश तक नहीं पहुँच पाता। परिणाम यह हुआ कि नदियों के किनारों के सहारे-सहारे पट्टी को छोड़ अन्य भागों में नीचे किसी प्रकार की वनस्पति नहीं पनप पाई है। मिट्टी इन जंगलों की कमजोर है।

उन भागों में जहाँ वर्षा की मात्रा तथा तापक्रम इतने ज्यादा नहीं है जितने कि सेल्वा प्रदेश में वहाँ अर्द्ध पतझड़ किस्म के वृक्ष हैं। लेकिन इनमें भी भारी विविधता है। जहाँ वर्षा ज्यादा है, धरातलीय जल-दशाएँ अनुकूल है जंगलों का स्वरूप लगभग सदाबहार वनों जैसा हो गया है। बहुत कम वृक्ष ही पत्तियाँ गिराते हैं। इसके विपरीत जिन भागों में पानी पर्याप्त नहीं कुछ ही ऐसे वृक्ष हैं जो वर्ष भर अपनी पत्तियाँ रखते हों। प्रथम किस्म के अर्द्ध-पर्णपाती वनों को ब्राजिल में माटा-डे-प्राइमेरिया-क्लास (प्रथम श्रेणी) तथा दूसरी किस्म के अर्द्ध पर्णपाती वनों को माटा-सेका (शुष्क जंगल) के नाम से जाना जाता है। दक्षिण-पूर्व एवं साओ-पोलो के जंगल जो पराना की घाटी तक फैले हैं प्रथम श्रेणी में रखे जा सकते हैं।

अमेजन बेसिन के दक्षिण में यानी भीतरी ब्राजील में वन तथा घास प्रदेशों (माटा तथा कैम्पों) का मिश्रित स्वरूप मिलता है। सम्पूर्ण क्षेत्र का अभी सर्वेक्षण और अध्ययन नही हो पाया है अतः ठीक-ठीक वितरण प्रदर्शित करना कठिन है। फिर भी, साधारणतया जहाँ वर्षा ज्यादा है या नदियों के किनारे अर्द्ध-पर्णपाती प्रकार के जंगलों का बाहुल्य है। उत्तर पूर्व के भीतरी शुष्क प्रदेशों में, जहाँ वर्षा कम होती है, प्रायः सूखा हो जाती है, कटीली झाड़ियाँ और इस प्रकार की वन-स्पति मिलती है जो सूखा को सहन कर सके। इस प्रकार की वनस्पति को ब्राजिल में 'काटिंगा' कहा जाता है।

साओपोलो राज्य के दक्षिणी भाग में दो भिन्न प्रकार की वनस्पति मिलती है जो वस्तुतः उष्ण कटिबंध से सम्बन्धित न होकर मध्य अक्षांशों से सम्बन्धित है। ये हैं—प्रथम ओरोकारिया या पराना-पाइन- फौरेस्ट तथा दूसरी प्रेयरीज। ओरो-कारिया या पराना-पाइन के जंगल प्रायः वहाँ मिलते हैं जहाँ नियमित रूप से पाला पड़ता है। इन जंगलों में पाइन तथा चौड़ी पत्ती वाले वृक्षों का मिश्रित स्वरूप होता है। घाटियों में लम्बी घास (प्रेयरीज) मिलती है जो आगे युरुग्वे में चलती गई है। ऐतिहासिक समयों से आदिवासी इंडियन लोग अच्छी घास की लालसा में इन घासों में आग लगा देते थे जो बड़ा भयानक दृश्य उपस्थित करती थी।

कृषि :

ब्राजिल एक कृषि प्रधान देश है। यद्यपि केवल 35% जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। ब्राजिल की अर्जित विदेशी मुद्रा में से 89% भाग कृषि-उत्पादनों के निर्यात से प्राप्त होता है। उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय स्थिति, ऊँचे तापक्रम, पर्याप्त वर्षा, नदियों की घाटियाँ आदि ऐसे प्राकृतिक तत्व हैं जिनकी अनुकूलता अवस्थाओं ने ब्राजिल को कई कृषि उपजों में विश्व में अग्रणी कर दिया

है। यहाँ की अधिकांश कृषि फसलें उष्ण कटिबंधीय है जिनमें कोको, काफी, कपास, जूट, मक्का, गन्ना व संतरा आदि उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त आलू, मकरकद, चावल, सीसल, सोयाबीन तथा गेहूँ भी पर्याप्त मात्रा में पैदा किए जाते हैं। यह सच है कि ब्राजिल खनिज सम्पत्ति में भी धनी है लेकिन निकट भविष्य में भी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि ही यहाँ के आर्थिक ढाँचे का मुख्य आधार रहेगी। वस्तुतः यहाँ का भौगोलिक वातावरण कृषि के विकास के लिए ही सर्वोत्तम है।

अगर ब्राजिल के इतिहास को उठा कर देखा जाए तो स्पष्ट होगा कि कृषि के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ ही यहाँ यूरोप-वासियों को खींच कर लाई। 16वीं शताब्दी में पुर्तगाली लोग यहाँ कृषि विकास की आशा में आए। 1532 में साम्रोविसेंटे के आस-पास प्रथम बार गन्ने की खेती की गई। कुछ दिन तक उत्पादन साधारण रहा परन्तु बाद में विशेषकर 16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में गन्ने का उत्पादन भारी मात्रा में होने लगा। उत्तर-पूर्व के राज्यों विशेषकर साल्वादर के आसपास के क्षेत्र में गन्ने की खेती बड़ी तेजी से चमकी। वर्तमान में वैसे तो गन्ना प्रायः सभी राज्यों में पैदा किया जाता है परन्तु उत्पादन की दृष्टि से मध्य-पूर्व में स्थित साम्रोपोलो, मीनास-गैरेइस तथा रायो-डी-जैनीरो आदि राज्य प्रमुख हैं जो देश के कुल उत्पादन का 45-50% भाग प्रस्तुत करते हैं। पहले उत्तर-पूर्व में स्थित परनाम्बुको राज्य गन्ना के उत्पादन में प्रथम था जिसे अब साम्रोपोल ने पीछे छोड़ दिया है। घनत्व की दृष्टि से पाँच क्षेत्र गन्ना उत्पादन में महत्वपूर्ण हैं। 1. मीनास-गैरेइस राज्य के पठार का पूर्वी भाग 2. रायो-डी-जैनीरो के उत्तर एवं दक्षिण में स्थित तटवर्ती प्रदेश 3. परनाम्बुको तथा अलागोआस के उत्तरी-पूर्वी तट प्रदेश 4. साम्रोपोलो राज्य का पठारी भाग 5. पारायवा घाटी के मध्य एवं ऊपरी भाग। 1982 में ब्राजिल में 6 मिलियन टन शक्कर उत्पादित की गई जिसका लगभग एक चौथाई भाग निर्यात कर दिया गया है। वैज्ञानिक विधियों के अभाव में यहाँ गन्ने का प्रति एकड़ उत्पादन कम है। यहाँ का प्रति एकड़ केवल 44 टन है जबकि मध्य अमेरिका के गन्ना उत्पादक देशों में यह मात्रा 120 टन तक है।

ब्राजिल दुनिया का सर्वाधिक कॉफी पैदा करने वाला देश है। कॉफी के प्लांटस सर्वप्रथम रायो-डी-जैनीरो के आसपास लगाए गए। सांतोस से लेकर अमेजन तक के तट भाग के कुछ अन्य जगह भी परीक्षण किए गए। 19वी शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश में कॉफी का केन्द्रीकरण परायवा घाटी में हो चुका था रायो-डी-जैनीरो के पृष्ठ प्रदेश में स्थित इस घाटी से ही कॉफी की खेती पश्चिम की तरफ साम्रोपोलो राज्य में स्थानांतरित हुई। स्थानांतरण का यह सिलसिला विशेष रूप से 1850 के बाद काफी तीव्र गति से चला। यह केन्द्रीयकरण इतना सघन हुआ कि 18:0 के बाद जितने भी यूरोपियन ब्राजिल में आए प्रायः सभी साम्रोपोलो के

कॉफी प्रदेश में ही बसे। साओपोलो नगर का बड़ी तीव्रता से विकास हुआ और आज यह लैटिन अमेरिका का एक बहुत बड़ा औद्योगिक नगर है।

वर्तमान में ब्राजिल की कॉफी का अधिकांश उत्पादन साओपोलो, पराना, एस्पिरिटोसांटो तथा मीनाइस-गैरेइस आदि राज्यों से उपलब्ध होता है। यहां बड़े-बड़े फार्म्स हैं जिनमें एक-एक में 100,000 कॉफी के वृक्ष होना साधारण बात हैं। 1982 में यहाँ 1,857,462 एकड़ भू-क्षेत्र संलग्न था जिससे 2,006,708 मैट्रिक टन उत्पादन हुआ। इस वर्ष 888,020 मैट्रिक टन कॉफी निर्यात की गई। उल्लेखनीय है कि 1962 और 1966 के बीच लगभग 1650 मिलियन कॉफी के वृक्ष काट दिए गए।

ब्राजिल की प्राकृतिक फसलों में रबर का महत्वपूर्ण स्थान है। रबर के उत्पादन में ब्राजिल विश्व के अग्रणी देशों में से एक है। 1982 में रबर का उत्पादन 260,937 (प्राकृतिक तथा कृत्रिम) मैट्रिक टन तथा 1965 में 38,458 मैट्रिक टन था। इनकी तुलना 1912 की उत्पादन मात्रा (42,510 मैट्रिक टन) से की जा सकती है जबकि ब्राजिल का सर्वाधिक उत्पादन हुआ। रबर के उपयोग के लिए ही देश में टायर बनाने के कई कारखाने स्थापित किए गए हैं। 1982 में यहाँ के कारखानों ने 48·2 मिलियन टायर उत्पादित किए। 1940 में टायरों का उत्पादन केवल 421,765 था। अमेजन बेसिन में स्थित एक्रे अमेजन तथा पारा राज्य प्रधान रबर उत्पादक प्रदेश हैं। अमेजन बेसिन में रबर उत्पादक वृक्षों में 'हैविया प्लांट, की अधिकता है। जिससे 'गोमा' नामक श्रेष्ठ किस्म की रबर का पौधा अमेजन बेसिन की भूमध्य रेखिक गर्म-आर्द्र जलवायु में प्राकृतिक रूप से पैदा होता है। वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार अमेजन बेसिन रबर प्रदान करने वाले वृक्षों की श्रेष्ठ किस्मों का घर है। रबर उत्पादन उद्योग ब्राजिल में अभी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में ही है जिसमें तुलनात्मक रूप में बहुत कम पैसा लगा है। अभी भी बहुत से ऐसे क्षेत्र पड़े हैं जो भौगोलिक दृष्टि से तो रबर उत्पादन के लिए अत्यन्त उपयुक्त हैं परन्तु उनमें प्रयत्न नहीं किए गए है।

व्यवसायिक फसलों में कपास का भी महत्वपूर्ण स्थान है। कपास का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र मध्य पूर्व साओपोलो राज्य है जहाँ अच्छी किस्म की कपास पैदा की जाती है। घटिया किस्म की कपास उत्तर-पूर्व के राज्यों आलागोआस, परनाम्बुको तथा रायो-ग्रांडे-डो-नोर्टे आदि के तटवर्ती भागों में पैदा की जाती है। कपास की खेती का विस्तार 3,902,238 हैक्टेर भूमि में है जिससे 1982 में 1,935,091 मैट्रिक टन कपास उपलब्ध हुई।

काफी की तरह कोको के उत्पादन में भी ब्राजिल का महत्वपूर्ण स्थान है। अधिकांश उत्पादन निर्यात किया जाता है। 1943 में कोको-व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया था परन्तु 1952 में पुनः उसे निजी क्षेत्र में स्थानांतरित कर

दिया गया क्योंकि राष्ट्रीयकरण के बावजूद उत्पादन व निर्यात में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई। बाहिया राज्य ब्राजिल की 90% कोको प्रस्तुत करता है। यहाँ साल में कोको की दो फसलें ली जाती हैं। 1982 में कोको की खेती का विस्तार 529,208 हैक्टेयर भूमि में था जिससे 349,748 मैट्रिक टन उत्पादन उपलब्ध हुआ। कुल उत्पादन का लगभग आधा भाग अकेला संयुक्त राज्य अमेरिका आयात के रूप में ले लेता है।

अन्य फसलों में मक्का, चावल, तम्बाकू, आलू तथा विभिन्न प्रकार के फल उल्लेखनीय हैं। मक्का के उत्पादन में ब्राजिल का संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद दूसरा स्थान है। 1982 में मक्का की उत्पादन मात्रा 21·8 मिलियन टन थी जो अर्जेन्टाइना के उत्पादन से $2\frac{1}{3}$ गुने से अधिक थी। ब्राजिल की अधिकांश मक्का मध्यवर्ती राज्यों (जिसमें साओपोलो प्रमुख उत्पादक है) रायो-ग्रांडे-डो-सूल एवं संकरी पूर्वी तटवर्ती पट्टी में पैदा की जाती है। उत्पादन का अधिकांश भाग देश में ही खप जाता है।

चावल का विकास ब्राजिल में अपेक्षाकृत नवीन समय में ही हुआ है। साओपोलो राज्य का दक्षिणी भाग विशेषकर इग्वायी जिला तथा परायबा घाटी चावल उत्पादन के प्रधान क्षेत्र हैं। पिछले दशकों में उत्तर-पूर्व के राज्यों में भी चावल की खेती होने लगी है। अच्छी उपजों के लिए चावल उत्पादन की जापानी विधियों का प्रयोग किया जा रहा है। वार्षिक उत्पादन लगभग 10 मिलियन टन है। व्यावसायिक फसल के रूप में तम्बाकू का महत्व एवं उत्पादन तेजी से बढ़ रहा है। इसमें संघीय सरकार की भी रुचि है क्योंकि यह दुर्लभ विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाली फसल है। बाहिया, रायो-ग्रांडे-डो-सूल एवं मीनास-जैरेइस प्रधान तम्बाकू उत्पादक राज्य हैं। 1982 में ब्राजिल ने 421,532 टन तम्बाकू उत्पादित की जिसमें से 144,926 टन निर्यात कर दी गई।

ब्राजिल में रेशे के लिए जूट तथा उसके स्थान पर विकसित की गई रेशा वाली फसल कौरोआ दोनों ही पैदा की जाती हैं। कौरोआ अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही है। उत्पादन लगभग 2000 टन होता है। जूट की खेती उत्तर-पूर्व के आर्द्र भागों में की जाती है। वार्षिक उत्पादन 15,000 मैट्रिक टन है। ग्रामोफोन रिकार्डस बनाने के लिए जिस चपड़ी का प्रयोग किया जाता है वह 'कार्नोबा चपड़ी' अमेजन बेसिन से उपलब्ध है। ब्राजिल इसका प्रधान स्रोत है। 1982 में यहाँ 8,479,738 टन चपड़ी निर्यात की गई।

ब्राजिल में प्रधान कृषि उत्पादन 1982

फसल	उत्पादन (मैट्रिक टनों में)	फसल	उत्पादन (मैट्रिक टनों में)
कोको	349,748	आलू	1,911,289
कॉफी	2,006,708	चावल	8,260,547
कपास	1,935,091	सोया	12,834,624
जूट	14,222	गन्ना	184,219,067
मक्का	21,865,4-9	गेहूँ	1,819,504
		गमरा	11,429,713

खनिज सम्पत्ति

फ्रांसीसी भूगर्भविद् गोरसैक्स ने लिखा कि "ब्राजिल के मीनास गैरेइस राज्य का वक्षःस्थल लौह तथा हृदय सोने का बना है।" निस्संदेह ब्राजिल खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से बड़ा धनी है पर इसके बावजूद भी वहाँ भारी औद्योगिक विकास नही हो पाया। इसके कई कारण हैं। उनमें सबसे महत्वपूर्ण यह है कि यहाँ खनिज पदार्थों के उपयुक्त जोड़ों (मैच) का अभाव है यथा, मीनाइस गैरेइस राज्य में कई महत्वपूर्ण धातु खनिज हैं तो वहाँ शक्ति संसाधन नहीं हैं अतः उन्हें बड़े पैमाने पर गलाने की समस्या है। इसके अतिरिक्त एक ओर जहाँ भौगोलिक वातावरण की प्रतिकूलता है दूसरी ओर औद्योगिक विकास की कमी है। कोयला तथा पैट्रोल की कमी यहाँ के औद्योगिक विकास में सदा से ही महत्वपूर्ण बाधा रही जिसकी बहुत कुछ पूर्ति जल विद्युत एवं नवीन सर्वेक्षणों से प्राप्त सीमित कोयला-भडारों से की जाती है। मैंगनीज, सोना, लोहा, क्रोमियम, जिर्कोनियम, ग्रेफाइट, नमक, बैरीलियम, अभ्रक तथा एस्बैस्टस यहाँ के प्रधान खनिज हैं। बाहिया तथा रायो-डी-जैनीरो के तट प्रदेशों की रेता में मोना आइट निकलता है जो थोरियम का स्रोत है।

कृषि सम्भावनाओं के अतिरिक्त यूरोपियन प्रवासियों को आकर्षित करने में कीमती खनिजों का भी महत्वपूर्ण सहयोग रहा है।[3] 18वीं शताब्दी में मीनास गैरेइस तथा साम्रोपोलो राज्य की समृद्धि के प्रधान आधार सोना तथा हीरा थे। उस समय यह देश विश्व का 44% सोना प्रस्तुत करता था। सोने की खानें सभी राज्यों में बिखरे रूप में हैं परन्तु सर्वाधिक महत्वपूर्ण खानें मीनास-गैरेइस राज्य में स्थित हैं। 1981 में सोने तथा चाँदी का उत्पादन क्रमशः 17,726 कि. ग्राम एवं 6,726 कि. ग्राम था। ब्राजिल में उच्च कोटि का रवेदार क्वार्टज दुनिया में

3. Quoted from Preston, E. J.—The Latin America, Third edi. p. 396.

सर्वाधिक मात्रा में निकलता है। इस अयस से औद्योगिक कार्यों में प्रयुक्त होने वाला हीरा निकाला जाता है। हीरे की प्रमुख खानें गारो, मोगोल, छापादा, डायमांटाना बागागैम आदि क्षेत्रों में विद्यमान हैं। गोइयास तथा माटोग्रासो राज्य उत्पादन मात्रा की दृष्टि से अग्रणी है।

मैंगनीज व लोह अयस की खानें पिछले दशक में ही विकसित हुई हैं। मैंगनीज के उत्पादन में ब्राजिल का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान है। उत्पादन की दृष्टि से यह पाँचवा स्थान लिए है। यहाँ के अयस (ग्रोर) में धातु प्रतिशत पर्याप्त है। सुरक्षित भंडार विशाल है। अकेले मामापा प्रदेश में सुरक्षित मात्रा लगभग 11 मिलियन टन आँकी जाती है। पिछले कई वर्षों से ब्राजिल यूरोपियन देशों के लिए अच्छे मैंगनीज का स्रोत रहा है। 1981 में यहाँ 3,165,744 मैट्रिक टन मैंगनीज उत्पादित किया गया। लोह-अयस का प्रधान स्रोत मीनास-गैरेइस राज्य में इताबीरा नामक स्थान पर स्थित कोए की पहाड़ी है। ऐसा माना जाता है कि पूरी तरह खुदाई प्रारम्भ हो जाने पर कोऐ की श्रेणी दुनिया के प्रमुख लोह-उत्पादक केन्द्रों में से एक होगी। यहाँ का सुरक्षित भण्डार दुनिया के समृद्धतम भडारों में से एक माना जाता है जहाँ सुरक्षित राशि लगभग 35,000 मिलियन टन है। इसमें से आधी अयस तो श्रेष्ठ किस्म की, स्वीडिश उत्पादन के स्तर की मानी जाती है जिसमें धातु प्रतिशत लगभग 68·5 है। सिलीका तथा फोस्फोरस की मात्रा इसमे बहुत कम है। 1981 में इताबीरा की खान वैले-डो-रायो-डोसे ने 122,709,441 मैट्रिक टन लोह-अयस उत्पादित की। ब्राजिल सरकार इताबीरा की खानों में और ज्यादा विस्तार का इरादा रखती है। ब्राजिल के सबसे बड़े लोह-इस्पात सम्थान वोल्टा रैडोंडा की अयस आवश्यकता की पूर्ति इताबीरा की खानों से ही होती है।

ब्राजिल दुनिया का एक मात्र देश है जहाँ व्यापार योग्य मात्रा में उच्च श्रेणी का क्वार्टज मिलता है। 1981 में यहाँ क्वार्टज का उत्पादन 144,707 टन था। 1982 में यहाँ 7,349 टन क्वार्टज निर्यात किया गया। पश्चिमी देशों में यह क्रोम का सबसे बड़ा उत्पादक है। क्रोम के यहाँ लगभग 5 मिलियन टन के सुरक्षित भडार है। उत्पादन 1981 में 926,413 टन था। बेरीलियम का भी ब्राजिल दुनिया में सबसे बड़ा उत्पादक है 1981 में 158 टन बेरीलियम उत्पादन था। इसके अतिरिक्त ग्रेफाइट (1981 में 464,089 टन) टिटैनियम अयस (1981 में 21,800 टन) एवं मैग्नेसाइट (1981 में 618,251 टन) के उत्पादन में भी ब्राजिल प्रथम स्थान पर है। रायो-डी-जेनेरो, एस्पिरिटो सांतो एवं बाहिया राज्यों के तटवर्ती मैदानी भागों में मोनाजाइट रेत मिलती है जो थोरियम की स्रोत है। ऐसा अनुमान है कि ब्राजिल में मोनाजाइट के 27 मि० टन के सुरक्षित भंडार है। 1981 में उत्पादन 2,660 टन था। टंगस्टन का उत्पादन यहाँ 1981 में 538,354

टन था। ब्राजिल में सीसा तथा एस्बेस्टोस भी मिलता है जिनका उत्पादन 1981 में क्रमशः 334,450 टन तथा 992,766 टन था।

भूगर्भविदों के अनुसार ब्राजिल में लगभग 398 मिलियन टन कोयला दबा पड़ा है[4] जिसका अधिकांश भाग रायो ग्रांडे-डो-सूल, सांता काटारिना, पराना एवं साम्रोपोलो आदि राज्यों में है। परन्तु इन भंडारों की खुदाई बड़ी महँगी पड़ती है। दूसरे कोयले की किस्म अच्छी नहीं है। अतः उत्पादन बहुत नगण्य है। 1981 में कोयले का उत्पादन 17 मिलियन टन था। ब्राजिल अपनी आवश्यकता का केवल 25 प्रतिशत तेल ही देश के कूओं से उपलब्ध कर पाता है। शेष मात्रा उसे आयात करनी पड़ती है। द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व केवल बाहिया ही ब्राजिल का एक मात्र तेल उत्पादक क्षेत्र था बाद में सर्वेक्षण हुआ जिसके फलस्वरूप बाहिया के तटवर्ती क्षेत्र, अमेजन बेसिन के पश्चिमी भाग तथा पराना बेसिन में भी तेल क्षेत्र मिले। इनमें कूएँ खोदे जा चुके हैं। तेल निकालना प्रारम्भ हो गया है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि तटवर्ती पट्टी में विश्व की लगभग 6% सुरक्षित राशि विद्यमान है। ब्राजिल का तेल उद्योग विकासशील है। इस उद्योग के महत्व को समझते हुए ही सरकार ने 1938 में खुदाई, शोधन, यातायात, वितरण आदि सर्वांगों सहित तेल उद्योग का राष्ट्रीयकरण कर लिया था। इस समय 1982 देश में 13 तेल शोधक कारखाने कार्यरत हैं। 1982 में यहाँ के तेल क्षेत्रों ने 12·3 मिलियन टन क्रूड ऑयल उत्पादित किया। इसी वर्ष 39·7 मि. टन तेल विदेशों से आयात किया गया। यह उद्योग कितनी तीव्र गति से प्रगति कर रहा है इसका अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि 1965 में यहाँ की उत्पादन मात्रा केवल 2 02 मिलियन टन थी।

ब्राजिल में अलुमिनियम का उत्पादन मीनास गैराइस राज्य में सन 1945 में प्रारम्भ किया गया। अलुमिनियम की प्रधान स्रोत-धातु बॉक्साइट का उत्पादन 1981 में 6·9 मिलियन टन था। इस वर्ष 14,166 टन टिन उत्पादित की गयी। ब्राजिल बड़ी मात्रा में बैराइट का भी उत्पादन तथा निर्यात करता है। 1982 में यहाँ से 19,730 टन बैराइट निर्यात की। फास्फेट-रॉक का उत्पादन 1981 में 2·6 मिलियन टन था। सोने का अधिकांश उत्पादन मीनास गैराइस राज्य से आता है यद्यपि पारा राज्य के सैरा पैलाडा नामक स्थान पर भी नये भंडारों का पता चला है। चाँदी भी मीनास गैराइस राज्य में उत्पादित होती है। 1981 में ब्राजिल ने 17,726 कि. ग्राम सोना एवं 4,364 कि. ग्राम चाँदी उत्पादित की। ब्राजिल हीरों के उत्पादन में भी उल्लेखनीय है जिनका अधिकांश उत्पादन मीनास गैराइस, माटोग्रासो, रोरायमा, बाहिया तथा साम्रोपालो आदि राज्यों से आता है।

4. Statesman's year book, Macmillan 1984-85

जल विद्युत सम्भावनाओं की दृष्टि से ब्राजिल बड़ा धनी है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि यहाँ की कुल संभावित राशि लगभग 106,570 मिलियन कि वा. है।[5] परन्तु उसमें से केवल 7.5 मि. कि. वा. ही विकसित की गई है। जैसाकि धरातल के शीर्षक में उल्लेख है ब्राजिल की अधिकांश नदियाँ पठारी भाग से उतरते समय प्राकृतिक प्रपात बनाती है। अमेजन व उसकी सहायक नदियाँ जब एण्डीज, बोलिविया तथा पीरु के पठारी भागों से उतरती हैं तो तीव्रगति युक्त झरने बनाती हुई बहती हैं। इनमें भारी विद्युत उत्पादन की सम्भावनाएँ विद्यमान हैं। दक्षिण तथा पूर्वी भागों में भी झरनों का आधिक्य है परन्तु एक बड़ी परिसीमा है वह यह कि अधिकांश प्राकृतिक प्रपात अधिक बसे क्षेत्रों से बहुत दूर बसे हैं अतः विद्युत प्रवाह का यातायात इतनी दूर तक सम्भव नहीं है। यथा, ब्राजिल तथा अर्जेन्टाइना की सीमा पर स्थित इगुआकु प्रपात इतनी दूर है कि आधुनिक ज्ञान तकनीकों से विद्युत प्रवाह को साओपोलो के उद्योग केन्द्रों तक लाना सम्भव नहीं है। पराना जल-प्रवाह में देश की लगभग आधी सम्भावित राशि विद्यमान है पर वह इतना दूर है कि वहाँ से लाना ज्यादा आर्थिक सिद्ध नहीं हो सकता। साओपोलो के निकट लैटिन अमेरिका का सबसे बड़ा जल विद्युत संस्थान स्थित है जहाँ कि पराना की एक सहायक नदी एस्कार्पमेंटस से नीचे गिरती है फैलो एफोन्सो प्रपात (साओ-फ्रांसिस्को नदी) पर भी विद्युत गृह स्थापित किया गया है। इसी प्रकार पूर्वी भागों में, जहाँ एस्कार्पमेंटस के कारण नदियाँ तट की ओर झरने बनाती गिरती हैं, अधिकांश जलधाराओं पर शक्ति गृह स्थापित कर दिए गए हैं।

ब्राजिल की कुल सम्भावित विद्युत उत्पादन क्षमता का 34% भाग अमेजिन बेसिन में विद्यमान है जहाँ पश्चिम में स्थित पर्वतीय-पठारी क्रम से निकल कर हजारों जलधाराएँ अमेजिन-क्रम का निर्माण करती है। धरातल की पर्वतीय प्रकृति ने इन सम्भावनाओं को कई गुना कर दिया है। इतनी सम्भावित क्षमता की तुलना में उत्पादन क्षमता (1981 में 36,875 मि. वा.) बहुत कम है। 1981 में वास्तविक उत्पादन 141,874 मि. कि. वा. घण्टा था।

औद्योगिक विकास :

शक्ति के साधनों का अभाव, कृषि विकास की सम्भावनाएँ, कृषि-उत्पादनों द्वारा पर्याप्त राष्ट्रीय आय आदि ऐसे तत्व रहे है जिनके कारण यहाँ उद्योगों का विकास यूरोपियन देशों के स्तर पर न हो सका। औद्योगिक दृष्टि से ब्राजिल विकासशील अवस्था में ही है। पिछले दशकों से सरकार इस ओर प्रयत्नशील है। कच्चे मालों के रूप में अयसों का जो निर्यात यूरोपियन देशों व अमेरिका को कर दिया जाता था उसका ज्यादा से ज्यादा घर में औद्योगिक प्रयोग की योजना है।

5. Statesman's year book, Macmillan 1984-85

वर्तमान में यहाँ मध्यम तथा हल्के किस्म के उद्योग हैं जो यहाँ कच्चे मालों पर आधारित हैं। स्वाभाविक रूप में ये उद्योग कृषि-उपजों, वन-उपजों व खाद्य पदार्थों से सम्बन्धित हैं। पिछले तीन दशकों में धातु तथा इंजीनियरिंग उद्योगों का भी विकास हुआ है। अनेक ऐसे भी उद्योग हैं जिनमें ब्राजिल बाहर से पार्टस मंगाकर जोड़ने का कार्य करता है। ऐसे उद्योग प्रायः घरेलू खपत की वस्तुओं से सम्बन्धित हैं। अनुमानतः देश में छोटे बड़े मिलाकर लगभग 60,000 औद्योगिक संस्थान हैं जिनमें 47 लाख से ज्यादा व्यक्ति संलग्न हैं।[6] इस संख्या की तुलना 1889 में कार्यरत सभी श्रेणियों के कारखानों की संख्या (903) से की जा सकती है।

सरकारी नीति के अनुसार उपभोग की सभी वस्तुओं के देश में ही उत्पादन पर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। उदाहरणार्थ देश में जितने सूती वस्त्रों की आवश्यकता होती है उसका अधिकांश भाग यहीं बनाया जाता है। इस उद्योगों के लिए कपास देश में ही पैदा की जाती है। कुछ मात्रा में निर्यात के लिए भी बच रहती है। सूती वस्त्रोद्योग ब्राजिल का सबसे महत्वपूर्ण उद्योग है जिसमें कुल उद्योगरत मजदूरों का लगभग 16% भाग संलग्न है। देश में लगभग 450 सूती मिलें हैं जिनका 50% भाग साओपोलो राज्य एवं 28% मीनास गैरेइस तथा गुआनाबारा राज्यों में हैं। 1982 में यहाँ की मिलों ने 2680 मिलियन मीटर कपड़ा तैयार किया। इसी वर्ष 30,266 टन भार की कपड़े की गांठें निर्यात की गयी। सब प्रकार के वस्त्रों की कुल मिलाकर 650 मिलें उत्पादनरत हैं। ऊनी तथा रैयान वस्त्रों की उत्पादन-वृद्धि पर ज्यादा जोर दिया जा रहा है।

द्वितीय विश्व युद्ध के दिनों में पराग्ना घाटी में स्थित वोल्टा रैडोण्डा नामक स्थान पर एक विशाल इस्पात का कारखाना स्थापित किया गया। इसके लिए लोह-अयस मीनास-गैरेइस राज्य तथा कोयला दक्षिणी ब्राजिल से आता है। ब्राजिल के कोयले में गंधक और राख की इतनी ज्यादा मात्रा है कि कोक बनाने से पहले उसे शोधा जाता है। वोल्टा रैडोण्डा में इस कोयले में पश्चिमी वरजीनिया (सं. रा. अमेरिका) से आयात किया हुआ कोयला मिलाया जाता है। 1982 में ब्राजिल ने 10·8 मिलियन टन पिग आयरन एवं 12·9 मि. टन इस्पात तैयार किया।

पिछले दशकों में सीमेंट उद्योग का पर्याप्त विकास हुआ है। चूने का पत्थर, अभ्रक, एस्फाल्ट, फौस्फेटस आदि पर्याप्त मात्रा में देश में उपलब्ध हैं। दूसरे, ब्राजिल जैसे विकासशील राष्ट्र में पुल, भवनों या कारखानों के निर्माण के लिए दिनों-दिन सीमेंट की आवश्यकता बढ़ती ही जा रही है। अतः इस ओर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। सीमेंट उद्योग के विस्तार और विकास का सही अनुमान इसके उत्पादन आंकड़ों से होता है। 1945 में उत्पादन 7,70,000 टन था जो बढ़कर 1963 में

6. Carlson, F. A.—Geography of Latin America. Third edition p. 80-81

5,200,000 टन तथा 1982 में 23,724,638 टन था। इसके विस्तार के बावजूद घरेलू आवश्यकता की पूर्ति कठिनाई से ही हो पाती है। अकेले साओपोलो नगर, जहाँ 30–35 मंजिला भवन बन रहे हैं, में कई मिलियन टन सीमेंट की वार्षिक खपत है।

कागज-लुग्दी उद्योग के संदर्भ में पराना राज्य के मोंटे एलेग्रे नामक स्थान पर स्थित कागज-लुग्दी का कारखाना उल्लेखनीय है। यह दक्षिणी अमेरिका का सबसे बड़ा कागज का कारखाना कहा जाता है। 1982 में उत्पादन 3.3 लाख टन कागज था। अन्य विकसित उद्योगों में रबर तथा टायर, ऑटो मोबाइल्स खाद्य पदार्थ जैसे कोको, कॉफी एवं मांस आदि उल्लेखनीय हैं। अब तक बाहर से पुर्जे मंगाकर उन्हें जोड़कर मोटर गाड़ी, ट्रैक्टर्स व अन्य प्रकार के ह्वीकिल्स बनाने का प्रचलन था परन्तु अब देश में ही इनके उत्पादन पर जोर दिया जाने लगा है। 1982 में स्थानीय उत्पादित तथा आयात किए हुए पुर्जों को जोड़कर बनायी गयी गाड़ियों की संख्या 840,350 थी। इस वर्ष 29,000 ट्रैक्टर्स तैयार किए गए। संक्षेप में, वर्तमान में ब्राजिल की सरकार उद्योगों के तीव्र विकास के लिए प्रयत्नशील है। इसके लिए एक योजना बनाई गई है जिसमें यातायात उपकरण, शक्ति, तथा दैनिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित उत्पादनों पर जोर दिया गया है। रेलवे एवं सड़कों के जाल बिछाने के लक्ष्य को पूरा करने के लिए अधिकांश यानों के घर में ही निर्माण का लक्ष्य किया गया है।

यातायात :

ब्राजिल के आर्थिक विकास में उपयुक्त यातायात व्यवस्था का अभाव एक बड़ी समस्या है। देश के विस्तार एवं आकार को देखते हुए अच्छी सड़कें या रेल मार्ग अपेक्षाकृत बहुत कम हैं। लैटिन अमेरिका के अन्य देशों की तरह यहाँ भी भौगोलिक एवं उच्चम स्वरूपों ने यातायात के विकास को प्रभावित किया है। यथा, उत्तर-पूर्व के राज्यों में यातायात के साधनों का घनत्व साधारण, मध्य एवं दक्षिण-पूर्व में ज्यादा तथा पश्चिमी पठारी भागों, धुर दक्षिण एवं अमेजन बेसिन में बहुत कम है। अमेजन बेसिन तथा धुर दक्षिणी भाग में तो केवल एक-एक ही रेल मार्ग है।

प्रथम रेल मार्ग 1885 में बनाया गया। 1966 में यहाँ रेल मार्गों की कुल लम्बाई 31,961 कि. मी. थी। 1966–67 में लगभग 6,600 कि. मी. लम्बाई के अनार्थिक रेल मार्ग बन्द कर देने से लम्बाई कुछ कम हो गई है। मध्य-ब्राजिल-रेल्वे जो युरुग्वे, अर्जेन्टाइना तथा परागुवे आदि देशों के रेल मार्गों से जुड़ी हुई है, अपनी पूरी लम्बाई में सरकार द्वारा संचालित है। 3082 कि. मी. लम्बी इस रेल लाइन का समस्त लम्बाई में विद्युतीकरण कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त यहाँ 3165 मील लम्बाई की चार एंग्लो-ब्राजिलियन रेलवे लाइनें हैं जिनमें से तीन को

सरकार ने 142 मिलियन पौंड की कीमत अदाकर 1949 में खरीद लिया था। धरातलीय स्वरूप की भिन्नता के कारण देश में पाँच प्रकार की पटरियों पर रेलें संचालित है।

उत्तरी एवं उत्तरी-पूर्वी भाग में रेलों का बहुत कम विकास हुआ है। इसकी पृष्ठभूमि में अन्य कारणों के साथ एक यह भी है कि ब्राजिल का उत्तरी भाग आर्थिक तथा व्यापारिक दृष्टि से ब्राजिल के भीतरी भागों की अपेक्षा अमेरिका से ज्यादा जुड़ा हुआ है। समस्त व्यापार बन्दरगाहों से होता है। सर्वाधिक रेल मार्ग देश में, मध्य-पूर्व में साओपोलो, मीनास गैरेइस तथा रायो-डी-जैनीरो आदि राज्यों में है। साओपोलो रेल मार्गों का सबसे बड़ा केन्द्र है जहां से चारों ओर को रेल लाइनें जाती हैं। यह नगर रेल द्वारा सान्तोस बन्दरगाह से जुड़ा हुआ है। साओपोलो तथा रायो-डी-जैनीरो नगरों के बीच देश का सर्वाधिक व्यस्त रेल मार्ग है जिस पर सभी गाड़ियां विद्युत संचालित हैं। साओपोलो से अन्य मार्ग पश्चिम की तरफ बोलविया की सीमा के निकट पराग्वे नदी पर स्थित पोर्टोएस्पेरांका तक जाती है जिसकी लम्बाई 1026 मील है। साओपोलो से दक्षिण की ओर यूरुग्वे तक रेल मार्ग जाता है जिससे अर्जेंटाइना तथा चिली के बड़े नगरों-ब्यूनस आयरस, मान्टीविडियो तथा सैन्टियागो आदि को रेलवे कनेक्शन्स मिल जाते हैं। उत्तर-पूर्व की ओर जाने के लिए साओपोलो-अनापोलिस रेल मार्ग है।

ब्राजिल में समस्त सार्वजनिक रेल्वे मार्गों का प्रशासन एवं संचालन दो संगठनों द्वारा किया जाता है। प्रथम, संघीय रेल्वे (RFFSA) जिसका संगठन 1957 में हुआ था और वर्तमान में जिसके अन्तर्गत 23,087 कि. मी. लम्बे रेल मार्ग हैं। द्वितीय, साओपोलो रेल्वे (FEPASA) जिसका संगठन 1971 में किया गया और जो साओपोलो राज्य में स्थित 5,066 कि. मी. लम्बे रेल मार्गों के प्रशासन के लिए उत्तरदायी हैं।

रेल मार्गों की तरह, सड़कें भी मध्य-पूर्व के राज्यों में ही विकसित है। उत्तर-पूर्व के सब राज्यों मे मिलकर सड़कों की लम्बाई देश की कुल सड़कों की 1/5 से भी कम है। इसी प्रकार उत्तर तथा पश्चिम (माटो ग्रासो, गोइयास, अमेजन, पारा, गुआन बारा आदि) के राज्यों में सड़कों का हिस्सा-प्रतिशत 10 से भी कम बैठता है। सम्भवतः विक्टोरिया के दक्षिण में देश की तीन-चौथाई पक्की सड़कें हैं। पुनः साओपोलो, मीनास-गैरेइस तथा रायो-डी-जैनीरो में सड़कों का सर्वाधिक घनत्व है। सड़कों की व्यवस्था के बारे में सही अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि साओपोलो राज्य तथा संघीय जिले में देश की लगभग आधी गाड़ियों के रजिस्ट्रेशन हुए हैं। रेलों की तरह सड़कों के सबसे बड़े केन्द्र साओपोलो तथा रायो-डी-जैनीरो नगर है जहां से देश के प्रत्येक हिस्से को सड़क जाती है। यहाँ अर्जेंटाइना, यूरुग्वे, चिली तथा पराग्वे आदि राज्यों को भी सड़कें जाती हैं। इस संभाग की अधिकांश सड़कें

पक्की है जबकि उत्तरी एवं पश्चिमी राज्यों में ज्यादातर सड़कें अभी कच्ची ही चल रही हैं। पहाड़ियों, नदियों, दलदलों आदि के कारण इन भागों में सड़कों के निर्माण में अत्यधिक व्यय होता है अतः विकास की गति धीमी है। 1949 के बाद से सरकार यातायात के विकास हेतु बनाई गई एक योजना में सड़कों के विस्तार और सुधार की तरफ विशेष ध्यान दे रही है। सभी प्रकार की सड़कों की लम्बाई 1,548,023 कि. मी. है।

देश के अत्यधिक विस्तार एवं धरातलीय असमान प्रकृति से प्रोत्साहित होकर (असमान धरातल का भारी विस्तार होने के कारण सड़क तथा रेल मार्ग महँगे हैं) पिछले दशकों में ब्राजिल में वायु यातायात का तेजी से विकास हुआ है। देश के सभी भागों में स्थित बड़े-बड़े नगरों को वायु सेवा से जोड़ दिया गया है। कई विमान कम्पनियों के वायुयान देश के भीतर नियमित रूप से उड़ान भरते हैं इनमें वैरिग कम्पनी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जिसके यान स्वदेशी नगरों के अतिरिक्त उत्तरी-दक्षिणी अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका तथा सुदूर पूर्व में स्थित नगरों तक उड़ान भरते हैं। इस समय लगभग 34 विमान कम्पनियाँ (25 विदेशी) वायु सेवा रत हैं। रायो-डी-जैनीरो का सांतोष-ड्यूमोंट तथा साओपोलो का कोंगोन्हास हवाई अड्डा विश्व के व्यस्त तथा आधुनिक हवाई अड्डों में से है।

उत्तरी ब्राजिल में अमेजन तथा मध्य पूर्वी एवं दक्षिणी पराना, परागुए एवं यूरूग्वे जल प्रवाह-क्रमों से सम्बन्धित अनेक नदियाँ हैं। उष्ण कटिबंध में स्थित होने के कारण वे जमती भी नहीं है। इसके बावजूद भी जितना भीतरी जल यातायात होना चाहिए उतना नहीं होता। उसके विकास में दो बाधाएँ हैं। 1. ज्यादातर नदियाँ प्रपात बनाती हुई हैं अतः उस हिस्से को पार करने को नहरें बनाना आवश्यक है। 2. अमेजन बेसिन का विकास पूरी तरह नहीं हो सका है। नहरों का ब्राजिल में अभी अभाव है। अधिकांश भीतरी जल-मार्ग (21,944 मील) नदियों द्वारा ही प्रस्तुत है। समुद्री यातायात के लिए लगभग [illegible] बंदरगाह हैं जिनमें सांतोष तथा रायो-डी-जैनीरो सबसे बड़े हैं। सांतोष बंदरगाह से होकर बोलिविया तथा यूरूग्वे का व्यापार भी होता है अतः यह बंदरगाह दिन प्रतिदिन महत्वपूर्ण होता जा रहा है।

ब्राजिलियन जहाजी बेड़े में 8.9 मि० हंडरवेट टन के 1258 जलयान हैं। इनमें 656,587 ह., वे. टन के 46 वें जलयान भी सम्मिलित हैं। लॉयड ब्रासीलियो कम्पनी द्वारा चलाये जाते हैं। यह राजकीय कम्पनी है। 1958 में ब्राजिलियन सरकार ने 26 तेलवाहक जहाजों का बेड़ा अपने अधिकार में लिया था। राष्ट्रीयकृत इस तेलवाहक जलयान बेड़े में वर्तमान में 4·8 ह० वे० टन के 162 तेलवाहक जलयान शामिल हैं।

विदेश व्यापार :

ब्राजिल के निर्यातों में कॉफी (53%), कपास, शक्कर, लौह-प्रयस, कोको, पाइनवुड सीसल, मक्का, मैंगनीज-प्रयस, ऊन, तम्बाकू की पत्तियां, कैस्टर ऑयल, खालें, केला तथा संतरे का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। इन निर्यातों का ज्यादातर भाग संयुक्त राज्य अमेरिका (32%) पश्चिमी जर्मनी (9%) नीदरलैण्डस, ग्रेट ब्रिटेन, अर्जेन्टाइना, इटली, स्वीडन, फ्रांस, स वयत संघ तथा बेल्जियम आदि देशों को जाता है। वस्तुतः अन्य लैटिन अमेरिकन देशों की तरह कुछ दशकों पूर्व तक ब्राजिल का स्वरूप भी व्यावहारिक रूप में, यूरोपियन देशों की बस्ती (कौलोनी) जैसा रहा है जहां से ये देश कच्चे माल उपलब्ध करते रहे हैं। कपास, सोना, हीरा, कॉफी तथा शक्कर आदि सदा से यूरोपियन लोगों के आकर्षण बिन्दु रहे हैं। पिछले कुछ दशकों में नये खनिज धातुओं जैसे क्रोमीयम, मैंगनीज, लौह-प्रयस, टंगस्टन तथा जिर्कोनियम आदि के उत्पादन बढ़ने से इनकी मात्रा भी निर्यात में बढ़ती जा रही है।

आयातों में क्रूड पैट्रोलियम (16%) मशीनरी तथा पार्टस (17%) गेहूं (12%) उर्वरक एवं रासायनिक उत्पाद (12·2%) मोटर (8%) कागज विविध मशीनें तथा यंत्र आदि का बाहुल्य होता है। इन आयातों का अधिकांश भाग संयुक्त राज्य अमेरिका अर्जेन्टाइना, प० जर्मनी, वैनेज्वाला, फ्रांस, ब्रिटेन, जापान, इटली तथा स्वीडन आदि देशों से आता है। 1982 में ब्राजिल ने 3,340,756 मिलियन क्रूजेरो[7] की कीमत के आयात तथा 3,368,796 मिलियन क्रूजेरो की कीमत के निर्यात किए।

ब्राजिल के व्यापार को समझने के लिए 'लैटिन अमेरिका स्वतंत्र-व्यापार संघ (लैटिन अमेरिका फ्री ट्रेड एसोसियेशन) का संदर्भ आवश्यक है। 3 फरवरी 1961 को, लैटिन अमेरिका देशों में विदेशी निवेश (फोरेन इनवैस्टमेंट) करने वाले देशों के व्यापारिक अधिपत्य से बचने की आकांक्षा रखते हुए लैटिन अमेरिकन देशों (अर्जेन्टाइना, चिली, कोलम्बिया, इक्वेडोर, मैक्सिको, पीरू, यूरूग्वे, पराग्वए तथा ब्राजिल) ने उक्त संघ की स्थापना की और निर्णय किया कि भविष्य में ज्यादा से ज्यादा व्यापार इन देशों के बीच होगा। पिछले दशकों में निस्संदेह इन देशों के परस्पर व्यापार में वृद्धि हुई है परन्तु अलग-अलग देशों का अभी भी अमेरिका, ब्रिटेन आदि देशों से ही ज्यादा व्यापार होता है।

---

7. क्रूजेरो ब्राजिलियन मुद्रा का नाम है।

ब्राजिल : प्रमुख आयात-निर्यात स्वरूप (1982)

प्रमुख आयात		प्रमुख निर्यात	
वस्तु	आयात मूल्य (मिलियन डालरों में)	वस्तु	निर्यात मूल्य (मिलियन डालरों में)
ईंधन एवं तेल	10,459	कॉफी हरी	1,854
मशीनरी	3,272	लोह अयस	1,769
रासायनिक पदार्थ	1,446	रोलिंग स्टाक तथा गाड़ियाँ	1,760
अनाज	846	सोयाबीन, मान	1,600
स्पात	431	मशीनरी	1,200
अलोह धातु	422		

देश जहाँ को निर्यात किया गया		देश जहाँ से आयात किया गया	
देश	मूल्य (मि० डा०)	देश	मूल्य(मि० डा०)
स० रा० अमेरिका	4,131	सऊदी अरब	3,003
जापान	1,313	स० रा० अमेरिका	2,850
जर्मनी (फै० रि०)	1,179	ईराक	2,573
नीदर लैंडस	1,312	वैनी ज्वला	970
इटली	984	जापान	877
फ्रांस	863	जर्मनी (फै० रि०)	858

जनसंख्या :

अन्तिम अधिकृत जनगणना 1980 के समय ब्राजिल की जनसंख्या 119 मिलियन थी, जो बढ़कर 1983 में (अनुमानित) लगभग 129 मिलियन हो गई। स्पष्ट है कि ब्राजिल की वृद्धि दर यूरोपियन देशों की तुलना में बहुत अधिक है। भारत की तरह यह देश भी जनसंख्या-चक्र के दूसरे चरण में से गुजर रहा है अतः प्रति वर्ष वृद्धि दर बढ़ती जा रही है 1940 और 50 के 10 वर्षों में यहाँ की वृद्धि दर 2·5 प्रतिशत थी जबकि स० रा० अमेरिका में इन वर्षों में वृद्धि दर 1·4 प्रतिशत रही। 1950 से लेकर 1955 तक के 5 वर्षों में ब्राजिल की जनसख्या में 6·5 मिलियन वृद्धि हुई [illegible] फ्रांस में पिछले 100 वर्षों (1850-1950) [illegible] दिनों (1850-19[illegible] में ब्राजिल की जनसं[illegible] से [illegible]। इनमें [illegible] 3% यहाँ आकर [illegible] की

थी। अगर आगे भी इतनी ही वृद्धि दर रहे (यद्यपि बढ़ने की आशा है) तो यहाँ की कुल जनसंख्या 1990 में 133 मिलियन तथा सन 2000 तक 170 मिलियन हो जाएगी ऐसा अनुमान है।[8]

ब्राजिल की जनसंख्या की वृद्धि के सही स्वरूप का ज्ञान यहाँ के आव्रजनों (इमीग्रेंटस) के संदर्भ के बगैर अधूरा रहेगा। निम्न सारणी द्वारा यहाँ 1884 के बाद के 7 दशकों में आए हुए आव्रजनों की कुल संख्या, उनके आने के फलस्वरूप कुल संख्या में हुए वृद्धि तथा कुल वृद्धि में आव्रजनों का प्रतिशत प्रकट है।

आव्रजन एवं जनसंख्या वृद्धि 1884-1953

अवधि	आव्रजन	जनसंख्या वृद्धि	कुल जनसंख्या वृद्धि में आव्रजनों का प्रतिशत
1884–93	883,668	2,761,000	31·7
1894–03	863,110	3,964,000	21·7
1904–13	1,006,617	4,480,000	22·5
1914–23	503,981	5,466,000	9·2
1924–33	737,223	6,547,000	11·3
1934–43	197,238	8 420,000	2·3
1944–53	344,851	11,670,000	2·9

ब्राजिल का जातीय गठन (एथनिक कम्पोजीशन) अत्यधिक मिश्रण के फलस्वरूप बड़ी जटिल हो गया है। यहाँ पुर्तगाली, इटेलियन, स्पैनियार्डस, जापानी, जर्मन, नीग्रोज तथा अन्य कई जाति समुदायों के लोग समय-समय पर आकर बसे है। नीग्रो लोगों को वस्तुतः पुर्तगाली जमींदार अपने गन्ने के फार्म्स पर मजदूरों की हैसियत से लाए थे। बाद में अन्य क्षेत्रों में भी ये लोग मजदूरी के लिए बुलाए जाने लगे। इनके वितरण की यद्यपि कोई निश्चित सीमा तो नहीं खींची जा सकती, परन्तु संख्या के आधार पर कहा जा सकता है कि ये लोग उत्तर-पूर्व, पूर्व तथा मध्य-पूर्वी राज्यों के कुछ भागों में बसे हैं साओपोलो तथा दक्षिण के राज्यों में जनसंख्या का स्वरूप बहुत कुछ युरुग्वे तथा परागुए से मिलता-जुलता है जिसमें नीग्रो लोगों का अंश बहुत कम है। साओपोलो मीनास-गैरेड्स व रायो-डी-जैनीरो आदि राज्यों में श्वेत जनसंख्या ज्यादा होने का कारण यह भी है कि यूरोपियन

8. Geographic aspect of Brajil, Publication of Brajilian Embassey New Delhi 197 p. 5.

लोग सोना, कॉफी, गन्ना आदि के आकर्षण से यहाँ आकर बसते रहे हैं। उत्तर एवं उत्तर-पूर्व की गर्म-आर्द्र जलवायु उन्हें अनुकूल भी नहीं है।

प्रवासी जनसंख्या में विविध राष्ट्रीय तत्वों का प्रतिशत[9]

अवधि	इटैलियन	पुर्तगाली	स्पेनिश	जापानी	जर्मन	रूसी	अन्य
1884-1893	57·8	19·3	11·6		2·6	4·6	4·1
1894-1903	62·4	18·3	10·9	—	0·8	0·3	7·3
1904-1913	19·5	38 2	22·3	—	3·4	4·8	10·6
1924-1913	17·1	39·9	18 8	1·2	5·8	1·6	12.7
1914-1933	9·5	31·7	7·1	4·1	8·4	1·1	27·3
1934-1943	5·8	38 4	2·6	14·9	9·1	2·1	20·6
1944-1953	18·3	41·1	41·4	23·4	4·1	0·5	20·5

ब्राजिल की जनसंख्या में 49.9 प्रतिशत पुरुष एवं 50·1 प्रतिशत स्त्रियाँ हैं। इस प्रकार लैंगिक दृष्टि से जनसंख्या में कोई भारी असमानता नहीं है। असली समस्या आयु ढांचे को लेकर है। पिछले दशक में ब्राजिल की जनसंख्या में 52% जनसंख्या 20 वर्ष से नीचे तथा 4·4 प्रतिशत जनसंख्या 60 वर्ष से ऊपर थी। इस प्रकार कार्य संलग्न प्रौढ़ जनसंख्या केवल 44% थी जिसे अपने तथा शेष 56% लोगों के लिए उपार्जन करना पड़ता था। गहराई से देखने पर ज्ञात होता है कि ब्राजिलियन औरतों में केवल 9·6% ही ऐसी हैं जो देश के आर्थिक कार्यक्रमों में हिस्सा ले सकती हैं (फ्रांस में 30%) जबकि अन्य का अधिकांश समय उनके बच्चों को पालने में लगता है।[10]

धरातलीय स्वरूप के आधार एवं आनुपातिक आर्थिक विकास के संदर्भ में जैसाकि अनुमान किया जा सकता है ब्राजिल में जनसंख्या का वितरण बड़ा असमान है। देश की 2/3 जनसंख्या पूर्वी एवं दक्षिणी-पूर्वी राज्यों में केन्द्रित है। यद्यपि इन राज्यों का भू-क्षेत्र देश के कुल भू-क्षेत्र के $\frac{1}{4}$ से भी कम है। अमेजन बेसिन एवं मध्य-पश्चिमी राज्यों का विस्तार देश के 64% भू-क्षेत्र में है परन्तु जनसंख्या केवल 7% ही है। भविष्य में वितरण की यह असमानता और भी ज्यादा बढ़ने की सम्भावना है क्योंकि पूर्व एवं दक्षिण के राज्यों में वृद्धि-दर तुलनात्मक रूप में बहुत ज्यादा है। देश के अधिकांश बड़े नगर जैसे साओपोलो (7,032,547) रायो-डी-जेनीरो (5,090,700) ब्रासीलिया (1,176,908) पोटो एलेग्रे

9. Preston, F. J —Latin America, Third edition p. 559.
10. Geographic aspects of Brajil, Publication of Brajilian Embassey, New Delhi 1971 p. 6.

(1,114,8'7) बेलोहोरीजोण्टे (1,441,567) गोइयानिया (702,858) तथा सांतोस (410,933) ग्रादि दक्षिण-पूर्वी भाग में बसे हैं। उत्तरी तथा पूर्वी सम्भाग का सबसे बड़ा नगर रैसीफे (1,183,391) है। निम्न सारणी द्वारा विभिन्न प्रदेशों का भू-क्षेत्र तथा जनसंख्या (1980 की ग्रधिकृत जनगणनानुसार) स्पष्ट है।

प्रदेश	% भू-क्षेत्र	जनसंख्या
उत्तरी	41·98	5,880,300
उत्तरी-पूर्वी	11·39	34,812,480
दक्षिणी-पूर्वी	14·81	51,734,100
दक्षिणी	9·69	19,031,200
मध्य-पश्चिमी	22·13	7,54 ',800

लोग सोना, कॉफी, गन्ना आदि के आकर्षण से यहाँ आकर बसते रहे हैं। उत्तर एवं उत्तर-पूर्व की गर्म-आर्द्र जलवायु उन्हें अनुकूल भी नहीं है।

प्रवासी जनसंख्या में विविध राष्ट्रीय तत्वों का प्रतिशत[9]

अवधि	इटॅलियन	पुर्तगाली	स्पेनिश	जापानी	जर्मन	रूसी	अन्य
1884-1893	57·8	19·3	11·6	—	2·6	4·6	4·1
1894-1903	62·4	18·3	10·9	—	0·8	0·3	7·3
1904-1913	19·5	38 2	22·3	1·2	3·4	4·8	10·6
1924-1913	17·1	39·9	18 8	4·1	5·8	1·6	12.7
1914-1933	9·5	31·7	7·1	14·9	8·4	1·1	27·3
1934-1943	5·8	38 4	2·6	23·4	9·1	2·1	20·6
1944-1953	18·3	41·1	41·4	1·1	4·1	0·5	20·5

ब्राजिल की जनसंख्या में 49.9 प्रतिशत पुरुष एवं 50·1 प्रतिशत स्त्रियाँ हैं। इस प्रकार लैंगिक दृष्टि से जनसंख्या में कोई भारी असमानता नहीं है। असली समस्या आयु ढांचे को लेकर है। पिछले दशक में ब्राजिल की जनसंख्या में 52% जनसंख्या 20 वर्ष से नीचे तथा 4·4 प्रतिशत जनसंख्या 60 वर्ष से ऊपर थी। इस प्रकार कार्य संलग्न प्रौढ़ जनसंख्या केवल 44% थी जिसे अपने तथा शेष 56% लोगों के लिए उपार्जन करना पड़ता था। गहराई से देखने पर ज्ञात होता है कि ब्राजिलियन औरतों में केवल 9·6%-ही ऐसी हैं जो देश के आर्थिक कार्यक्रमों में हिस्सा ले सकती हैं (फ्रांस में 30%) जबकि अन्य का अधिकांश समय उनके बच्चों को पालने में लगता है।[10]

धरातलीय स्वरूप के आधार एवं आनुपातिक आर्थिक विकास के संदर्भ में जैसाकि अनुमान किया जा सकता है ब्राजिल में जनसंख्या का वितरण बड़ा असमान है। देश की 2/3 जनसंख्या पूर्वी एवं दक्षिणी-पूर्वी राज्यों में केन्द्रित है। यद्यपि इन राज्यों का भू-क्षेत्र देश के कुल भू-क्षेत्र के $\frac{1}{4}$ से भी कम है। अमेजन बेसिन एवं मध्य-पश्चिमी राज्यों का विस्तार देश के 64% भू-क्षेत्र में है परन्तु जनसंख्या केवल 7% ही है। भविष्य में वितरण की यह असमानता और भी ज्यादा बढ़ने की सम्भावना है क्योंकि पूर्व एवं दक्षिण के राज्यों में वृद्धि-दर तुलनात्मक रूप में बहुत ज्यादा है। देश के अधिकांश बड़े नगर जैसे साओपोलो (7,032,547) रायो-डी-जेनीरो (5,090,700) ब्रासीलिया (1,176,908) पोर्टो एलेग्रे

9. Preston, F. J —Latin America, Third edition p. 559.
10. Geographic aspects of Brajil. Publication of Brajilian Embassey, New Delhi 1971 p. 6.

(1,114,8´7) बेलोहोरीजोण्टे (1,441,567) गोइयानिया (702,858) तथा सांतोस (410,933) आदि दक्षिण-पूर्वी भाग में बसे हैं। उत्तरी तथा पूर्वी सम्भाग का सबसे बड़ा नगर रैसीफे (1,183,391) है। निम्न सारणी द्वारा विभिन्न प्रदेशों का भू-क्षेत्र तथा जनसंख्या (1980 की अधिकृत जनगणनानुसार) स्पष्ट है।

प्रदेश	% भू-क्षेत्र	जनसंख्या
उत्तरी	41·98	5,880,300
उत्तरी-पूर्वी	11·39	34,812,480
दक्षिणी-पूर्वी	14·81	51,734,100
दक्षिणी	9·69	19,031,200
मध्य-पश्चिमी	22·13	7,54[illegible],800

ब्राजिल : प्रादेशिक स्वरूप

विशाल भू-विस्तार, विविध धरातलीय स्वरूप एवं जलवायु व अन्य प्रकार की भौगोलिक असमानताओं ने ब्राजिल के विभिन्न प्रदेशों में पृथक्-पृथक् भौगोलिक वातावरण व उससे प्रभावित पृथक् प्रकार की मानवीय प्रतिक्रियाएँ प्रस्तुत की हैं। अतः इस विशाल देश का प्रादेशिक अध्ययन वांछनीय है। ब्राजिल को मोटे तौर पर 5 प्रदेशों में रखा जा सकता है। ये हैं :—

1. दक्षिणी-पूर्वी 2. मध्यवर्ती 3. उत्तरी (अमेजन बेसिन)
4. दक्षिणी 5. उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल (देखिए चित्र संख्या 1)

दक्षिणी-पूर्वी ब्राजिल :

ब्राजिल के दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश में मीनास-गैरेइस, एस्पिरिटो-सांतो, साओ-पोलो, रायो-डी-जैनीरो तथा गुआन बारा आदि राज्य शामिल किए जाते हैं। इस प्रदेश का भू-क्षेत्र समस्त देश के क्षेत्रफल का केवल 14% है परन्तु देश की 45% से अधिक मानवता यहाँ आश्रय लिए हुए है। दो बड़े राज्य मीनास-गैरेइस तथा साओपोलो जिनकी जनसंख्या क्रमशः 13 तथा 25 मीलियन है ही देश की एक तिहाई जनसंख्या को अपने में समाए हुए हैं। यह प्रदेश ब्राजिल का 'आर्थिक हृदय' कहलाता है जहाँ के काफी, गन्ना, कपास, सोना, हीरा व अन्य विविध उत्पादन ब्राजिल के आर्थिक ढाँचे के प्रमुख स्तम्भ हैं। सम्पूर्ण प्रदेश में रेल व सड़कों का जाल बिछा हुआ है।

प्राकृतिक दशाएँ :

अगर तटवर्ती भाग से कोई भीतर की ओर चले तो उसे तटवर्ती पट्टी को पार करते ही तट के समानांतर फैली पहाड़ियाँ मिलेंगी। सैरा-डो-मार नामक श्रृंखला के पीछे लगभग 200 मील की लम्बाई में फैली परायबा नदी की घाटी है। घाटी के पश्चिम में ब्राजिलियन पठार की सबसे ऊँची पर्वत श्रृंखला सैरा-डो-मांटीक्वैरिया फैली है। इसी श्रृंखला में प्रदेश की सर्वाधिक ऊँची चोटी पैको-डो-

बांडेरिया (9396 फीट) विद्यमान है। मांटो-क्वेरिया पर्वत श्रृंखला पश्चिम में पराना तथा पूर्व में पारायबा नदी क्रमों के बीच जल विभाजक का कार्य करती है। श्रृंखला के पश्चिम में समस्त प्रदेश विखंडित, असमतल पठारी भाग है। इस प्रकार दक्षिणी-पूर्वी ब्राजिल को धरातलीय स्वरूप की दृष्टि से तीन भागों में रखा जा सकता है। ये है :—1. तटवर्ती पट्टी 2. पठारी कूटिका क्रम 3. भीतरी पठारी भाग।

तटवर्ती पट्टी अधिकांश भागों में 100-150 मील चौड़ी है। निस्संदेह दक्षिण की ओर चौड़ाई क्रमशः कम होती है। भूगर्भविदों के अनुसार तटवर्ती पट्टी की आधारभूत चट्टानें महाद्वीप के प्राचीन स्थित भू-खण्ड से सम्बन्धित रवेदार कठोर चट्टानें हैं जिनके ऊपर बाद के आवरणों के फलस्वरूप पर्तदार चट्टानों का विस्तार है। यत्र-तत्र क्षयकारी शक्तियों ने ऊपरी कमजोर आवरण को काटकर प्राचीन कठोर आधारभूत चट्टानों को उघाड़ दिया है जो एकाकी चोटियों के रूप में खड़ी हैं। रायो-डी-जैनीरो बन्दरगाह के प्रवेश स्थल पर इसी प्रकार की चट्टानें हैं। बहुत सी जगह, जैसे पारायबा या डोके नदियों के मुहानों पर, दलदलीय डेल्टा प्रदेश हैं। तट के समानान्तर फैले कूटिका क्रम को काट कर पूर्व की ओर प्रवाहित नदियों (परागुआकु, डास-कौंटास, पार्डो, जेक्वीटिन्होना, डोके आदि) ने तटवर्ती पट्टी में तलछट जमा कर के उपजाऊ मैदानी भागों का आविर्भाव किया है।

तटवर्ती नदियाँ (उक्त संदर्भ) तथा पराना-सामोफांसिस्को के भीतरी जल प्रवाह क्रमों के मध्य लगभग तट के समानांतर फैली हुई कई पठारी कूटिकाएँ हैं जो हजारों फीट की ऊँचाई लिए समानांतर रूप में फैली हैं। भिन्न-भिन्न स्थानों पर ये भिन्न-भिन्न नामों से जानी जाती है यथा, उत्तर से दक्षिण की ओर क्रमशः छापादा-डायमांटिना, सैरा-डो-एस्पिन्हाको, सैरा-डो-मांटीक्वेरिया तथा सैरा-डो-मार नाम से जानी जाती हैं। सामूहिक रूप से इन्हें 'सैरा-गैराल' नाम से भी कभी-कभी पुकारते हैं। इन श्रृंखलाओं में आधार तो प्राचीन रवेदार चट्टानों का है परन्तु ऊपरी स्तरों पर पर्तदार चट्टानों का आधिक्य है। उत्तर में पर्तदार चट्टानों की मोटाई ज्यादा है। सैरा-डो-एस्पिन्हाको की ऊँचाई मीनास-गैरेइस राज्य में 5500 फीट तक है। मांटीक्वेरिया की चोटियाँ 9000 फीट तक ऊँची हैं। इसकी पर्तदार चट्टानों में हीरा तथा लोह-प्रयस (इताबीरा क्षेत्र) उपलब्ध है। सैरा-डो-मार तथा मांटीक्वेरिया के मध्य स्थित परायबा की घाटी वस्तुतः एक विशाल दरार-घाटी है।

दक्षिण-पूर्वी प्रदेश का तीसरा स्पष्ट भू-आकार भीतरी पठार है जो अपने उत्तरी भाग में (छापादा डायमांटिना तथा गोइयास राज्य के पठार के मध्य स्थित) अनुमतः प्राचीन रवेदार चट्टानों से बने एक 'पेनीप्लेन्ड' पठार के रूप में है। इस सभाग में होकर सामोफांसिस्को व उसकी सहायक नदियाँ प्रवाहित हैं। पर्याप्त भाग

1800 फीट से नीचा है। धरातल के असमान स्वरूप का अनुमान इस तथ्य से लग सकता है कि साम्रोफ्रांसिस्को नदी 700 मील की लम्बाई में 2 फीट प्रति मील की दर से नीची होती जाती है। यही भाग इस नदी का नाव्य-सम्भाग है जिससे पीरापोरा तथा जुम्राजीरो के मध्य नावें चलायी जा सकती है। यत्र-तत्र पठारी भाग में पर्तदार क्रमों नदियों द्वारा लाया गया तलछट जमे रूप में मिलता है। पठार का दक्षिणी भाग, जिसका विस्तार साम्रोपोलो राज्य तथा मीनास-गैरेइस राज्य के दक्षिणी विस्तार भागों में है, संरचना की दृष्टि से बड़ा जटिल है। इस सम्भाग में, विशेषकर पश्चिम की तरफ पर्याप्त मोटाई में पर्तदार चट्टानों का जमाव है। यहाँ की रवेदार पर्तदार चट्टानी क्रम में पराना की सहायक नदियों (पराना-पानेमा, टिएटे, रामोग्रांडे तथा परानायबा आदि) ने स्वाभावोद्भूत जल प्रवाह प्रणाली (कॉसीक्वेंट ड्रेनेज सिस्टम) विकसित की है।

साधारणतः दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश की जलवायु उपोष्णीय प्रकार की है जिसमें गर्मियों में ज्यादा गर्मी पड़ती है। सर्दियाँ अपेक्षाकृत सुहावनी होती हैं अतः वार्षिक तापांतर ज्यादा नहीं होते। धुर दक्षिण में स्थित सांतोस में तापांतर 12° फ़ै० (66°–78° फ़ै०), प्रदेश के मध्य में स्थित बैलोहोरीजोंटे में (10 फ़ै० 62°–72° फ़ै०) जबकि तट पर स्थित साम्रोपोलो तथा रायो-डी-जैनीरो में तापांतर क्रमशः 11° फ़ै० (58°–59° फ़ै०) एवं 10° फ़ै० (69°–79° फ़ै०) होता है भीतरी पठारी भागों में गर्मियों में तापक्रम कभी-कभी 95° फ़ै० से भी ज्यादा ऊँचा हो जाता है। गर्मियों में लोग पहाड़ी क्रमों में स्थित स्वास्थ्य केन्द्रों (पेट्रोपोलिस-गर्मियों की राजधानी) पर चले जाते हैं। वर्षा तट से भीतर की ओर कम होती जाती है। तटवर्ती पट्टी एवं एस्कार्पमेंटस के समुद्र की तरफ के ढालों पर 60 से 130 इंच तक वर्षा होती है। वर्ष की अधिकांश वर्षा गर्मियों के दिनों (दिसम्बर-जनवरी) में होती है। सर्दियाँ प्रायः खुश्क होती है। जून का माह सबसे खुश्क होता है जबकि तीव्र आँधियाँ चलती हैं। वनस्पति भी इन दिनों सूख जाती है।

आर्थिक विकास

अगर उपयुक्त वर्षा-मात्रा को अपवाद स्वरूप छोड़ दिया जाए तो और सभी दृष्टियों से पुर्तगालियों को दक्षिणी-पूर्वी हिस्से की तुलना में ब्राजिल का उत्तरी-पूर्वी भाग ज्यादा आकर्षक लगा। फलतः बसाव की प्रारम्भिक दो शताब्दियों (16-17वीं) में यह संभाग उपेक्षित ही पड़ा रहा। बाहिया क्षेत्र के गन्ना-शक्कर व्यवसाय के सामने आर्थिक दृष्टि से दक्षिणी-पूर्वी भाग कहीं नहीं ठहरता था। प्रारम्भ में यहाँ गरीब तबके के लोग ही आकर बसे। इस भाग का असमान धरातल, पर्वतीय शृंखलाएँ एवं जंगल भी बसाव में बाधा थे अतः दक्षिणी-पूर्वी भाग अपेक्षाकृत देर से आबाद हुआ। लेकिन जब एक बार बसाव प्रारम्भ हुआ और यहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का स्वरूप सामने आया तो पिछले केवल 80–90 वर्ष में ही यह भाग

इतना महत्वपूर्ण और धनी हो गया कि सारे लैटिन अमेरिका को आर्थिक महत्व की दृष्टि से पीछे छोड़ गया।

इस प्रदेश के महत्व में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने वाले तत्वों में निम्न चार सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं—

1. मीनास गैरेइस राज्य में सोना तथा हीरा
2. पाराइबा घाटी में कॉफी-उत्पादन
3. साओपोलो राज्य में कृषि विकास
4. दक्षिण-पूर्व में औद्योगिक विकास

सोना-हीरा एवं विविध खनिज संसाधन :

17वीं शताब्दी के अन्त में जब विभिन्न यूरोपियन समुदाय इस संभाग में जीवनयापन के साधनों की खोज में इधर से उधर घूम रहे थे तो उस भाग में, जिसे आज मध्यवर्ती मीनास-गैरेइस राज्य कहा जाता है उन्हें अपने प्रयत्नों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण फल मिला और वह था सोना। सैरा-डो-एस्पिन्हाको के दक्षिण में स्थित पर्तदार चट्टानों में भी इसी समय पर्याप्त मात्रा में सोना मिला। 30 वर्ष बाद 1729 में डायमांटिना के निकट हीरों का भंडार मिला। यह समाचार आग की तरह प्रसारित हुआ और यूरोपियन समुदायों में यहाँ पहुँचने की होड़ लगी। इससे यह लाभ हुआ कि इस सम्पूर्ण संभागों में खनिजों की खोज हुई और खोज का परिणाम सुखद ही निकला मीनास गैरेइस राज्य में सोने तथा हीरा के अलावा लौह-अयस, मैंगनीज, क्वाटर्ज, अभ्रक, टंगस्टन, क्रोमियम, निकल, सीसा, टिटेनियम तथा जिर्कोनियम तथा बॉक्साइट के भण्डार निकले। वस्तुतः इस सम्पदा के आधार पर ही मीनास-गैरेइस राज्य का नामकरण संस्कार हुआ है। मीनास-गैरेइस शब्द का मतलब होता है विविध प्रकार की खानें। प्रदेश के अधिकांश खनिज उस प्राचीन, रवेदार चट्टानों से बने पठार में पाए जाते हैं जो मीनास-गैरेइस, साओपोलो माटो-ग्रासो तथा गोइयास आदि राज्यों में समान रूप से फैला है।

सोना आज भी मीनास-गैरेइस राज्य से ही सर्वाधिक मात्रा में उपलब्ध होता है यद्यपि खानों की स्थितियाँ बदल गई हैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण खान बैलो होरिजोंट के दक्षिण में स्थित मोरो वैल्हो की खान है जो 1725 से लगातार सोना प्रदान कर रही है। यह दुनिया की सबसे गहरी खानों में से एक है जो कि सैरा-दा-रिन्हको में लगभग 6500 फीट की गहराई तक चली गई है। यह उल्लेखनीय है कि ज्यों-ज्यों गहरे इस खान में चलते जाते हैं अयस में धातु का प्रतिशत बढ़ता जाता है। पश्चिमी माटो ग्रासो से लेकर पराना की घाटी तक पठारी क्षेत्र में कई सोने की खानें हैं। यद्यपि इनका उत्पादन घट गया है। पहले अधिकांश खानें ब्रिटिश कम्पनियों के हाथ में थी। अब उन्हें संघीय सरकार ने खरीद लिया है।

जैसा कि नाम से भी प्रकट है, हीरे की महत्वपूर्ण खानें मीनास-गैरेइस राज्य के डायमांटिना नगर के चारों ओर स्थित हैं। यहाँ अधिकांशतः औद्योगिक उपयोग के हीरे निकलते हैं। ज्यादातर खानें जलधाराओं में हैं। लोह-प्रयस के उत्पादन एवं सुरक्षित राशि की दृष्टि से मीनास गैरेइस राज्य ही उल्लेखनीय है। यहाँ देश का सबसे बड़ा लोह-भण्डार भूमिगत है। उत्पादन इताबीरा नामक स्थान की खानों से होता है। यहाँ लोह प्रयस परायबा की घाटी में स्थित वोल्टा रैण्डोडा के लोह इस्पात कारखानों को भेजा जाता है। लोह प्रयस क्षेत्र के निकट ही मैंगनीज की खानें विद्यमान है। बैलोहोरिजोटे तथा लाफायेट्री मिलकर देश का 90% मैंगनीज उत्पादित करते हैं।

कॉफी उत्पादन :

19वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में कुछ समुदाय रायो-डी-जैनीरो से दक्षिण एव दक्षिण-पूर्व की तरफ बढ़े और साओपोलो के रायबेराओ क्षेत्र तथा परायबा घाटी में जाकर बसे। वस्तुतः ये ही वे लोग थे जिन्होंने दक्षिण-पूर्व राज्यों में कॉफी का श्रीगणेश किया। इनके इस व्यवसाय के पीछे इन दिनों ब्रिटेन के बाजारों में कॉफी की बढ़ती हुई मांग ने प्रेरणा का काम किया। और उस समय पारायना घाटी के सीढ़ीदार भागों में कॉफी का जो प्लांटेशन प्रारम्भ हुआ तो शीघ्र ही महत्वपूर्ण आर्थिक स्रोत के रूप में सिद्ध हो गया। प्रतिवर्ष कॉफी से 200-250 मिलियन डॉलर की प्रतिवर्ष आय होने लगी। इस पूंजी का उपयोग दूसरे क्षेत्रों में प्रयोग करके अन्य आर्थिक स्रोत विकसित किए गए। इस प्रकार कॉफी का दक्षिणी-पूर्वी ब्राजिल के राज्यों के आर्थिक ढांचे में आधारभूत स्थान हो गया।

साओपोलो विश्व में सर्वाधिक कॉफी उत्पादन करने वाला राज्य है। ब्राजिल विश्व में सर्वाधिक कॉफी उत्पादन व निर्यात करने वाला देश है तथा अकेले साओपोलो राज्य में कॉफी के जितने प्लांटेशन्स हैं, अन्य सारे राज्यों में मिलकर उससे कहीं कम हैं। अन्य कॉफी उत्पादक राज्यों में मीनास-गैरेइस, रायो-डी-जैनीरो आदि है। इस प्रकार कॉफी व्यवसाय मुख्य रूप से दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश में केन्द्रित है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि प्रारम्भ में कॉफी उत्पादन उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल में प्रचलित था। अबीसीनिया से मूल रूप में सम्बन्धित यह व्यापारिक फसल के पौधे को ब्राजिल में प्रथम बार 1727 में लाया गया। सर्वप्रथम इसे बैलेम क्षेत्र में बोया गया जहाँ यह पनपा। 1774 में कॉफी के बीज रायो क्षेत्र में लाए गए और वहाँ उन्हें होपमैन नामक एक अंग्रेज के बाग में परीक्षण के तौर पर बोया गया। परीक्षण सफल रहा, और यहीं से, एक-डेढ़ शताब्दी के बाद, बीज ले जाकर दक्षिण-पूर्वी ब्राजिल में विश्व प्रसिद्ध कॉफी उद्योग का श्रीगणेश किया गया।

ब्राजिल के अन्य भागों के बजाय दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश में ही काफी उद्योग इस स्तर तक विकसित हुआ उसकी पृष्ठभूमि में कुछ मानवीय तथा कुछ अनुकूल

प्राकृतिक तत्व हैं । साओपोलो राज्य की मिट्टी गहरी एवं उपजाऊ प्रकार की है जो कॉफी के लिए अत्यन्त अनुकूल है । दूसरे, इस भाग में आर्द्र तथा शुष्क मौसमों का परिवर्तनशील स्वरूप रहता है जो कॉफी के पकाव के लिए अनुकूल है । पाला यहाँ नहीं पड़ता अन्यथा पाले से कॉफी की 'बेरीज' का खराब होने का डर रहता है । तीसरे, इस संभाग की मिट्टी में लोह-अंश पर्याप्त मात्रा में है जिसकी कॉफी के पौधे को बहुत जरूरत होती है । इस प्रकार की मिट्टी का विस्तार साओपोलो राज्य में पर्याप्त विस्तार में है अतः भूमि की समस्या नहीं है । भूमि की कमी कभी महसूस नहीं होती क्योंकि जब एक क्षेत्र की भूमि उपज देते-देते थक जाती है तो उसमें दूसरी फसलें बो दी जाती हैं और कॉफी के लिए नयी भूमि प्राकृतिक वनस्पति को साफ करके उपलब्ध कर ली जाती है । चौथे, दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश का कॉफी-उत्पादक क्षेत्र कुछ ऊँचाई पर स्थित है जो फसल के लिए अनुकूल है, और पांचवें, उत्तरी या उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल की अपेक्षा इस संभाग की जलवायु में यूरोपियन लोग अच्छी तरह से रह सकते हैं ।

कॉफी व्यवसाय के विकास में सहयोगी मानवीय तत्वों में सरकारी नीति, बाजारी मांग, कुशल श्रम आदि महत्वपूर्ण हैं । जिस समय उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल में कॉफी की खेती प्रारम्भ की गयी उस समय विश्व में कॉफी का प्रचार एक प्रिय पेय के रूप में ज्यादा नहीं हुआ था अतः मांग कम थी । परन्तु 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में (जब साओपोलो में प्लांटेशन्स किए गए) यूरोप के देशों तथा सं. रा. अमेरिका के बाजारों में इसकी पर्याप्त मांग थी अतः निजी क्षेत्र से भी पूंजी सोत्साह लगाई गयी । समय-समय पर ब्राजिल की संघीय सरकार ने भी विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाली इस फसल में विशेष रुचि लेकर इसको प्रोत्साहित किया है । सरकार की वैलोराइजेशन नीति के फलस्वरूप ही 1920-30 के बीच कॉफी-संलग्न भू-क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि की गयी । उत्पादन के अतिरिक्त व्यापार एवं निर्यात में भी सरकार ने पर्याप्त रुचि ली । पहले ऐसा होता था कि एक ही समय सारी उपज बजार में आ जाने से प्रतिद्वंद्विता बढ़ती और कीमतें नीची हो जाती इससे कॉफी उत्पादक किसानों को नुकसान रहता । इस स्थिति में सुधार के लिए सरकार ने 'राष्ट्रीय कॉफी विभाग' खोला । यह विभाग अच्छी फसल के समय अतिरिक्त फसल को उचित दामों में खरीद कर अपने गोदामों में रखता है । इससे सप्लाई नियमित एवं कीमतें नियंत्रित रहती हैं । कॉफी व्यवसाय में श्रम की ज्यादा आवश्यकता होती है । सौभाग्य से दक्षिण-पूर्वी राज्यों को इटैलियन तथा नीग्रो श्रम की सुविधा प्राप्त है । इस प्रकार भौगोलिक तथा मानवीय परिस्थितियों की अनुकूलता ने बहुत थोड़े समय में ही साओपोलो के कॉफी उद्योग को चमका दिया । विकास की गति का अनुमान इससे लग सकता है कि 1870 में इसे विस्तृत तथा तथा संगठित रूप में संचालित किया गया था और अगली 3–4 शताब्दियों में इतनी

तीव्रता से विकास हुआ कि 1908 में यह महसूस किया जाने लगा कि कॉफी उद्योग अब अपनी संतृप्त (सैचूरेशन पाइंट) स्थिति में पहुँच चुका है।

साम्रोपोलो नगर दुनिया का सबसे बड़ा कॉफी केन्द्र है। वैसे साम्रोपोलो, मीनास-गैरेइस तथा रायो-डी-जैनीरो आदि सभी राज्यों में कॉफी के प्लांटस हैं परन्तु सर्वाधिक घनत्व साम्रोपोलो राज्य के रायो वेरायो पैंट्रो एवं रायो क्लोर कस्बों के बीच में है। पिछले दशकों में राज्य के उत्तर एवं उत्तर-पश्चिम में भी कॉफी प्लांटेशन्स लगाए गए हैं। मीनास-गैरेइस राज्य के प्रधान कॉफी क्षेत्र उसके दक्षिणी भाग में हैं। इस प्रकार एक तरह से साम्रोपोलो नगर कॉफी उत्पादक क्षेत्र के बीच में स्थित है। यहीं से कॉफी सांतोस या रायो-डी-जैनीरो आदि बन्दरगाहों को निर्यात के लिए भेजी जाती है। इस नगर की आर्थिक समृद्धि का विकास एवं विस्तार में कॉफी का सहयोग पर्याप्त रहा है। दक्षिण-पूर्व के चारों राज्यों साम्रोपोलो, मीनास गैरेइस, एस्पिरिटो सांटो तथा पराना में लगभग 2,622,885 हैक्टे भूमि में कॉफी के प्लांटेशन्स का विस्तार है। बड़े-बड़े प्लांट्स में 1 लाख से भी अधिक कॉफी के वृक्ष होते हैं। 1982 में ब्राजिल ने 2.1 मिलियन मैट्रिक टन कॉफी उत्पादित की जिसका अधिकांश भाग दक्षिण-पूर्वी प्रदेशों से ही प्राप्त हुआ।

चित्र—4

कॉफी व्यवसाय बड़े परिश्रम और धैर्य का कार्य है। पेड़ पर कॉफी बेरी के रूप में प्रस्फुटित होती है। बेरी 3-4 महीने में पक कर तैयार हो जाती है। चूंकि सभी बेरीज एक साथ नहीं पकती अतः जमीन को साफ कर पेड़ को हिलाया जाता है। पकी हुई बेरीज गिर पड़ती हैं। चूंकि मिट्टी लग जाती है अतः धोकर बेरीज को सुखाने डाल दिया जाता है। सूखने में ये 2 दिन से लेकर 2 सप्ताह तक का समय ले सकती हैं। वस्तुतः इनका सूखना फल के पकाव और सूखने की अवधि में मौसम की दशा पर निर्भर करता है। यदि रात्रि में ओस या वर्षा हो जाती है तो सूखने की प्रक्रिया और भी ज्यादा लम्बी हो सकती है। कई दफा शाम के समय पकती हुई बेरीज को कपड़े से ढांक दिया जाता है ताकि रात्रि की नमी का प्रभाव न हो। फसल के पकाव या सुखाव के समय अगर वर्षा हो जाए तो भारी हानि होती है। यथा, 1927 में भारी वर्षा के कारण लगभग 40% फसल बर्बाद हो गयी थी।

सूखने के पश्चात बेरीज के बीज निकाल कर गूदे को भूना जाता है। कॉफी को भूनने पर उसमें से एक तेल निकलता है जो खुशबू को बढ़ाता है। अतः ठीक मात्रा में उचित तापक्रम पर भूनने की सावधानी बरतनी चाहिए। कम या ज्यादा भूनने से स्वाद और रंग दोनों पर असर पड़ता है।

खुशबू (फ्लेवर) कॉफी का खास तत्व है। वस्तुतः कॉफी की गन्ध, मिट्टी की किस्म, धूपीली अवधि, पौधे की समुद्र तल से ऊंचाई, बेरीज का सुखाव, गूदे की भुनाई आदि विविध प्राकृतिक एवं मानवीय तत्वों से प्रभावित होती है। अतः इन सभी की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। आजकल एक तरीका और विकसित हुआ है जिससे कॉफी की गंध बढ़ जाती है। इस विधि के अन्तर्गत धुली हुई बेरीज को एक गूदा पृथक् करने वाली मशीन (डीपल्पिंग मशीन) में होकर निकाला जाता है जिससे उसका ऊपर का छिलका अलग हो जाता है। गूदे को सुखाया जाता है। खूब सूखने पर बीजों को अलग करके सूखे गूदे को भूनकर पाउडरी रूप दिया जाता है। संक्षेप में, बेरीज का ठीक प्रकार से चुनाव (केवल पकी बेरीज) धोना, सुखाना, साफ करना एवं पीसना आदि सभी कार्य माल की श्रेष्ठता को निर्धारित करते हैं।

—

कृषि विकास :

सामोपोलो राज्य के पठारी प्रदेश के पूर्वी सीमांतों तथा तटवर्ती पट्टी में हजारों वर्ग मील भूमि में जंगलों को साफ करके विविध प्रकार की कृषि विकसित की गई है। चूंकि मीनास-गैरेइस राज्य में वर्षा अपेक्षाकृत कम होती है अतः वहाँ पशु चारण व्यवसाय प्रचलित है। फसली कृषि की दृष्टि से पारायबा की घाटी बहुत महत्वपूर्ण है। दक्षिण-पूर्व के इन राज्यों की फसली कृषि के प्रमुख उत्पादन कपास, गन्ना, मक्का, चावल तथा तम्बाकू आदि हैं।

कपास का केन्द्रीयकरण साम्रोपोलो राज्य के पश्चिमी भाग में निचली टीटे तथा पराना पानेमा नदियों के बीच में स्थित क्षेत्र में है। उत्तर में रायो ग्रांडे भी उत्पादन की दृष्टि से उल्लेखनीय है। साम्रोपोलो के इन भागों में कपास की खेती जापानी समुदायों द्वारा की जाती है। ज्यादातर कपास के विकसित फार्म्स पश्चिम एवं उत्तर में स्थित रेल मार्गों के सहारे-सहारे फैले हैं। साम्रोपोलो राज्य में पिछले दशकों में कपास-उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई है। 1920 में यह राज्य ब्राजिल की एक चौथाई कपास उत्पादित करता था जबकि आज लगभग 50% उत्पादन के लिए उत्तरदायी है। यहाँ की पठारी-कपास उत्तर-पूर्व के राज्यों में उत्पादित कपास की तुलना में ज्यादा लम्बी व चमकदार होती है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि ब्राजिल के निर्यात में कपास का कॉफी के बाद दूसरा स्थान है।

दक्षिणी-पूर्वी प्रदेश देश में उत्पादित समस्त गन्ने का 45–50 प्रतिशत भाग प्रस्तुत करते हैं। साम्रोपोलो, मीनास-गैरेइस एवं रायो डी-जैनीरो तीनों ही राज्यों में गन्ना की खेती होती है। उत्पादन की दृष्टि से पारायबा-घाटी का मध्य एवं ऊपरी भाग, साम्रोपोलो राज्य का पठारी भाग, रायो-डी-जैनीरो के उत्तर एवं दक्षिण में स्थित तटवर्ती प्रदेश एवं मीनास-गैरेइस राज्य के पठार का पूर्वी भाग विशेष उल्लेखनीय हैं। साम्रोपोलो राज्य ने गन्ना उत्पादन में उत्तर-पूर्व के परम्परागत राज्य परनाम्बुको को पीछे छोड़ दिया है। चावल का विकास प्रदेश में बहुत बाद के दिनों में हुआ है। साम्रोपोलो राज्य का दक्षिणी भाग विशेषकर इग्यावी जिला तथा पाराायना की घाटी चावल के प्रधान क्षेत्र हैं। इनके अतिरिक्त मीनास-गैरेइस में तम्बाकू तथा साम्रोपोलो में मक्का पैदा की जाती है।

साम्रोपोलो राज्य के पश्चिम में पशुचारण विकसित है। लगभग 12 मिलियन ढ़ोर पाले जाते हैं। बारेटोज, साम्रो मैनोल तथा कैम्पोस-नैवोस प्रमुख पशुचारण व्यवसाय-केन्द्र हैं जहाँ से माँस, चर्बी आदि प्रदेश के दूसरे नगरों को भेजे जाते हैं।

औद्योगिक विकास :

दक्षिण-पूर्वी प्रदेश विशेषकर साम्रोपोलो राज्य न केवल ब्राजिल वरन् समस्त लैटिन-अमेरिका में औद्योगिक विकसित क्षेत्र है। कच्चे माल, पर्याप्त श्रम, जल विद्युत शक्ति आदि की सुविधाओं के अतिरिक्त घने बसे प्रदेश होने के कारण यहाँ घरेलू स्थानीय बाजार की भी सुविधा है। इस प्रदेश में ब्राजिल के 40% सूती वस्त्र एवं लगभग आधे खाद्य-पदार्थ तैयार किए जाते हैं। पारायबा घाटी में स्थित वोल्टा-रैण्डोंडा इस्पात के कारखाने से साम्रोपोलो एवं रायो-डी-जैनीरो दोनों नगरों के कारखानों को इस्पात उपलब्ध है। साम्रोपोलो नगर लैटिन अमेरिका का सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। 7 मिलियन से अधिक जनसंख्या वाले इस नगर में रसायन, वस्त्र, धातु, ऑटोमोबाइल, लोको व मशीन-उद्योग विकसित हैं। 5 मिलियन जनसंख्या को आश्रय दिए हुए रायो-डी-जैनीरो ब्राजिल का दूसरे नम्बर का नगर भूतपूर्व राजधानी एवं महत्वपूर्ण बन्दरगाह है।

□□□

कट-फट कर काफी नीचा हो गया है जिसे एक पेनीप्लेन्ड एवं विखंडित पठार की संज्ञा दी जा सकी है परन्तु माटोग्रासो के धरातल का स्वरूप वस्तुतः एक ग्रन्य पठार जैसा है। दोनों को भूगर्भिक संरचनाओं में भी थोड़ा ग्रन्तर है। गोइयास-मैसिफ की ग्रधः स्तरीय ग्राधारभूत चट्टानें ब्राजिलियन पठार से मेल खाती हैं जो एक प्राचीन एवं स्थिर भू-खण्ड है। गोइयास के दक्षिण एवं पूर्व तथा ऊपरी परागुए बेसिन में प्राचीन रवेदार तथा पुरानी मोड़ी गई पर्तदार चट्टानें उघडे रूप में देखी जा सकती है। इससे स्पष्ट है कि यहाँ क्षयकारी शक्तियाँ अपेक्षाकृत ज्यादा क्रियाशील रहीं हैं।

माटोग्रासो राज्य के पठारी भाग में पुरानी पर्तदार चट्टानों का विस्तार है। इसका स्वरूप वास्तव में 'टेबललैंड' की तरह है। जबकि एक असमान क्षयित पेनी प्लेन का रूप लिए है गोइयास में सर्वाधिक ऊँचाई पश्चिम की तरफ है जहाँ राज्य की राजधानी गोइयानिया स्थित है। माटो ग्रासा का अधिकतर भाग माटो ग्रासो राज्य में है लेकिन इसके उत्तरी भाग ग्रमेजन, पारा तथा मारा-हाम्रो आदि राज्यों में भी चले गए हैं। पठार का उत्तरी भाग ज्यादा कटा-फटा है जिसे ग्रमेजन की सहायक नदियों ने काट-काट कर यह स्वरूप प्रदान किया है। माटो ग्रासो के पठार के उत्तरी भाग में साल भर तक भारी वर्षा होती है। ग्रतः यत्र-तत्र घने जंगल हैं। दक्षिणी भाग ग्रपेक्षाकृत ज्यादा ऊँचा है। यहाँ वर्षा कुछ कम एवं केवल गर्मियों में होती है ग्रतः स्वरूप सैवाना घास क्षेत्रों जैसा है। इनमें बिखरे रूप में पशुचारण प्रचलित है। घास से ढ़के इन ऊँचे पठारी भागों को स्थानीय भाषा में 'छापादा' कहते हैं।

माटोग्रासो राज्य के दक्षिण-पश्चिम में स्थित पान्तानल पश्चिमी ब्राजिल का एक मात्र निचला प्रदेश है जिसमें होकर ऊपरी परागुए बहती है। यह निचला भाग जो कि वस्तुतः पराना-परागुए मैदान का ही उत्तरी विस्तार है, एण्डीज एवं ब्राजिल के पठार के बीच धसावकृत संभाग है। गर्मियों में भारी वर्षा के कारण समस्त निचले भाग में दल-दलीय वातावरण रहता है। पान्तानल के निचले भाग के दक्षिण-पूर्व, पूर्व और उत्तर में छापादाज (घास से ढ़के पठारी भाग) का क्रम है जिनकी औसतन ऊँचाई लगभग 2000 फीट है। ये पठारी भाग अर्द्धवृत्ताकार रूप में निचले प्रदेश के उत्तर-पूर्व तथा पूर्व में. फैले हैं। छापादा के चरण-प्रदेशों में ब्राजिलियन पठार की की पुरानी रवेदार चट्टानें उघड़े रूप में हैं जिन्हें पेढा-सेरा के नाम से जाना जाता है। इनकी ऊँचाई समुद्र तल से 500 फीट से अधिक है। इस प्रकार पान्तानल क्षेत्र में आने वाली बाढ़ों से सदा सुरक्षित रहते हैं। पान्तानल के निचले भाग के मध्य-पश्चिमी सिरे पर, कोरूम्बा के दक्षिण में ग्ररुकम क्षेत्र है जिसमें विश्व की सघनतम एवं विस्तृत मैंगनीज की सुरक्षित राशियों में से एक विद्यमान है। परागुए नदी इस पठारी 'ब्लॉक' का चक्कर लगाती हुई जाती है।

इस मध्यवर्ती पठारी भाग की औसत ऊँचाई म ररर से 2000 फीट है। र्प में कहीं-कहीं 3000 फीट तक ऊँचे हो गए हैं। भौगोलिक दृष्टि से छापादा पठारी क्रमों का वह भाग उल्लेखनीय है जो माटो ग्रासो राज्य की राजधानी कुइयावा के पूर्व में ऊँची पठारी गाँठ के रूप में विद्यमान है। लगभग 300 मील की चौड़ाई में फैला यह पठार प्लानाल्टो-डी-माटोग्रासो के नाम से जाना जाता है।

पश्चिम के इन पठारी संभागों की जलवायु के प्रमुख क्षण गर्मियों में वर्षा (वर्षा की कुल वर्षा का लगभग 80 प्रतिशत भाग) ऊँचा दैनिक तापान्तर शुष्क ठंडी सर्दियाँ हैं। दैनिक तापांतर लगभग 40° फ. रहता है। वार्षिक वर्षा का औसत 50 और 70 इंच के बीच रहता है। कौरुम्बा में 49 इंच तथा गोइयास में 70 इंच तक वर्षा होती है। जून, जुलाई, अगस्त के महीने (सर्दी ऋतु) प्रायः वर्षा रहित होते हैं।

असर्वेक्षित होने के कारण इस पठारी भाग की प्राकृतिक वनस्पति का साधारण स्वरूप ही मालूम है। उप-विभागों या स्थानीय भिन्नताओं के बारे में ज्ञान गहन अध्ययन से ही सम्भव हो सकता है। लगभग तीन-चौथाई भू-भाग में वृक्षयुक्त सवाना स का विस्तार है। आम तौर पर इस घास का स्वरूप अफ्रीकन 'सवाना लैण्ड' की तरह है। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ वृक्ष अपेक्षाकृत ज्यादा नजदीक हैं। पर्वतीय वृक्ष जिनकी लम्बाई काफी है। इन घास प्रदेशों को 'कैम्पो' कहा जाता है। इनमें सड़कों, जन बसाव व अन्य प्रकार के विकास का अभाव है। जहाँ जानवरों के लिए जल की सुविधा उपलब्ध है वहाँ जानवर आसानी से चराए जा सकते है। पान्तानल क्षेत्र के पूर्व में स्थित पे-डा-सारा में ढोर पाले जाते हैं।

आर्थिक विकास :

इस प्रदेश की लगभग आधी जनसंख्या केवल दो क्षेत्रों, गोइयास का दक्षिणी-पूर्वी भाग तथा माटो ग्रामो का पान्तानल संभाग, में केन्द्रित है। इनमें भी प्रथम क्षेत्र में दो-तिहाई एवं दूसरे में लगभग एक तिहाई जनसंख्या बसी है। दोनों ही भागों को रेल मार्गों द्वारा साओपोलो से जोड़ दिया गया है। सड़कों तथा वायु-सेवा द्वारा भी इन्हें देश के आर्थिक हृदय प्रदेश से जोड़ा गया है। इस प्रकार ये दो क्षेत्र ही पृथकत्व (आइसोलेशन) की स्थिति में नहीं है अन्यथा शेष सारा भाग जन-सम्पर्क से बहुत दूर है। पान्तानल क्षेत्र में कौरम्वा तथा कैम्पो ग्रांडे प्रधान कस्बे हैं। कोरुवा (44,000) का विकास एक यातायात एवं बाजारी केन्द्र के रूप में हो रहा है। यह लापाज तथा साओपोलो के बीच पूर्व-पश्चिम फैले एवं कुयाबा तथा ब्यूनस आयरन के बीच उत्तर-दक्षिण फैले यातायात मार्गों का केन्द्र है। स्वयं परागुऐ नदी पर स्थित होने के कारण जल यातायात का भी केन्द्र है। पान्तानल क्षेत्र का प्रधान आर्थिक व्यवसाय पशुपालन है। उनके उत्पादन के रूप में कोरुम्वा से खालें, सुखाया एवं नमक लगा मांस निर्यात किया जाता है। शीघ्र ही यहाँ से

उरुकुम ब्लॉक से उत्पादित मैंगनीज भी निर्यात किया जाने लगेगा। कैम्पो ग्रांडे 71,000 तथा कुइयावा 49,000 अपने आस-पास के भागों में प्रचलित पशुचारण व्यवसाय के संचय-केन्द्र हैं। कुईयावा का प्रारम्भिक विकास सर्टाओ क्षेत्र में उपलब्ध सोने और हीरों के निर्यात-केन्द्र के रूप में हुआ था।

गोइयास का दक्षिणी-पूर्वी भाग अपेक्षाकृत ज्यादा आर्थिक-विकसित है। परायवा तथा ग्रांडे नदियों के बीच स्थित यह सम्भाग आर्थिक विकास की दृष्टि से साओपोलो या मीनास-गैरेइस राज्य का सा भाग प्रतीत होता है। यहाँ कॉफी, मक्का, गन्ना तथा चावल की खेती होती है तथा आर्द्र-पर्णपाती वन प्रदेश में पशु-चारण व्यवसाय प्रचलित है। वस्तुतः यह ब्राजिल का विकासशील भाग है जहाँ तीव्र गति से भूमि कृषि के अन्तर्गत लायी जा रही है। कॉफी की कुल उत्पादित मात्रा का लगभग 10 प्रतिशत भाग यहाँ से उपलब्ध होता है।

पश्चिमी पराना की तरह गोइयास राज्य के इस विकासोन्मुख सम्भाग में भी आर्थिक विकास की गति के अनुसार नए नगरों की स्थापना की जा रही है। गोइयाना 702,858 तथा अनापोलिश 72,000 सबसे बड़े नगर हैं। गोइयाना, जो अपने नाम के राज्य गोइयास की राजधानी है, का लक्ष्य 500,000 की जनसंख्या तक बढ़ाने का था। यह नगर रेलवे द्वारा साओपोलो एवं रायो-डी-जैनीरो राज्यों के नगरों से जुड़ा हुआ है। इसी संभाग म ब्राजिल की संघीय राजधानी ब्रासीलिया (1,176,000) विकसित की जा रही है जो मुराशा को दुलेट से देश के इस भीतरी भाग मे स्थानांतरित की गई है। इन नगरों के निकट ही, शक्ति की पूर्ति हेतु, कैचोइरा दोरदा नामक स्थान पर एक विशाल शक्तिगृह स्थापित किया गया है। यह ब्राजिल के सबसे बड़े जल शक्तिगृहों में से एक है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि ब्राजिल अपने विकास के सीमांत के रूप में इस सम्भाग का विकास तीव्र गति से कर रहा है। यहाँ की वर्तमान जनसंख्या में केवल दस वर्षों में 100 प्रतिशत की वृद्धि हुई। लाखों [illegible] में लोग [illegible] मीनास-गैरेइस एवं साओपोलो राज्यों से आकर [illegible]

उत्तरी (अमेजन बेसिन) ब्राजिल

ब्राजिल के उत्तर में अमेजन बेसिन के रूप में विश्व में अपने ही किस्म का एक विशिष्ट भौगोलिक स्वरूप विद्यमान है। दुनियां के अन्य नदी-कछारों के विपरीत यह नदी चौड़े-मैदानी भाग में नहीं बहती। इसके बेसिन का विस्तार पश्चिम में 800 मील की चौड़ाई (जहां वेनेज्वेला और बोलिविया अमेजन बेसिन द्वारा पृथक् किए जाते हैं) से लेकर पूर्व में ओबिडोस क्षेत्र मे 100 मील की चौड़ाई तक है। आगे जहां दक्षिण की तरफ झिगू नामक सहायक नदी मिलती है वहीं से द्वीपों का क्रम प्रारम्भ हो जाता है। अमेजन बेसिन का सम्पूर्ण प्रदेश बहुत नीचा है जिसकी औसत ऊँचाई समुद्रतल से 300 फीट से लेकर 700 फीट तक है। पश्चिम, दक्षिण-पश्चिम या दक्षिणी-पूर्व और कहीं-कहीं उत्तर में जहां निचले भाग एण्डीज के चरण-प्रदेश, ब्राजिलियन या वेनेज्वाला के पठार से मिलते हैं ऊँचाई कुछ बढ़ जाती है परन्तु यहां भी 1000 फीट से ज्यादा ऊँचा नहीं है।

सम्पूर्ण प्रदेश में अमेजन एवं उसकी सहायक नदियों का विस्तार है। अमेजन इस विशाल बेसिन भाग के ठीक बीच में पश्चिम से पूर्व को बहती है जिसमें उत्तर, पश्चिम एवं दक्षिण तीनों तरफ के उच्च प्रदेशों (उत्तर में गायना एवं कोलम्बिया का पठार, पश्चिम में रॉकी तथा दक्षिण में ब्राजिल का पठार) से आकर जलधाराएँ मिलती हैं। उत्तर से आकर मिलने वाली नदियों में जापुरा, रायोनीग्रो, रायोब्रांको तथा इरीम्बेटेस एवं दक्षिण से आकर मिलने वाली नदियों में यूकायाली, जुरुआ, पुरुस, माडेरिया, टापाजास, आरागुआ एवं टोकान्टिस प्रमुख हैं। बेसिन के लगभग 10% भाग में नदी जमावकृत तलछट मिट्टियों का विस्तार है। ये भाग मुख्यतः बाढ़कृत मैदानों की स्थिति में हैं जहां कि बाढ़ के दिनों में दलदलीय अवस्थाएँ हो जाती हैं।

अमेजन सिन, जिसका विस्तार 1.5 मिलियन वर्गमील से अधिक है, के अधिकांश भाग में नदियों के द्वारा जमा की गई कांप, रेता, चिकनी मिट्टी आदि का भारी एवं गहन जमाव है। प्रति वर्ष करोड़ों टन मलवा इस बेसिन में नदियों द्वारा लाकर जमा किया जाता है फिर भी आश्चर्यजनक रूप से, बेसिन का विस्तार समुद्र

उरुकुम ब्लॉक से उत्पादित मैंगनीज भी निर्यात किया जाने लगेगा। कैम्पो ग्रांडे 71,000 तथा कुइयाबा 49,000 अपने आस-पास के भागों में प्रचलित पशुचारण व्यवसाय के संचय-केन्द्र हैं। कुईयाबा का प्रारम्भिक विकास सर्टाओ क्षेत्र में उपलब्ध सोने और हीरों के निर्यात-केन्द्र के रूप में हुआ था।

गोइयास का दक्षिणी-पूर्वी भाग अपेक्षाकृत ज्यादा आर्थिक-विकसित है। परायबा तथा ग्रांडे नदियों के बीच स्थित यह सम्भाग आर्थिक विकास की दृष्टि से साओपोलो या मीनास-गैरेइस राज्य का सा भाग प्रतीत होता है। यहाँ कॉफी, मक्का, गन्ना तथा चावल की खेती होती है तथा आर्द्र-पर्णपाती वन प्रदेश में पशु-चारण व्यवसाय प्रचलित है। वस्तुतः यह ब्राजिल का विकासशील भाग है जहाँ तीव्र गति से भूमि कृषि के अन्तर्गत लायी जा रही है। कॉफी की कुल उत्पादित मात्रा का लगभग 10 प्रतिशत भाग यहाँ से उपलब्ध होता है।

पश्चिमी पराना की तरह गोइयास राज्य के इस विकासोन्मुख सम्भाग में भी आर्थिक विकास की गति के अनुसार नए नगरों की स्थापना की जा रही है। गोइयाना 702,858 तथा अनापोलिश 72,000 सबसे बड़े नगर है। गोइयाना, जो अपने नाम के राज्य गोइयास की राजधानी है, का लक्ष्य 500,000 की जनसंख्या तक बढ़ाने का था। यह नगर रेलवे द्वारा साओपोलो एवं रायो-डी-जैनीरो राज्यों के नगरों से जुड़ा हुआ है। इसी संभाग में ब्राजिल की संघीय राजधानी ब्रासीलिया (1,176,000) विकसित की जा रही है जो सुरक्षा की दृष्टि से देश के इस भीतरी भाग मे स्थानांतरित की गई है। इन नगरों के निकट ही, शक्ति की पूर्ति हेतु, कैचोइरा दोरदा नामक स्थान पर एक विशाल शक्तिगृह स्थापित किया गया है। यह ब्राजिल के सबसे बड़े जल शक्तिगृहों में से एक है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि ब्राजिल अपने विकास के सीमांत के रूप में इस सम्भाग का विकास तीव्र गति से कर रहा है। यहाँ की वर्तमान जनसंख्या में केवल दस वर्षों में 180 प्रतिशत की वृद्धि हुई। लाखों की जनसंख्या में लोग निकटवर्ती मीनास-गैरेइस एवं साओपोलो राज्यों से आकर बस गए हैं।

□□□

उत्तरी (अमेजन बेसिन) ब्राजिल

ब्राजिल के उत्तर में अमेजन बेसिन के रूप में विश्व में अपने ही किस्म का क विशिष्ट भौगोलिक स्वरूप विद्यमान है। दुनियां के अन्य नदी-क्रमों के विपरीत यह नदी चौड़े-मैदानी भाग में नहीं बहती। इसके बेसिन का विस्तार पश्चिम में 800 मील की चौड़ाई (जहाँ वैनीज्वला और बोलिविया अमेजन बेसिन द्वारा पृथक् किए जाते हैं) से लेकर पूर्व में ओबिडोस क्षेत्र में 100 मील की चौड़ाई तक है। आगे जहाँ दक्षिण की तरफ झिग्रू नामक सहायक नदी मिलती है वहीं से द्वीपों का क्रम प्रारम्भ हो जाता है। अमेजन बेसिन का सम्पूर्ण प्रदेश बहुत नीचा है जिसकी औसत ऊँचाई समुद्रतल से 300 फीट से लेकर 700 फीट तक है। पश्चिम, दक्षिण-पश्चिम या दक्षिणी-पूर्व और कहीं-कहीं उत्तर में जहाँ निचले भाग एण्डीज के चरण-प्रदेश, ब्राजिलियन या वैनीज्वाला के पठार से मिलते हैं ऊँचाई कुछ बढ़ जाती है परन्तु यहाँ भी 1000 फीट से ज्यादा ऊँचा नहीं है।

सम्पूर्ण प्रदेश में अमेजन एवं उसकी सहायक नदियों का विस्तार है। अमेजन इस विशाल बेसिन भाग के ठीक बीच में पश्चिम से पूर्व को बहती है जिसमें उत्तर, पश्चिम एवं दक्षिण तीनों तरफ के उच्च प्रदेशों (उत्तर में गायना एवं कोलम्बिया का पठार, पश्चिम में रॉकी तथा दक्षिण में ब्राजिल का पठार) से आकर जलधाराएँ मिलती हैं। उत्तर से आकर मिलने वाली नदियों में जापुरा, रायोनीग्रो, रायोब्रांको तथा ट्रोम्बेटैस एवं दक्षिण से आकर मिलने वाली नदियों में यूकायाली, जुरुआ, पुरुस, माडेरिया, टापाजाज, आरागुआ एवं टोकान्सि प्रमुख हैं। बेसिन के लगभग 10% भाग में नदी जमावकृत तलछट मिट्टियों का विस्तार है। ये भाग मुख्यतः बाढ़कृत मैदानों की स्थिति में हैं जहाँ कि बाढ़ के दिनों में दलदलीय अवस्थाएँ हो जाती हैं।

अमेजन सिन, जिसका विस्तार 1.5 मिलियन वर्गमील से अधिक हैं, के अधिकांश भाग में नदियों के द्वारा जमा की गई काँप, रेता, चिकनी मिट्टी आदि का भारी एवं गहरा जमाव है। प्रति वर्ष करोड़ों टन मलवा इस बेसिन में नदियों द्वारा लाकर जमा किया जाता है फिर भी आश्चर्यजनक रूप से, बेसिन का विस्तार समुद्र

की ओर नहीं हो रहा । इसका कारण निरंतर होने वाला निमज्जन (सब्सिडेंस) है ।[11] और यही कारण है कि नदियों द्वारा भारी मलबा जमा किए जाने के बावजूद डेल्टा का निर्माण नहीं होता । बल्कि, इसके विपरीत, यह प्रतीत होता है कि प्राचीन डेल्टा प्रदेश भी निरन्तर धसाव से प्रभावित होता रहा है और समुद्र सहायक जलधाराओं में प्रवेश कर डेल्टा प्रदेश के मग्न भाग को द्वीपीय स्वरूप प्रदान कर रहा है । ऐसे अनेक द्वीप अमेजन के मुहाने प्रदेश में विद्यमान हैं । इनमें सबसे बड़ा मराजो द्वीप है । मराजो द्वीप के दक्षिण में पारा नदी दक्षिण की तरफ से आकर समुद्र में मिलती है । यह प्रश्न, कि उक्त नदी अमेजन की सहायक है या नहीं, विवादास्पद है । प्रायः यह नदी अमेजन की सहायक मानी जाती है यद्यपि इसका अमेजन से बहुत कम सम्बन्ध है और सीधी महासागर में मिल जाती है । इस नदी का सम्पूर्ण बेसिन उच्च पठारी भाग में है अतः बहुत कम मलबा बह करके इसके साथ आता है । इसका बाढ़ कृत मैदान संकरा एवं कम दलदली है । ये कुछ लक्षण इसे अमेजन की अन्य सहायकों से अलग करते हैं । अमेजन की अधिकांश नदियां झरने युक्त होने के कारण नाव्य नहीं हैं ।

चित्र–5

अमेजन दुनियां की सर्वाधिक लम्बी नदियों में से एक है । यह पर्याप्त लम्बाई में नाव्य है । यहां तक कि पीरू के इक्वीटोस नगर तक 14 फीट गहराई

11. Gelbert, J. B.—Latin America, A Regional Geography p. 356.

वाले जलयान इसमें जा सकते हैं। अपनी निचली घाटी में यह कहीं भी 75 फीट से कम गहरी नहीं है। ओबिडोस के निकट यह लगभग 300 फीट गहरी है। ज्वार तरंगों का प्रभाव अमेजन में केवल झिगू के संगम क्षेत्र तक होता है। अमेजन के सहारे-सहारे बाढ़ कृत मैदानी भाग हैं जिसकी चौड़ाई औसतन 50 मील है। बाढ़कृत भाग में यत्र-तत्र एवं दलदलीय भागों की उपस्थिति का सीधा प्रभाव यह है। कि बाढ़ के समय अतिरिक्त पानी का बड़ा अंश इनके द्वारा खपा लिया जाता है। फलतः साधारण बहाव से अधिक से अधिक तीन गुना जल-बहाव ही बाढ़ के दिनों में हो पाता है। जलधारा के सहारे-सहारे फैली दलदल एवं बाढ़ कृत मैदानों की पट्टी के बाद कुछ ऊँचाई लिए धरातल स्थित है जिसे 'टैरा फर्मा' कहा जाता है।

राजनैतिक संगठन की दृष्टि से अमेजन बेसिन का यह विशाल भू-खण्ड मुख्यतः दो राज्यों—अमेजन तथा पारा में संगठित है। अमेजन बेसिन पश्चिम में एण्डीज श्रृंखला तक फैला है। इस प्रकार ब्राजिल के उत्तर में स्थित यह विशाल भू-खण्ड, जो सघन उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वनों से ढका है। अपने प्रकार का एक विशिष्ट प्रदेश है। विश्व के किसी भी भाग में दलदलयुक्त सदाबहार वन इतने विशाल भाग में विस्तृत नहीं हैं।

अमेजन बेसिन विषुवत रेखिक जलवायु का सच्चा प्रतिनिधि है। वर्ष भर ऊँचे तापक्रम, ज्यादा वर्षा तथा नगण्य तापान्तर यहाँ की जलवायु के प्रमुख लक्षण है। गर्मी तथा सर्दी दोनों ऋतुओं की 80° फ० की समताप रेखाएँ यहाँ होकर गुजरती हैं। वार्षिक तापान्तर 5° फ० से ज्यादा नहीं होते। निस्सन्देह तापान्तर पश्चिम की ओर कुछ बढ़ते जाते हैं क्योंकि पूर्व में समुद्री प्रभाव होता है। बैलेम में तापान्तर $2\frac{1}{2}$ फ० ज्यादा नहीं होता। यथा सर्वाधिक गर्म और सर्वाधिक ठण्डे महीने का तापक्रम क्रमशः 89·9 तथा 77·4 फ० होते हैं। पूर्व में समुद्री हवा जलवायु को कुछ आकर्षक बना देती है अन्यथा भीतरी भागों में स्थिर हवा ज्यादा आर्द्रता अधिक गर्मी आदि मिलकर स्थायी सड़ी-गर्मी का मौसम प्रस्तुत करते हैं। यूरोपियन लोग तो इस प्रकार की जलवायु अवस्थाओं में रह ही नहीं सकते। समस्त अमेजन बेसिन में वर्षा ज्यादा (80") होती है। बैलेम का वार्षिक औसत 86 इंच है जिसका अधिकांश भाग (76 इंच) जनवरी से जून तक के दिनों में गिरता है। कहीं-कहीं 100 इंच से भी अधिक वर्षा होती है। रोजाना संवाहनिक वर्षा इस प्रदेश का प्रमुख लक्षण है।

विषुवत रेखिक स्थिति, काँप की मिट्टियों का विस्तार, गर्म-आर्द्र जलवायु आदि तत्वों ने मिलकर अमेजन बेसिन को विशिष्ट प्रकार की प्राकृतिक वनस्पति प्रदान की है। स्वाभाविक रूप में, यहाँ उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन मिलते हैं। वृक्षों की ऊँचाई 200–250 फीट तक है। प्रायः कठोर लकड़ी वाले वृक्ष

है। जंगल इतने सघन हैं कि उनमें सूर्य का प्रकाश भी नहीं पहुँच पाता। अतः धरातल पर दलदलीय अवस्थाएँ रहती हैं क्योंकि वर्षा रोज होती है और वाष्पीकरण हो नहीं पाता। मिट्टी एवं जल प्रवाह के अनुरूप प्राकृतिक वनस्पति के स्वरूप में क्षेत्रीय भिन्नता भी पाई जाती है। बेसिन के उत्तर में, गायना के पठार के विस्तार भाग में जहाँ थोड़ी शुष्क अवधि भी होती है, विस्तृत भागों सवाना तुल्य घास पाई जाती है। दक्षिण में ब्राजिल के पठार के विस्तार भागों में भी सवाना घास का विस्तार है। अनपेक्षित रूप से मराजो द्वीप के पूर्वी भाग में भी कुछ घास क्षेत्र हैं।

कठोर लकड़ी के स्रोत के रूप में तो अमेजन बेसिन के जंगलों का महत्व है ही, इसके अतिरिक्त औद्योगिक महत्व के अनेक वृक्ष मिलते हैं। इनमें हैविया, बालाटा, कैस्टीलोआ एवं ब्राजिल नट ज्यादा उल्लेखनीय हैं। हैविया जो श्रेष्ठ किस्म की रबर का स्रोत हैं, बेसिन के पश्चिमी भाग यानी ऊपरी अमेजन बेसिन में उपलब्ध है। बालाटा का बाहुल्य नीग्रो-ब्रांको बेसिन के ऊपरी भाग में है जबकि कैस्टीलोआ बेसिन के दक्षिणी भाग में मिलता है।

आर्थिक विकास :

अमेजन बेसिन के भौगोलिक वातावरण की प्रतिकूलता के कारण यहाँ आर्थिक विकास एवं मानव बसाव नगण्य रूप में हुआ है। इस भाग में गर्म-आर्द्र जलवायु, सड़ी-गर्मी, अत्यधिक जंगल, दलदल आदि के कारण प्राकृतिक संसाधनों की पर्याप्तता के बावजूद केवल कुछ ही भागों में मानव-बसाव सम्भव हो सका है। आज स्थिति यह है कि यह लैटिन अमेरिका का सबसे ज्यादा जनशून्य भाग है। यहाँ का जनसंख्या घनत्व 1 मनुष्य प्रति वर्ग मील से भी कम है। पिछले दशकों, विशेषकर 1950–80 में अवश्य कुछ जनसंख्या में प्रगति हुई है। ऐसी सम्भावना है कि अमेजन बेसिन में पैट्रोल प्राप्त हो जाए। अगर यह सम्भव हुआ तो अवश्य जन बसाव के लिए एक और आकर्षक आधार प्रस्तुत होगा। वर्तमान में यहाँ के प्रधान आर्थिक आधार सीमित कृषि, नगण्य खनिज पदार्थ व वनों से प्राप्त उपजें हैं।

सवाना घास क्षेत्रों, विशेषकर ऊपरी रायोब्रांको में बोआविस्ता के निकट तथा मराजो द्वीप में सीमित स्तर पर पशु चारण व्यवसाय प्रचलित है। आदिवासी इण्डियन लोग इस व्यवसाय को करते है। आर्द्र जलवायु, दलदलीय एवं बीमारियों युक्त वातावरण होने के कारण विकास की सम्भावनाएँ कम हैं। बचे हुए भागों में अविकसित प्रकार की कृषि भी की जाती है। जंगलों को जलाकर उपजाऊ भूमि प्राप्त की जाती है। 4–5 वर्ष तक फसल लेते हैं फिर उसे छोड़ दिया जाता है। बहुत से लोग मत्स्य व्यवसाय, जड़ों के संचय, दवाइयों के लिए उपयुक्त जड़ी-

बूटियों के संचय या गोंद के संचय में लगे हैं। इनमें ब्राजिल नट उल्लेखनीय हैं। प्रति वर्ष लगभग 30,000 टन ब्राजिल-नट संचय किए जाते हैं। ब्राजिल नट कास्टान्हैरो नामक वृक्ष से प्राप्त किया जाता है। आमतौर पर नदियों के किनारों पर पाया जाने वाला यह वृक्ष बहुत लम्बा होता है। इस उद्योग का सर्वाधिक घनत्व पारा राज्यों में है। पकने पर फल नारियल के समान स्वयं ही गिर जाता है। लोग नावों में जाकर इसे एकत्र करते हैं। इसका प्रयोग खाने तथा तेल निकालने के लिए होता है।

कुछ, लेकिन अत्यन्त सीमित, क्षेत्रों में कोको, गन्ना, तम्बाकू, कपास, मक्का, तथा केला की कृषि की जाती है। ये कृषि क्षेत्र प्रायः बड़े केन्द्रों जैसे मानौस (611,763) सांतारैम (17,000) ओबिडोस (5,500) आदि के आसपास हैं। सबसे महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र बैलेम-ब्रागांका रेल मार्ग के दोनों ओर है। यहाँ परम्परागत कृषि फसलों के अतिरिक्त जापानियों ने जूट तथा चावल भी पैदा करना प्रारम्भ कर दिया है।

खनिज पदार्थों में साधारणतया यह प्रदेश गरीब है। प्रदेश के पूर्व में, जहाँ अमेजन के मुहाने के पास गायना के पठार का विस्तार भाग है, आमापा क्षेत्र में मैंगनीज के भण्डार मिले हैं। इसे 125 मील की दूरी पर स्थित माकापा बन्दरगाह से जोड़ दिया गया है। यहाँ से प्रति वर्ष लगभग 5 लाख टन मैंगनीज निर्यात किया जाता है। बेसिन के पश्चिम में, एण्डीज के चरण प्रदेशों में तेल सर्वेक्षण जारी है और उम्मीद है कि किसी दिन यहाँ तेल का भण्डार मिलेगा। यह अनुमान इस क्षेत्र में विद्यमान परतदार चट्टानों के स्वरूप के आधार पर किया जाता है। वर्तमान में अमेजन बेसिन की तेल सम्बन्धी आवश्यकताएँ उस तेल से पूरी की जाती हैं जो इक्विटौस से होकर पीरू के तेल क्षेत्र गैन्सो-एजुल तेल क्षेत्र से लाया जाता है तथा मानौस में स्थित तेलशोधक कारखाने में शोधा जाता है।

रबर :

रबर अमेजन बेसिन का सबसे महत्वपूर्ण उत्पादन है। इस संभाग में स्थित एक्रे, अमेजन तथा पारा राज्य इसके प्रधान उत्पादन क्षेत्र हैं। रबर प्रदान करने वाले पौधे अमेजन बेसिन की भू-मध्य रैखिक जलवायु में प्राकृतिक रूप से पैदा होते हैं। वनस्पतिशास्त्रियों के अनुसार अमेजन बेसिन रबर पैदा करने वाले वृक्षों की श्रेष्ठ किस्मों का घर है। यहाँ रबर प्रमुखतः तीन वृक्षों हेविया, बालाटा तथा कैस्टीलोआ से प्राप्त की जाती है। बालाटा की सर्वाधिक मात्रा कोलम्बिया, वैनेज्वाला तथा ब्रिटिश गायना के सीमावर्ती क्षेत्रों में पायी जाती है। यह वृक्ष जंगल के अन्य वृक्षों के बीच प्रायः छितरे रूप में उगता है। कहीं-कहीं सघन रूप में मिलता है। फलतः वृक्षों के छितरे होने तथा यातायात के साधनों की कमी में इस क्षेत्र में रबर उद्योग बहुत कम विकसित हो पाया है। बालाटा से प्राप्त रबर का प्रधान संग्रह केन्द्र मानौस है।

कैस्टीलोग्रा का वृक्ष अमेजन की दक्षिणी सहायक नदियों परागुआया तथा पूरूस नदियों के मध्य स्थित अपेक्षाकृत शुष्क भागों में पाया जाता है। इस वृक्ष से प्राप्त रबर को दक्षिणी अमेरिका में कौचो के नाम से जाना जाता है। हैविया से प्राप्त रबर की तुलना में कौचो कुछ घटिया किस्म की होती है। रबर प्राप्ति मात्रा एवं क्वालिटी की दृष्टि से हैविया अमेजन बेसिन का सबसे महत्वपूर्ण रबर-वृक्ष है। यह अधिकांशतः नदियों के किनारेवर्ती भागों में दलदलीय या ज्यादा आर्द्र मिट्टियों में मिलता है। ऐसे भागों, जहां निरन्तर बाढ़ का प्रकोप बना रहता है, में हैविया के लिए आदर्श दशाएँ होती हैं। मिट्टी एवं आर्द्रता की मात्रा की भिन्नता से हैविया की ऊँचाई में भी अन्तर आ जाता है। निचले दलदलीय भागों में इस वृक्ष की औसत ऊँचाई 30 से 100 फीट तक होती है। वैसे तो हैविया की कई किस्में हैं परन्तु सबसे अच्छी किस्म अमेजन की ऊपरी घाटी या बेसिन के पश्चिमी भागों में पाई जाती है।

अमेजन बेसिन में रबर व्यवसाय के विकास में सं० रा० अमेरिका का बहुत बड़ा हाथ रहा है। पिछले 3–4 दशकों में रबर व्यवसाय में जो कुछ भी विकास हुआ है वह सं० रा० अमेरिका की ही रुचि एवं प्रयत्नों का फल है। 1923–24 में अमेरिका के वाणिज्य मन्त्रालय ने यहां रबर व्यवसाय के विकास तथा रबर उत्पादक वृक्षों की विकास की अवस्थाओं के अध्ययन के लिए एक 'रबर सर्वेक्षण पार्टी' भेजी। कुछ वर्षों बाद फोर्ड मोटर कम्पनी ने पारा राज्य में रबर प्लान्टेशन के लिए कुछ जमीन खरीदी 1940 में सं० रा० अमेरिका के कृषि मन्त्रालय ने एक साथ पाँच दस रबर उत्पादन तकनीकें सीखने भेजे। कई पौधशालाएँ (नर्सरीज) स्थापित की गई। फोर्ड कम्पनी ने टापापोज नदी के किनारे लगभग 20,000 एकड़ भूमि में रबर का नया प्लान्टेशन किया। इस प्रकार पिछली 4–5 दशाब्दियों में ही यहां यह उद्योग विकसित हुआ है।

जलवायु तथा मिट्टी की अनुकूलता को देखते हुए जिस गति से अमेजन बेसिन में रबर व्यवसाय का विकास अपेक्षित है उतनी गति से वस्तुतः हो नहीं पाया है। कई ऐसे कारण हैं जो इस व्यवसाय के विकास में बाधक हैं। सबसे बड़ी समस्या मजदूरों की है। वे दिन लद गए जबकि हजारों की संख्या में सेरिंगवेइरोस (रबर एकत्र करने वाले मजदूर) मिल जाते थे। आजकल बेसिन में व्याप्त बीमारियों के कारण मजदूर आते नहीं हैं। दूसरे मजदूरों को ब्राजिल के अन्य हिस्सों में बहुत से काम मिल जाते हैं। यातायात के साधनों का अमेजन बेसिन में अभाव है। ऊपरी बेसिन विशेषकर अमेजन की सहायक जूरुआ तथा पुरुस नदियों के बेसिन भागों में भयानक ज्वर फैलता है। इस कारण ये भाग स्थायी बसाव के लिए भी उपयुक्त नहीं है।

रबर संचय का कार्य प्रायः कम वर्षा वाले या सूखे मौसम के दिनों में किया जाता है जबकि नदियों में बाढ़ न हो। पहले जब यह उद्योग अविकसित स्तर पर

था लोग प्रायः वृक्ष को काट कर उसका रस प्राप्त करते थे। आजकल प्रचलन यह है कि तने में छेद करके उससे बाल्टी लगा दी जाती है जिसमें रबर लेटेक्स तरल रूप में भर जाता है। यह विधि ज्यादा आर्थिक भी सिद्ध हुई है।

पिछले 6–7 दशकों के रबर उत्पादन मात्रा के आंकड़े देखें तो स्पष्ट होगा कि ब्राजिल का रबर व्यवसाय ह्रासोन्मुख है। पिछली शताब्दी के अन्त तथा प्रथम विश्वयुद्ध से पहले तक ब्राजिल न केवल दक्षिणी अमेरिका वरन् समस्त विश्व में सर्वाधिक रबर उत्पन्न करने वाला देश था निर्यात का भी प्रमुख अंश ब्राजिल से ही उपलब्ध होता था। वर्तमान में उत्पादन तथा निर्यात दोनों घट गया। ह्रास का अनुमान इससे लग सकता है कि 1912 में यहाँ 42,510 मैट्रिक टन रबर उत्पादित की गई जबकि 1967 में केवल 29,787 मैट्रिक टन उत्पादित हुई। उत्पादन में घटाव का प्रधान कारण यही है कि आसानी से पहुँचे जा सकने वाले जंगलों, जिनमें कि बीमारियों का प्रकोप भी बहुत कम था, की क्षमता समाप्त प्रायः है और भीतरी भागों में भौगोलिक परिस्थितियाँ मानव-बसाव के लिए अनुपयुक्त हैं। लगाए गए प्लान्टेशन्स का ब्राजिल में पूर्णतः अभाव है। संघीय सरकार इस ओर प्रयत्नशील है परन्तु टापाजोज क्षेत्र में फोर्ड द्वारा स्थापित प्लान्टस की असफलता को देख कर अभी पूँजीपति लोग साहस नहीं कर पाते। इसके विपरीत मलाया आदि देशों में बड़े पैमाने पर प्लान्टेशन्स किए गए हैं। इन परिस्थितियों में ब्राजिल का रबर उत्पादन तथा निर्यात का विश्व प्रतिशत बहुत घट गया है। निम्न सारणी द्वारा यह तथ्य और भी ज्यादा सुस्पष्ट है।

रबर उत्पादन
(1000 मै० टनों में)

	द० अमेरिका	अफ्रीका	एशिया	दक्षिणी अमेरिका का प्रतिशत
1913	45	18	51	39·5
1939	16	16·1	948	1·6
1954	25·8	86	1716	1·5
1960	25	142	1855	1·2

□□□

दक्षिणी ब्राजिल

ब्राजिल के लगभग 1/14 भू-क्षेत्र एवं 1/6 जनसंख्या युक्त दक्षिण के तीनों राज्य, पराना, सांता काटारिना एवं रायो-ग्रांडे-डो-सूल देश के अन्य भागों से पृथक् एक इकाई प्रस्तुत करते हैं जो भौगोलिक वातावरण एवं आर्थिक क्रियाओं की दृष्टि से काफी समानता लिए है। पशुचारण तथा लकड़ी काटना इस सम्भाग के आर्थिक ढाँचे के प्रमुख आधार हैं। यहाँ दक्षिणी अमेरिका का मुलायम लकड़ी का सबसे बड़ा भण्डार है। समस्त देश के एक-तिहाई ढोर एवं तीन-चौथाई भेड़ें इन तीनों राज्यों में हैं। भेड़ पालन उद्योग का प्रधान आधार यहाँ के विस्तृत प्राकृतिक घास क्षेत्र, ठण्डी एवं अपेक्षाकृत कम आर्द्र जलवायु आदि तत्व हैं। ब्राजिल की ऊनी मिलों को अधिकांश ऊन दक्षिणी राज्यों से ही प्राप्त होती है।

प्राकृतिक दशाएँ :

धरातलीय स्वरूप एवं संरचना की दृष्टि से यह सम्भाग ब्राजिलियन पठार के अधिकांश भागों से भिन्न हैं। प्राचीन रवेदार चट्टानें केवल सीमित स्थानों पर उघड़े रूप में हैं। ज्यादातर भाग में क्रमबद्ध रूप में तलछट जमा है। धरातलीय दृष्टि से इस सम्भाग का स्वरूप एक अत्यन्त कटे-फटे पठारी भाग के रूप में है। वस्तुतः यह पराना-पठार का ही उत्तरी विस्तार है। रायो-ग्रांडे नदी के दक्षिण में ब्राजिलियन पठार से मिलती-जुलती रवेदार चट्टानें प्रकट होती हैं। कठोर चट्टानी भाग होने के कारण कटाव कम हुआ है, अतः यहाँ ये वास्तविक पठारी स्वरूप लिए हैं। औसत ऊँचाई 2000 फीट है यद्यपि कुछ चोटियाँ 5000 फीट तक ऊँची चली गई है। उघड़ी रवेदार चट्टानों से निर्मित पठारी भाग तथा सेरा-डो-मार एस्कार्पमेंट शृंखला के रूप में ऊँचे भागों का यह क्रम परानागुआ-क्यूरीटीबा क्षेत्र के तट प्रदेश में लगभग 80 मील चौड़ा है परन्तु दक्षिण की ओर संकरा होता जाता है। टूबाराओ के दक्षिण में इनकी चौड़ाई केवल 20 मील ही रह जाती है। लगभग 30° दक्षिणी अक्षांश के निकट उच्च भागों का यह क्रम समाप्त प्रायः है। तट के सहारे-सहारे संकरी मैदानी पट्टी है जो दक्षिण की तरफ क्रमशः चौड़ी होती जाती है। ब्राजिल के इस सम्भाग में, ऐसा प्रतीत होता है कि तट

भाग निरन्तर घसावग्रस्त रहा है। लैगून भीलें पर्याप्त हैं। रेतीली पट्टी एवं रेत के टीलों की कमी है।

दो ऐसे तत्व हैं जो दक्षिणी ब्राजिल के इन राज्यों की जलवायु दशाओं को दक्षिणी-पूर्वी (साओपोलो, रायो-डी-जैनीरो) भाग से अलग करते हैं। प्रथम, गर्मियों में वर्षा की अधिकांश मात्रा की अपेक्षा दक्षिणी भाग में वर्ष भर समवितरित वर्षा होती है। द्वितीय, दक्षिणी ब्राजिल विशेषकर उच्च भागों में पाले के अवसर बढ़ जाते हैं। स्वाभाविक रूप में इनका असर कृषि-उपजों पर पड़ता है। गर्मियों के तापक्रम दक्षिणी-पूर्वी भागों से मिलते-जुलते होते हैं। यथा, पोर्ट ऐलेग्रे में सर्वाधिक गर्म महीने का औसत 76° फं० होता है जबकि रायो-डी-जैनीरो में 79° फं०। सर्दियों के तापक्रमों में अवश्य अन्तर होता है। इन दिनों दक्षिणी-ब्राजिल में स्थित पोर्ट ऐलेग्रे का तापक्रम (53° फं०) दक्षिणी-पूर्वी भाग के प्रतिनिधि नगर रायो-डी-जैनीरो के तापक्रम (69° फं०) से कहीं कम होता है। इन दिनों के तापक्रमों को नीचा करने में दक्षिण-पश्चिम से चलने वाली ठण्डी हवाओं मिनुआनो का भी सहयोग होता है।

अटलांटिक तट के सहारे-सहारे एस्कार्पमेंटस की उपस्थिति से वर्षा की मात्रा ज्यादा (70 इंच) होती है यद्यपि दक्षिण की ओर कम होती जाती है। यथा, पोर्ट ऐलेग्रे में वार्षिक औसत केवल 50 इंच है। भीतरी पठारी भागों में वर्षा का वितरण प्रायः समान सभी भागों में 50 तथा 60 इंच के बीच वर्षा हो जाती है। सक्षेप में, समस्त दक्षिणी ब्राजिल की जलवायु साधारणतया स्वास्थ्य के लिए उत्तम है। तटवर्ती भागों की अपेक्षा भीतरी पठारी भागों की जलवायु ठण्डी तथा सुहावनी होती है। भीतरी भागों में तापांतर भी ज्यादा होते हैं। जाड़ों में उच्च भागों में कभी-कभी हिम वर्षा भी हो जाती है।

वर्षा की मात्रा एवं तापक्रम का प्राकृतिक वनस्पति पर प्रभाव यहां सुस्पष्ट रूप में है। प्रदेश के उत्तरी तट प्रदेश में जहां वर्षा एवं तापक्रम दोनों ज्यादा हैं, उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन मिलते हैं इनमें कठोर लकड़ी वाले वृक्षों का आधिक्य है। भीतरी भागों में वर्षा की कमी के फलस्वरूप अधिकतर वन पतझड़ प्रकार के हैं जिनमें मुलायम लकड़ी वाले वृक्ष मिलते हैं। पराना की गहरी घाटी में अर्द्ध-पर्णपाती वनों का आधिक्य है। टिम्बर दक्षिणी राज्यों के आर्थिक ढांचे में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। जंगलों में आर्थिक दृष्टि से पराना-पाइन सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है जो लगभग तीन राज्यों में मिलता है। परन्तु इसका सर्वाधिक घनत्व पराना तथा सांता कातारिना राज्यों के पश्चिमी भाग में फैली रायो-आल्टो पराना घाटी में है। दक्षिणी भागों में जहां वर्षा कम होती है सवाना प्रकार की घास मिलती है। अगर यूरूग्वे नदी के 50 मील दक्षिण में, नदी के समानांतर एक रेखा खींची जाए तो यह दक्षिणी ब्राजिल की वनस्पति की विभाजक होगी जिसके उत्तर में घने जंगल एवं दक्षिण में घास प्रदेश हैं।

आर्थिक विकास :

दक्षिणी ब्राजिल के आर्थिक ढांचे के प्रमुख चार आधार हैं। ये हैं:- 1. पशुचारण 2. कृषि 3. वन व्यवसाय तथा 4. कोयले की खुदाई।

वैसे तो दक्षिण के तीनों राज्यों में ही पशुचारण व्यवसाय प्रचलित है परन्तु सघनता, उत्पादन मात्रा एवं व्यापारिक महत्व की दृष्टि से सम्भाग के दक्षिणी हिस्सों में (रायो-ग्रांडे डो-सूल राज्य) संचालित व्यवसाय महत्वपूर्ण है। स्वाभाविक भी है क्योंकि घास क्षेत्रों की सघनता भी दक्षिणी हिस्सों में ही ज्यादा है। रायो-ग्रांडे-डो-सूल राज्य में वर्षा नियमित रूप से लगभग साल भर होती है। बहुत से भागों में उपयोगी कृत्रिम घास लगाई गई है। यह भाग ढोर तथा भेड़ दोनों के लिए उपयुक्त है। वस्तुतः इन्हीं प्राकृतिक परिस्थितियों ने दक्षिणी ब्राजिल के इन राज्यों को देश का प्रमुख सूअर के मांस का स्रोत बना दिया है। यहाँ भी सूअरों को मक्का खिला कर मोटा किया जाता है। इस सम्भाग की जलवायु मक्का के लिए भी उपयुक्त है। ब्राजिल में लगभग 34 मिलियन सूअर पाले जाते हैं जिनका लगभग 45% भाग दक्षिण के इन तीन राज्यों में है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान में ब्राजिल में अर्जेन्टाइना की तुलना में ज्यादा पशु पाले जाते है मांस का उत्पादन भी ज्यादा है।[12] चूंकि मांस की घरेलू खपत बहुत ज्यादा है अतः निर्यात की दृष्टि से अवश्य अर्जेन्टाइना आगे है। भौगोलिक प्रदेश के आधार पर देखा जाय तो रायो-ग्रांडे-डो-सूल यूरुग्वे और अर्जेन्टाइना के पम्पा प्रदेश का विस्तार भाग सा ही लगता है।

सूअर पालन के अतिरिक्त दक्षिण के राज्यों में भेड़ें, बकरियाँ तथा दूध-मांस के लिए उपयुक्त ढोर भी पाले जाते हैं। अनुमानतः इन राज्यों में 14 मिलियन भेड़ें 42 मिलियन ढोर तथा 6 मिलियन बकरियाँ पाली जा रही हैं। इनके संदर्भ में देश के कुल पशु धन के बारे में जानना वांछनीय है। वर्तमान में ब्राजिल में 93 मिलियन ढोर 34 मिलियन सूअर, 18 मि० भेड़, 9 मिलियन बकरियाँ तथा 5 मिलियन घोड़े हैं। रायो-ग्रांडे-डो-सूल के अधिकांश पशु उत्पादन पोर्ट एलेग्रे 1,114,867 से निर्यात किया जाता है। अपने पृष्ठ प्रदेश के उत्पादनों से सम्बन्धित इस नगर में, कई प्रकार के उद्योग विकसित हो गए हैं जिनमें ऊनी वस्त्र, मांस पैकिंग, चमड़ा तथा चर्बी उद्योग प्रमुख हैं।

दक्षिणी राज्य कोयला के महत्वपूर्ण स्रोत हैं जहाँ से देश का 4/5 से अधिक कोयला उपलब्ध होता है। इसी कोयले के द्वारा पोर्ट एलेग्रे में संचालित उद्योग धंधे चलाए जाते हैं। वस्तुतः कोयला की एक श्रृंखलाबद्ध पट्टी है जो साओपोलो राज्य के दक्षिण से होकर पराना, सांता काटारिना एवं रायो-ग्रांडे-डो-सूल तक बिस्तृत है। समस्त पट्टी में बिटूमिनस की राशि (सुरक्षित राशि 398 मिलियन टन) आंकी जाती है परन्तु राख तथा गंधक की मात्रा ज्यादा होने से आधुनिक उद्योगों के लिए उपयुक्त कोकिंग कोयला इससे नहीं बनाया जा सकता। दक्षिणी राज्यों में

12. Statesman's year book, Macmillan year 1984-85.

दो प्रमुख कोयला खनन-क्षेत्र हैं। प्रथम रायो-ग्रांडे राज्य में साम्रो जैरोनिमो क्षेत्र जो रायो-जेंकुई के दक्षिण में थोड़ी सी दूरी पर घास के खुले मैदान में है। यहाँ तीन खानें हैं। खनिक मजदूर आधुनिकतम बस्तियों में रहते हैं जिनमें से कुछ बस्तियाँ तो अमेरिका की खनिक बस्तियों को भी शर्मिन्दा करने में सक्षम हैं। यातायात बड़ा सस्ता है। साम्रो-जैरनीमो से रायो-जेंकुई नदी तक रेल द्वारा और वहाँ से नदी द्वारा पोर्ट एलैग्रे तक।

कोयला घटिया किस्म का है जिसमें राख का प्रतिशत 40 तक होता है। साफ करके इस प्रतिशत को 20-30 तक लाया जाता है। इसके लिए विशिष्ट मशीनें हैं। परन्तु साफ करने के बावजूद भी आधुनिक किस्म का कोक इससे तैयार नहीं हो सकता। अतः केवल स्थानीय महत्व का है।

दूसरा कोयला क्षेत्र सांता काटारिना राज्य में, राज्य की दक्षिणी सीमा के निकट टूबारामो के पृष्ठ प्रदेश में स्थित है। कई खानें हैं जिनसे कोयला निकाल कर 40 मील की दूरी पर स्थित टूबारामो बंदरगाह को रेल द्वारा माल भेजा जाता है। सांता काटारिना का कोयला रायो-ग्रांडे-डो-सूल राज्य के कोयले से अच्छा है। राख इसमें भी ज्यादा है परन्तु इससे कोक बनाया जा सकता है। 1982 में पराना, सांता काटारिना तथा रायो-ग्रांडे-डो-सूल की खानों ने सम्मिलित रूप से 15 मिलियन टन कोयला उत्पादित किया। टूबारामो बंदरगाह से कोक रायो-डी-जैनीरो को भेजा जाता है जिसका उपयोग वोल्टा रैण्डोडा के इस्पात के कारखाने में होता है। रायो-ग्रांडे राज्य में रायो-ग्रांडे-बैगे रेल्वे लाइन के 50 मील उत्तर में स्थित आर्कीयन युगीन चट्टानों से थोड़ी सी मात्रा में तांबा भी उपलब्ध है।

दक्षिणी राज्यों के पूर्वी तटवर्ती प्रदेशों में भूमि अपेक्षाकृत समतल है। गर्मी एवं वर्षा खूब होती है अतः इन भागों में विविध प्रकार की फसली कृषि की जाती है। कृषि की दृष्टि से भी रायो-ग्रांडे-डो-सूल राज्य सबसे आगे है जहाँ घास को साफ करके खेत बना लिए गए हैं। फसली कृषि के उत्पादनों में मक्का का स्थान सर्वोपरि है। समस्त ब्राजिल में उत्पादित मक्का का लगभग 60% भाग दक्षिण के इन तीन राज्यों में होता है। अकेला रायो-ग्रांडे-डो-सूल देश के कुल उत्पादन की लगभग एक-तिहाई मक्का प्रस्तुत करता है। 1982 में इस राज्य ने लगभग 8.5 मिलियन टन मक्का पैदा की जबकि समस्त देश का उत्पादन 21 मिलियन टन था।

चावल मुख्यतः तटवर्ती निचले भागों एवं घाटियों में पैदा किया जाता है जहाँ जल उपयुक्त मात्रा में उपलब्ध है। चावल की खेती ब्राजिल में वर्तमान में ही प्रारम्भ की गई थी पिछले 4-5 दशकों में ही इतना विकास हो गया है कि प्रादेशिक आवश्यकता की पूर्ति कर अतिरिक्त उत्पादन मात्रा का निर्यात किया जा सके। रायो-ग्रांडे-डो-सूल राज्य का पाटोज लैगून क्षेत्र चावल उत्पादन में विशेष रूप से लगा है। रायो-ग्रांडे राज्य में ही थोड़ा सा गेहूँ भी उत्पादित होता

है। वस्तुत: ब्राजिल के अधिकांश भाग उष्ण कटिबंधीय स्थिति में हैं जिनमें वर्ष भर तापक्रम ऊँचे रहते हैं। अतः गेहूं की बुवाई के लिए उपयुक्त ताप अवस्थाएँ नहीं हो पाती। रायो-ग्रांडे चूंकि धुर दक्षिण में विद्यमान है अतः सर्दियों के दिनों में वहाँ थोड़ा सा गेहूँ बोया जाता है। वार्षिक उत्पादन लगभग 6.5 लाख टन है। ब्राजिल का तीन चौथाई से अधिक गेहूँ अकेला रायो ग्रांडे राज्य प्रस्तुत करता है। पिछले कुछ दशकों में दक्षिण के तीनों राज्यों में तम्बाकू का भी प्रचार हुआ है। तम्बाकू के उत्पादन में भी रायो ग्रांडे राज्य अग्रणी है जहाँ देश की लगभग 30% तम्बाकू उत्पादित की जाती है। इस प्रकार रायो-ग्रांडे राज्य पशुचारण तथा कृषि में साओपोलो के बाद देश में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थिति लिए हुए हैं। दक्षिणी राज्यों में यत्र-तत्र फल भी पैदा किए जाते हैं जिनमें केला, अंगूर एवं संतरा आदि प्रमुख हैं।

टिम्बर उत्पादन के लिए पराना एवं सांता काटारिना राज्य उल्लेखनीय हैं। जैसाकि 'प्राकृतिक वातावरण' शीर्षक में स्पष्ट है दक्षिणी ब्राजिल के उत्तरी भाग में स्थित इन राज्यों के विस्तृत भागों में उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन पाए जाते हैं। पूर्वी भागों में कठोर तथा पश्चिमी या भीतरी भागों में मुलायम लकड़ी है। यह वृक्ष काफी ऊँचाई तक जाता है। तने का व्यास लगभग 6 फीट होता है। अतः फर्नीचर बनानेके लिए बड़ी उपयुक्त है। पराना एवं सांता काटारिना राज्यों में एक झाड़ी (जो प्राकृतिक रूप से उगती है) यरवा माटे से पत्तियाँ तोड़कर चाय बनाई जाती है। लैटिन अमेरिका में तो इसका प्रचार है ही, पिछले दशकों में सं० रा० अमेरिका में भी बहुत प्रचलन हो गया है। प्रति वर्ष ब्राजिल 50,000 टन से अधिक यरवा माटे विदेशों को निर्यात करता है। संघीय सरकार भी इस व्यवसाय के विकास में रुचि रखती है।

पोर्ट एलग्रे (1,114,867) पैलोटास, रायो ग्रांडे तथा साओ फ्रांसिस्को इस प्रदेश के बड़े नगर हैं। पैलोटास को छोड़ कर सभी तटवर्ती स्थिति में हैं एवं क्षेत्रीय महत्व के बंदरगाह हैं। एक अत्यधिक विकसित कृषि एवं पशु चारण व्यवसाय में संलग्न पृष्ठ प्रदेश का प्रादेशिक केन्द्र एवं बंदरगाह होने के अतिरिक्त यह एक बड़ा औद्योगिक विकास की दृष्टि से यह नगर देश का तीसरा बड़ा केन्द्र है। दो बड़े विश्वविद्यालय हैं। शीतोष्ण कटिबंध में स्थित होने के कारण इस नगर ने अनेकों यूरोपियनों को आकर्षित किया है।

□□□

उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल

ब्राजिल का उत्तरी-पूर्वी प्रदेश, जिसका विस्तार देश के कुल भू-क्षेत्र के लगभग 1/5 भाग में हैं तथा जहां देश की एक-तिहाई जनसंख्या आश्रय लिए है, राजनैतिक दृष्टि से कई छोटे-छोटे राज्यों में संगठित है। इसके अन्तर्गत मराग्हाओ, पिआउइ, कीरा, परनाम्बुको, बाहिया, पारायबा, अलागो आस, सर्गीपे, रायो-ग्रांडे-डो-नोर्ट आदि राज्य शामिल हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यह प्रदेश न केवल ब्राजिल वरन् सम्पूर्ण लैटिन-अमेरिका में महत्वपूर्ण है। वस्तुतः स्पैनिश व अन्य यूरोपियन लोग सर्वप्रथम इसी सम्भाग में आकर बसे। इसी भाग में गन्ना व्यवसाय पुर्तगालियों ने विकसित किया जो यूरोप से यहाँ आकर बसने वाले लोगों का प्रथम महत्वपूर्ण आर्थिक आधार था। कॉफी, सोना, रबर, लौह-अयस या माँस उद्योग तो बहुत बाद में विकसित हुए। आज भी कई कृषि-उत्पादनों की दृष्टि से यह देश में महत्वपूर्ण स्थिति लिए है। औपनिवेशिक समय में ब्राजिल का यह उत्तरी-पूर्वी प्रदेश न केवल आर्थिक वरन् राजनैतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था। 18वीं शताब्दी के अन्त (1792) तक साल्वादार (बाहिया) ही देश की राजधानी थी जिसे बाद में रायो-डी-जैनीरो में स्थानांतरित किया गया।

धरातलीय स्वरूप एवं जलवायु :

उत्तरी-पूर्वी प्रदेश के अधिकांश भाग में बोरबोरेमा पठार का विस्तार है जिसमें अधः-स्तरीय चट्टानें अत्यन्त प्राचीन रवेदार चट्टानें हैं। दूसरे शब्दों में ये पठारी भाग ग्रेनाइट, नीस, शीस्त जैसी प्राचीन आग्नेय एवं परिवर्तित चट्टानों के ऊपर स्थित हैं। प्राचीन परतदार चट्टानों ने भी अधः-स्तरीय रवेदार चट्टानों को विस्तृत भागों में ढ़का हुआ है। इनका विस्तार प्रमुखतः बोरबोरेमा पठार के पश्चिम में कीरा, परनाम्बुको राज्य के पश्चिमी भागों तथा पिआउइ राज्यों के धरातल में है। बोरबोरेमा पठार की औसत ऊंचाई 1500 से 3000 फीट तक है। आम ढ़ाल पूर्व की ओर है। बोरबोरेमा पठार तथा पश्चिम के परतदार चट्टानों, प्रधानतः बलुआ पत्थर से ढ़के हुए भागों के बीच में ग्रेनाइट की पहाड़ी शृंखलाओं का विस्तार है। ये पहाड़ियां जिनकी ऊंचाई आसपास के धरातल से कई सौ फीट

है, अपने दक्षिणी भाग में दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पश्चिम, मध्य भाग में पूर्व से पश्चिम तथा उत्तरी भाग में उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली है। उत्तर में ये कूटिकाएं तटवर्ती निचले प्रदेशों में जाकर समाप्त होती हैं। बीच-बीच में ग्रेनाइट पठारी-लाटों की उपस्थिति से ब्राजिल के इस पठारी भाग का स्वरूप अनियमित विखंडित एवं पैनीप्लेण्ड पठार के रूप में हो गया है। क्षयकारी शक्तियाँ इसमें भी प्राचीन काल में क्रियाशील रही हैं यह तथ्य इसके पैनीप्लेण्ड स्वरूप को देखने से सुस्पष्ट हो जाता है।

तटवर्ती पट्टी में अपेक्षाकृत नवीन परतदार चट्टानों का विस्तार है। पूर्वी तट पर स्थित केप साओ रोकु के दक्षिण में यह पट्टी क्रमशः चौड़ी होती जाती है। इस सम्भाग में तटवर्ती पट्टी की चौड़ाई 20 मील से 40 मील तक है। साल्वादर के आसपास निचली तटीय पट्टी की चौड़ाई पर्याप्त ज्यादा लगभग 100 मील तक है। बीच-बीच में प्राचीन रवेदार चट्टानें तट भाग तक चली गई हैं जो संरचना की दृष्टि से एक पृथक् स्वरूप प्रस्तुत करती हैं। तटवर्ती भाग में निमज्जन (सबमर्जेंस) तथा उन्मज्जन (एमरजेंस) दोनों के प्रमाण मिलते हैं। साल्वादर के आसपास धँसाव क्रिया हुई है जिसके फलस्वरूप बाहिया की खाड़ी का प्राविर्भाव हुआ है। इस संभाग में लैगून झीलों व तरंग निर्मित चबूतरों का बाहुल्य है।

रायो साओ-फ्रांसिस्को को अपवाद स्वरूप छोड़कर अन्य सभी नदियों का जल-प्रवाह प्रदेश की धरातलीय संरचना के अनुरूप ही है। उत्तर की जलधाराएँ मिलकर पारनायबा जल प्रवाह क्रम प्रस्तुत करती हैं। साओ फ्रांसिस्को की घाटी न केवल उत्तरी-पूर्वी प्रदेश वरन् समस्त ब्राजिल देश की एक महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय आकृति है। इस घाटी का विस्तार सर्गीपे, अलागोआस, परनाम्बुको एवं मीनास गैरेइस आदि कई राज्यों में है। साओ फ्रांसिस्को नदी को पूर्व-आरोपित जल-प्रवाह-प्रणाली माना जाता है।[13] ऐसा अनुमान है कि नदी की घाटी का विकास प्रारम्भ जो आधारभूत परतदार चट्टानों के आवरण पर हो गया था वही अभी भी चला आ रहा है। यह विशाल घाटी लगभग 230,000 वर्ग मील क्षेत्रफल में फैली हुई है। इस विशाल नदी क्रम के जल को जगह-जगह बाँधों में ... 'साओ फ्रांसिस्को जल विद्युत कम्पनी' इस शुष्क प्रदेश को सिंचाई के लिए जल एवं खान, उद्योगों तथा नगरों के लिए विद्युत प्रदान करने की योजनाओं में संलग्न है। इस कम्पनी का अनुमान है कि इस नदी क्रम में लगभग 15 मिलियन कि. वा. की सम्भावित विद्युत राशि विद्यमान है जो समस्त देश की सम्भावित राशि का लगभग 10% है।[14] साओ घाटी के महत्वपूर्ण प्रपात बाहिया, परनाम्बुको तथा अलागोआस राज्यों की सीमा पर विद्यमान हैं।

13. Butland, G. J. Latin America, A Regional Geography p 315
14. Geographic Aspects of Brazil—A Publication of Brazilion embessey New Delhi.

तटवर्ती भाग एवं भीतरी पठारी भाग के भू-आकारों में तो भारी अन्तर है ही, साथ ही इस प्रदेश की वर्षा मात्रा में पाए जाने वाले अन्तर भी बहुत ज्यादा हैं। तटवर्ती पट्टी में, विशेषकर केप साओ रोकु के दक्षिण में वर्षा 50 इंच तक होती है। सेरा ग्रांडे के उत्तर-पश्चिम में भी पर्याप्त वर्षा होती है। साओ लुइस का वार्षिक औसत 80 इंच से अधिक है। इन दोनों अधिक वर्षा वाले भागों के बीच में स्थित सम्पूर्ण प्राचीन रवेदार चट्टानों से बने पठारी भाग में वर्षा बहुत कम होती है। वार्षिक औसत 20 इंच से भी कम है। मात्रा तो कम है ही, साथ ही वर्षा अनियमित भी बहुत है जिसके कारण प्रायः सूखा एवं अकाल की नौबत आ जाती है। यह प्रदेश दक्षिणी अमेरिका के विख्यात सूखा एवं अकाल वाले भागों में से एक है। कीरा राज्य का भीतरी भाग तो इसके लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय है जहाँ 1928 से लेकर 1931 तक के तीन वर्षों में एक बूंद भी पानी नहीं गिरा। अन्य कारणों के साथ एक कारण इस राज्य में कम वर्षा का यह भी है कि इसके पूर्वी भाग में छापादा-डो-अरारिपे की श्रेणियाँ फैली हैं जिनके पूर्वी ढालों पर तो पर्याप्त वर्षा (50 इंच) हो जाती है और पश्चिम के भाग सूखे रह जाते हैं। इन अनिश्चित प्राकृतिक दशाओं से बचाव के लिए ही संघीय सरकार इस क्षेत्र में भारी खर्चा करके सिंचाई तथा विद्युत की योजना क्रियान्वित कर रही है। साओ-फ्रांसिस्को नदी घाटी योजना इसी प्रकार की है। इसके पूरा होने पर, ऐसी संभावना है कि, यह अनिश्चित भाग्य वाला प्रदेश आर्थिक दृष्टि से विकास कर सकेगा।

तटवर्ती भाग तथा भीतरी शुष्क पठारी भाग की वर्षा-मात्रा का अन्तर इस प्रदेश की वनस्पति में प्रतिबिम्बित है। तटवर्ती पट्टी में पहले उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वन थे जिन्हें काटकर खेतों में परिवर्तित कर लिया गया है। अत्यन्त सीमित क्षेत्र में ही यह वन-स्वरूप, जिसे 'माटा' कहा जाता है, देखने को मिलता है। पठारी भाग में शुष्क कांटेदार झाड़ियाँ तथा यत्र-तत्र घास पाई जाती है। 'कांटिंगा' नाम से सम्बोधित इस वनस्पति स्वरूप में केवल वे पौधे ही पाए जाते हैं जो भारी शुष्कता को सहन कर सकें। मीमोसास (कैक्टस की एक शाखा) का शुष्क पठारी भागों में बाहुल्य है। आर्द्र भागों में कार्नोबा चपड़ी के स्रोत ताड़ के वृक्ष खड़े मिल जाते हैं। पहाड़ियों के पूर्वी ढलों पर सघन वन मिलते हैं जिन्हें 'सेरा' कहा जाता है।

आर्थिक विकास :

धरातल, जलवायु, वनस्पति आदि प्राकृतिक तत्वों की विभिन्नताओं से प्रभावित इस प्रदेश में भू-उपयोग एवं आर्थिक विकास में जहाँ वर्षा एवं गर्मी दोनों ज्यादा हैं गन्ना, कपास, कोको आदि की खेती की जाती है। यहाँ जनसंख्या भी अपेक्षा-कृत ज्यादा है। वस्तुतः दक्षिणी अमेरिका में पुर्तगाली लोगों की जहाँ प्रथम बस्तियाँ

बसीं, यह भाग उनमें से एक है। 1952 में साल्वादर बसाया गया। 1962 में रेसीफे की नींव डाली गई। इस प्रकार उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल का तट प्रदेश इस देश का वह भाग है जहाँ आधुनिकता का श्री गणेश सबसे पहले हुआ। पुर्तगालियों ने यहाँ आकर गन्ने की खेती प्रारम्भ की, नीग्रो श्रमिकों ने परिश्रम किया और शीघ्र ही यह सम्भाग दुनिया के प्रधान शक्कर उत्पादक क्षेत्रों में से एक हो गया।

सम्भवतः पूर्व-विकास के कारण ही इस सम्भाग में प्रादेशिक-जागरुकता पाई जाती है। इस प्रदेश के लोगों ने केवल ब्राजिल को समय-समय पर नेतृत्व दिया है वरन् अपने अतिरिक्त धन से सुन्दर बस्तियाँ और चर्च स्थापित किए हैं। इस प्रकार उत्तरी-पूर्वी प्रदेश ने ब्राजिल को सांस्कृतिक-परम्परा प्रदान की है। साम्रो लुइस ब्राजिल का एथेन्स माना जाता है। पिछली शताब्दियों में यह भाग इतना उन्नत था कि डच लोगों ने इसकी समृद्धि विशेषकर शक्कर के उत्पादन से लाभान्वित होने के लिए इस पर आक्रमण किया। 1630 से 1654 तक यह प्रदेश डच लोगों के नियंत्रण में रहा।

भीतरी पठारी भागों में भौगोलिक वातावरण का प्रभाव कृषि स्वरूप पर स्पष्टतः परिलक्षित है। शुष्कता के कारण यहाँ फसली कृषि सम्भव नहीं हैं अतः अधिकतर पठारी शुष्क भागों (सेर्टाओं) में ढोर व बकरियाँ चराई जाती है। यत्र-तत्र अनुकूल भागों में गन्ने तथा कपास की खेती की जाती है। अकाल व सूखे की सम्भावनाएँ बनी रहती हैं। अतः कभी-कभी पूरे के पूरे गाँवों को स्थानांतरित होना पड़ता है। पहाड़ी प्रदेशों के निचले ढालों पर, जहाँ वर्षा पर्याप्त होती है, गन्ना तथा कॉफी पैदा की जाती है। ऊँचे ढाल प्रदेशों में पशुचारण प्रचलित है।

गन्ना :

उत्तर-पूर्वी प्रदेश की तटवर्ती पट्टी में गन्ना की खेती पिछले 400 वर्षों से निरंतर रूप से हो रही है उर्वरकों और खादों का भी अपेक्षाकृत कम प्रयोग होता रहा है। इससे स्पष्ट है कि यहाँ की गहरी लाल मिट्टियाँ पर्याप्त उपजाऊ हैं। रायो-ग्रांडे-डो-नोर्टे राज्य की दक्षिणी सीमाओं से लेकर बाहिया की खाड़ी की दक्षिणी सीमा तक फैली इस तटवर्ती पट्टी में, जिसकी चौड़ाई 20 से 40 मील तक है, आज भी गन्ना प्रधान फसल है। बाहिया के पृष्ठ प्रदेश में, जो खाड़ी के साथ-साथ एक धवास प्रस्त क्षेत्र के रूप में है पट्टी की चौड़ाई 100 मील से ज्यादा है। रेकोनकेवो नाम से जाने, जाने वाले इस सम्पूर्ण भाग में गन्ना की खेती की जाती है। इस प्रकार रायो-ग्रांडे-डो-नोर्टे, पारायबा, परनाम्बुको, अलागोआस तथा सर्गीपे एवं बाहिया राज्यों में गन्ने की खेती आर्थिक ढाँचे का प्रधान आधार है। उत्पादन की दृष्टि से परनाम्बुको एवं पारायबा राज्य उल्लेखनीय हैं। के फार्म्स के बीच-बीच में

शक्कर बनाने वाली मिलें स्थित हैं। मिलों की संख्या (5000) आश्चर्यजनक रूप से बहुत बड़ी है परन्तु इनमें अधिकतर छोटी किस्म की और स्थानीय मांग की पूर्ति के लिए घटिया किस्म की शक्कर (खांड) बनाने वाली है। इनमें शक्कर टिकियों के रूप में बनायी जाती है। शेष उत्पादन का उपयोग अल्कोहल बनाने के काम में होता है। उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल में देश की एक तिहाई शक्कर पैदा होती है परन्तु यह पूर्णतः घरेलू उपयोग के लिए होती है। विश्व के बजारों के लिए शक्कर उत्पादन करना यहाँ बंद हो गया है। अब दक्षिण-पूर्व तथा दक्षिण के राज्यों में ही निर्यात लायक शक्कर पैदा की जाती है।

कपास :

भौगोलिक दृष्टि से कपास का विस्तार पूर्व के तटवर्ती आर्द्र प्रदेशों तथा भीतरी शुष्क पठारी भागों के मध्य स्थित संक्रमणीय क्षेत्रों में है। ब्राजिल के कुल कपास उत्पादन का लगभग एक तिहाई भाग उत्तरी-पूर्वी प्रदेश से उपलब्ध होता है। सीरा, पारायबा, परनाम्बुको, रायो-ग्रांडे-डो-नोर्टे तथा मरान्हाओ प्रधान कपास उत्पादक राज्य हैं। कपास की खेती इस प्रदेश में 18वीं शताब्दी के अन्त में प्रारम्भ की गई। अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियों (चमकदार धूप, वर्ष भर पाला रहित मौसम) में यह तेजी से पनपी। फलतः शीघ्र ही ब्राजिल कपास उत्पादन में विश्व में अग्रणी हो गया परन्तु पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सं. रा. अमेरिका के दक्षिणी राज्यों में कपास मेखला के विकसित होने पर इसका विश्व-प्रतिशत घट गया। उत्तरी-पूर्वी प्रदेश के निचले भाग तथा ऊँचे पठारी प्रदेश दोनों में कपास पैदा की जाती है। उच्च प्रदेशीय कपास लम्बे रेशे वाली परन्तु कम प्रति-एकड़ उत्पादन वाली होती है।

प्रदेश के वन उत्पादनों में रबर एवं कार्नोबा ताड़ से प्राप्त होने वाली पपड़ी (ग्रामो-फोन बनाने के लिए उपयुक्त) उल्लेखनीय है। रबर यहाँ दो वृक्षों–मैनीकोबा तथा मांगा बेरिया से उपलब्ध है। मैनीकोबा सीरा रायो-ग्रांडे-डो-नोर्टे आदि राज्यों में प्राकृतिक रूप से उगता है। इससे बनायी गयी रबर को 'सीरा रबर' के नाम से पुकारा जाता है। कार्नोबा ताड़ वैसे तो समस्त उत्तरी-पूर्वी ब्राजिल में मिलता है परन्तु सर्वाधिक बाहुल्य सीरा, मरान्हाओ, पियाउइ तथा रायो-ग्रांडे-डो-नोर्टे आदि राज्यों में है। यह एक बहु-उपयोगी वृक्ष है जिसकी जड़ें दवाइयों, तथा फर्नीचर, रस, पपड़ी तथा फल ताड़ी बनाने के काम में आते हैं।

भीतरी पठारी शुष्क भागों (सेर्टाओ) में पशु-चारण प्रधान व्यवसाय है जो यहाँ की प्राकृतिक घास पर आधारित है। असमान धरातल, शुष्क जलवायु में यही व्यवसाय भौगोलिक वातावरण द्वारा प्रोत्साहित है। ढोर घटिया किस्म के हैं जिनका दूध एवं मांस दोनों का उत्पादन कम होता है। खालें प्रधान उत्पादन हैं। फोर्टालिजा

सबसे बड़ा खाल केन्द्र है। इस संभाग में सबसे बड़ी समस्या पानी की है जिसे सुलझाने के लिए सरकार बड़े-बड़े तालाब बनवा रही है अब तक लगभग 50 विशाल जलाशय बनाए जा चुके हैं। बहुत से जलाशय निजी क्षेत्रों में भी बने हैं। पशु पालन बड़े पैमाने पर होता है। बड़ी-बड़ी एस्टेटस हैं जिनमें सम्बन्धित लोगों की स्थायी बस्तियाँ बसी हुई हैं जिन्हें 'मोरा डोर्स' कहते हैं। चरवाहे अधिकतर आदिवासी इण्डियनों के वंशज हैं जो आज भी चमड़े की ड्रेस पहनकर घोड़ों पर चढ़कर पशु चराते हैं।

अधिकांश बड़े नगर तटवर्ती भाग में बसे हैं। इनमें रेसीफे 1,183,391 साल्वादर (1,491,642) साओ लुइस (5,01,250) आदि बड़े हैं। ये बंदरगाह हैं तथा रेल द्वारा भीतरी भागों से जुड़े हैं। अन्य नगरों में फोर्टालेजा, जोआ-पैसोआ, नाटाल आदि उल्लेखनीय हैं।

□□□

संक्षेप में, न्यूजीलैण्ड के मुख्य एवं अधिकृत द्वीप समूहों का क्षेत्रीय विस्तार निम्न प्रकार है।[2]

		क्षेत्रफल (वर्ग मीलों में)
(अ) न्यूजीलैण्ड (मुख्य) भू-भाग	1. उत्तरी द्वीप	44,281
	2. दक्षिणी द्वीप	58,093
	3. स्टेवार्ट द्वीप	670
	4. छदाम द्वीप समूह	320
	5. करमाडेक द्वीप समूह	13
	6. कम्पबेल द्वीप समूह	44
	7. स्नारेंस, स्लोण्डर, बांउटी आदि।	263
	योग	103,736
(ब) उपनिवेश	1. टोकेलाम्रो द्वीप समूह	4
	2. नियु द्वीप	100
(स) डिपैण्डैन्सी (एन्टार्किटिका) महाद्वीप	अनुमानित	160,000

न्यूजीलैंड की खोज 1642 में डच अन्वेषक अबेल टस्मान ने की। जब प्रथम यूरोपियन के रूप में टस्मान यहाँ आया तो इन द्वीपों के तटवर्ती भागों में पोलीनेशियन समुदाय से सम्बन्धित माम्रोरी लोग निवास कर रहे थे। काफी दिनों बाद 1769 में रॉयल नेवी के कप्तान जेम्स कुक ने इन द्वीपों की यात्रा की। अपनी यात्रा के दौरान कप्तान ने दोनों बड़े द्वीपों के मानचित्र भी तैयार किए तथा दोनों द्वीपों के मध्य में स्थित उस जल डमरू मध्य को खोज निकाला जिसका बाद में कप्तान के नाम पर नामकरण संस्कार हुआ। अगली शताब्दी के प्रारम्भ में कई नाविक तथा मत्स्य व्यवसायी इन द्वीपों की तरफ गए। 1800 में यहाँ के माम्रोरी लोगों में ईसाई मिशनिरियों का कार्य प्रारम्भ हो गया जबकि ब्रिटेन से खेरेंड मुग्रल मार्सडेन यहाँ आए। 1840 में ब्रिटिश सरकार ने कप्तान विलियम हाब्स को संमाम्रोरी लोगों से समझौता कर इन द्वीपों को ब्रिटिश साम्राज्य में पूर्णरूपेण विलय करने भेजा। फलतः प्रसिद्ध वेटांगी की संधि हुई।[3] न्यूजीलैंड के इन द्वीपों को ब्रिटिश साम्राज्य के उपनिवेश का दर्जा मिला। माम्रोरी लोगो को ब्रिटिश नागरिकता प्रदान की गई। हाँ, इस संधि में यह अवश्य तय किया गया कि माम्रोरी लोगों से

2. The States man's year book 121 St. edi. p. 896.
3. Newzealand facts & figures, 1972. p. 16.

नकी परम्परागत और पैतृक भूमि नहीं छीनी जाएगी। इसी वर्ष राजधानी लिंगटन की नींव डाली गई।

चित्र-1

संक्षेप में, न्यूजीलैण्ड के मुख्य एवं अधिकृत द्वीप समूहों का क्षेत्रीय विस्तार निम्न प्रकार है ।[2]

		क्षेत्रफल (वर्ग मीलों में)
(अ) न्यूजीलैण्ड (मुख्य) भू-भाग	1. उत्तरी द्वीप	44,281
	2. दक्षिणी द्वीप	58,093
	3. स्टेवार्ट द्वीप	670
	4. छदाम द्वीप समूह	320
	5. करमाडेक द्वीप समूह	13
	6. कम्पबेल द्वीप समूह	44
	7. स्नारेस, स्लोण्डर, बांउटी आदि ।	263
	योग	103,736
(ब) उपनिवेश		
	1. टोकेलाओ द्वीप समूह	4
	2. नियु द्वीप	100
(स) डिपेण्डेन्सी (एन्टार्किटिका) महाद्वीप	अनुमानित	160,000

न्यूजीलैंड की खोज 1642 में डच अन्वेषक अबेल टस्मान ने की । जब प्रथम यूरोपियन के रूप में टस्मान यहाँ आया तो इन द्वीपों के तटवर्ती भागों में पोलीनेशियन समुदाय से सम्बन्धित माओरी लोग निवास कर रहे थे । काफी दिनों बाद 1769 में रॉयल नेवी के कप्तान जेम्स कुक ने इन द्वीपों की यात्रा की । अपनी यात्रा के दौरान कप्तान ने दोनों बड़े द्वीपों के मानचित्र भी तैयार किए तथा दोनों द्वीपों के मध्य में स्थित उस जल डमरू मध्य को खोज निकाला जिसका बाद में कप्तान के नाम पर नामकरण संस्कार हुआ । अगली शताब्दी के प्रारम्भ में कई नाविक तथा मत्स्य व्यवसायी इन द्वीपों की तरफ गए । 1800 में यहाँ के माओरी लोगों में ईसाई मिशनरियों का कार्य प्रारम्भ हो गया जबकि ब्रिटेन से रेवरेंड सैमुअल मार्सडेन यहाँ आए । 1840 में ब्रिटिश सरकार ने कप्तान विलियम हाब्स को माओरी लोगों से समझौता कर इन द्वीपों को ब्रिटिश साम्राज्य में पूर्णरूपेण विलय करने भेजा । फलतः प्रसिद्ध वेटांगी की संधि हुई ।[3] न्यूजीलैंड के इन द्वीपों को ब्रिटिश साम्राज्य के उपनिवेश का दर्जा मिला । माओरी लोगों को ब्रिटिश नागरिकता प्रदान की गई । हाँ, इस संधि में यह अवश्य तय किया गया कि माओरी लोगों से

---

2. The States man's year book 121 St. edi. p. 896.
3. Newzealand facts & figures, 1972. p. 16.

...निकी परम्परागत और पैतृक भूमि नहीं छीनी जाएगी। इसी वर्ष राजधानी ...लिंगटन की नींव डाली गई।

चित्र-1

संक्षेप में, न्यूजीलैण्ड के मुख्य एवं अधिकृत द्वीप समूहों का क्षेत्रीय विस्तार निम्न प्रकार है ।[2]

		क्षेत्रफल (वर्ग मीलों में)
(अ) न्यूजीलैण्ड (मुख्य) भू-भाग	1. उत्तरी द्वीप	44,281
	2. दक्षिणी द्वीप	58,093
	3. स्टेवार्ट द्वीप	670
	4. सदाम द्वीप समूह	320
	5. करमाडेक द्वीप समूह	13
	6. कम्पबेल द्वीप समूह	44
	7. स्नारेस, स्लोण्डर, बांउटी आदि ।	263
	योग	103,736
(ब) उपनिवेश		
	1. टोकेलाओ द्वीप समूह	4
	2. नियु द्वीप	100
(स) डिपेण्डेन्सी (एन्टार्कटिका) महाद्वीप	अनुमानित	160,000

न्यूजीलैंड की खोज 1642 में डच अन्वेषक अबेल टस्मान ने की। जब प्रथम यूरोपियन के रूप में टस्मान यहाँ आया तो इन द्वीपों के तटवर्ती भागों में पोलीनेशियन समुदाय से सम्बन्धित माओरी लोग निवास कर रहे थे । काफी दिनों बाद 1769 में रॉयल नेवी के कप्तान जेम्स कुक ने इन द्वीपों की यात्रा की । अपनी यात्रा के दौरान कप्तान ने दोनों बड़े द्वीपों के मानचित्र भी तैयार किए तथा दोनों द्वीपों के मध्य में स्थित उस जल डमरू मध्य को खोज निकाला जिसका बाद में कप्तान के नाम पर नामकरण संस्कार हुआ । अगली शताब्दी के प्रारम्भ में कई नाविक तथा मत्स्य व्यवसायी इन द्वीपों की तरफ गए । 1800 में यहाँ के माओरी लोगों में ईसाई मिशनरियों का कार्य प्रारम्भ हो गया जबकि ब्रिटेन से सैंरेड मुमल मार्सडेन यहाँ आए । 1840 में ब्रिटिश सरकार ने कप्तान विलियम हाब्स को सेमाओरी लोगों से समझौता कर इन द्वीपों को ब्रिटिश साम्राज्य में पूर्णरूपेण विलय करने भेजा । फलतः प्रसिद्ध वेटांगी की संधि हुई ।[3] न्यूजीलैंड के इन द्वीपों को ब्रिटिश साम्राज्य के उपनिवेश का दर्जा मिला । माओरी लोगों को ब्रिटिश नागरिकता प्रदान की गई । हाँ, इस संधि में यह अवश्य तय किया गया कि माओरी लोगों से

. The States man's year book 121 St. edi. p. 896.
Newzealand facts & figures, 1972. p. 16.

उनकी परम्परागत और पैतृक भूमि नहीं छीनी जाएगी। इसी वर्ष राजधानी वेलिंगटन की नींव डाली गई।

चित्र–1

संधि के तुरन्त बाद से ही बड़े पैमाने पर यहाँ यूरोपियन मुख्यतः ब्रिटिश का आना प्रारम्भ हो गया। हजारों की संख्या में वेल्स, स्कॉटिश तथा आयरिश लोग भी आए। 1852 में ब्रिटेन ने न्यूजीलैंड में स्थानीय स्वायत्त-सरकार बनाने की आज्ञा दी। देश के विभिन्न भागों में लोग पहुँचे, सर्वेक्षण हुआ। 1860 में उत्तरी द्वीप के थेम्स जिले तथा ओटेगोके पठार (द० द्वीप) में सोना निकाला जिसने यूरोपियनों को और आकर्षित किया। सोने की समाप्ति पर टिम्बर आकर्षण बिन्दु बना रहा। धीरे-धीरे लोगों ने स्थायी आर्थिक उद्योग के रूप में कृषि तथा दुग्ध व्यवसाय को विकसित किया। 1876 में प्रांतीय सरकारों को समाप्त कर केन्द्रीय सरकार की स्थापना हुई। 1907 में न्यूजीलैंड को 'डोमीनियन स्टेटस' प्रदान किया गया और 1931 में पूर्णतः प्रभुत्व सम्पन्न राज्य घोषित कर दिया गया। तमाम स्वतन्त्र हुए ब्रिटिश उपनिवेशों की तरह न्यूजीलैंड भी 'राष्ट्र मण्डल' का सदस्य है।

भूगर्भिक संरचना एवं धरातलीय स्वरूप :

न्यूजीलैंड के द्वीप वस्तुतः उस "अस्थायी परि प्रशांत महासागरीय गतिशील पेटी" के हिस्से हैं जिसका विस्तार प्रशांत महासागर के पश्चिमी सीमावर्ती भाग में पूर्वी द्वीप समूह, ताइवान, जापान, क्यूराल तथा सखालिन को शामिल करते हुए बेरिंग जल डमरू मध्य तक है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ लम्बे भूगर्भिक समय से अस्थायित्व के कारण भूकम्प तथा ज्वालामुखी निरंतर होते रहते हैं। इन्हीं के साथ-साथ तोड़-फोड़ की क्रिया भी अविरल रूप से होती रही है। भूगर्भिक हलचलों तथा आवरण क्षय की क्रियाओं के परिणामस्वरूप परतदार चट्टानों का निर्माण हुआ जो न्यूजीलैंड के धरातल का लगभग तीन चौथाई भाग घेरे हुए हैं। इन चट्टानों में बलुआ पत्थर 'मडस्टोन' 'ग्रेवाल' तथा 'कॉंग्लोमरेट्स' की प्रधानता है। कई चट्टानों में विशेषकर जिनमें चूने के अंश ज्यादा हैं, समुद्री जानवरों के अवशेष भी पाए जाते हैं। मुलायम होने के कारण ये परतदार चट्टानें निरतर भिचाव, मोड़ एवं तोड़-फोड़ का शिकार रही हैं।

न्यूजीलैंड की चट्टानों में कैम्ब्रियन युग से लेकर अब तक की प्रायः सभी भूगर्भिक हलचलों के प्रमाण मिलते हैं। यहाँ न केवल परतदार एवं आग्नेय वरन् रूपांतरित चट्टानें भी विभिन्न युगों का प्रतिनिधित्व करती हैं। आग्नेय चट्टानों में ग्रेनाइट, डायोराइट, ग्रेबो तथा सरपेन्टाइना आदि एवं रूपांतरित चट्टानों में शीस्त नीस्त तथा संगमरमर का बाहुल्य है। अधिकांश आग्नेय एव रूपांतरित चट्टानें करोड़ों वर्ष पुरानी हैं। उनका निर्माण भी संभवतः हजारों फीट की गहराइयों में हुआ होगा परन्तु वर्तमान में उनमें से अनेक धरातल पर दृश्य हैं जो इस बात का प्रतीक है कि उनके ऊपर की परतों को विविध क्षयकारी शक्तियों ने काट-काट कर अलग कर दिया है। भूगर्भवेत्ताओं का अनुमान है कि जब लम्बी और गहरी

भूसंनतियों का आविर्भाव हुआ, उनमें विशाल परिमाण में गहराई तक तलछट का जमाव हुआ एवं पर्वत निर्माणकारी घटनाओं के फलस्वरूप जब दोनों ओर से अत्यधिक दबाव पड़ा तो निचले भागों में स्थित चट्टानों के गुण एवं स्वरूप में परिवर्तन होने से इन रूपांतरित चट्टानों का आविर्भाव हुआ।

न्यूजीलैंड की सर्वाधिक प्राचीन चट्टानें नेलसन, वेस्टलैंडस तथा फ्यॉर्डलैंडस में पाई जाती हैं। इनके बारे में अनुमान है कि ये संभवतः पूर्व पुराकल्प यानी आज से लगभग 600 मिलियन वर्ष पूर्व निर्मित हुई थी। इन चट्टानों में मोटी परतदार चट्टानों का बाहुल्य है। इससे अनुमान होता है कि उस समय इस सभाग में अवश्य ही कोई बड़ा भू-खण्ड रहा होगा जिससे कट-कटकर ये तलछट जमा हुई। उस भू-खण्ड के आकार-विस्तार के बारे में किसी भी प्रकार का अनुमान करना संभव नहीं है। बाद के समय, अर्थात् उत्तरार्द्ध पैलियोजोइक तथा मैसोजोइक, का भूगर्भिक इतिहास अपेक्षाकृत ज्यादा स्पष्ट है जबकि कार्बोनीफेरस युग से लेकर प्रारम्भिक क्रैटेशियस युग तक न्यूजीलैंड प्रदेश का अधिकांश भाग विस्तृत भू-संनतियों के गर्भ में था। प्रारम्भ में इन भू-संनतियों में लावा व अन्य ज्वालामुखी मिश्रित पदार्थों का जमाव हुआ परन्तु बाद में, थल सम्प्राप्त पदार्थों की अधिकता रही। इन पदार्थों में रेता और कीचड़ का बाहुल्य था जो दबाव के फलस्वरूप कालान्तर में बलुआ पत्थर तथा ग्रार्गीलाइट (गहरे रंग का कठोर कीचड़-पत्थर) आदि चट्टानों के रूप में परिवर्तित हुए। भूगर्भविदों का अनुमान है कि ये तलछट वर्तमान न्यूजीलैंड के पश्चिम में स्थित (तत्कालीन) किसी भूखण्ड से प्राप्त हुए होंगे।

प्रारम्भिक क्रैटेशियस युग में न्यूजीलैंड के भूगर्भिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण पर्वत निर्माणकारी घटना घटित हुई जिसके फलस्वरूप पूर्वी न्यूजीलैंड को छोड़कर (जहाँ कि क्रैटेशियस युग में भी तलछटों का जमाव भूसंनतियों में चालू रहा) अन्य सभी भागों की तलछट में मोड़ क्रिया हुई और शृंखलाबद्ध रूप में उच्च भाग समुद्र के गर्भ से प्रकट हुए। इस घटना में भूसंनति में जमा किए गए पदार्थों पर जो निरन्तर शक्तिशाली दबाव पड़ा उसके फलस्वरूप बहुत सी परिवर्तित चट्टानें बनीं। ओटेगो, पैल्लैडम तथा मार्ल बर्ग के धरातल पर जो परिवर्तित चट्टानें उघड़े रूप में दिखाई देती हैं, उसी समय से सम्बन्धित हैं। इनमें से अधिकांश परिवर्तित चट्टानें शीस्त तथा नीस्तःप्रकार की हैं।

क्रैटेशियस युग में निर्मित उच्च प्रदेशों पर शीघ्र ही क्षयकारी शक्तियों का व्यापार प्रारम्भ हुआ। इन्होंने पर्वतों के उच्च भागों को काट-बहा-जमा कर तटवर्ती निचले मैदानों का निर्माण किया। कटे एवं घिसे नीचे पर्वतीय भागों को कई बार समुद्र ने उदरस्थ करके संक्रमणीय सागरों को जन्म दिया। उत्तरी ऑकलैंड प्रदेश उत्तरार्द्ध क्रैटेशियस युग में संभवतः समुद्र के अन्तर्गत ही था। संक्षेप में, मैसोजोइक युगों (क्रमशः क्रैटेशियस, जुरैसिक एवं ट्रिएसिक–135 व 225 मिलियन वर्ष पूर्व)

के अन्त तक न्यूजीलैंड के तत्कालीन उच्च प्रदेशों का केवल सूक्ष्म भाग ही स्थल-खण्ड के रूप में रह गया था। यह भी बहुत नीचा था अतः क्षय एवं जमाव की गति बहुत धीमी रही। कुछ निचले, दलदलीय भागों में वनस्पति भी दबी जो आगे इप्रोसीन युग में समुद्राधीन हुए। समुद्र के अन्तर्गत हो जाने पर वनस्पति के पर्तों पर समुद्री जमावों की पर्तें चढ़ीं, दबाव पड़ा और इस प्रकार इस भाग को कोयला-पर्तों का आविर्भाव हुआ।

अंततोगत्वा ओलिगोसीन युग तक न्यूजीलैंड का अधिकांश भाग समुद्र द्वारा हथिया लिया गया था। निस्संदेह भूगर्भिक हलचलों के कारण कुछ भाग समुद्र में से द्वीपों के रूप में उठ आए। कैनोजोइक समय के प्लीओसीन एवं प्लीस्टोसीन युगों में दक्षिणी आल्टस शृंखला का उत्थान हुआ। वस्तुतः यह पर्वत निर्माणकारी घटना, जो बहुत देर से घटी, न्यूजीलैंड के भूगर्भिक इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण और प्रभावकारी घटना थी जिसके फलस्वरूप वर्तमान कालीन पर्वत शृंखलाओं का उदय हुआ दूसरे शब्दों में इस द्वीपीय देश को अपना वर्तमान आकार मिला। क्वार्टरनरी युग से सम्बन्धित इन पर्वतीय भागों की ऊँचाई पर्याप्त थी। फलतः उत्थान के तुरन्त बाद हिमानियों ने अपना कार्यारम्भ किया। प्लीस्टोसीन हिम युग में दक्षिणी आल्टस में हिमानियों, अनेक झीलों, घाटियों व अन्य हिम-आकृतियों को जन्म दिया। पश्चिमी तटवर्ती पट्टी में शृंखलाबद्ध पयोर्डस का उदय हुआ। होलोसीन तथा प्लीस्टोसीन (वर्तमान से लेकर पिछले 3 मिलियन वर्ष पूर्व तक) युगों के मध्य में न्यूजीलैंड के द्वीपों में ज्वालामुखी क्रिया भी हुई। इसका प्रधान क्रिया क्षेत्र उत्तरी द्वीप रहा जहाँ द्वीप के मध्य भाग (टोंगारिरो नेशनल पार्क तथा प्लैंटी की खाड़ी के मध्य स्थित) में अनेक ज्वालामुखी पर्वत फोड़ों के समान खड़े हैं। यह बहुत ही उबड़-खाबड़ प्रदेश है जहाँ लावा ने भी अनेक भू-आकारों को जन्म दिया है। कहीं-कहीं धरातल पर लावा जमाव से बनी चट्टानें भी मिलती हैं।

सबसे ज्यादा नई रचनाएँ तटवर्ती मैदानों के रूप में हैं जिनका निर्माण उस मलबे से हुआ है जो नदी तथा हिमानियों ने पिछले वर्षों (प्लीस्टोसीन युग के बाद) में जमा किया समुद्र ने भी इनके उदय एवं वर्तमान स्वरूप के निर्धारण में सहयोग किया इस प्रकार के मैदानी भागों के उदाहरण प्रमुखतः वेलिंगटन (उत्तरी द्वीप) तथा कैंटरबरी (द० द्वीप) के मैदान हैं।

भूकम्प :-

परि-प्रशांत महासागरीय पेटी के अन्य द्वीपों की तरह न्यूजीलैंड में भी भूकम्प आते रहते हैं। यद्यपि उनकी निरंतरता उतनी नहीं है जितनी कि जापान में। भूकम्पों की प्रकृति एवं भूकम्प-मूलों की गहराई की दृष्टि से न्यूजीलैंड में मह-

सूस किए गए भूकम्प कैलीफोर्निया के भूकम्पों से बहुत मिलते-जुलते हैं। न्यूजीलैंड में भूकम्प प्रभाव के दो प्रधान क्षेत्र हैं। प्रथम, 36 5° से लेकर 43·5° दक्षिणी अक्षांश तक जिसमें ग्रोकलैण्ड को छोड़ समस्त उत्तरी द्वीप तथा दक्षिणी द्वीप का उत्तरी भाग (नेल्सन-मार्लबर्ग) शामिल किए जा सकते हैं। दूसरा क्षेत्र 169·5° पूर्वी देशांतर के पश्चिम में जिसमें साउथलैंड, पश्चिमी ग्रोटेगो एवं दक्षिणी वैस्टालैंडस के भूकम्प प्रभावित भागों को शामिल किया जा सकता है।[4]

वैलिंगटन में स्थित भूकम्प अध्ययन केन्द्र द्वारा रिकार्ड किए गए आँकड़ों से इस संभाग के भूकम्पों के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आए हैं। पहले ऐसा विश्वास किया जाता था कि भूकम्प ज्वालामुखी क्रिया से उत्पन्न होते हैं। नयी खोजों से ज्ञान हुआ कि इनका प्रधान कारण भूगर्भिक असंतुलन एवं हलचलें हैं। निस्संदेह ज्वालामुखी क्रियाओं से भूकम्प आते हैं परन्तु वे बहुत ही हल्की किस्म के होते हैं। न्यूजीलैंड में इस प्रकार के भूकम्पों का क्षेत्र रूग्रापेहू पर्वत से लेकर व्हाइट द्वीप तक है। भूगर्भिक हलचलों से जो भूकम्प आते हैं वे कई बार बहुत भयानक होते हैं। न्यूजीलैंड का 1855 का वह भूकम्प, जिससे वेरारापा दरार का निर्माण हुआ, इसी प्रकार का था। न्यूजीलैंड संभाग के भूकम्प अपने भूकम्पमूलों की गहराई की दृष्टि से उल्लेखनीय है। साधारणतया दुनिया के अधिकांश भूकम्प 40 मील की गहराई के भूकम्प-मूलों वाले होते हैं। न्यूजीलैंड के भूकम्प भी मध्यम श्रेणी के माने जाते हैं जिनकी गहराई 40 से 190 मील तक होती है। परन्तु 23 मार्च 1960 को आने वाला भूकम्प, जो लगभग $4\frac{1}{2}$ मिनट तक रहा, उस भूकम्प-मूल से सम्बन्धित था जो उत्तरी तराना की में 370 मील की गहराई पर रिकार्ड किया गया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यह गहराई दुनिया में सबसे गहरे रिकार्ड किए गए भूकम्प-मूल से केवल 80 मील कम थी।

धरातल :

साधारणतः, न्यूजीलैंड के द्वीपों का स्वरूप पर्वतीय है तीनों मुख्य द्वीपों का अधिकांश भाग उच्च प्रदेशों द्वारा घेरा हुआ है। केवल एक चौथाई भाग ही ऐसा है जो 650 फीट से नीचा है। द्वीपों के विस्तार स्वरूप एवं दिशा को देख कर एक दम यह विचार उत्पन्न होता है कि ये द्वीप वस्तुतः महासागरीय तल में पड़े मोड़ों के ऊपर उठे हुए भाग हैं जो एक चौड़ी कूटिका के रूप में हैं। पर्वत शृंखलाओं का क्रम द्वीप विस्तार दिशा यानी दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व को फैला है। इस मोड़दार शृंखला के दोनों ओर टोंगा तथा करमाडेक नामक दो गर्त है। इनसे भलीभांति स्पष्ट है कि मूल रूप से यह पर्वत शृंखला ही थी जिसके आस-पास जमाव के फलस्वरूप मैदानों का आविर्भाव हुआ। यद्यपि ये मैदान भी बहुत सीमित

4. Extract from New Zealand Official year book 1971, Section 1 p. 14.

हैं। पर्वत क्रम की चौड़ाई दक्षिण में सर्वाधिक तथा उत्तर की ओर क्रमशः कम होती जाती है।

दक्षिणी द्वीप ज्यादा पर्वतीय हैं। पूर्व में कैंटरबरी के मैदान को छोड़ समस्त भाग पठारी एवं पर्वतीय है। लगभग पूरे द्वीप में दक्षिण-पश्चिम से उत्तर की ओर विशाल पर्वत क्रम फैला है जिसे दक्षिणी आल्पस के नाम से जानते हैं। द्वीप के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में तो पर्वत समुद्र के ऊपर ठीक दीवाल जैसा स्वरूप लिए खड़े हैं। दक्षिणी द्वीप के उच्च प्रदेशों को भू-आकृतियों, चट्टान तथा भूगर्भिक इतिहास के आधार पर तीन विशिष्ट संभागों में रखा जा सकता है। प्रथम, धुर दक्षिण भाग जिसमें फयोर्डस की अधिकता है। हिमानियों ने अनेक झीलों का निर्माण किया है जिनमें टे-आनो, मानापुरी तथा मोनोवाई उल्लेखनीय हैं। यह भाग न्यूजीलैंड का सर्वाधिक वर्षा होती है। चट्टानें अधिकांशतः नंगी हैं।

फयोर्डलैंड के पूर्व में ओटेगो का पठारी भाग है। यहाँ परतदार ग्रेवक व शीस्त की चट्टानों के अवरोधी पर्वत एक दूसरे से पृथक् रूप में विद्यमान हैं।[5] इनके बीच-बीच में तलछट से भरे बेसिन स्थित हैं। ओटेगो का पठार न्यूजीलैंड का सबसे शुष्क भाग है। यत्र-तत्र घास से ढकी पहाड़ियाँ मिलती हैं। बेसिनों के तल भाग विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि इनमें अत्यधिक शुष्कता के कारण रेगिस्तानों जैसी दशाएँ हैं।[6] दक्षिणी द्वीप के उच्च प्रदेशों के तीसरे 'स्वरूप' के रूप में मैकेंजी बेसिन से लेकर कुक जलडमरू मध्य तक फैले हुए उस विशाल पर्वत क्रम को लिया जा सकता है जिसे दक्षिणी आल्पस के नाम से जाना जाता है। इसकी अनेक चोटियाँ सदा हिम मंडित रहती हैं। दक्षिणी आल्पस की मुख्य शृंखला के पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम में विक्टोरिया ब्रूनर, टस्मान एवं लयैल आदि श्रेणियाँ फैली हैं। उत्तर-पूर्व में स्पेन्सर केकुरा तथा सी-वार्ड-कैकुरा पर्वत विद्यमान हैं।

दक्षिणी-द्वीप के पर्वतीय 'रीढ़' के पूर्व में कैंटरबरी का छोटा सा मैदान है जो न्यूजीलैंड के खाद्यान्नों का स्रोत है। पर्वतीय क्रम ने आर्थिक विकास को प्रभावित किया है। बहुत समय तक ये पर्वत क्रम पूर्व एवं पश्चिम के मध्य यातायात के विकास में बाधक रहे। कैंटरबरी एवं ओटेगो के पठार में वर्षा की कमी का कारण यही है कि हवाओं की आर्द्रता दक्षिणी-आल्प्स के पश्चिमी ढालों को पार करते-करते समाप्त हो जाती है। चूँकि पूर्व की तरफ ढाल बहुत धीमे हैं, वर्षा सम वितरित है अतः समृद्ध चरागाह है जिनमें भेड़-पालन अच्छी तरह से प्रोत्साहित हुआ है।

उत्तरी द्वीप का पूर्वी तटवर्ती भाग एवं मध्यवर्ती भाग पर्वतों द्वारा ढका हुआ है। उच्च प्रदेशों ने यहाँ केवल दशमांश भू-क्षेत्र को घेरा है शेष में निचले मैदानी भाग है। ऑकलैंड प्रायद्वीप तो बहुत निचला एवं दलदलीय प्रदेश है। मध्य

5. Cumberland, K. B.—Southwest Pacific, Methuen p. 184.
6. Ibid.

भाग में स्थित ज्वालामुखियों को छोड़कर सभी पर्वत 6000 फीट से नीचे हैं। वस्तुतः मध्यवर्ती ज्वालामुखी पठारी क्षेत्र उत्तरी द्वीप की दो प्रधान चापाकार रचनाओं के संगम-स्थल, जो कि अस्थायी है, में विद्यमान हैं। ये चापाकार रचनाएँ हैं पूर्व में तारारूआ-रूआहाइन-केमानावा पर्वत क्रम तथा उत्तर-पश्चिम में ऑकलैंड प्रायद्वीप।[7] इस पठारी क्षेत्र में यत्र-तत्र लावा कृत जमाव मिलते हैं। टौपो से व्हाइट द्वीप (प्लेंटी की खाड़ी में) तक फैली विशाल दरारघाटी विद्यमान है। इसी दरार की दक्षिणी सीमा पर तीन क्रियाशील ज्वालामुखी-रूआपेहू, टोंगारिरो, गौरूहो केन्द्रित हैं।

ज्वालामुखी पठार के उत्तर में, दोनों चापाकार रचनाओं के बीच प्लेंटी की खाड़ी को घेरे अनेक निचले घाटी प्रदेश हैं। उत्तर-पश्चिम में संकरा ऑकलैंड प्रायद्वीप लगभग 250 मील की लम्बाई में आगे बढ़ गया है। यह सम्पूर्ण प्रायःद्वीप 1000 फीट से नीचा है। परन्तु इसे पूर्ण समतल समझना भूल होगी। ज्वालामुखी क्रियाओं तथा दरारों ने मिलकर इसे असमान ऊँचाई तथा छोटी-छोटी पहाड़ियों का प्रदेश बना दिया है। कुछ ऊँची पहाड़ियाँ 3000 फीट तक ऊँची उठ गई हैं। ऊँचे उठे हुए भागों में प्राचीन चट्टानें उघड़े रूप में मिलती हैं। ऑकलैंड सिटी के पास स्थित कारोमण्डल प्रायःद्वीप में ज्वालामुखी कृत प्राचीन बेसाल्टिक चट्टानें धरातल पर सुस्पष्ट हैं। ऑकलैंड के दक्षिण में प्राय:द्वीपीय स्वरूप समाप्त प्राय: हो जाता है क्योंकि यहाँ चौड़ाई बढ़ जाती है। धरातलीय स्वरूप में मध्य वेकाटो नदी का बेसिन महत्वपूर्ण है जिसके चारों ओर उच्च प्रदेश हैं। भूगर्भविदों का अनुमान है कि काँप के जमाव से भरा गया यह बेसिन भाग वस्तुतः एक धसाव था जिसका निर्माण भूगर्भिक हलचलों द्वारा हुई दरारी क्रिया के फलस्वरूप हुआ।[8]

ज्वालामुखी पठार के पूर्व में द्वीप का समस्त भाग पूर्वी अन्तरीप से वैलिंगटन तक फैली हुई पर्वत श्रेणियों ने घेरा हुआ है। पर्वत श्रेणियों की आम-दिशा लगभग दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व है। स्थिति के कारण कभी-कभी यह शृंखला 'पूर्वी पर्वतीय शृंखला' के नाम से जानी जाती हैं। यहाँ पर्वत उतने शृंखलाबद्ध और ऊँचे नहीं हैं जितने दक्षिणी आल्प्स में। क्षय बहुत हुआ है। अतः कठोर भागों के बीच-बीच में कई निचले प्रदेश हैं जिनको नदियों (वेयापू, वेपोआ, वेरोआ तथा मोहाका) ने हथियाआ हुआ है।

ज्वालामुखी पठार के पश्चिम में स्थित शेष द्वीपीय भाग को तीन भू-आकारों के समूह में रखा जा सकता है। ये हैं—(अ) कटा-फटा भीतरी पठार, जिसकी परतदार चट्टानों में भारी वर्षा से हुए कटाव के फलस्वरूप धरातल बहा ऊबड़-खाबड़ हो गया है। (ब) वांगानुई, रांगीटिकेई तथा मानावातु आदि नदियों के काँप के उपजाऊ मैदान जिन्हें सम्मिलित रूप में तारानाकी के मैदान के नाम से पुकारा जाता है। तथा (स) माउण्ट एग्मोंट का ज्वालामुखी पर्वत।

7. Robinson K.W.—Australia, Newzealand and the Southwest Pacific, p.18.
8. Ibid. p. 19.

जल प्रवाह :

न्यूजीलैंड के धरातल के स्वरूप का अध्ययन यहाँ असंख्य मात्रा में स्थित छोटी-छोटी झीलों तथा नदियों पर दृष्टिपात किए बगैर अधूरा होगा। उत्तरी द्वीप की अधिकांश झीलें ज्वालामुखी क्रिया के फलस्वरूप बनी हैं जबकि दक्षिणी द्वीप की झीलों के निर्माण में हिमनदों का बड़ा भारी हाथ रहा है। दोनों ही द्वीपों में झीलें प्रायः ऊँचाई पर मिलती हैं। ये यातायात के लिए उपयोगी नहीं हैं पर जल प्रवाह की दृष्टि से इनका महत्व है। चूँकि इन झीलों में होकर नदियाँ प्रवाहित हैं अतः एक ओर जहाँ वे उनमें सदा जलपूर्ति रखती हैं, दूसरी ओर बाढ़ के समय अतिरिक्त पानी को एकत्र कर बाँध का कार्य भी संपन्न करती हैं। इनका यह स्वरूप यहाँ और भी ज्यादा महत्वपूर्ण है जहाँ जल विद्युत प्लांटस लगे हुए हैं। इस दृष्टि से उत्तरी द्वीप की वेकरमोना तथा टोपो एवं दक्षिणी द्वीप की कोलरिज, पुकाकी, टेकापो, वनाका, हाविया तथा वैकेटीपू आदि झीलें उल्लेखनीय हैं। उत्तरी द्वीप की झीलें मत्स्य व्यवसाय एवं पर्यटन की दृष्टि से भी उपयोगी है। उत्तरी द्वीप की झीलों में टोपा (234 वर्गमील) रोटोरुआ (31 वर्गमील) वेरारापा (31 वर्गमील) एवं दक्षिण द्वीप की झीलों में वैकेटीपू (133 वर्गमील) टे-आनू (133 वर्गमील) वनाका, ऐलेसमेरे, टेकापो, मानापुरी तथा मोहाऊ आदि महत्वपूर्ण हैं।

न्यूजीलैंड की अधिकांश नदियाँ छोटी, तीव्रगामी एवं झरनायुक्त हैं। धरातलीय दशाओं के कारण ये यातायात के लिए तो उपयोगी नहीं हैं परन्तु जल विद्युत उत्पादन के लिए आदर्श हैं। इनका यह महत्व इसलिए भी बढ़ गया है क्योंकि इस देश में कोयला या पैट्रोल बिलकुल भी नहीं निकलते। शक्ति का 90% जल विद्युत से ही पूरा होता है। सभी बड़ी-बड़ी नदियों जैसे उत्तरी द्वीप में येकाटो, मंगाहाओ, वेहाऊ, मोहाका, वैरोआ, वांगानुई, मानावाट तथा वांगहू एवं दक्षिणी द्वीप में वेटेकी, कोव, वलूथा, वैमाकरिरि, पैलोस तथा वैपोरी आदि नदियों पर बड़े-बड़े शक्तिशाली जल विद्युत गृह स्थापित किए गए हैं।

दक्षिणी द्वीप के पर्वतीय भागों, मुख्यतः दक्षिणी आल्प्स पर्वत क्रम में अनेक हिमनद पाए जाते है। यहाँ के अधिकांश हिमनद धीमी गति वाले हैं। पूर्वी ढालों पर ये लगभग 2000 फीट की ऊँचाई पर ही समाप्त हो जाते हैं जबकि पश्चिमी ढालों पर, जहाँ कि हिम-वर्षा की अधिकता से हिमनदों की गति भी अधिक है, हिमनद 600-700 फीट की ऊँचाई तक नीचे उतर आते हैं। अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के कारण ये हिमनद प्रति वर्ष हजारों पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। पूर्वी ढाल की ओर प्रवाहित हिमनद नदियों को वर्ष भर जल प्रदान करके उन्हें निरन्तर प्रवाही बनाते हैं। इस प्रकार परोक्ष रूप में ये जल विद्युत तथा सिंचाई के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। उल्लेखनीय है कि इसी ओर न्यूजीलैंड का प्रधान कृषि प्रदेश कैंटरबरी का मैदान स्थित है। दक्षिणी आल्प्स का सबसे बड़ा हिमनद टस्मान

है जो माउण्ट कुक चोटी से प्रारम्भ होकर 18 मील की लम्बाई तथा $1\frac{1}{2}$ मील की चौड़ाई के लिए पूर्व की ओर प्रवाहित है। पूर्वी ढाल के अन्य विस्तृत हिमनदों में मुरचिसन (11 मील) मुलर (8 मील) गोडले (8 मील) तथा हूकर ($7\frac{1}{2}$ मील) उल्लेखनीय हैं। पश्चिमी ढाल की ओर प्रवाहित हिमनदों में फ्रांज-जोसेफ ($8\frac{1}{2}$ मील) तथा फॉक्स ($9\frac{3}{4}$ मील) सबसे बड़े हैं जो क्रमशः 690 फीट एवं 670 फीट की ऊँचाई पर समाप्त होते हैं।[9]

अधिकांश थल भाग की पर्वतीय प्रकृति, भू-गर्भिक हलचलें, धँसाव क्रिया तथा हिमनदों द्वारा हुए कटाव कार्यों के फलस्वरूप न्यूजीलैंड की तट रेखा उसके भू-विस्तार (1000 मील लम्बाई, 280 मील चौड़ाई) की तुलना में बहुत लम्बी है। तट रेखा अत्यन्त कटी-फटी है परन्तु इसके बावजूद भी प्राकृतिक पोताश्रयों का अभाव है। वस्तुतः तट रेखा के कटे-फटे होने के अतिरिक्त एक पोताश्रय के विकास में जिन अन्य तत्वों की अनुकूलता आवश्यक होती है उनका अभाव है। यथा, तट के पास द्वीपों की कमी है, तटवर्ती समुद्र उथला है। निकटवर्ती समुद्रों में जल में छिपी हुई कूटिकाओं का बाहुल्य है जो जलयानों के आवागमन में बाधा प्रस्तुत करते हैं। कुछ ऐसे भाग हैं जहाँ प्राकृतिक पोताश्रय विकसित हो सकते हैं तो वहाँ का पृष्ठ प्रदेश व्यर्थ है। ऑकलैंड का पृष्ठ प्रदेश इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। इन परिस्थितियों में उत्तरी द्वीप में केवल दो सुरक्षित बंदरगाह (ऑकलैंड तथा वैलिंगटन) विकसित हो पाए हैं। दक्षिणी-द्वीप में लिटिलटन, ओटेगो तथा ब्लफ के रूप में कुछ कृत्रिम बंदरगाह विकसित किए गए हैं।

धरातलीय स्वरूप की उपरोक्त पृष्ठभूमि में न्यूजीलैंड को निम्न भौतिक विभागों में रखा जा सकता है।

दक्षिणी द्वीप में :—

1. दक्षिणी आल्प्स पर्वत क्रम
2. कैंटरबरी का मैदान
3. ओटेगो का पठार

उत्तरी द्वीप में:—

4. ज्वालामुखी पठारी प्रदेश
5. पूर्वी पर्वतीय शृंखलाएँ
6. वैलिंगटन का मैदान
7. ऑकलैंड प्रायःद्वीप

---

9. Extract from New Zealand Official year book 1971, Section 1 p. 3.

दक्षिणी आल्प्स पर्वत क्रम :

दक्षिण में कामेरोन पर्वत से लेकर उत्तर में माउण्ट कौब तक विस्तृत न्यूजीलैंड के इस सबसे विशाल पर्वतीय क्रम ने दक्षिणी द्वीप का आधे से अधिक भाग घेरा हुआ है। कैंटरबरी तथा ओटेगो जिलों के कुछ तटवर्ती भागों को छोड़ कर समस्त द्वीप में दक्षिणी आल्प्स क्रम का विस्तार है। आम-दिशा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व यानी द्वीप की विस्तार-दिशा के अनुकूल है। धुर दक्षिण से लेकर उत्तर तक लम्बाई लगभग 600 मील है। चौड़ाई 100 से लेकर 125 मील तक है। औसत ऊँचाई 6000 फीट है। दक्षिण में श्रेणियां छितरी तथा अपेक्षाकृत नीची हैं। बीच-बीच में हिमानीकृत झीलें हैं। परन्तु जैसे-जैसे उत्तर की ओर चलते हैं ऊँचाई के साथ-साथ शृंखलाओं की निरन्तरता भी बढ़ती जाती है। मध्य भाग में दक्षिणी आल्प्स सर्वाधिक ऊँचे हैं। यूरोपियन लोग जब प्रथम बार यहाँ आए तो यह पर्वत क्रम ऊँचाई, हिमनद, हिमानीकृत भू-आकार एवं हिम-मंडित भागों के बाहुल्य की दृष्टि से उनको यूरोप के आल्प्स जैसा ही लगा। संभवतः इसलिए उन्होंने इसे 'दक्षिणी आल्प्स' नाम दिया।

अध्ययन की सरलता के लिए इस पर्वत क्रम को तीन खण्डों में रखा जा सकता है—(अ) दक्षिणी आल्प्स का दक्षिणी भाग, (ब) मध्य भाग (स) दक्षिणी भाग।

दक्षिणी भाग का विस्तार धुर दक्षिण में स्थित कामेरोन पर्वत से लेकर माउण्ट एस्पिरिंग तक माना जा सकता है। इस संभाग में दक्षिणी आल्प्स अपेक्षाकृत नीचे (3000-6000 फीट तक) है। कामेरोन के अतिरिक्त अन्य में कैपलर माउण्ट, मुरचिसन माउण्ट, स्टुअर्ट तथा रिचर्डसन आदि पर्वत उल्लेखनीय है। संभाग के उत्तर में स्थित माउण्ट एस्पिरिंग की ऊँचाई 9,959 फीट है। यह भाग बहुत ज्यादा कटा-फटा है जिसमें नदियों झीलों और पयोडंस का बाहुल्य है। पश्चिमी तट अत्यधिक कटा-फटा है क्योंकि पयोर्डस असंख्य मात्रा में थल के भीतर तक घुसे हुए हैं। अनेक छोटी–छोटी नदियां भीतरी पर्वतों से निकल कर तीव्र गति लिए हुए पयोर्डस में जा मिलती हैं। दक्षिणी की तरफ बहकर जाने वाली नदियों में वेमाऊ तथा ओरेती सबसे बड़ी हैं। अनेक झीलें है जिनमें टे–आनानू तथा वाकाटीपू सबसे बड़ी हैं।

मध्य भाग में दक्षिणी आल्प्स सबसे ऊँचे तथा शृंखलाबद्ध हैं। इसी भाग में न्यूजीलैंड की सबसे ऊँची चोटियाँ माउण्ट कुक (12,349 फीट) तथा माउण्ट टस्मान (11,475 फीट) स्थित हैं। इनके अतिरिक्त लगभग 15 चोटियाँ 10,000 फीट से ऊँची तथा 233 चोटियाँ 7500 फीट से ऊँची इस संभाग (मध्य भाग) में

न्यूज़ीलैण्ड
भौतिक विभाजन
पैमाना 0 50 100 मील
पहाड़ियाँ
1. कामेरोन प.
2. कैपरलर
4. स्टुअर्ट
5. रिचर्ड्सन
6. पंग
7. स्पेंसर
8. ल्पेत प.
9. कैकुरा
10. टस्मान
14. रिरुमोर
डैवेनपोर्ट
ऑकलैण्ड
प्लेंटी की खाड़ी
टापो झी.
गिस्बोर्न
हाके की खाड़ी
नेपियर
सागर
टस्मान
टस्मान की खाड़ी
वेलिंगटन
काइस्टचर्च
बैंक्स प्राय. द्वीप
डुनेडिन
इनवरकार्गिल
स्टेवर्ट द्वीप
प्रशान्त महासागर

चित्र—2
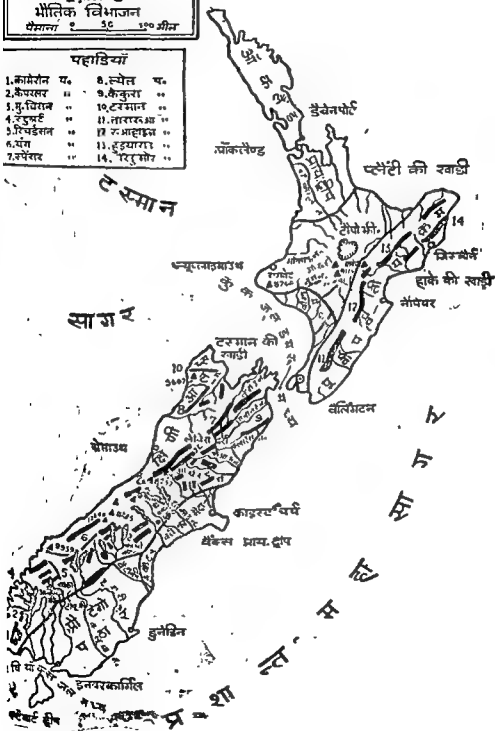
विद्यमान हैं। इस संभाग का विस्तार अगर दक्षिण में एस्पिरिंग पर्वत से उत्तर में स्पेन्सर पर्वत तक मान लिया जाए तो इस भाग में कुक तथा टस्मान के अतिरिक्त अन्य ऊँची चोटियों में डेम्पियर (11,287 फीट) सिलवर हार्न (10,757 फीट) माउण्ट हिक्स (10,443 फीट) माल्टे ब्रून (10,421 फीट) टौरेस (10,379 फीट) डगलस पीक (10,107 फीट) तथा हेडिंगर (10,059 फीट) आदि चोटियाँ उल्लेखनीय है। मध्यवर्ती दक्षिण आल्प्स में अनेक बड़ी झीलें हैं जिनका विस्तार पूर्वी ढाल प्रदेश में उत्तर पश्चिम से लेकर दक्षिण पूर्व की ओर है। कैंटरबरी के मैदान की तरफ ढाल भी धीमा होता जाता है। अतः इन झीलों से अनेक नदियाँ निकलकर कैंटर बरी के मैदान को जल प्रस्तुत करती हुई प्रशांत महासागर में गिरती हैं। इस भाग की झीलों में कोलरिज, टे काम्रो, ओहाऊ, वनाका तथा हाविया तथा झीलों में होकर निकलने वाली नदियों में वेटाकी, राकाइया, वेहाम्रो तथा रांगी टाटा आदि प्रमुख हैं। इन सभी नदियों के सहारे-सहारे जल-विद्युत गृह स्थापित किए गए हैं।

पश्चिम की तरफ यानी वैस्टलैंडस तट प्रदेशों के ऊपर मध्यभाग में दक्षिणी आल्प्स एक दम दीवाल की तरह खड़े हुए हैं। इसी भाग में सर्वाधिक हिमनद मिलते हैं। वस्तुतः न्यूजीलैंड का यही ऐसा भाग है जहाँ वर्ष भर पर्याप्त क्षेत्र हिममंडित रहता है। पश्चिम की तरफ हिमनद काफी नीचाई तक आ जाते हैं परन्तु तीव्र ढाल होने के कारण उनकी लम्बाई तुलनात्मक रूप में कम है। जबकि पूर्व की ओर धीमे ढालों पर प्रवाहित हिमनद (टस्मान मुरचिसन आदि) अपेक्षाकृत ज्यादा लम्बे हैं। ये लगभग 2000 फीट की ऊँचाई पर ही जल रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। मध्य भाग में ऊँचाई होने के कारण आल्प्स यातायात में भी बाधा प्रस्तुत करते हैं जिन्हें केवल दो स्थानों पर आर्थर एवं लेविस नामक दर्राओं द्वारा पार किया गया है। प्रथम दर्रे में होकर क्राइस्टचर्च से ग्रेमाउथ को जाने वाला रेल मार्ग गुजरता है। लेविस दर्रे में होकर पूर्वी तटों को पश्चिमी तटों से जोड़ने वाली सड़क (क्राइस्ट चर्च से वैस्टपोर्ट) निकाली गई है।

उत्तरी विभाग नेल्सन तथा मार्लबर्ग जिलों के पर्वतीय भागों में शामिल किया जा सकता है। यहाँ पर्वत श्रेणियाँ शृंखलाबद्ध नहीं हैं बीच-बीच में घाटियाँ हैं जिनमें होकर वेराम्रो, पेलोरस, फ्लोरेंस तथा आवातरे आदि नदियाँ गुजरती हैं। यहाँ पर्वत नीचे भी हैं। आम दिशा दक्षिण से उत्तर को है। सम्पूर्ण प्रदेश पर्वतीय है यानि पर्वतीय विस्तार समुद्री तट तक है। तटवर्ती पट्टी का अभाव है। झीलें अपेक्षाकृत कम हैं। उत्तरी भाग में सबसे ऊँची चोटी टैपुमामुकू (9465 फीट) है। टस्मान, ल्यैल, रिचमांड, स्पैंसर, कैकुरे आदि इस संभाग की मुख्य पर्वत श्रेणियाँ हैं।

2. रवरी का दान :

नेल्सन, मार्लबर्ग के दक्षिण एवं दक्षिण-आल्प्स पर्वत क्रम के पूर्व में विस्तृत मैदानी भाग है जो पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण में क्रमशः पर्वत पदीय भागों में

खोता जाता है। कैंटर बरी के मैदान के नाम से जाना जाता है। यह मैदानी पट्टी दक्षिण-उत्तर में लगभग 150 मील लम्बी एवं 20–25 मील तक चौड़ी है। सर्वाधिक चौड़ाई क्राइस्ट चर्च के पृष्ठ प्रदेश में है। अगर बैंक्स प्रायःद्वीप को शामिल कर लिया जाए तो यहाँ मैदान की चौड़ाई 80 मील हो जाती है। कैंटर बरी का मैदान पर्वतों के चरण प्रदेश में नदियों तथा हिमानियों द्वारा जमा की गई मलछट से बने मैदानों का सच्चा प्रतिनिधि है। अधिकांश भागों में कांप जमा है। मैदान का ढ़ाल पर्याप्त तीव्र (1 मील से 30 फीट) है। उत्तरी कैंटर बरी में कठोर चट्टानों से बने कूटिकाओं तथा अनुप्रस्थ घाटियों का बाहुल्य है। ऐसी ही घाटियों मे होकर हुरनुई तथा वेपारा आदि नदियाँ प्रवाहित हैं। दक्षिण में मैदान क्रमशः उस पठार में खोता जाता है जो टिमारु के पीछे स्थित है। बैंक्स प्रायःद्वीप शेष मैदान से संरचना की दृष्टि से भिन्न है। यह ज्वालामुखी क्रिया से बना है।[10] कैंटरबरी के मैदान की जलवायु अपेक्षाकृत शुष्क है, वर्षा साल भर में 30 इंच से अधिक नहीं होती। परन्तु यह वर्ष भर सम-वितरित रहती है।

3. ओटैगो का पठार :

दक्षिणी द्वीप के दक्षिण-पूर्व में स्थित ओटैगो का पठार अत्यन्त कटा-फटा नीचा पठारी भाग है जिसकी औसत ऊँचाई 1000 से 1500 फीट तक है। संरचना की दृष्टि से यह बड़ा जटिल है। यह न्यूज़ीलैंड के अत्यन्त प्राचीन भागों में से एक है जहाँ नीस, शीस्ट, ग्रेनाइट व प्राचीन पर्तदार चट्टानें उघड़ कर धरातल के निकट आ गई हैं। ओटैगो जिले के दक्षिण में इन्वरकार्गिल के पृष्ठ प्रदेश में ऊँचाई बहुत कम है। क्लूथा, टेमरी, ओरेटी आदि नदियों की घाटियाँ भी नीची एवं उपजाऊ हैं। दक्षिणी आल्प्स का 'वृष्टि छाया प्रदेश' बन जाने के कारण यहाँ भी वर्षा कम (20 इंच) होती है। जलवायु अर्द्ध-शुष्क है। नीचे भागों में खाद्यान्नों की खेती है जबकि अर्द्ध-शुष्क पठारी भाग भेड़ पालन के लिए उत्तम है।

4. ज्वाला-मुखी पठारी प्रदेश :

उत्तरी द्वीप के लगभग मध्य में, पूर्वी पर्वतीय क्रम के पश्चिम में ज्वालामुखी पठारी प्रदेश में स्थित है जिसने लगभग समस्त दक्षिणी ऑकलैंड जिला घेरा हुआ है। उत्तर में इस उबड़-खाबड़ प्रदेश का विस्तार प्लेंटी की खाड़ी तक है। सम्पूर्ण प्रदेश में विशिष्ट ज्वालामुखी प्रदेश के भू-आकार मिलते । धरातल ऊबड़-खाबड़ है। यत्र-तत्र क्रेटर्स तथा उनमें विकसित हुई झीलें मिलती हैं। गर्म सोते एवं गैसर बहुतायत से मिलते हैं। काली मिट्टी का विस्तार है। प्रदेश के ठीक बीच में सबसे बड़ी झील टौपो (234 वर्ग मील) स्थित है। चारों तरफ 3000-4000 फीट ऊँची

10. Robinson, K. W.-Australia, Hawzealand and The south west Pacific p. 237.

पहाड़ियों द्वारा घिरी होने के कारण यह झील एक प्राकृतिक कटोरे जैसा दृश्य प्रस्तुत करती है। प्रदेश के दक्षिणी-पूर्वी भाग में ऊँचाई सबसे ज्यादा है जहाँ कि विशाल ज्वालामुखी पर्वत खड़े हैं। इनमें एग्मोंट (8,260 फीट) रुआपेहू (9,175 फीट) गोरहो (7,515 फीट) तथा टोंगारिरो (6,458 फीट) सबसे ऊँचे हैं। अन्तिम दो क्रियाशील ज्वालामुखी हैं। एग्मोंट पर्वत, जो अपनी प्राकृतिक सुन्दरता से प्रतिवर्ष हजारों पर्यटकों को आकर्षित करता है, और जो विश्व के सुन्दरतम प्राकृतिक स्थलों में से एक माना जाता है, ज्वालामुखी पठार के हृदय प्रदेश से हटकर थोड़ा पश्चिम में तारानाकी जिले में है। प्रदेश के मध्य में एक बड़ी झील के विद्यमान होते हुए भी जल-प्रवाह अन्तः प्रवाही नहीं है क्योंकि ज्यादातर नदियाँ (मोकाऊ, वेकाटो, थेम्स, वागानुई तथा रांगीटेइकी) यहाँ के पर्वतों से निकलकर कुक जल डमरूमध्य या टस्मान सागर में गिरती हैं। सब कुल मिलाकर ज्वालामुखी पठार न्यूजीलैंड के सुन्दरतम प्रदेशों में से है इसीलिए इसे 'नेशनल पार्क' के रूप में रखा गया है।

5. पूर्वी पर्वतीय श्रृंखलाएं :

उत्तरी द्वीप के पूर्वी तट के सहारे-सहारे एक संकरी पर्वतीय श्रृंखला दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व दिशा में फैली हुई है। दक्षिण में ये कुक जल डमरू मध्य तक चली गई हैं। वस्तुतः इस भाग में कई समानांतर श्रेणियां हैं जिनके बीच-बीच में घाटियाँ हैं। घाटियों का स्वरूप 'वी' आकार का ही है। दक्षिणी द्वीप के पर्वतीय भागों की तरह हिमानी से प्रभावित होकर वे चौड़ी नहीं हुई है। ऊँची चोटियों पर बर्फ के स्थान पर वनस्पति के दर्शन होते हैं। कहीं भी ये पर्वत 6000 फीट से ज्यादा ऊँचे नहीं हैं। श्रेणियों में रोकुमारा, रूआ हाइन, ताराउआ, हुइयाराओ, रिमूकात आदि उल्लेखनीय हैं। पूर्वी तट पर पर्वतीय भाग, सिर्फ हॉके की खाड़ी को छोड़कर दीवाल की तरह खड़े हैं। रुआहाइन तथा ताराउआ पर्वत श्रेणियाँ जो प्रदेश के दक्षिण भागों में हैं बहुत नीचे हैं। कहीं भी ये 3000 फीट से ज्यादा ऊँची नहीं है। प्रदेश की सबसे ज्यादा ऊँचाई मध्य भाग में स्थित माकेराको पर्वत के रूप में है। प्रशासनिक दृष्टि से पूर्वी पर्वतीय क्रम का विस्तार जिस्बोर्न, हॉके की खाड़ी तथा वेलिंगटन जिले के दक्षिणी भाग में हैं।

दक्षिणी-आल्प्स की तुलना में उत्तरी द्वीप के इन उच्च प्रदेशों में बहुत कम वर्षा होती है। इसके दो कारण हो सकते हैं—प्रथम, ये दक्षिणी-आल्प्स की तुलना में कम ऊँचे हैं। द्वितीय, पछुआ हवाएं यहाँ तक आते-आते अपनी पर्याप्त नमी पश्चिम में स्थित ज्वालामुखी पर्वतों से टकरा कर समाप्त कर चुकी होती है। पूर्वी ढ़ालों की अपेक्षा पश्चिमी ढ़ालों पर ज्यादा वर्षा होती है। इन परिस्थितियों में यह निष्कर्ष भलीभाँति निकल सकता है कि अगर ज्वालामुखी पर्वत श्रृंखलाबद्ध होते तो इन उच्च भागों में शायद इतनी भी वर्षा न हो पाती। अधिकांश नदियाँ, जो

इन उच्च भागों से निकलती हैं, हॉके की खाड़ी में गिरती हैं। इनमें माकेराका पर्वत से निकलने वाली तारावेरा तथा मोहाका नदियां सबसे बड़ी हैं। भीलों का इस भाग में प्रभाव है। बड़ी झीलों में वेकारे-मोग्राना ही एकमात्र उल्लेखनीय झील है।

6. वेलिंगटन का मैदान :

इस प्रार्द्र, मैदानी पट्टी का विस्तार उत्तर में कौहिया बंदरगाह से लेकर दक्षिण में पेइकाकारिकी तक है। दक्षिण में इनका अन्त वहां होता है जहां पूर्वी पर्वत क्रम पश्चिमी तट तक पहुँचते हैं। इसी प्रकार से उत्तर में इनका विस्तार एग्मोंट पर्वत के चरण प्रदेशों तक माना जा सकता है। इस प्रकार यह अर्द्ध-चंद्राकार भाग ज्वालामुखी पठारी प्रदेश के दक्षिण में तारारुग्रा पर्वत के पश्चिम से होता हुग्रा, उत्तर-पश्चिम की ओर क्रमशः चौड़ाई लिए वेलिंगटन और तारानाकी जिलों की तटीय पट्टी के रूप में स्थित है। सम्पूर्ण मैदानी भाग अपेक्षाकृत नई चट्टानों का बना है। इसके निर्माण में समुद्र की उठाव-क्रिया व नदियों द्वारा किए गए निक्षेपों का मुख्यरूपेण हाथ रहा है। समस्त भाग 600 फीट से नीचा है। बल्कि पॉम स्टर्न-नार्थ से वांगानुई तक का भाग तो 100 फीट से भी नीचा है। धरातल प्रायः समतल है। कॉप का जमाव है जो ज्वालामुखी पठारी प्रदेश से निकलकर कुक जलडमरुमध्य में गिरने वाली नदियों ने किया है। इन नदियों में वांगानुई तथा रांगाटिकेई सबसे बड़ी हैं। कछारी मैदान, पर्याप्त वर्षा (40 इंच), समतल धरातल पर विकसित यातायात, राजधानी वेलिंगटन की पृष्ठभूमि होने आदि कारणों से यह भाग आर्थिक दृष्टिकोण से बड़ा महत्वपूर्ण हो गया है। दुग्ध व्यवसाय की दृष्टि से यह न्यूजीलैंड के अग्रणी प्रदेशों में से एक है। कई बडे-बड़े नगर यहां विकसित हो गए हैं।

7. आकलैण्ड प्रायःद्वीप :

उत्तरी द्वीप के उत्तर-पश्चिम में थल भाग एक लम्बाकार परन्तु अत्यन्त कटा-फटा स्वरूप लिए हुए उत्तर की ओर बढ़ गया है। ऑकलैंड प्रायःद्वीप के नाम से जाना जाने वाला यह भाग उत्तर में 34° दक्षिणी अक्षांस तक विस्तृत है। इस प्रायःद्वीपीय भाग में समुद्र और थल एक दूसरे में इतने घुसे हैं कि कहीं-कहीं तो द्वीपीय भाग होने का भ्रम होता है। तामाकी स्थल डमरूमध्य में मनुकाग्रो तथा वेटेमाटा बंदरगाह एक दूसरे से केवल $1\frac{1}{5}$ मील चोड़ी थल-पट्टी द्वारा पृथक् हैं। नीची पहाड़ियां (सेंड स्टोन चट्टान युक्त) नीचे ज्वालामुखी, छोटे-छोटे तटवर्ती मैदान तथा ताकामी जल डमरु मध्य के दक्षिण में स्थित हौराकी के दलदलीय निचले भाग तथा वेकाटो के पीट बॉग युक्त बेसिन आदि ही इस प्रायःद्वीपीय भाग के विशिष्ट भू आकार है।[11]

11. Cumberland, K. B.-Southwest Pacific. p. 189.

सर्वाधिक ऊँचाई उत्तरी भाग में है जहाँ कि कुछ स्थान 1000 फीट तक ऊँचे है। शेष भाग 400 फीट से नीचा है। उल्लेखनीय है कि न्यूजीलैंड का यही एक मात्र ऐसा भाग है जहाँ भूकम्प नहीं आते। इस आर्द्र और गर्म (देश के अन्य भागों की तुलना में) भाग में पहले सघन प्राकृतिक वनस्पति थी, काफी भागों में दलदल था। माओरी लोग यहीं निवास करते थे। लकड़ी में कौरी पाइन का बाहुल्य था जिसका बड़ा भाग काट दिया गया है। यूरोपियनों ने आकर ऑकलैंड के दलदलीय भागों को सुखाकर विस्तृत चारागाह स्थापित किए हैं जिसके आधार पर यहाँ दुग्ध व्यवसाय विकसित हुआ है। बंदरगाहों के विकास के लिए प्राकृतिक परिस्थितियाँ उपयुक्त हैं परन्तु पृष्ठ प्रदेश ज्यादा अनुकूल न होने के कारण इन प्राकृतिक सम्भवनाओं का पूर्ण उपयोग नहीं हो सकता है।

□□□

न्यूजीलैण्ड : जलवायु

न्यूजीलैंड की जलवायु पर उसकी अक्षांशीय स्थिति, द्वीपीय स्वरूप, धरातल के अधिकांश भाग में पर्वतीय शृंखलाओं की उपस्थिति तथा निकटवर्ती जलाशयों तथा महाद्वीपीय भू-खण्ड (आस्ट्रेलिया) आदि तत्वों ने भारी प्रभाव डाला है। यहाँ की मौसमी दशाओं का सही ज्ञान इन प्रभावकारी तत्वों के संदर्भ के बिना नहीं हो सकता है। न्यूजीलैंड दक्षिण गोलार्द्ध में 34° से 47° दक्षिणी अक्षांस तक फैला हुआ है। स्पष्ट है कि उत्तर के कुछ भाग (ऑकलैंड) को छोड़कर समस्त न्यूजीलैंड वर्ष भर चलने वाली पछुआ हवाओं के मार्ग में पड़ता है। उत्तरी भाग उपोष्णीय अधिक वायुभार की पेटी के दक्षिण में सीमांत पर है अतः जाड़ों के दिनों में जब सूर्य के साथ दबाव-पेटियाँ 5°–5° उत्तर की ओर खिसक जाती हैं तो न्यूजीलैंड का यह भाग (ऑकलैंड) पछुआ हवाओं के मार्ग में आ जाता है। इस प्रकार केवल धुर उत्तरी भाग, जहाँ भूमध्य सागरीय जलवायु के लक्षण हैं, को छोड़कर समस्त न्यूजीलैंड की जलवायु को शीतोष्ण सामुद्रिक कहा जा सकता है जो बहुत कुछ पश्चिमी यूरोपियन तुल्य है। जलवायु की उपयुक्तता ने ही सम्भवतः पश्चिमी यूरोपियन निवासियों को यहाँ अधिकाधिक संख्या में बसे रहने को प्रोत्साहित किया है।

द्वीपीय स्थिति एवं आस्ट्रेलिया महाद्वीप के रूप में एक विशाल भूखण्ड की निकटता ने न्यूजीलैण्ड के तापक्रमों को प्रभावित किया है। न्यूजीलैण्ड के द्वीपीय भाग लम्बे अधिक तथा चौड़े कम हैं। स्वाभाविक है कि देश का कोई भाग ऐसा नहीं है जो समुद्र के प्रभावों की पहुँच के बाहर हो। समुद्र यहाँ के तापक्रमों की अतिशयता को दूर करता है, तापांतर को कम करता है। इसके अलावा इन द्वीपों की तरफ जितनी भी हवाएँ आती हैं वे समुद्र के ऊपर होकर आने के कारण आर्द्रता युक्त होती हैं। न्यूजीलैण्ड से 1000 मील पश्चिम में आस्ट्रेलिया तथा लगभग 1500 मील दूर दक्षिण में एन्टार्कटिका महाद्वीपीय भाग विद्यमान है। दोनों की प्रकृति विपरीत है। अतः आस्ट्रेलिया के मध्यवर्ती शुष्क-गर्म भाग से गर्म वायु-राशियाँ तथा एन्टार्कटिका महाद्वीप से ठण्डी वायु राशियाँ न्यूजीलैण्ड के द्वीपों की

तरफ आती हैं। निस्संदेह उनके भौतिक लक्षण विशेषकर तापक्रम अपनी मूल स्थिति में नहीं रह पाते क्योंकि उनको लम्बा-समुद्र पार करना पड़ता है।

न्यूजीलैण्ड के द्वीप लम्बाकार स्वरूप में दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व दिशा में फैले हैं। ठीक यही दिशा इनके पर्वतीय क्रमों की है। इस भाग में पछुआ हवाएँ चलती है जिनके रास्ते में पर्वत शृंखलाएँ दीवाल की तरह खड़ी है। परिणाम स्वरूप देश के पूर्वी एवं पश्चिमी भागों की जलवायु दशाओं में अन्तर हो जाता है। वर्षा की मात्रा तो स्पष्टतः पर्वत शृंखला ने प्रभावित की है। यथा, पश्चिमी ढाल प्रदेशों पर 80 इंच, 100 इंच और कहीं-कहीं इससे भी अधिक वर्षा होती है जबकि पूर्वी भागों में बहुत कम। यह भी उल्लेखनीय है कि पर्वतीय-दीवाल जितनी ऊँची है पूर्वी और पश्चिमी तट भागों की वर्षा में उतना ही ज्यादा अन्तर है। दूसरे शब्दों में उतना ही सघन वृष्टि-छाया प्रदेश बनता है। यथा दक्षिणी-आल्पस के पूर्व में कुछ स्थान ऐसे हैं जहाँ वर्षा 20 इंच ही होती है। इन भागों की जलवायु में भी कुल मिलाकर महाद्वीपीय जलवायु के से लक्षण आ गए हैं। यद्यपि न्यूजीलैण्ड का कोई भी भाग समुद्र से 80 मील से ज्यादा दूर नहीं है। पूर्वी भागों में जाड़े का मौसम बहुत ठण्डा तथा गर्मियों में तापक्रम 90° फ़ै० तक हो जाता है। क्राइस्ट चर्च के तटवर्ती स्थिति में होने के बावजूद वहाँ तापांतर 20° फ़ै० तक रहता है।

न्यूजीलैण्ड का मौसम आस्ट्रेलिया की ओर से आने वाले, पश्चिम से पूर्व दिशा में प्रवाहित, उन प्रतिचक्रवातों और चक्रवातों से भी भारी प्रवाहित रहता है जो निरन्तर वर्ष भर चलते रहते हैं। प्रायः एक सप्ताह में एक चक्रवात या प्रति-चक्रवात गुजरता है और इन्हीं के साथ मौसम एक दम परिवर्तित हो जाता है। चक्रवातों के समय बदली आवरण, वर्षा, तेज हवा रहती है जबकि प्रतिचक्रवात के आगमन पर आकाश स्वच्छ तथा धूपीला मौसम रहता है। इनका क्रम इस प्रकार होता है कि दो चक्रवातों के बीच में एक प्रतिचक्रवात आता है। प्रतिचक्रवात आकार, विस्तार, सघनता एवं गति की दृष्टि से विभिन्नता लिए हुए होते हैं। ये बसन्त ऋतु में उत्तर तथा गर्मी के दिनों में दक्षिणी भाग में होकर गुजरते हैं। गर्मी व प्रारम्भिक पतझड़ के दिनो में दक्षिणी न्यूजीलैण्ड सघन उष्ण कटिबन्धीय चक्रवातों से प्रभावित रहता है। गर्मियों में आने वाले ये चक्रवात अधिकांशतः उपोष्णीय-मूल के होते हैं। इनके साथ प्रायः आंधी, तूफान, व तीव्र वर्षा होती है।

हवाएँ :

न्यूजीलैण्ड में लगभग पूरे वर्ष भर पश्चिम की ओर से आने वाली हवाओं (पछुआ) का आधिक्य रहता है। उत्तर से दक्षिण की ओर इनकी मात्रा, शक्ति व गति की तीव्रता में क्रमशः कमी होती जाती है। पर्वतीय भागों को पार करते समय इन पछुआ हवाओं के क्रम और दिशा में काफी परिवर्तन आ जाता है। वैसे तो ये पश्चिम की ओर से होती है परन्तु जैसे ही दक्षिणी आल्पस पर पहुँचती हैं इनकी

दिशा उत्तर-पूर्व की ओर हो जाती है। ऊँची शृंखलाओं को पार कर जब ये पूर्व के धीमे ढाल और मैदानों में उतरती है प्राय. इनकी गति दक्षिण-पूर्व की ओर होती है। इस प्रकार वेस्टलैण्ड्स में दक्षिणी-पश्चिमी एवं ओटेगो तथा कैंटरबरी जिलों में उत्तर-पश्चिमी हवाओं का आधिक्य रहता है। बसंत ऋतु के उत्तरार्द्ध एवं गर्मियों में इसी दिशा से इन जिलों में आंधी और तूफान भी चलते हैं गर्मियों की ऋतु में दिन के समय पूर्व के इन भागों के गर्म हो जाने से समुद्री हवाएं 20 मील के भीतर तक चलती रहती हैं। कैंटरबरी के तट पर इन समुद्री-हवाओं की दिशा उत्तर-पूर्व परन्तु डुनेडिन के आसपास दक्षिण-पश्चिम से होती है। दोनों द्वीपों में पर्वतीय क्रम-शृंखलाबद्ध हैं। इनका क्रम कुक जल डमरु मध्य में ही अवरुद्ध होता है। अतः यहाँ 'कीपाकार' जैसी स्थिति हो जाने से हवाओं की गति बहुत तीव्र होती है। फॉवियाक्स जल डमरु मध्य में भी यही स्थिति बन जाती है। तारानाकी मैदान में हवाएँ तीव्र गति से दक्षिण-पश्चिम से चलती रहती हैं। निम्न सारणी द्वारा प्रतिनिधि केन्द्रों पर विभिन्न ऋतुओं में चलने वाली तीव्र हवाओं की दिशा और गति प्रकट है।

तूफानी हवाओं के दिन (औसत)[12]

	40 मील प्रति घंटा और ज्यादा			60 मील प्रति घंटा और ज्यादा			औसत के वर्ष
	न.-अ.	म.-अ.	वर्षभर	न.-अ	म.-अ.	वर्षभर	
1. ऑकलैण्ड	20	29	49	0.9	1.6	2.5	24
2. जिसबोर्न	19	25	44	0.3	0.9	1.2	23
3. वैलिंगटन	72	74	146	16.0	13.9	29.9	13
4. क्राइस्ट चर्च	32	24	56	1.8	1.5	3.3	24
5. इन्वरकार्गिल	48	42	90	5.4	4.7	10.1	24

स्पष्ट है कि कुक एवं फॉवियॉक्स जलडमरु मध्य क्षेत्रों (क्रमशः वैलिंगटन तथा इन्वर कार्गिल) सर्वाधिक अवधि में तीव्र हवाएँ चलती हैं।

तापक्रम :

न्यूजीलैण्ड में जनवरी सबसे गर्म तथा जुलाई का माह सबसे ठण्डा होता है। परन्तु द्वीपीय स्थिति होने से दोनों महीनों के तापक्रमों का अन्तर उतना अधिक नहीं होता जितना कि महाद्वीपीय भूखण्डों में होता है। जनवरी का औसत 61.3° तथा जुलाई का 43.6° फ़ै० होता है। इस प्रकार वार्षिक तापांतर केवल 17.7° फ़ै०

---

12. Extract from the Hewzealand official year book 1971, section 1, p. 17.

होता है। पूर्वी भाग की अपेक्षा पश्चिमी तटवर्ती भागों में तापांतर कम (15° फ़ं०) होता है।

न्यूजीलैण्ड के औसत मासिक तापक्रम (फ़ं० में)[13]

माह	जन.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.
तापक्रम	61.3	61.3	58.8	54.5	49.0	44.8	43.6	54.4	48.8	52.6	55.8	59.2

स्थानीय धरातलीय दशाओं, अक्षांसीय स्थिति तथा ऊँचाई का तापक्रम के वितरण पर स्पष्ट प्रभाव है। देश में सर्वाधिक ऊँचे तापक्रम दक्षिणी-आल्प्स के पूर्वी भागों में स्थित पठारी एवं निचले भागों में मिलते हैं जहाँ जनवरी-फरवरी में दोपहर के समय तापक्रम 90° फ़ं० से भी ज्यादा हो जाता है। उत्तर-पश्चिम से आने वाली फोन हवाएँ तापक्रम को और भी ज्यादा बढ़ा देती हैं। अब तक के सर्वाधिक तापक्रम आशबर्टन (101° फ़ं०) तथा सबसे कम ओफीर (–3° फ़ं०) में रिकार्ड किए गए हैं। साधारणतया उत्तर से जैसे-जैसे दक्षिण की ओर चलते हैं अक्षांसों के बढ़ने के साथ-साथ तापक्रम कम होता जाता है। धुर उत्तर में जहाँ औसत तापक्रम 59° फ़ं० रहता है, दक्षिण की ओर घटते-घटते क्रमशः कुक जल डमरु मध्य क्षेत्र में 54° फ़ं० एवं दक्षिण में 49° फ़ं० ही रह जाता है।

वर्षा :

हवाओं की दिशा (पछुआ हवाएँ) एवं न्यूजीलैण्ड के द्वीपों के पर्वतीय-क्रमों के विस्तार-स्वरूप के आधार पर यहाँ के वर्षा-वितरण के बारे में भलीभाँति अनुमान लगाया जा सकता है। स्वाभाविक रूप से सर्वाधिक वर्षा दक्षिणी आल्प्स के पश्चिमी तीव्र ढाल प्रदेशों पर होती है जहाँ कि आर्द्रता से लदी पछुआ हवाएँ प्रथम बार आकर टकराती हैं। पूर्व की ओर जैसे-जैसे चलते हैं मात्रा में कमी होती जाती है, कहीं-कहीं तो बहुत ही नगण्य रह जाती है। ऊँचाई का वर्षा की मात्रा एवं वृष्टि छाया प्रदेश की शुष्कता पर स्पष्ट प्रभाव है। यथा, दक्षिणी-आल्प्स में जहाँ ऊँचाई 10,000 फीट से ज्यादा है वर्षा 200 इंच तक होती है जबकि ओटैगो के पठार में 20 इंच से भी कम पानी गिरता है। न्यूजीलैण्ड का सबसे कम वर्षा वाला भाग (क्लाइट–14 इंच) यहीं स्थित है। कैंटरबरी के मैदान में वर्षा का औसत 20 से 30 इंच तक रहता है।

ठीक यही स्वरूप उत्तरी द्वीप में जहाँ सबसे ज्यादा वर्षा (100 इंच) एगमोंट पर्वत के पश्चिमी ढालों पर होती है। पूर्वी पर्वत श्रृंखलाओं पर ज्यादा

13. Ibid.
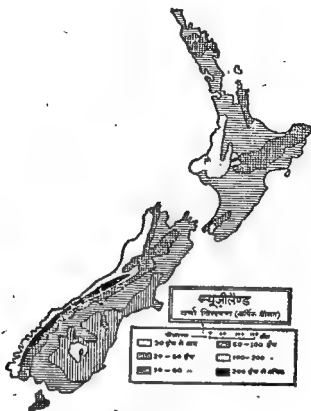
पानी इसलिए नहीं गिर पाता क्योंकि पछुआ हवाओं की आर्द्रता का पर्याप्त भाव ज्वालामुखी पर्वतों (जो पूर्वी श्रेणियों से ज्यादा ऊँचे हैं) में ही समाप्त हो जाता है। उत्तरी द्वीप के अधिकांश भाग में 40° के लगभग वर्षा होती है। ज्वालामुखी प्रदेश में 75 इंच तथा पूर्वी पर्वतों पर 50–60 इंच पानी गिरता है।

ऑकलैण्ड प्रायःद्वीप को छोड़कर जहाँ वर्षा जाड़ों में होती है, शेष सभी भागों में पछुआ हवाओं से वर्षा होती है। चूंकि पछुआ हवाएं निरन्तर वर्ष भर चलती रहती हैं अतः वर्षा भी पूरे साल में लगभग समवितरित होती है। वर्षा की सर्वाधिक मात्रा अक्टूबर के महीने में होती है। वर्षा वाले दिनों की संख्या दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर क्रमशः कम होती जाती है यथा वैस्टलैण्डस में 235 दिन जबकि उत्तरी द्वीप में 150 दिन वर्षा का औसत पड़ता है।

हिम वर्षा बहुत कम एवं केवल दक्षिणी आल्प्स के उच्च प्रदेशों में होती है। वैसे भी इस पर्वत-क्रम के अति उच्च भागों को छोड़कर न्यूजीलैण्ड का शेष भाग हिम रहित रहता है। दक्षिणी-आल्प्स में स्थायी हिम क्षेत्र 6 हजार फीट से ऊपर हैं। उत्तरी द्वीप के कुछ भाग हिममंडित रहते हैं परन्तु ये बहुत ही सीमित मात्रा में तथा 8 हजार फीट की ऊँचाई से ऊपर हैं।

साधारणतः न्यूजीलैण्ड की वर्षा को विश्वसनीय कहा जाता है। जिसमें कि विभिन्न वर्षों में, मौसमों में होने वाली वर्षा मात्रा में ज्यादा अन्तर नहीं होता।

औसत माहवारी एवं वार्षिक वर्षा (न्यूजीलैण्ड)[14]

स्टेशन	जन.	फ.	मा.	अ.	म.	जू.	जु.	अ.	सि.	अ.	न.	दि.	वा. यो.
1. ऑकलैण्ड सिटी	3.3	4.1	2.8	4.3	4.8	5.5	5.5	4.3	3.8	4.2	3.2	3.1	48.9
2. लिस्बोर्न	2.8	3.2	3.0	3.4	5.0	3.9	4.9	3.9	2.9	2.6	2.2	2.0	39.8
3. वैलिंगटन	2.8	3.5	3.0	3.6	4.5	4.6	4.9	5.1	3.7	4.6	3.1	4.1	47.5
4. क्राइस्ट चर्च	2.2	1.8	1.7	1.8	3.0	2.7	2.4	2.3	2.0	2.0	2.0	2.4	26.3
5. डुनेडिन	2.8	2.5	2.5	2.5	2.6	2.9	2.5	2.3	2.2	2.5	2.8	2.9	31.0

14. Extract from Newzealand Official year book 1971, Section 1, p. 18.

यह तत्व कृषि के लिए अनुकूल है। गर्मियों के अन्त एवं पतझड़ में होने वाली वर्षा में अवश्य कुछ अन्तर आ जाते है परन्तु नगण्य रूप में। सर्वाधिक दैनिक वर्षा का रिकार्ड मिलफोर्ड साउण्ड का है जहां एक दिन में 56 सें० मी० (लगभग 22.5 इंच) तक वर्षा हो चुकी है। यहां का वार्षिक औसत 600 सें० मी० (240 इंच) है।

पृष्ठांकित सारिणी में दिए गए प्रतिनिधि नगरों की वर्षा के आंकड़ों से न्यूजीलैण्ड के विविध प्रदेशों में वर्षा-मात्रा का स्पष्ट चित्रण मिलता है।

स्पष्ट है कि न्यूजीलैण्ड के सभी भागों में वर्ष भर समवितरित वर्षा होती है। ऑकलैण्ड प्रायःद्वीप में जाड़ों के दिनों में अपेक्षाकृत ज्यादा वर्षा होती है।

अन्य मौसमी तत्व :

धूपीली अवधि की मात्रा उत्तर से दक्षिण की ओर क्रमशः घटती जाती है। सर्वाधिक धूपीले क्षेत्र ब्लैनहीम, नेल्सन तथा ब्लैंकटन (वर्ष में औसतन 2400 धूपीले घण्टे) आदि हैं। नैपियर एवं प्लैंटी की खाड़ी में यह औसत बहुत कम है। साउथलैण्डस में धूपीली अवधि 1600 घण्टा है। समस्त देश का धूपीली अवधि का औसत लगभग 2000 घण्टा बैठता है जो इटली के बराबर तथा ब्रिटेन से ज्यादा है।

दक्षिणी-पश्चिमी न्यूजीलैण्ड में ओले की बारम्बारता ज्यादा है जहां वर्ष में लगभग 20 दिन ओले युक्त होते हैं। सारे देश का औसत 5 दिन है। कैंटरबरी तथा हॉके की खाड़ी क्षेत्रों में प्रायः भारी ओले पड़ते हैं जिनसे कृषि व बागों के अलावा भेड़ों को भी भारी नुकसान पहुँचता है।

पश्चिमी तटवर्ती भागों में आर्द्रता सर्वाधिक (80-90 प्रतिशत) तथा पूर्वी भागों जैसे कैंटरबरी या ओटेगो के पठारी भाग में सबसे कम (20-30 प्रतिशत) होती है। तटवर्ती और भीतरी भागों की आर्द्रता में औसतन 10% का अन्तर रहता है।

न्यूजीलैण्ड की जलवायु में चार मौसम होते हैं जिनका अवधि-वितरण इस प्रकार है।

गर्मी—दिसम्बर, जनवरी, फरवरी।

पतझड़—मार्च, अप्रैल, मई।

सर्दी—जून, जुलाई, अगस्त।

बसन्त—सितम्बर, अक्टूबर, नवम्बर।

□□□

न्यूजीलैण्ड : आर्थिक विकास

न्यूजीलैंड के भौगोलिक वातावरण ने यहां के आर्थिक उद्यमों के स्वरूप निर्धारण में आधारभूत हाथ बंटाया है। जैसाकि भौतिक स्वरूप से स्पष्ट है इन द्वीपों का पर्याप्त भाग उच्च प्रदेशों ने घेरा हुआ है, कृषि योग्य मैदानी भाग बहुत सीमित है, शीतोष्ण सामुद्रिक जलवायु है जिसमें ठंड व आर्द्रता का आधिक्य है। धातु एवं अधातु खनिजों का अभाव है, शक्ति के साधनों में जल को छोड़कर अन्य अनुपस्थित हैं। तट कटा-फटा है, पठारी व पर्वतीय भागों का अधिकांश भाग सदाबहार जंगलों से ढका है। दक्षिणी-द्वीप के पूर्वी भागों में जहां तापक्रम ऊंचे हैं, वर्षा कम होती है। इन सारी प्राकृतिक परिस्थितियों में न्यूजीलैंड में मुख्यतः उन्हीं उद्यमों का विकास हुआ है जिनको यहां के भौगोलिक वातावरण से प्रोत्साहन मिला है। काष्ठ-उद्योग, पशुपालन तथा दुग्ध-मांस-ऊन व्यवसाय एवं कुछ हल्के उद्योग यहां के आर्थिक ढांचे के प्रमुख आधार हैं। कृषि तथा मत्स्य व्यवसाय भी भौगोलिक परिस्थितियों की अनुकूलता के अनुपात में विकसित है। यहां के आर्थिक उद्यमों के मुख्य आधार वन, घास-क्षेत्र व जल शक्ति के स्रोत के रूप में नदियां हैं। यहां की ठण्डी आर्द्र जलवायु घास एवं चारे की फसलों के लिए आदर्श हैं जिसके आधार पर यह छोटा सा देश विश्व के प्रमुख दुग्ध व्यवसायी एवं मांस-ऊन उत्पादक देशों में से एक हो सका।

काष्ठ एवं सम्बन्धित उद्योग :

न्यूजीलैंड का लगभग एक-चौथाई भाग (कुछ कम) जंगलों द्वारा घेरा हुआ है। इसमें 14,000,000 एकड़ या दूसरे शब्दों में देश के कुल भू-क्षेत्र के पंचम भाग से ज्यादा में प्राकृतिक जंगल है जो यहां आदि रूप में खड़े हैं। पहले इनका विस्तार ज्यादा था परन्तु माओरी एवं बाद में प्रवासी यूरोपियनों द्वारा काटे जाने के फलस्वरूप इनका विस्तार बहुत कम हो गया है। प्राकृतिक जंगलों के अतिरिक्त लगभग 1,300,000 एकड़ भू-क्षेत्र में यूरोपियनों द्वारा लगाए गए वन हैं।[15] उत्तरी

15. Newzealand, Fact and Figures 1972 p. 40.

द्वीप के ज्वालामुखी पठार में लगभग 800,000 एकड़ के विस्तार में फैला मुलायम लकड़ी का वन पिछले दशकों में ही लगाया गया है जो अब क्रमशः प्रौढ़ता प्राप्त कर रहा है। कहा जाता है कि यह दुनिया का सबसे बड़ा मानव द्वारा विकसित वन भाग है।[16]

न्यूजीलैंड में पिछले 100 वर्षों में उपयोगी वनों के विकास के प्रयत्न होते रहे है। जिस समय यहां यूरोपियन लोग आए तो उन्होंने पश्चिमी यूरोप के प्रकार पर्णपाती वृक्ष लगाए। यद्यपि इस प्लांटेशन का विस्तार बहुत कम था। बाद में यह पता लगा कि न्यूजीलैंड की मिट्टियों एवं जलवायु में उत्तरी अमेरिका के शंकुल वृक्षों (मोंटरीपाइन मोंटरी साइप्रस) तथा आस्ट्रेलियन यूकेलिप्टस बहुत तेजी से पनपते हैं। अतः इनकी पंक्तियां लगाई गई। सर्वाधिक प्लांटेशन दो विश्व युद्धों के अन्तराल में किया जबकि सरकारी वन विभाग एवं निजी क्षेत्रों द्वारा डगलस फर, मैरीटाइम पाइन, पौण्डेरोसा पाइन, यूरोपियन लार्च व अन्य उपयोगी वृक्षों को लाखों एकड़ भूमि में रोपा गया। वैसे तो देश के सभी भागों में प्लांटेशन्स हुए परन्तु सबसे बड़ा भाग ज्वालामुखी क्षेत्र (उपरोक्त उल्लिखित) में था जहां लगभग 8 लाख एकड़ भूमि वृक्ष लगाए गए।

प्राकृतिक वनों में अधिकांश मिश्रित प्रकार के हैं जो टिम्बर, पेपर व लुगदी उद्योग के लिए उत्तम माने जाते हैं। यहां के जंगलों को दो बडे समूहों में रखा जा सकता है। प्रथम, मिश्रित शीतोष्ण सदाबहार जंगल जो वस्तुतः चौड़ी पत्ती वाले एवं शंकुल वनों के मिश्रित स्वरूप हैं। ये वन उत्तरी द्वीप के निचले गर्म आर्द्र भागों में मिलते हैं। दूसरे समूह में दक्षिणी द्वीप के पर्वतीय भागों में पाए जाने वाले नोथोफैगस बीच के जंगलों को रखा जाता है। 'बीच' के जंगलों में प्रायः कठोर लकड़ी मिलती है जबकि उत्तरी द्वीप के मिश्रित एवं शंकुल वनों से मुलायम लकड़ी प्राप्य है जिसका उपयोग फर्नीचर तथा कागज लुग्दी उद्योग में किया जाता है। 'बीच' वृक्ष की पांच किस्में—सिल्वर, ब्लैक, माउन्टेन, रैड तथा हार्ड बीच उत्तम श्रेणी का काष्ठ प्रदान करती है। हल्के भूरे रंग की तावा लकड़ी भी कठोर लकड़ियों में उल्लेखनीय है जो उत्तम फर्नीचर बनाने के काम में ली जाती है।

न्यूजीलैण्ड में टिम्बर उत्पादन[17]

(घन मीटरों में)

प्राकृतिक वन

वर्ष	रीमू एव मीरो	बीच	योग
1979–80	137,036	23,061	195,073
1980–81	121,971	19,280	175,101
1981–82	111,614	18,208	164,442

16. Cumberlaud, K.B.—Sonth west Pacific p. 214.

17. The Statesman's Year Book, 1984-85 Page 902

लगाये गये वन

वर्ष	पाइन	डगलस फर	योग	कुल योग (समस्त टिम्बर) (प्राकृतिक वन सहित)
1979–80	1,608,894	163,454	1,815,420	2,010,493
1980–81	1,798,060	168,025	2,007,245	2,182,346
1981–82	1,885,761	173,377	2,105,991	2,270,433

उत्तरी द्वीप के जंगल अपनी मुलायम लकड़ी के लिए उल्लेखनीय हैं। न्यूजीलैंड की कौडीपाइन विश्व की सर्वश्रेष्ठ मुलायम लकड़ियों में से मानी जाती है। इसका प्रधान क्षेत्र ऑकलैंड प्रायद्वीप है। पाइन का वृक्ष, 100–150 फीट ऊँचा होता है एवं तने की परिधि 35 फीट तक होती है। कारोमण्डल पैनिन सुला में अनेक कौडी पाइन दो हजार वर्ष तक के पुराने हैं। किसी समय इस द्वीप (उत्तरी द्वीप) में कौडीपाइन का विस्तार लगभग 20 लाख एकड़ में था जो अब घटकर केवल 25,000 एकड़ रह गया है। कमी को देखते हुए सरकार ने इसकी कटाई अत्यन्त सीमित कर दी है। कटाई के लिए 'राशनिंग व्यवस्था' लागू की गई है। अन्य मुलायम लकड़ियों में काहीकाटी (श्वेत पाइन) माटाई (काला पाइन) रीमू (लाल पाइन) मीरो एवं तोतारा महत्वपूर्ण हैं। रीमू पाइन अपनी ऊँचाई, सीध व टिकाऊपन के लिए उल्लेखनीय है। इसका उपयोग अधिकांशतः सज्जा कार्यों के लिए होता है।

न्यूजीलैंड के आर्थिक ढांचे में वनों से प्राप्त उत्पादनों के महत्व का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि काष्ठ एवं सम्बन्धित उत्पादनों का मूल्य खनिज पदार्थों के मूल्य से ज्यादा रहता है। वन-उत्पादनों का हिस्सा देश के कुल निर्यात में (मूल्य की दृष्टि से) 5% से अधिक होता है। 1982 में यहाँ से लगभग 372 मिलियन डॉलर की कीमत से अधिक के वन-उत्पादन निर्यात किए गए।

न्यूजीलैण्ड के वन उत्पादनों का निर्यात[18] (1982)

उत्पादन	निर्यात मूल्य न्यूजी० डालरों में
काष्ठ एवं कार्क	107,546,000 न्यू० डालर
लुग्दी एवं कागज	155,274,000 "
अखबारी कागज	110,642,000 "

18. The Statesman's Year Book. 1984-85 Page 904

मुलायम लकड़ी के आधार पर न्यूजीलैंड के कागज एवं लुग्दी उद्योग की स्थापना आज से लगभग 30 वर्ष पूर्व हुई। उद्योग का वास्तविक विस्तार 1950-60 दशक के मध्य से प्रारम्भ हुआ जबकि 'टस्मान लुग्दी एवं कागज कम्पनी' तथा 'न्यूजीलैंड वन उत्पादन लि० कम्पनी' ने विविध प्रकार के उत्पादनों पर जोर देना प्रारम्भ किया। वर्तमान में न्यूजीलैंड में टिम्बर के 387 प्लाईवुड के 9, लुग्दी के 7 तथा फाइबर बोर्ड के 2 विशाल कारखाने। कागज तथा लुग्दी के तीन सबसे बड़े संस्थान क्रमशः दक्षिणी ऑकलैंड, रोटोरुआ एवं प्लैंटी की खाड़ी जिलों में स्थित है। ये तीनों कारखाने देश का लगभग तीन-चौथाई कागज प्रस्तुत करते हैं। ह्वैकटन मिल्स में लुग्दी से पेपर बोर्ड भी तैयार किए जाते हैं।

काष्ठ उद्योग न्यूजीलैंड के उद्योगों की एक विकासशील शाखा है। इसका अनुमान उत्पादन एवं निर्यात के आँकड़ों से ही स्पष्ट हो जाता है। घरेलू आवश्यकता को पूरा करने के बाद भी लगभग 350 मि० डालर से अधिक के उत्पादन निर्यात कर दिये जाते हैं। न्यूजीलैंड के अधिकांश वन उद्योग उत्पादन आस्ट्रेलिया को भेजे जाते है। पिछले वर्षों में जापान इस क्षेत्र में आगे बढ़ा है जहाँ न्यूजीलैंड के वन- उत्पादन निर्यातों का लगभग 40% भाग जाता है।

कृषि :

आस्ट्रेलिया की तरह न्यूजीलैंड का आर्थिक ढाँचा भी प्रमुखतः चरागाहों पर आधारित उद्यमों पर आधारित है। यह दुनिया के प्रधान दुग्ध व्यवसायी देशों में से एक है जिसके निर्यात का एक बड़ा भाग दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित उत्पादनों का होता है। मक्खन, पनीर, मांस, ऊन, जमाया हुआ दूध, सेब व अन्य फल यहाँ के प्रधान निर्यात हैं जो सभी कृषि क्षेत्रों से प्राप्त होते है। इस देश की कृषि का स्वरूप इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि भौगोलिक वातावरण के अनुरूप विकसित उद्यम कितनी तेजी से विकसित होते हैं।

न्यूजीलैंड के कृषि स्वरूप को निर्धारित करने में भौगोलिक वातावरण का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। देश में लगभग एक तिहाई भू-भाग में प्राकृतिक चारागाह क्षेत्र हैं। 28% भू-क्षेत्र ऐसा है जिसमें बोई गई घासें व लगाई गई चारे की फसलें हैं। खाद्यान्न की फसलों का विस्तार 5% से भी कम भू-भाग में है क्योंकि निचले भाग, जहाँ वृद्धि अवधि पूर्ण हो, बहुत सीमित है। दूसरे, निकट स्थित आस्ट्रेलिया से गेहूँ सस्ते दामों पर आसानी एवं बहुतायत से मिल जाता है। इसके विपरीत दुग्ध उत्पादनों की मांग दुनिया के औद्योगिक तथा घने बसे प्रदेशों मे निरन्तर बनी रहती है। कुल भू-क्षेत्र का लगभग 18% भाग वन एवं नेशनल पार्कों द्वारा घेरा हुआ है। लगभग 16% भूमि ऐसी है जो पर्वतीय स्वरूप तथा अन्य कारणों से व्यर्थ है। इस प्रकार भू-उपयोग को सरसरी नजर से देखने पर सुस्पष्ट

हो जाता है कि लगभग दो-तिहाई भाग कृषि एवं पशुचारण के लिए प्रयुक्त हो रहा है। इसमें फसली कृषि ने अत्यन्त सीमित भाग (5%) घेरा हुआ है शेष में प्राकृतिक एवं लगाए गए चरागाह या चारे की फसलें हैं।

वर्तमान (1982) में 11,129,000 हैक्टे० भूमि कृषि कार्यों में संलग्न है जिसमें फार्म हाउसों एवं निजी बागानों का क्षेत्र भी शामिल है। 10,176,000 हैक्टे० भूमि में घास क्षेत्र, ल्यूसर्न, फलों के बाग, खाद्यान्न एवं सब्जियाँ बोई जाती हैं। लगभग 953,000 हैक्टे० भूमि में यूरोपियन्स द्वारा लगाये गये वन हैं। 5,575,799 हैक्टे० भूमि में क्राउन लैंड्स हैं जिन्हें अलग-अलग अवधियों के लिए लीज पर दिया जाता है। दक्षिणी द्वीप में 'फ्री होल्ड' फर्मों का आकार अपेक्षाकृत बड़ा है।

फसली कृषि :

न्यूजीलैंड के धरातलीय स्वरूप को देखने से स्पष्ट है कि कैंटरबरी का मैदान, ताराना के निचले प्रदेश एवं ओटेगो पठार के निचले भाग फसली कृषि के उपयुक्त हैं। इन भागों में धूपीली अवधि, मिट्टी की उत्पादकता के अतिरिक्त घनी बसी जनसंख्या ने भी फसली कृषि को प्रोत्साहित किया है। ओटेगो के पठार एवं कैंटरबरी के मैदान में वर्षा अवश्य कुछ कम होती है जिसकी पूर्ति दक्षिणी-आल्प्स से बहकर आने वाली नदियों से कर ली जाती है। वस्तुतः ये तीन क्षेत्र ही हैं जहाँ न्यूजीलैंड के अधिकांश खाद्यान्न उत्पन्न किये जाते हैं। ऑकलैंड प्रायःद्वीप की भूमध्यसागरीय जलवायु में फल एवं सब्जियाँ बोई जाती हैं।

यहाँ की प्रमुख कृषि फसलें गेहूँ, जौ, जई, मक्का, आलू, राई, मटर तथा विविध प्रकार के फल है। उष्ण कटिबंधीय फसलों जैसे चाय, गन्ना तथा कपास यहाँ पैदा नहीं की जाती। वैसे जितनी फसलें यहाँ बोई जाती हैं साधारणतया सभी अपनी घरेलू आवश्यकता की पूर्ति करने में समर्थ हैं। भूमध्यसागरीय जलवायु में पैदा होने वाले आम्लिक फलों में न्यूजीलैंड न केवल स्वावलम्बी है वरन् निर्यात भी किये जाते हैं। सेव यहाँ के फलों में प्रमुख है जो भारी मात्रा में (लगभग 5 मिलियन बुशल) पैदा किया जाता है। व्यापारिक स्तर पर पैदा किए जाने वाले फलों के बाग मुख्यतः वहाँ विकसित हुए हैं जहाँ जलवायु एवं मिट्टी अनुकूल है। अक्षांशीय स्थिति के कारण चूँकि उत्तरी द्वीप की जलवायु अपेक्षाकृत गर्म रहती है अतः अधिकांश फलों के बाग इसी द्वीप में हैं। ऑकलैंड प्रायःद्वीप के अतिरिक्त जिस्बोर्न, प्लेंटी की खाड़ी, टौरांगा तथा केरीकेरी प्रदेश में पर्याप्त भाग फलोत्पादक वृक्षों ने घेरा हुआ है। ऑकलैंड के बाद फलों की विविधता तथा उत्पादन मात्रा की दृष्टि से हॉक-बे जिला महत्वपूर्ण है। यहाँ सेब, नाशपाती, आड़ू, अंगूर व अन्य फल पैदा किये जाते है। दक्षिणी द्वीप में भी कुछ भागों में फल उत्पादित किये

जाते हैं। इनमें नेल्सन तथा मध्यवर्ती ओटेगो उल्लेखनीय हैं। ओटेगो के खूबानी तथा नेल्सन जिले में आड़ू का उत्पादन उल्लेखनीय है। नेल्सन जिला अपने तम्बाकू उत्पादन की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो गया है।

कैंटरबरी, तारानाकी, नेल्सन एवं ओटेगो के बड़े-बड़े नगरों के आसपास सब्जियों की खेती प्रचलित है। क्राइस्टचर्च के निकट हजारों एकड़ भूमि केवल सब्जी उत्पादन में संलग्न है। ओमारू तथा डुनेनिन के पास भी सब्जी उत्पादन प्रचलित है। संक्षेप में प्रधान कृषि फसलें इस प्रकार हैं।

प्रमुख उत्पादों की उत्पादन मात्रा एवं संलग्न भूमि निम्न प्रकार है।

प्रमुख फसलें-उत्पादन एवं भू-क्षेत्र[19]

फसल	वर्ष	भू-क्षेत्र (1000 हैक्टे० में)	उत्पादन (1000 टनों में)
गेहूँ	1981	81·2	325·7
	1982	71·5	292·1
मक्का	1981	17·2	152·1
	1982	18·8	170·1
जौ	1961	67·4	271·4
	1982	88 5	355·8

गेहूँ :

गेहूँ का उत्पादन मुख्यतः दक्षिणी द्वीप में केन्द्रित है। आधे से अधिक गेहूँ कैंटरबरी के मैदान से उपलब्ध होता है। शेष मात्रा का अधिकांश भाग ओटेगो के पठार में स्थित गेहूँ के क्षेत्रों से आता है। वार्षिक उत्पादन लगभग 3 लाख टन है जिसमें से 2 लाख टन का उपयोग आटा बनाने के लिए कर लिया जाता है। इस प्रकार गेहूँ के उत्पादन में न्यूजीलैंड स्वावलम्बी है। इसमें फसली कृषि का सबसे अधिक भाग (312,000 एकड़) संलग्न है। प्रति एकड़ उत्पादन लगभग 52 बुशल है। गेहूँ की खेती में सरकार का कृषि-विभाग भी रुचि रखता है। गेहूँ की विभिन्न किस्मों के विकास प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि व अन्य प्रकार से मार्ग-दर्शन हेतु कृषि मंत्रालय ने एक 'गेहूँ शोध संस्थान' की स्थापना की है। किसान अपनी फसल का विक्रय 'गेहूँ बोर्ड' को करते हैं। गेहूँ बोर्ड देश के विविध खपत केन्द्रों को भेजता है। गेहूँ की प्रधान किस्में आम्रोटी, आरावा तथा गामेया आदि है।

19. The Statesman's Year Book, 1984-84 p 901

जौ :

जौ के भी साधारणतः वे ही क्षेत्र हैं जहाँ गेहूँ पैदा किया जाता है। पिछले दशकों में जौ की खेती, उत्पादन एवं संलग्न भूमि में विस्तार हुआ है। उत्तरी-द्वीप के तारानाकी वेलिंगटन में भी जौ की खेती होने लगी है। कैंटरबरी मैदान उत्पादन का आधे से अधिक भाग प्रस्तुत करता है। 1963 में यहाँ जौ 116,000 एकड़ में बोया गया था जबकि 1982 में संलग्न भू-क्षेत्र बढ़कर 210,000 एकड़ हो गया। प्रधान किस्में कार्ल्स बर्ग, केनिया तथा जेफर इत्यादि है। जौ का वार्षिक उत्पादन लगभग 3·5 लाख टन (1982) है। प्रति एकड़ उत्पादन 64 बुशल है। जौ का उपयोग खाद्यान्न के रूप में प्रयोग तथा माल्टा बनाने के अतिरिक्त पशुओं को खिलाने में भी किया जाता है।

जई :

गेहूँ तथा जौ के बाद जई में सर्वाधिक फसली कृषि क्षेत्र (28,000 एकड़) संलग्न है। वैसे पिछले वर्षों में इसके क्षेत्र में कमी आई है। इसका पर्याप्त भाग चारे की फसलों को दे दिया गया है। जई भी कैंटरबरी के मैदान तथा ओटेगो में बोई जाती है। वार्षिक उत्पादन 1,820,000 बुशल एवं प्रति एकड़ उत्पादन 64·2 बुशल है। जई की प्रधान किस्में ग्रीनवार्ड, मापुआ, ब्लेक सुप्रीम तथा ग्रे-विंटर आदि है।

आलू :

आलू की अधिकतर उपज कैंटरबरी के मैदान, वेलिंगटन एवं ऑकलैंड (पुके कोहू क्षेत्र) से प्राप्त होती है। पिछले वर्षों में आलू का प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ा है फलतः संलग्न भू-क्षेत्र में कमी हुई है। उल्लेखनीय है कि 25 वर्ष पहले जब न्यूजीलैंड की जनसंख्या 1·75 मिलियन थी तब भी उतनी ही भूमि पर आलू पैदा किया जाता था जितनी पर आज बल्कि पिछले कुछ वर्षों में क्षेत्र कम हो गया है। आज जनसंख्या 3 मिलियन से अधिक है परन्तु उत्पादित आलू स्वदेशी आवश्यकता पूर्ति करने में समर्थ है। आलू-उत्पादन, उद्योग-अधिनियम 1950 के अनुसार आलू की खेती को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए एक 'आलू बोर्ड' की स्थापना की गई है। उत्पादक क्षेत्रों से खरीद कर खपत केन्द्रों तक आलू पहुँचाने व उसकी कीमत पर नियन्त्रण रखने का कार्य बोर्ड करता है। वस्तुतः बोर्ड द्वारा व्यवस्थित शोध कार्यों के ही परिणाम स्वरूप आलू के प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि हुई है।

वर्ष	संलग्न भू-क्षेत्र	कुल उत्पादन टनों में	प्रति एकड़ उत्पादन टनों में
1982	23,142	277,604	12·02

न्यूजीलैण्ड : पशु पालन एवं दुग्ध व्यवसाय

न्यूजीलैंड दुनिया के अग्रणी दुग्ध-व्यवसायी देशों में से एक है। घास इस द्वीपीय देश की समृद्धि का आधारभूत तत्व है। न्यूजीलैंड में लगभग 70 मिलियन भेड़ें एवं 7·9 मिलियन ढोर (दूध देने वालों को शामिल करते हुए) हैं। यहाँ की जनसंख्या के प्रति व्यक्ति के पीछे लगभग 25 पाले गये जानवरों का औसत बैठता है। दूसरे शब्दों में कुल जनसंख्या से पशु संख्या (पाले गये) लगभग 25 गुनी ज्यादा है। इस अनुपात से ज्यादा दुनिया के किसी भी भाग में नहीं है। निकटवर्ती देश आस्ट्रेलिया में भी भेड़ पालन व्यवसाय व्यापारिक स्तर पर है परन्तु जानवरों की दृष्टि से न्यूजीलैंड आस्ट्रेलिया से कहीं आगे है। अगर भू-क्षेत्र को दृष्टि में रखा जाये तो ढोर एवं भेड़ दोनों का अनुपात आस्ट्रेलिया से लगभग 15 गुना होता है। यही नहीं, चरागाह तथा घास क्षेत्र भी यहाँ इतने विकसित किये गये हैं कि उनमें पाले जाने वाले जानवरों का औसत दुनिया में सबसे कम बैठता है। यहाँ के अच्छी श्रेणी के चरागाह में एक एकड़ भू-क्षेत्र से केवल एक गाय, का औसत पड़ता है। भेड़ क्षेत्रों में प्रति एकड़ दस भेड़ों का औसत है। उल्लेखनीय है कि यह औसत साल भर तक चारे की मात्रा को दृष्टि में रखकर निकाला गया है।[20]

मांस, ऊन एवं दुग्ध उत्पादनों का यहाँ के आर्थिक ढांचे में क्या स्थान है इसका सही अनुमान इन आंकड़ों से हो सकता है कि राष्ट्रीय आय का लगभग तीन-चौथाई एवं देश से होने वाले निर्यात में 80% भाग इन उत्पादनों से सम्बन्धित होता है। अगर इसमें फलों तथा वनों से सम्बन्धित उत्पादनों (जो निर्यात होते हैं) को भी जोड़ लिया जाये तो निर्यात मूल्य का 90% से अधिक भाग प्रस्तुत करेंगे। प्रतिवर्ष करोड़ों पौंड की कीमत के मक्खन, पनीर, भेड़-मेमने का मांस, ऊन आदि निर्यात किये जाते हैं। 1982 में लगभग 3080 मिलियन न्यूजी. डॉलर का निर्यात केवल मांस, ऊन, मक्खन तथा पनीर से सम्बन्धित था। उल्लेखनीय है कि इस वर्ष का कुल निर्यात मूल्य 6,594 मिलियन न्यूजी. डॉलर था।

आज न्यूजीलैंड दुनिया में सर्वाधिक मांस एवं दुग्ध-उत्पादनों का निर्यातक

---

20. Extract from Qewzealand Official year book 1971. Section 14 p. 430.

देश है। ऊन के निर्यात में इसका द्वितीय स्थान है। यहाँ के फार्म्स में प्रति एकड़ एवं प्रतिव्यक्ति उत्पादन सर्वाधिक है। चरागाह-फार्म्स दुनिया में सर्वाधिक समृद्ध, यांत्रिक व आधुनिकतम सुविधाओं से युक्त हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि पिछले दशकों में न्यूजीलैंड के माँस, पनीर, मक्खन, ऊन व अन्य 'पैस्टोरल प्रॉडक्टस' के उत्पादन व निर्यात-मात्रा में जनसंख्या की भारी वृद्धि के बावजूद निरन्तर वृद्धि रही है। परिणाम यह हुआ है कि विश्व बाजारों में आस्ट्रेलिया जैसे देश के माल के अनुपात में इस छोटे से देश का माल ज्यादा जगह बनाया जा रहा है। इस विकास की पृष्ठभूमि में न केवल नियमित वर्षा, प्राकृतिक घास क्षेत्र या इस व्यवसाय से केवल सम्बन्धित तकनीकी का ज्ञान है वरन् यह नीति भी कि अन्य उद्योगों, जिनके विकास के लिए कच्चे माल और उपयुक्त परिस्थितियाँ यहाँ नहीं है,के पीछे न्यूजीलैंडवासियों ने दुनिया के अन्य देशों की देखा-देखी करके व्यर्थ की शक्ति नहीं गवांई है। संक्षेप में, वे प्रोत्साहक तत्व, जिन्होंने यहाँ के पशुपालन तथा दुग्ध व्यवसाय में सहयोग किया है निम्न प्रकार हैं—

(1) स्वयं प्रकृति ने इन द्वीपों के लिए यह व्यवसाय निर्धारित किया है। यहाँ की शीतोष्ण-आर्द्र जलवायु घास उत्पादन के लिए बहुत अनुकूल है। प्राकृतिक घास क्षेत्रों का विस्तार ही पर्याप्त है। बोई गई घासें या चारे की फसलें अन्य कृषि फसलों की अपेक्षा अच्छी एवं जल्दी विकसित होती हैं।

(2) खाद्यान्न व अन्य प्रकार की फसली कृषि के लिए उपयुक्त भौगोलिक परि-स्थितियों की कमी है। मैदान के नाम पर केवल कैंटरबरी एवं वैलिंगटन के आसपास के ही भाग हैं। वृद्धि-अवधि भी दक्षिण के द्वीप में बहुत छोटी है। तापक्रम प्रायः नीचा रहता है।

(3) कुछ स्थानों को छोड़कर समस्त देश में पूरे सालभर तक खुले चरागाहों—जो समृद्ध घास तथा हिमांक से ऊँचे तापक्रमों युक्त रहते हैं—में पशुओं को चराया जाना सम्भव है। जिन हिस्सों में कुछ दिनों के लिए घास का अभाव हो जाता है उनकी कमी पूर्ति सुरक्षित की गई 'साइलेज' से पूरी की जा सकती है।

(4) दक्षिणी-आल्प्स के धुर दक्षिणी-पश्चिमी ढाल प्रदेश एवं मध्यवर्ती ऊँची चोटियों को छोड़कर न्यूजीलैंड का कोई भी भाग ऐसा नहीं है जहाँ भेड़ न पाली जा सकें।

(5) छोटी-छोटी असंख्य जलधाराओं ने न केवल पशुओं, ऊन धोने व अन्य कार्यों के लिए पर्याप्त जल प्रदान किया है वरन् जल-विद्युत के रूप में शक्ति का साधन भी प्रस्तुत किया है जिससे कि सारे फार्मों का विद्युतीकरण एवं यंत्रीकरण सम्भव हो सका है।

(6) एक ओर अगर अमेरिका तथा यूरोप के घने बसे देशों व औद्योगिक प्रदेशों में मांस, ऊन व दुग्ध व्यवसायों की निरंतर भारी मांग बनी रहती है तो दूसरी ओर न्यूजीलैंड के लिए आस्ट्रेलिया की निकटवर्ती स्थिति के फलस्वरूप खाद्यान्नों की कोई परेशानी नहीं। अतः ज्यादा भूमि घास क्षेत्रों में लगाई जा सकी।

(7) एक ओर तो भौगोलिक परिस्थितियाँ अनुकूल हैं। दूसरी ओर न्यूजीलैंड में अधिकांशतः ब्रिटेन के उन हिस्सों के लोग बसे हुए हैं जहाँ परम्परागत रूप से भेड़ पालन होता आया है अतः इस व्यवसाय को प्रचलित व विकसित करने में कोई खास दिक्कत नहीं हुई।

(8) न्यूजीलैंड में शक्ति के साधनों (कोयला, पैट्रोल) धातु व अधातु खनिजों का भारी अभाव है अतः अन्य किसी प्रकार का औद्योगिक विकास यहाँ सम्भव भी नहीं होता।

(9) मानवीय स्तर पर, न्यूजीलैंड के इस व्यवसाय की सफलता का राज सहकारिता एवं संगठन में निहित है। सभी अपने-अपने अलग बोर्ड जो न केवल उत्पादन क्षेत्रों से माल लेकर देशी-विदेशी खपत केन्द्रों तक पहुँचाने का कार्य करते हैं वरन् उत्पादनों की क्वालटी तथा कीमत पर भी कड़ा नियंत्रण रखते हैं। यही कारण है कि विश्व के बाजारों में यहाँ के उत्पादनों की दिन प्रतिदिन लोकप्रियता बढ़ती जा रही है।

(10) और अन्त में, सरकार का व्यवसाय के प्रत्येक क्षेत्र में अत्यधिक प्रोत्साहक सहयोग रहा है। 'डेरी बोर्ड अधिनियम 1952' के अनुसार यहाँ डेरीबोर्ड की स्थापना की गई। डेरी बोर्ड पशुओं के स्वास्थ्य, नस्ल सुधार उत्पादन-मात्रा की वृद्धि, माल की क्वालिटी आदि की ओर विशेष ध्यान देता है। इसी प्रकार 'ऊन बोर्ड' तथा 'मांस उत्पादन बोर्ड' की भी स्थापना की गई है। इन बोर्डों में व्यवसाय के प्रतिनिधियों के अलावा सरकार के प्रतिनिधि भी रहते हैं। सरकार इन बोर्डों को आर्थिक सहायता देती है। पशुओं की देखभाल के लिए सरकार ने 'वैटरनरी सेवा काउंसिल' की स्थापना की है। भेड़ क्षेत्रों व दुग्ध व्यवसाय के प्रदेशों में अनेक शोध केन्द्रों की स्थापना की है। व्यवसाय के सभी केन्द्रों तक विद्युत, सड़क, जल व अन्य सुविधाओं को पहुँचाने का कार्य सरकारी खर्चे पर किया गया है।

फार्म्स का आकार।

न्यूजीलैंड में चूंकि अधिकांश फार्म्स भेड़ पालन एवं दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित हैं अतः स्वाभाविक रूप में उनका आकार बड़ा है। केवल 30 प्रतिशत फार्म्स ही 100 एकड़ से छोटे हैं इनमें अधिकतर वे शामिल हैं जो खाद्यान्न तथा

फार्मों की व्यावसायिक विविधता

फार्म का प्रकार (उद्देश्य की दृष्टि से)	संख्या फार्म	मशीनरी एवं ट्रैक्टर्स पर खर्च (000 डालरों में)
1. मुख्यतया दुग्ध व्यवसायी	20,520	4,795
2. मुख्यतया भेड़ पालन	14,959	3,833
3. मुख्यतया 'बीफ' उत्पादन	2,128	289
4. दुग्ध व्यवसायी एवं भेड़ पालन 1	1,299	374
5. दुग्ध व्यवसायी एवं 'बीफ'[1]	713	186
6. भेड़ एवं दुग्ध व्यवसायी[2]	572	138
7. भेड़ एवं 'बीफ'[2]	8,932	2,472
8. 'बीफ' एवं दुग्ध व्यवसायी[3]	229	46
9. 'बीफ' एवं भेड़[3]	994	231
10. मिश्रित पशुधन	1,558	363
11. भेड़ और फसली फार्म	3,622	2,302
12. मुख्यतया फसली फार्म	1,627	1,143
13. बाजारी उत्पादन एवं बाग	709	378
14. साधारण मिश्रित फार्म्स	2,215	1,409

[1] दुग्ध व्यवसाय प्रधान

[2] भेड़ प्रधान

[3] 'बीफ' (मांस के लिए गाय) प्रधान

संलग्न मानव श्रम :

1982 में लगभग 1,48,000 व्यक्ति कृषि एवं पशुपालन फार्म्स पर कार्य कर रहे थे। इनमें से 42456 भेड़ों के फार्म्स, 43580 दुग्ध व्यवसायी फार्म्स, 19202 मिश्रित फार्म्स, 4102, बाजारी कृषि (जैसे सब्जी वगैरहा) तथा 5218 फलोत्पादक फार्म्स पर कार्यरत थे। न्यूजीलैंड जैसे देश में जहाँ फार्म्स ही राष्ट्रीय आमद के मुख्य आधार हैं इतनी कम जनसंख्या का फार्म्स पर सलग्न होना आश्चर्यजनक सा लग सकता है। वस्तुतः यह स्थिति अत्यधिक यांत्रिक-कृषि होने के कारण है। न्यूजीलैंड के किसान दुनिया के विकसित किसानों में से हैं। फार्म्स के सभी

कार्य–फसलों की बुवाई, कटाई, ऊन कटाई, दूध दूहना या अन्य, सभी मशीनों से किए जाते हैं। अनेक ऐसी प्रायवेट कम्पनियां हैं जो कीटाणु-नाशक दवाओं का छिड़काव करने, चूहे मारने वाली दवाओं को फैलाने, घास की नुकीली नोकों को काटने, दूरस्थ खेतों पर सामान पहुँचाने आदि का कार्य करती हैं। ये सभी कार्य वायुयानों से सम्पादित किए जाते हैं। फार्म्स में वायुयानों का प्रयोग साधारण बात है। 1980 में वायुयानों द्वारा उर्वरकों एवं चूने का 'स्प्रे' कर 6,485,500 है० भूमि का टॉप-ड्रेसिंग किया गया।

दुग्ध व्यवसाय की सफलता बहुत कुछ इस तथ्य पर निर्भर करती है कि गायों के लिए अच्छी और उपयुक्त मात्रा में घास उपलब्ध है या नहीं। दूध की मात्रा का घास की किस्म से बड़ा सम्बन्ध माना जाता है। न्यूजीलैंड का कृषि विभाग इस बारे में बड़ा सचेत है। जगह-जगह इस प्रकार की शोध-शालाएँ स्थापित की गई हैं जो अमुक क्षेत्र की मिट्टी व जलवायु के आधार पर उस क्षेत्र की सर्वोत्तम घास विकसित करती हैं। इसके लिए पहले पौध शालाओं में घास की पौध लगाई जाती है फिर उसे फार्म्स पर स्थानांतरित किया जाता है। निम्न सारणी से पिछले कुछ वर्षों में बोए गए चरागाह क्षेत्रों का विवरण मिलता है।

कृत्रिम घासों एवं ल्यूसर्न का उपयोग

वर्ष	बीज 'हे' या साइलेज के लिए काटी गई	खड़ी चराई के लिए
1961–62	1,160,010 एकड़	18,087,564 एकड़
1963–64	1,335,768 एकड़	19,131,705 एकड़
1966–67	1,475,330 एकड़	18,804,018 एकड़
1967–68	1,495,028 एकड़	18,690,625 एकड़
1981–82	1,168,450 एकड़	16,534,021 एकड़

ढोर :

न्यूजीलैंड में प्रारम्भ में दूध देने वाली गायों में शोर्थोर्न का बड़ा प्रचार था परन्तु 1920 से यहां 'जर्सी' नस्ल की गायों का प्रचार एवं प्रसार बढ़ा है। दूध देने वाली गायों में अधिकांश (लगभग 80%) इसी नस्ल की हैं। देश में लगभग 7.9 मिलियन ढोर हैं जिनमें से 2.6 मिलियन दूध देने वाली गायें हैं। दुग्ध व्यवसाय में सलग्न कुल ढोर 3·9 मिलियन हैं। स्पष्ट है कि यहां के दुग्ध व्यवसायी क्षेत्रों में भैंसों के बजाय गाय का प्रचार ज्यादा है। प्रतिवर्ष गायों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही है। वृद्धि की गति रेफ्रीजिटर्स एवं यातायात की सुविधाओं से सीधा सम्बन्ध

रखती है कारण कि दुग्ध उत्पादन प्रायः जल्दी खराब होने वाले होते हैं। पिछली शताब्दी के मध्य तक न्यूजीलैंड का यह व्यवसाय साधारण स्तर पर था। 1882 में जब रैफ्रीजिटर्स का प्रयोग होने लगा तो दुग्ध व्यवसाय का विस्तार तेजी से होने लगा। पिछले 100 वर्षों में दूध देने वाली गायों की संख्या लगभग नौ गुनी हो गई है। 1887 में यहाँ केवल 3 लाख दूध देने वाली गायें थीं। 1964 में हुई कृषि विकास कान्फ्रेन्स में यह निर्णय लिया गया कि देश के पशुधन में 3.5 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो। पिछले 5–6 वर्षों में दुग्ध व्यवसाय में संलग्न पशुओं के क्षेत्र में यह वृद्धि 4 से 5.5 प्रतिशत तक रही।

प्रधान दुग्ध व्यवसायी प्रदेश :

दूध देने वाले जानवरों के लिए भेड़ों की तुलना में कहीं ज्यादा आर्द्र जलवायु उपयुक्त रहती है। घास भी ऐसी ही जलवायु में सर्वाधिक समृद्ध होती है। न्यूजीलैंड का उत्तरी द्वीप विशेषकर उसका ऑकलैंड प्रायःद्वीपीय भाग ठंडी सुहावनी आर्द्र जलवायुयुक्त रहता है। इस द्वीप के अन्य भाग भी समृद्ध घास एवं आर्द्रता युक्त हैं। फलतः न्यूजीलैंड में पाले जाने वाले कुल ढ़ोरों का 85% से अधिक भाग उत्तरी द्वीप में विद्यमान है। दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त पशुओं का 90% से अधिक भाग उत्तरी द्वीप में है। इस द्वीप में ही देश की समस्त दूध देने वाली गायों का दो-तिहाई भाग (65%) पाया जाता है। उत्तरी द्वीप के दो दक्षिणी जिलों (तारानाकी एवं वैलिंगटन) में ही समस्त देश की लगभग एक चौथाई दूध देने वाली गायें विद्यमान हैं। वस्तुतः यहाँ आर्द्रता के आधिक्य के कारण भेड़ों के लिए उतनी अच्छी परिस्थितियाँ नहीं हैं। इस प्रकार दक्षिणी द्वीप में भेड़े-बकरी तथा उत्तरी द्वीप में गायों का केन्द्रीकरण जैसा हो गया है।

दुग्ध व्यवसाय में संलग्न ढ़ोर

ढ़ोर	1965	1966	1967	1968	1982
कुल ढ़ोर	6,801,333	7,217,720	7,746,866	8,247,163	7,912,000
दूधवाली गाएँ	2,032,227	2,087,869	2,131,359	2,232,482	2,654,960
कुल दुग्ध व्यवसायी ढ़ोर	3,173,757	3,361,621	3,505,714	3,698,020	3,912,520

प्रधान दुग्ध व्यवसायी क्षेत्र ऑकलैंड का 'लैण्ड डिस्ट्रिक्ट', तारानाकी, वैलिंगटन एवं हॉकि की खाड़ी के आसपास का क्षेत्र है। यहाँ विशाल मानवकृत चरागाह हैं। हजारों एकड़ तक के विस्तार वाले घास के खेत हैं जिनमें सहकारी

न्यूज़ीलैण्ड
आर्थिक स्वरूप
दुग्ध व्यवसाय
भेड़ पालन (ऊन)
सघन भेड़ पालन, मेमना (माँस)
दुग्ध व्यवसाय, मेमना पालन (माँस)
पर्वत एवं जंगल
उत्तरी द्वीप
ऑकलैण्ड
हैमिल्टन
न्यूप्लाइमाउथ
नैल्सन
वैलिंगटन
दक्षिणी द्वीप
क्राइस्ट चर्च
ड्यूनेडिन
स्टेवार्ट द्वीप

चित्र–4
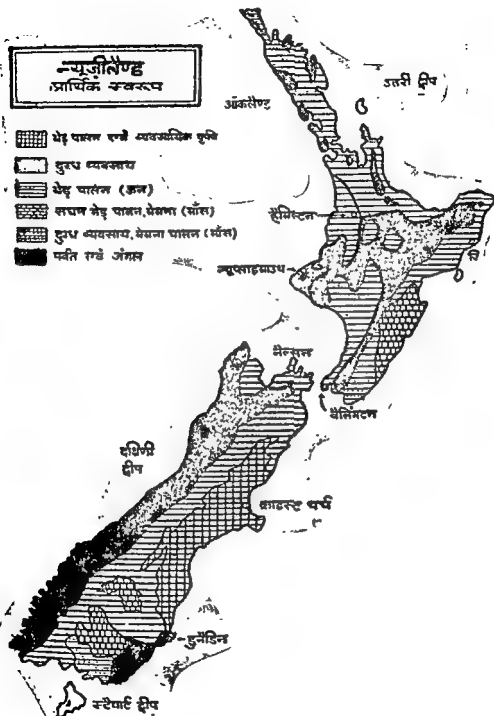
आधार पर यह व्यवसाय चलाया जाता है। दक्षिणी द्वीप ओटेगो के पठार एवं नेलसन में ही दुग्ध व्यवसाय का ज्यादा विकास हुआ है जहाँ के उत्पादन क्रमशः डुनेडिन एवं नेलसन से निर्यात कर दिए जाते हैं। इस प्रकार साल भर नियमित एवं समान रूप से वर्षा, उत्तम कोटि के चरागाह, कम ठंडे सुहावने जाड़े आदि तत्वों ने मिलकर दुग्ध व्यवसाय का केन्द्रीकरण उत्तरी द्वीप में कर दिया है। जाड़े बहुत कम ठंडे होते है अतः यहाँ पशुओं के लिए घरों की समस्या भी नहीं है। 1982 में न्यूजीलैण्ड की गायों ने 6446 मिलियन लीटर दुग्ध उत्पादित किया।

(अ) लैंड डिस्ट्रिक्ट :

ऑकलैण्ड के लैण्ड डिस्ट्रिक्ट के निचले भागों को न्यूजीलैण्ड के दुग्ध व्यवसाय का 'हृदय प्रदेश' कहा जाता है। इस भाग में न्यूजीलैंड के सबसे घने एवं समृद्ध चरागाह है जहाँ देश के लगभग एक-तिहाई पशु पाले जाते हैं। मिट्टी में अवश्य फॉस्फेटस की कमी पाई जाती है जिसे फॉस्फेट उर्वरकों से दूर कर लिया जाता है। न्यूजीलैंड में खादों का भारी मात्रा में प्रयोग होता है। प्रतिवर्ष यह छोटा सा देश लगभग 1 मिलियन टन खाद आयात करता है। खेतों की पर्याप्त मांग तो स्वदेशी कारखानों में उत्पादित खाद एवं उर्वरकों से ही पूरी हो जाती है। ऑकलैंड प्रदेश में यातायात की अच्छी व्यवस्था है। घना बसा भाग है अतः स्वदेशी खपत केन्द्र निकट है। समस्त लैंड डिस्ट्रिक्ट क्षेत्र में फैक्ट्रीज बिखरी हुई है। अधिकांश फैक्ट्रीज बड़ी क्षमता वाली हैं जिनमें रोज मनों मक्खन एवं पनीर तैयार होता है। रेल एवं सड़क मार्गों का यहाँ के इस व्यवसाय में पूर्ण सहयोग है। आकलैंड-सिटी इस सम्भाग का सबसे बड़ा नगर व व्यवसायी केन्द्र है। लैण्ड डिस्ट्रिक्ट के सारे उत्पादन यहीं से निर्यात किए जाते है। जनसंख्या लगभग 8.3 लाख है। 1900 से लेकर वर्तमान तक की अल्पावधि में ही यह नगर 8 गुना हो गया है।

(ब) वैलिंगटन का मैदान :

उत्तरी द्वीप के दक्षिण और देश की राजधानी के पृष्ठ प्रदेश में स्थित इस सम्भाग में कृषि का स्वरूप विविध है। वस्तुतः कैंटरबरी के बाद न्यूजीलैंड का एक मात्र बड़ा मैदानी भाग है अतः जलवायु दशा उपयुक्त होते हुए भी यहाँ दुग्ध व्यवसाय को सीमित स्तर पर विकसित किया गया है। यहाँ समतल भागो मे फसली कृषि, बाढ़कृत तटवर्ती पट्टी में चरागाह एवं चारे की फसलें एवं दुग्ध व्यवसाय तथा पर्वतपदीय भागों में भेड़ पालन तथा ऊन व्यवसाय प्रचलित हैं। भूमि के अभाव में यहाँ मक्खन-पनीर व अन्य दुग्ध उत्पादनों की फैक्ट्रीज कम है। वैसे भी वैलिंगटन तथा फील्डिंग जैसे नगरों की निकटता के फलस्वरूप दूध की ही खपत ज्यादा है।

(स) तारानाकी मैदान :

उत्तरी द्वीप के पश्चिम में एग्मोंट ज्वालामुखी पर्वत के चारों ओर विस्तृत यह सम्भाग उत्पादन एवं व्यावसायिक सघनता की दृष्टि से न्यूजीलैंड का दूसरे नम्बर का दुग्ध व्यवसायी प्रदेश है। लावा के जमावों से सम्बन्वित यहाँ की मिट्टी उपजाऊ है, वर्षा पर्याप्त होती है, धूपीले घंटों की अवधि भी 2200 घंटे से ज्यादा है। इन परिस्थितियों से प्रोत्साहित होकर माउन्ट एग्मोंट के चारों ओर डेरीफार्म्स फैले हुए हैं। छोटे-छोटे गाँव, फार्म हाउस, घास की चादर ओढ़े धरती, मक्खन एवं पनीर की फैक्ट्रीज तथा सुव्यवस्थित सड़कें यहाँ की दृश्यावलि के प्रधान तत्व हैं। एग्मोंट पर्वत के उत्तर में 'बेल ब्लॅक फैक्ट्री' स्थित है जो सहकारी आधार पर देश की सबसे बड़ी इकाई है। इस फैक्ट्री में मक्खन एवं पनीर दोनों एक साथ बनते हैं। फैक्ट्री में 3000 गैलन दूध को प्रति घंटा खपत होती है। फैक्ट्री अपने आसपास स्थित 48 फार्मों का दूध प्रयोग करती है। प्रतिवर्ष लगभग 300 टन मक्खन एवं 1000 टन पनीर इस फैक्ट्री में उत्पादित होता है।[21] उत्पादन का अधिकांश भाग ब्रिटेन को निर्यात किया जाता है।

दुग्ध व्यवसाय के प्रधान उत्पादन :

मक्खन एवं पनीर, न्यूजीलैंड के दुग्ध व्यवसाय क उत्पादनों में मात्रा एवं मूल्य की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। न्यूजीलैण्ड के निर्यात में तीन चौथाई से अधिक भाग 'पैस्टोरल प्रोडक्टस' का होता है और इनमें प्रमुख भाग मक्खन एवं पनीर का होता है। यह देश दुनियाँ में सर्वाधिक मक्खन एवं पनीर निर्यात करने वाला देश है। उल्लेखनीय है कि दूध एवं संबन्धित उत्पादनो की वृद्धि के साथ-साथ उनकी प्रति व्यक्ति वार्षिक खपत भी बढ़ी है। यहाँ प्रति व्यक्ति लगभग 370 पिंट दूध एवं 43 पौंड मक्खन की खपत का औसत बैठता है। इतनी अधिक खपत मात्रा के बावजूद कुल उत्पादन का लगभग 75% भाग निर्यात के लिए बच रहता है। प्रतिवर्ष 1000 मिलियन डॉलर से अधिक कीमत के मक्खन तथा पनीर यहाँ तैयार किए जाते हैं। यहाँ मक्खन एवं पनीर बनाने की लगभग 196 फैक्ट्रीज हैं। 15 फैक्ट्रीज आइसक्रीम तैयार करती हैं। अन्य दुग्ध उत्पादनों के उत्पादन में भी लगभग 85 फैक्ट्रीज संलग्न हैं जिनमें केक, जमाया हुआ दूध, दूध का पाउडर, केजीन आदि तैयार किए जाते हैं।

न्यूजीलैंड की अर्थव्यवस्था में दुग्ध व्यवसाय का क्या महत्व है यह इन तथ्यों से जाना जा सकता है कि कुल निर्यात मूल्य का लगभग छठा भाग उन दुग्ध उत्पादनों से सम्बन्धित होता है जो यहाँ से निर्यात किये जाते हैं। इसे मोटे तौर

---

21. Vewzealand Facts and Figures 2972

पर यूँ समझा जा सकता है कि पशुपालन एवं सम्बन्धित उद्योग यहाँ की अर्थ व्यवस्था का प्रधान आधार है जिसके तीन प्रमुख स्तम्भ हैं। ये हैं दुग्ध उत्पादन मांस उत्पादन तथा ऊन उत्पादन। 1982 में न्यूजीलैण्ड का कुल निर्यात मूल्य 6,594,275 न्यूजी० डालर था इसमें से दूध, मक्खन एवं पनीर का निर्यात मूल्य निम्न प्रकार था।

दुग्ध उत्पादनों का निर्यात मूल्य-1982

उत्पादन	नर्यात मूल्य (000 न्यूजी० डालरों में)
मक्खन	557,068
पनीर	175,707
ताजा दूध एवं क्रीम	12,659

न्यूजीलैण्ड : भेड़ पालन एवं ऊन व्यवसाय

न्यूजीलैण्ड में भेड़ पालन 1840-50 दशक में प्रारम्भ हुआ जबकि आस्ट्रेलिया से मैरिनो नस्ल की भेड़ें लायी गईं। 1850-70 के दो दशकों में यहां कई अंग्रेज नस्ल की भेड़ें आयात करके रखी गई जिनमें साउथ डाउन, लीसेस्टर, लिंकन तथा रोमनी आदि नस्लें महत्वपूर्ण थीं। 1855 में न्यूजीलैण्ड में 761,200 भेड़ें थीं। 1870 में बढ़कर 9,700,000 हो गईं। 1882 में जब शीत भंडार युक्त जलयानों की सुविधा हो गई और भेड़ तथा मेमने का मांस निर्यात करना सम्भव हुआ तो भेड़ की संकर नस्लें तैयार की गई। मैरिनो, रोमनी व अन्य भेड़ों के साथ मिश्रण के फलस्वरूप जो नई नस्लें निकली थ मांस तथा ऊन दोनों दृष्टियों से बड़ी उत्तम थीं। इन्हीं के आधार पर न्यूजीलैण्ड का भेड़-मेमने का मांस विश्व बाजारों में अपनी मांग विकसित कर सका। उत्तरी द्वीप में इसी प्रकार की संकर भेड़ों तथा रोमनी मार्श नस्लों का आधिक्य है। पिछली शताब्दी के अन्तिम वर्षों में कोरीडेल नस्ल का भी पर्याप्त प्रचार हुआ था लेकिन बाद में कम हो गया और वर्तमान में मैरिनो नस्ल की तरह इस नस्ल की भेडें भी दक्षिणी द्वीप के उच्च प्रदेश में सीमित हैं। वर्तमान में तो देश की लगभग 70% भेड़े न्यूजीलैंडियन रोमनी-मार्श नस्ल की हैं जो वस्तुतः मैरिनों एवं रोमनी की संकर नस्ल है।

दोनों द्वीपों के विभिन्न भागों में भेड़ों के वितरण पर भौगोलिक वातावरण का प्रभाव स्पष्ट है। नस्लों में भी वैभिन्य है क्योंकि विविध नस्लों को कुछ भिन्नता लिए वातावरण अनुकूल होते हैं। दक्षिणी द्वीप के कैंटरबरी के मैदान व ओटेगो के पठार में प्रमुखतः ऊन के लिए पाली गई भेड़ों का आधिक्य है। यहां के न्यून तापमान, चमकीली धूप, कम तापांतर, मात्रा में कम परन्तु सुवितरित वर्षा, कंकरीला-पथरीला धरातल एवं डाउनलेंडस भेड़ उद्योग में काफी सहायक सिद्ध हुए हैं। वस्तुतः आर्द्रता तथा ताप दोनों ने मिलकर दोनों द्वीपों में भेड़ों के दो प्रकार के उपयोग तथा उनसे सम्बन्धित विभिन्न नस्लों को प्रोत्साहित किया है। उत्तरी द्वीप में आर्द्रता कुछ ज्यादा है अतः वहां मुख्यतः मांस के लिए भेडें पाली जाती है। मेमने का लगभग समस्त मांस उत्तरी द्वीप से ही उपलब्ध होता है। मांस के लि प्रयोगित नस्लों में लिंकन एवं रोमनी-मार्श उल्लेखनीय है। हॉक-बे जिला

वैलिंगटन के मैदान में कुछ भेड़ें ऊन उत्पादन के लिए भी है परन्तु इनकी संख्या व ऊन उत्पादन मात्रा सीमित ही है। ऊन का अधिकांश भाग दक्षिणी द्वीप से ही आता है। कैंटरबरी के डाउन लैंड्स में ऊन उत्पादन के लिए विख्यात नस्ल मैरिनो पाली जाती है। ओटेगो के पठार में कारीडेल का आधिक्य है।

वर्तमान (1982) में न्यूजीलैण्ड में लगभग 70 मिलियन भेड़ें हैं जिनमें से लगभग 55 मिलियन रोमनी-मार्श नस्ल की है। वस्तुतः यह नस्ल मैरीनो की संकर नस्ल है जो न्यूजीलैंड के भौगोलिक वातावरण के अनुकूल विकसित की गयी है। यह भेड़, ऊन एवं माँस दोनों ही उपयोग की है। दोहरा उपयोग होने से ही इसका सर्वत्र आधिक्य है। अन्य नस्लों में कॉरीडेल (4 मिलियन) हाफब्रीड (3 मिलियन) मैरिनो एवं साउथ डाउन उल्लेखनीय हैं।

उत्तरी द्वीप में हॉके की खाड़ी के आसपास का क्षेत्र, तारानाकी-वैलिंगटन के मैदान का पूर्वी भाग तथा दक्षिणी द्वीप में कैंटरबरी का मैदान, ओटेगो का पठार तथा साउथलैंड, न्यूजीलैण्ड के प्रधान भेड़ पालक एवं ऊन-माँस उत्पादन क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों, (विशेषकर जो मैदानों में है) में विशिष्ट प्रकार की घासें विकसित की गई हैं इनमें न ग्रासेस तथा टमोथी (ओटेगो का पठार) उल्लेखनीय हैं। प्राकृतिक घासों जैसे टसक (दक्षिणी द्वीप) एवं मनूका (उत्तरी द्वीप) आदि को भी ज्यादा उपयोगी बनाया गया है। हॉके की खाड़ी का पूर्वी भाग न केवल न्यूजीलैण्ड वरन् विश्व का सघनतम भेड़-पालक क्षेत्र है जहाँ भेड़ों का घनत्व 2000 भेड़ प्रति एकड़ से ज्यादा है। कहीं-कहीं यह संख्या 2500 तक भी पाई जाती है।

तारानाकी-वैलिंगटन मैदान के पूर्वी भाग में भेड़ मुख्यतया पर्वतीय प्रदेशों के चरण प्रदेशों में पाली जाती हैं। यहाँ भेड़ों का घनत्व प्रति एकड़ लगभग 1000 भेड़ है। इन दोनों के अतिरिक्त उत्तरी द्वीप में जिस्बोर्न नगर के आसपास, मध्यवर्ती ज्वालामुखी पठार एवं ऑकलैण्ड प्रायःद्वीप में भी भेड़ पालन व्यवसाय प्रचलित है परन्तु अत्यन्त सीमित मात्रा में। दक्षिणी द्वीप में कैंटरबरी एवं ओटेगो के पठार में भेड़ों का घनत्व औसत वैलिंगटन के ही बराबर (1000 भेड़) है। सीमित मात्रा में नेल्सन तथा मार्लबर्ग में भी भेड़ पालन व्यवसाय प्रचलित है।

साधारणतः उत्तरी द्वीप में भेड़ों के चारागाह-फार्म्स का औसत आकार 1000 से 3000 एकड़ तक का है। दक्षिणी द्वीप में चूँकि घास के साथ-साथ फसलें भी बोई जाती हैं अतः भेड़-फार्म्स प्रायः छोटे (300-600 एकड़) हैं। फार्म्स के बड़े होने के कारण ही सम्भवतः उत्तरी द्वीप के किसानों के पास अपेक्षाकृत ज्यादा भेड़ें मिलती हैं। एक-एक फार्म पर 15 से 30,000 तक भेड़ें पाई जाती है जबकि दक्षिणी द्वीप में यह संख्या 10 से 12,000 तक है पिछले 10-15 वर्षों मे न्यूजीलैण्ड के भेड़-फार्म्स पर बड़ी तेजी से यन्त्रीकरण बढ़ा है फलतः भेड़ों के झुंडों के आकार में क्रमशः वृद्धि हुई है। यह तथ्य अग्र सारणी से सुस्पष्ट है।

भेड़ों के झुंड—आकार एवं संख्या

झुंडों में भेड़ों की संख्या	1965	1969	1982
1–99	5,229	5,201	2,963
100–199	2,646	2,240	1,480
200–499	5,728	4,567	2,716
500–999	7,395	5,781	4,102
1000–1499	7,493	6,131	3,890
1500–1999	5,444	5,567	5,320
2000–2499	2,885	3,586	3,818
2500–4999	3,908	5,118	6,392
5000–7499	611	872	902
7500–9,999	183	261	292
10,000–19 999	148	224	253
20,000–से ऊपर	24	38	41
कुल झुंड	47,764	39,586	32,169
औसत आकार	1,287	1,514	2,146

न्यूज़ीलैण्ड के फार्म्स की यह विशेषता है कि यहाँ श्रम करने वाले नौकरों की तुलना में मालिकों की संख्या अधिक है। अत्यधिक यन्त्रीकरण से यह सम्भव हो सका है। पिछले वर्षों में प्रायः सभी फार्म्स को विद्युत की सुविधा भी प्राप्त हो गई है। इसका परिणाम यह हुआ कि नौकरों के रूप में मानव श्रम की कमी के बावजूद पिछले वर्षों में ऊन का उत्पादन बढ़ा है। कुछ वर्षों के आँकड़ों (उत्पादन मात्रा) से यह सुस्पष्ट है। 1958 में न्यूज़ीलैण्ड में 496 मिलियन पौंड ऊन उत्पादित हुई। यह मात्रा बढ़कर 1960 में 577 मि० पौंड, 1962 में 587 मि० पौंड, 1966 में 695 मि० पौंड तथा 1982 में 762 मि० पौंड हो गई। उत्पादन मूल्य 450 मिलियन डॉलर से अधिक था। ऊन की कटाई प्रायः गर्मियों के महीनों में होती है। अक्टूबर के महीने से प्रारम्भ होकर मार्च तक चलती रहती है। ऊन अधिनियम 1951 तथा ऊन-उद्योग अधिनियम 1964 के आधार पर यहाँ 'ऊन बोर्ड' की स्थापना की गई जो निरन्तर उद्योग के विकास, क्वालिटी की प्रगति, शोध कार्य तथा देश-विदेश में ऊन के व्यापार की देखभाल करता है। दिसम्बर 1960 में ऊन मण्डल एवं सरकार द्वारा सचालित एक 'ऊन शोधक संस्थान' की स्थापना की गई है।

इस प्रकार भेड़ का न्यूजीलैण्ड के आर्थिक ढांचे में भारी महत्वपूर्ण स्थान है। इससे प्राप्त ऊन तथा मांस दोनों मिलकर 50 प्रतिशत निर्यात-मूल्य प्रस्तुत करते हैं। इन दोनों महत्वपूर्ण वस्तुओं के अतिरिक्त लगभग 1.5 मिलियन पौंड की कीमत के कुछ अतिरिक्त या गौण उत्पादन भी भेड़ से प्राप्त होते हैं। इतने महत्व के कारण ही इस देश में भेड़ों की देखभाल, उनके स्वास्थ्य, चारे तथा आवास की समस्या पर उतनी गहराई से ध्यान दिया जाता है जितना कि निवासियों पर। दुनिया की अच्छी से अच्छी नस्लें लाकर न्यूजीलैण्ड के वातावरण में विकसित की गई हैं। यहाँ की गई संकर-नस्लें मांस एवं ऊन की दृष्टि से दुनिया में श्रेष्ठ मानी जाती हैं।

देश में कुल उत्पादित ऊन का लगभग 97 प्रतिशत भाग निर्यात कर दिया जाता है। दुनिया में न्यूजीलैण्ड ऊन उत्पादन की दृष्टि से तीसरे तथा निर्यात की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है।

ऊन भी न्यूजीलैण्ड के लिए विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाले उत्पादन में से प्रमुख एक उत्पादन है। 1982 में यहाँ का निर्यात मूल्य लगभग 6500 मि. न्यूजीलैण्ड डालर था इसमें ऊन का निर्यात मूल्य लगभग 1000 मिलियन न्यूजीलैण्ड डालर था जो समस्त दुग्ध उत्पादनों के बराबर था।

यहाँ की ऊन का सबसे बड़ा ग्राहक ब्रिटेन है जो कुल निर्यात मात्रा का लगभग 36% भाग ले लेता है। अन्य आयातकों में फ्रांस (20%) सं. रा. अमेरिका ($9\frac{1}{2}$%) पश्चिमी जर्मनी (9%) जापान, भारत आदि देश उल्लेखनीय हैं। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि 1965 में न्यूजीलैण्ड ने 16 लाख पौंड ऊन भारत को भेंट स्वरूप प्रदान की थी। ऊन का अधिकांश निर्यात दक्षिणी द्वीप के बन्दरगाहों से होता है जिनमें क्राइस्ट चर्च, नैपियर तथा डूनेडिन उल्लेखनीय हैं जहाँ से सीधा लदान लन्दन, लिवरपूल, हल तथा मैनचेस्टर आदि बन्दरगाहों को होता है।

□□□

न्यूजीलैण्ड : माँस व्यवसाय

जब से न्यूजीलैण्ड में संकर नस्लों की भेड़ें विकसित की गई हैं दुनिया के बाजारों में यहाँ के भेड़ तथा मेमने के माँस की मांग बहुत बढ़ गई है। इस श्रेणी के माँस के निर्यात में न्यूजीलैण्ड दुनिया में अग्रणी है। इनके अतिरिक्त गाय का माँस, बछड़े का माँस तथा सूअर के माँस का उत्पादन भी यहाँ भारी मात्रा में होता है।

माँस का अधिकांश उत्पादन उत्तरी द्वीप से प्राप्त होता है। इस द्वीप के वैसे तो सभी भागों में माँस के लिए जानवर पालें जाते हैं परन्तु ऑकलैण्ड प्रायःद्वीप विशेष रूप से उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण है। ऑकलैण्ड का धरातल नीचा है। बहुत सी जगह दलदली है। पर्याप्त भाग में प्राकृतिक घास खड़ी है। सर्दी ज्यादा नहीं पड़ती है। वर्ष भर वर्षा होती है। ऊँचे तापक्रम रहते हैं। ये परिस्थितियाँ भेड़ पालन के बजाय गाय, बैल, बछड़ा आदि के पालन के लिए आदर्श हैं। न्यूजीलैण्ड में माँस के लिए जितने ढोर (गाय, बैल, बछड़ा) पाले जाते हैं उनका तीन-चौथाई से अधिक भाग अकेले ऑकलैण्ड सम्भाग में विद्यमान है। उत्तरी द्वीप के अन्य क्षेत्रों, जैसे तारानाकी वैलिंगटन का मैदान, प्लेंटी की खाड़ी या हॉके की खाड़ी के आस-पास के भाग में भेड़ व मेमने माँस के लिए पाले जाते हैं। माँस के लिए उपयुक्त नस्ल रोमनी तथा लिंकन हैं अतः इन्हीं का आधिक्य है।

दक्षिणी द्वीप में माँस के लिए पशु पालन अत्यन्त सीमित है। ओटैगो के पठार, कैंटरबरी या साउथलैण्डस के शुष्क पठारी भागों में जहाँ धरातल भी खुरदरा और पथरीला है, में परिस्थितियाँ ऊन के लिए ज्यादा उपयुक्त हैं। अतः यहाँ माँस उत्पादन थोड़ी सी मात्रा में, केवल स्थानीय माँग की दृष्टि से किया जाता है। गाय, बछड़ा, भेड़, मेमने के अतिरिक्त सुअर से भी माँस प्राप्त किया जाता है। शत-प्रतिशत सूअर पालन उत्तरी-द्वीप के आर्द्र भागों में सीमित है। मध्य एवं दक्षिणी ऑकलैण्ड तथा प्लेंटी का खाड़ी क्षेत्र देश के 48% तथा तारानाकी-वैलिंगटन मैदान 23% सूअर पालन के लिए उत्तरदायी है। पिछले दिनों में सूअरों की संख्या में पर्याप्त कमी हुई (सम्भवतः सूअर के माँस की लोकप्रियता घटती जा रही है।) 1965 में यहाँ 7 लाख से अधिक सूअर थे जो 1969 में 5.5 लाख रह गए।

संख्या प्रतिवर्ष घटती ही जा रही है। 1982 में इनकी संख्या केवल 4 लाख थी। पाले जाने वाले सूअरों में 80% संकर नस्ल के हैं। शेष में से 6.6 प्रतिशत 'बर्क शायर' तथा 5.5 प्रतिशत 'टोमवर्थ' नस्ल के हैं।

न्यूजीलैण्ड में माँस उत्पादन
(000 टनों में)

उत्पादन	1966–67	1968–69	1981–82
गाय का माँस	271.4	344.2	519.4
बछड़े का माँस	25.6	26.3	32.8
भेड़ का माँस	185.5	196.7	241.3
मेमने का माँस	326.9	357.1	457.7
अन्य	81.4	89.8	79 2
योग (कुल उत्पादन)	890.8	1,014.1	1,330.4

ऊन एवं दुग्ध-व्यवसाय की तरह माँस उद्योग में भी उत्पादन की क्वालिटी एवं निर्यात की सुव्यवस्था हेतु एक 'माँस उत्पादक बोर्ड' की स्थापना की गई है। मण्डल ने माँस-उत्पादन को श्रेणियों में कर दिया है। निर्यात के लिए जो माँस तैयार किया जाता है वह विशेष कट्टीघरों में तैयार होता है जिन्हें 'माँस-निर्यात' कट्टीघर कहा जाता है। ये विशाल क्षमता वाले होते हैं। माँस अधिनियम 1964 के तहत इनको प्रतिवर्ष लायसेंस लेना पड़ता है। देश में इस श्रेणी के लगभग 40 कट्टीघर कार्यरत हैं। निर्यात के लिए जो माँस तैयार किया जाता है उसकी क्वालिटी का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है। इसके लिए दोहरी व्यवस्था की गई है। माँस उत्पादक मण्डल के अतिरिक्त कृषि विभाग के अधिकारी भी निर्यात व देशी खपत के लिए तैयार किए गए सभी प्रकार के माँस का निरीक्षण करते हैं। क्वालिटी के अनुसार माँस को विभिन्न श्रेणियों में रखा जाता है। निर्यात के लिए पैक करने से पहले सरकारी निरीक्षक माल देखकर मोहर लगाते हैं तभी निर्यात लायक समझा जाता है।

स्वदेशी खपत में प्रयुक्त होने वाला माँस 'सार्वजनिक कट्टीघरों' में तैयार किया जाता है। इनका संगठन व संचालन भी उसी प्रकार होता है जैसे निर्यात के लिए तैयार करने वाले कट्टीघरों का। माल का निरीक्षण यहाँ भी होता है। देश के बड़े-बड़े नगरों के पास ऐसे सार्वजनिक कट्टीघर विद्यमान है। देश में लगभग 38 इस प्रकार के कट्टीघर है। इनके अतिरिक्त छोटे-छोटे कस्बों के पास स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति के लिए थोड़ी क्षमता वाले कट्टीघर हैं। फार्मों पर किसान लोग अपने व्यक्तिगत प्रयोग के लिए माँस उत्पादित करते है। ऊन की तरह भेड़

काटने का मौसम भी गर्मियों का उपयुक्त होता है। नवम्बर से लेकर मई-जून तक यह कार्य चलता रहता है।
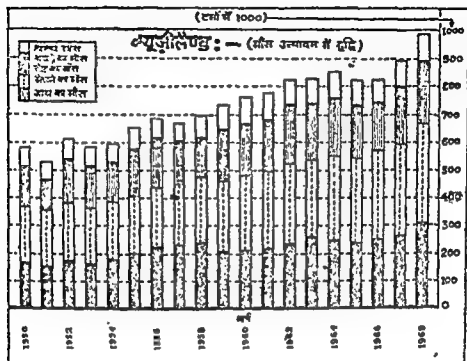
चित्र–5

न्यूजीलैण्ड के आर्थिक ढाँचे में मांस के महत्वपूर्ण स्थान का अनुमान इससे लग सकता है कि 1982 में सभी प्रकार के मांस का निर्यात मूल्य 1475 मिलियन डॉलर(कुल निर्यात मूल्य 6,594 मिलियन न्यूजी डॉलर)था। यह मूल्य सभी प्रकार के दुग्ध-उत्पादनों के सम्मिलित निर्यात-मूल्य से कहीं अधिक था। स्वयं देश में भी भारी खपत है। औसतन यहाँ प्रति व्यक्ति मांस की खपत-मात्रा 235.2 पौंड है। इस वर्ष लगभग 3 लाख टन मांस की खपत देश में हुई। निर्यात किया जाने वाला मांस शीत भण्डारों युक्त विशाल जलयानों द्वारा भेजा जाता है जो एक साथ 75,000 भेड़ों का मांस ले जाने में समर्थ होते हैं। मांस का अधिकांश निर्यात उत्तरी द्वीप के बन्दरगाहों—यथा वैलिंगटन, ऑकलैण्ड सिटी, जिस्बोर्न, क्राइस्टचर्च आदि से किया जाता है। न्यूजीलैण्ड के मांस का सबसे बड़ा ग्राहक ब्रिटेन है जहां कुल निर्यात का लगभग 60% भाग जाता है। अन्य ग्राहकों में जापान, कनाडा, पश्चिमी जर्मनी तथा फ्रांस उल्लेखनीय है।

शक्ति-संसाधन एवं खनिज :

शक्ति का अधिकाश भाग जल से प्राप्त होता है। न्यूजीलैण्ड में कोयला, लिगनाइट या पैट्रोल आदि नगण्य मात्रा में उपलब्ध है अतः अधिकांश फार्म्स तथा उद्योग जल विद्युत द्वारा संचालित हैं। असमान धरातल, द्वीप के समानान्तर लम्बाकार पर्वतीय शृंखलाओं की स्थिति, वर्ष भर पर्याप्त जल की प्राप्ति, झरने बनाती हुई तीव्र नदियां आदि तत्वों ने मिलाकर देश के भू-क्षेत्र के अनुपात में भारी जल विद्युत सम्भावित राशि प्रस्तुत की है। कई झीलें भी जल विद्युत उत्पादन के लिए उपयुक्त हैं। इन अनुकूल परिस्थितियों का सुफल यह हुआ कि देश में कुल उत्पादित विद्युत का लगभग 85% भाग जल से सम्बन्धित है। सम्भावित राशि विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न है। उत्तरी द्वीप में, जहाँ देश की दो-तिहाई जनसंख्या निवास करती है, जल विद्युत सम्भावित राशि का आधे से भी कम भाग है परन्तु वास्तविक विकास एवं उत्पादन दक्षिणी द्वीप से ज्यादा है। कारण स्पष्ट है यहाँ का घना बसाव एवं मांग। सारे देश में विद्युत के निर्यात प्रवाह की दृष्टि से 'राष्ट्रीय ग्रिड' बनाया गया है। उत्तरी एवं दक्षिणी द्वीप को 500 कि० वा० के केबिल्स के द्वारा जोड़ा गया है जो कुक जल डमरू मध्य में होकर डाले गये हैं। सरकार की नीति यह रही है कि देश के सभी भागों में स्थित फार्म्स को विद्युत प्राप्त हो अतः विद्युत का अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण किया गया है। विद्युत-गृहों की स्थापना सरकार ने की है जबकि वितरण का सारा कार्य स्थानीय समितियों का उत्तरदायित्व है।

शक्ति के अन्य साधनों के अभाव में न्यूजीलैण्ड में जल विद्युत का विकास अपेक्षाकृत जल्दी हुआ। प्रथम जल-संचालित शक्ति-गृह 1885 में ओटेगो पठार के क्वीन्स टाउन नगर से 20 मील की दूरी पर स्थित शोतोवर नदी पर बनाया गया। 1888 में यहाँ की 'रीपटन विद्युत कम्पनी' दक्षिणी गोलार्द्ध में एक मात्र संस्था थी जो विद्युत प्रदान कर रही थी। 1913 में वेकाटो नदी (उत्तरी द्वीप) पर 6300 कि० वा० क्षमता का प्रथम बड़ा शक्ति-गृह स्थापित हुआ। 1914 में दक्षिणी द्वीप की कोलरिज झील पर 34,500 कि० वा० क्षमता वाले शक्ति-गृह ने उत्पादन प्रारम्भ कर दिया। 1930 में जल-शक्ति अधिनियम बना जिसके अनुसार स्थानीय प्रशासन को प्राकृतिक जल प्रवाह के प्रयोग के अधिकार मिले एवं शक्ति-वितरण के लिए सहयोग किया और 1940 में 5 लाख पौण्ड की राशि एकत्र करके जल विद्युत के विकास के लिए सरकार को दी। 1945 में 'जल-विद्युत विभाग' की स्थापना हुई जिसका प्रधान कार्य सर्वेक्षण करके नए शक्ति-गृहों की स्थापना, ग्रिड बनाना तथा शक्ति को खपत केन्द्रों तक पहुँचाना था। 30 सितम्बर 1969 को न्यूजीलैंड के जल-संचालित विद्युत-गृहों की उत्पादन क्षमता 3,083 मेगावाट थी जो बढ़कर 1982 में 5,820 मेगावाट हो गयी। देश में 82 जल-विद्युत-गृह हैं।

बड़े एवं महत्वपूर्ण जल विद्युत उत्पादक शक्ति गृहों में वेटाकी नदी पर बैंडमोर स्थान पर स्थित शक्ति-गृह (540 मेगावाट) उसी नदी पर एवीमोर स्टेशन (220 मेगावाट) तथा क्लूथा नदी पर रौक्सबर्ग स्थान पर स्थित स्टेशन (320 मेगावाट) उल्लेखनीय है। ये तीनों दक्षिणी द्वीप में हैं। उत्तरी द्वीप में स्थित वेकाटो जल प्रवाह देश का सबसे बड़ा शक्ति-स्रोत है। यह न्यूजीलैंड की सबसे बड़ी नदी है। यह टौपो झील में गिरती है। 1177 फीट की ऊँचाई पर स्थित एवं 234 वर्गमील में फैला यह प्राकृतिक जलाशय वेकाटो के जल प्रवाह को नियमित एवं नियन्त्रित रखता है। वेकाटो-क्रम की सम्भावित राशि का उपयोग करने के लिए आठ शक्ति गृह बनाए गए हैं जिनकी सम्मिलित उत्पादन क्षमता 864 मेगावाट है।[22] दक्षिणी द्वीप में 700 मेगावाट क्षमता की एक महत्वपूर्ण योजना निर्माणारत है जिसमें मानापुरी झील के पास 700 फीट भूमिगत स्थिति में शक्ति-गृह स्थापित किया जा रहा है। इस शक्ति-गृह से इन्वरकार्गिल के निकट ब्लफ नामक स्थान पर स्थापित किए जा रहे एल्युमिनियम के कारखाने को शक्ति दी जाएगी। उत्तरी द्वीप के ज्वालामुखी क्षेत्र में 200 मेगावाट की टौंगारिरो योजना क्रियान्वित की जा रही है।

जल विद्युत गृहों के अतिरिक्त 692 मेगावाट शक्ति के ताप शक्ति गृह कार्यरत हैं। इनमें टौपो झील के निकट वेराकेई स्थिति भू ताप शक्ति गृह अनुपम है जिसमें प्राकृतिक भूमिगत वाष्प से 192.5 मेगावाट शक्ति उत्पादित की जाती है। ऑकलैंड के निकट मरेमरे में कोयला द्वारा संचालित एक मात्र विद्युत गृह (210 मे०वा०) विद्यमान है। ऑकलैंड के उत्तर में वांगारेई तेल शोधक कारखाने के निकट तेल से संचालित विद्युत-गृह है जिसकी उत्पाद क्षमता 240 मेगावाट है। ऑकलैंड के निकट जून 1968 से 200 मेगावाट की क्षमता का एक गैस टरबाइन शक्ति गृह कार्यरत हुआ है। अणु शक्ति द्वारा शक्ति संचालन का कार्य भी प्रारम्भ किया गया है परन्तु उत्पादन अभी नगण्य है।

नगण्य मात्रा में कोयला, लिगनाइट, तेल तथा प्राकृतिक गैस भी उपलब्ध है। यह मनोरंजक तथ्य है कि नगण्य उत्पादन (2.1 मि० टन 1982 में) होते हुए भी कोयला की आवश्यकता 90% पूर्ति देशी उत्पादन से हो जाती है। स्पष्ट है कि यहाँ भारी उद्योगों की कमी तथा जल विद्युत के अत्यधिक विकास के कारण

---

22. वेकाटो योजना के आठ शक्ति गृह—1. क़ारापिरो (90,000 कि० वा०) 2. आरापूनो (157,800 कि० वा०) 3. वेपापा (51,000 कि० वा०) 4. मोरेटाय (180,000 कि०वा०) 5. व्हाकामार (100,000 कि०वा०) 6. एतियामुरी (84,000 कि०वा०) 7. ओहाकुरी (112,000 कि०वा०) 8. आराशिया (30,000 कि० वा०)।

ज्यादा मात्रा में कोयला की आवश्यकता ही नहीं होती। पैट्रोल एवं प्राकृतिक गैस तारानाकी तथा दक्षिण ऑकलैण्ड जिलों में उपलब्ध हैं। ऑकलैण्ड तथा ओटेगो में लिगनाइट निकाला जाता है। दक्षिणी द्वीप के नेलसन प्रान्त में स्थित वैस्टपोर्ट एवं ग्रे-माउथ क्षेत्रों से उत्तम श्रेणी का बिटूमिनस तथा एन्थ्रेसाइट कोयला भी प्राप्त है। उत्पादन सीमित है। थोड़ा सा कोयला, डुनेडिन एवं कारगिल क्षेत्र में भी उपलब्ध है।

खनिज सम्पत्ति में न्यूजी लैंड के दोनों द्वीप गरीब हैं। पिछले 100 वर्षों से यहाँ का प्रधान खनिज सोना रहा है। वस्तुतः अंग्रेज लोग आए ही सोना के लालच से थे। परन्तु वर्तमान में उत्पादन बहुत कम रह गया है। ओटेगो तथा पश्चिमी तट पर अभी भी थोड़ा सा सोना प्राप्त है। होरोकी क्षेत्र में सोना तथा चाँदी एक साथ निकलते हैं। कारोमण्डल प्रायद्वीप में क्वार्टजाइट चट्टानों से सोना प्राप्त होता है। नगण्य मात्रा में लोहा भी उपलब्ध है जो जो प्रधानतः नेलसन जिले के सैंड क्षेत्र से आता है। उत्तरी द्वीप के मध्य में स्थित ज्वालामुखी प्रदेश में गंधक, सर्पेन्टाइना, सिलीका आदि भी खोदे जाते है। 1982 में यहाँ की खानों ने 189 कि० ग्राम सोना, 2,000 टन बैन्टोनाइन, 3,025,000 टन लौह-रेत, 129,000 टन सिलीका तथा 1,378 मि० घन मीटर प्राकृतिक गैस उत्पादित की।

औद्योगिक विकास :

पिछले वर्षों में आर्थिक ढांचे के अन्य क्षेत्रों की तुलना में उद्योग का काफी तीव्रगति से विकास हुआ है। औद्योगिक विकास की दृष्टि से छठा दशक उल्लेखनीय है जबकि कई औद्योगिक इकाइयां स्थापित की गयीं और आय लगभग दुगुनी हो गयी

औद्योगिक विकास दशकावधि में

	1957–58	1968–69
फैक्ट्रीज की संख्या :	8,529	10,501
संलग्न व्यक्ति	162,985	229,074
उत्पादन-मूल्य (मिलियन डालरों में)	1,290	2,790

राष्ट्रीय आय में उद्योगों से होने वाली आय का प्रतिशत (23%) कृषि-आय के प्रतिशत (12½%) से ज्यादा होता है। सभी आर्थिक उद्योगों में संलग्न मजदूरों का लगभग 27% भाग उद्योगो में संलग्न है। यह उल्लेखनीय है कि उद्योगों मा कार्यरत फैक्ट्रीज का एक बड़ा भाग कृषिगत कच्चे मालों से सम्बन्धित है। वस्तुतः न्यूजीलैंड में भारी उद्योगों के विकास के अवसर ओल हैं। वहाँ न

कोयला, न लोहा और न पैट्रोल ही है। अन्य खनिज पदार्थों का भी पूर्ण अभाव है। इन सारी वस्तुओं का आयात करके एक तो भारी उद्योग खड़े करना बहुत खर्चीला काम होगा, दूसरे उनका उत्पादन-मूल्य ज्यादा होगा और तीसरे दुनिया के अन्य औद्योगिक विकसित देशों के सामने उन उत्पादनों का टिकना मुश्किल होगा। ऐसी परिस्थितियों में, स्वाभाविक रूप से, यहाँ के अधिकांश उद्योग खाद्य पदार्थों, पशु साधनों व वन-सम्पत्ति से सम्बन्धित हैं। इनके विकास में देश में उत्पादित जल विद्युत शक्ति ने सहयोग किया है। ऐसे उद्योगों में मक्खन, पनीर, बिस्कुट, केक, मांस, ऊन तथा केजीन आदि से सम्बन्धित उद्योग प्रमुख हैं। ये प्रायः उन्हीं क्षेत्रों में हैं जिन क्षेत्रों में कच्चा माल उपलब्ध है। यथा कैंटरबरी तथा ओटेगो जिलों में ऊनी वस्त्र, मक्खन, उत्तरी द्वीप के ऑकलैंड तारानाकी, हॉकमें जिले तथा वैलिंगटन के मैदान में मक्खन, पनीर, केक, जमाया हुआ दूध, मांस तथा बिस्कुट की फैक्ट्रीज फार्म्स के बीच-बीच में ही स्थित है।

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे उद्योग, जिनके उत्पादन दैनिक आवश्यकता के होते हैं और जिन्हें कम कच्चे माल एवं ज्यादा कुशलता की जरूरत होती है, भी न्यूजीलैंड में विकसित किए गए हैं। ये प्रमुखतः आयातित कच्चे मालों पर निर्भर हैं। अतः इनमें से अधिकांश बन्दरगाहों या बड़े यातायात केन्द्रों में स्थापित किए गए हैं। ऐसे उद्योगों में छोटी-छोटी मशीनें, विद्युत यन्त्र, कृषि यन्त्र, इंजन, सिगरेट, ऑटोमोबाइल आदि उल्लेखनीय हैं। फार्मों की आवश्यकता को देखते हुए खादों तथा ऊर्वरकों के कारखानों के विकास की ओर ज्यादा ध्यान दिया गया है।

पिछले 2-3 दशकों में कुछ मध्य आकार के धातु तथा इंजिनियरिंग उद्योग भी विकसित किए गए हैं। इनमें स्टील मर्चेन्ट बार मिल, अल्युमिनियम मिल, टैली-विजन ट्यूब मिल, टैलीफोन एवं अंडरग्राउण्ड पॉवर केबिल प्लांट, तेल शोधक कारखाना, शीट-ग्लास कारखाना, नायलान फाइबर एवं यार्न स्पिनिंग मिल उल्ले-खनीय हैं। नव-स्थापित अन्य उद्योगों में बॉयसिकिल, कॉपर-आक्साइड, प्लास्टिक्स तथा शराब उद्योग भी है। मातौरा में कागज की एक नई मिल स्थापित की गई है। किनलिथ तथा कावेरा के कागज-लुग्दी उद्योगों की क्षमता बढ़ाई गई है। 1970-75 की अवधि में नेलसन जिले में लुग्दी की एक नई मिल स्थापित की गयी। विविध उद्योगों को आर्थिक सहायता देने के लिए कई संस्थान संगठित किए गए हैं जिनमें 'डवलपमेंट फाइनेंस कार्पोरेशन ऑफ न्यूजीलैंड, 'दि न्यूजीलैंड इण्डस्ट्रियल डिजाइन काउंसिल' तथा न्यूजीलैंड इन्वेन्शन्स डवलपमेंट ऑथोरिटी' आदि मुख्य हैं।

पिछले वर्षों में एक दो भारी उद्योगों की स्थापना भी हुई है, कुछ निर्माणा-वस्था में हैं। दक्षिणी-द्वीप में इन्वरकार्गिल के निकट ब्लफ में एक अल्युमिनियम बनाने का कारखाना स्थापित किया जा रहा है। 70,000 टन अल्युमिनियम क्षमता वाले इस प्लांट की स्थापना जापान की सुमितोमो कैमिकल कम्पनी लि.

द्वारा की जा रही है। ऐसी योजना है कि इसका उत्पादन लक्ष्य बाद में बढ़ाकर 1,10,000 टन तक कर दिया जाएगा। 1964 में स्वदेश में उपलब्ध लौह-रेत का प्रयोग करके लौह-इस्पात उद्योग की स्थापना का निर्णय लिया गया। इसके लिये 'न्यूजीलैंड स्टील लिमिटेड, की स्थापना की गई। कम्पनी ने वेयुकु से चार मील उत्तर में एक लोहे का कारखाना स्थापित किया है।

विदेश व्यापार एवं यातायात :

अगर जनसंख्या तथा कुल व्यापार मूल्य के सन्दर्भ में देखा जाए तो न्यूज़ीलैंड दुनिया के अग्रणी व्यापारी देशों में आता है। यही नहीं, यह देश दुनिया के उन गिने-चुने भाग्यवान देशों में से एक है जिनका निर्यात मूल्य आयात मूल्य की अपेक्षा अधिक होता है। 1968 में यहां का निर्यात मूल्य 801 मिलियन डॉलर तथा आयात मूल्य 668 मि० डॉ० था। 1969 में निर्यात-आयात मूल्य क्रमश: 988 एवं 850 तथा 1970 में क्रमश: 1037 तथा 1006 मिलियन डॉलर रहे। बाद के वर्षों में भी आयात-निर्यात सन्तुलन की यही स्थिति रही। 1982 में पहली बार आयात मूल्य निर्यात मूल्य की तुलना में कुछ ज्यादा हुआ जो निम्न सारिणी से सुस्पष्ट है।

न्यूज़ीलैंड : व्यापार सन्तुलन
(मि० न्यूजी० डॉलरों में)

वर्ष	कुल आयात मूल्य	कुल निर्यात मूल्य	पुनर्निर्यात मूल्य	कुल निर्यात मूल्य
1978–79	3,574·1	3,946·0	121·4	4,067·4
1979–80	4,809·6	5,012·5	139 8	5,152·2
1980–81	5,587·3	5,830·0	235·2	6,065·3
1981–82	7,044 8	6,527·8	206·0	6,733·8

न्यूज़ीलैंड के व्यापार सम्बन्ध ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, स० रा० अमेरिका, यूरोपियन देशों, भारत, जापान तथा हिंदेशिया आदि देशों से है। इनमें से प्रथम तीन देशों से ही यहाँ का दो-तिहाई से अधिक व्यापार होता है। व्यापारस्व बन्दरगाहों में ऑकलैंड सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जहाँ से कुल आयात-निर्यात का लगभग एक चौथाई भाग संपादित होता है। शेष का अधिकांश भाग वेलिंगटन, तारानाकी, नेपियर, क्राइस्टचर्च, जिस्बोर्न, इन्वरकार्गिल, डुनेडिन तथा लिटिलटन आदि बन्दरगाहों से सम्बन्धित होता है। न्यूजीलैंड के बन्दरगाहों से वैंकूवर, सिडनी, होनोलूलू आदि को नियमित रूप से जलयान-सेवा उपलब्ध है।

न्यूजीलैंड के निर्यात में 31% भाग मांस एवं संबन्धित-उत्पादनों, 21% ऊन, 19% दुग्ध व्यवसाय से सम्बन्धित उत्पादनों (मक्खन, पनीर, जमाया दूध) तथा शेष 29% औद्योगिक उत्पादनों व अन्य विविध वस्तुओं का होता है। विविध

वस्तुओं में फलों, काष्ठ, कागज व लुग्दी आदि का बाहुल्य होता है। आयों में मशीनें, तेल, अनाज, कपड़ा, चाय, तम्बाकू, धातु-अयस, अल्युमिनियम, रेलवे के इंजन इस्पात विविध यन्त्रादि तथा रासायनिक उर्वरक महत्वपूर्ण हैं।

आर्थिक ढांचे में व्यापार का भारी महत्व, उद्यगों की प्रवृत्ति, जनसंख्या के अधिकाधिक भाग का तटवर्ती पट्टी में बसा होना, मैदानी भागों की कमी (जिनमें कि पर्याप्त जनसंख्या एक ही साथ रह सके) आदि ऐसे तत्व हैं जिन्होंने न्यूजीलैंड में यातायात के विकास को आवश्यक कर दिया है। प्रारम्भिक दिनों में यूरोपियन प्रवासी तट भागों में बिखरे रूप में बसे थे, परस्पर बहुत कम सम्पर्क था।। थल भाग में यातायात का प्रधान साधन बैलगाड़ियाँ थीं। नदियों एवं तटवर्ती भागों में मायोरी लोगों की लकड़ी के खोल की नावें 'कैनोज' क्रियाशील थी। घास क्षेत्रों के विकास के साथ घोड़े का प्रयोग बढा। लेकिन इस सबके बावजूद भी 1910 से पहले बहुत कम लोग ही लम्बी दूरियों को थल मार्गों से पार करते थे।[23] इस समय तक उत्तरी द्वीप में ही वैलिंगटन से ऑकलैंड जाने वाले लोग समुद्री रास्ता अपनाते थे। तटवर्ती रास्ते और स्टीमर यातायात के प्रधान साधन थे।

न्यूजीलैंड प्रमुख आयात निर्यात–1982

प्रमुख निर्यात — वस्तु	निर्यात मूल्य (मि० न्यूजी० डालरों में)	प्रमुख आयात — वस्तु	आयात मूल्य (मि० न्यूजी० डालरों में)
गाय, बछड़े का मांस	619,067	खाद्यान्न	27,232
मेमने का मांस	707,104	फल, वनस्पति	100,558
भेड़ का मांस	146,363	उर्वरक एवं खनिज	152,214
दुग्ध एवं क्रीम	12,659	पैट्रोल एवं पैट्रो. उत्पादन	1,3?6,329
मक्खन	557,068	रसायन (जैविक)	148,944
पनीर	175,707	रसायन (अजैविक)	108,716
मछली	229,957	दवाएँ	121,655
काष्ठ एवं कार्क	107,546	प्लास्टिक पदार्थ	241,425
लुग्दी एवं पेपर	155,274	धागा एवं कपड़े	460,943
ऊन	918,832	औद्योगिक मशीनें	321,711
केजीन	176,172	ऑटो मोबाइल्स	746,874
अल्युमिनियम	205,825	लोह एवं इस्पात	426,676

रेलवे मार्ग प्रथम बार 1900 में बनाया गया। पहला रेल मार्ग दक्षिणी द्वीप के निचले भाग में प्रारम्भ हुआ। वस्तुतः न्यूजीलैंड का धरातलीय स्वरूप,

23. Cumberland, K.B.—Southwest Pacific p. 235.

असंख्य जलधाराएँ पहाड़ियाँ आदि रेलवेज के विकास में बड़ी बाधा थे। फलतः रेलों के विकास की गति बहुत धीमी रही। यहाँ तक कि ऑकलैंड से वैलिंगटन (राजधानी) तक का रेल मार्ग प्रथम विश्व युद्ध से कुछ पूर्व ही बनकर तैयार हुआ था। वर्तमान में न्यूजीलैंड में 4332 कि० मी० मील लम्बे रेल मार्ग (31 मार्च 1983 का) है। सभी सरकार द्वारा संचालित हैं। ज्यादातर रेल मार्ग समुद्रतट के समानांतर तटवर्ती पट्टी में फैले हैं। दक्षिणी आल्प्स को एक दर्रे द्वारा (आर्थर पास) क्राइस्टचर्च से ग्रेमाउथ जाने वाले रेल मार्ग ने पार किया है। उत्तरी तथा दक्षिणी द्वीप को जोड़ने के लिए कुक जलडमरुमध्य में होकर फैरी सर्विस उपलब्ध है। प्रमुख रेल मार्ग हैं:— 1. वैस्टपोर्ट-पामर्स्टन नौर्थ-रॉस 2. वैलिंगटन-पामर्स्टन नौर्थ-नैपियर-जिस्बोर्न 3. ऑकलैंड-हैमिल्टन-न्यूप्लाइमाउथ-पामर्स्टन नौर्थ-वैलिंगटन 4. ब्लैनहीम-कैकोरा-क्राइस्टचर्च-टिमारू-डुनेडिन-इन्वर कार्गिल।

न्यूजीलैंड में सड़क यातायात एवं मोटर-बसों का प्रर्याप्त विकास हुआ है। रेलवे के द्वारा जितने यात्री एक वर्ष में ढोये जाते हैं सड़कों द्वारा जाने वाले यात्री उनसे लगभग सात गुने होते हैं। उत्तरी अमेरिका को छोड़कर, जनसंख्या के अनुपात में न्यूजीलैंड में विश्व में सर्वाधिक मोटर गाड़ियाँ हैं।[24] सड़क यातायात के इतने विकास का कारण सभवतः घास पर आधारित आर्थिक ढांचे का होना है। फार्म्स का विस्तार, उत्पादनों का शीघ्रातिशीघ्र संचय एवं खपत केन्द्रों तक पहुँचाना, असमान धरातल के कारण रेल मार्गों के विस्तार में दिक्कतें आदि कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनके फलस्वरूप यहाँ सड़कों का अधिकाधिक विकास हुआ है। सभी सड़कें अच्छी हालत की हैं। इस छोटे से देश में 93133 कि.मी. (31 मार्च 1982) लम्बी पक्की सड़कें हैं। 1 अप्रेल 1960 से 'स्टेट रोडवेज' प्रारम्भ हुई जो अपनी लगभग 45,000 कि० मी० लम्बी सेवा में देश के प्रमुख शहरों, औद्योगिक केन्द्रों तथा बंदरगाहों को जोड़ती हुई चलाती है। उल्लेखनीय है कि न्यूजीलैंड की सड़कों के निर्माण में लगभग 10,000 पुल बनाए गए हैं। यह संभवतः पर्वतीय वातावरण एवं छोटी-छोटी जल धाराओं के आधिक्य के कारण है।

आस्ट्रेलिया की तरह न्यूजीलैंड निवासी भी वायु यातायात के शोकीन है। यही वजह है कि 1946 के बाद से वायु सेवा में बड़ी तीव्र गति से प्रसार हुआ है। 20,000 की आबादी वाले सभी नगर वायु सेवा से जुड़े हुए है। बहुत से कस्बे तो इससे भी बहुत छोटे हैं जो अपनी पृथक् स्थिति के कारण विमान सेवाओं द्वारा जोड़े गए है। देश के भीतर की विमान सेवाएँ 'न्यूजीलैंड नेशनल एयरवेज कार्पोरेशन' एवं तीन छोटी वायु कम्पनियों द्वारा संचालित हैं। विदेशों के लिए 'एयर न्यूजीलैंड लिमिटेड' के विमान उपलब्ध हैं। यह संगठन सरकार द्वारा नियंत्रित है।

24. Ibid.

इसमें आधुनिकतम वायुयान शामिल किए गए हैं। आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड के प्रमुख नगरों के बीच नियमित वायु सेवाएँ उपलब्ध हैं।

जनसंख्या :

1 अप्रैल 1971 को न्यूजीलैंड की जनसंख्या 2,862,631 थी। प्रति वर्ष लगभग 50,000 व्यक्ति बढ़ जाते हैं। इस प्रकार वर्तमान 1981 में न्यूजीलैंड के मुख्य द्वीपों की जनसंख्या लगभग 3 मिलियन (3,175,737) है।

पिछले लगभग 100 वर्षों में न्यूजीलैंड की जनसंख्या लगभग 30 गुनी हो गई है। इतनी तीव्र गति से वृद्धि के प्रधान कारण यहाँ के आर्थिक-अवसर एवं सुसंगठित दुग्ध-मांस-ऊन व्यवसाय हैं जिनके उत्पादनों की माँग सभ्य संसार में बड़ी तेजी से बढ़ी और इसके साथ ही न्यूजीलैंड का जीवन–स्तर बढ़ा। 1858 में यहाँ की जनसंख्या केवल 115,462 थी जो बढ़ कर 1886 में 620,451; 1906 में 936,304; 1911 में 1,058,308; 1945 में, 17,02,298; 1961 में 2,414,984; 1969 में 2,780,839 तथा 1981 में 3,175,737 हो गई। वृद्धि की सर्वाधिक तीव्र गति पिछली शताब्दि अन्तिम दशकों में हुई जिसका कारण तीव्र गति से होने वाला जन-प्रवास था।

विविध क्षेत्रों में जनसंख्या—1982

क्षेत्र (मुख्य केन्द्र सहित)	क्षेत्रफल (वर्ग कि० मी० में)	कुल जनसंख्या (1982)
1. नार्थलैंड (वानगैरेई)	12,653	115,800
2. सैंट्रल ऑकलैंड (ऑकलैंड)	5,581	839,500
3. साउथ ऑकलैंड (हैमिल्टन)	36,882	496,000
4. ईस्टकोस्ट (जिस्बोर्न)	10,885	48,700
5. हॉक-बे (नैपियर)	11,289	148,400
6. तारानाकी (न्यू प्लाईमाउथ)	9,729	105,300
7. वैलिंगटन (वैलिंगटन)	27,766	586,000
योग उत्तरी द्वीप.	114,785	2,339,700
8. मार्ल वर्ग (ब्लैनहीम)	10,210	36,200
9. नैल्सन (नैल्सन)	18,948	77,600
10. वैस्टलैंडस (ग्रे माउथ)	15,477	23,300
11. कैंटरबरी (क्राइस्टचर्च)	43,346	422,800
12. ओटेगो (डुनेडिन)	36,873	182,400
13. साउथ लैंड (इन्वर कार्गिल)	28,464	108,100
योग दक्षिणी द्वीप	153,318	850,400

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि उत्तरी द्वीप में ऑकलैंड, वैलिंगटन का मैदान तथा दक्षिणी द्वीप में कैंटरबरी का मैदान का सर्वाधिक बसा है। इन तीनों जिलों में देश की लगभग आधी जनसंख्या शरण लिए है। हॉके की खाड़ी, तरानाकी (उत्तरी द्वीप) तथा ओटेगो (दक्षिणी द्वीप) मध्यम बसे क्षेत्र हैं। न्यूजीलैंड में भौगोलिक वातावरण के संदर्भ में जनसंख्या के वितरण को समझना बड़ा सरल है। दक्षिणी द्वीप में दक्षिणी आल्प्स के कारण अधिकांश जनसंख्या पूर्वी तटवर्ती पट्टी विशेषकर कैंटबरी के मैदान एवं ओटेगो के पठार के निचले भागों में बसी है। फार्मों एव चरागाह वाले क्षेत्रों में जनसंख्या छितरी है। दक्षिणी द्वीप के लगभग तीन-चौथाई लोग क्राइस्टचर्च, टिमारू, डुनेडिन, नेल्सन, इन्वरकार्गिल तथा ग्रेमाउथ आदि नगरों में बसे हैं।

उत्तरी द्वीप में सर्वाधिक घनत्व वैलिंगटन के मैदान तथा ऑकलैंड पैनिनशुला में है। सबसे कम बसा भाग मध्यवर्ती ज्वालामुखी पठार है। शेष भाग मध्यम रूप में बसे हैं परन्तु कुल मिलाकर बसाव छितरा है। फार्म्स के बीच-बीच में फैक्ट्रीज तथा गाँव बिखरे रूप में बसे हैं।

वैलिंगटन नगर 343,200 न्यूजीलैंड की राजधानी है। उत्तरी द्वीप के धुर दक्षिण में स्थित यह नगर व्यापारिक एवं औद्योगिक केन्द्र है तथा बंदरगाह है। यह मध्यवर्ती स्थिति के कारण ही राजधानी बनाया गया है। फैरी सर्विस द्वारा यह नगर दक्षिणी द्वीप से जुड़ा है। ऑकलैंड सिटी 839,500 देश का सबसे बड़ा नगर एवं सबसे व्यस्त बंदरगाह है। यह प्राकृतिक पोताश्रय है। देश के भीतरी भागों से यह रेल, सड़क, वायु सेवा द्वारा जुड़ा है। दक्षिणी द्वीप का सबसे बड़ा नगर एवं बंदरगाह क्राइस्टचर्च (322,100) है जो कैंटरबरी के मैदान जैसी पृष्ठभूमि होने के कारण बंदरगाह व ऊन केन्द्र के रूप में पर्याप्त विकास कर गया है। अन्य नगरों में डुनेडिन (112,800) हैमिल्टन (161,500) इन्वरकार्गिल (53,900) न्यूप्लाइ माउथ 44,300 तथा गिस्बोर्न 32,000 आदि उल्लेखनीय हैं। ये क्षेत्रीय केन्द्र है।

न्यूजीलैंड की वर्तमान जनसंख्या में से लगभग 90% लोग ब्रिटिश समुदाय के वंशज हैं, 8% माओरी लोग हैं तथा 2% के लगभग अन्य विदेशी तत्व हैं। माओरी लोग विशेष रूप से अध्ययनीय हैं। साधारणतः दुनियाँ के अन्य सभी भागों में आदिवासियों की संख्या व संसस्कृति क्रमशः नष्ट होती जा रही है। न्यूजीलैंड इसका अपवाद है। संभवतः यही एक ऐसा देश है जहाँ न केवल आदिवासियों की संस्कृति को आधुनिक परिवेश में बढ़ावा मिला है वरन् उनकी संख्या भी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। 1896 में माओरी जनसंख्या 42,113 थी जो बढ़कर 1936 में 82,326; 1945 में 98,744; 1961 में 171,553 तथा 1966 में 201,159 हो गई। वर्तमान में लगभग 280,380

माओरी लोग हैं। ये लोग पोलीनेशियनप्रजाति से सम्बन्धित हैं जो यहां अपनी 'लठ्ठे की नावों' में बैठकर 13-14वीं शताब्दी में आए थे। 1840 में वेटांगी की संधि हुई तो इनकी भूमि एवं संस्कृति सम्बन्धी अधिकार सुरक्षित रखे गए जो आज तक हैं। ये लोग प्रारम्भ में उत्तरी द्वीप में आकर बसे थे। आज भी 95% माओरी लोग ऑकलैंड प्रायःद्वीप में हैं। पिछले दशकों में औद्योगीकरण के विकास के साथ-साथ ये नगरों की तरफ उन्मुख हुए हैं। अधिकांशतः ये लोग अपने परम्परागत कार्य (कृषि एवं वन व्यवसाय) करते है परन्तु जवान माओरो लोग बौद्धिक कार्य भी करने लगे हैं। सरकार एवं चर्चों की ओर से माओरी छात्रों के लिए छात्रवृत्ति हॉस्टल तथा विशेष प्रकार के शैक्षणिक (मुख्यतः तकनीकी एवं प्रावधिक) स्कूल स्थापित किए गए हैं। विशेष रूप से संगठित 'माओरो एफेयर्स डिपार्टमेंट' इन लोगों के स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, उद्यम तथा संस्कृति के विकास के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहता है।

मिश्र

अफ्रीका महाद्वीप के उत्तरी-पूर्वी कोने में स्थित यह देश 25° से लेकर 36° पूर्वी देशांतर तथा 21°35 इंच से लेकर 31°35 इंच उत्तरी अक्षांश तक फैला है। दक्षिण एवं पश्चिम की थलीय सीमा तो रैखिक है ही, पूर्वी तथा उत्तरी तटवर्ती सीमा भी लगभग सीधी है। इस प्रकार आकृति में मिश्र लगभग आयताकार है। इसका भू-क्षेत्र 386,200 वर्ग मील है। इस प्रकार नाइजेरिया से तो यह देश क्षेत्रफल में बड़ा है परन्तु अपने दक्षिण में स्थित पड़ोसी देश सूडान की तुलना में बहुत छोटा (लगभग 2/5) है। उत्तर से दक्षिण की ओर अधिकतम लम्बाई 1230 कि० मी० एवं पूर्व से पश्चिम में अधिकतम चौड़ाई 1080 कि० मी० है। यह चौड़ाई वस्तुतः सिनाई वाले समाग में है जो स्वेज नहर के पूर्व में स्थित है। सिनाई क्षेत्र एशिया में आता है। इस प्रकार अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण मिस्र एशियायी अरब देशों के भी उतने ही नजदीक रहा है। स्वेज नहर बनने से पूर्व स्वेज 'स्थल डमरु मध्य' ही एक मात्र स्थलीय मार्ग था जो एशिया तथा अफ्रीकी प्रदेशों को जोड़ने का कार्य करता था। अनुमान है कि इसी स्थल मार्ग से होकर ॰ीत काल में दोनों महाद्वीपों में विविध जाति समुदायों का परस्पर आदान प्रदान और स्थानांतरण हुआ होगा।

व्यावहारिक रूप में मिस्र को 'नील का वरदान' कहा जाता है। यह कुछ सीमा तक उचित है। बिना नील जल के मिश्र में स्थायी जन बसाव की कल्पना ही नहीं की जा सकती। भौगोलिक वातावरण की दृष्टि से, मिश्र में शामिल किया जाने वाला भू-भाग, वस्तुतः सहरा रेगिस्तान का ही विस्तार है। यही कारण है देश का 96½ प्रतिशत भू-भाग आवासरहित एवं निर्जन रेगिस्तानी भाग है। जबकि देश की 99% जनसंख्या नील की घाटी एवं डेल्टा (13,500 वर्ग मील) प्रदेश में बसी है। घाटी एवं डेल्टा प्रदेश का क्षेत्रफल देश के कुल भू-क्षेत्र के 1/28 से भी कम है। घाटी में ही कृषि कार्य होते है। इन आंकड़ों से नील की घाटी का आर्थिक क्रियाओं एवं मानव बसाव की दृष्टि से महत्व समझा जा सकता है।

नील की घाटी दुनिया के अत्यधिक बसे हुए भागों में से एक है। चूंकि ,मध्य में औद्योगिक विकास सीमित है, अधिकांश जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर है।

अतः घाटी में मानव-भूमि अनुपात की समस्या दिन-प्रतिदिन गम्भीर होती जा रही है। अन्य भागों में जलाभाव के कारण जन विस्तार सम्भव नहीं है क्योंकि देश में वर्षा अत्यन्त अपर्याप्त मात्रा में होती है। डेल्टा प्रदेश में वर्षा का औसत 4 से 8 इंच तक है। सिनाई प्रदेश में भी वार्षिक औसत 10 इंच से ज्यादा नहीं हो पाता। देश के ऊपरी भागों में वर्षा 2 इंच से भी कम होती है। इन परिस्थितियों में केवल नील ही एक मात्र जल का स्रोत है। नील की घाटी को छोड़कर अन्यान्य भागों में कृषि विकास सम्भव नहीं है। इसी उद्देश्य से भारी अस्वान बाँध योजना क्रियान्वित की गई है जिसके लिए धन जुटाने हेतु मिश्र को भारी संघर्षों और कूटनैतिक चक्रों में होकर गुजरना पड़ा परन्तु इसके बावजूद भी स्व० कर्नल नासिर ने अस्वान की निर्माण-गति में कोई अन्तर नहीं आने दिया। इससे नील-घाटी, सिंचाई और कृषि इन तीनों का देश की आर्थिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान स्पष्टतः परिलक्षित है।

मिश्र एक अरब देश है जिसकी अधिकांश जनसंख्या इस्लाम धर्म की अनुयायी है। 90% से अधिक जनसंख्या इस धर्म को मानती है। अफ्रीका नाम से कई लोग कभी-कभी यह अनुमान लगाते हैं कि मिश्रवासी भी अफ्रीकी-नीग्रो हैं। यानी यहाँ के लोग भी काले, बौने, मोटे होठ वाले या घुँघराले बालों वाले होंगे। परन्तु वस्तुतः ऐसा नहीं है। यहाँ के लोग 'भूमध्य सागरीय-प्रजाति' से सम्बन्धित हैं। गौर वर्ण तथा लम्बे कद के हैं।

सांस्कृतिक दृष्टि से मिश्र की विश्व में महत्वपूर्ण स्थिति है। यह देश दुनिया के उन कुछ देशों में से एक माना जाता है जो अपनी प्राचीन गौरवमय संस्कृति पर गर्व कर सकते हैं। भारत के मोहन जोदाड़ो-हड़प्पा या मध्य-पूर्व के बेबीलोन की तरह मिश्र में भी अत्यन्त प्राचीन समय में ही सभ्यता विकसित थी। यहाँ के विशालाकार पिरामिड दुनिया के सात आश्चर्यों में माने जाते हैं जिनके प्रकोष्ठों में आज भी प्राचीन मिश्री सभ्यता के चित्र अंकित हैं। पिरामिडों के अतिरिक्त यत्र-तत्र बनी नृसिंह की मूर्तियाँ जिन्हें 'स्फिंक्स' के नाम से पुकारते हैं तथा कर्नाक एवं लुक्सर के निकट स्थित प्राचीन स्मारकों एवं स्तम्भों के खण्डहर भी मिश्री सभ्यता की वास्तुकला के ज्वलंत चिह्न हैं। फराओ राजाओं द्वारा निर्मित ये पिरामिडस और मूर्तियों-स्तम्भों के खण्डहर इस बात के प्रतीक हैं कि ईसा से 2500-3000 वर्ष पूर्व, जब यूरोप और एशिया के अधिकांश भाग अविकसित थे, जंगलों से ढ़के थे, अफ्रीका के इस कोने में मानवता ने पर्याप्त विकास कर लिया था।

छोटे-बड़े मिलाकर मिश्र में लगभग 80 पिरामिड हैं। यहाँ का विशालतम पिरामिड मिश्र की वर्तमान राजधानी काहिरा से लगभग 500 फीट ऊँचा तथा 13 एकड़ भूमि में फैला है। इतिहासकारों का अनुमान है कि इस पिरामिड के निर्माण में लगभग 48 लाख 83 हजार टन पत्थर लगे तथा 1 लाख लोगों ने 20

वर्ष तक अनवरत श्रम-साधना की ।[1] आज से लगभग 4700 वर्ष पूर्व (2690 ई० पूर्व) बने इन दीर्घाकार पिरामिडों को देखकर आँखें पथरा जाती हैं और आश्चर्य होता है कि इनके निर्माण-युग में जब आज के जैसे यातायात के साधन नहीं थे, क्रेनें नहीं थीं तब कैसे इतना पत्थर ढोया गया और इतनी ऊँचाई तक कैसे विशालाकार शिलाएँ ऊपर उठायी गयीं । पिरामिडों के भीतरी कक्ष आज भी उसी तरह की सजावट से सजे हैं जैसी 5000 वर्ष पूर्व फराओं राजाओं के भवनों में हुआ करती थी । प्रकोष्ठों की दीवालों पर इन राजाओं के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से लिखा गया है ।

भौगोलिक एवं वैज्ञानिक ज्ञान की वृद्धि में तत्कालीन मिश्रवासियों का उतना ही महत्वपूर्ण योग रहा है जितना बाद में यूनानी लोगों का । मिश्रवासियों ने गणितीय-भूगोल के विकास में विशेष सहयोग दिया । नक्षत्र विज्ञान में कई खोजें की गयीं । 365 दिन का कलेण्डर प्रथम बार यहीं विकसित हुआ ।[2] इन लोगों ने लिपि विकसित की । कागज बनाकर उस पर लिखने की परम्परा इन दिनों पड़ी । रसायन-शास्त्र तथा वस्तुशिल्प के क्षेत्र में भी प्राचीन मिश्र ने महत्वपूर्ण योग दिया ।

ईसा से लगभग 4000 वर्ष पूर्व भी मिश्र एक स्वतन्त्र राज्य था पर बाद में कई विदेशी शक्तियों ने इसे पराधीन बना लिया, फारस ने इसे अपना गुलाम बनाया परन्तु 405 ई० पू० में विद्रोह के बाद पुनः आजाद हो गया । 322 ई० पूर्व में सिकन्दर ने इसे जीता । उसी समय सिकन्दरिया बन्दरगाह-नगर की नींव डाली गयी । इसके बाद 32 ई० पू० तक यह रोम-साम्राज्य का प्रान्त बन गया और यह स्थिति 640 ई० तक बनी रही । सन् 641 ई० में इस पर अरबों का आक्रमण हुआ और तब से लेकर 1597 तक यह भाग अरबों के अधिकार में रहा । वस्तुतः इसी समय व्यापक स्तर पर इस्लाम धर्म का प्रचार हुआ और अरबी यहाँ की मुख्य भाषा बन गयी । 1597 ई० में यह देश तुर्की साम्राज्य में शामिल कर लिया गया । तुर्की से आए सेनापति मोहम्मद अली मिश्र के शासक बन बैठे और नाम भर के लिए तुर्की के सुलतान की आधीनता मानते रहे । मोहम्मद अली के वंशज ही मिश्र के पैतृक शासक बन गए । 1882 में यहाँ एक भयानक विद्रोह हुआ जिसे कुचलने में ब्रिटिश सेना का सक्रिय सहयोग रहा, फलतः ब्रिटिश प्रभाव बढ़ता रहा और प्रथम विश्व युद्ध के दौरान दिसम्बर, 1914 में इसे ब्रिटिश रक्षित प्रदेश घोषित कर दिया गया । वफ्द पार्टी तथा अन्य राष्ट्रीय तत्वों के प्रयत्नों के फलस्वरूप 1922 में मिश्र मुक्त हुआ और तत्कालीन सुल्तान फाउद (प्रथम) विधिवत मिश्र के

1. माथुर, जगमोहनलाल—अफ्रीका, उनके देश और निवासी पृष्ठ सं० 151 ।
2. वही, पृष्ठ सं० 152 ।

बादशाह घोषित किए गए। 23 जुलाई, 1952 को यहाँ सैनिक क्रान्ति हुई। तत्कालीन बादशाह फारुख को हटाकर सारी सत्ता सेना ने सम्भाल ली। जून 1953 में यह गणराज्य बन गया।

1 फरवरी 1958 को सीरिया तथा मिश्र को मिलाकर 'संयुक्त अरब गणराज्य' का संगठन किया गया। 8 मार्च को यमन भी इसमें शामिल हो गया। परन्तु 26 सितम्बर 1961 को सीरिया संघ से अलग हो गया। दिसम्बर 26 को यमन अलग हो गया और वर्तमान में संयुक्त अरब गणराज्य से तात्पर्य केवल मिश्र है। 13 अगस्त 1964 को मिश्र, इराक, कुवैत, जोर्डन, सीरिया आदि देशों ने मिलकर एक 'अरब साझा बाजार' बनाने का निर्णय किया। 1 जनवरी 1965 से प्रारम्भ होने वाला यह व्यापारिक संगठन अभी तक भी कार्यरूप में परिणत नहीं सका है। वस्तुतः इजराइल के विरुद्ध अरब देश समय-समय पर संगठित और विघटित होते रहे हैं। अरब-इजराइल संघर्ष में मिश्र की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। 1967 के सशस्त्र संघर्ष में सर्वाधिक हानि भी मिश्र को ही उठानी पड़ी। उसका सिनाई प्रदेश इजराइल के कब्जे में चला गया। जो 1973 में ही वापिस मिश्र के अधिकार में आ सका। पिछले तीन दशकों में कभी स्वेज, कभी असवान तो कभी अरब-इजराइल-संघर्ष को लेकर मिश्र को भारी राजनैतिक, सैनिक और आर्थिक उतार-चढ़ाव देखने पड़े हैं। 'संयुक्त अरब गणराज्य' संगठन का सपना पूरा नहीं हो सका। अन्ततः 2 सितम्बर 1971 को पुराना नाम 'मिश्र' ही अधिकृत नाम के रूप में स्वीकार किया गया।

भारत की तरह मिश्र भी तीसरे गुट, यानी तटस्थतावादी नीति के पोषक देशों में से एक रहा है। वस्तुतः तटस्थता वादी आन्दोलन के तीन सूत्रधार थे— भारत के प्रधान मन्त्री पं. जवाहर लाल नेहरू, यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति मार्शल टीटो एवं मिश्र के राष्ट्रपति कर्नल नासेर। इस आन्दोलन की शुरुआत 1955 में आयोजित बांडुंग सम्मेलन से हुई। 1961 में बेलग्रेड सम्मेलन में भी मिश्र ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अक्टूबर 1964 में विख्यात काहिरा सम्मेलन हुआ जिसमें विश्व शान्ति, निशस्त्रीकरण, तनाव से मुक्ति, शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व, उपनिवेशवाद की समाप्ति एवं विकासशील देशों को आर्थिक समस्याओं पर गहराई से विचार किया गया। इस सम्मेलन की घोषणाओं में बड़ी जोरदारी से सैन्य गुट बनाने, विदेशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने तथा जगह-जगह सैन्य आधार (Military base) बनाने की प्रवृत्तियों की भर्त्सना की गयी।

प्रशासनिक दृष्टि से मिश्र 25 प्रान्तों (governorate) में संगठित है जिनका विवरण निम्न प्रकार है।

प्रान्त	भू-क्षेत्र (वर्ग कि. मी. में)	जनसंख्या 1976 की अन्तिम अधिकृत जनगणना के अनुसार	राजधानी
1. सिनाई	60,714	10,104	अल-अरिश
2. स्वेज	17,840	194,001	स्वेज
3. इस्मालिया	1,442	351,889	इस्मालिया
4. पोर्ट सईद	72	262,620	पोर्ट सईद
5. शारकीया	4,180	2,621,208	जागाजिग
6. डाकाहलिया	3,471	2,732,756	मंसूरा
7. डमैटा	589	557,115	डमैटा
8. कफ-एल-शेख	3,437	1,403,468	कफ-एल-शेख
9. अलैक्जन्ड्रिया	2,679	2,318,655	अलैक्जन्ड्रिया
10. बैहेरा	4,589	2,517,292	डमानूर
11. घारबिया	1,942	2,294,303	टांटा
12. मैनूफिया	1,612	1,710,982	शिबिन-एल-कौम
13. क्वालियूबिया	971	1,674,006	बैनहा
14. काहिरा	214	5,084,463	काहिरा
15. गीजा	1,010	2,419,247	गीजा
16. फैयूम	1,827	1,140,245	फैयूम
17. बैनी स्वेफ	1,322	1,108,615	बैनी स्वेफ
18. मिनया	2,262	2,055,739	मिनया
19. एस्युत	1,530	1,695,378	एस्युत
20. सोहाग	1,547	1,924,960	सोहाग
21. क्वेना	1,851	1,705,594	क्वेना
22. अस्वान	679	619,932	अस्वान
23. अल-बहर-अल-अहमर	203,685	56,191	अलघुर्दाकाह
24. अल वादी अल जदिद	376,505	84,645	अल खारीजाह
25 मेरसा मातरूह	298,735	112,772	मातरूह

नोट—1984 में मिश्र की जनसंख्या अनुमानतः 46 मिलियन हो गयी।

□□□

मिश्र : प्राकृतिक स्वरूप

धरातल :

वादीहाफा से लेकर डेल्टा या भूमध्य सागर तक 900 मील की लम्बाई में फैली कांप की पट्टी, जो नील नदी के सहारे-सहारे स्थित है को अगर अपवाद स्वरूप छोड़ दिया जाए तो शेष सम्पूर्ण मिश्र रेगिस्तानी स्वरूप प्रस्तुत करता है। वस्तुतः यह सम्भाग सहारा रेगिस्तान का ही पूर्वी विस्तार है जिसमें अधिकांश भाग पठारी, पथरीले एवं कंकरीले शुष्क भागों ने घेरा हुआ है। पश्चिम के कुछ भागों में रेतीले रेगिस्तानी भाग भी विद्यमान हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण मिश्र एक रेगिस्तानी प्रदेश है जिसमें नील नदी मध्य में होकर प्रवाहित है। हजारों-हजारों वर्षों से निरंतर कांप के जमाव के फलस्वरूप जलधारा के दोनों तरफ उपजाऊ मिट्टी का जमाव हो गया है। दक्षिणी मिश्र में नील गहरी घाटी बनाती है जिसके पूर्वी किनारे अपेक्षाकृत तीव्र ढाल लिए हैं। अस्वान के उत्तर में घाटी चौड़ी हो जाती है परन्तु चौड़ाई 12 मील से ज्यादा नहीं है। काहिरा के उत्तर में नील का डेल्टा प्रदेश प्रारम्भ हो जाता है।

मिश्र के उत्तरी-पश्चिमी, दक्षिणी-पश्चिमी तथा पूर्वी भागों में शुष्क कटे-फटे नीचे पठारी भाग हैं। नील के पश्चिम में स्थित रेगिस्तानी भाग जुरैसिक से लेकर मिओसीन युग तक की प्रतिनिधि चूने की चट्टानों तथा बलुआ पत्थरों द्वारा घेरा हुआ है।[3] सम्पूर्ण भाग वृक्ष रहित है। लगभग आधा भाग 1000 मील से ज्यादा ऊँचा है। दक्षिण का भाग साधारणतः इससे ज्यादा ऊँचा है। वैसे दक्षिण-पश्चिम में कैबीर का पठार ही एक मात्र उच्च प्रदेश है परन्तु पश्चिम में लीबिया से लगती सीमा के निकट रेतीले टीले इतने ऊँचे हैं कि वे उच्च प्रदेशों जैसा ही स्वरूप प्रस्तुत करते हैं। ऊँचे पठारी भाग नील के पूर्व में ही स्थित हैं। वैसे तो सम्पूर्ण देश ही रेगिस्तानी है अतः उच्चावचन एवं भूगर्भिक संरचना की दृष्टि से दो ही भाग हो सकते हैं यानी नील की घाटी एवं शेष रेगिस्तानी प्रदेश। परन्तु अध्ययन की सरलता के लिए रेगिस्तानी भाग को दो भागों, यानी ऊँचे पठारी भागों तथा रेतीले

3. Church Harrison, R. J.—Africa and the islands p. 163.

एवं नीचे नखलिस्तानी प्रदेशों, में रखा जा सकता है। इस प्रकार मिस्र को धरातलीय स्वरूप की दृष्टि से निम्न तीन भागों में रखा जा सकता है।

1. पठारी प्रदेश
2. पश्चिम के रेतीले एवं नखलिस्तानी प्रदेश
3. नील की घाटी

चित्र–1

मिश्र के दक्षिण-पश्चिम में प्राचीन रवेदार चट्टानों से बने, कटे-फटे, नीचे पठारी भाग स्थित हैं। 1000 से 1500 फीट तक की ऊँचाई के ये भाग कंबीर के पठार के नाम से जाने जाते हैं। कंबीर-पठार के पूर्व एवं उत्तर में श्रृंखलाबद्ध ऊँचाइयाँ हैं जिन्हें न्यूबा श्रेणी के नाम से जानते हैं। ये पहाड़ियाँ बलुआ पत्थर की अक्षय स्रोत हैं। मिश्र के उत्तर-पश्चिम में लीबिया के पठारी भाग का कुछ विस्तार-भाग विद्यमान है। यद्यपि मिश्र तक आते-आते ये बहुत नीचे(600 फीट)रह गए हैं। उत्तर में चूने की चट्टानों का बाहुल्य है जो भूमध्य सागर तट तक विस्तृत है। कंबीर

चित्र–2
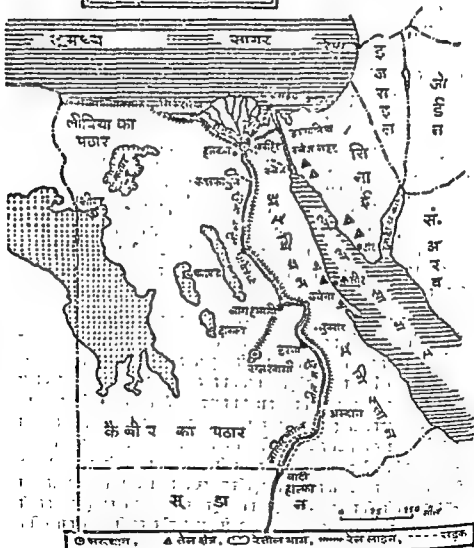
तथा लीबियन पठार का विस्तार भाग दोनों ही अत्यन्त शुष्क-क्षेत्र होने के कारण मानव बसाव के लिए कोई आकर्षण प्रस्तुत नहीं करते ।

पश्चिम के रेतीले एवं नखलिस्तानी प्रदेश :

उत्तर में लीबिया पठार के विस्तार-भाग तथा दक्षिण में कैबीर पठार के मध्य उत्तर-दक्षिण क्रम में फैली एक विशाल रेतीली-पट्टी है । चारों तरफ रेत ही रेत होने से यह संभाग रेत का एक विशाल सागर प्रतीत होता है । विभिन्न ऊँचाइयों, आकार तथा विस्तार के रेतीले टीले इस संभाग में चारों तरफ फैले हैं हवाओं के कटाव तथा घिसाव के द्वारा बनाई हुई विभिन्न आकृतियां नजर आती हैं । पानी की एक बूँद यहां नहीं होती । अतः सैंकड़ों मीलों तक मानवता के दर्शन नहीं होते ।

इस पश्चिमी-रेतीले संभाग में उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व दिशा में फ़ैली एक विशाल लम्बाकार धँसावकृत पेटी क्रम है जिसमें अनेक धसाव क्षेत्र स्पष्ट हैं । आधारभूत चट्टानों में मोड़ पड़ने के कारण इन धँसावों में यत्र-तत्र प्राकृतिक रूप से जल स्रोत निकल आए हैं और वहीं नखलिस्तान विकसित हो गए हैं । ज्यादातर मरुद्यानों में रेतीली मिट्टियां हैं । कहीं-कहीं नमक युक्त खारी मिट्टियां भी हैं । इन मरुद्यानों में सीवा, बहारिया, फाराफा, डाखला तथा खार्गा आदि उल्लेखनीय हैं । सीवा मरुद्यान कतारागंत के दक्षिण-पश्चिमी सिरे पर स्थित है । विश्व प्रसिद्ध कतारागंत के बारे में कहा जाता है कि यह वस्तुतः जमीन में दरार पड़ने एवं धसने के कारण बना है । गर्त के तल भाग में अधिकतर नमकीन दलदल का विस्तार है । इस गर्त का सबसे नीचा भाग समुद्रतल से लगभग 440 फीट नीचा है । नमकीन दलदल होने के कारण कतारागंत आर्थिक दृष्टि से व्यर्थ है ।

सीवा मरुद्यान के जल स्रोतों में पानी नमक युक्त एवं तेलिया है जो संभवतः कतारागर्त की निकटता के कारण है । अन्य चारों मरुद्यान नील नदी से 125 मील की दूरी के भीतर ही स्थित हैं । इनका पानी मीठा है । यहां खाद्यान्न तथा नारियल एवं खजूर पैदा किए जाते हैं । मरुद्यानों में मानव अधिवास इस विशाल रेगिस्तान में द्वीपीय स्थिति लिए हुए हैं जो एक-दूसरे से केवल ऊँट के काफिलों द्वारा जुड़े हैं । काहिरा नगर के 40 मील दक्षिण में फायूम गर्त विद्यमान है जो समुद्रतल से 150 फीट नीचा है । गर्त के मध्य में स्थित क्वारून झील खारी है । फायूम को नील से ताजा पानी नहर द्वारा आता है ।

नील की घाटी :

4·160 मील लम्बी नील नदी उत्तरी-पूर्वी अफ्रीका का एक महत्वपूर्ण एवं प्रभावकारी तत्व है । टांगानीका झील के निकट पूर्वी अफ्रीकन पठार में स्थित अपने उद्गम स्थान से लेकर काहिरा के निकट नील-डेल्टा तक इस नदी का विस्तार

लगभग 35° अक्षांशों में है। लगभग 1,100,000 वर्गमील में फैला इसका विशाल बेसिन है जिसमें 50 मिलियन से अधिक लोग आश्रय लिए हुए हैं। उत्तर की ओर जैसे-जैसे वर्षा की मात्रा कम होती जाती है, नील का आर्थिक महत्व बढ़ता जाता है और घाटी के धुर उत्तर में स्थित मिस्र में तो नील का इतना महत्व है कि बगैर नील के मिस्र के बसाव और विकास की कल्पना ही नहीं की जा सकती। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मिस्र और सूडान में नील का सर्वाधिक आर्थिक महत्व है और इन दोनों ही देशों के भू-क्षेत्रों का नील की जल-मात्रा वृद्धि में कोई खास सहयोग नहीं होता।

मिस्र में नील घाटी हाल्फा के निकट प्रवेश करती है। आगे नासिर झील नामक कृत्रिम जलाशय का विस्तार है जो अस्वान बांध तक फैला है। अस्वान जैसे ऊँचे बांध बनने के कारण भारी मात्रा में जल एकत्र होने से जलाशय का विस्तार कई सौ मीलों में हो गया है। अस्वान से आगे नील एक लम्बी, संकरी, संभवतया भूगर्भिक हलचलों से बनी, दरार में प्रवेश करती है। मिस्र में नील की घाटी का विस्तार लगभग 900 मील की लम्बाई में है जिसके स्वरूप के आधार पर प्रायः मिस्र को तीन भागों में विभाजित किया जाता है। एस्वुन से सूडान-मिस्र की सीमा पर स्थित घाटी हाल्फा तक 'ऊपरी मिस्र' एस्वुन से काहिरा तक 'मध्य मिस्र' तथा काहिरा से भूमध्य सागर तट की ओर का भाग (सम्पूर्ण डेल्टा प्रदेश) 'निचला मिस्र' कहलाता है।

नील की घाटी मिस्र का 'आर्थिक हृदय' प्रदेश है जहाँ देश का अधिकांश खाद्यान्न तथा कपास पैदा होते हैं। इस घाटी के स्वरूप निर्धारण, सिंचाई तथा कृषि के स्वरूप निर्धारण में नील के जल प्रवाह का आधारभूत हाथ रहा है अतः नील की घाटी (मिस्र में) का सही स्वरूप समझने के लिए नील जल प्रवाह का आद्योपांत अध्ययन करना वांछनीय है।

नील नदी विक्टोरिया झील में से उस स्थान पर से निकलती है जहाँ बुरुडी के पठारी भागों से आई हुई कागेरा नदी गिरती है। अतः कई भूगोलविद् यह मानते हैं कि यह कागेरा के जल को लेकर बनती है। विक्टोरिया से निकल कर नदी ओविन प्रपातों में होकर क्योगा झील में जा मिलती है। क्योगा झील से आगे मुरचिसन प्रपातों में होकर अलबर्ट झील के उत्तरी भाग में जा मिलती है। अलबर्ट झील के बारे में कहा जाता है कि यह भूगर्भिक हलचलों से बनी दरार में पानी भर जाने के कारण अस्तित्व में आई है। अलबर्ट झील से निकल कर मुख्य धारा जो अब अलबर्ट-नील या बहर-एल-जेबेल के नाम से जानी जाती है, उत्तर में सूडान की ओर बढ़ती है तथा नीमूले के निकट इस देश की सीमा में प्रवेश लेती है। यहाँ से इसे श्वेत नील के नाम से जाना जाता है। इस भाग में नदी की घाटी का स्वरूप एक गोर्ज के अनुरूप होता है। समुद्रतल से इस स्थान पर नील लगभग 1500 फीट

की ऊँचाई पर वह रही होती है इस प्रकार अपने उद्गम (3600 फीट) से लेकर यहाँ तक लगभग 2000 फीट नीचे उतर जाती है।

आगे नील एक विचित्र जल भाग में होकर गुजरती है जिसमें सैकड़ों मील तक दलदल, वनस्पति व जलानुवेधन के दर्शन होते हैं। इसे नो झील के नाम से पुकारा जाता है। इस भाग में दक्षिण से नील या बहर-एल जेबेल तथा पश्चिम से बहर-एल-गजल नामक नदियों के आकार मिलने से विस्तृत भाग में पानी फैल जाता है। जल की गति प्रायः रुकी-सी मालूम होती है। सर्वत्र वनस्पति, पेपरस-सेड व अन्य जलीय-वनस्पति नजर आती है। जिसे 'सूद' नाम से पुकारा जाता है। सूद शब्द का अर्थ स्थानीय भाषा में होता है अवरोध या रुकावट। अर्थात् अत्यधिक वनस्पति के कारण नील के जल प्रवाह में भारी अवरोध आ जाता है। सूद का विस्तार सैकड़ों मील के अर्धव्यास में है। वर्ष भर दलदल और मच्छरों के आधिक्य के कारण इस प्रदेश का कोई उपयोग भी नहीं है। भूगर्भविदों का अनुमान है कि सूद क्षेत्र पहले वस्तुतः एक झील थी जिसे नदियों के निरन्तर जमाव द्वारा भर दिया गया है और अब दलदलीय अवस्थाएँ हैं।

सूद क्षेत्र के बाद नील की दिशा, जो अब तक लगातार उत्तर की ओर थी, पूर्व की ओर हो जाती है। दिशा परिवर्तन का कारण संभवतया पश्चिम से आकर मिलने वाली बहर-एल-गजल का तेज जल प्रवाह है जो अत्यधिक वर्षा युक्त दार-फैरटिट के उच्च प्रदेशों से निकलने के कारण भारी मात्रा में जल से पूरित होती है। थोड़ा आगे चलकर इथोपिया के पठारों से निकल कर आने वाली सोबात नदी श्वेत नील में आकर मिलती है और इसके मिलने के स्थान से ही नील की दिशा में फिर परिवर्तन हो जाता है, वह उत्तर की ओर बहने लगती है। खारतूम के पास पूर्व की ओर से नीली नील मुख्य नील में आकर मिलती है। नीली नील इथोपिया के पठारी भागों (6000–8000 फीट) में स्थित टाना झील से निकल कर आती है। चूँकि इथोपिया के पठारी भागों में पर्याप्त वर्षा होती है अतः जल-पूर्ति की दृष्टि से नीली-नील का काफी महत्व है। नीली-नील और श्वेत नील (मुख्य नील) के बीच का दोआब क्षेत्र स्थानीय भाषा में गेजारिया के नाम से जाना जाता है। यह सूडान का अत्यन्त उपजाऊ भाग है।

नीली-श्वेत नील संगम से आगे नील प्रायः चौरस भाग में बहती है। यह भाग अधिकांशतः बलुआ व चूने के पत्थर का बना है। खारतूम से वादी हाल्फा तक के प्रवाह में इन्हीं चट्टानों की कटाव की विभिन्न गति के कारण नील ने कई प्रपात बनाए हैं। मोएंडर्स का स्वरूप भी सुस्पष्ट है। खारतूम से थोड़ा उत्तर में एड-डैमर के पास पूर्व से ही एक छोटी सहायक अतबारा नदी आकर मिलती है जो इथोपिया के पठार से आने के कारण विस्तार की तुलना में जल पूर्ति की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। अस्वान से लेकर खारतूम तक अनेक प्रपात हैं जिनमें छः महत्वपूर्ण हैं इन्हें
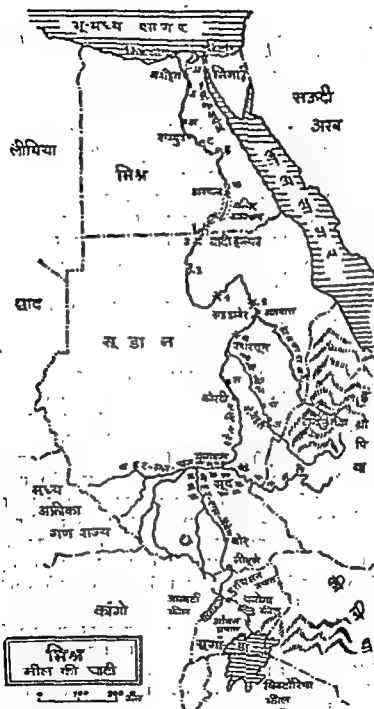
भू-मध्य सागर
सऊदी
अरब
लीबिया
मिश्र
चाड
स डा न
मध्य
अफ्रीका
गण राज्य
कांगो
विक्टोरिया
झील
मिस्र
नील की घाटी

चित्र-3

प्राय: 'नील के कैटरैक्टस' के नाम से जाना जाता है। इन प्रपातों को नीचे से ऊपर नाम दिए गए हैं। इनमें से प्रथम अस्वान द्वितीय वादी हाल्फा, तृतीय डोंगोला, चतुर्थ मैरोवे, पंचम बर्बर तथा छठा खारतूम से 50 मील डाउन स्ट्रीम मानी उत्तर मे स्थित है।

खारतूम वादी हाल्फा संभाग में घाटी अत्यन्त उथली एवं चौरस तल की है। मिश्र की सीमाओं में नील वादी हाल्फा के निकट प्रवेश करती है और यह प्रवेश वस्तुतः उस सँकरी घाटी (चौड़ाई 1 फर्लांग) में होकर है जो गौर्ज का आकार लिए वादी हाल्फा से अस्वान तक लगभग 60 मील की लम्बाई में फैली है। इसी सँकरी घाटी में अस्वान उच्च बाँध का जलाशय बनाया गया है जिसे नासिर झील के नाम से जानते हैं। अस्वान से आगे घाटी क्रमशः चौड़ी होती जाती है यहाँ तक कि नाग हम्मादी के पास तक पहुँचते-पहुँचते इसकी चौड़ाई लगभग 10 मील हो जाती है। इस संभाग में घाटी अत्यन्त चौड़ी एवं कुछ सीमा तक उथली है। पश्चिम में पर्तदार चट्टानें रेतीले रेगिस्तानी भाग में अदृश्य होती जाती हैं परन्तु घाटी के पूर्व में प्राचीन रवेदार चट्टानों नीस एवं ग्रेनाइट के खण्ड हैं जो वस्तुतः नील एवं लाल सागर के मध्य स्थित पठारी भाग का प्रतिनिधित्व करते हैं।

डेल्टा प्रदेश का प्रारम्भ काहिरा से होता है जहाँ से आगे मुख्य जल धारा कई उपजल धाराओं में हाथ की उंगलियों की तरह विभक्त हो जाती है। यहाँ नील इतनी उथली है कि जल प्रवाह नगण्य है फलतः परिवहन क्षमता के अभाव में साथ में आया हुआ मलवा जमता जाता है और क्रमशः जल धाराओं का विभक्तिकरण हो जाता है। इस संभाग में नील की जलधाराओं में पश्चिम में स्थित रौसेटा एवं पूर्व में स्थित डैमेटा महत्वपूर्ण हैं। समुद्र के पास तट प्रदेश दलदलीय हो गया है। यत्र-तत्र रेतीले टीवे और लैगून झील भी है। इन झीलों में मझाला (800 वर्गमील) सबसे बड़ी है।

नील का जल प्रवाह साल के विभिन्न समयों में अलग-अलग होता है। चूँकि इसकी सहायक नदियों के उद्गम एवं विकास प्रदेशों में विभिन्न समय में वर्षा होती है अतः बाढ़ के अतिरिक्त पानी के कारण नील में साल में कई दफा पानी का बहाव जोरों पर होता है। *इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि गर्मियों के दिनों* में जब दुनियाँ की अन्य नदियाँ सूख रही होती हैं तब नील में बाढ़ होती है। जहाँ तक मुख्य नील का प्रश्न है उसके उद्गम स्थलों से उसे वर्ष भर समान मात्रा में जल प्राप्ति होती है क्योंकि विक्टोरिया झील के आसपास वर्ष भर लगभग समान वर्षा होती है। निस्संदेह मार्च और सितम्बर में जल मात्रा में थोड़ी वृद्धि हो जाती है।

सहायकों में नील नदीका जल-सहयोग उल्लेखनीय है। यह वर्ष भर प्रवाहित रहती है। वर्ष के प्रथम चार महीनों में तो इसमें बहुत कम पानी होता है परन्तु जन के महीने से चढ़ना प्रारम्भ होता है तथा जुलाई अगस्त में बढ़ते-बढ़ते सितम्बर में चरम सीमा पर पहुँच जाता है। अनुमानतः खारतूम से नीचे प्रवाहित नील में

जून से अक्टूबर तक जो जल गुजरता है उसका दो-तिहाई भाग नीली नील से ही सम्बन्धित होता है। खारतूम के निकट इन दिनों 22 फीट तक पानी चढ़ आता है। इस प्रकार नीली नील की बाढ़ से ही मिश्र को गर्मियों के तपते समय में जल उपलब्ध होता है। जैसे ही नीली नील की बाढ़ समाप्ति पर होती है सोवत नदी से प्राप्त जल उसकी कमी पूर्ति (यद्यपि आंशिक) करने आ जाता है। वैसे सोबत में भी बाढ़ जून से प्रारम्भ होती है लेकिन निचली घाटी तक पहुँचते-पहुँचते अक्टूबर-नवम्बर का महीना हो जाता है। यानी नील से मिलने के स्थान पर सोबत नदी की बाढ़ का प्रभाव नवम्बर से प्रारम्भ होकर जनवरी तक रहता है। देरी होने का कारण सोबत के मध्य एवं निचली घाटी में विस्तृत रूप से पाये जाने वाले 'सूद' है। बहर-एल-गजल से आने वाले अतिरिक्त जल की पर्याप्त मात्रा नो झील के सूद क्षेत्र में विलीन हो जाती है। अतवारा नदी गर्मियों एवं प्रारम्भिक पतझड़ के दिनों में बाढ़युक्त होती है। इन परिस्थितियों में नील की निचली घाटी (मिश्र) में सर्वाधिक बाढ़ पतझड़ के दिनों में होती है।

नील नदी के अस्वान पर एकत्र किए गए आंकड़ों और उनके विश्लेषण से पता चलता है कि नील में सर्वाधिक जल प्रवाह सितम्बर के महीने में होता है। इस समय के जल प्रवाह में से 10 प्रतिशत भाग श्वेत या मुख्य नील का, 68 प्रतिशत भाग नीली नील का तथा लगभग 22 प्रतिशत भाग अतवारा नदी का होता है। प्रतिदिन इन दिनों, औसतन 700 मिलियन घन मीटर जल प्रवाहित होता है। मई के महीने में नील में सबसे कम जल-बहाव होता है। इस समय के जल प्रवाह में से 83% श्वेत नील तथा 17% भाग नीली नील का होता है। प्रति दिन का औसत जल प्रवाह 45 मिलियन घन मीटर होता है।[4] एक औसत वर्ष में अस्वान पर नील के आने वाले कुल जल प्रवाह में से, 84% भाग इथोपिया के पठारों से बहकर आया होता है। शेष 16% भाग 'पूर्वी-अफ्रीकन-झील-पठार' से सम्बन्धित होता है। इथोपियन पठार से निकल कर आने वाली तीन नदियाँ (नीली नील, सोबत, अतवारा) भारी मात्रा में जल उपलब्ध कराती हैं।

जलवायु दशाएं

मिश्र की जलवायु-वर्षा को साधारणतः दो भागों में बाँटा जा सकता है। एक ठंडा मौसम या शरद ऋतु जो नवम्बर से अप्रेल तक होती है। दूसरा गर्मियों का मौसम जिसका विस्तार मई से अक्टूबर तक होता है। सर्दियाँ प्रायः ठंडी होती हैं। गर्मियाँ भीषण गर्म होती हैं। यह भीषणता उन गर्म एवं तीव्र हवाओं के कारण और भी बढ़ जाती है जो गर्मियों में लगातार चलती रहती हैं। 'खेमसिन' नाम से पुकारी जाने वाली इन हवाओं की गति कभी-कभी इतनी तीव्र होती है कि सम्पूर्ण आकाश मिट्टी से भरा प्रतीत होता है। वस्तुतः ये हवाएं उन चक्रवातों के

4. Mount Joy, A.B. Clifford Embleton-Africa, A Geographycal Study p. 286.

अग्रभाग में चलती हैं जो भूमध्य सागर के सहारे सहारे पूर्व की ओर बढ़ते हैं। गर्मियों में तापक्रम प्रायः 85° फं० से ऊपर होता है जबकि सर्दियों में 55° फं० तक नीचे चला जाता है। इस प्रकार वार्षिक तापांतर बहुत होता है। गर्मियों में रातें अपेक्षाकृत ठंडी होने से दैनिक तापांतर भी पर्याप्त होता है। जल एवं वनस्पति की कमी गर्मियों की भीषणता और भी बढ़ा देती है। व्यावहारिक रूप में मिश्र में कोई बसंत या पतझड़ की ऋतु नहीं है।[5]

वर्षा की दृष्टि से मिश्र भाग्यहीन है। जो कारण सहारा प्रदेश को रेगिस्तान बनाने के लिए उत्तरदायी हैं वस्तुतः उन्हीं के कारण यहाँ वर्षा का अभाव है। कर्क रेखा पर स्थित (22° से 33° उत्तरी अक्षांश) होने के कारण सम्पूर्ण देश वर्ष के ज्यादातर दिनों में अधिक वायु भार की पेटी में रहता है जहाँ हवाओं की गति केवल सम्भवत होती है। केवल भूमध्य सागर के तटवर्ती प्रदेश ही ऐसे हैं जहाँ जाड़ों के दिनों में कुछ वर्षा हो जाती है परन्तु यह भी ज्यादा नहीं होती क्योंकि इस सम्भाग में पछुआ हवाओं की गति प्रतिकूल दिशा में होती है। नील के डेल्टा प्रदेश में वर्षा का औसत 8-10 इंच होता है। सिकंदरिया में वार्षिक औसत 8 इंच है। काहिरा में 1.5 इंच से ज्यादा वर्षा नहीं होती। डेल्टा प्रदेश में जाड़े के चार माह वर्षा होती है, जनवरी का माह सबसे ज्यादा वर्षा वाला होता है परन्तु इस माह में भी वर्षा का स्वरूप क्या होता है इसका अनुमान सिकंदरिया तथा काहिरा की जनवरी की वर्षा मात्रा (क्रमशः 2 इंच तथा 0.4 इंच) से लगाया जा सकता है।

मिश्र के तीन प्रतिनिधि नगरों, जो धुर दक्षिण, धुर उत्तर एवं मध्य में स्थित हैं के ताप एवं वर्षा की औसत दशाओं को देखने से स्थिति और भी स्पष्ट हो जाती है।

	सर्वाधिक ठंडा माह (जनवरी)	सर्वाधिक गर्म माह (जून)	वार्षिक औसत (तापांतर)	वार्षिक वर्षा (इंचों में)
1. वादीहाल्फा (दक्षिण)	58° फं०	89° फं०	31° फं०	0.0
2. एस्युत (मध्य)	53° फं०	85° फं०	32° फं०	0.0
3. काहिरा उत्तर	53° फं०	81° फं०	28° फं०	1.3

मिट्टी एवं वनस्पति :

नील के जल के अलावा नील-घाटी एवं डेल्टा प्रदेश की कृषि के स्वरूप को निर्धारित करने वाले तत्वों में मिट्टी सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है। घाटी की अधिकांश मिट्टियाँ हल्की या गहरी दोमट प्रकार की हैं परन्तु डेल्टा प्रदेश में काली चिकनी

5. Stamp. L. D.—Africa, A Study in tropical development p. 202.

मिट्टी की मोटी पर्तें पाई जाती हैं। इन्हें स्थानीय भाषा में 'सोडा' कहते हैं। दक्षिण एवं पश्चिम में विशेषकर रेतीले रेगिस्तान (एर्ग) के सीमांत क्षेत्रों में रेतीली मिट्टियाँ पायी जाती हैं। चूँकि बाढ़ के साथ आने वाली मिट्टी की पतली पर्तें घाटी में प्रति वर्ष बिछती हैं अतः उपजाऊ शक्ति साधारणतया सभी प्रकार की मिट्टियों की ज्यादा है। पिछले दो दशकों में ऊपरी मिस्र में नित्यावाही नहरों द्वारा सिंचाई होने के कारण, निस्संदेह मिट्टी में नमक की मात्रा बढ़ गयी है। यहाँ पर्याप्त भूमि रेह प्रकार की हो गयी है। नीलो नील की बाढ़ के साथ इथोपियन पठार से जो लावाकृत चट्टानों का चूर्ण बहकर आता है घाटी की उत्पादकता को बनाए रखने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

प्राकृतिक वनस्पति के नाम पर यत्र-तत्र, परन्तु बहुत कम, कंटीली झाड़ियाँ मिलती हैं। मरुद्यानों में खजूर के पेड़ ही प्रधान प्राकृतिक वनस्पति हैं। नील की घाटी में सर्वत्र कृषि है अतः वनस्पति के नाम पर यत्रतत्र कुछ वृक्ष ही मिलते हैं। 'सूद' क्षेत्रों में 'रीडस' मिलती हैं। अधिकांश भाग वनस्पति रहित है। अत्यधिक गर्मी आर्द्रता तथा वर्षा की कमी के कारण प्राकृतिक वनस्पति है ही नहीं।

□□□

मिश्र : आर्थिक विकास

कृषि मिश्र के आर्थिक ढाँचे का प्रधान आधार है। ऊपरी मिश्र में जितना कृषि उत्पादन होता है वह लगभग समस्त घरेलू आवश्यकता की पूर्ति में खप जाता है। पिछले 100 वर्षों में डेल्टा प्रदेश में इस प्रकार की कृषि फसलें विकसित की गयी हैं जिनका व्यवसायिक महत्व है और इस देश के लिए विदेशी मुद्रा अर्जित करती हैं। कृषि-तकनीकियों के विकास, सिंचाई एवं खाद की मात्रा में वृद्धि से निस्सन्देह यहाँ के कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है परन्तु जनसंख्या भी उतनी ही, बल्कि उससे अधिक गति से बढ़ी है अतः केवल कृषि क्षेत्रों पर आर्थिक दृष्टि से निर्भर नहीं रहा जा सकता। चूँकि देश में खनिज पदार्थों का अभाव है अतः उद्योग-धन्धों में यह देश स्वावलम्बी और आधुनिक स्तर तक विकसित नहीं हो सकता। शक्ति के साधनों के रूप में जल एवं पैट्रोल ही भविष्य की सम्भावनाएँ हैं। अस्वान बाँध योजना पूरी हो चुकी है अतः निश्चित रूप से नील की घाटी में कृषिगत क्षेत्र का विस्तार होगा परन्तु वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियों को देखते हुए भविष्य में सही रूप से नहीं झाँका जा सकता।

अरब-इजराइल संघर्ष मिश्र के आर्थिक विकास में बहुत बड़ी बाधा है। पिछले दो-तीन दशकों में मिश्र को अपनी राष्ट्रीय आय का बहुत बड़ा भाग यौद्धिक तैयारियों में होम करना पड़ा है। आय का एक बड़ा स्रोत स्वेज नहर भी इस संघर्ष के कारण 1967 से 1973 तक बन्द रही। उसे संचालित करने और आधुनिक जलयानों के उपयुक्त बनाने के लिए करोड़ों रुपयों का व्यय आवश्यक था। सिनाई के तेल क्षेत्र भी तभी मिश्र के लिए उपयोगी हो सकते हैं जबकि यह संघर्ष समाप्त हो। यह इस संघर्ष का ही फल है कि भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय कर्नल नासिर के सतत प्रयत्नों के बावजूद भी मिश्र आर्थिक दृष्टि से मजबूत नहीं हो सका। श्री नासिर ने मिश्र के सुनियोजित आर्थिक विकास के लिए 1952 में एक स्थायी 'राष्ट्रीय उत्पादन समिति' की स्थापना की। 1960–65 की अवधि के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना बनाई गई। 1961–62 में बैंक, बीमा कम्पनियों एवं राष्ट्रीय महत्व के उद्योगों का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया। 1966 में मिश्र ने सप्तवर्षीय योजना (1966–72) के लिए प्रारूप तैयार किया। इस योजना में

उद्योग, परिवहन, शक्ति उत्पादन, कृषि व स्वेज नहर के विकास पर भारी राशि खर्च करने का निश्चय किया गया। इस प्रकार देश के समुचित विकास के लिए समाजवादी व्यवस्था और सहकारिता को प्रोत्साहन दिया गया परन्तु वांछित स्तर तक आर्थिक विकास न हो सका। कभी गृहयुद्ध, कभी आन्दोलन, स्वेज संघर्ष, अरब-इजराइल संघर्ष और सत्ता-संघर्ष आदि समस्याओं ने यहाँ की अर्थ-व्यवस्था तथा योजनाओं को बुरी तरह प्रभावित किया। इस सन्दर्भ में 'खारतूम सम्मेलन'[6] व 'अरब साझा बाजार' भी उल्लेखनीय है जिनके पूर्णतः क्रियान्वित होने पर मिस्र को आर्थिक लाभ का प्रावधान है।

कृषि :

कृषि का मिस्र के आर्थिक ढांचे में कितना महत्वपूर्ण स्थान है इसका अनुमान इस तथ्य से हो सकता है कि इस देश की राष्ट्रीय आय का 95% एवं निर्यात किए गए मालों का 85% भाग कृषि क्षेत्रों से उपलब्ध है। प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में तीन-चौथाई से अधिक जनसंख्या कृषि कार्यों में संलग्न है। कृषि कार्यों की सघनता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि देश के आर्थिक ढांचे में इतना महत्वपूर्ण स्थान रखने वाली कृषि इस देश के समस्त भू-क्षेत्र के 3% से भी कम भू-भाग (नील की घाटी) में सीमित है।

नील की घाटी में जलधारा के सहारे-सहारे विस्तृत 5 से 15 मील चौड़ी पट्टी एवं डेल्टा क्षेत्र में लगभग 6,000 वर्ग मील भू-क्षेत्र देश का सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यह भू-क्षेत्र ही मिस्र के आर्थिक ढांचे का आधार है जिसमें कृषि प्रधान आर्थिक उद्यम है। कृषि में कुल श्रमिक शक्ति का 45% लगा हुआ है तथा निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का 50% भाग कृषि क्षेत्रों से ही प्राप्त होता है।

पिछले 25–30 वर्षों में कृषि उत्पादन में 118% की वृद्धि हुई है। 1952 में उत्पादन 8·25 मि० टन था जो बढ़कर 1977 में 18 मिलियन टन हो गया और वर्तमान (1983) में 20 मि० टन से अधिक है। कहना न होगा कि इस विकास की पृष्ठभूमि में नवीन कृषि योग्य भूमि का प्राप्ति, कृषि विधियों की वैज्ञानिकता, रेगिस्तानों को सींच कर एवं डेल्टाओं को सुखाकर कृषि योग्य भूमि का विस्तार तथा अस्वान बाँध एवं सिंचाई नहरों का निर्माण है। अस्वान बाँध के निर्माण से लगभग 1·5 मि० एकड़ भूमि को रेगिस्तान से कृषि क्षेत्रों में परिवर्तित कर दिया है। 7,00,000 एकड़ घाटी क्षेत्र, जिसमें अनियमित रूप से यदाकदा पानी आने से खेती की जाती थी, को स्थायी रूप से सिंचित क्षेत्र बना दिया गया

6. खारतूम सम्मेलन में सउदी अरब, लीबिया व कुवैत ने मिलकर मिस्र को प्रतिवर्ष 65 मिलियन डालर देना स्वीकार किया है।

है। अब इन क्षेत्रों में एक के बजाय दो-तीन फसलें होती हैं। इस क्षेत्र को जोड़कर अब कुल सिंचित क्षेत्र लगभग 6 मिलियन एकड़ हो गया है। यहां सिंचाई के लिए 'स्प्रिंकलिंग' विधि को अपनाया गया है ताकि जल बौछारों के रूप में भूमि से स्पर्श करे, मिट्टी के कटाव की गुंजाइश कम हो। कितनी तीव्र गति से इस विधि की सिंचाई का प्रचार-प्रसार हो रहा है इसका अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1980 में डेल्टा प्रदेश में 50,600 एकड़ भूमि की सिंचाई इस विधि से होती थी जो बढ़कर 1983 में 150,000 एकड़ हो गयी। इसी विधि से देश के अन्य भागों में लगभग 8,00,000 एकड़ भूमि को सिंचित बनाने का कार्यक्रम चालू है। नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग भी यहाँ तेजी से बढ़ा है। 1977 एवं 1982 के बीच पांच वर्षों में इसमें 214% की वृद्धि हुई। इस वर्ष (1982) यहां 7 लाख टन से अधिक नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग हुआ।

इन सभी प्रयासों का सुपरिणाम है कि मिस्र के प्रति इकाई उत्पादन में बड़ी तेजी से वृद्धि हुई है। यह तथ्य निम्न आंकड़ों से सुस्पष्ट है—

प्रति हैक्टे० (2.4 एकड़) उत्पादन
(उत्पादन टनों में);

	गेहूं	मक्का	चावल	आलू	गन्ना
मिस्र	3·7	3·7	5·2	22	80
विश्व औसत	1·7	2·9	2·6	16	55

इन सबके बावजूद जीवन-पोषण स्तर के ऊँचा उठने, नगरों की ओर जनसंख्या के पलायन की प्रवृत्ति एवं जनसंख्या में वृद्धि आदि तत्वों के सम्मिलित प्रभाव के कारण कृषि उत्पादनों में स्वावलम्बिता की स्थिति नहीं बन पा रही है। वरन् कमी की मात्रा अब भी पर्याप्त है। खाद्यान्नों में भी इस देश को 40% अन्न आयात करना पड़ता है। इस अभाव की पूर्ति एवं स्वावलम्बन की स्थिति लाने की दृष्टि से एक खाद्य पूर्ति कार्यक्रम (Food Security Programme) बनाया गया है। इसके अन्तर्गत इस शताब्दि के अन्त तक 3 मिलियन एकड़ अतिरिक्त भूमि कृषि क्षेत्रों के अन्तर्गत लाने का लक्ष्य है।

निस्संदेह, पिछले 30 वर्षों में कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है परन्तु अन्य क्षेत्रों में वृद्धि होने से देश के कुल उत्पादन में जो प्रतिशत उसमें ह्रास हुआ है। यह तथ्य निम्न तालिका से प्रकट है—

देश के कुल उत्पादन में कृषि का हिस्सा प्रतिशत

वर्ष	1953	1975	1976	1977	1978	1980	1981
कृषि का उत्पादन प्रतिशत	36%	30%	28%	26%	25%	23%	18%

मिस्र में पशु-पालन व्यवसाय में भी पिछले दशकों में विकास हुआ है। पशु सम्बन्धी उत्पादनों का मूल्य कुल कृषि आय का लगभग 1/4 (27%) होता है। देश में पाले कुल पशुधन का 70% भाग उन छोटे कृषकों से सम्बन्धित है जिनके फार्मों का आकार 5 एकड़ से कम है। वर्तमान मे मिस्र में पशुधन का आकार निम्न प्रकार है—

ढोर (गाय, बैल, बछड़ा)	2·1 मिलियन
भैंस	2·3 ,,
भेड़	2·8 ,,
बकरियाँ	1·4 ,,
गधे, खच्चर	1·5 ,,
ऊँट	1,15,000
घोड़े	32,000

जीवन-यापन स्तर के ऊँचा उठने के साथ मांस खपत मात्रा में वृद्धि होती जा रही है। इस वृद्धि की गति का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि केवल 2 वर्षों 1978–80 में मांस की खपत मात्रा में 34% की वृद्धि हुई।

भूमि सुधार कार्यक्रम :

राजतन्त्र के समय में कृषिगत भूमि का असमान वितरण एक बहुत बड़ी समस्या और अनेक प्रकार की सामाजिक कुरीतियों का आधारभूत कारण था। 1952 के पूर्व देश की लगभग दो-तिहाई कृषि भूमि केवल 6% भू स्वामियों के पास थी जबकि 2 मिलियन किसान केवल 13% कृषि-भूमि के मालिक थे। इन किसानों के पास औसतन रूप में 1–1 फैदान से भी छोटा खेत था। अन्य दो मिलियन किसान ऐसे थे जिनके पास कृषि-भूमि के नाम पर एक इंच भी जमीन नहीं थी। बड़े-बड़े अमीर (जमीदार) अपने खेतों को कई टुकड़ों में बाँट कर बँटाई पर इन भूमिहीन किसानों को देते थे और बदले में उपज का एक बड़ा भाग ले लेते थे। किसान चिलकती धूप में अपना पसीना बहाता था और इन भू-अधिपतियों के वर्ष के ज्यादातर दिन सिकन्दरिया या काहिरा में बीतते थे।

1952 में जब शासन की बागडोर क्रान्तिकारी सरकार के हाथ में आयी तो भूमि सुधार अधिनियम पास किया गया जिसके अनुसार कोई भी 300 फैदान से अधिक भूमि अपने पास नहीं रख सकता था। अतिरिक्त भूमि को भूमिहीनों में वितरित किया गया। 1961 में एक और भूमि-सुधार अधिनियम बना जिसके अनुसार भूमि के स्वामित्व की अधिकतम सीमा 100 फैदान रखी गयी। इस प्रकार जमींदारी प्रथा को जड़मूल नष्ट करने के प्रयत्न किए गए। 1963 में एक अधिनियम के अन्तर्गत सभी विदेशियों से भूमि छीन ली गयी। छीनी हुई भूमि (जमींदारों, विदेशियों व धार्मिक संस्थानों से) के बदले में 30 या 40 साला बाँडस 3% ब्याज की दर से क्षति पूर्ति के रूप में दे दिए गए। वक्फ से सारी जमीन छीन कर भूमिहीन किसानों में बाँट दी गयी। परिणामतः आज छोटे-छोटे खेतों और कम भूमि वाले स्वयं-भू किसानों की संख्या ज्यादा है। निम्न सारणी से यह भली-भाँति स्पष्ट है।

भू-स्वामी किसान एवं उनके खेत
(1000 में)

खेतों का आकार (फैदान में)	भू-स्वामी किसान		क्षेत्र	
	संख्या	%	फैदान	%
5 फैदान से कम	2,965	94·3	3,353	54·8
5– 10	61	2·0	527	8·6
10– 20	29	0·9	815	13·3
20– 50	6	0·2	392	6·4
50–100	4	0·1	421	6·9

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि मिश्र के अधिकांश खेत छोटे-छोटे हैं। लगभग 95% खेतों का आकार 5 फैदान से कम है एवं 97% खेत 7 फैदान से छोटे हैं। प्रति एक हजार खेतों में से केवल एक ही खेत ऐसा है जिसका आकार 50 फैदान से बड़ा है। अन्य कृषि प्रधान देशों की तुलना में मिश्र की कुल कृषि संलग्न भूमि भी नगण्य है यह तो उपजाऊ मिट्टी (वर्तमान में खाद भी दी जाने लगी है) यूरोपी जलवायु, नियमित एवं विश्वसनीय जलपूर्ति (नील से) एवं व्यवस्थित सिंचाई आदि तत्वों की अनुकूलता का ही परिणाम है कि इस छोटे से कृषिगत क्षेत्र से भी मिश्र अपने आर्थिक ढाँचे को बनाए हुए है। पिछले दो दशकों में विकसित तकनीकों एवं वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग भी उत्पादन बढ़ाने में

सहयोगी रहा है। अस्वान बाँध योजना के पूरा हो जाने के फलस्वरूप कृषि योग्य नई भूमि भी प्राप्त हुई है। छोटे-छोटे खेतों को जोड़कर सामूहिक एवं सहकारी व्यवस्था के अन्तर्गत कृषि कराने की योजना का श्रीगणेश भी कुछ क्षेत्रों में हो चुका है। इससे निस्सन्देह मिश्र के फैलाहिन (किसान) को मदद मिलेगी क्योंकि अत्यधिक गरीबी के कारण न वह अच्छे बीज उपलब्ध कर सकता है और न अच्छे जानवर। खेत के बहुत छोटे होने के कारण यन्त्रों के प्रयोग का कोई प्रश्न ही नहीं है। साधारणतः कृषि का ढंग भी पुराना ही है।

फसल चक्र :

नील की बाढ़ एवं बाँधों में संचित जल से कृषि के लिए लगभग वर्ष भर जल उपलब्ध रहता है। गर्मियों के अंत में, पतझड़ तथा सर्दियों के प्रारम्भ में नील में ही पर्याप्त जल होता है। प्रारम्भिक गर्मियों में जब नील का तल बहुत नीचा हो जाता है तो बाँधों से पानी मिल जाता है। इसी का परिणाम है कि यहाँ खेतों में गर्मी एवं सर्दी दोनों की फसलें आसानी से (उसी खेत में) हो जाती है। यद्यपि फसल-चक्र इस प्रकार का है कि प्रति दो वर्ष में तीन फसलें ली जाती हैं। साधारणतः फसल-चक्र इस प्रकार रहता है—

प्रथम वर्ष— 1. नवम्बर से मई : खाद्यान्न (गेहूँ-जौ) बीन्स, प्याज
2. जून से जुलाई : परती भूमि
3. जुलाई से नवम्बर : मक्का
4. दिसम्बर से जनवरी : परती या बरसिम (मिश्री घास)
दूसरा वर्ष— 1. फरवरी से नवम्बर : कपास

मध्योत्तरी डेल्टा प्रदेश में चावल गर्मी की फसल के रूप में बोया जाता है जबकि ऊपरी मिश्र में कपास का कुछ स्थान गन्ना हथिया लेता है। इस प्रकार 24 महीने में केवल 4 महीने ही भूमि परती पड़ी रहती है और प्रति वर्ष बोया गया भू-क्षेत्र कुल कृषिगत उपजाऊ भू-क्षेत्र से ज्यादा रहता है। निम्न सारणी से यह भली भाँति स्पष्ट है—

मिश्र में कृषि-संलग्न एवं फसल-संलग्न भू-क्षेत्र 1897–1960[7]

वर्ष	कृषि-संलग्न भू-क्षेत्र फैदानों में	बोया गया भू-क्षेत्र फैदानों में
1897	5,099,070	6,871,700
1907	5,357,600	7,624,620

7. Mount Joy, A.B. & Clifford Embleton-Africa, A Geographical Study p. 306.

1917	5,307,534	7,724,980
1927	5,529,756	8,606,340
1937	5,333,330	8,362,340
1947	5,797,600	9,138,570
1960	6,100,000	10,367,730

1981 में मिश्र का कुल कृषिगत क्षेत्र 6·3 मिलियन फैदान (1 फैदान = 1.038 एकड़) था इसमें से 4,869,000 फैदान सर्दी की फसलों में, 5,012,000 फैदान गर्मी की फसलों में एवं 613,000 फैदान नील की फसलों में संलग्न थी।[8]

प्रधान फसलें :

कपास मिश्र की प्रमुख कृषि उपज है जिसका महत्व एक मुद्रादायिनी फसल के रूप में मिश्र की आर्थिक व्यवस्था में भारी है। जैसाकि फसल-चक्र में स्पष्ट है हर दूसरे वर्ष में अधिकतर खेतों में कपास ही पैदा की जाती है। कपास के अलावा गेहूँ, जौ, ज्वार-बाजरा, मक्का, चावल आदि उल्लेखनीय हैं। चावल प्रमुखतः डेल्टा प्रदेशों में सीमित है जबकि मोटा अनाज ऊपरी मिश्र में। इस प्रकार समस्त कृषि उपज नील-घाटी से सम्बन्धित है। घाटी से बाहर कृषि मरुद्यानों में सीमित है। जहाँ कृषि फसलों के अतिरिक्त फल, मेवा, अंगूर, जैतून तथा भारी मात्रा में खजूर पैदा किए जाते हैं। उत्तर-पश्चिम में स्थित लगभग 700 वर्गमील में विस्तृत फायुम धसावग्रस्त मरुद्यान में कृषि विकास का आधार वह नहर है जो नील का जल यहाँ तक लाती है। बह-एल-यूसुफ नामक इस नहर के बारे में यह कहा जाता है कि इसे 'जोसेफ ऑफ टैस्टामेंट' ने बनवाया था। विविध फसलों में संलग्न भूमि और उनकी उत्पादन मात्रा निम्न प्रकार है।

मिश्र की प्रधान कृषि फसलें—1982[9]

(संलग्न भू क्षेत्र एवं उत्पादन)

फसल	संलग्न भू-क्षेत्र (1000 हैक्टे० में)	उत्पादन (1000 टनों में).
गेहूँ	577	2,017
जौ	45	122
बीन्स (शुष्क)	7	13
प्याज	21	657
मक्का	817	2,709
ज्वार बाजरा	174	633
गन्ना	108	8,700
चावल		2,300

8. The Statesman's year book 1981-85 p 432

9. The Statesmans's year booK 1984-85 p. 433

पिछले 10–15 वर्षों में कपास में संलग्न भू-क्षेत्र में ह्रास हुआ है। इसका कारण जहाँ कपास की प्रति एकड़ उपज तथा रेशे की लम्बाई में वृद्धि है वहाँ यह नीति भी है कि मिश्र गन्ना (शक्कर के लिए) तथा मक्का जैसी फसलों का विस्तार चाहता है अतः अतिरिक्त भूमि की आवश्यकता है। यही कारण है कि 1958 में कपास में जो 1.9 मिलियन फैदान भूमि लगी थी उसे घटा कर 1968 में 1.4 मिलियन फैदान कर दिया गया। असवान बाँध योजना से ऊपरी मिश्र में जितनी अतिरिक्त भूमि सिंचाई के अन्तर्गत लायी जा रही है उसका बड़ा भाग गन्ने को दिया जा रहा है। इसी प्रकार डेल्टा प्रदेश में भूमि सुधार कार्यक्रमों के फल-स्वरूप उपलब्ध भूमि में चावल की खेती का विस्तार किया जा रहा है।

कपास :

पिछले कई दशकों से कपास मिश्र की सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण फसल रही है। मिश्र की कृषि में कपास का महत्व इससे जाना जा सकता है कि कुल कृषिगत भूमि का लगभग 20% भाग 1·5 मिलियन एकड़ इस अकेली फसल में संलग्न रहता है और यह अकेली फसल पिछले दशकों से मिश्र की अर्थ व्यवस्था का स्तम्भ रही है। देश से जितना भी निर्यात होता है उनमें 55–60% भाग कपास का होता है। वस्तुतः आज से लगभग 125 वर्ष पूर्व कपास की खेती का प्रारम्भ ही व्यावसायिक उद्देश्य की पूर्ति हेतु किया गया था। अमेरिकन गृहयुद्ध के समय जब लंकाशायर को वहाँ से कपास आना बन्द हो गया तो तत्कालीन मिश्री शासक मोहम्मद अली ने डेल्टा प्रदेश में इसकी खेती प्रारम्भ करवाई। इसी के कारण डेल्टा प्रदेश में उसने कई बाँध बनवाए जिनसे कपास क्षेत्रों को सिंचाई की सुविधा हो गई।

मिश्र की कपास चमक, मजबूती और रेशे की लम्बाई की दृष्टि से विश्व की सर्वोत्तम कपास-किस्मों में से मानी जाती है अतः विश्व बाजारों में इसकी माँग पर्याप्त है। उपज श्रेष्ठता के आधार के रूप में यहाँ की धूपीली अवधि, उपजाऊ तथा चिकनी डेल्टाई मिट्टी, सस्ता श्रम पाले रहित मौसम आदि उल्लेखनीय हैं। चूँकि खाद्य फसलों की तुलना में कपास का बाजार मूल्य सदा ज्यादा रहता है अतः किसानों की रुचि और झुकाव कपास उत्पादनों में है। विश्व माँग को देखते हुए अच्छी कपास-किस्मों के विकास के लिए गीजा में एक शोध केन्द्र स्थापित किया गया है जो कई विकसित किस्मों की खोज में सफल रहा है। लम्बे रेशे वाली, चमकदार तथा मुलायम मिश्री की विश्व के बाजारों में सदा माँग बनी रहती है। रेशम जैसी मुलायम इस कपास का प्रयोग विशिष्ट उत्पादनों के लिए ही किया जाता है। यथा, उच्च श्रेणी के महीन कपड़े, टाइप राइटर के फीते, पुस्तकों की जिल्द के सुन्दर, मजबूत कपड़े इसी से तैयार किए जाते हैं। अपने कुल उत्पादन का लगभग 70% भाग मिश्र निर्यात कर देता है। 30% उत्पादन स्वदेशी सूती मिलों में खप जाता है।

कपास उत्पादन का प्रधान क्षेत्र डेल्टा प्रदेश व नील की निचली घाटी है। ऊपरी मिश्र में सदा से खाद्यान्न फसलें पैदा की जाती हैं। अन्य कारणों के साथ कपास क्षेत्रों की तट के निकटवर्ती स्थिति का एक यह भी कारण हो सकता है कि यह फसल मुख्यतः निर्यात के लिए तैयार की जाती है। अतः सिकन्दरिया बन्दरगाह के निकट होने से परिवहन-मूल्य में पर्याप्त बचत हो जाती है। कई ऐसे प्राकृतिक कारण हैं जिन्होंने डेल्टा प्रदेश में कपास की खेती को प्रोत्साहित किया है। डेल्टा प्रदेश में काली चिकनी मिट्टी का बाहुल्य है जो कपास के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। जबकि ऊपरी घाटी में रेतीली मिट्टी 'सफरा' का ग्राधिक्य है। डेल्टा प्रदेश में कुछ प्राकृतिक रूप से वर्षा होती है। शेष जल पूर्ति नियमित और नियंत्रित नहरों द्वारा कर ली जाती है। चूंकि यहाँ नील का जल अनेक जलधाराओं में विभक्त है और कपास क्षेत्र इनके मध्य में स्थित हैं। अतः सिंचाई अपेक्षाकृत सस्ती भी पड़ती है। डेल्टा प्रदेश में अनेक बाँध हैं जिनसे वर्ष के प्रत्येक भाग में जल की सुविधा उपलब्ध रहती है। पाला बिल्कुल नहीं पड़ता। धूपीली अवधि पर्याप्त लम्बी होती है। सम्भवतः इन परिस्थितियों ने इस प्रदेश और मोटे तौर पर सम्पूर्ण देश का प्रति एकड़ उत्पादन लगभग 500 पौण्ड कर दिया है। इस मात्रा की तुलना भारत (100) ब्राजील (200) पीरू (390) तथा अमेरिका (200) आदि अन्य कपास उत्पादक देशों से की जा सकती है।

साधारणतः कपास डेल्टा प्रदेश में मार्च में बो दी जाती है। अगले तीन-चार महीने तक हर पखवारे में पानी दिया जाता है। इन दिनों सिंचाई आवश्यक है क्योंकि इस प्रदेश में गर्मियाँ सूखी होती हैं। गर्मियों के उत्तरार्द्ध में ज्यों-ज्यों गर्मी और धूप की मात्रा बढ़ती जाती है। डोढ़ी खिलने लगती है, रेशे की चमक बढ़ती है। अक्टूबर के महीने में कटाई प्रारम्भ हो जाती है। कपास की जड़ें जमीन की उपजाऊ शक्ति बहुत खींचती है इसलिए कपास की द फसलों के बीच में उसी भूमि पर अन्य फसलें बोई जाती है या जमीन परती छोड़ दी जाती है। इस संभाग में फसल-चक्र इसीलिए प्रारम्भ किया गया है। पिछले दशक में गीजा स्थित शोध केन्द्र ने यह मत प्रकट किया है कि वर्तमान फसल-चक्र में परिवर्तन किया जाए तथा कपास की फसल दो साल के बजाए तीन या चार साल के अन्तर पर बोई जाए। इसका मतलब यह हुआ कि कपास वाले साल में लगभग सारी भूमि पर कपास बोई जाए अन्यथा निर्यात के महत्व की इस फसल के द्वारा वर्तमान में अर्जित की जा रही विदेशी मुद्रा की क्षति पूर्ति कैसे होगी? और फिर उस वर्ष खाद्यान्नों का क्या होगा, यह एक विचारणीय प्रश्न है।

मिश्र में कपास उत्पादन मात्रा, किस्म व संलग्न भू-क्षेत्र पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण रहता है। उत्पादन की श्रेष्ठता को बनाए रखने के लिए अच्छे किस्म के बीज भी सरकार द्वारा ही किसानों को वितरित किए जाते हैं। आजकल

भूमि लगी है। मूनूफिया में दुग्ध उत्पादन, कालियूबिया में फल तथा गीजा में सब्जियाँ पैदा की जाती हैं।

3. मध्य मिश्र के कृषि प्रदेशों में फायुम, बैनीसुएफ, मिनया, एस्युत तथा सोहागा आदि क्षेत्रों को शामिल किया जाता है। इसमें खाद्यान्नों की प्रधानता है। दक्षिण की तरफ क्रमशः गेहूं का क्षेत्र बढ़ता जाता है। मिनया-एस्युत क्षेत्र में कपास, मिनया में प्याज तथा गन्ना एवं फायुम में चावल तथा फल पैदा किए जाते हैं।

4. दक्षिणी मिश्र में कृषि मिश्र की घाटी में सिंचित क्षेत्रों तक सीमित है। खाद्यान्न फसलों में गेहूं तथा मक्का एवं व्यावसायिक फसलों में गन्ने का प्राधान्य है। जो समस्त देश में यहीं सबसे ज्यादा होता है।

इन चारों कृषि प्रदेशों के अतिरिक्त कृषि मरुद्यानों तथा सिनाई प्रायः द्वीप की नदी घाटियों में होती है। उत्तरी सिनाई में स्थित जैफार के शुष्क भागों में घुमक्कड़ लोग पशुचारण करते हैं। यत्र-तत्र गेहूँ तथा जौ की खेती होती है। वादी-एल-एरिस की घाटी में सिंचाई की सुविधा है। सिनाई के उत्तरी-पश्चिमी भाग में लगभग 50,000 एकड़ भूमि में इस्मालिया नहर से प्राप्त ताजा पानी से सिंचाई होती है।[11] पश्चिमी रेगिस्तान में स्थित मरुद्यानों में लगभग 30,000 फैदान भूमि में कृषि की जाती है। प्रमुख फसलें खाद्यान्न, जैतून, अंजीर, खजूर आदि हैं।

पश्चिमी रेगिस्तानी भाग अत्यन्त छितरा बसा है। यहाँ घुमक्कड़ चरवाहे (संख्या लगभग 25,000) रहते हैं। आलाद-अली समुदाय से सम्बन्धित इन चरवाहों का मुख्य कार्य भेड़पालन है। दक्षिण में ऊँट चराने का कार्य होता है। वादी-एल-नैत्रुम, कतारा घसाव क्षेत्र तथा फूका-रास-एल-हिक्मा आदि को विकसित करने की योजनाओं के पूर्ण होने पर इन घुमक्कड़ लोगों को बसाया जाना सम्भव हो सकेगा।

सिंचाई :

अगर कृषि के बिना मिश्र के आर्थिक ढाँचे की कल्पना नहीं की जा सकती तो सिंचाई के बगैर यहाँ की कृषि की कल्पना नहीं की जा सकती। सदियों में इस देश में नील की घाटी में नील के जल से कृषि की जाती रही है। पहले साधन सीमित थे, अविकसित थे अतः सिंचित क्षेत्र भी सीमित था। पिछले दशकों में नहरों, डेल्टा बाँधों के द्वारा सिंचाई का विस्तार किया और सन् 1971 में यहाँ की चिर-प्रतीक्षित आशा अस्वान बाँध के रूप में पूरी हुई जिससे निश्चित रूप से भारी क्षेत्रों में सिंचाई की जा सकेगी। वर्तमान में देश की तीन-चौथाई कृषिगत भूमि से अधिक भाग सिंचित है। नहरों की लम्बाई लगभग 12,500 मील है जो अस्वान के पूरे

11. स्वेज नहर से सम्बन्धित इस छोटी नहर द्वारा ले जाए गए खारी पानी को मीठा बनाया जाता है।

हो जाने से क्रमशः और बढ़ती जा रही हैं। लगभग 5,00,000 फैदान भूमि की सिंचाई कुओं द्वारा की जाती है।

पहले नील की घाटी में ढेंकली और चरखी से सिंचाई की जाती थी। बाद में 'बेसिन सिस्टम' का प्रचलन चला। इस सिस्टम में जलधारा के समानांतर खेतों में लम्बी-लम्बी मेंड़ें (एम्बैंकमेंटस) बना ली जाती हैं। इनकी ऊँचाई जलधारा से दूर क्रमशः कम होती जाती है। अक्टूबर, नवम्बर के महीनों में जब बाढ़ आती है तो पानी इनमें रुका रह जाता है। जमीन में नमी भर जाती है और पानी के ठहराव से साथ का मलवा मिट्टी की एक नयी पर्त के रूप में जमा हो जाता है। पानी जब सूखने लगता है तो फसल बो दी जाती है जो मार्च-अप्रैल तक तैयार हो जाती है। बेसिन सिस्टम से एक ही फसल सम्भव हो सकती है। पिछली शताब्दी तक चरखी-ढेंकली और बेसिन सिस्टम का प्रचार था। आजकल चरखी-ढेंकली की जगह पानी उलीचने वाले डीजल-चालित इंजनों ने लेली है। बेसिन सिस्टम अभी भी मध्य घाटी में, जहाँ नहरें नहीं बनी हैं, प्रचलित है।

बाँधों द्वारा सिंचाई की शुरुआत पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध से हुई जबकि 1861 में मोहम्मद अली ने कपास की कृषि के विकास के उद्देश्य से डेल्टा प्रदेश में प्रथम बाँध बनवाया। इसके बाद कई बाँध बनवाए गए जिनमें जिफ्ट (1901) एस्युत (1902) इस्ना (1908) तथा नाग हम्मादी (1937) महत्वपूर्ण हैं। इन बाँधों तथा नील को जोड़ते हुए नहरें बनायी गयीं। सिंचाई के लिए नहरें बनाई गयीं जो डेल्टा प्रदेश में पूर्व-पश्चिम फैली हैं। फायुम क्षेत्र को एस्युत बैराज से ही एक नहर द्वारा पानी दिया जाता है।

अस्वान बाँध योजना :

15 जनवरी 1971 को रूस के राष्ट्रपति पदगोर्नी ने अस्वान बाँध का उद्‌घाटन किया और उसके साथ मिश्र के कोटि-कोटि जनों तथा भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय कर्नल नासिर का स्वप्न पूरा हुआ। मिश्र की यह सबसे महत्वपूर्ण सिंचाई योजना है जिसके अन्तर्गत विश्व का सबसे बड़ा बाँध अस्वान के निकट बनाया गया है। निस्संदेह इस भाग में पहले से भी एक बाँध 'ग्रेटडैम' (1903) के नाम से नील पर था परन्तु उसकी क्षमता बहुत कम थी। अतः ग्रेट डैम से 4 मील दूर दक्षिण में अस्वान 'हाइडैम बनाया गया है। इसमें ग्रेट डैम की अपेक्षा 200 फुट ज्यादा पानी आ सकेगा। जैसाकि 'नील की घाटी' शीर्षक में वर्णित है इस सम्भाग में (वादी हाल्फा से अस्वान तक) नील एक प्राकृतिक संकरी घाटी में होकर बहती है अतः बाँध बनाने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ हैं। बाँध को जलाशय, जो वादी हाल्फा से भी आगे तक फैला है, पूर्णतः भरने पर 250 मील (190 मील मिश्र, 60 मील सूडान) लम्बा होता है। 'नासिर झील' के नाम से जानी जाने वाली इस

तक यौद्धिक वातावरण आदि कारणों से मिश्र में सुनियोजित रूप से खनिज तथा सम्पत्ति का शोषण प्रारम्भ नहीं हो पाया है। वर्तमान में उपलब्ध खनिज पदार्थों में पैट्रोल, फौस्फेट, मैंगनीज, सोडा, क्रोमाइट, जस्ता, सीसा, नमक तथा लौह-अयस प्रमुख हैं। औद्योगिक विकास की दृष्टि से इनकी मात्रा बहुत कम है। निस्संदेह, तेल-उद्योग का भविष्य उज्ज्वल है।

तेल-उद्योग :

पिछले दो दशकों में सर्वेक्षण के फलस्वरूप सिनाई लाल सागर तट, डेल्टा प्रदेश तथा उत्तर-पश्चिम में लिबिया की सीमा के निकट तेल के भंडारों का पता लगा है। पश्चिमी एवं दक्षिणी मिश्र में सर्वेक्षण का कार्य जारी है। यहाँ तेल-उद्योग का श्रीगणेश तो 1908 में गैमशाह के तेल क्षेत्र से हो गया था परन्तु व्यावसायिक स्तर पर पिछले दिनों में ही हुआ है। तेल उत्पादन मात्रा बड़ी तेजी से बढ़ रही है। 1958 में उत्पादन 3.2 मिलियन टन था जो बढ़कर 1969 में 15 मिलियन टन हो गया। 1983 में यहाँ के तेल क्षेत्रों ने 36 मिलियन टन क्रूड आयल उत्पादित किया।

मिश्र के तेल क्षेत्र भी वस्तुतः उसी तेल-पट्टी के विस्तार भागों में हैं जो सम्पूर्ण मध्यपूर्व को तेल प्रदान करती है। वर्तमान में अधिकांश उत्पादन लाल सागर तट पर स्थित रासघारिब, हुरघाडा एवं सिनाई प्रायः द्वीप में स्थित सूडर, अस्ल, वादी फेइरान, बालाइम, अबू-रोडिस तथा रास-मातारमा आदि क्षेत्रों से आता है। सिनाई पर इजरायली सेनाओं के अधिकार के कारण पिछले वर्षों में यहाँ के कूओं से तेल-उत्पादन दुविधा में पड़ गया था। तेल के सभी प्रकारों एवं उप-उत्पादनों की दृष्टि से मिश्र अब स्वावलम्बी है तथा ईंधन-तेल (फ्यूअल आॅयल) का निर्यात भी करने लगा है। देश के कूओं से प्राप्त तेल स्वेज, सिकन्दरिया तथा मौस्तोरोद आदि नगरों में स्थित तेल शोधक कारखानों में साफ किया जाता है।

मिश्र में तेल उद्योग का श्रीगणेश वस्तुतः 1868 में हुआ जबकि सल्फर माइनिंग कम्पनी को गमासा क्षेत्र में सल्फर की तलाश में की जा रही खुदाई के दौरान तेल की सम्भावनाओं का पता चला। बाद में बीच-बीच में तेल खुदाई का कार्य होता रहा परन्तु बहुत ही अनियमित रूप में। 1908 में गमासा क्षेत्र में पहला तेल कूप सफलतापूर्वक खोदा गया। बाद में देश के अन्य भागों में भी तेल मिला यथा 1913 में घरड़ाका क्षेत्र, 1938 में रास घरीब तथा 1947–49 में सीड़र, मातामेर एवं आलस क्षेत्रों में तेल कूप खोदे गये। 1952 में सरकार ने पैट्रोलियम काॅपरेशन कम्पनी को सिनाई प्रायःद्वीप में तेल के सर्वेक्षण एवं खुदाई के अधिकार प्रदान किये। सरकार का प्रयास यही है कि समस्त 'सम्भावना क्षेत्रों' में अधिकाधिक ड्रिलिंग करके तेल एवं प्राकृतिक गैस का शोषण किया जाये। इस तेल अन्वेषण एवं खुदाई के अधिकाधिक समझौते निगमों के साथ किये जा

1973-83 की अवधि में इस प्रकार के 68 समझौतों पर हस्ताक्षर किये गये। 20 से अधिक और प्रस्ताव विचाराधीन है। ऐसा अनुमान है कि मिश्र में 2943 मिलियन बैरल तेल तथा 1765 मि. बै. प्राकृतिक गैस की सुरक्षित राशि विद्यमान है। इतने विशाल तेल भण्डारों के आधार पर मिश्र अपनी तेल सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रति आशावान है। यही नहीं, वह तेल निर्यात करने की स्थिति में भी हो सकता है।

सम्भावित मात्रा एवं उत्पादन की दृष्टि से मिश्र के तेल क्षेत्रों को निम्न समूहों में रखा जा सकता है। ये हैं—

1. स्वेज खाड़ी के तेल क्षेत्र
2. पश्चिमी एवं पूर्वी रेगिस्तानी तेल क्षेत्र
3. सिनाई प्रायःद्वीपीय तेल क्षेत्र

1. स्वेज खाड़ी के तेल क्षेत्र—नये तेल क्षेत्रों में ये सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। ये क्षेत्र लाल सागर के बायें तट के सहारे-सहारे लगभग 300 कि मी. की लम्बाई मे विस्तृत हैं। अपनी स्थिति के फलस्वरूप यह तेल पट्टी पूर्वी रेगिस्तान क्षेत्रों और सिनाई प्रायःद्वीप को पृथक करती है। इन्हें दो भागों में रखा जा सकता है।

(अ) स्वेज की खाड़ी में भीतर स्थित क्षेत्र
(Offshore oil fields in the Gulf of Suez)

1. जुलाई फील्ड—खाड़ी के पश्चिमी तट से 8 कि. मी. भीतर की ओर ये तेल क्षेत्र स्थित हैं। इनकी खोज 1973 में हुई थी। उसी वर्ष से उत्पादन प्रारम्भ हो गया। दैनिक तेल उत्पादन लगभग 1,50,000 बैरल है।

2. रामादान फील्ड—जुलाई फील्ड से 6·5 कि. मी. पूर्व में विद्यमान हैं। उत्पादन 1974 में आरम्भ हुआ जो प्रतिदिन औसतन 1,00,000 बैरल्स है।

3. मुर्गान फील्ड—यह तेल क्षेत्र स्वेज खाड़ी के पश्चिमी तट से 18 कि. मी. दूर खाड़ी के लगभग मध्य में स्थित हैं। 45 वर्ग कि. मी. क्षेत्र में फैले हुए हैं। यहाँ तेल का पता 1965 में चला। वास्तविक उत्पादन 1976 में आरम्भ हुआ। औसत दैनिक उत्पादन 1,40,000 बैरल्स है।

4. अक्टूबर फील्ड—बैलेम तेल क्षेत्र के पश्चिम में खाड़ी में स्थित हैं, यह तेल क्षेत्र 1977 म खोजा गया था। वास्तविक उत्पादन 1979 में आरम्भ हुआ। दैनिक उत्पादन औसतन 1,00,000 बैरल है।

5. फील्ड के. एच. एस. 382—यह तेल कूप मुर्गान फील्ड के 35 कि. मी. दक्षिण में खाड़ी के तट से 10 कि. मी. भीतर की ओर स्थित है। 1976 में इसकी खोज हुई और दिसम्बर 1977 से उत्पादन आरम्भ हुआ। दैनिक उत्पादन 6,600 बैरल है।

क्षेत्र का नाम	औसत दैनिक उत्पादन (बैरल में)
1. अबू-एल-घाराडीक	5,900
2. एल-एलामीन	2,500
3. येदमा	3,500
4. अम-बकारा	1,200
5. एस. जी. एच. 33	400
एल-रजाक	3,350
350	3,850

3. सिनाई प्रायःद्वीप के तेल क्षेत्र :
(Oil fields of Sinai Penin sula)

सिनाई प्रायःद्वीप के तेल क्षेत्रों को 2 समूहों में रखा जा सकता है।

प्रथम समूह—इसमें सिदिर, आसल एवं मुतारमा आदि तीन तेल उत्पादक क्षेत्र शामिल किये जा सकते हैं। ये सभी प्रायःद्वीप के उत्तरी भागों में विद्यमान हैं।

द्वितीय समूह—उत्तरी तेल क्षेत्रों से लगभग 100 कि. मी. दक्षिण में स्थित छः तेल क्षेत्रों (तटवर्ती बेलेम, बेलेम के जलगत क्षेत्र, आबू र डाइज, सिदिर, फेरान तथा आकमा) को इस समूह में रखा जा सकता है। 1967 से ही इन क्षेत्रों में अपनी कुल क्षमता का 80% उत्पादन हो रहा था। अक्टूबर 1967 के पश्चात् ये सभी तेल क्षेत्र इजराइल के अधिकार में आ गये जो पुनः मिस्र के अधिकार में 1975 में ही आ सके। पुनः प्राप्ति के पश्चात इन क्षेत्रों में सर्वेक्षण, खुदाई एवं उत्पादन का विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया। दैनिक औसत उत्पादन निम्न प्रकार है —

क्षेत्र का नाम	औसत दैनिक उत्पादन (बैरल में)[15]
1. सिदिर	1,350
2. आसल	1,100
3. जलगत बेलेम क्षेत्र	69,600
4. आबूर डाइज	36,000
5. मातामेर	150

तेल उद्योग पर मिस्र में कितना ध्यान दिया जा रहा है उसका अनुमान इससे लग सकता है कि 1973–83 के 10 वर्षों में इस उद्योग के विकास पर 1679 मिलियन डॉलर की राशि खर्च की गयी इसमें से 1185 मिलियन डॉलर

15. Petroleum in the Arab Republic of Egypt, state information service Cairo 1983 p. 8

विदेशी कम्पनियों द्वारा खर्च किये गये। इसी का परिणाम है कि 1973 में जो तेल उत्पादन 8·5 मिलियन वह बढ़कर 1983 में 36 मिलियन टन हो गया।

मिश्र में क्रूड ऑयल तथा प्रा गैस का उत्पादन 1977–82[16]

	1977	1978	1980	1981	1982
उत्पादन (हजार टनों में)	21,251	25,047	29,390	29,922	35,490
उत्पादन मूल्य (मिलियन पौंड में) - मिश्रीय पौंड	336·9	418·3	494·4	552·6	587·2

प्राकृतिक गैस :

मिश्र मे प्राकृतिक गैस के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं।

1. भ्राबू माड़ी—यह डेल्टा क्षेत्र के उत्तरी भाग में स्थित है। यहाँ प्राकृतिक गैस का पता 1967 में चला तथा उत्पादन 1975 में प्रारम्भ हुआ। औसत दैनिक उत्पादन 80 मिलियन घन फीट है। इस क्षेत्र में लगभग 2000 बैरल तेल भी प्रतिदिन निकलता है।

2. भ्राबू एल-घाराडीक—यह क्षेत्र काहिरा के पश्चिम में रेगिस्तानी भाग में विद्यमान है। यहाँ के भण्डारों का पता 1971 में लगा परन्तु वास्तविक उत्पादन 1975 में प्रारम्भ हुआ। औसत दैनिक उत्पादन 96 मिलियन घन फीट है। इस क्षेत्र में लगभग 3500 बैरल तेल भी रोज निकलता है।

3. भ्राबू कीर—यह क्षेत्र सिकन्दरिया बन्दरगाह के उत्तर में भूमध्य सागर में विद्यमान है। इसका पता 1969 में लग गया था परन्तु उत्पादन की शुरुआत 1979 में ही हो सकी। औसत दैनिक उत्पादन 70 मिलियन घन फीट है। लगभग 1500 बैरल तेल भी रोजाना इस क्षेत्र में उत्पादित होता है। इस क्षेत्र की गैस का सिकन्दरिया नगर एवं बन्दरगाह क्षेत्र में स्थित उद्योगों तथा शक्ति-गृहों में होता है।

इन तीनों क्षेत्रों के अलावा स्वेज की खाड़ी क्षेत्र में विद्यमान तेल कूपों से जो तेल निकाला जाता है उसके उप-उत्पादन के रूप में भी गैस तैयार की जाती है। चारों क्षेत्रों का उत्पादन अग्र प्रकार है।

16. Ibid p. 9

मिश्र में प्रा. गैस उत्पादन 1982–83[17]

क्षेत्र का नाम	उत्पादन (मैट्रिक टनों में)
1. अबु भाड़ी	675
2. अबु एल घाराड़ीक	830
3. अबु कीर्‌	736
4. स्वेज खाड़ी क्षेत्र	420
योग	3,661

प्राकृतिक गैस को सीधा घरों में भी सप्लाई करने की योजना क्रियान्वित की जा रही है। हुलवान नगर के 13,000 घरों में गैस पाइप लाइन पहुँच चुकी है तथा 160,000 घरों में अगामी वर्षों में पहुँचने की सम्भावना है।

तेलशोधन—मिश्र मध्य-पूर्व में पहला देश था जिसने तेल शोधन इस शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में ही प्रारम्भ कर दिया था। एंग्लो-इजिप्शियन ऑयल कम्पनी (वर्तमान में नासिर पैट्रोलियम) ने 1913 में तेल शोधन प्रारम्भ किया। उस समय वार्षिक क्षमता 1,00,000 टन थी। बाद के वर्षों में तेल शोधन क्षमता बढ़ती रही और अब यह निर्यात करने की क्षमता युक्त है। काहिरा, सिकन्दरिया, एल-अमीरिया, स्वेज एवं टांटा में विशाल क्षमता युक्त तेल शोधक कारखाने विद्यमान हैं। पिछले 30 वर्षों में इनकी क्षमता में किस प्रकार वृद्धि हुई है उसका अनुमान इन आंकड़ों से होता है।

मिश्र में तेल शोधन 1952–82

इकाई/क्षेत्र	1952	1972	1977	1982
स्वेज	2·0	—	2·0	3·5
काहिरा	—	3·5	4·5	4·5
सिकन्दरिया	—	4·0	7·0	8·0
टांटा	—	—	·75	1·2
योग	2·0	7·5	14·25	17·2

तेल शोधन के उप-उद्योग के रूप में कैरोसिन तथा सुलर के लिए दो डिस्टिलेशन प्लांटस क्रमशः मस्तुरूद एवं एल-एमारिया में स्थापित किये गये हैं। सिकन्दरिया में एक विशाल लुब्रीकेंट प्रॉडक्शन कॉम्प्लैक्स बनाया जा रहा है।

87. Ibid p. 93

भविष्य के लिए लक्ष्य—वस्तुतः मिश्र की भौगोलिक परिस्थितियों एवं खनिज सम्पदा के अभाव से प्रोत्साहित होकर : यहाँ का तेल उद्योग अपने उज्ज्वल भविष्य का लक्ष्य लिये आगे बढ़ रहा है। कृषि के बाद आर्थिक क्रियाओं में तेल उद्योग सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष यानी 1986–87 तेल उत्पादन को 63·3 मिलियन टन करने का लक्ष्य है। इस प्रकार 1982 के उत्पादन (35·5 मि. टन) से यह लगभग दूना हो जायेगा। 1987 में गैस उत्पादन 12·9 मिलियन टन करने का लक्ष्य है जिसमें से 9·5 मि. टन प्राकृतिक गैस होगी। इसी प्रकार तेल शोधन क्षमता को बढ़ाकर 19 7 मिलियन टन करने का लक्ष्य है।

अन्य उद्योग :

लोहे की प्रधान खान अस्वान के निकट स्थित है जहाँ से हैमटाइट किस्म (धातु प्रतिशत 50) का अयस उपलब्ध है। हाल ही में सर्वेक्षणों से पता चला है कि बहारिया मरुद्यान (हलवान के निकट) में लोहे के भण्डार हैं। वार्षिक उत्पादन लगभग 6 लाख टन है। फौस्फेट चट्टान उत्तर-पूर्व में लाल सागर तट पर कुसीर के पास खोदी जाती है। मैंगनीज पश्चिमी सिनाई से उपलब्ध है। अधिकांश उत्पादन पश्चिमी देशों को निर्यात कर दिया जाता है क्योंकि मिश्र में धातुशोधन की सुविधा उपलब्ध नहीं है।

मिश्र में खनिज एवं औद्योगिक उत्पादन

(000 मै. टनों में)	1939	1954	1965	1982
खनिज				
क्रूड ऑयल	749	1,972	6,155	35,544
फौस्फेट	578	534	594	658
मैंगनीज	120	178	104	138
लोह अयस	—	—	507	656
एस्फाल्ट	—	78	131	432
औद्योगिक				
सूती धागा	24	64	139	290
सूती वस्त्र	20	48	80	172
शक्कर	233	262	400	602
सीमेंट	368	1237	2319	4,135
सुपर फौस्फेट्स	20	114	253	450
टायर ट्यूब	—	—	486	
लोह की वस्तुएं	—	—	135	

वस्त्रोद्योग मिश्र का प्रमुख उद्योग हैं। इस उद्योग की सभी शाखाएं—कताई, बुनाई, रंगाई तथा छपाई यहां विकसित हैं। सूती वस्त्रोद्योग के अतिरिक्त ऊनी, रेशमी तथा रेयन की मिलें भी खुल गई हैं। इस दृष्टि से मिश्र स्वावलम्बी है। स्वदेशी आवश्यकता पूर्ति के बाद भी उत्पादन इतना बच रहता है कि निकटवर्ती अरब देशों तथा सूडान पश्चिमी जर्मनी, सयूवा तथा पूर्वी यूरोपियन देशों को निर्यात कर दिया जाता है। प्रतिवर्ष लगभग 32 मिलियन पौण्ड की कीमत के वस्त्र तथा धागा निर्यात किए जाते हैं। इस उद्योग में लगभग 1,50,000 व्यक्ति संलग्न हैं। सूती मिलों में 1.25 मिलियन तकुएँ कार्यरत हैं। कहना न होगा कि कपास की आवश्यकता देश में ही उत्पादित कपास से हो जाती है। वैसे तो प्रायः सभी बड़े-बड़े नगरों में सूती मिलें हैं परन्तु उद्योग के केन्द्रीयकरण की दृष्टि से डेल्टा प्रदेश महत्वपूर्ण है जहां के दो कस्बों—महला-एल-कूबा तथा काफर-एल-डावाल में कई आधुनिकतम सूती मिलें हैं।

अन्य उद्योगों, जो प्रमुखतः स्वदेशी कृषि उपज या खनिज उपज पर आधारित हैं, में शक्कर, तेल शोधन, तिलहन, चमड़ा तथा जूता, अलकोहल, काँच, सीमेंन्ट, साबुन निर्माण आदि उल्लेखनीय हैं। काहिरा तथा सिकंदरिया में सीमेंट के विशाल कारखाने हैं जिनसे निर्यात स्तर पर उत्पादन होने लगा है। स्वेज बंदरगाह पर स्थित दोनों तेलशोधक कारखानों से सम्बद्ध तेल-रसायन (पैट्रो-कैमीकल) उद्योग के कारखाने स्थापित किए गए हैं। मिश्र जैसे कृषि प्रधान देश की कृत्रिम खादों की आवश्यकता को देखते हुए स्वेज एवं अस्वान के पास एल-खतारा नामक स्थान पर विशाल खाद-कारखाने स्थापित किए गए हैं। लोह-इस्पात का एक मात्र कारखाना काहिरा के निकट हलवान में है जिसकी वार्षिक इस्पात निर्माण क्षमता 6 लाख टन है। शक्कर बनाने की मिलों का केन्द्रीकरण येबेस बेसिन एवं कौमग्रोम्बो में है। परिवहन उपकरण निर्माण उद्योग की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। रेल इंजन, डिब्बे, रबर के टायर आदि बनने लगे हैं। कई कारखाने मोटर पार्टस मंगाकर जोड़ने के कार्य में रत हैं। भारत के सहयोग से एयरक्राफ्ट उद्योग पनप रहा है। पोर्ट सईद एवं सिकंदरिया में अब जलयानों की मरम्मत तथा निर्माण कार्य होने लगा है।

औद्योगिक केन्द्रीकरण की दृष्टि से काहिरा तथा सिकंदरिया दो महत्वपूर्ण केन्द्र है जिनके आस-पास विकसित उद्योगों में मिश्र की कुल उद्योग-रत जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग लगा है। इन दो क्षेत्रों में देश के लगभग तीन-चौथाई कारखाने विद्यमान हैं। घनी बसी जनसंख्या, बंदरगाहों की निकटता आदि तत्वों के कारण ही यहां औद्योगिक केन्द्रीकरण हुआ है उसके पीछे अन्य कोई भौगोलिक कारण नहीं है। अन्यथा हलवान का लोह-इस्पात संस्थान अस्वान के निकट स्थित लोह की खानों से 500 मील की दूरी पर क्यों खड़ा किया जाता।

मिश्र में औद्योगिक विकास की लहर बहुत देर से आई। प्रमुख कारण था शक्ति के साधनों का अभाव। कोयला नाम मात्र को भी नहीं होता। हलवान के कारखाने को भी कोक आयात किया जाता है। निस्संदेह तेल की प्राप्ति के बाद अब स्थिति बदलेगी। आजकल तेल से ही विद्युत बनायी जाने लगी है। अस्वान के जल शक्ति गृहों से ऊपरी मिश्र में औद्योगिक विकास के अवसर बढ़ेंगे। अभी तक वहाँ बड़ा उद्योग कोई भी नहीं हैं। केवल छोटे-छोटे उद्योग जैसे सिगरेट, साबुन, पेय व खाद्य पदार्थ आदि ही हैं। पिछले वर्षों में रूस के सहयोग से कुछ इंजीनियरिंग मशीन टूल्स, विद्युत यन्त्र व घरेलू खपत की वस्तुएँ बनाने के कारखाने खुले हैं।

यातायात एवं विदेश व्यापार :

बसे हुए भू-क्षेत्र के अनुपात में मिश्र में यातायात के साधनों का अच्छा विकास हुआ है। रेलवे यातायात इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। पश्चिम के मरुस्थानी भागों को छोड़कर समस्त लम्बाई में रेलवे पटरी चौड़ी (4 फीट $8\frac{1}{3}$ इंच) एवं दोहरी है। प्रथम रेलवे लाइन यहाँ 1856 में सिकंदरिया से काहिरा तक बिछाई गई। इस समय मिश्र में लगभग 4,321 कि. मी. मील लम्बे रेल मार्ग हैं। सभी रेलमार्ग सरकार के अधीन हैं। समस्त नील की घाटी में, दक्षिण में अस्वान तक रेल यातायात की सुविधा प्राप्त है। पश्चिमी मरुस्थानों विशेषकर फायुम, खार्गा आदि तथा डेल्टा के कुछ भागों में छोटी पटरी (2 फीट $4\frac{1}{2}$ इंच) की लाइनें हैं। रेल मार्ग द्वारा मिश्र लीबिया, सूडान (अस्वान तक सूडान से स्टीमर्स) इजराइल, लेबनान, सीरिया आदि देशों से जुड़ा है।

कुछ दशक पहले तक सड़क यातायात पिछड़े रूप में था। इसका एक कारण सरकारी रेलों से प्रतियोगिता भी हो सकती है। अधिकांश सड़कें मिट्टी की थीं। आधुनिक पक्की सड़कों का निर्माण 1952 से (क्रांति के पश्चात्) प्रारम्भ हुआ। फलस्वरूप वर्तमान में लगभग सभी नगरों को जोड़ती हुई चौड़ी सड़कें हैं। सड़कों की कुल लम्बाई 21,637 कि. मी. से अधिक है। भूमध्य-सागर पर तटवर्ती स्थिति होने के कारण मिश्र पूर्व और पश्चिम के देशों के बीच होने वाले वायु यातायात का भी एक महत्वपूर्ण केन्द्र है। काहिरा का हवाई अड्डा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का है। इसके अतिरिक्त सिकंदरिया, अस्वान, मतरव तथा सुवसर के हवाई अड्डे भी अन्तर्राष्ट्रीय वायु सेवाओं द्वारा जुड़े हैं। मिश्र की अपनी एक विमान सेवा 'यूनाइटेड अरब एयर लाइन्स' है जिसमे देश के विभिन्न नगरों, अफ्रीकन देशों [illegible] राजधानियों तथा दुनियाँ के सभी बड़े बड़ेनगरों को नियमित विमान सेवा [illegible] है। वस्तुतः मिश्र दक्षिण में स्थित अफ्रीकन देशों से आने वाले तथा दूसरे एशिया को जोड़ने वाले पश्चिम-पूर्व मार्गों का संगम-स्थल है।

प्रकृति ने नील के रूप में मिस्र को सुन्दर नियमित एवं सस्ता यातायात मार्ग प्रस्तुत किया है। और चूंकि मिस्र की 98 प्रतिशत जनसंख्या तथा सभी बड़े नगर, औद्योगिक एवं व्यापार केन्द्र नील की जलधाराओं पर स्थित हैं अतः स्वाभाविक रूप से इसका प्रयोग यातायात के रूप में होता है। नील में अस्वान तक जलयान जा सकते हैं। अनाज, कपास, बर्तन व अन्य भारी वस्तुएँ नील तथा इसकी जल-शाखाओं में होकर ही परिवहन की जाती है। सिकंदरिया बंदरगाह तथा राजधानी-औद्योगिक नगर काहिरा की नील के डेल्टा में स्थिति ने भी नील-यातायात को प्रोत्साहित किया है।

स्वेज नहर के खुलने, मध्यपूर्व में तेल की उपलब्धि तथा मिस्र के 'ब्रिटिश जीवन रेखा' (ब्रिटिश लाइफ लाइन)[18] पर स्थित होने के कारण मिस्र के बंदरगाहों (पोर्ट स्वेज, सईद, इस्माइलिया) तथा समुद्री यातायात को भारी प्रोत्साहन मिला है। वर्तमान में यहां के व्यापारिक जहाजी बेड़े में 387,460 टन के 75 स्टीमर्स (नील यातायात में प्रयुक्त) तथा 1860 टन भार के 2 छोटे समुद्री जलयान हैं।

स्वेज नहर :

सिनाई तथा मिस्र की मुख्य भूमि के मध्य स्थित स्वेज थलडमरु मध्य को काटकर बनाई गई स्वेज नहर भारी अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की नहर है जिससे मिस्र की आर्थिक तथा कूटनैतिक महत्ता बढ़ी है। पोर्ट सईद से लेकर पोर्ट स्वेज तक नहर की लम्बाई 101 मील है। चौड़ाई भिन्न-भिन्न स्थानों पर अलग-अलग है जिसका औसत 4 से 500 फीट तक है। भूमध्य तथा लाल सागर के एक तल होने के कारण स्वेज में 'लाक व्यवस्था' नहीं है। स्वेज में होकर 37 फीट गहराई वाले जलयान आसानी से गुजर सकते हैं। नहर में गुजरते हुए जलयानों की गति साधारणतः $7\frac{1}{2}$ मील प्रति घंटा रहती है। नहर में एक तरफा यातायात (वन वे ट्रैफिक) रहता है। नहर के बीच में कई झीलें हैं जिनमें होकर कई जलयान गुजर सकते हैं अतः स्वेज यातायात में बड़ी सुविधा रहती है। यथा, उत्तर में मंझाला बीच में बल्लाह तथा टिमसाह एवं दक्षिण में ग्रेट बिटर झील हैं। नहर के सहारे-सहारे रेल मार्ग हैं।

भूमध्य सागर को लाल सागर से जोड़ने का विचार बहुत पुराना है। फराओं राजाओं ने नील को लाल सागर से जोड़ने का प्रयत्न किया था पर सफलता

---

18. द्वितीय विश्व युद्ध से पहले तक दक्षिण-पूर्वी एशिया को जोड़ने वाले भूमध्य सागरीय मार्ग को ब्रिटिश जीवन रेखा कहा जाता था। यह मार्ग ब्रिटेन को उसके उपनिवेशों से जोड़ता था।

नहीं मिली। नैपोलियन का स्वेज थल डमरू मध्य को काट कर नहर बनाने का विचार सर्वेक्षण तक ही सीमित रहा। 1838 फोर्नेल नामक एक फ्रेंच इंजीनियर ने तत्कालीन मिश्र के शासक के सामने अपनी योजना रखी पर स्वीकृति प्राप्त न कर सका। अन्ततः 1859 में एक अन्य फ्रेंच इंजीनियर फरडी नैण्डो लैसेप्स 'स्वेज

चित्र–4

इस्थमस' को काटकर नहर बनाने की आज्ञा प्राप्त करने में सफल हो गया तथा 10 वर्ष की अवधि में 200,000,000 फ्रांक की लागत से यह नहर 1869 में बनकर तैयार हो गयी।

स्वेज नहर का भारी कूटनैतिक तथा आर्थिक महत्व है। स्वेज के बनने से पहले आस्ट्रेलिया तथा पूर्वी एशियाई बंदरगाहों को जाने वाले जलयानों को सम्पूर्ण अफ्रीका महाद्वीप का चक्कर लगाना पड़ता था। इसके बनने से यातायात की दूरी एवं समय में काफी कमी आई। 'केप ऑफ गुड होप' के रास्ते से जाने वाले यानों को स्वेज द्वारा पूर्व की ओर जाने वाले यानों की अपेक्षा लदन-कुवैत मार्ग पर 4000 मील, लंदन-बम्बई मार्ग पर 4450 मील तथा लंदन-आस्ट्रेलिया मार्ग पर 1000 मील ज्यादा जाना पड़ता है। दूरी की इतनी बचत के कारण ही नहर के खुलते ही इसमें होकर यातायात एकदम बढ़ गया। 1870 में इसमें होकर लगभग 2000 जलयान गुजरे जबकि 1950 में 11,751 जलयानों ने स्वेज मार्ग से होकर जाना पसन्द किया। 1981 में इनकी संख्या 21,603 (281.3 मि० टन भार) थी।

स्वेज मार्ग ही दक्षिणी-पूर्वी एशिया को यूरोपियन देशों से जोड़ने वाला प्रधान जल-मार्ग रहा है। इसी मार्ग से भारत की कपास, मलाया की रबर, बर्मा की लकड़ी, लंका-भारत की चाय तथा मध्य-पूर्वी देशों का तेल यूरोपियन देशों को जाता रहता है। बदले में पूर्वी अफ्रीका और एशिया के घने बसे देशों को पश्चिमी यूरोपियन देशों से वस्त्र, दवाइयां, मशीनें तथा अन्य विविधि औद्योगिक उत्पादन स्वेज से आते रहे हैं। पिछले 100-125 वर्षों में इस मार्ग का इतना आर्थिक महत्व बढ़ा कि इस मार्ग के कई बंदरगाह अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के हो गए। ब्रिटेन को व्यापार एवं उपनिवेशिक कार्यों के सुचारू संचालन हेतु इस जलमार्ग पर पूर्ण नियंत्रण रखना आवश्यक हो गया फलतः जिब्राल्टर, साइप्रस, सईद, स्वेज, अदन, सोकोत्रा एवं सिंगापुर बंदरगाहों का विकास एक ओर महत्वपूर्ण यातायात एवं व्यापार केन्द्रों के रूप में हुआ तो दूसरी ओर वे महत्वपूर्ण सैनिक छावनी बने और नौ-सेना-केन्द्र बनकर इस क्षेत्र में ब्रिटिश हितों की रक्षा करने लगे।

1956 में मिश्र के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री नासिर ने स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर लिया। इससे पूर्व नहर का संचालन एक संचालक मंडल द्वारा किया जाता था जिसका ब्रिटेन सर्वेसर्वा था क्योंकि यही देश सबसे बड़ा शेयर-होल्डर था।[19] नहर के कूटनैतिक महत्व को देखते हुए (ताकि इतना महत्वपूर्ण मार्ग किसी

19. स्वेज की कुल लागत 200,000,000 फ्रांक (8,000,000 पौण्ड) को 500—5,000 फ्रांक के 4,00,000 शेयर्स में बाँटा गया। इनमें से ब्रिटेन ने 1,76,000 शेयर्स खरीदे।

एक देश के अधिकार में न हो) यह तय किया गया था कि यह एक अन्तर्राष्ट्रीय जल-मार्ग के रूप में किसी भी राष्ट्र के कैसे भी (सैनिक, व्यापारी) जलयान के लिए प्रत्येक समय (युद्ध या शांति काल) खुला रहेगा। राष्ट्रीयकरण की भी एक विशिष्ट पृष्ठ भूमि थी। श्री नासिर ने अस्वान बांध योजना के लिए पश्चिमी देशों से पैसा मांगा। उन्होंने इन्कार किया क्योंकि वे अपने रक्षित देश इजरायल के शत्रु देश को मजबूत देखना नहीं चाहते थे। अन्ततः एक कूटनैतिक और आर्थिक अस्त्र के रूप में नासिर ने नहर का राष्ट्रीयकरण किया। निस्संदेह, नहर से अस्वान निर्माण के लिए भारी आर्थिक सहयोग भी मिला। पर वह निरंतर न रह सका क्योंकि अरब-इजराइल संघर्ष के कारण 1967 में नहर प्रयोग के लिए बन्द हो गई।

पिछले दो दशकों में स्वेज का आर्थिक एवं कूटनीतिक महत्व क्रमशः घटा है। इसके कई कारण हैं। वर्षों से चले आ रहे अरब-इजराइल संघर्ष के कारण स्वेज मार्ग आजकल सुरक्षित नहीं समझा जाता। न जाने कब सशस्त्र संघर्ष छिड़ जाए। उपनिवेश समाप्त हो चुके हैं। राष्ट्रीयकरण के बाद से पश्चिमी देशों की इतनी रुचि नहीं रही है। फिर वे यह भी सोचते हैं कि नहर के प्रयोग का सीधा मतलब है मिश्र को आर्थिक रूप से सशक्त बनाना। मध्य पूर्व से तेल लाने का प्रश्न तो अब उतना महत्वपूर्ण भी नहीं है क्योंकि अब इतने बड़े तेल-वाहक पोत (2,00,000 टन भार) बना लिए गए हैं कि उनमें आने वाली तेल मात्रा से लगने वाले ज्यादा समय की क्षति पूर्ति हो जाती है। यह भी सच है कि स्वेज में टैक्स बहुत ज्यादा देना पड़ता है और आधुनिक बड़े जलयानों के उपयुक्त भी नहीं है।

1 जनवरी 1981 को स्वेज में गुजरने के करों में 30% की वृद्धि की गई। संक्षेप में आधुनिक जलयानों के लिए अनुपयुक्तता एवं करों में वृद्धि के कारण स्वेज के उपयोग में कमी आने की पूरी सम्भावना है। इस पृष्ठभूमि में मिश्र सरकार ने 1976 में दो स्टेज वाली विकास योजना बनाई। प्रथम स्टेज जो 1980 में पूरी हुई, के अन्तर्गत नहर की सफाई, पुनःनिर्माण एवं गहराई बढ़ाने की थी ताकि ज्यादा, 53 फीट की गहराई (draught) वाले जलयान भी इसमें होकर गुजर सकें। अब तक इसमें गुजरने वाले जलयानों का टनभार कम होता था जिसे बढ़ा कर 1,50,000 टन से 3,70,000 तक किया गया। यह सब आवश्यक भी था क्योंकि 1967 से 1975 तक इजराइल-अरब संघर्ष के फलस्वरूप बन्द रहने के कारण नहर अपनी पूर्व उपयोगिता खो चुकी थी।

दूसरी स्टेज में समाप्त स्वेज क्षेत्र को विशाल टैक्स-फ्री ग्रौद्योगिक क्षेत्र बनाने की योजना है। कहना न होगा कि टैक्स-फ्री बनाने का उद्देश्य विदेशी पूंजी को ग्राकर्षित करना है। इसी क्रम में स्वेज नगर से 10 मील उत्तर में नहर के नीचे होकर एक सुरंग बनायी गयी है ताकि स्वेज के दोनों ग्रोर के भागों में थल सम्पर्क सभव हो सके जो ग्रौद्योगिक विकास के लिए वांछनीय है।

विदेश व्यापार :

1950–60 के दशक में ग्रस्वान बांध को ग्रार्थिक सहायता के प्रश्न पर पश्चिम से मतभेद, स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण तथा ग्ररब-इजराइल संघर्ष ग्रादि कारणों से मिश्र के ग्रन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक सम्बन्धों की दिशा में भारी परिवर्तन ग्राया है। ग्रब मिश्र का झुकाव पूर्वी या समाजवादी देशों की तरफ है जो यहाँ के निर्यात का लगभग 45% भाग कच्चे मालों के रूप में ले लेते हैं। उत्तरी ग्रमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप के देशों को निर्यात का 30% (मुख्यतः तेल एवं खाद्य पदार्थ) भाग जाता है। शेष 25% (प्रमुखतः खाद्य वस्तुएं तथा ग्रौद्योगिक उत्पादन) ग्ररब देशों को जाता है। इसी प्रकार ग्रायात का 30% भाग (लोह इस्पात की वस्तुएं तथा टिम्बर) समाजवादी देशों से 40% भाग (मशीनें, ग्रॉटोमोबाइल्स तथा खादें) पश्चिमी देशों से ग्राता है। मिश्र के निर्यातों में कपास, कपास के उप-उत्पादन, चावल, प्याज, फोस्फेटस, मैंगनीज ग्रयस, सीमेंट तथा तेल प्रमुख हैं। ग्रायातों में गेहूं ग्राटा, खादें, रसायन, ग्रौद्योगिक मशीनों, लोहे की वस्तुग्रों तथा मोटरगाड़ियों का ग्राधिक्य रहता है। निर्यात का 34% कपास, 31% क्रूड ग्रायल तथा 11% पैट्रोलियम उत्पादनों से सम्बन्धित होता है।

जनसंख्या वितरण एवं प्रमुख नगर :

मिश्र के ग्रार्थिक ढांचे को प्रभावित करने वाले तत्वों में जनसंख्या समस्या पर्याप्त गम्भीर स्थिति लिए हुए है। वर्तमान में जनसंख्या लगभग 41 मिलियन है, प्रति वर्ष 600,000 से ग्रधिक प्राणी बढ़ जाते हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यह वृद्धि ग्रौर भी तीव्र हुई है क्योंकि मृत्यु दर में बहुत कमी ग्राई है। जन्म दर 43 प्रति हजार है जबकि मृत्यु-दर युद्धोत्तर 25 वर्षों में 28 से घट कर 16 रह गई है। फलतः पिछले 30 वर्ष में इस देश की जनसंख्या लगभग दुगुनी हो गई है। इसकी तुलना में बसाव क्षेत्र तथा कृषि योग्य क्षेत्र में नगण्य सी वृद्धि हुई है। ग्रतः जनसंख्या की समस्या दिन प्रति-दिन तीव्र होती जा रही है।

भौगोलिक वातावरण के सन्दर्भ में मिश्र की जनसंख्या के वितरण की व्याख्या करना बड़ा सरल है। यथा, ज्यादातर जनसंख्या नील की घाटी में बसी है क्योंकि बाकी सारा भू-भाग रेगिस्तानी है। परन्तु वितरण के वास्तविक स्वरूप

को देखा जाए तो ज्ञात होता है कि मिश्र का जन-वितरण बड़ा ही असमान है। देश के 5% से भी कम भू-भाग में 99% जनसंख्या बसी है। सारी मानवता नील घाटी, डेल्टा प्रदेश और कुछ मरुद्यानों में आश्रय लिए है जिनका कुल भू-क्षेत्र लगभग 14,000 वर्ग मील (देश के 5% से भी कम) है। देश का सबसे घना बसा भाग नील की निचली घाटी है जहाँ समस्त जनसंख्या का 65% भाग विद्यमान है।

जनसंख्या वृद्धि

वर्ष	कुल जनसंख्या	प्रति दशक % वृद्धि
1897	9,715,000	—
1907	11,287,000	16.2
1917	12,751,000	13.0
1927	14,218,000	11.5
1937	15,933,000	12.1
1947	19,022,000	19.8
1960	26,578,000	30.5
1984	46,000,000 (अनुमानित)	—

घनत्व के आँकड़ों से सही स्थिति सामने आती है। मिश्र का औसत घनत्व (समस्त पठारी और रेगिस्तानी भागों को शामिल करते हुए) 732 मनुष्य प्रति वर्ग कि. मी. है। परन्तु इससे भी सही स्थिति स्पष्ट नहीं होती। बसाव क्षेत्रों में वास्तविकता क्या है यह कृषि घनत्व से मालूम पड़ता है। नील की घाटी में औसत घनत्व 1,000 से लेकर 1,500 मनुष्य प्रति वर्गमील है। यद्यपि इसमें भी स्थानीय भिन्नताएं हैं। यथा ऊपरी मिश्र में स्थित सोहाग क्षेत्र में घनत्व 2,600 मनुष्य प्रति वर्गमील से ज्यादा है। मिश्र का कृषि-घनत्व 2,979 मनुष्य प्रति वर्गमील है। दूसरे शब्दों में एक व्यक्ति को पेट पालने के लिए 0·2 एकड़ जमीन हिस्से में आती है जबकि यह मात्रा यूरोप और अमेरिका में क्रमशः 0·9 तथा 3·0 एकड़ है।

मिश्र की 80% से अधिक जनसंख्या सेमेटिक प्रजाति तत्व से [illegible] अरब लोगों की है जो मुख्यतः धन्धा करते हैं तथा मिट्टी के कच्चे घरों में रहते हैं।

नील-डेल्टा के शीर्ष पर नील के दाहिने किनारे पर स्थित काहिरा (5,074,016), मिश्र का सबसे बड़ा नगर, राजधानी और औद्योगिक केन्द्र है। निकट स्थित पिरामिड व स्फिंक्स को देखने लाखों लोग प्रति वर्ष यहाँ आते हैं। अरब राजनीति का मुख्य केन्द्र होने से नगर का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व भी बड़ा है। मिश्र के 70% निर्यात के लिए उत्तरदायी डेल्टा के पश्चिमी तट भाग में स्थित एक सुरक्षित पोताश्रय एवं उत्तम बन्दरगाह के रूप में सिकंदरिया (2,317,705) मिश्र का सबसे बड़ा व्यापार केन्द्र है। पहले यह मिश्र की राजधानी भी रहा। पिछले 10–15 वर्षों में नगर के आस-पास अनेक उद्योग विकसित हो गए हैं। अन्य बड़े नगरों में पोर्ट सईद (262,760) गीजा (1,246,713) स्वेज (193,965) तथा एस्युत (213,983) उल्लेखनीय है।

□□□